श्रीमंत सेठ सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जैन साहित्योद्धारक
सिद्धान्त ग्रंथमाला द्वारा अधिकार प्राप्त

जीवराज जैन ग्रंथमाला, सोलापुर द्वारा प्रकाशित

(धवला–पुष्प १२)

श्री भगवत्–पुष्पदन्त–भूतबलि–प्रणीतः

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्यविरचित धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

चतुर्थखंडे

वेदनाभावविधान

(हिन्दी भाषानुवाद–तुलनात्मक टिप्पण–प्रस्तावना आदि अनेक
परिशिष्टैः सहितः सम्पादितश्च ।)

खंड– ४ पुस्तक– १२ भाग– ७

–सम्पादक–

स्व. पं. फूलचन्द्र सिद्धान्त शास्त्री

–प्रकाशक–

जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापुर

वीर निर्वाण संवत्– २५१९ इ. सन– १९९३

अनुक्रमणिका

१

प्रस्तावना

१ विषय परिचय– १–७

२ विषय सूची– ८–१६

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२

मूल अनुवाद और टिप्पण १–५१२

१ वेदनाभाव विधान १–२७४

२ वेदना प्रत्ययविधान २७५–२९३

३ वेदना स्वामित्वविधान २९४–३०१

४ वेदनावेदन विधान ३०२–३६३

५ वेदनागति विधान ३६४–३६९

६ वेदनाअनन्तर विधान ३७०–३७४

७ वेदनासन्निकर्ष विधान ३७५–४७६

८ वेदनापरिमाण विधान ४७७–५००

९ वेदनाभागाभाग विधान ५०१–५०८

१० वेदना अल्पबहुत्व ५०९–५१२

३

परिशिष्ट १–२६

१ वेयणाभावविहाणसुत्ताणि १–२२

२ गाहासुत्ताणि २२

३ अवतरण–गाथा–सूची २३

४ न्यायोक्तियाँ २३

५ ग्रंथोल्लेख २३–२४

६ पारिभाषिक शब्दसूची २४–२६

विषय परिचय

वेदना अनुयोगद्वारके मुख्य अधिकार सोलह है। उनमेंसे जिन अन्तिम दस अधिकारोंकी इस पुस्तकमें प्ररूपणा की है उनके नाम ये हैं-- वेदनाभावविधान, वेदनाप्रत्ययविधान, वेदनास्वामित्वविधान, वेदनावेदनाविधान, वेदनागतिविधान, वेदनाअनन्तरविधान, वेदनासन्निकर्षविधान, वेदनापरिमाणविधान, वेदनाभागाभागविधान और वेदनाअल्पबहुत्वविधान।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

७ वेदनाभावविधान

भावके चार भेद हैं-- नामभाव, स्थापनाभाव, द्रव्यभाव और भावभाव। उनमें से भाव शब्द नामभाव है तथा सद्भाव या असद्भावरूपसे 'वह यह है' इस प्रकार अभेदरूपसे सङ्कल्पित पदार्थ स्थापनाभाव है। द्रव्यभावके दो भेद हैं-- आगमद्रव्यभाव और नोआगमद्रव्यभाव। भावविषयक शास्त्रका जानकार किन्तु वर्तमानमें उसके उपयोगसे रहित जीव आगमद्रव्यभाव है। नोआगमद्रव्यभाव तीन प्रकारका है-- ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त। जो भावविषयक शास्त्रके जानकारका त्रिकालविषयक शरीर है वह ज्ञायकशरीर नोआगमद्रव्यभाव है और जो भविष्यमें भावविषयक शास्त्रका जानकार होगा वह भाविनोआगमद्रव्यभाव है। तद्व्यतिरिक्तनोआगमद्रव्यभावके दो भेद हैं- कर्म और नोकर्म। ज्ञानवरणादि कर्मोंकी अज्ञानादिको उत्पन्न करानेवाली जो शक्ति है उसे कर्मतद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभाव कहते हैं और इसके सिवा अन्य जितनी सचित्त और अचित्तद्रव्य सम्बन्धी शक्तियाँ हैं उन्हें नोकर्मतद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभाव कहते हैं। भावभावके दो भेद हैं- आगमभावभाव और नोआगमभावभाव। भावविषयक शास्त्रका जानकार और उपयोगयुक्त जीव आगमभाव कहलाता है तथा नोआगमभावभावके दो भेद हैं-- तीव्रमन्दभाव और निर्जराभाव।

इन सब भावोंमेंसे वेदनाभावविधानमें कर्मतद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यकी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व इन तीन अधिकारों द्वारा प्ररूपणा की गई है।

पदमीमांसामें ज्ञानावरणादि आठ मूल कर्मोंकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य भाववेदनाओंका विचार किया गया है। यहाँ वीरसेन स्वामीने धवला टीकामें उत्कृष्ट आदि पूर्वोक्त चार पदोंके साथ सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, ओज, युग्म, ओम, विशिष्ट और नोमनोविशिष्ट इन अन्य नौ पदोंको देशामर्शकभावसे सूचित कर इन तेरह पदोंके परस्पर सन्निकर्षकी भी प्ररूपणा की है। मात्र ऐसा करते हुए वे कहाँ किस अपेक्षासे उत्कृष्ट आदि पद स्वीकार किये गये है इस दृष्टिकोणका पृथक् पृथक् रूपसे उल्लेख करते गये हैं। इसके लिए प्रस्तुत पुस्तकका पृष्ठ ग्यारहका कोष्टक द्रष्टव्य है।

स्वामित्व अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि आठ मूल प्रकृतियोंके आश्रयसे इन उत्कृष्ट आदि चार पदोंकी अपेक्षा स्वामी बतलाये गये हैं।

अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारके जघन्य, उत्कृष्ट और जघन्योत्कृष्ट ऐसे तीन भेद करके इनके द्वारा अलग अलग आठ मूल प्रकृतियोंके आश्रयसे अल्पबहुत्वका विचार तो किया ही है, साथ ही उत्तर प्रकृतियोंके आश्रयसे चौंसठ पदवाले उत्कृष्ट और जघन्य अल्पबहुत्वका भी विचार किया गया है। यहाँ दो बातें उल्लेखनीय हैं। प्रथम तो यह कि इन दोनों प्रकारके चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वका निर्देश पहले क्रमसे सूत्र गथाओंमें किया गया है और फिर उन्हींको गद्यसूत्रों में दिखलाया गया है। द्वितीय यह कि वीरसेन स्वामीने इन दोनों प्रकारके अल्पबहुत्वोंसे सूचित होनेवाले स्वस्थान अल्पबहुत्वका निर्देश अपनी धवला टीकामें अलगसे किया है।

इसके आगे इसी वेदनाभाव विधानको क्रमसे प्रथम, द्वितीय और तृतीय ये तीन चूलिकाएँ चालू होती हैं। जिस प्रकरणमें विवक्षित अनुयोगद्वारमें कहे गये विषयका अवलंबन लेकर विशेष व्याख्यान किया जाता है उसे चूलिका कहते हैं। इसलिए चूलिका सर्वथा स्वतंत्र प्रकरण न होकर विवक्षित अनुयोगद्वारका ही एक अंग माना जाता है। ऐसी यहाँ क्रमसे तीन चूलिकायें निर्दिष्ट हैं।

प्रथम चूलिकामें गुणश्रेणिनिर्जरा किसके कितनी गुणी होती है और उसमें लगनेवाले कालका क्या प्रमाण है, इसका विचार किया गया है। यहाँ गुणश्रेणिनिर्जराके कुल स्थान ग्यारह बतलाये हैं। यथा— सम्यक्त्वकी उत्पत्ति, श्रावक, विरत, अनंतानुबंधीकी विसंयोजना करनेवाला, दर्शनमोहका क्षपक, चारित्रमोहका उपशामक, उपशांतकषाय, क्षपक, क्षीणमोह, स्वस्थान जिन और योगनिरोधमें प्रवृत्त हुए जिन। इन ग्यारह स्थानोंमें गुणश्रेणि निर्जरा उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी होती है। किंतु इसमें लगनेवाला काल उत्तरोत्तर संख्यातगुणा हीन जानना चाहिए। अर्थात् प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके समय गुणश्रेणि निर्जरामें जो अंतर्मुहूर्त काल लगता है उससे श्रावकके होनेवाली गुणश्रेणि निर्जरामें संख्यातगुणा हीन अंतर्मुहूर्त काल लगता है। इस प्रकार आगे-आगे हीन-हीन काल जानना चाहिए। तत्त्वार्थसूत्रके 'सम्यग्दृष्टिश्रावक' इत्यादि सूत्रकी व्याख्या करते हुए सर्वार्थसिद्धिमें पूज्यपाद आचार्य श्री [illegible] ये गुणश्रेणिके स्थान कुल दस गिनाये हैं। वहाँ जिनके दो भेदोंका आश्रय कर प्रतिपादन नहीं करना इसका कारण है। यहाँ पहले दो सूत्र गाथाओंमें इन ग्यारह गुणश्रेणि निर्जरा और उनके कालका विचार कर अनंतर गद्यसूत्रों द्वारा इनका स्वतंत्र विचार किया गया है।

द्वितीय चूलिका आगे अनुभागबन्धाध्यवसान स्थानका कथन करनेके लिए प्रारम्भ होती है। इस प्रकरणके बारह अनुयोगद्वार हैं— अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, अन्तर-प्ररूपणा, काण्डकप्ररूपणा, ओजयुग्मप्ररूपणा, षट्स्थानप्ररूपणा, अवस्तनस्थानप्ररूपणा, समय-प्ररूपणा, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, पर्यवसानप्ररूपणा और अल्पबहुत्वप्ररूपणा।

(१) अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा— कर्मोंके जितने भेद-प्रभेद उपलब्ध होते हैं उनमें हीनाधिक अनुभाग शक्ति पाई जाती है। यह शक्ति कहाँ कितनी होती है इसका विचार अनुभाग-शक्तिमें उपलब्ध होनेवाले अविभागप्रतिच्छेदोंके आधारसे किया जाता है। अविभागप्रतिच्छेद उन शक्त्यंशोंकी संज्ञा है जो विभागके अयोग्य होते हैं। शक्तिका यह विभाग बुद्धिद्वारा किया जाता है। उदाहरणार्थ, एक ऐसी शक्ति लो जो सर्वाधिक हीन दर्जेकी है। पुनः इससे दूसरे दर्जेकी शक्ति लो और देखो कि इन दोनों शक्तियोंमें कितना अन्तर है और उस अन्तरका कारण क्या है। अनुभवसे प्रतीत होगा कि पहली शक्तिसे दूसरी शक्तिमें जो एक शक्त्यंशकी वृद्धि दिखाई देती है उसीका नाम अविभागप्रतिच्छेद है। अनुभागसंबंधी ऐसे अविभागप्रतिच्छेद एक अनुभागस्थानमें अनन्तानन्त उपलब्ध होते हैं। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि जितने कर्मपरमाणुओंमें ये अविभागप्रतिच्छेद समान उपलब्ध होते हैं उनमेंसे प्रत्येक कर्म-परमाणुके अविभागप्रतिच्छेदोंकी वर्ग संज्ञा है और वे सब कर्मपरमाणु मिलकर वर्गणा कहलाते हैं। यह प्रथम वर्गणा है। पुनः इसके एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदको लिए हुए जितने कर्मपरमाणु होते हैं उनकी दूसरी वर्गणा बनती है। इस प्रकार निरन्तर क्रमसे एक एक अविभागप्रतिच्छेदकी वृद्धिके साथ तीसरी आदि वर्गणाएँ जहाँ तक उत्पन्न होती हैं उन सबकी स्पर्धक संज्ञा है। एक स्पर्धकमें ये वर्गणाएँ अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग उपलब्ध होती हैं। यह प्रथम स्पर्धक है। इसके आगे सब जीवोंसे अनंतगुण अविभागप्रतिच्छेदोंका अन्तर देकर द्वितीय स्पर्धक प्रारम्भ होता है और जहाँ जाकर द्वितीय स्पर्धककी समाप्ति होती है उससे आगे भी उत्तरोत्तर इसी प्रकार अन्तर देकर तृतीयादि स्पर्धक प्रारम्भ होते हैं जो प्रत्येक अभव्योंसे

अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग प्रमाण वर्गणाओंसे बनते हैं। इसप्रकार अविभागप्रतिच्छेद प्ररूपणामें कहाँ कितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं इसका विचार किया जाता है।

(२) स्थानप्ररूपणा-- इसप्रकार पूर्वोक्त अन्तरको लिए हुए जो अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण स्पर्धक उत्पन्न होते हैं उन सबका एक स्थान होता है। यहाँ पर एक जीवमें एक समयमें जो कर्मोंका अनुभाग दिखाई देता है उसकी स्थान संज्ञा है। उसके दो भेद हैं- अनुभागबन्धस्थान और अनुभागसत्त्वस्थान। उनमेंसे जो अनुभाग बन्ध द्वारा निष्पन्न होता है उसकी तो अनुभागबन्धस्थान संज्ञा है ही। साथ ही पूर्वबद्ध अनुभागका घात होनेपर तत्काल बन्धको प्राप्त हुए अनुभागके समान जो अनुभाग प्राप्त होता है उसकी भी अनुभागबन्धस्थान संज्ञा है। किन्तु जो अनुभागस्थान घातको प्राप्त होकर तत्काल बन्धको प्राप्त हुए अनुभागके समान न होकर बन्धको प्राप्त हुए अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें अधस्तन ऊर्वंकसे अनन्तगुणा और उपरिम अष्टांकमें अनन्तगुणा हीन होता है उसे अनुभागसत्कर्मस्थान कहते हैं। यदि इन प्राप्त हुए स्थानोंको मिलाकर देखा जाय तो ये सब असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं। इसप्रकार स्थानप्ररूपणामें इन सब स्थानोंका विचार किया जाता है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागरजी महाराज

(३) जीवप्ररूपणा-- स्थानप्ररूपणामें कुल स्थान कितने होते हैं यह तो बतलाया है, किन्तु वहाँ उनमें परस्पर कितना अन्तर होता है इसका विचार नहीं किया गया है। इसलिए इस प्ररूपणाका अवतार हुआ है। इसमें बतलाया गया है कि एक स्थानसे तदनन्तरवर्ती स्थानमें अविभागप्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा सब जीवोंसे अनंतगुणा अंतर होता है। जो जघन्य स्थानांतर है वह भी सब जीवोंसे अनंतगुणा है, क्योंकि एक अनन्तभागरू वृद्धिप्रक्षेपमें सब जीवोंसे अनंतगुणे अविभागप्रतिच्छेद उपलब्ध होते हैं। इसप्रकार इस प्ररूपणामें विस्तारके साथ अन्तरका विचार किया गया है।

(४) काण्डकप्ररूपणा-- कुल वृद्धियाँ छह हैं- अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि। इनमेंसे अनन्तभागवृद्धि काण्डकप्रमाण होनेपर एकबार असंख्यातभागवृद्धि होती है। पुनः काण्डकप्रमाण अनन्तभागवृद्धि होनेपर दूसरीबार असंख्यातभागवृद्धि होती है। इसप्रकार पुनः पुनः पूर्वोक्त क्रमसे जब असंख्यातभागवृद्धि काण्डकप्रमाण हो लेती है तब एकबार संख्यातभागवृद्धि होती है। इसप्रकार अनन्तगुणवृद्धिके प्राप्त होनेतक यही क्रम जानना चाहिए। यहाँ काण्डकसे अङ्गुलका असंख्यातवाँ भाग लिया गया है। यहाँ एक स्थानमें इन वृद्धियोंका विचार करनेपर वे किसप्रकार उपलब्ध होती हैं इसकी चर्चा प्रस्तुत पुस्तकके पृष्ठ १३२ में की ही है। उसके आधारसे काण्डकप्ररूपणाको विस्तारसे समझ लेना चाहिये।

(५) ओज-युग्मप्ररूपणा-- जहाँ विवक्षित राशिमें चारका भाग देनेपर १ या ३ शेष रहते हैं उसकी ओज संज्ञा है और जहाँ २ शेष रहते हैं या कुछ भी शेष नहीं रहता है उसकी युग्म संज्ञा है। इस आधारसे इस प्ररूपणामें यह बतलाया गया है कि सब अनुभागस्थानोंके अविभागप्रतिच्छेद तथा सब स्थानोंकी अन्तिम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्मरूप हैं और द्विचरम आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्मरूप ही हैं यह नियम नहीं है, क्योंकि उनमेंसे कोई कृत युग्मरूप, कोई बादर युग्मरूप, कोई कलि ओजरूप और कोई तेज ओजरूप उपलब्ध होते हैं।

(६) षट्स्थानप्ररूपणा-- पहले हम अनन्तभाग वृद्धि आदि छह स्थानोंका निर्देश कर आये हैं। उनमें अनन्त, असंख्यात और संख्यात पदोंसे कौनसी राशि ली गई है इन सब बातोंका विचार इस प्ररूपणामें किया गया है।

(७) अधस्तनस्थानप्ररूपणा-- इसमें अनन्तभागवृद्धिसे लेकर प्रत्येक वृद्धि जब काण्डकप्रमाण हो लेती है तब अगली वृद्धि होती है। अनन्तगुणवृद्धिके प्राप्त होनेतक यही क्रम चालू रहता है। यह बतलाकर एक षट्स्थानवृद्धिमें अनन्तभागवृद्धि कितनी होती है, संख्यातभागवृद्धि कितनी होती है आदिका निरूपण किया गया है।

(८) समयप्ररूपणा-- जघन्य अनुभागबन्धस्थानसे लेकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान तक जितने अनुभागबन्धस्थान होते हैं उनमेंसे एक समयसे लेकर चार समयतक बंधको प्राप्त होनेवाले अनुभागबन्धस्थान असंख्यातलोक प्रमाण हैं। पाँच समय बंधनेवाले अनुभागबन्धस्थान भी असंख्यात लोकप्रमाण हैं। इसप्रकार चार समयसे लेकर आठ समयतक बंधनेवाले अनुभागबन्धस्थान और पुनः सात समयसे लेकर दो समयतक बंधनेवाले अनुभागबन्धस्थान प्रत्येक असंख्यात लोकप्रमाण है। यह बतलाना समयप्ररूपणाका कार्य है। साथ ही यद्यपि ये सब स्थान असंख्यातलोकप्रमाण हैं फिर भी इनमें सबसे थोडे कौन अनुभागबन्धस्थान हैं और उनसे आगे उत्तरोत्तर वे कितने गुणे हैं यह बतलाना भी इस प्ररूपणाका कार्य है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

(९) वृद्धिप्ररूपणा-- इस प्ररूपणामें पहले अनन्तभागवृद्धि आदि छह वृद्धियोंका व अनंतभागहानि आदि छह हानियोंका अस्तित्व स्वीकार करके उनके कालका निर्देश किया गया है।

(१०) यवमध्यप्ररूपणा-- समय प्ररूपणामें छह वृद्धियों और छह हानियोंका किसका कितना काल है यह बतला आये हैं। तथा वहाँ उनके अल्पबहुत्वका भी ज्ञान करा आये हैं। फिर भी किस वृद्धि और हानिसे यवमध्यका प्रारम्भ और अन्त होता है यह बतलानेके लिए यवमध्यप्ररूपणा की गई है। यद्यपि यवमध्य कालयवमध्य और जीवयवमध्यके भेदसे दो प्रकारका होता है पर यहाँ पर कालयवमध्यका ही ग्रहण किया गया है, क्योंकि इसमें वृद्धियों और हानियोंके कालकी मुख्यतासे ही इसकी रचना की गई है।

(११) पर्यवसानप्ररूपणा-- अनंतगुणवृद्धिरूप कांडकके ऊपर पाँच वृद्धिरूप सब स्थान जाकर पुनः अनंतगुणवृद्धि रूप स्थान नहीं प्राप्त होता, यह बतलाना इस प्ररूपणाका कार्य है।

(१२) अल्पबहुत्वप्ररूपणा-- इसके दो भेद हैं- अनंतरोपनिधा और परंपरोपनिधा। अनंतरोपनिधा अल्पबहुत्वमें अनंतगुणवृद्धिस्थान सबसे थोडे हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार आगे संख्यातगुणवृद्धिस्थान, संख्यातभागवृद्धिस्थान, असंख्यातभागवृद्धिस्थान और अनंतभागवृद्धिस्थान उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे हैं, यह बतलाया गया है। तथा परम्परोपनिधा अल्पबहुत्वमें अनन्तभागवृद्धिस्थान सबसे थोडे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं। तथा इनसे संख्यातभागवृद्धिस्थान संख्यातगुणे हैं आदि बतलाया गया है।

इस प्रकार अनुभागबन्धस्थानके आश्रयसे यह प्ररूपणा समाप्त कर अन्तमें वीरसेन स्वामीने अनुभागसत्कर्मके आश्रयसे यह सब विचार कर दूसरी चूलिका समाप्त की है।

तीसरी चूलिकामें जीवसमुदाहारका विचार किया गया है। इसके ये आठ अनुयोगद्वार हैं- एकस्थानजीवप्रमाणानुगम, निरंतरस्थानजीवप्रमाणानुगम, सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, नानाजीवकालप्रमाणानुगम, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, स्पर्शनप्ररूपणा और अल्पबहुत्व।

(१) एकस्थानजीवप्रमाणानुगम-- एक स्थानमें जघन्यरूपसे जीव एक, दो या तीन होते हैं और उत्कृष्ट रूपसे आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं, यह बतलाना इस प्ररूपणाका कार्य है।

२) निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम– इस प्ररूपणामें जीवोंसे सहित निरन्तर स्थान एक, दो या तीनसे लेकर अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं यह बतलाया गया है ।

३) सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम– इस प्ररूपणामें जीवोंसे रहित स्थान कमसे कम एक, दो और तीनसे लेकर अधिकसे अधिक असंख्यातलोकप्रमाण होते हैं यह बतलाया गया है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

४) नानाजीवकालप्रमाणानुगम– इस प्ररूपणामें एक-एक स्थानमें नाना जीव जघन्यसे एक समय तक और उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण कालतक होते हैं, यह बतलाया गया है ।

५) वृद्धिप्ररूपणा– इसके दो भेद हैं– अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा। अनन्तरोपनिधामें जघन्य स्थानसे लेकर द्वितीयादि स्थानोंमें कितने जीव होते हैं, यह बतलाया गया है तथा परम्परोपनिधामें जघन्य अनुभागस्थानमें जितने जीव हैं उससे असंख्यातलोक जाकर वे दूने हो जाते हैं, इत्यादि बतलाया गया है ।

६) यवमध्यप्ररूपणा– इस प्ररूपणामें सब स्थानोंका असंख्यातवाँ भाग यवमध्य होता है यह बतलाकर यवमध्यके नीचेके स्थान सबसे थोडे हैं और उपरिम स्थान असंख्यात-गुणे हैं यह बतलाया गया है ।

७) स्पर्शनप्ररूपणा– इस प्ररूपणामें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान, जघन्य अनुभाग बन्धस्थान, काण्डक और यवमध्य आदिका एक जीवके द्वारा स्पर्शन काल कितना है, इसका विचार किया गया है ।

८) अल्पबहुत्व– उत्कृष्ट अनुभागस्थान, जघन्य अनुभागस्थान, काण्डक और यव-मध्यमें कहा कितने जीव हैं इसके अल्पबहुत्वका विचार इस प्ररूपणामें किया गया है ।

८ वेदनाप्रत्ययविधान

इस अनुयोगद्वारमें नैगमादि नयोंके आश्रयसे ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदनाके बन्धकारणोंका विचार किया गया है । यथा– नैगम, व्यवहार और संग्रह नयकी अपेक्षा सब कर्मोंकी वेदनाका बन्ध प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, रात्रिभोजन, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, प्रेम, निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशुन्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, माया, मोष, मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और प्रयोगसे होता है । ऋजु-सूत्रनयकी अपेक्षा प्रकृतिबन्ध और प्रदेशबन्ध योगसे तथा स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध कषायसे होता है । शब्दनयकी अपेक्षा किससे किसका बन्ध होता है यह कहना सम्भव नहीं है, क्योंकि इस नयमें कार्यकारणसम्बन्ध नहीं बनता ।

९ वेदनास्वामित्वविधान

इस अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंके स्वामीका विचार किया गया है । ऐसा करते हुए नयभेदसे ये भंग आये हैं– नैगम और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी वेदनाका कथंचित् एक जीव स्वामी है, कथंचित् नोजीव स्वामी है, कथंचित् नाना जीव स्वामी हैं, कथंचित् नाना नोजीव स्वामी हैं, कथंचित् एक जीव और एक नोजीव स्वामी है, कथंचित् एकजीव और नाना नोजीव स्वामी हैं, कथंचित् एक जीव और एक नोजीव स्वामी हैं, तथा कथंचित् नाना जीव और नाना नोजीव स्वामी हैं । यहां पर जीव और नोजीव पदकी व्याख्या करते हुए वीरसेन स्वामीने बतलाया है कि जो अनन्तानन्त विस्रसोपचयसहित कर्मपुद्गल स्कन्ध उपलब्ध होते हैं

वे जीवसे पृथक् न पाये जानेके कारण जीवपदसे लिए गये हैं। तथा वे ही अनन्तानन्त विस्रसोपचयसहित कर्मपुद्गल स्कन्ध ही प्राणधारण शक्तिसे रहित होनेके कारण अथवा ज्ञान-दर्शन शक्तिसे रहित होनेके कारण नोजीव कहलाते हैं। अथवा उनसे सम्बन्ध रखनेके कारण जीवको भी नोजीव कहते हैं। संग्रह नयकी अपेक्षा इन ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदनाका कथंचित् एक जीव स्वामी है और कथंचित् नाना जीव स्वामी हैं। तथा शब्द और ऋजुसूत्र-नयकी अपेक्षा इन ज्ञानावरणादि वेदनाका एक जीव स्वामी है। यहाँ इन नयोंकी अपेक्षा एक जीवको स्वामी कहनेका कारण यह है कि ये नय बहुवचनको स्वीकार नहीं करते।

१० वेदनावेदनाविधान

इस अनुयोगद्वारमें सर्वप्रथम नैगमनयकी अपेक्षा जीव, प्रकृति और समय इनके एकत्व और अनेकत्वका आश्रय करके ज्ञानावरण वेदनाके एकसंयोगी, द्विसंयोगी और त्रिसंयोगी भंगोंका प्ररूपण किया गया है। यथा– ज्ञानावरणीय वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है, कथंचित् उदीर्ण वेदना है, कथंचित् उपशांत वेदना है, कथंचित् बध्यमान वेदनायें है, कथंचित् उदीर्ण वेदनाएँ है, कथंचित् उपशान्त वेदनाएँ है, इत्यादि। यहाँ यह बात ध्यानमें रखनेकी है कि इन भंगोंका विवेचन करते हुए वीरसेन स्वामीने विवक्षाभेदसे इन भंगोंके अन्य अनेक अवान्तर भंगोंका भी निर्देश किया है। नैगमनयकी अपेक्षा शेष सात कर्मोंके भंग ज्ञानावरणके ही समान हैं। आगे व्यवहारनय और संग्रहनयकी अपेक्षा यथासम्भव इन भंगोंका कनसे विवेचन करके ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंके फलप्राप्त विपाकको ही वेदना बतलाया है। शब्दनयका विषय इन सब दृष्टियोंमें अवक्तव्य है, यह स्पष्ट ही है।

११ वेदनागतिविधान

इस अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी वेदना अपेक्षाभेदसे क्या स्थित है, क्या अस्थित है या क्या स्थितास्थित है, इस बातका विचार किया गया है। पहले नैगम, संग्रह और व्यवहारनयकी अपेक्षा बतलाया गया है कि ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना कथंचित् स्थित है और कथंचित् स्थितास्थित है। तथा वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकर्मकी वेदना कथंचित् स्थित है, कथंचित् अस्थित है और कथंचित् स्थित-अस्थित है। ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा विवेचन करते हुए बतलाया गया है कि आठों कर्मोंकी वेदना कथंचित् स्थित है और कथंचित् अस्थित है। तथा शब्दनयकी अपेक्षा सब कर्मोंकी वेदना अवक्तव्य है, यह बतलाया गया है।

१२ वेदनाअनन्तरविधान

ज्ञानावरणादि कर्मोंका बन्ध होनेपर वे उसी समय फल देते हैं या कालान्तरमें फल देते हैं, इस विषयका विवेचन करनेके लिए वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वार आया है। इसमें बतलाया गया है कि नैगम और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदना अनन्तरबन्ध है, परम्पराबन्ध है और तदुभयबन्ध है। संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदना अनन्तरबन्ध है और परम्पराबन्ध है। ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना परम्पराबन्ध है और शब्दनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना अवक्तव्यबन्ध है।

१३ वेदनासन्निकर्षविधान

ज्ञानावरणादि कर्मोंकी वेदना द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट भी होती है और जघन्य भी। फिर भी इनमेंसे प्रत्येक कर्मके उत्कृष्ट या जघन्य द्रव्यादि वेदनाके रहनेपर उसीकी

क्षेत्रादि वेदना किस प्रकारकी होती है। तथा विवक्षित एक कर्मकी द्रव्यादि वेदना उत्कृष्ट या जघन्य रहनेपर अन्य कर्मकी द्रव्यादि वेदना उत्कृष्ट या जघन्य किस प्रकारकी होती है, इस बातका विचार करनेके लिए यह वेदनासन्निकर्षविधान अनुयोगद्वार आया है। इस हिसाबसे वेदनासन्निकर्षके स्वस्थानसन्निकर्ष और परस्थानसन्निकर्ष ये दो भेद होकर उनमेंसे प्रत्येकके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा चार-चार भेद करके स्वस्थानवेदनासन्निकर्ष और परस्थान-वेदनासन्निकर्षका इस अनुयोगद्वारमें विस्तारके साथ विचार किया गया है।

१४ वेदनापरिमाणविधान

ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी प्रकृतियाँ कितनी हैं इस बातका विवेचन करनेके लिए यह अनुयोगद्वार आया है। इसमें प्रकृतियोंका विचार प्रकृत्यर्थता समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्र-प्रत्यास इन तीन प्रकारोंसे किया गया है। 'प्रकृत्यर्थता' अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी उत्तर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे उनकी संख्या बतलाई गयी है। मात्र ज्ञानावरण, दर्शनावरण और नामकर्मकी उत्तर प्रकृतियाँ क्रमसे ५, ९ और ९३ न बतलाकर असंख्यात लोकप्रमाण बतलाई गयी है। ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी असंख्यात लोकप्रमाण प्रकृतियाँ क्यों हैं इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामी कहते हैं कि चूंकि ज्ञान और दर्शनके अवान्तर भेद असंख्यातलोक प्रमाण हैं, इसलिए इनको आवरण करनेवाले कर्म भी उतने ही हैं। तथा नामकर्मकी असंख्यात-लोकप्रमाण प्रकृतियाँ क्यों हैं इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामी कहते हैं कि चूंकि आनुपूर्वीके [illegible] ज्ञान कराना आवश्यक था, अतः इस कर्मकी असंख्यातलोकप्रमाण प्रकृतियां कही हैं। 'समयप्रबद्धार्थता' अनुयोगद्वारमें प्रत्येक कर्मके अवान्तर भेदोंकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण समयप्रबद्धोंसे उस उस कर्मकी अवान्तर प्रकृति-योंको गुणितकर परिमाण लाया गया है। मात्र ऐसा करते हुए आयुकर्मका समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा परिमाण लाते समय आयुकर्मकी अवान्तर प्रकृतियोंको अन्तर्मुहूर्तसे गुणा कराया गया है। इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामीका कहना है कि आयुकर्मका बन्धकाल यतः अन्तर्मुहूर्त है अतः यहाँ अन्तर्मुहूर्तकालसे गुणा कराया गया है। 'क्षेत्रप्रत्यास' अनुयोगद्वारमें प्रत्येक कर्मकी समयप्रबद्धार्थतारूप जितनी प्रकृतियां उपलब्ध हुईं उनको उस उस प्रकृतिके उत्कृष्ट क्षेत्रसे गुणित करके परिमाण लाया गया है।

१५ वेदनाभागाभागविधान

इस अनुयोगद्वारमें पूर्वोक्त प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा अलग अलग ज्ञानावरणादि कर्मोंकी प्रकृतियोंके भागाभागका विचार किया गया है। यथा-प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी प्रकृतियां अलग-अलग सब प्रकृतियोंके कुछ कम दो भागप्रमाण बतलाई है और शेष छह कर्मोंकी प्रकृतियाँ अलग-अलग असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाई हैं। इसीप्रकार समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा भी किस कर्मकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भागप्रमाण हैं इसका विचार किया गया है।

१६ वेदनाअल्पबहुत्वविधान

इस अनुयोगद्वारमें भी प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यासका आश्रयकर अलग-अलग ज्ञानावरणादि कर्मोंके अल्पबहुत्वका विचार किया गया है।

इसप्रकार इन सोलह अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा समाप्त होनेपर वेदनाखण्ड समाप्त होता है।

विषयसूची

विषय	पृष्ठ
७ वेदनाभावविधान	**१–२७४**
वेदनाभावविधानमें तीन अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१
भावका चार निक्षेपोंमें अवतार और उनका खुलासा	१
यहां भाववेदनासे भावकर्म विवक्षित है	२
वेदनाभावविधानके कथनका प्रयोजन	३
तीन अनुयोगोंके नाम	३
पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व पदका स्पष्टीकरण	३
भावकी अपेक्षा पदमीमांसा ।	४
ज्ञानावरणीयवेदनाकी भावकी अपेक्षा पदमीमांसा	१२
शेष सात कर्मोंकी भावकी अपेक्षा पदमीमांसा	१२
भावकी अपेक्षा स्वामित्व	१२
स्वामित्वके दो भेद व उनका समर्थन	१२
उत्कृष्ट ज्ञानावरणीय वेदनाका स्वामी	१३
अनुत्कृष्ट ज्ञानावरणीय वेदनाका स्वामी	१५
इसीप्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय के जाननेकी सूचना	१६
उत्कृष्ट वेदनीय वेदनाका स्वामी	१६
अनुत्कृष्ट वेदनीय वेदनाका स्वामी	१८
इसी प्रकार नाम और गोत्रके जाननेकी सूचना	१८
उत्कृष्ट आयुवेदनाका स्वामी	१९
अनुत्कृष्ट आयुवेंदनाका स्वामी	२१
जघन्य ज्ञानावरणीयवेदनाका स्वामी	२२
अजघन्य ज्ञानावरणीयवेदनाका स्वामी	२३
इसीप्रकार दर्शनावरण और अन्तरायके जाननेकी सूचना	२३
जघन्य वेदनीयवेदनाका स्वामी	२३
अजघन्य वेदनीयवेदनाका स्वामी	२६
जघन्य मोहनीयवेदनाका स्वामी	२६
अजघन्य मोहनीयवेदनाका स्वामी	२६
जघन्य आयुवेदनाका स्वामी	२६
अजघन्य आयुवेदनाका स्वामी	३१
जघन्य नामवेदनाका स्वामी	२८
अजघन्य नामवेदनाका स्वामी	२९
जघन्य गोत्रवेदनाका स्वामी	२९
अजघन्य गोत्रवेदनाका स्वामी	३०
अल्पबहुत्वके तीन भेद	३१
जघन्य पद	३१
जघन्य मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३१
जघन्य अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३२
जघन्य ज्ञानावरण और दर्शनावरण वेदनाका अल्पबहुत्व	३३
जघन्य आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३४
जघन्य गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३४
जघन्य नामवेदनाका अल्पबहुत्व	३५
जघन्य वेदनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३६
उत्कृष्ट पद	३६
उत्कृष्ट आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३६
दो आवरण और अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३७
उत्कृष्ट नाम मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३७
उत्कृष्ट नाम और गोत्र वेदनाका अल्पबहुत्व	३७
उत्कृष्ट वेदनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य और उत्कृष्ट दोनोंका एकसाथ अल्पबहुत्व	३८
जघन्य मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य दो आवरणवेदनाका अल्पबहुत्व	३८

विषय	पृष्ठ
जघन्य आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य नामवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
जघन्य गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
जघन्य वेदनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट दो आवरण और अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट नाम और गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट वेदनीय वेदनाका अल्पबहुत्व	४०
उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व	४०
सातावेदनीय आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	४०
आठ कषाय आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	४२
अयशःकीर्ति आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	४४
चौंसठ पदवाला उत्कृष्ट महादण्डक	४४
उत्तर प्रकृतियोंका स्वस्थान उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	६०
तीन गाथाओं द्वारा संज्वलन चतुष्क आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	६५
चौंसठ पदवाला जघन्य महादण्डक	६५
उत्तर प्रकृतियोंका स्वस्थान जघन्य अल्पबहुत्व	७५
प्रथम चूलिका	७८-८७
दो सूत्र गाथाओंद्वारा गुणश्रेणि निर्जराके ग्यारह स्थान और काल	७८
अलग अलग सूत्रों द्वारा गुणश्रेणि निर्जराका विचार	८०
अलग अलग सूत्रों द्वारा गुणश्रेणि निर्जराके कालका विचार	८५
द्वितीय चूलिका	८७-२४०
अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें १२ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	८७
बारह अनुयोगद्वारोंके नाम व उनकी सार्थकता	८८

विषय	पृष्ठ
एक एक स्थानमें कितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं	९१
अनुभागका विशेष खुलासा	९१
अविभागप्रतिच्छेदका स्पष्टीकरण	९२
द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षा जघन्य स्थानमें अविभाग प्रतिच्छेदोंका विचार	९२
वर्गका संदृष्टिपूर्वक विचार	९३
वर्गणाविचार	९५
स्पर्धकविचार	९६
अविभागप्रतिच्छेदकी त्रिविध प्ररूपणाकी प्रतिज्ञा	९९
वर्गणाप्ररूपणाके तीन प्रकार व उनका विवेचन	९९
स्पर्धक प्ररूपणाके तीन प्रकार व उनका विवेचन	१००
अन्तरप्ररूपणाके तीन प्रकार व उनका विवेचन	१०१
परमाणुओंमें अविभागप्रतिच्छेदोंका आरोपकर जघन्य स्थानमें प्रदेशप्ररूपणा	१०१
प्रदेशप्ररूपणामें छह अनुयोगद्वारोंके नाम व संदृष्टिपूर्वक उनका विवेचन करनेकी प्रतिज्ञा	१०१
प्ररूपणा	१०१
प्रमाण	१०२
श्रेणिप्ररूपणाके दो भेद व उनका विचार	१०२
अवहारविचार	१०४
भागाभागका अवहारके समान जाननेकी सूचना	११०
अल्पबहुत्वविचार	११०
स्थानप्ररूपणा	१११
स्थानपदकी व्याख्या	१११
स्थानके दो भेद व उनका लक्षणपूर्वक विशेष विचार	१११
अन्तरप्ररूपणा	११४
अन्तरप्ररूपणाकी सार्थकता	११४
स्थानान्तरका स्वरूप	११४

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
अनुभागबन्धस्थानान्तर योगस्थानान्तरोंके समान नहीं हैं इसका विचार	११५
जघन्य स्थानसे द्वितीय स्थानके प्रमाणका विचार व उनमें स्पर्धक प्ररूपणा	११९
आगे भी तृतीयादि स्थानोंके प्रमाणका विचार	१२०
जघन्यादि स्थानोंमें षट्स्थान प्ररूपणा व स्थानोंका अल्पबहुत्व	१२०
काण्डकप्ररूपणा	१२८
काण्डकप्ररूपणाके प्रसंगसे अनुभागबन्ध और अनुभागसत्कर्मका अल्पबहुत्व	१२८
काण्डकशलाकाओंका मार्गदर्शक :- आचार्य श्री	१३२
अनन्तभागवृद्धि आदिका प्रमाण	१३३
अनन्तभागवृद्धि आदिका अल्पबहुत्व	१३३
ओजयुग्मप्ररूपणा	१३४
षट्स्थानप्ररूपणा	१३५
अनन्तभागवृद्धिविचार	१३५
असंख्यातभागवृद्धिविचार	१५१
संख्यातभागवृद्धिविचार	१५४
संख्यातगुणवृद्धिविचार	१५५
असंख्यातगुणवृद्धिविचार	१५६
अनन्तगुणवृद्धिविचार	१५७
जघन्यादि स्थानोंमें अनन्तभागवृद्धि आदिका विचार	१५८
जघन्य स्थानमें अनन्तभागवृद्धि आदिकी प्रमाणप्ररूपणा	१८६
प्रथम अष्टांकसे लेकर ऊर्वकतक प्राप्त होनेवाली अनन्तगुणवृद्धिके विषयमें तीन अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा	१९१
अधस्तनस्थानप्ररूपणा	१९३
समयप्ररूपणा	२०२
चार समयवाले आदि अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंका प्रमाण	२०२
चार समयवाले आदि सब अनुभागबन्धाध्यवसान स्थानोंका अल्पबहुत्व	२०५
प्रसंगसे अग्निकायिक, कायस्थिति व अनुभागस्थानोंका अल्पबहुत्व	२०८

विषय	पृष्ठ
वृद्धिप्ररूपणा	२०९
छह वृद्धि और छह हानियोंके अवस्थानकी प्रतिज्ञा	२०९
पाँच वृद्धि और पांच हानियोंका काल	२०९
अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तगुणहानिका काल	२१०
कालविषयक अल्पबहुत्व	२११
यवमध्यप्ररूपणा	२१२
पर्यवसानप्ररूपणा	२१३
अल्पबहुत्वप्ररूपणा	२१४
अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अल्पबहुत्व	२१४
परम्परोपनिधाकी अपेक्षा अल्पबहुत्व विचार	२१७
अनुभागसत्कर्मस्थानविचार	२१९
अनुभागबन्धस्थानसे अनुभागसत्कर्ममें क्या अन्तर है इसका विचार	२१९
घातस्थानोंकी प्ररूपणा	२२०
दो प्रकारके घातपरिणामोंका विचार	२२०
सत्त्वस्थान कहां होते हैं इसका विचार	२२१
प्रथमादि परिपाटी क्रमसे हतसमुत्पत्तिस्थानोंका विचार	२२६
हतहतसमुत्पत्तिस्थानविचार	२३२
स्थितस्थानोंमें अपुनरुक्त स्थानोंका विचार	२३४
बन्धसमुत्पत्ति आदि स्थानोंका अल्पबहुत्व	२४०
तीसरी चूलिका	**२४१–२७४**
जीव समुदाहारमें आठ अनुयोगद्वार	२४१
जीवसमुदाहार और आठ अनुयोगद्वारोंकी सार्थकता	२४१
एकस्थान जीवप्रमाणानुगमविचार	२४२
निरन्तरस्थान जीवप्रमाणानुगमविचार	२४२
सान्तरस्थान जीवप्रमाणानुगमविचार	२४५
नानाजीवकालप्रमाणानुगम	२४५
वृद्धिप्ररूपणा और उसके दो अनुयोगद्वार	२४६

पूज्य विद्यासागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
अनन्तरोपनिधाविचार	२४७
परम्परोपनिधाविचार	२६३
यवमध्यप्ररूपणा	२६६
स्पर्शनविचार	२६७
अल्पबहुत्वविचार	२७२
८ वेदनाप्रत्ययविधान २७५–२९३	
वेदनाप्रत्ययविधान कहनेकी प्रतिज्ञा व उसकी सार्थकता	२७५
नैगम, संग्रह और व्यवहारनयसे ज्ञानावरणके प्राणातिवादप्रत्ययका विचार	२७५
मृषावादप्रत्ययका विचार	२७९
अदत्तादानप्रत्ययका विचार	२८१
मैथुनप्रत्ययका विचार	२८२
परिग्रहप्रत्ययका विचार	,,
रात्रिभोजनप्रत्ययका विचार	,,
क्रोध, मान आदि प्रत्ययोंका विचार	२८३
निदानप्रत्ययका विचार	२८४
अभ्याख्यान, कलह आदि प्रत्ययोंका विचार	२८५
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंको जाननेकी सूचना	२८७
ऋजुसूत्रनयसे ज्ञानावरणीयके प्रत्यय	२८८
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंको जाननेकी सूचना	२९०
शब्दनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणके प्रत्ययोंका विचार	२९०
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंको जाननेकी सूचना	२९३
९ वेदनास्वामित्वविधान २९४–३०१	
वेदनास्वामित्वविधानकी प्रतिज्ञा व उसकी सार्थकता	२९४
नैगम और संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणका स्वामी	२९५
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंका स्वामी	२९९
संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणका स्वामी	२९९
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंका स्वामी	३००
शब्द और ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणका स्वामी	३००
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंका स्वामी	३०१
१० वेदनावेदनविधान ३०२–३६३	
वेदनावेदनविधानकी प्रतिज्ञा और सार्थकता	
नैगमनयकी अपेक्षा सभी कर्मप्रकृति हैं ऐसी प्रतिज्ञा	३०२–३०४
ज्ञानावरण कर्म बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त एक और नाना प्रत्येक व संयोगी भंग रूप कैसे हैं इसका अलग अलग विचार	३०४
इसी प्रकार सात कर्मोंको जाननेकी सूचना	३४२
व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरण कर्मके भंगोंका अलग अलग विचार	३४३
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३५६
संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरण कर्मके भंगोंका अलग अलग विचार	३५६
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३६२
ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदना एकमात्र उदीर्ण है इसका विचार	३६२
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३६३
शब्दनयकी अपेक्षा अवक्तव्य है इसका विचार	३६३
११ वेदनागतिविधान ३६४–३६९	
वेदनागतिविधानकी प्रतिज्ञा व सार्थकता	३६४
नैगम, संग्रह और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अवस्थित और स्थितास्थितरूप है इसका विचार	३६५
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायके जाननेकी सूचना	३६७
वेदनीयवेदना स्थित, अस्थित और स्थितास्थित है इसकी सिद्धि	३६७

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रके जाननेकी सूचना	३६८
ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणवेदना स्थित और अस्थित है इसका विचार	३६८
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३६९
शब्दनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंके वेदना अवक्तव्य है इसका विचार	३६९
१२ वेदनाअनन्तरविधान ३७०–३७४	
वेदना अनन्तरविधानके कहनेकी प्रतिज्ञा और सार्थकता	३७०
नैगम और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरण वेदना अनन्तरबन्ध, परम्पराबन्ध और तदुभयबन्धरूप है सका विचार	३७१
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३७२
संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणवेदना अनन्तरबन्ध और परम्पराबन्ध रूप है इसका विचार	३७२
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३७३
ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणवेदना परम्परा बन्धरूप है इसका विचार	३७३
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३७४
शब्दनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना अवक्तव्य है इसका विचार	३७४
१३ वेदनासन्निकर्षविधान ३७५-४७६	
वेदनासन्निकर्षके दो भेद व उनकी सार्थकता	३७५
स्वस्थान सन्निकर्षके दो भेद	३७६
जघन्य स्वस्थान सन्निकर्षके स्थापित करनेका कारण	३७६
उत्कृष्ट स्वस्थान सन्निकर्षके चार भेद	३७६
जिसके ज्ञानावरण वेदना द्रव्यसे उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसे होती है इसका विचार	३७७
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना क्षेत्रसे उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३८१
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यादिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३८७
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यादिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३९१
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायके जाननेकी सूचना	३९५
जिसके वेदनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३९६
जिसके वेदनीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३९७
जिसकी वेदनीयवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०१
जिसकी वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०२
इसी प्रकार नाम और गोत्रकर्मके जाननेकी सूचना	४०४
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०५
जिसके आयुवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०७
जिसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०८
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४११

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
जघन्य स्वस्थानवेदनासन्निकर्ष चार प्रकारका है	४१३
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४१४
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४१५
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४१६
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२०
इसीप्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके जाननेकी सूचना	४२१
जिसके वेदनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२२
जिसके वेदनीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२३
जिसके वेदनीयवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२४
जिसके वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२६
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२७
जिसके आयुवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२९
जिसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३०
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३१
जिसके नामवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३३
जिसके नामवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३४
जिसके नामवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३६
जिसके नामवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३७
जिसके गोत्रवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३९
जिसके गोत्रवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४०
जिसके गोत्रवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४१
जिसके गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४३
परस्थानवेदनासन्निकर्षके दो भेद	४४४
जघन्य परस्थानवेदनासन्निकर्षको स्थगित करनेकी सूचना	४४४
उत्कृष्ट परस्थानवेदनासन्निकर्षके चार भेद	४४५
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके छह कर्मोंकी द्रव्य-वेदना कैसी होती है इसका विचार	४४५
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४७

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
ज्ञानावरणीयके समान आयुके सिवा शेष छह कर्मोंके जाननेकी सूचना	४४७
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कैसी होती है इसका विचार	४४८
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४९
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र कर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४९
इसीप्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी अपेक्षा जाननेकी सूचना	४५०
जिसके वेदनीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५०
उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५०
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकी अपेक्षा सन्निकर्षका विचार	४५१
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुके सिवा छह कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५१
उसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५२
इसी प्रकार आयुके सिवा छह कर्मोंकी मुख्यतासे सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४५३
जिसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५३
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५५
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५५
इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी मुख्यतासे जाननेकी सूचना	४५६
जिसके वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५६
उसके मोहनीय वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५७
उसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५८
उसके नाम और गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५९
इसी प्रकार नाम और गोत्रकी मुख्यतासे जाननेकी सूचना	४५९
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५९
परस्थान वेदना सन्निकर्षके कथन करनेकी सूचना	४६०
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरण और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६०
उसके वेदनीय, नाम और गोत्रवेदना द्रव्य की अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	
उसके मोहनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६२
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६२

विषय	पृष्ठ
ज्ञानावरणके समान दर्शनावरण और अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४६३
जिसके वेदनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६३
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६३
उसके नाम और गोत्र वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६४
वेदनीयके समान नाम और गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४६५
जिसके मोहनीय वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुके सिवा शेष छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६५
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६५
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके शेष सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६६
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके शेष सात कर्मोंकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६८
ज्ञानावरणके समान शेष सात कर्मोंकी मुख्यतासे क्षेत्रकी अपेक्षा सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४६९
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरण और अन्तरायवेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६९
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रवेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६९
उसके मोहनीय वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७०
ज्ञानावरणके समान दर्शनावरण और अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाननेकी सूचना	४७०
जिसके वेदनीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७०
उसके आयु, नाम और गोत्र वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७०
वेदनीयके समान आयु, नाम और गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाननेकी सूचना	४७१
जिसके मोहनीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७१
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरण और अन्तराय वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७१
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७२
उसके मोहनीयवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७३
ज्ञानावरणके समान दर्शनावरण और अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाननेकी सूचना	४७३
जिसके वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय मोहनीय और अन्तरायवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७३
उसके आयु, नाम और गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७३

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
जिसके मोहनीय वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७४
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७४
उसके नामवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७५
जिसके नामवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुके सिवा शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७५
उसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७५
जिसके गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७६
१४ वेदनापरिमाणविधान	**४७७-५००**
वेदनापरिमाणविधान कहनेकी सूचना व स्पष्टीकरण	४७७
उसके तीन अनुयोगद्वार और स्पष्टीकरण	४७८
प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा दो आवरण कर्मोंकी प्रकृतियाँ	४७८
वेदनीयकर्मकी प्रकृतियाँ	४७९
मोहनीयकर्मकी प्रकृतियाँ	४८१
आयुकर्मकी प्रकृतियाँ	४८२
नामकर्मकी प्रकृतियाँ	४८३
गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ	४८४
अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ	४८५
समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा दो आवरण कर्म और अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ	४८५
वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ	४८७
मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ	४९०
आयुकर्मकी प्रकृतियाँ	४९१
नामकर्मकी प्रकृतियाँ	४९२
गोत्र कर्मकी प्रकृतियाँ	४९६
क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ	४९७
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी प्रकृतियाँ जाननेकी सूचना	४९८
वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ	४९९
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ जाननेकी सूचना	५००
१५ वेदनाभागाभागविधान	**५०१-५०८**
वेदनाभागाभाग विधानकी सूचना व तीन अनुयोगद्वार	५०१
प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरण प्रकृतियोंका भागाभाग	५०१
शेष छह कर्मोंका भागाभाग	५०४-५०८
समयप्रबद्धार्थकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरण प्रकृतियोंका भागाभाग	५०४
शेष छह कर्मोंका भागाभाग	५०५
क्षेत्र प्रत्यासकी अपेक्षा ज्ञानावरणका भागाभाग	५०६
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्म के भागाभागकी सूचना	५०७
वेदनीय कर्मका भागाभाग	५०७
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मका भागाभाग	५०८
१६ वेदना अल्पबहुत्व	**५०९-५१२**
वेदना अल्पबहुत्वकी सूचना व तीन अनुयोगद्वार	५०९
प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा आठों कर्मोंका अल्पबहुत्व	५०९
समय प्रबद्धर्थताकी अपेक्षा आठों कर्मोंका अल्पबहुत्व	५१०
क्षेत्र प्रत्यासकी अपेक्षा आठों कर्मोंका अल्पबहुत्व	५११

पण्डितप्रवर आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज



सिरि-भगवंत-पुप्फदंत-भूदबलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइय-धवला-टीका-समण्णिदो

तस्स चउत्थे वेयणाए

वेयणाभावविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणाभावविहाणे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति ।। १ ।।

तत्थ भावो चउव्विहो- णामभावो ठवणभावो दव्वभावो भावभावो चेदि । तत्थ भावसद्दो णामभावो णाम । सब्भावासब्भावसरूवेण सो एसो त्ति अभेदेण संकप्पिदत्थो ठवणभावो णाम । दव्वभावो दुविहो- आगमदव्वभावो णोआगमदव्वभावो चेदि । तत्थ

अब वेदनाभावविधान प्रारम्भ होता है । उसमें ये तीन अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं ।। १ ।।

भाव चार प्रकारका है- नामभाव, स्थापनाभाव, द्रव्यभाव और भावभाव । उनमें भाव यह शब्द नामभाव है । सद्भाव या असद्भाव स्वरूपसे 'वह यह है' इस प्रकार अभेदसे सङ्कल्पित पदार्थ स्थापनाभाव कहा जाता है । द्रव्यभाव दो प्रकारका है- आगमद्रव्यभाव और

भावपाहुडजाणओ अणुवजुत्तो आगमदव्वभावो णाम । णोआगमदव्वभावो तिविहो– जाणुगसरीर-भविय-तव्वदिरित्तणोआगमदव्वभावभेएण✡ । जाणुगसरीर-भवियं गदं । तव्वदिरित्तदव्वभावो दुविहो–कम्मदव्वभावो णोकम्मदव्वभावो चेदि । तत्थ कम्म–दव्वभावो णाणावरणादिदव्वकम्माणं अण्णाणादिसमुप्पायणसत्ती । णोकम्मदव्वभावो दुविहो–सचित्तदव्वभावो अचित्तदव्वभावो चेदि । तत्थ केवलणाण-दंसणादियो सचित्तदव्वभावो । अचित्तदव्वभावो दुविहो-- मुत्तदव्वभावो अमुत्तदव्वभावो चेदि । तत्थ वण्ण-गंध-रस-फासादियो मुत्तदव्वभावो । अवगाहणादियो अमुत्तदव्वभावो । भावभावो दुविहो-आगम-णोआगमभावभावभेदेण✤ । तत्थ भावपाहुडजाणगो उवजुत्तो आगमभावभावो । (णोआगमभावभावो) दुविहो– तिव्व-मंदभावो णिज्जराभावो चेदि । तिव्व-मंदत्ताए भावसरूवाए⊛ कधं भावभावत्तमेएसो ? ण, तिव्व-तिव्वयर-तिव्वतम-मंद-मंदयर-मंदमादिगुणेहि भावस्स वि भावुवलंभादो । ण णिज्जराए भावभावत्तमसिद्धं, सम्मत्तुप्पत्तियादिभावभावेहि जणिदणिज्जराए उवया-रेण तदविरोहादो । एत्थ कम्मभावेण पयदं, अण्णेसिं वेयणाए संबंधाभावादो । वेय–णाए भावो वेयणभावो, वेयणभावस्स विहाणं परूवणं वेयणभावविहाणं ।

नोआगम द्रव्यभाव । उनमें भावप्राभृतका जानकार उपयोग रहित जीव आगमद्रव्यभाव कह–लाता है । नोआगमद्रव्यभाव ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभावके भेदसे तीन प्रकारका है । इनमें ज्ञायकशरीर और भावी नोआगमद्रव्यभाव ज्ञात हैं । तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभाव दो प्रकारका है– कर्मद्रव्यभाव और नोकर्मद्रव्यभाव । उनमें ज्ञानावरणादि द्रव्य-कर्मोंकी जो अज्ञानादिको उत्पन्न करने रूप शक्ति है वह कर्मद्रव्यभाव कही जाती है । नोकर्म–द्रव्यभाव दो प्रकारका है– सचित्तद्रव्यभाव और अचित्तद्रव्यभाव । उनमें केवलज्ञान व केवलदर्शन आदि सचित्तद्रव्यभाव हैं । अचित्तद्रव्यभाव दो प्रकारका है– मूर्तद्रव्यभाव और अमूर्तद्रव्यभाव । उनमें वर्ण, गन्ध, रस व स्पर्श आदिक मूर्तद्रव्यभाव हैं । अवगाहनादिक अमूर्तद्रव्यभाव हैं ।

भावाभाव दो प्रकारका है– आगमभावभाव और नोआगमभावभाव । इनमें भाव–प्राभृतका जानकार उपयोग युक्त जीव आगमभावभाव कहा जाता है । (नोआगमभावभाव) दो प्रकारका है–– तीव्र-मन्दभाव और निर्जराभाव ।

शंका–– जब कि तीव्रता व मन्दता भावस्वरूप हैं तब उन्हें भावभाव नामसे कहना कैसे उचित कहा जा सकता है ?

समाधान–– नहीं, क्योंकि, तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम, मन्द, मन्दतर, और मन्दतम आदि गुणोंके द्वारा भावका भी भाव पाया जाता है ।

निर्जराको भी भावभावरूपता असिद्ध नहीं है, क्योंकि, सम्यक्त्वोत्पत्ति आदिक भाव-भावोंसे उत्पन्न होनेवाली निर्जराके उपचारसे भावाभाव स्वरूप होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

यहाँ कर्मभाव प्रकृत है, क्योंकि, कर्मभावको छोड़कर और दूसरोंकी वेदनाका यहां संबंध नहीं है । वेदनाका भाव वेदनाभाव, वेदनाभावका विधान अर्थात् प्ररूपणा वेदनाभावविधान

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

✡ ताप्रतौ ' णोआगमदव्वभेएण ' इति पाठः । ✤ आ-ताप्रत्योः ' णोआगमभावभेएण ' इति पाठः । ⊛ अ-आप्रत्योः ' भावपरूवाए ', ताप्रतौ ' भावपरूवणाए ' इति पाठः ।

तम्हि वेयणाभावविहाणे इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति । अट्ठ अणुयोगद्दाराणि किण्ण परूविदाणि? ण, सेसपंचण्णमणुयोगद्दाराणमेत्थेव पवेसादो ।

संपहि वेयणाभावविहाणं किमट्ठमागयं ? वेयणादव्वविहाणे जहण्णुक्कस्सादिभेदेण अवगददव्वपमाणाणं, खेत्तविहाणे वि जहण्णुक्कस्सादिभेदेण अवगदओगाहणपमाणाणं, कालविहाणे जहण्णुक्कस्सादिभेदेण अवगयकालपमाणाणमट्ठण्णं कम्माणमण्णाणादि कज्जुप्पायणसत्तिवियप्पपदुप्पायणट्ठमागयं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तिण्णमणुयोगद्दाराणं णामणिद्देसट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

पदमीमांसा सामित्तमप्पाबहुए ॥ २ ॥

पदमिदि वुत्ते जहण्णुक्कस्सादिपदाणं गहणं । कुदो? अण्णेहि पदेहि एत्थ पओजणाभावादो । तेण अत्थ-ववत्थापदाणं गहणं ण होदि, भेदपदस्सेव एत्थ गहणं कीरदे । पदाणं मीमांसा परिक्खा गवेसणा पदमीमांसा । एसो पढमो अहियारो । हय-हत्थिसामित्तादिभेदेण जदि वि सामित्तं बहुप्पयारं तो वि एत्थ कम्मभावसामित्तं चेव

है । उस वेदनाभावविधानमें ये तीन अनुयोगद्वार जानने योग्य हैं ।

शंका– यहां आठ अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, शेष पांच अनुयोगद्वार इन्हींमें प्रविष्ट हैं ।

शंका– अभी वेदनाभावविधानका अवतार किसलिये हुआ है ?

समाधान– वेदनाद्रव्यविधानमें जघन्य व उत्कृष्ट आदिके भेदसे जिन आठ कर्मोंके द्रव्यप्रमाणको जान लिया है, क्षेत्रविधानमें भी जघन्य व उत्कृष्ट आदिके भेदोंसे जिनका अवगाहना प्रमाण जाना जा चुका है, तथा कालविधानमें जिनका जघन्य व उत्कृष्ट आदिके भेदोंसे कालप्रमाण ज्ञात हो चुका है, उन आठ कर्मोंकी अज्ञानादि कार्योंकी उत्पादक शक्तिके विकल्पोंकी प्ररूपणा करनेके लिये वेदनाभावविधानका अवतार हुआ है ।

अब उक्त तीन अनुयोगद्वारोंका नाम निर्देश करनेके लिये आगेका सूत्र कहा जाता है–

पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ॥ २ ॥

सूत्रमें निर्दिष्ट पदसे जघन्य व उत्कृष्ट आदि पदोंका ग्रहण किया है, क्योंकि, अन्यपदोंका यहां कोई प्रयोजन नहीं है । इसलिये यहां अर्थपद व व्यवस्थापद आदिक पदोंका ग्रहण नहीं होता है, किंतु भेदपदका ही ग्रहण किया जाता है । पदोंकी मीमांसा अर्थात् परीक्षा या गवेषणाका नाम पदमीमांसा है । यह प्रथम अधिकार है । घोडा व हाथी आदि सम्बन्धी स्वामित्वके भेदसे यद्यपि स्वामित्व बहुत प्रकारका है, तो भी यहां कर्मभावके स्वामित्वका ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि और दूसरोंका यहां अधिकार नहीं है । यह दूसरा अनुयोगद्वार है । अल्प–

घेत्तव्वं, अण्णेहि अहियाराभावादो। एदं[1] बिदियमणियोगद्दारं। अप्पाबहुगं पि जदि वि दव्वादिभेदेण अणेयविहं[2] तो वि एत्थ कम्मभावअप्पाबहुगस्सेव गहणं कायव्वं, अण्णेहि एत्थ पओजणाभावादो। एदं तदियमणियोगद्दारं। एवमेदेहि तीहि अणुयोगद्दारेहि भावपरूवणं कस्सामो।

पदमीमांसाए णाणावरणीयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा किं जहण्णा किमजहण्णा ॥ ३ ॥

एदं देसामासियसुत्तं, तेण अण्णेसिं णवण्णं पदाणं सूचयं होदि। तेण सव्वपदसमासो तेरस होदि। तं जहा- किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा किं जहण्णा किमजहण्णा किं सादिया किमणादिया किं धुवा किमद्धुवा किमोजा किं जुम्मा किमोमा किं विसिट्ठा किं णोमणोविसिट्ठा णाणावरणीयवेयणा त्ति। पुणो एत्थ एक्केक्कं पदमस्सिदूण बारहभंगप्पयाणि अण्णाणि तेरस पुच्छासुत्ताणि णिलीणाणि। ताणि वि एदेणेव सुत्तेण सूचिदाणि होंति। तदो चोद्दसण्णं पुच्छासुत्ताणं सव्वभंगसमासो एगूणसत्तरिसदमेत्तो त्ति बोद्धव्वो १६९। एत्थ पढमसुत्तस्स अट्ठपरूवणट्ठं देसामासियभावेण उत्तरसुत्तं भणदि-

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा जहण्णा वा अजहण्णा वा। ४।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

बहुत्व भी यद्यपि द्रव्यादिके भेदसे अनेक प्रकारका है तो भी यहाँ कर्मभावके अल्पबहुत्वका ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, दूसरे अल्पबहुत्वोंका यहाँ प्रयोजन नहीं है। यह तृतीय अनुयोगद्वार है। इस प्रकार इन तीन अनुयोगद्वारोंके द्वारा भावप्ररूपणा करते हैं।

पदमीमांसामें ज्ञानावरणीयवेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट है, क्या अनुत्कृष्ट है, क्या जघन्य है और क्या अजघन्य है ॥ ३ ॥

यह देशामर्शक सूत्र है, अतएव वह अन्य नौ पदोंका सूचक है। इसलिये सब पदोंका योग (४ + ९) तेरह होता है। वह इस प्रकार है- उक्त ज्ञानावरणीयवेदना क्या उत्कृष्ट है, क्या अनुत्कृष्ट है, क्या जघन्य है, क्या अजघन्य है, क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है, क्या अध्रुव है, क्या ओज है, क्या युग्म है, क्या ओम है, क्या विशिष्ट है और क्या नोमनोविशिष्ट है। फिर इस सूत्रमें एक-एक पदका आश्रय करके बारह भंग स्वरूप अन्य तेरह पृच्छासूत्र गर्भित हैं। वे भी इसी सूत्रसे सूचित हैं। इस कारण चौदह पृच्छासूत्रोंके सब भंगोंका जोड़ एक सौ उनहत्तर [१३ + (१२ × १३) = १६९] समझना चाहिये। यहाँ प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करनेके लिये देशामर्शक रूपसे आगेका सूत्र कहते हैं--

उक्त ज्ञानावरणीयवेदना उत्कृष्ट भी होती है, अनुत्कृष्ट भी होती है, जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है ॥ ४ ॥

[1] प्रतिषु 'एव' इति पाठः। [2] अप्रतौ 'अणेयविदं' इति पाठः।

एत्थ णाणावरणीयसामण्णे णिरुद्धे ओजपदं णत्थि । कुदो ? फद्दएसु वग्गणासु अविभागपलिच्छेदेसु च कदजुम्मभावस्सेव उवलंभादो । कथमणादियपदस्स संभवो ? ण, णाणावरणीयभावसामण्णे णिरुद्धे अणादियत्ताविरोहादो । ण च सादियपदस्स अभावो, विसेसे अप्पिदे तस्स वि उवलंभादो । ण च धुवत्ताभावो, सामण्णप्पणाए तदुवलंभादो ण च अद्धुवत्तस्स अभावो, अणुभागविसेसप्पणाए विसिट्ठेगजीवप्पणाए च अद्धुवत्तदंसणादो । तदो पढमसुत्तं बारहभंगप्पयं त्ति दट्ठव्वं १२ ।

पुणो बिदियपुच्छासुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा-- उक्कस्सअणुभागवेयणा सिया अजहण्णा, जहण्णादो उवरिमसव्वविय्पाणमजहण्णम्हि दंसणादो । सिया सादिया, अणुक्कस्साणुभागे ट्ठिदस्स उक्कस्साणुभागुप्पत्तीदो । उक्कस्सपदस्स अणादित्तं णत्थि, णाणाजीवप्पणाए वि उक्कस्सपदस्स अंतरदंसणादो । सिया अद्धुवा, उप्पण्णुक्कस्सपदस्स णियमेण विणासदंसणादो । उक्कस्सपदस्स धुवत्तं णत्थि, णाणाजीवप्पणाए वि उक्कस्सपदविणादंसणादो । सिया जुम्मा, उक्कस्साणुभागफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदेसु कदजुम्म--

---

यहाँ ज्ञानावरणीय सामान्यकी विवक्षा करनेपर ओज पद नहीं है, क्योंकि स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्मता ही पायी जाती है ।

शंका-- यहाँ अनादि पदकी सम्भावना कैसे है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि ज्ञानावरणीय भावसामान्यकी विवक्षा होनेपर उसके अनादि होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

सादि पदका भी यहाँ अभाव नहीं है, क्योंकि, विशेषकी विवक्षा करनेपर वह भी पाया जाता है । ध्रुव पदका भी अभाव नहीं है, क्योंकि सामान्यकी मुख्यता होनेपर वह भी पाया जाता है । अध्रुव पदका भी अभाव नहीं है, क्योंकि, अनुभागविशेषकी अथवा विशिष्ट एक जीवकी विवक्षा करनेपर अध्रुवपना देखा जाता है । इस कारण प्रथम सूत्र बारह (१२) भंग स्वरूप है, ऐसा समझना चाहिये ।

अब द्वितीय पृच्छासूत्रका अर्थ कहा जाता है । वह इस प्रकार है- उत्कृष्ट अनुभागवेदना कथंचित् अजघन्य है, क्योंकि, अजघन्य पदमें जघन्यसे आगेके सभी विकल्प देखे जाते हैं । कथंचित् सादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट अनुभागमें स्थित जीवके उत्कृष्ट अनुभाग उत्पन्न होता है । उत्कृष्ट पदके अनादिता नहीं है, क्योंकि, नाना जीवोंकी विवक्षा होनेपर भी उत्कृष्ट पदका अन्तर देखा जाता है । कथंचित् अध्रुव है, क्योंकि, उत्पन्न हुए उत्कृष्ट पदका नियमसे विनाश देखा जाता है । उत्कृष्ट पदके ध्रुवपना नहीं है, क्योंकि, नाना जीवोंकी विवक्षा होनेपर भी उत्कृष्ट पदका विनाश देखा जाता है । कथंचित् युग्म है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभाग स्वरूप स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्म संख्या ही पायी जाती है । कथंचित्

संखाए चेव उवलंभादो। सिया णोम-णोविसिट्ठा, एगवियप्पम्मि उक्कस्साणुभागे वड्ढिहाणीणमभावादो। एवमुक्कस्सपदं पंचवियप्पं ५।

संपहि सत्तियपुच्छासुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा- णाणावरणीयअणुक्कस्सवेयणा✽ सिया जहण्णा, उक्कस्सादो हेट्ठिमसव्ववियप्पेसु अणुक्कस्ससण्णिदेसु जहण्णस्स वि पवेसदंसणादो। सिया अजहण्णा, जहण्णादो उवरिमवियप्पेसु अजहण्णसण्णिदेसु अणुक्कस्सपदस्स वि पवेसदंसणादो। सिया सादिया, अणुक्कस्सपदविसेसं पडुच्च आदिभावदंसणादो। सिया अणादिया, अणुक्कस्ससामण्णप्पणाए आदिभावाणुवलंभादो। सिया धुवा, अणुक्कस्ससामण्णे अप्पिदे विणासाणुवलंभादो। सिया अद्धुवा, अणुक्कस्सपदविसेसे अप्पिदे✽ सव्वअणुक्कस्सपदविसेसाणं विणासदंसणादो। सिया जुम्मा, सव्वअणुक्कस्सविसेसगयअणुभागफद्दय-वग्गण-अविभागपडिच्छेदेसु कदजुम्मसंखाए उवलंभादो। सिया ओमा, कंडयघादेण अणुक्कस्सपदविसेसस्स हाणिदंसणादो। सिया विसिट्ठा, बंधेण अणुभागवड्ढिदंसणादो। सिया णोम-णोविसिट्ठा, कत्थ वि अणुक्कस्सपदविसेसस्स वड्ढिहाणीणमणुवलंभादो। एदमणुक्कस्सपदं दसवियप्पं होदि १०।

संपहि चउत्थपुच्छासुत्तस्स परूवणा वुच्चदे। तं जहा- जहण्णणाणावरणीयवेयणा सिया अणुक्कस्सा, उक्कस्सादो हेट्ठिमवियप्पम्मि अणुक्कस्ससण्णिदम्मि जहण्णस्स वि

नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, एक विकल्प स्वरूप उत्कृष्ट अनुभागमें वृद्धि व हानिका अभाव है। इस प्रकार उत्कृष्टपद पांच (५) विकल्प स्वरूप है।

अब तृतीय पृच्छासूत्रका अर्थ कहते है। वह इस प्रकार है- ज्ञानावरणीयकी अनुत्कृष्ट वेदना कथंचित् जघन्य है, क्योंकि, उत्कृष्टसे नीचेके अनुत्कृष्ट संज्ञावाले सब विकल्पोंमें जघन्य पदका भी प्रवेश देखा जाता है। कथंचित् अजघन्य है, क्योंकि, जघन्यसे ऊपरके अजघन्य संज्ञावाले समस्त विकल्पोंमें अनुत्कृष्ट पदका भी प्रवेश देखा जाता है। कथंचित् सादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट पदविशेषकी अपेक्षा उसके सादिता देखी जाती है। कथंचित् अनादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट सामान्यकी विवक्षा होनेपर सादिता नहीं पायी जाती है। कथंचित् ध्रुव है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट सामान्यकी विवक्षा होनेपर विनाश नहीं देखा जाता है। कथंचित् अध्रुव है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट पदविशेषकी विवक्षा होनेपर सब अनुत्कृष्ट पदविशेषोंका विनाश देखा जाता है। कथंचित् युग्म है, क्योंकि, सब अनुत्कृष्ट विशेषोंमें रहनेवाले अनुभाग स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्म संख्या पायी जाती है। कथंचित् ओम है, क्योंकि, काण्डकघातसे अनुत्कृष्ट पदविशेषकी हानि देखी जाती है। कथंचित् विशिष्ट है, क्योंकि, बन्धसे अनुभागकी वृद्धि देखी जाती है। कथंचित् नोम-नोविशिष्ट हैं, क्योंकि, कहींपर अनुत्कृष्ट पदविशेषकी वृद्धि व हानि नहीं पायी जाती है। इस प्रकार अनुत्कृष्ट पद दस (१०) भेद रूप है।

अब चतुर्थ पृच्छासूत्रकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- जघन्य ज्ञानावरणीयवेदना कथंचित् अनुत्कृष्ट है, क्योंकि, उत्कृष्टसे नीचेके अनुत्कृष्ट संज्ञावाले विकल्पमें जघन्य पदको भी

✽ अप्रतौ ' वीयणा ' इति पाठः। ✽ ताप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः ' सव्वमणुक्कस्स ' इति पाठः।

संभवादो । सिया सादिया, अजहण्णपदादो जहण्णपदस्स उप्पत्तिदंसणादो । अणादियभावो णत्थि, सव्वकालं जहण्णपदेणेव अवट्ठिदजीवाणुवलंभादो । सिया अद्धुवा, अजहण्णपदादो जहण्णपदुप्पत्तीदो । जहण्णस्स धुवभावो णत्थि, जहण्णपदे चेव सव्वकालमवट्ठिदजीवाणुवलंभादो । सिया जुम्मा, जहण्णाणुभागफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदाणं कदजुम्मसंखाणमुवलंभादो । ओजपदं णत्थि । सिया णोम णोविसिट्ठा, वड्ढिदे हाइदे च जहण्णत्ताभावादो । एवं जहण्णपदं पंचवियप्पं ५ ।

संपहि पंचमसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा– णाणावरणीयस्स अजहण्णवेयणा सिया उक्कस्सा, सिया अणुक्कस्सा; एदेसिं दोण्हं पदाणं तत्थुवलंभादो । सिया सादिया, अजहण्णपदविसेसं पडुच्च सादियत्तदंसणादो । सिया अणादिया, अजहण्णपदसामण्णं पडुच्च अणादियभावादो । सिया धुवा, अजहण्णपदसामण्णस्स तिसु वि कालेसु विणासाभावादो । सिया अद्धुवा, अजहण्णपदविसेसं पडुच्च विणासदंसणादो । सिया जुम्मा, अजहण्णाणुभागफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदेसु कदजुम्मसंखाए चेव उवलंभादो । सिया

सम्भावना है । कथंचित् सादि है, क्योंकि, अजघन्य पदसे जघन्य पदकी उत्पत्ति देखी जाती है । अनादिता नहीं है, क्योंकि, सदा केवल जघन्य पदके साथ रहनेवाले जीव नहीं पाये जाते । कथंचित् अध्रुव है, क्योंकि, अजघन्य पदसे जघन्य पद उत्पन्न होता है । जघन्य पदके ध्रुवता नहीं है, क्योंकि, जघन्य पदमें ही सदा जीवोंका अवस्थान नहीं पाया जाता । कथंचित् युग्म है, क्योंकि, जघन्य अनुभाग सम्बन्धी स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंकी कृतयुग्म संख्याएं पायी जाती हैं । ओजपद नहीं है । कथंचित् नोमनोविशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धि व हानिके होनेपर जघन्यपना नहीं रह सकता । इस प्रकार जघन्य पद पांच (५) भेद स्वरूप है ।

अब पांचवें सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है– ज्ञानावरणीयकी अजघन्य वेदना कथंचित् उत्कृष्ट है और कथंचित् अनुत्कृष्ट है, क्योंकि, उसमें ये दोनों पद पाये जाते हैं । कथंचित् सादि है, क्योंकि, अजघन्य पदविशेषकी अपेक्षा सादिता देखी जाती है । कथंचित् अनादि है, क्योंकि, अजघन्य पद सामान्यकी अपेक्षा आदिका अभाव है । कथंचित् ध्रुव है, क्योंकि, अजघन्य पद सामान्यका तीनों ही कालोंमें विनाश नहीं होता । कथंचित् अध्रुव है, क्योंकि, अजघन्य पदविशेषकी अपेक्षा उसका विनाश देखा जाता है । कथंचित् युग्म है, क्योंकि, अजघन्य अनुभागके स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंकी कृतयुग्म संख्या ही

ओमा, हाइदे वि अजहण्णत्तदंसणादो। सिया विसिट्ठा, वड्ढिदे वि तदुवलंभादो। सिया णोम-णोविसिट्ठा, वड्ढि-हाणीहि विणा अवट्ठिदअजहण्णाणुभागदंसणादो। एवमजहण्णपदं दसवियप्पं होदि। १०।

संपहि छट्ठपुच्छासुत्तं* पडुच्च अत्थपरूवणा कीरदे। तं जहा- णाणावरणीयस्स सादिवेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा। सिया अणादिया, णाणाजीवावेक्खाए सादित्तेण वि आदिभावाणुवलंभादो। सिया धुवा, णाणाजीवे पडुच्च सव्वकालेसु सादित्तदंसणादो। सिया अद्धुवा, सादिभावमापण्णाणुभागस्स विणासदंसणादो। सिया जुम्मा, अणुभागम्मि फद्दय-वग्गणाविभागपडिच्छेदेसु तिसु वि कालेसु कदजुम्मभावस्सेव दंसणादो। सिया ओमा, हाइदे वि सादित्तदंसणादो। सिया विसिट्ठा, वड्ढिदे वि तदुवलंभादो। सिया णोमणोविसिट्ठा, वड्ढि-हाणीहि विणा वि तदवट्ठाणदंसणादो। एवं सादियपदमेक्कारसवियप्पं होदि ॥ ११ ॥

संपहि सत्तमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणा कीरदे। तं जहा- अणादियणाणावरणीयवेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा। सिया सादिया, णाणावरणीयअणुभागविसेसं पडुच्च सादित्तदंसणादो। सिया धुवा, अणुभाग-

पायी जाती है। कथंचित् ओम है, क्योंकि, हानिके होनेपर भी अजघन्यता देखी जाती है। कथंचित् विशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धिके होनेपर भी अजघन्यता देखी जाती है। कथंचित् नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धि व हानिके विना अजघन्य अनुभागका अवस्थान देखा जाता है। इस प्रकार अजघन्य पद दस (१०) भेद स्वरूप है।

अब छठे पृच्छासूत्रका आश्रय करके अर्थप्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है-- ज्ञानावरणीयकी सादि वेदना कथंचित् उत्कृष्ट है, कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् जघन्य है व कथंचित् अजघन्य है। कथंचित् अनादि है, क्योंकि; नाना जीवोंकी अपेक्षा सादि स्वरूपसे भी आदिभाव नहीं पाया जाता। कथंचित् ध्रुव है, क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा सादि स्वरूपसे भी आदिभाव नहीं पाया जाता। कथंचित् ध्रुव है, क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा करके सब कालमें उसकी सादिता देखी जाती है। कथंचित् अध्रुव है, क्योंकि, सादिताको प्राप्त अनुभागका विनाश देखा जाता है। कथंचित् युग्म है, क्योंकि, तीनों ही कालोंमें अनुभागके स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्मता ही देखी जाती है। कथंचित् ओम है, क्योंकि, हानिके होनेपर भी सादिता पायी जाती है। कथंचित् विशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धिके होनेपर भी सादिता पायी जाती है। कथंचित् वह नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धि व हानिके विना भी उसका अवस्थान देखा जाता है। इस प्रकार सादिपद ग्यारह (११) भेद रूप है।

अब सातवें पृच्छासूत्रकी अपेक्षा करके अर्थकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है- अनादि ज्ञानावरणवेदना कथंचित् उत्कृष्ट है, कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् जघन्य है व कथंचित् अजघन्य है। कथंचित् सादि है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयके अनुभागविशेषका आश्रय करके सादिता देखी

* अप्रतौ ' छट्ठसुपुच्छासुत्त ', ताप्रतौ ' छट्ठ (सु) पुच्छासुत्तं ' इति पाठः।

सामण्णस्स विणासाभावादो । सिया अद्धुवा, तव्विसेसं पडुच्च विणासदंसणादो । सिया जुम्मा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवमणादियपद-मेक्कारसवियप्पं होदि ११ ।

संपहि णवमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा- धुवणाणावरणीयभाववेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया अद्धुवा सिया जुम्मा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवं धुवपदमेक्कारसविहं होदि ११ ।

संपहि णवमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा- अद्धुवणाणावरणीयवेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया, णाणाजीवेसु अणादिसरूवेण अद्धुवत्तदंसणादो । सिया धुवा विसेसाभावेण अद्धुवस्स अणुभागस्स सामण्णभावेण धुवत्तदंसणादो । सिया जुम्मा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवमद्धुवपद-मेक्कारसवियप्पं होदि ११ ।

दसमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा- जुम्मणाणावरणीयभाव-वेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया

जाती है । कथंचित् ध्रुव है, क्योंकि, अनुभागसामान्यका कभी विनाश नहीं होता । कथंचित् अध्रुव है, क्योंकि, अनुभागविशेषकी अपेक्षा उसका विनाश देखा जाता है । कथंचित् युग्म है, कथंचित् ओम है, कथंचित् विशिष्ट है व कथंचित् नोम-नोविशिष्ट है । इस प्रकार अनादि पद ग्यारह (११) भेद रूप है ।

अब आठवें पृच्छासूत्रका आश्रय करके अर्थप्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है-- ध्रुवज्ञानावरणीयभाववेदना कथंचित् उत्कृष्ट है, कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् जघन्य है कथंचित् अजघन्य है, कथंचित् सादि है, कथंचित् अनादि है, कथंचित् अध्रुव है, कथंचित् युग्म है, कथंचित् ओम है, कथंचित् विशिष्ट है, व कथंचित् नोम--नोविशिष्ट है । इस प्रकार ध्रुव पद ग्यारह (११) प्रकारका है ।

अब नौवें पृच्छासूत्रका आश्रय कर अर्थप्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- अध्रुव ज्ञानावरणीयवेदना कथंचित् उत्कृष्ट है, कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् जघन्य है, कथंचित् अजघन्य है व कथंचित् सादि है । कथंचित् अनादि है, क्योंकि, नाना जीवोंमें अनादि स्वरूपसे अध्रुवता पायी जाती है । कथंचित् ध्रुव है, क्योंकि, विशेषकी विवक्षा न होनेसे अध्रुव अनुभागकी सामान्य रूपसे ध्रुवता देखी जाती है । कथंचित् युग्म है, कथंचित् ओम है, कथंचित विशिष्ट है और कथंचित् नोम-नोविशिष्ट है । इस प्रकार अध्रुव पद ग्यारह (११) विकल्प रूप है ।

दसवें पृच्छासूत्रका आश्रय कर अर्थप्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- युग्म ज्ञानावरणीयभाववेदना कथंचित् उत्कृष्ट है, कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् जघन्य है, कथंचित्

सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवं जुम्मपदं एक्कारसवियप्पं होदि ११ ।

संपहि एक्कारसमपुच्छासुत्तस्स अत्थो उच्चदे, णत्थि, अणुभागे ओजसंखाभावादो ।

संपहि बारसमसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा- ओमणाणावरणीयभाववेयणा सिया अणुक्कस्सा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया जुम्मा । एवमोमपदं सत्तवियप्पं होदि ७ ।

संपहि तेरसमपुच्छासुत्तत्थं भणिस्सामो । तं जहा- विसिट्ठणाणावरणीयभाव-वेयणा सिया अणुक्कस्सा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया जुम्मा । एवं विसिट्ठपदं सत्तवियप्पं होदि ७ ।

संपहि चोद्दसमपुच्छासुत्तत्थं भणिस्सामो । तं जहा- णोम-णोविसिट्ठा णाणा-वरणीयभाववेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया जुम्मा । एवं णोम-णोविसिट्ठपदं णववियप्पं होदि ९ । सव्वसुत्तभंगंकसंदिट्ठी – १२ । ५ । १० । ५ । १० । ११ । ११ । ११ । ११ । ११ (।०) । ७ । ७ । ९ ।

अजघन्य है, कथंचित् सादि है, कथंचित् अनादि है, कथंचित् ध्रुव है, कथंचित् अध्रुव है कथंचित् ओम है, कथंचित् विशिष्ट है, और कथंचित् नोम-नोविशिष्ट है । इस प्रकार युग्म पद ग्यारह (११) विकल्प रूप है ।

ग्यारहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते है नहीं है, क्योंकि अनुभागमें ओज संख्या सम्भव नहीं है ।

बारहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- ओम ज्ञानावरणीय भाव-वेदना कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् अजघन्य है, कथंचित् सादि है, कथंचित् अनादि है, कथं-चित् ध्रुव है, कथंचित् अध्रुव है और कथंचित् युग्म है । इस प्रकार ओम पद सात (७) विकल्प रूप है ।

अब तेरहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- विशिष्ट ज्ञानावरणीय भाववेदना कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् अजघन्य है, कथंचित् सादि है, कथंचित् अनादि है, कथंचित् ध्रुव है कथंचित् अध्रुव है और कथंचित् युग्म है । इस प्रकार विशिष्ट पद सात (७) विकल्प रूप है ।

अब चौदहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- नोम-नोविशिष्ट ज्ञाना-वरणीय भाववेदना कथंचित् उत्कृष्ट है, कथंचित् अनुत्कृष्ट है, कथंचित् जघन्य है, कथंचित् अजघन्य है, कथंचित् सादि है, कथंचित् अनादि है, कथंचित् ध्रुव है, कथंचित् अध्रुव है और कथंचित् युग्म है । इस प्रकार नोम-नोविशिष्ट पद नौ (९) विकल्प रूप है । सब सूत्रोंके भंगोंके अंकोंकी संदृष्टि-१२+५+१०+५+१०+११+११+११+११+११(+०)+७+७+९ है ।

बारस पण दस पण दस पंचेक्कारस य सत्त सत्त णव।
दुविहणयगहणलीणा पुच्छासुत्तंकसंदिट्ठी ॥ १ ॥

बारह, पाँच, दस, पाँच, दस, पाँच स्थानोंमें ग्यारह, सात, सात और नौ, इस प्रकार दोनों नयोंकी अपेक्षा यह पृच्छासूत्रोंके अंकोंकी संदृष्टि है ॥ १ ॥

विशेषार्थ–वेदना भावविधानका यहाँ मुख्यतया तीन अधिकारोंके द्वारा कथन किया गया है। वे तीन अनुयोगद्वार ये हैं– पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। उत्कृष्ट आदि पदोंके द्वारा वेदनाभाव विधानके विचारका नाम पदमीमांसा है। यहाँ सूत्रमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य इन चार पदोंका ही निर्देश किया है किन्तु वीरसेन स्वामीने इनसे सूचित होने-वाले नौ पद और गिनाए हैं। ये कुल तेरह पद हैं। उसमें भी इनमेंसे एक-एक पदके आश्रयसे शेष पदोंका विचार करने पर कुल १६९ पद होते हैं। यहाँ ज्ञानावरणीय भाववेदनाका विचार प्रस्तुत है। इस अपेक्षासे कुल संयोगी पद कितने होते हैं इसका कोष्ठक आगे देते हैं–

	उक्क.	अनु.	जघ.	अज.	सादि.	अणा.	ध्रुव	अध्रु.	ओज.	युग्म.	ओम	विसि.	णोम.
उक्क.		×	×	"	"	×	×	"	×	"	×	×	"
अनु.	×		"	"	"	"	"	"	×	"	"	"	"
जघ.	×	"		×	"	×	×	"	×	"	×	×	"
अज.	"	"	×		"	"	"	"	×	"	"	"	"
सादि.	"	"	"	"		"	"	"	×	"	"	"	"
अणा.	"	"	"	"	"		"	"	×	"	"	"	"
ध्रुव	"	"	"	"	"	"		"	×	"	"	"	"
अध्रु.	"	"	"	"	"	"	"		×	"	"	"	"
ओज.	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×
युग्म.	"	"	"	"	"	"	"	"	×		"	"	"
ओम	×	"	×	"	"	"	"	"	×	"		×	×
विसि	×	"	×	"	"	"	"	"	×	"	×		×
णोम.	"	"	"	"	"	"	"	"	×	"	×	×	

यहाँ ओज पद क्यों सम्भव नहीं है इस बातका विचार टीकामें किया ही है तथा शेष पद प्रत्येक और संयोगी कैसे घटित होते हैं यह बात भी टीकामें विस्तारसे बतलाई है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूविदं तहा सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं । एवं पद-मीमांसा त्ति अणुयोगद्दारं सगंतोक्खित्तओजाहियारं समत्तं ।

सामित्तं दुविहं जहण्णपदे उक्कस्सपदे ॥ ६ ॥

एत्थ 'पद' सद्दो ट्ठाणट्ठे वट्टव्वो । जहण्णपदे एगं सामित्तं विदियं उक्कस्सपदे एवं सामित्तं दुविहं । अजहण्ण-अणुक्कस्सपदसामित्तेहि सह चउव्विहं किण्ण भण्णदे? ण, एत्थेव तेसिमंतब्भावादो । तं जहा- उक्कस्सं दुविहं, ओघुक्कस्समादेसुक्कस्सं चेदि । तत्थ संगहिदासेसवियप्पमोघुक्कस्सं । अप्पिदवियप्पादो अहियमादेसुक्कस्सं । अणुक्कस्सं आदेसुक्कस्समिदि एयट्ठो । तेण 'उक्कस्सं' इदि उत्ते एदेसिं दोण्णमुक्कस्साणं गहणं । जहण्णं पि दुविहं, ओघजहण्णमादेसजहण्णमिदि । जत्तो हेट्ठा अण्णो वियप्पो णत्थि तमोघजहण्णं । अप्पिदादो एगवियप्पाविणा परिहीणमादेसजहण्णं । तत्थ 'जहण्णपदं' इदि वुत्ते एदेसिं दोण्णं पि जहण्णाणं गहणं कायव्वं । तेण सामित्तं दुविहं चेव ण चउव्विहं । जत्थ जत्थ दुविहं सामित्तमिदि भणिदं भणिहिदि तत्थ तत्थ एवं चेव दुविहभावसमत्थणा कायव्वा ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें पदप्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके पदोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके पदोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये । इस प्रकार ओज अधिकारगर्भित पदमीमांसा नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

स्वामित्व दो प्रकारका है- जघन्य पद विषयक और उत्कृष्ट पद विषयक । ६ ।

यहाँ पर पद शब्दका अर्थ स्थान समझना चाहिये । एक स्वामित्व जघन्य पदमें होता है और दूसरा स्वामित्व उत्कृष्ट पदमें होता है । इस तरह स्वामित्व दो प्रकारका होता है ।

शंका-- अजघन्य और अनुत्कृष्ट पद विषयक स्वामित्वके साथ स्वामित्व चार प्रकारका क्यों नहीं कहा ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, इन्हीं दोनोंमें उनका अन्तर्भाव हो जाता है । यथा-- उत्कृष्ट स्वामित्व दो प्रकारका है-- ओघ उत्कृष्ट और आदेश उत्कृष्ट । उनमेंसे समस्त विकल्पोंका संग्रह करनेवाला ओघ उत्कृष्ट स्वामित्व है और विवक्षित विकल्पसे अधिक आदेश उत्कृष्ट स्वामित्व है । अनुत्कृष्ट और आदेश उत्कृष्ट इन दोनोंका एक अर्थ है, इसी कारण 'उत्कृष्ट' ऐसा कहनेपर इन दोनों उत्कृष्टोंका ग्रहण हो जाता है । जघन्य भी दो प्रकारका है- ओघ 'जघन्य और आदेश' जघन्य । जिसके नीचे और कोई दूसरा विकल्प नहीं रहता वह ओघ जघन्य स्वामित्व है तथा विवक्षित विकल्पसे एक विकल्प आदिसे हीन आदेश जघन्य स्वामित्व है । उनमेंसे 'जघन्यपद' ऐसा कहनेपर इन दोनों ही जघन्योंका ग्रहण करना चाहिये । इसलिए स्वामित्व दो प्रकारका ही है, चार प्रकारका नहीं इसलिए जहाँ-जहाँ स्वामित्व दो प्रकारका कहा गया है या कहा जावेगा वहाँ-वहाँ इसी प्रकार दो भेदोंका समर्थन करना चाहिये ।

सामित्तेण उक्कस्सपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ? ॥ ७ ॥

' सामित्तेणे ' त्ति कधमेत्थ तइया? ण एस दोसो; लक्खणे वि तइयाविहत्ति विहाणादो । 'उक्कस्सपद' णिद्देसेण जहण्णपदपडिसेहो कदो । सेसकम्मपडिसेहट्ठं 'णाणावरणीय' णिद्देसो कदो । दव्वादिपडिसेहफलो 'भाव' णिद्देसो । 'कस्से' त्ति वुत्ते किं णेरइयस्स तिरिक्खस्स मणुस्सस्स देवस्स एइंदियस्स बीइंदियस्स तीइंदियस्स चउरिंदियस्स वा त्ति पुच्छा कदा होदि आसंका वा ।

अण्णदरेण पंचिंदिएण सण्णिमिच्छाइट्ठिणा सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तगदेण सागारुवजोगेण जागारेण णियमा* उक्कस्ससंकिलिट्ठेण बंधल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ॥ ८ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं सुत्तमुक्कस्साणुभागं बंधंतयस्स लक्खणं परूवेदि । विगलिंदिया उक्कस्साणुभागं ण बंधंति पंचिंदिया चेव बंधंति त्ति जाणावणट्ठं 'पंचिंदिएण' त्ति भणिदं। वेदोगाहण-गदिविसेसाभावपदुप्पायणट्ठं* 'अण्णदरेण' त्ति भणिदं । असण्णिपडिसेहट्ठं

स्वामित्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट पदमें भावसे ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट वेदना किसके होती है ? ॥ ७ ॥

शंका– ' सामित्तेण ' इस प्रकार यहां तृतीया विभक्ति कैसे सम्भव है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, लक्षणमें भी तृतीया विभक्तिका विधान किया जाता है ।

सूत्रमें उत्कृष्ट पदके निर्देश द्वारा जघन्य पदका प्रतिषेध किया है । शेष कर्मोंका प्रतिषेध करनेके लिये ज्ञानावरणीय पदका निर्देश किया है । भावपदके निर्देशका फल द्रव्यादिका प्रतिषेध करना है । ' किसके होती है ' ऐसा कहनेपर 'क्या नारकीके, तिर्यंचके, मनुष्यके, देवके एकेन्द्रियके, द्वीन्द्रियके, त्रीन्द्रियके अथवा चतुरिन्द्रियके होती है ' ऐसी पृच्छा अथवा आशंका प्रगट की गई है ।

अन्यतर पंचेन्द्रिय, संज्ञी, मिथ्यादृष्टि, सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त, साकार उपयोग युक्त, जागृत और नियमसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त जिस जीवके द्वारा बन्ध होता है और जिस जीवके इसका सत्व होता है ॥ ८ ॥

यह सूत्र उत्कृष्ट अनुभागको बांधनेवाले जीवका लक्षण बतलाता है । विकलेन्द्रिय उत्कृष्ट अनुभागको नहीं बाँधते हैं, किन्तु पंचेन्द्रिय ही बांधते हैं; इस बातके ज्ञापनार्थ सूत्रमें पंचेन्द्रिय पदका निर्देश किया है । वेद, अवगाहना एवं गति आदिकी विशेषताका अभाव बतलानेके लिये

---

* अप्रतौ ' सागार आगार णियमा ' इति पाठः । * अप्रतौ ' विसेसाभव ' इति पाठः ।

'सण्णि'णिद्देसो कदो। सासणादिपडिसेहफलं मिच्छाइट्ठि'णिद्देसो। अपज्जत्तद्धाए उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि, पज्जत्तद्धाए चेव बज्झदि त्ति जाणावणट्ठं 'सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेणे' त्ति भणिदं। दंसणोवजोगकाले उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि णाणोवजोगकाले चेव होदि त्ति जाणावणट्ठं 'सागार'णिद्देसो कदो। सुत्तावत्थाए उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि जागंतस्सेव अत्थि त्ति जाणावणट्ठं 'जागार'णिद्देसो कदो। मंद-मंदतर-मंदतम-तिव्व-तिव्वतर-तिव्वतमभेदेण छसु संकिलेसट्ठाणेसु छट्ठसंकिलेसट्ठाणे सो उक्कस्साणुभागो बज्झदि त्ति जाणावणट्ठं 'उक्कस्ससंकिलिट्ठेणे' त्ति भणिदं। ण च सो एयवियप्पो, आदेसुक्कस्सओघुक्कस्साणं दोण्णं पि गहणादो। 'णियमा' सद्दो जेण मज्झदीवओ तेण णियमा पंचिंदियेण णियमा सण्णिमिच्छाइट्ठिणा णियमा सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण णियमा सागारुवजोगेण णियमा जागारेण णियमा उक्कस्ससंकिलिट्ठेणेत्ति वत्तव्वं। एवंविहेण जीवेण बद्धल्लयमुक्कस्साणुभागं जस्स तं संतकम्मसत्थि तस्से त्ति वुत्तं होदि।

तं संतकम्ममेदस्स होदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमागदं–

तं एइंदियस्स वा बीइंदियस्स वा तीइंदियस्स वा चउरिंदियस्स वा पंचिंदियस्स वा सण्णिस्स वा असण्णिस्स वा बादरस्स वा सुहुमस्स

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

'अन्यतर' पद दिया है। असंज्ञीका प्रतिषेध करनेके लिये 'संज्ञी' पदका निर्देश किया है। सासादन आदिका प्रतिषेध करनेके लिए 'मिथ्यादृष्टि' पदका ग्रहण किया है। अपर्याप्त कालमें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, किन्तु पर्याप्त कालमें ही उसका बन्ध होता है; इस बातके ज्ञापनार्थ 'सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त' ऐसा कहा है। दर्शनोपयोगके कालमें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, किन्तु ज्ञानोपयोगके कालमें ही होता है; यह बतलानेके लिये 'साकार' पदका निर्देश किया है। सुप्त अवस्थामें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, किन्तु जागृत अवस्थामें ही होता है; यह बतलानेके लिये 'जागार' पदका निर्देश किया है। मन्द, मन्दतर, मन्दतम, तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतमके भेदसे छह संक्लेशस्थानोंमेंसे छठे संक्लेशस्थानमें वह उत्कृष्ट अनुभाग बँधता है; यह बतलानेके लिये 'उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त' ऐसा कहा गया है। यह एक प्रकारका नहीं है, क्योंकि, यहाँ आदेश उत्कृष्ट और ओघ उत्कृष्ट इन दोनोंका ही ग्रहण है। सूत्रमें आया हुआ 'णियमा' पद चूंकि मध्य दीपक है अतः "नियमसे पंचेन्द्रिय, नियमसे संज्ञी एवं मिथ्यादृष्टि, नियमसे सब पर्याप्तियोंद्वारा पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त, नियमसे साकार उपयोगसे संयुक्त, नियमसे जागृत, तथा नियमसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त" ऐसा कहना चाहिये। उपर्युक्त विशेषणोंसे संयुक्त जीवके द्वारा बाँधे गये उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व जिस जीवके होता है उसके ज्ञानावरणीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है यह उक्त कथनका अभिप्राय है।

उसका सत्त्व इसके होता है, यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र आया है–

उसका सत्त्व एकेन्द्रिय, अथवा द्वीन्द्रिय, अथवा त्रीन्द्रिय, अथवा चतुरिन्द्रिय, अथवा पञ्चेन्द्रिय, अथवा संज्ञी, अथवा असंज्ञी, अथवा बादर, अथवा सूक्ष्म, अथवा

वा पज्जत्तस्स वा अपज्जत्तस्स वा अण्णदरस्स जीवस्स अण्णवियाए गदीए वट्टमाणस्स तस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा । ९ ।

तं संतकम्मं होदूण एइंदियादिएसु अपज्जत्तचरिमसमएसु लद्धसरूवं कधमण्णत्थ बद्धस्स उक्कस्साणुभागस्स अण्णत्थ संभवो ? ण एस दोसो; उक्कस्साणुभागं बंधिदूण तस्स कंडयघादमकाऊण अंतोमुहुत्तेण कालेण एइंदियादिसु उप्पण्णाणं जीवाणं उक्कस्साणुभागसंतोवलंभादो । एवमेदेसु अवत्थाविसेसेसु वट्टमाणस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा होदि त्ति घेत्तव्वं । एत्थ उवसंहारो किमिदि ण वुच्चदे ? ण एस दोसो; ठाणफद्दय-वग्गणाविभागपडिच्छेदेसु अणिवुणस्स उअसंघारे* भण्णमाणे वामोहो मा होहिदि* त्ति कट्टु तप्परूवणाए अकरणादो ।

तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा । १० ।

तत्तो उक्कस्साणुभागादो(?) वदिरित्तं तव्वदिरित्तं, सा अणुक्कस्सा भाववेयणा । एत्थ अणुक्कस्सट्ठाणाणं पुध पुध परूवणा किण्ण कीरदे? ण, उवरिमअणुभागचूलियाए अणु-

---

पर्याप्त, अथवा अपर्याप्त अन्यतर जीवके अन्यतम गतिमें विद्यमान होनेपर होता है; अतएव उक्त जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है । ९ ।

वह सत्कर्म सूत्रमें कही गई एकेन्द्रियसे लेकर अपर्याप्त अवस्थातक सब अवस्थाविशेषोंमें पाया जाता है ।

शंका– अन्यत्र बांधे गये उत्कृष्ट अनुभागकी दूसरी जगह सम्भावना कैसे हो सकती है?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर उसका काण्डकघात किये विना अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर एकेन्द्रियादिकोंमें उत्पन्न हुए जीवोंके उत्कृष्ट अनुभागका सत्व पाया जाता है । इस प्रकार इन अवस्थाविशेषोंमें वर्तमान जीवके ज्ञानावरणीयवेदना भावसे उत्कृष्ट होती है, ऐसा यहां ग्रहण करना चाहिये ।

शंका– यहां उपसंहारका कथन क्यों नहीं करते ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जो शिष्य स्थान, स्पर्धक, वर्गणा और अविभागप्रतिच्छेदके विषयमें निपुण नहीं है उसे उपसंहारक कथन करनेपर व्यामोह न हो; इस कारण यहां उपसंहारक कथन नहीं किया है ।

उससे भिन्न अनुत्कृष्ट भाव वेदना होती है ।। १० ।।

उससे अर्थात् उत्कृष्ट अनुभागसे भिन्न जो वेदना है वह तद्व्यतिरिक्त कहलाती है और वह अनुत्कृष्ट भाववेदना है ।

शंका– यहां अनुत्कृष्ट स्थानोंकी पृथक् पृथक् प्ररूपणा क्यों नहीं करते ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, आगे अनुभागचूलिकामें अनुभागस्थानोंका कथन करेंगे ही फिर

---

* अप्रतौ ' उवसंघादे ' इति पाठः । * प्रतिषु ' होहदि ' इति पाठः । (?) अप्रतौ ' भागोदो ' इति पाठः ।

भागट्ठाणपरूवणं भणिहिदि एत्थ वि तप्पक्खणे कीरमाणे पुणरुत्तदोसो होदि त्ति तक्करणादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ११ ॥

जहा णाणावरणीयअणुभागस्स उक्कस्साणुक्कस्सपरूवणा कदा तहा सेसाणं तिण्णं घादिकम्माणमुक्कस्साणुक्कस्सअणुभागपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो ।

सामित्तेण उक्कस्सपदे वेयणीयवेयणा *भावदो उक्कस्सिया कस्स ? ॥ १२ ॥

सुगममेदं ।

अण्णदरेण खवगेण सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेण चरिमसमयबद्ध-ल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ॥ १३ ॥

वेदोगाहणादिविसेसाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरेण' त्ति भणिदं । अक्खवगपडिसेहट्ठं 'खवगेण' त्ति णिद्दिट्ठं । 'सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेण' त्ति णिद्देसो सेसखवग-पडिसेहफलो । दुचरिमादिसमएसु बद्धाणुभागपडिसेहट्ठं 'चरिमसमयबद्धल्लयं' त्ति भणिदं । एदेण सुत्तेण चरिमसमयसुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदो उक्कस्साणुभागसामी होदि त्ति जाणाविदं ।

भी यहां उनका कथन करनेपर चूंकि पुनरुक्त दोष होता है, अतः उनका कथन नहीं किया है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके विषयमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ११ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागके स्वामीकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष तीन घातिया कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि इससे उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

स्वामित्वसे उत्कृष्ट पदमें वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट किसके होती है ? १२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्यतर क्षपक सूक्ष्मसाम्परायिक शुद्धिसंयत जिस जीवके द्वारा अन्तिम समयमें बन्ध होता है और जिस जीवके इसका सत्त्व होता है ॥ १३ ॥

वेद व अवगाहना आदिकी कोई विशेषता विवक्षित नहीं है यह बतलानेके लिये सूत्रमें 'अन्यतर' पद कहा है । अक्षपकका प्रतिषेध करनेके लिये 'क्षपक' पदका निर्देश किया है । 'सूक्ष्मसांपरायिकशुद्धिसंयत' के निर्देशका प्रयोजन शेष क्षपकोंका प्रतिषेध करना है । द्विचरम आदिक समयोंमें बांधे गये अनुभागका प्रतिषेध करनेके लिये 'चरिम समयमें बांधा गया' ऐसा कहा है । इस सूत्रके द्वारा अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसांपरायिकशुद्धिसंयत उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है, यह

---

* प्रतिषु ' भावादो ' इति पाठः ।

ण केवलमेसो चेव उक्कस्साणुभागसामी होदि, किंतु जस्स तं संतकम्ममत्थि सो वि सामी होदि ।

तं संतकम्मं केसु होदि त्ति वुत्ते एदेसु होदि त्ति जाणावणट्ठं उत्तरसुत्तं भणदि-

तं खीणकसायवीदरागछदुमत्थस्स वा सजोगिकेवलिस्स वा तस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा ॥ १४ ॥

सादावेदणीयउक्कस्साणुभागं बंधिय खीणकसाय-सजोगि-अजोगिगुणट्ठाणाणि उवगयस्स वेयणीयउक्कस्साणुभागो एदेसु गुणट्ठाणेसु लब्भदि । सुत्तम्हि अजोगिणिद्देसाभावेण कथमत्थ अजोगिम्हि उक्कस्साणुभागो होदि त्ति लब्भदे ? ण विदिय 'वा' सद्देण तदुवलद्धी, 'पंचिंदियस्स वा' इच्चेवमाईसु ट्ठिद 'वा' सद्दो व्व वुत्तसमुच्चए तस्स पवुत्तीदो त्ति ? होदु* तत्थतण 'वा' सद्दाणं समुच्चए पवुत्ती, तत्थ अण्णत्थाभावादो । एत्थतणो पुणो विदिय 'वा' सद्दो अवुत्तसमुच्चए वट्टदे, पढम 'वा' सद्देणेव वुत्तसमुच्चयत्थसिद्धीदो । तदो विदिय 'वा' सद्दो अजोगिग्गहणणिमित्तो त्ति घेत्तव्वो । अधवा, होदु णाम बिदिय 'वा' सद्दो वि वुत्तसमुच्चयट्ठो । अजोगिस्स कधं पुण गहणं होदि ? अत्थावत्तीदो । तं जहा–खीणकसाय-सजोगि

प्रगट किया गया है । केवल यही जीव उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है, यह बात नहीं है; किन्तु जिस जीवके उसका सत्त्व रहता है वह भी उसका स्वामी होता है ।

उसका सत्त्व किसके होता है, ऐसा पूछनेपर इन जीवोंके उसका सत्त्व होता है; यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं–

उसका सत्त्व क्षीणकषायवीतराग छद्मस्थके होता है अथवा सयोगिकेवलीके होता है, अतएव उनके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है । १४ ।

सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर क्षीणकषाय, सयोगी और अयोगी गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके इन गुणस्थानोंमें वेदनीयका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है ।

शंका– सूत्रमें अयोगी पदका निर्देश किये बिना अयोगिकेवली गुणस्थानमें उत्कृष्ट अनुभाग होता है, यह कैसे जाना जाता है ? द्वितीय वा शब्दसे उसका परिज्ञान होता है, यह भी यहाँ नहीं कहा जा सकता है, कारण कि 'पंचिंदियस्स वा' इत्यादिकोंमें स्थित वा शब्दके समान द्वितीय वा शब्द उक्त अर्थके समुच्चयमें प्रवृत्त है ?

समाधान– 'पंचिंदियस्स वा' इत्यादिकोंमें स्थित वा शब्दोंकी प्रवृत्ति उक्त अर्थके समुच्चयमें भले ही हो, क्योंकि, वहां उनका दूसरा अर्थ नहीं है । किन्तु यहां स्थित द्वितीय 'वा' शब्द अनुक्त अर्थके समुच्चयमें प्रवृत्त है, क्योंकि, उक्त समुच्चयरूप अर्थकी सिद्धि प्रथम वा शब्दसे ही हो जाती है । अतएव द्वितीय वा शब्दको अयोगिकेवलीका ग्रहण करनेके निमित्त समझना चाहिये ।

अथवा, द्वितीय वा शब्द भी उक्त अर्थका समुच्चय करनेके लिये है । तो फिर अयोगिकेवलीका ग्रहण कैसे होता है ऐसा पूछनेपर कहते हैं कि उसका ग्रहण अर्थापत्तिसे होता है ।

* प्रतिषु 'होदि' इति पाठः ।

गहणं सुहाणं पयडीणं विसोहीदो केवलिसमुग्घादेण जोगणिरोहेण वा अणुभागघादो णत्थि त्ति जाणावेदि । खीणकसाय-सजोगीसु ट्ठिदि-अणुभागघादेसु संतेसु* वि सुहाणं पयडीणं अणुभागघादो णत्थि त्ति सिद्धे अजोगिम्हि ट्ठिदिघाद-अणुभागघाद-वज्जिदे सुहाणं पयडीणमुक्कस्साणुभागो होदि त्ति अत्थावत्तिसिद्धं । सुहुमसंपराइय-उक्कस्साणुभाग-ट्ठिदिबंधो बारसमुहुत्तमेत्तो, सो कधं सजोगि अजोगीसु लब्भदे ? ण बारसमुहुत्तब्भंतरे तेसु [illegible] परदो णोवलब्भदि त्ति वोत्तुं जुत्तं, वेयणीयखेत्तवेयणाए उक्कस्सियाए संतीए तस्सेव भावो णियमेण उक्कस्सो त्ति एदेण सुत्तेण सह विरोहादो ? ण, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीसु ट्ठिदपदेसाणं बंधाणुभागसरूवेण परिणदाणं थोवाणमुवलंभादो । कुदो णव्वदे ? 'बंधे उक्कड्डुदि' त्ति वयणादो ।

मार्गदर्शक

तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ॥ १५ ॥

सुगमं ।

एवं णामा-गोदाणं ॥ १६ ॥

यथा– सूत्रमें क्षीणकषाय और सयोगिकेवलीका ग्रहण यह प्रकट करता है कि शुभ प्रकृतियोंके अनुभागका घात विशुद्धि, केवलीसमुद्घात अथवा योगनिरोधसे नहीं होता । क्षीण कषाय और सयोगी गुणस्थानोंमें स्थितिघात व अनुभागघातके होनेपर भी शुभ प्रकृतियोंके अनुभागका घात वहाँ नहीं होता, यह सिद्ध होनेपर स्थिति व अनुभागसे रहित अयोगी गुण-स्थानमें शुभ प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभाग होता है, यह अर्थापत्तिसे सिद्ध है ।

शंका– सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके उत्कृष्ट अनुभाग व स्थितिका बन्ध बारह मुहूर्त प्रमाण होता है, वह सयोगी और अयोगीके भला कैसे पाया जा सकता है । यदि कहा जाय कि बारह मुहूर्तोंके भीतर ही उन दोनों गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंके वह पाया जाता है, आगे नहीं पाया जाता; सो यह कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि, वेदनीयक्षेत्रवेदनाके उत्कृष्ट होनेपर उसीके उसका भाव भी नियमसे उत्कृष्ट होता है' इस सूत्रके साथ विरोध होगा ?

समाधान– नहीं, क्योंकि बांधे गये अनुभाग स्वरूपसे परिणत पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितियोंमें स्थित प्रदेश थोडे पाये जाते है ।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान – वह 'बंधे उक्कड्डदि' इस वचनसे जाना जाता है ।

उससे भिन्न अनुत्कृष्ट वेदना है ॥ १५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार नाम व गोत्र कर्मके विषयमें भी कहना चाहिए ॥ १६ ॥

---

* प्रतिषु ' संतेसु विहाणं ' इति पाठः ।

जसकित्ति-उच्चागोदाणं सुहुमसांपराइयखवगचरिमसमए उक्कस्सबंधुवलंभादो। जहा घादिकम्माणं मिच्छाइट्ठिम्हि उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्साणुभागस्सामित्तं दिण्णं तहा एदासिं किण्ण दिज्जदे ? ण, तत्थतणउक्कस्ससंकिलेसेण सुहपयडीणं बंधाभावादो तत्थतणअसुहपडिअणुभागसंतकम्मादो वि चरिमसमयसुहुमसांपराइयेण बद्धसुहपयडीणमुक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो।

सामित्तेण उक्कस्सपदे आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ?। १७।

सुगमं।

अण्णदरेण अप्पमत्तसंजदेण सागारजागारतप्पाओग्गविसुद्धेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ॥ १८॥

ओगाहणादीहि भेदाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरेणेत्ति' भणिदं। अप्पमत्तम्मि चेव उक्कस्साणुभागबंधो पमत्तम्मि ण होदि त्ति जाणावणट्ठं 'अप्पमत्तसंजदेणेत्ति' भणिदं। दंसणोवजोगमुत्तावत्थासु उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं

[अनुवाद] कारण कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका सूक्ष्मसांपरायिक क्षपकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट बन्ध उपलब्ध होता है।

शंका– जिस प्रकार उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त मिथ्यादृष्टि जीवके घातिया कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागका स्वामित्व दिया गया है उसी प्रकार इनका क्यों नहीं दिया जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि एक तो मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा शुभ प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता। दूसरे वहाँके अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागसत्त्वकी अपेक्षा भी अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा बाँधा गया शुभ प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है, इसलिये उन उत्कृष्ट अनुभागका स्वामित्व मिथ्यात्व गुणस्थानमें नहीं दिया गया है।

स्वामित्वसे उत्कृष्ट पदमें आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट किसके होती है ? ॥ १७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

साकार उपयोग युक्त, जागृत और उसके योग्य विशुद्धियुक्त अन्यतर जिस अप्रमत्तसंयतके द्वारा आयुकर्मका बन्ध होता है और जिसके इसका सत्त्व होता है।१८।

अवगाहना आदिसे होनेवाली विशेषताका अभाव बतलानेके लिये सूत्रमें 'अन्यतर' पद कहा है। अप्रमत्त गुणस्थानमें ही उत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है, प्रमत्त गुणस्थानमें वह नहीं होता, यह जतलानेके लिये 'अप्रमत्त संयतके द्वारा' ऐसा कहा है। दर्शनोपयोग व सुप्त अवस्थाओंमें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, यह बतलानेके लिये 'साकार उपयोग सहित व

'सागार-जागार' णिद्देसो कदो। अइविसोहीए अइसंकिलेसेण च आउअस्स बंधो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं 'तप्पाओग्गविसुद्धेणेत्ति भणिदं। जेण बद्धो Ⓣ आउअस्स उक्कस्साणुभागो सो उक्कस्साणुभागस्स सामी होदि त्ति जाणावणट्ठं 'बद्धल्लयं' इदि भणिदं। बिदियादिसमएसु बंधविरहिदेसु उक्कस्साणुभागो किण्ण होदि त्ति पुच्छिदे जस्स तं संतकम्ममत्थि सो वि उक्कस्साणुभागसामी होदि त्ति भणिदं।

तं संतकम्मं कस्स अत्थि त्ति पुच्छिदे इमस्सत्थि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

तं संजदस्स वा अणुत्तरविमाणवासियदेवस्स वा। तस्स आउववेयणा भावदो उक्कस्सा ॥ १९ ॥

'तं संजदस्स वा' इदि वुत्ते अपुव्व-अणियट्टि-सुहुमउवसामगाणं उवसंतकसायाणं पमत्तसंजदाणं च गहणं। कधं पमत्तसंजदेसु उक्कस्साणुभागसंतुवलद्धी ? ण एस दोसो आउअस्स उक्कस्साणुभागं बंधिदूण पमत्तगुणं पडिवण्णस्स तदुवलंभादो। संजदासंजदादिहेट्ठिमगुणट्ठाणजीवा उक्कस्साणुभागसामिणो किण्ण होंति? ण, उक्कस्साणुभागेण सह

जागृत' ऐसा निर्देश किया है। अत्यन्त विशुद्धि एवं अत्यन्त संक्लेशसे आयुका बन्ध नहीं होता यह जतलानेके लिये 'उसके योग्य विशुद्धिसे संयुक्त' यह कहा है। जिसने आयुके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधा है वह उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है, यह बतलानेके लिये 'बद्धल्लय' ऐसा सूत्रमें निर्देश किया है। बन्धसे रहित द्वितीयादिक समयोंमें क्या उत्कृष्ट अनुभाग होता है या नहीं होता ऐसा पूछनेपर जिसके उसका सत्त्व है वह भी उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है यह कहा है।

उसके सत्त्व किसके होता है, ऐसा पूछनेपर अमुक जीवके उसका सत्त्व होता है, यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं–

उसका सत्त्व संयतके होता है अथवा अनुत्तरविमानवासी देवके होता है अतएव उसके आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है ॥ १९ ॥

'वह संयतके होता है' ऐसा कहनेपर अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसांपरायिक उपशामकोंका तथा उपशान्तकषाय व प्रमत्तसंयतोंका ग्रहण किया गया है।

शंका– प्रमत्तसंयतोंमें उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व कैसे पाया जाता है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, आयुके उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर प्रमत्तसंयत गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके उसका सत्त्व पाया जाता है।

शंका– संयतासंयतादिक नीचेके गुणस्थानोंमें स्थित जीव उत्कृष्ट अनुभागके स्वामी क्यों नहीं होते ?

Ⓣ अप्रतौ 'बंधो' इति पाठः।

आउवेबद्धे संजदासंजदादिहेट्ठिमगुणट्ठाणाणं गमणाभावादो। उक्कस्साणुभागं बंधिय ओवट्टणाघादेण घादिय पुणो हेट्ठिमगुणट्ठाणाणि पडिवण्णे संते उक्कस्साणुभागे सामित्तं किण्ण होदि त्ति वुत्ते ण, घादिदस्स अणुभागउक्कस्सत्तविरोहादो । उक्कसाणुभागे बंधे ओवट्टणाघादो णत्थि त्ति के वि भणंति। तण्ण घडदे, उक्कस्साउअं बंधिय पुणो तं घादिय मिच्छत्तं गंतूण अग्गिदेवेसु उप्पण्णदीवायणेण वियहिचारादो महाबंधे आउअ-उक्कस्साणुभागंतरस्स उवड्ढपोग्गलपरियट्टमेत्तकालपरूवणण्णहाणुववत्तीदो वा।

अणुद्दिसादिहेट्ठिमदेवेसु पडिबद्धाउए बज्झमाणे उक्कस्साणुभागबंधो ण होदि त्ति जाणावणट्ठं 'अणुत्तरविमाणवासियदेवस्स' इत्ति भणिदं । उक्कस्साणुभागेण सह तेत्तीसाउअं बंधिय अणुभागं मोत्तूण ट्ठिदीए चेव ओवट्टणाघादं कादूण सोधम्मादिसु उप्पण्णाणं उक्कस्सभावसामित्तं किण्ण लब्भदे ? ण, अणुभागघादेण विणा आउअस्स उक्कस्सट्ठिदिघादाभावादो ।

तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ॥ २० ॥

सुगममेदं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

समाधान– नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागके साथ आयुको बांधनेपर संयतासंयतादि अधस्तन गुणस्थानमें गमन नहीं होता ।

शंका– उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर उसे अपवर्तनाघातके द्वारा घातकर पश्चात् अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त होनेपर उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी क्यों नहीं होता ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, घातित अनुभागके उत्कृष्ट होनेका विरोध है ।

उत्कृष्ट अनुभागको बांधनेपर उसका अपवर्तनाघात नहीं होता, ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं । किन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, ऐसा माननेपर एक तो उत्कृष्ट आयुको बांधकर पश्चात् उसका घात करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो अग्निकुमार देवोंमें उत्पन्न हुए द्वीपायन मुनिके साथ व्यभिचार आता है, दूसरे इसका घात माने विना महाबन्धमें प्ररूपित उत्कृष्ट अनुभागका उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण अन्तर भी नहीं बन सकता । भा. पा. गा. ५०

अनुदिशा आदि नीचेके देवों से सम्बन्ध रखनेवाली आयुको बांधते हुए उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, यह बतलानेके लिये 'अनुत्तरविमानवासी देवके' यह कहा गया है ।

शंका– उत्कृष्ट अनुभागके साथ तेतीस सागरोपम प्रमाण आयुको बांधकर अनुभागको छोड केवल स्थितिके अपवर्तनाघातको करके सौधर्मादि देवोंमें उत्पन्न हुए जीवोंके उत्कृष्ट अनुभागका स्वामित्व क्यों नहीं पाया जाता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, अनुभागघातके विना आयुकी उत्कृष्ट स्थितिका घात संभव नहीं है ।

उससे भिन्न उसकी अनुत्कृष्ट वेदना है ॥ २० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सामित्तेण जहण्णपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ २१ ॥

सुगममेदं ।

अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयछदुमत्थस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा ॥ २२ ॥

ओगाहणादिविसेसेहिंतो भेदाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरस्सेत्ति' भणिदं । अक्खवगपडिसेहफलो 'खवग' णिद्देसो । खीणकसायदुचरिमसमयप्पहुडिहेट्ठिमखवग-पडिसेहफलो 'चरिमसमयछदुमत्थस्सेत्ति' णिद्देसो । चरिमसमयसुहुमसांपराइयजह-ण्णाणुभागबंधं घेत्तूण जहण्णसामित्तं तत्थ किण्ण परूविदं? ण, जहण्णाणुभागबंधादो तत्थतणसंताणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो । खीणकसायचरिमसमए वि चिराणाणु-भागसंतकम्मं चेव घेत्तूण जेण जहण्णं दिण्णं तेण खीणकसायपढमसमए जहण्णसा-मित्तं दिज्जदु, चिराणाणुभागसंतकम्मत्तं पडि भेदाभावादो त्ति? ण एस दोसो,

---

स्वामित्वसे जघन्य ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्यतर क्षपक अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ २२ ॥

अवगाहनादिक विशेषोंसे उत्पन्न विशेषताकी अविवक्षा बतलानेके लिये 'अन्यतर' पदका निर्देश किया है । क्षपक पदके निर्देशका प्रयोजन अक्षपकोंका प्रतिषेध करना है । क्षीण-कषाय गुणस्थानके द्विचरम समयवर्ती आदि अधस्तन क्षपकोंका निषेध करनेके लिये ' अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके ' ऐसा निर्देश किया है ।

शंका– अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसांपरायिकके जघन्य अनुभागबन्धको ग्रहणकर यहां जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, जघन्य अनुभाग बन्धकी अपेक्षा वहां अनुभागका सत्त्व अनन्तगुणा पाया जाता है ।

शंका– क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें भी चूंकि चिरन्तन अनुभागके सत्त्वको लेकर ही जघन्य स्वामित्व दिया गया है अतएव क्षीणकषायके प्रथम समयमें भी जघन्य स्वामित्व दिया जाना चाहिये था, क्योंकि, चिरन्तन अनुभागके सत्त्वकी अपेक्षा दोनोंमें कोई भेद नहीं है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, प्रत्येक समयमें होनेवाले अपवर्तनघातके द्वारा प्रति-

---

ⓣ अप्रतौ ' ओगाहणणादिविसेसोहि ' इति पाठः ।

अणुसमओवट्टणाघादेण अणुसमयमणंतगुणहीणं होदूण खीणकसायचरिमसमयपत्ताणु-भागादो तस्सेव पढमसमयअणुभागस्स अणंतगुणत्तदंसणादो ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ २३ ॥

सुगममेदं ।

एवं दंसणावरणीयं-अंतराइयाणं ॥ २४ ॥

घादिकम्मत्तणेण अणुसमओवट्टणाए घादं पाविदूण खीणकसायचरिमसमए विणट्ठत्तणेण भेदाभावादो ।

सामित्तेण जहण्णपदे वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ २५ ॥

सुगमं ।

अण्णदरखवगस्स चरिमसमयभवसिद्धियस्स असादवेदणीयस्स वेदयमाणस्स तस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा ॥ २६ ॥

ओगाहणादीहि विसेसाभावपदुप्पायणफलो 'अण्णदरस्सेत्ति' णिद्देसो । अक्खवगपडिसेह-फलो 'खवग' णिद्देसो । दुचरिमभवसिद्धियादिपडिसेहफलो चरिमसमयभवसिद्धियस्सेत्ति

समय अनन्तगुणहीन होकर क्षीणकषायके अन्तिम समयको प्राप्त हुए अनुभागकी अपेक्षा उसी गुणस्थानके प्रथम समयका अनुभाग अनन्तगुणा देखा जाता है ।

उससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ २३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय और अन्तरायकी जघन्य और अजघन्य वेदना का कथन करना चाहिये ॥ २४ ॥

कारण कि एक तो ये दोनों घातिकर्म होनेसे ज्ञानावरण की अपेक्षा इनमें कोई विशेषता नहीं है दूसरे प्रत्येक समयमें होनेवाले अपवर्तनाघात के द्वारा घात होकर क्षीणकषायके अन्तिम समयमें विनष्ट हुए अनुभागकी अपेक्षा ज्ञानावरणसे इनमें कोई विशेषता नहीं है ।

स्वामित्वमे जघन्य पदमें वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ २५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

असातावेदनीयका वेदन करनेवाले अन्तिम समयवर्ती भवसिद्धिक अन्यतर क्षपकके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ २६ ॥

अवगाहना आदिसे होनेवाली विशेषता यहां विवक्षित नहीं यह बतलानेके लिये सूत्रमें 'अन्यतर' पदका निर्देश किया है । क्षपकके निर्देशका फल अक्षपकका प्रतिषेध करना है । अन्तिम समयवर्ती भवसिद्धिक कहनेका प्रयोजन द्विचरम समयवर्ती आदि भवसिद्धिकोंका प्रतिषेध करना है

णिद्देसो । भवसिद्धियदुचरिमसमए जहण्णसामित्तं किण्ण दिज्जदे ? ण, तत्थ चरिमसमयसुहुमसांपराइएण बद्धसादावेयणीयउक्कस्साणुभागसंतकम्मस्स अत्थित्तदंसणादो । 'असादवेदगस्स' इत्ति विसेसणं किमट्ठं कीरदे? सादं वेदयमाणस्स दुचरिमसमए उदयाभावेण विणासिदअसादस्स सादुक्कस्साणुभागं धरेमाणचरिमसमयभवसिद्धियस्स वेदणीयजहण्णसामित्तविरोहादो । असादं वेदयमाणस्स पुण वेयणीयाणुभागो जहण्णो होदि, उदयाभावेण भवसिद्धियदुचरिमसमए विणट्ठसादाणुभागसंतत्तादो खवगसेडीए बहुसो घादं पत्तअणुभागसहिदअसादावेदणीयस्स चेव भवसिद्धियचरिमसमयदंसणादो। असादं वेदयमाणस्स सजोगिभगवंतस्स भुक्खा-तिसादीहि एक्कारसपरीसहेहि बाहिज्जमाणस्स कधं ण भुत्ती होज्ज ? ण एस दोसो, पाणोयणेसु जादतण्हाए समोहस्स मरणभएण भुंजंतस्स परीसहेहि पराजियस्स केवलिसविरोहादो । संकिलेसाविणाभाविणीए भुक्खाए दज्झमाणस्स वि केवलित्तं जुज्जदि त्ति समाणो दोसो त्ति ण पच्चवट्ठेयं, सगसहायघादिकम्माभावेण णिस्सत्तिभावण्णअसादावेदणीयउदयादो

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शंका– द्विचरम समयवर्ती भव्यसिद्धिकके जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया जाता है?

समाधान– नहीं, क्योंकि उसके अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसांपरायिक द्वारा बांधे गये सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व देखा जाता है ।

शंका– ' असातावेदनीयका वेदन करनेवालेके ' यह विशेषण किसलिये किया जारहा है ?

समाधान– (नहीं, क्योंकि) जो सातावेदनीयका वेदन कर रहा है और जिसने द्विचरम समयमें उदयाभाव होनेसे असातावेदनीयका नाश कर दिया है उस सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागको धारण करनेवाले अन्तिम समयवर्ती भवसिद्धिकके वेदनीयका जघन्य स्वामित्व माननेमें विरोध आता है । परन्तु असाताका वेदन करनेवालेके वेदनीयका अनुभाग जघन्य होता है, क्योंकि एक तो उदयाभाव होनेके कारण भवसिद्धिकके द्विचरम समयमें सातावेदनीयके अनुभाग सत्त्वका विनाश हो जाता है और दूसरे क्षपकश्रेणिमें बहुत बार घातको प्राप्त हुए अनुभाग सहित असातावेदनीयका ही भवसिद्धिकके अन्तिम समयमें सत्त्व देखा जाता है ।

शंका– असातावेदनीयका वेदन करनेवाले तथा क्षुधा तृषा आदि ग्यारह परीषहों द्वारा बाधाको प्राप्त हुए ऐसे सयोगिकेवली भगवानके भोजनका ग्रहण कैसे नहीं होगा ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जो भोजन-पानमें उत्पन्न हुई इच्छासे मोहयुक्त है तथा मरणके भयसे जो भोजन करता है, अतएव परीषहोंसे जो पराजित हुआ है ऐसे जीवके केवली होनेका विरोध है । संक्लेशके साथ अविनाभाव रखनेवाली क्षुधासे जलनेवालेके भी केवलीपना बन जाता है, इस प्रकार यह दोष समान ही है; ऐसा भी समाधान नहीं करना चाहिये, क्योंकि, अपने सहायक घातिया कर्मोंका अभाव हो जानेसे अशक्तताको प्राप्त हुए असातावेदनीयके उदयसे क्षुधा व तृषाकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है ।

भुक्खा-तिसाणमणुप्पत्तीए ।]णिप्फलस्स परमाणुपुंजस्स समयं पडि परिसदंतस्स कधं उदयववएसो ? ण, जीव-कम्मविवेगमेत्तफलं दट्ठूण उदयस्स फलत्तब्भुवगमादो । जदि एवं तो असादवेदणीयोदयकाले सादावेदणीयस्स उदओ णत्थि, असादावेदणीयस्सेव उदओ अत्थि त्ति ण वत्तव्वं, सगफलाणुप्पायणेण दोण्णं पि सरिसत्तुवलंभादो ? ण, असादपरमाणूणं व सादपरमाणूणं सगसरूवेण णिज्जराभावादो । सादपरमाणओ असादसरूवेण विणस्संतावत्थाए परिणमिदूण विणस्संते दट्ठूण सादावेदणीयस्स उदओ णत्थि त्ति वुच्चदे । ण च असादावेदणीयस्स एसो कमो अत्थि असाद-परमाणूणं सगसरूवेणेव णिज्जरुवलंभादो । तम्हा दुक्खरूवफलाभावे वि असादावेदणीयस्स उदयभावो जुज्जदि त्ति सिद्धं ।

पु. १३ पृ. ५३ शंका– बिना फल दिये ही प्रतिसमय निर्जीर्ण होनेवाले परमाणुसमूहकी उदय संज्ञा कैसे बन सकती है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, जीव व कर्मके विवेकमात्र फलको देखकर उदयको फलरूपसे स्वीकार किया गया है । पु. ६ पृ.

मिलाना
मार्गदर्शक :– आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शंका– यदि ऐसा है तो असातावेदनीयके उदयकालमें सातावेदनीयका उदय नहीं होता, केवल असातावेदनीयका ही उदय रहता है ऐसा नहीं कहना चाहिये, क्योंकि, अपने फलको नहीं उत्पन्न करनेकी अपेक्षा दोनोंमें ही समानता पायी जाती है ।

समाधान– नहीं, क्योंकि, तब असातावेदनीयके परमाणुओंके समान सातावेदनीयके परमाणुओंकी अपने रूपसे निर्जरा नहीं होती । किन्तु विनाश होनेकी अवस्थामें असातारूपसे परिणमकर उनका विनाश होता है यह देखकर सातावेदनीयका उदय नहीं है, ऐसा कहा जाता है । परन्तु असातावेदनीयका यह क्रम नहीं है, क्योंकि तब असाताके परमाणुओंकी अपने रूपसे ही निर्जरा पायी जाती है । इस कारण दुखरूप फलके अभावमें भी असातावेदनीयका उदय मानना युक्तियुक्त है, यह सिद्ध होता है । ध. पु. ६ पृ. ५३

विशेषार्थ– साधारणतः सांसारिक सुख और दुःखकी उत्पत्तिमें सातावेदनीय और असातावेदनीयका उदय निमित्त माना जाता है । सुखके साथ सातावेदनीयके उदयकी और दुखके साथ असातावेदनीयके उदयकी व्याप्ति है । यह व्याप्ति उभयतः मानी जाती है । इसलिए यह प्रश्न उठता है कि केवली जिनके असातावेदनीयका उदय माननेपर उनके क्षुधा तृषा और व्याधि आदि जन्य बाधा अवश्य होती होगी, अन्यथा उनके असातावेदनीयका उदय मानना निष्फल है । समाधान यह है कि कोई भी कार्य बाह्य और अंतरंग दो प्रकारके कारणोंसे होता है । यहां मुख्य कार्य क्षुधाजन्य बाधा है । यदि शरीरके लिये भोजनकी आवश्यकता हो और ऐसी अवस्थामें भोजनकी इच्छा हो तो क्षुधाजन्य बाधा होती है और इसमें असातावेदनीयका उदय कारण माना जाता है । किन्तु केवली जिनका औदारिकशरीर त्रस और निगोदिया जीवोंसे रहित परमशुद्ध होता है अतएव उनके शरीरको भोजन पानीकी आवश्यकता नहीं रहती और मोहनीयका अभाव हो जानेसे उनके भोजन और पानी ग्रहण करनेकी इच्छा भी नहीं होती, इसलिए

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ २७ ॥

सुगमं ।

सामित्तेण जहण्णपदे मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ २८ ॥

सुगमं ।

अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयसकसाइस्स तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा ॥ २९ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अंतोमुहुत्तमणुसमयओवट्टणाघादेण घादिदसेसअणुभागगहणट्ठं ' चरिमसमय-कसाइस्सेत्ति ' णिद्दिट्ठं । सेसं सुगमं ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३० ॥

सुगमं ।

सामित्तेण जहण्णपदे आउअवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ ३१ ॥

उनके कदाचित् असातावेदनीयका उदय रहनेपर भी क्षुधा-तृषाजन्य बाधा नहीं होती । यही कारण है कि केवली जिनके क्षुधादिजन्य बाधाका अभाव कहा गया है । शेष स्पष्टीकरण मूलमें किया ही है ।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ २७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्वामित्वमें जघन्य पदमें मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ २८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्तिम समयवर्ती सकषाय अन्यतर क्षपकके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ २९ ॥

अन्तर्मुहूर्त कालतक प्रति समय अपवर्तनाघातके द्वारा घात करनेसे शेष रहे अनुभागका ग्रहण करनेके लिये 'अन्तिम समयवर्ती सकषायके' इस पदका निर्देश किया है । शेष कथन सुगम है ।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ ३० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ ३१ ॥

सुगमं ।

अण्णदरेण मणुस्सेण पंचिंदियतिरिक्खजोणिएण वा परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण अपज्जत्ततिरिक्खाउअं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्मं अत्थि तस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा ॥ ३२ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अपज्जत्ततिरिक्खाउअं देव-णेरइया ण बंधंति त्ति जाणावणट्ठं मणुस्सेण 'पंचिंदियतिरिक्खजोणिएण वा' त्ति वुत्तं । एइंदिय-विगलिंदिया वि अपज्जत्ततिरिक्खाउअं बंधंता अत्थि, तत्थ जहण्णसामित्तं किण्ण दिज्जदे ? ण, आउअजहण्णाणुभागबंधकारणपरिणामाणं तत्थाभावादो । तत्थ णत्थि त्ति कधं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो अणुसमयं वड्ढमाणा हायमाणा च जे संकिलेस-विसोहिपरिणामा ते अपरियत्तमाणा णाम । जत्थ पुण ट्ठाइदूण परिणामंतरं गंतूण एग-दोआदिसमएहि आगमणं संभवदि ते परिणामा परियत्तमाणा णाम । तेहि आउअं बज्झदि । तत्थ उक्कस्सा मज्झिमा जहण्णा त्ति तिविहा परिणामा । तत्थ अइजहण्णा आउअबंधस्स अप्पाओग्गा । अइमहल्ला वि अप्पाओग्गा चेव, सहावियादो । तत्थ दोण्णं विच्चाले ट्ठिया परियत्तमाणमज्झिम-

---

यह सूत्र सुगम है ।

जो अन्यतर मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाला जीव परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे अपर्याप्त तिर्यंच सम्बन्धी आयुका बन्ध करता है उसके और जिसके इसका सत्त्व होता है उसके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है। ३२

अपर्याप्त तिर्यंच सम्बन्धी आयुको देव और नारकी जीव नहीं बाँधते यह जतलानेके लिये मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले' ऐसा कहा है ।

शंका– एकेन्द्रिय व विकलेन्द्रिय जीव भी अपर्याप्त तिर्यंचकी आयुको बाँधते है, इसलिए उनमें जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया जाता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उनमें आयुके जघन्य अनुभागके बन्धमें कारणभूत परिणामोंका अभाव है ।

शंका– उनमें वे परिणाम नहीं है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– इसी सूत्रसे जाना जाता है ।

प्रति समय बढनेवाले या हीन होनेवाले जो संक्लेश या विशुद्धिरूप परिणाम होते हैं वे अपरिवर्तमान परिणाम कहे जाते हैं । किन्तु जिन परिणामोंमें स्थित होकर तथा परिणामान्तरको प्राप्त हो पुनः एक दो आदि समयों द्वारा उन्हीं परिणामोंमें आगमन सम्भव होता है उन्हें परिवर्तमान परिणाम कहते हैं । उनसे आयुका बन्ध होता है । उनमें उत्कृष्ट, मध्यम व जघन्यके भेदसे वे परिणाम तीन प्रकारके हैं । इनमें अति जघन्य परिणाम आयुबन्धके अयोग्य हैं । अत्यन्त महान् परिणाम भी आयुबन्धके अयोग्य ही हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । किन्तु उन

परिणामा वुच्चंति । तत्थतणजहण्णपरिणामेहि तप्पाओग्गविसेसपच्चएहि जमपज्जत्ततिरिक्खाउअं बद्धल्लयं तस्स जहण्णाणुभागो होदि। जस्स तं संतकम्मं अत्थि तस्स वि ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा । ३३ ।

सुगमं ।

सामित्तेण जहण्णपदे णामवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स? । ३४ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

अण्णदरेण सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हदसमुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा ।। ३५ ।।

ओगाहणादिविसेसाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरेण' इत्ति वुत्तं । बादरेइंदियअपज्जत्तादिउवरिमजीवसमासपडिसेहट्ठं 'सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएणत्ति' भणिदं। उवरिमजीवसमासपडिसेहो किमट्ठं कीरदे? तत्थ जहण्णाणुभागासंभवादो । तं जहा- ण ताव तत्थ

दोनोंके मध्यमें अवस्थित परिणाम परिवर्तमान मध्यम परिणाम कहलाते हैं। उनमें जघन्य परिणामोंसे तत्प्रायोग्य विशेष कारणों द्वारा जिसने अपर्याप्त सम्बन्धी तिर्यंच आयुको बांधा है उसके आयुका जघन्य अनुभाग होता है, तथा जिसके उक्त अनुभागका सत्त्व होता है उसके भी आयुका जघन्य अनुभाग होता है ।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ।। ३३ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ।। ३४ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

हतसमुत्पत्तिक कर्मवाला अन्यतर जो सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीव परिवर्तमान मध्यम परिणामोंके द्वारा नाम कर्मका बन्ध करता है उसके और जिसके इसका सत्त्व होता है उसके नाम कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ।। ३५ ।।

अवगाहना आदिसे होनेवाली विशेषता यहां विवक्षित नहीं है यह बतलानेके लिये 'अन्यतर' पद कहा है । बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त आदि आगेके जीवसमासोंका प्रतिषेध करनेके लिये 'सूक्ष्म निगोद' अपर्याप्तक जीवके द्वारा ऐसा कहा है।

शंका– आगेके जीवसमासोंका प्रतिषेध किसलिये करते हैं ।

समाधान– चूंकि उनमें जघन्य अनुभागकी सम्भावना नहीं है, अतः उनका प्रतिषेध करते

सव्वविसुद्धेसु जहण्णसामित्तं, अप्पसत्थपयडिअणुभागादो अणंतगुणपसत्थपयडिअणुभागस्स तत्थ अणंतगुणवड्ढिप्पसंगादो। ण सव्वसंकिलिट्ठेसु वि, अइतिव्वसंकिलेसेण असुहाणं पयडीणमणुभागवड्ढिप्पसंगादो। ण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेसु वि जहण्णसामित्तं संभवदि, सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तपरियत्तमाणमज्झिमपरिणमेहिंतो अणंतगुणेहि जहण्णभावाणुववत्तीदो। 'हदसमुप्पत्तियकम्मेण' इत्ति वुत्ते पुव्विल्लमणुभागसंतकम्मं सव्वं घादिय अणंतगुणहीणं कादूण ट्ठिदेण त्ति घेत्तव्वं होदि। तहा जहण्णुक्कस्सपरिणामणिराकरणट्ठं 'परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण' इत्ति वुत्तं। जेण तं बद्धं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स णामवेदणा भावदो जहण्णा।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३६ ॥

सुगमं।

सामित्तेण जहण्णपदे गोदवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ?। ३७।

सुगमं।

है। यथा- उक्त जीवसमासोंमेंसे सर्वविशुद्ध जीवोंमें तो जघन्य स्वामित्व बन नहीं सकता क्योंकि, ऐसा होनेपर अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागसे अनन्तगुणे प्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागमें अनन्तगुणी वृद्धिका प्रसंग आता है। सर्वसंक्लिष्ट जीवोंमें भी वह नहीं बन सकता, क्योंकि अति तीव्र संक्लेशके द्वारा अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागमें वृद्धिका प्रसंग आता है। परिवर्तमान मध्यम परिणाम युक्त जीवोंमें भी जघन्य स्वामित्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके परिवर्तमान मध्यम परिणामोंकी अपेक्षा उन जीवोंके परिणाम अनन्तगुणे होते हैं, इसलिये वे जघन्य नहीं हो सकते।

'हतसमुत्पत्तिककर्मवाले' ऐसा कहनेपर पूर्वके समस्त अनुभागसत्त्वका घात करके और उसे अनन्तगुणा हीन करके स्थित हुए जीवके द्वारा, यह अभिप्राय समझना चाहिये। सूत्रमें जघन्य और उत्कृष्ट परिणामोंका निराकरण करनेके लिये ' परिवर्तमान मध्यम परिणामोंके द्वारा ' ऐसा निर्देश किया है। जिसने उक्त अनुभागको बांधा है व जिसके उसका सत्त्व है उसके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है। ३६।

यह सूत्र सुगम है।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ?। ३७।

यह सूत्र सुगम है।

अण्णदरेण बादरतेउ-वाउजीवेण सव्वाहि पज्जत्तीहो पज्जत्तयदेण सागारजागारसव्वविसुद्धेण हदसमुप्पत्तियकमेण उच्चागोदमुव्वेल्लिदूण णीचागोदं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि गोदवेयणा भावदो जहण्णा ॥ ३८ ॥

प्रतिदेशक ॥ ३८ ॥ श्री सुविधिसागर जी महाराज

'बादरतेउ-वाउजीव' णिद्देसो किमट्ठं कीरदे ? तत्थ बंधविवज्जियमुच्चागोदं णीचागोदादो सुट्ठत्तणेण महल्लाणुभागमुव्वेल्लिय गालणट्ठं । 'सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण' इत्ति णिद्देसो अपज्जत्तकाले सव्वुक्कस्सविसोही णत्थि त्ति पज्जत्तकालसव्वुक्कस्सविसोहीणं गहणणिमित्तो । सागार-जागारद्धासु चेव सव्वुक्कस्सविसोहीयो सव्वुक्कस्ससंकिलेसा च होंति त्ति जाणावणट्ठं 'सागार-जागार' णिद्देसो कदो। सव्वुक्कट्ठविसोहीए एत्थ किं पओजणं ? बहुवरणीचागोदाणुभागघादो पओजणं । एवंविहस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३९ ॥

सुगमं।

एवं सामित्तं संगतोक्खित्तट्ठाणसंखाजीवसमुदाहाराणुओगद्दारं समत्तं

सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए साकार उपयोगसे संयुक्त, जागृत, सर्वविशुद्ध एवं हतसमुत्पत्तिककर्मवाले जिस अन्यतर बादर तेजकायिक या वायुकायिक जीवके उच्च गोत्रकी उद्वेलना होकर नीच गोत्रका बन्ध होता है व जिसके उसका सत्त्व होता है उसके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ ३८ ॥

शंका– बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवोंका निर्देश किसलिये किया है ?

समाधान– उनमें बन्धको प्राप्त न होनेवाले एवं नीच गोत्रकी अपेक्षा शुभ रूप होनेसे विशाल अनुभाग युक्त उच्च गोत्रकी उद्वेलना करके गलानेके लिये उक्त जीवोंका निर्देश किया है

चूंकि अपर्याप्तकालमें सर्वोत्कृष्ट विशुद्धि नहीं होती है अतः पर्याप्तकालमें होनेवाली विशुद्धियोंका ग्रहण करनेके लिये 'सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए' इस पदका निर्देश किया है । साकार उपयोग व जागृत समयमें ही सर्वोत्कृष्ट विशुद्धियां व सर्वोत्कृष्ट संक्लेश होते है, यह जतलानेके लिये 'साकार उपयोग युक्त व जागृत' इस पदका निर्देश किया है ।

शंका– यहाँ सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिका क्या प्रयोजन है ।

समाधान– नीच गोत्रके बहुतर अनुभागका घात करना ही उसका प्रयोजन है ।

उक्त लक्षणोंसे संयुक्त जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ।

इससे भिन्न उसको अजघन्य वेदना होती है ॥ ३९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार अपने भीतर स्थान, संख्या व जीवसमुदाहार अनुयोगद्वारोंको रखनेवाला अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि- जहण्ण-पदे उक्कस्सपदे जहण्णुक्कस्सपदे ॥ ४० ॥

एत्थ तिण्णि चेव अणुयोगद्दाराणि होंति, एग-दोसंजोगे मोत्तूण तिसंजोगादीणमभावादो ।

जहण्णवेदेण सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ॥ ४१ ॥

कुदो ? अपुव्व-अणियट्टिखवगगुणट्ठाणेसु संखेज्जसहस्सवारं खंडयघादेण अणंतगुणहीणं कादूण पुणो फद्दयाणुभागादो अणंतगुणहीणबादरकिट्टिसरूवेण कादूण पुणो तं मोहाणुभागं बादरकिट्टिगदं जहण्णबादरकिट्टीदो अणंतगुणहीणसुहुमकिट्टिसरूवेण कादूण पुणो सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणम्मि अंतोमुहुत्तकालमणंतगुणहीणकमेणमणुसमओवट्टिय सुहुमसांपराइयचरिमसमए उदयगदट्ठिदीए अणुभागस्स गहणादो ।

अणुसमओवट्टणा त्ति केरिसो? चरिमसमयअणियट्टिअणुभागादो सुहुमसांपराइयपढमसमए अणुभागो अणंतगुणहीणो होदि । बिदियसमए सो चेव अणुभागखंडयघादेण विणा अणंतगुणहीणो होदि । पुणो सो घादिदसेसो तदियसमए अणंतगुणहीणो होदि । एवं जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमओ त्ति णेदव्वं । एसो अणुसमओवट्टणघादो

अल्पबहुत्वका प्रकरण है । इसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं- जघन्य पदविषयक अल्पबहुत्व, उत्कृष्ट पदविषयक अल्पबहुत्व, जघन्य उत्कृष्ट पदविषयक अल्पबहुत्व ।

यहाँ तीन ही अनुयोगद्वार होते है, क्योंकि, एक और दो संयोगी भंगोंको छोडकर यहां त्रिसंयोगी आदि भंगोंका अभाव है ।

जघन्य इस पदसे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य वेदना सबसे स्तोक है । ४१ ।

क्योंकि अपूर्वकरण व अनिवृत्तिकरण क्षपक गुणस्थानोंमें संख्यात हजार बार काण्डक घातके द्वारा अनुभागको अनन्तगुणा हीन करके, पश्चात् स्पर्धकगत अनुभागकी अपेक्षा उसे अनन्तगुणा बादर कृष्टि रूपसे करके, तत्पश्चात् बादर कृष्टिगत उक्त मोहनीयके अनुभागको जघन्य बादर कृष्टिकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन सूक्ष्म कृष्टिरूपसे करके, पुनः सूक्ष्मसांपरायिक गुणस्थानमें अन्तर्मुहूर्त कालतक प्रतिसमय अनन्तगुणहीन क्रमसे अपवर्तित करके सूक्ष्मसांपरायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें उदयप्राप्त स्थितिके अनुभागका यहां ग्रहण किया गया है । अर्थात् अपवर्तन

शंका- प्रति समय अपवर्तना किस प्रकारकी होती है ?

समाधान- अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभागकी अपेक्षा सूक्ष्मसांपरायिकका प्रथम समय सम्बन्धी अनुभाग अनन्तगुणा हीन होता है । उसके द्वितीय समयमें वही अनुभाग काण्डकघातके बिना अनन्तगुणा हीन होता है । पुनः घात करनेके बाद शेष रहा वही अनुभाग तीसरे समयमें अनन्तगुणाहीन होता है । इस प्रकार सूक्ष्मसांपरायिकके अन्तिम समयतक जानना चाहिये । इसीका नाम अनुसमयापवर्तनाघात है ।

णाम । एसो अणुभागखंडयघादो त्ति किण्ण वुच्चदे ? ण, पारद्धपढमसमयादो अंतोमुहुत्तेण कालेण जो घादो णिप्पज्जदि सो अणुभागखंडयघादो णाम, जो पुण उक्कीरणकालेण विणा एगसमएणेव पददि सा अणुसमयओवट्टणा । अण्णं च, अणुसमयओवट्टणाए णियमेण अणंता भागा हम्मंति, अणुभागखंडयघादे पुण णत्थि एसो णियमो, छव्विहहाणीए खंडयघादुवलंभादो ।

अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४२ ॥

खीणकसायकालब्भंतरे जदि वि अंतराइयअणुभागो अणुसमयओवट्टणाए घादं पत्तो सो वि एसो अणंतगुणो, सुहुम-बादरकिट्टीहिंतो अणंतगुणफद्दयसरूवत्तादो । अणुभागखंडयघादेहि अणुसमयओवट्टणाघादेहि च दोण्णं कम्माणं सरिसत्ते संते किमट्ठं घादिदसेसाणभागाणं विसरिसत्तं ? ण एस दोसो, संसारावत्थाए सव्वत्थ लोभसंजलणाणुभागादो वीरियंतराइयाणुभागस्स अणंतगुणत्तवलंभादो । थोवाणुभागपयडीए घादिदसेसाणुभागो थोवो होदि, महल्लाणुभागपयडीए घादिदसेसाणुभागो बहुओ चेव होदि ।

शंका– इसे अनुभागकाण्डकघात क्यों नहीं कहते ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, प्रारम्भ किये गये प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा जो घात निष्पन्न होता है वह अनुभागकाण्डकघात है, परन्तु उत्कीरणकालके बिना एक समय द्वारा ही जो घात होता है वह अनुसमयापवर्तना है । दूसरे, अनुसमयापवर्तनामें नियमसे अनन्त बहुभाग नष्ट होता है, परन्तु अनुभागकाण्डकघातमें यह नियम नहीं है, क्योंकि छह प्रकारकी हानि द्वारा काण्डकघातकी उपलब्धि होती है ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ– यहां अनुभाग काण्डकघात और अनुसमयापवर्तना इन दोनोंमें क्या अन्तर है इसपर प्रकाश डाला गया है । काण्डक पोरको कहते हैं । कुल अनुभागके हिस्से करके एक एक हिस्सेका फालिक्रमसे अन्तर्मुहूर्तकाल द्वारा अभाव करना अनुभाग काण्डकघात कहलाता है और प्रति समय कुल अनुभागके अनन्त बहुभागका अभाव करना अनुसमयापवर्तना कहलाती है । मुख्य रूपसे यही इन दोनोंमें अन्तर है ।

उससे भावकी अपेक्षा अन्तरायकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है । ४२ ।

क्षीणकषायके कालके भीतर यद्यपि अन्तराय कर्मका अनुभाग अनुसमयापवर्तनाके द्वारा घातको प्राप्त हुआ है तो भी यह मोहनीयके जघन्य अनुभागसे अनन्तगुणा है, क्योंकि वह मोहनीयकी सूक्ष्म और बादर कृष्टियोंकी अपेक्षा अनन्तगुणे स्पर्धकरूप है ।

शंका– अनुभागकाण्डकघात और अनुसमयापवर्तनाघातके द्वारा दोनों कर्मोंमें समानताके होनेपर घात करनेके बाद शेष रहे अनुभागोंमें विसदृशता क्यों पाई जाती है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संसार अवस्थामें सर्वत्र संज्वलन लोभके अनुभागकी अपेक्षा वीर्यान्तरायका अनुभाग अनन्तगुणा उपलब्ध होता है । स्तोक अनुभागवाली प्रकृतिका घात करनेके बाद शेष रहा अनुभाग स्तोक होता है और महान् अनुभागवाली प्रकृतिका

तेण विसरिसत्तं जुज्जदे ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णियाओ वि दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ४३ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कधं दोण्णं पयडीणमणुभागस्स घादिदसेसस्स सरिसत्तं ? ण एस दोसो, संसारावत्थाए समाणाणुभागाणमसुहत्तणेण समाणाणं सरिसत्ताणुभागघादाणं* घादिदसेसाणुभागाणं सरिसत्तं पडि विरोहाभावादो । संसारावत्थाए दोण्णं पयडीणमणुभागो सरिसो त्ति कधं णव्वदे ? केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं असादवेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि त्ति चदुसट्ठिपदियमहादंडयसुत्तादो । सव्वमेदं जुज्जदे किं तु अंतराइयजहण्णाणुभागादो णाण-दंसणावरणाणुभागाणं जहण्णाणमणंतगुणत्तं ण घडदे, संसारावत्थाए अणुभागेण समाणाणं अणुभागखंडय-अणुसमयओवट्टणाघादेण सरिसाणं विसरिसत्तविरोहादो* त्ति ? होदि सरिसत्तं जदि सव्वघादित्तणेण वीरियंतराइयं केवलणाण-दंसणावरणीएहि समाणं, ण च एवं वीरियंतराइयस्स सव्वत्थ खओवसमदंसणादो । तदो जेण वीरियंतराइयं देसघादिलक्खणं तेण

घात करनेके बाद शेष रहा अनुभाग बहुत ही होता है। इस कारण दोनोंमें विसदृशता बन जाती है ।

उससे भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय व दर्शनावरणीयकी जघन्य वेदनायें भी दोनों ही परस्पर तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ४३ ॥

शंका– घात करनेके बाद शेष रहे इन दोनों प्रकृतियोंके अनुभागमें समानता किस कारणसे है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संसार अवस्थामें ये दोनों प्रकृतियाँ समान अनुभागवाली हैं, अशुभ स्वरूपसे समान हैं एवं समान अनुभागघातसे संयुक्त हैं अतः उक्त दोनों प्रकृतियोंके घात करनेके बाद शेष रहे अनुभागोंके समान होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

शंका– संसार अवस्थामें इन दोनों प्रकृतियोंका अनुभाग समान होता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– 'केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय ये चारों ही प्रकृतियाँ तुल्य हैं ' इस चौंसठ पदवाले महादण्डकसूत्रसे जाना जाता है ।

शंका– यह सब तो बन जाता है, किन्तु अन्तरायके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरणका जघन्य अनुभाग अनन्तगुणा होता है यह नहीं बनता, क्योंकि, ये तीनों कर्म संसार अवस्थामें अनुभागकी अपेक्षा समान हैं तथा अनुभागकाण्डकघात व अनुसमयापवर्तनाघातकी अपेक्षा भी समान हैं अतएव उनके विसदृश होनेमें विरोध आता है ?

समाधान– यदि वीर्यान्तराय कर्म सर्वघातिरूपसे केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणके समान होता तो इन तीनोंमें समानता अनिवार्य थी । परन्तु ऐसा है नहीं । क्योंकि, वीर्यान्तरायका सर्वत्र क्षयोपशम पाया जाता है । अतएव चूंकि वीर्यान्तराय कर्म देशघाती

---

* अप्रतौ ' त्तरिसणुभागघादाणं ' पप्रतौ सरिसत्ताणुभागघादाणं इति पाठः ।

* अप्रतौ ' विरोहोदि त्ति ' इति पाठः ।

एरंडदंडओ व्व असारत्तादो बहुगं घादिज्जदि, केवलणाण-दंसणावरणीयाणि पुण सव्वघादीणि वज्जसेलो व्व णिकाचिदत्तादो बहुगं ण घादिज्जंति । तेण अंतराइय-जहण्णाणुभागादो णाणदंसणावरणीयजहण्णाणुभागाणमणंतगुणत्तं जुज्जदे ।

आउववेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४४ ॥

मणुसेण वा पंचिंदियतिरिक्खजोणीयेण वा परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धमपज्जत्ततिरिक्खाउअस्स अणुभागेण विहीणं [ ] दंसणेहिंतो अणंतगुणं । कुदो? णाण-दंसणावरणीयअणुभागो व्व खंडयघादेहि अणुसमओवट्टणाघादेहि च खवगसेडीए अप-त्ताणुभागघादत्तादो ।

गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४५ ॥

बादरतेउ-वाउपज्जत्तएसु सव्वविसुद्धेसु हदसमुप्पत्तियकम्मेसु ओव्वट्टिदउच्चागोदेसु गोदाणुभागो जहण्णो जादो[1] । एत्थ जदि वि संखेज्जसहस्साणुभागखंडयाणि पदिदाणि तो वि घादिदसेसाणुभागो आउअजहण्णाणुभागादो अणंतगुणो होदि । सव्वुक्कस्सतिरि-क्खाउअअणुभागादो सव्वुक्कस्सणीचागोदाणुभागो अणंतगुणो' त्ति चउसट्ठिपदियदंडए

लक्षणवाला है इस कारण वह एरण्डदण्डके समान निःसार होनेसे बहुत घाता जाता है, किन्तु केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण सर्वघाती हैं अतः वे वज्रशैलके समान निबिडरूपसे बन्धको प्राप्त होनेके कारण बहुत नहीं घाते जाते हैं इसलिये अन्तरायकर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरणके जघन्य अनुभागका अनन्तगुणा होना उचित ही है ।

उनसे भावकी अपेक्षा आयुकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४४ ॥

मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले जीवके द्वारा परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे बांधी गयी अपर्याप्त तिर्यंच सम्बन्धी आयु अनुभागकी अपेक्षा जघन्य होती है । यह उपर्युक्त दोनों कर्मोंके जघन्य अनुभागसे अनन्तगुणी है, क्योंकि, जिस प्रकार क्षपकश्रेणिमें ज्ञानावरण और दर्शनावरणका अनुभाग काण्डकघात व अनुसमयापवर्तनाघातके द्वारा घातको प्राप्त होता है उसप्रकार उनके द्वारा आयुकर्मका अनुभाग घातको नहीं प्राप्त होता ।

उससे भावकी अपेक्षा गोत्रकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४५ ॥

जो सर्वविशुद्ध हैं, हतसमुत्पत्तिककर्मा हैं और जिन्होंने उच्च गोत्रका अपवर्तनाघात किया है ऐसे बादर तेजकायिक व वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें गोत्र कर्मका अनुभाग जघन्य होता है । यहाँ यद्यपि संख्यात हजार अनुभागकाण्डकघात हुए हैं तो भी गोत्रकर्मका घात करनेके बाद शेष रहा अनुभाग आयुके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा है । यतः चतुःषष्ठिपदिक दण्डकमें "सर्वोत्कृष्ट तिर्यगायुके अनुभागसे सर्वोत्कृष्ट नीच गोत्रका अनुभाग अनन्तगुणा है" ऐसा कहा

---

[1] अप्रतौ 'एदंडदंडओ' इति पाठः । [2] अप्रतौ 'गोदाणभागो जहण्णेज्जादो' इति पाठः ।

भणिदं । तेण आउअस्स जहण्णाणुभागबंधादो णीचागोदस्स जहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो त्ति णव्वदे । तत्तो णीचागोदजहण्णाणुभागो अणंतगुणो, विट्ठाणसंतकम्मत्तादो ।

णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४६ ॥

सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तयस्स हदसमुप्पत्तियकम्मम्मि परियत्तमाणमज्झिमपरिणामम्मि णामकम्माणुभागस्स जहण्णं जादं । एसो अणुभागो णीचागोदजहण्णाणुभागादो अणंतगुणो । कुदो ? जसकित्तियादीणं सुहपयडीणमणुभागस्स सव्वत्थ णीचागोदाणुभागादो⊕ अणंतगुणस्स विसोहीए घादाभावादो । अइसंकिलेसं णेदूण सुहपयडीणमणुभागे घादिदे वि ण लाभो अत्थि, संकिलेसेण अजसकित्तियादिअसुहपयडीणमणुभागस्स वड्ढिदंसणादो । परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेहि सुहासुहपयडीणमणुभागमहल्लवड्ढि-हाणीणमणिमित्तेहि परिणदस्स तेण सामित्तं दिण्णं । तदो बहुवड्ढि-हाणीणमभावादो णामवेयणाभावो अणंतगुणो त्ति सिद्धं ।

वेयणीयवेदणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४७ ॥

वेदणीयाणुभागो खवगसेडीए संखेज्जसहस्सअणुभागखंडयघादेहि घादं पत्तो त्ति ।

गया है, अतः इससे जाना जाता है कि आयुके जघन्य अनुभागबन्धकी अपेक्षा नीचगोत्रका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । उससे नीचगोत्रका जघन्य अनुभाग अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह द्विःस्थान सत्कर्मरूप है ।

उससे भावकी अपेक्षा नाम कर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४६ ॥

हतसमुत्पत्तिकर्म और परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे संयुक्त जो सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्त जीव है उसके नाम कर्मका अनुभाग जघन्य होता है । यह अनुभाग नीचगोत्रके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होता है, क्योंकि, सर्वत्र नीचगोत्रके अनुभागसे अनन्तगुणा जो यशःकीर्ति आदि शुभ प्रकृतियोंका अनुभाग होता है उसका विशुद्धिके द्वारा घात नहीं होता । अति संक्लेशको प्राप्त कराकर शुभ प्रकृतियोंके अनुभागका घात करनेपर भी कोई लाभ नहीं है, क्योंकि, संक्लेशसे अयशःकीर्ति आदि अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागमें वृद्धि देखी जाती है । इसीलिये जो परिवर्तमान मध्यम परिणाम शुभाशुभ प्रकृतियोंके अनुभागकी महान् वृद्धि व हानिमें निमित्त नहीं पडते उनसे परिणत हुए जीवको उसका स्वामी बतलाया है । अतएव बहुत वृद्धि व हानिका अभाव होनेसे नाम कर्मकी वेदना भावतः गोत्रकर्मकी अपेक्षा अनन्तगुणी होती है, यह सिद्ध होता है ।

उससे भावकी अपेक्षा वेदनीय कर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४७ ॥

शंका– यतः वेदनीय कर्मका अनुभाग क्षपकश्रेणिमें संख्यात हजार अनुभागकाण्डकघातोंके

⊕ अप्रतौ ' णीचागोदाणुवलंभादो ' इति पाठः ।

चिराणाणुभागादो अणंतगुणहीणो अजोगि✲ चरिमसमए एगणिसेयमवलंबिय ट्ठिदो कधं णामाणुभागादो अपत्तखवगसेडिघादादो संसारिजीवखंडयघादेहि समुक्कस्सं पेक्खदूण अणंतगुणहीणत्तमावण्णादो अणंतगुणो होज्ज ? अण्णं च, वेदणीयउक्कस्साणुभागादो असादसण्णिदादो संसारत्थाए जसकित्तिउक्कस्साणुभागो अणंतगुणो, सो कथं संसारिखंडयघादेहि खवगसेडिम्मि घादं पत्तअसादावेदणीयाणुभागादो अणंतगुणहीणो कीरदे ? ण एस दोसो, ण केवलमकसायपरिणामो चेव अणुभागघादस्स कारणं, किं तु पयडिगयसत्तिसव्वपेक्खो परिणामो अणुभागघादस्स कारणं । तत्थ वि पहाणमंतरंगकारणं, तम्हि उक्कस्से संते बहिरंगकारणे थोवे वि बहुअणुभागघाददंसणादो, अंतरंगकारणे थोवे संते बहिरंगकारणे बहुए संते वि बहुअणुभागघादाणुवलंभादो । तदो णामाणुभागघादअंतरंगकारणादो वेदणीयाणुभागघादअंतरंगकारणमणंतगुणहीणमिदि णामजहण्णाणुभागादो वेदणीयजहण्णाणुभागस्स अणंतगुणत्तं जुज्जदे । एवं जहण्णअप्पाबहुअं समत्तं ।

उक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया ।४८।

कुदो ? भवधारणमेत्तकज्जकारित्तादो ।

द्वारा घातको प्राप्त हो चुका है इसलिए जो चिरन्तन अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणाहीन होता हुआ अयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें एक निषेकका अवलम्बन लेकर स्थित है वह भला जो क्षपकश्रेणिमें घातको नहीं प्राप्त हुआ है और जो संसारी जीवोंके काण्डकघातोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणहीन है, ऐसे नामकर्मके जघन्य अनुभागसे अनन्तगुणा कैसे हो सकता है ? दूसरे, संसार अवस्थामें यशःकीर्तिका उत्कृष्ट अनुभाग असाता संज्ञावाले वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागसे अनन्तगुणा होता है ऐसी अवस्थामें वह क्षपकश्रेणिमें संसारी जीवोंके काण्डकघातोंके द्वारा घातको प्राप्त हुए असातावेदनीयके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणाहीन कैसे किया जा सकता है ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, केवल अकषाय परिणाम ही अनुभागघातका कारण नहीं है, किन्तु प्रकृतिगत शक्तिकी अपेक्षा रखनेवाला परिणाम अनुभागघातका कारण है। उसमें भी अन्तरंग कारण प्रधान है, उसके उत्कृष्ट होनेपर बहिरंग कारणके स्तोक रहनेपर भी अनुभाग घात बहुत देखा जाता है। तथा अंतरंग कारणके स्तोक होनेपर बहिरंग कारणके बहुत होते हुए भी अनुभागघात बहुत नहीं उपलब्ध होता । यतः नामकर्मसम्बन्धी अनुभागके घातके अंतरंग कारणकी अपेक्षा वेदनीय संबंधी अनुभागके घातका अंतरंग कारण अनंतगुणाहीन है अतः नामकर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा वेदनीयके जघन्य अनुभागका अनंतगुणा होना उचित ही है।

इस प्रकार जघन्य अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

उत्कृष्ट पदका अवलम्बन लेकर भावकी अपेक्षा आयु कर्मकी उत्कृष्ट वेदना सबसे स्तोक है ॥ ४८ ॥

क्योंकि वह भवधारण मात्र कार्यको करनेवाली है ।

✲ अप्रतौ 'अजोगी' इति पाठः । ✲ अप्रतौ 'अपज्जत्त' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो उक्कस्सियाओ तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ४९ ॥

केवलणाण-दंसणाणं समाणत्तणेण तदावरणाणुभागस्स वि होदु णाम समाणत्तं, किं तु अंतराइयाणुभागस्स ण समाणत्तं जुज्जदे; केवलणाण-दंसण-अणंतवीरियाणं-समाणत्ताभावादो त्ति? ण एस दोसो, केवलणाण-दंसण-अणंतवीरियाणं समाणत्त-ब्भुवगमादो। कुदो समाणत्तं णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। ण च आवारयसत्तीए समाणाए संतीए तदावरणिज्जाणं विसरिसत्तं जुज्जदे, विरोहादो। कधं पुण आउ-अउक्कस्साणुभागादो अणंतगुणत्तं? ण, अंतरंग बहिरंगपडिबद्धाणंतकज्जुवलंभादो।

मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ५० ॥

कुदो? साभावियादो। ण च सहावो जुत्तिगोयरो, अग्गी दहणो वि संसार-णमिच्चादिसु जुत्तीए अणुवलंभादो।

णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ५१ ॥

भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी उत्कृष्ट वेदनायें तीनों ही तुल्य होकर आयुकर्मकी उत्कृष्ट वेदनासे अनन्तगुणी हैं। ४९।

शंका- यतः केवलज्ञान और केवलदर्शन दोनों ही समान हैं अतः केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणके अनुभागमें भी समानता रहो आवे किन्तु अन्तरायके अनुभागको इनके समान मानना उचित नहीं है, क्योंकि, केवलज्ञान, केवलदर्शन और अनन्तवीर्यमें समानता नहीं है। ध.९ पृ.३३

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, केवलज्ञान, केवलदर्शन और अनन्तवीर्यमें समानता स्वीकार की गई है।

शंका- उन तीनोंमें समानता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान- यह इसी सूत्रसे जाना जाता है। और आवारकशक्तिके समान होनेपर उनके द्वारा आवरण करने योग्य गुणोंमें असमानता मानना उचित नहीं है, क्योंकि, वैसा माननेमें विरोध आता है।

शंका- तो फिर आयुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा उनका अनुभाग अनन्तगुणा है यह कैसे सम्भव है?

समाधान- नहीं, क्योंकि, अन्तरंग व बहिरंग कारणोंसे प्रतिबद्ध उनके अनन्त कार्य उपलब्ध होते हैं, इससे ज्ञात होता है कि आयुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा उनका अनुभाग अनन्तगुणा है।

उससे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है। ५०।

कारण कि ऐसा स्वभाव है और स्वभाव युक्तिका विषय नहीं होता, क्योंकि, अग्नि दाह्यजनक होकर भी मृत्युदायक है इत्यादिमें कोई युक्ति नहीं पाई जाती।

उनसे भावकी अपेक्षा नाम व गोत्रकी उत्कृष्ट वेदनायें दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं। ५१।

कुदो? सुहपयडित्तादो। असुहपयडिअणुभागादो सुहपयडीणमणुभागो किमट्ठमणंतगुणो? ण, साभावियादो। न हि स्वभावाः परपर्यनुयोगार्हाः।

वेदणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ५२ ॥

जसकित्ति-उच्चागोदेहिंतो सादावेदणीयस्स पसत्थतमत्तादो।

एवमुक्कस्साणुभागप्पाबहुगं समत्तं।

जहण्णुक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ॥ ५३ ॥

सुगमं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५४ ॥

सुगमं।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणाओ भावदो जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ५५ ॥

सुगमं।

आउअवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५६ ॥

सुगमं।

क्योंकि, ये दोनों शुभ प्रकृति हैं।

शंका– अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागसे शुभ प्रकृतियोंका अनुभाग अनन्तगुणा क्यों है?

समाधान– नहीं, क्योंकि, वैसा स्वभाव है, और स्वभाव प्रश्नके विषय नहीं हुआ करते।

उनसे भावकी अपेक्षा वेदनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५२ ॥

कारण कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी अपेक्षा सातावेदनीय अतिशय प्रशस्त है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभाग अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

जघन्य-उत्कृष्टपदसे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य वेदना सबसे स्तोक है। ५३।

यह सूत्र सुगम है।

उससे भावकी अपेक्षा अन्तरायकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उससे भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी जघन्य वेदनायें दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ५५ ।

यह सूत्र सुगम है।

उनसे भावकी अपेक्षा आयुकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा । ५७ ।

गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा । ५८ ।

सुगमं ।

वेदणीयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५९ ॥

सुगमं ।

आउअवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा । ६० ।

सुगमं ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो उक्कस्सिया तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ६१ ॥

सुगमं ।

मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ६२ ।

सुगमं ।

णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ६३ ॥

सुगमं ।

उससे भावकी अपेक्षा नामकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है । । ५७ ।

उससे भावकी अपेक्षा गोत्रकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है । ५८ ।

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा वेदनीयकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है । ५९ ।

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा आयुकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है । ६० ।

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी उत्कृष्ट वेदनायें तीनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं । ६१ ।

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है । ६२ ।

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा नाम व गोत्रकी उत्कृष्ट वेदनायें दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ६३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ अ-आ-का प्रतिषु ५७-५८ संख्याकमिदं सूत्रद्वयं विपरीतक्रमेणोपलभ्यते, किन्तु ताप्रतौ द्वयोरपि क्रमयोर्नास्तितत्त्वम् ।

वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ६४ ॥

सुगमं ।

एवं जहण्णुक्कस्सप्पाबहुअं समत्तं ।

संपहि मूलपयडीओ अस्सिदूण जहण्णुक्कस्सप्पाबहुअपरूवणं करिय उत्तर-पयडीओ अस्सिदूण अणुभागअप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

सादं जसुच्च-दे-कं ते-आ-वे-मणु अनन्तगुणहीणा ।
ओ-मिच्छ-के-असादं वीरिय-अणंताणु-संजलणा ॥ १ ॥

'सादं' इति वुत्ते सादावेदणीयं घेत्तव्वं । 'जस' इदि वुत्ते जसकित्ती गेज्झा । कधं णामेगदेसेण णामिल्लविसयसंपच्चओ? ण, देव-भामा-सेणसद्देहिंतो बलदेव-सच्चभामा-भीमसेणादिसु संपच्चयदंसणादो । ण च लोगववहारो चप्पलओ, ववहारिज्जमाणस्स चप्पलत्ताणुवलंभादो । 'उच्च' इदि वुत्ते उच्चागोदं घेत्तव्वं । एत्थ विरामो किमट्ठं कदो ? जसकित्तिउच्चागोदाणमणुभागो समाणो त्ति जाणावणट्ठं । 'दे' इदि वुत्ते

मार्गदर्शक : पूज्य आ. श्री सुविधिसागर जी महाराज

उनसे भावकी अपेक्षा वेदनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ६४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार जघन्य-उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

अब मूल प्रकृतियोंके आश्रयसे जघन्य-उत्कृष्ट अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करके उत्तर प्रकृतियोंके आश्रयसे अनुभागके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये उत्तर सूत्र कहते हैं–

सातावेदनीय, यशःकीर्ति व उच्चगोत्र ये दो प्रकृतियां, देवगति, कार्मण शरीर, तैजस शरीर, आहारक शरीर, वैक्रियिक शरीर और मनुष्यगति ये प्रकृतियां उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं । औदारिक शरीर, मिथ्यात्व, केवलज्ञानावरण-केवलदर्शनावरण– असातावेदनीय व वीर्यान्तराय ये चार प्रकृतियां, अनन्तानुबंधिचतुष्टय और संज्वलन चतुष्टय ये प्रकृतियां उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ १ ॥

कुल 23 प्रकृतियें में 12 बार अनन्त गुणत्व आया ।

' सादं ' ऐसा कहनेपर सातावेदनीयका ग्रहण करना चाहिये । 'जस' कहनेसे यशःकीर्तिका ग्रहण करना चाहिये ।

शंका– नामके एक देशसे नामवाली वस्तुका बोध कैसे हो सकता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, देव, भामा व सेन शब्दोंसे क्रमशः बलदेव, सत्यभामा व भीमसेनका प्रत्यय होता हुआ देखा जाता है । यदि कहा जाय कि लोकव्यवहार चपल होता है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि, व्यवहारकी विषयभूत वस्तुकी चपलता नहीं बन सकती ।

' उच्च ' ऐसा कहनेपर उच्चगोत्रका ग्रहण करना चाहिये ।

शंका– यहांपर विराम किसलिये किया गया है ?

समाधान– यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका अनुभाग समान है, यह जतलानेके लिये यहां विराम किया गया है ।

देवगदी घेत्तव्वा। 'कं' इदि वुत्ते कम्मइयसरीरं घेत्तव्वं। 'तं' इदि भणिदे तेयासरीरस्स गहणं। 'आ' इदि वुत्ते आहारसरीरस्स गहणं। 'वे' इदि वुत्ते वेउव्वियसरीरस्स गहणं। 'मणु' णिद्देसो मणुसगदिगहणट्ठो। अणंतगुणहीणाओ एदाओ उत्तसव्वपयडीओ अण्णोण्णं पेक्खिदूण जहाकमेण अणंतगुणहीणाओ। एसो 'अणंतगुणहीण' णिद्देसो उवरि वि मंडूगुप्पदेण अणुवट्टदे, कत्थ वि विरामाभावो। 'ओ' णिद्देसो ओरालियसरीरगहणट्ठो। 'मिच्छा' णिद्देसो मिच्छत्तकम्मगहणणिमित्तो। 'के' त्ति णिद्देसो केवलणाणावरणीय-केवलदंसणावरणीयाणं गहणणिमित्तो। 'असाद' णिद्देसो असादावेदणीयगहणट्ठो। 'वीरिय' णिद्देसो वीरियंतराइयगहणणिमित्तो। एदासिं चदुण्णं पयडीणमणुभागो सरिसो। एत्थ अणंतगुणहीणाणुवत्तीए अभावाभो। तदणुवत्तीए वि कुदो णव्वदे? एदस्स गाहासुत्तस्स विवरणभावेण रचिदउवरिमचुण्णिसुत्तादो। 'अणंताणु' त्ति णिद्देसो अणंताणुबंधिचउक्कगहणट्ठो। लोभाणुभागे अणंतगुणहीणत्तमणुवट्टदे णोवरिमसुत्तेसु वि लोभादो माया विसेसहीणा कोधो विसेसहीणो माणो विसेसहीणो त्ति उवरिमसुत्ते परूविज्जमाणत्तादो। 'संजलणा'

'दे' ऐसा करनेसे देवगतिका ग्रहण करना चाहिए। 'कं' ऐसा कहनेपर कार्मण शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'तं' ऐसा कहनेपर तैजस शरीरका ग्रहण करना चाहिए। 'आ' ऐसा कहनेपर आहारक शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'वे' ऐसा कहनेपर वैक्रियिक शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'मणु' पदका निर्देश मनुष्यगतिका ग्रहण करनेके लिए किया गया है। ये उपर्युक्त सब प्रकृतियां उत्तरोत्तर एक दूसरेकी अपेक्षा क्रमसे अनन्तगुणी हीन हैं। यह अनन्तगुणहीन पदका निर्देश मेंढक उत्पतन न्यायसे आगे भी अनुवृत्त होता है, क्योंकि, कहींपर विराम देखा जाता है। 'ओ' पदका निर्देश औदारिक शरीरका ग्रहण करनेके लिये किया है।

'मिच्छा' यह निर्देश मिथ्यात्व कर्मका ग्रहण करनेके निमित्त है। 'के' पदका निर्देश केवल ज्ञानावरण व केवलदर्शनावरणका ग्रहण करनेके लिए किया है। 'असाद' पदका निर्देश असाता वेदनीयका ग्रहण करनेके लिए है। 'वीरिय' पदका निर्देश वीर्यान्तरायका ग्रहण करनेके निमित्त है। इन चार प्रकृतियोंका अनुभाग समान है क्योंकि, यहां 'अनन्तगुणहीना' की अनुवृत्तिका अभाव है।

शंका – उसकी अननुवृत्तिका भी परिज्ञान किस प्रमाणसे होता है?

समाधान – इस गाथासूत्रके विवरणरूपसे रचे गये आगेके चूर्णिसूत्रसे उसका परिज्ञान होता है।

'अणंताणु' पदका निर्देश अनन्तानुबन्धिचतुष्टयका ग्रहण करनेके लिये है। यहां लोभके अनुभागमें अनन्तगुणहीन पदकी अनुवृत्ति होती है। आगेकी तीन कषायोंमें उसकी अनुवृत्ति नहीं होती। क्योंकि लोभसे माया विशेष हीन है, इससे क्रोध विशेष हीन है, इससे मान विशेष हीन है

ॐ प्रतिषु 'मंडुगप्पदेण' इति पाठः। (ता) अप्रतौ 'तदणुवृत्तौ' इति पाठः। (ता) ताप्रतौ- 'एत्थ लोभाणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति अणुवट्टदे' इति पाठः। ॐ अप्रतौ– 'णोवरिम सुत्तेसु' आप्रतौ– णोउवरिमेसु सुत्तेसु।

त्ति उत्ते चदुण्हं संजलणाणं गहणं। तत्थ लोभसंजलणाए अणंतगुणहीणाहियारो अणुवट्टदे, ण उवरिमेसु। कुदो णव्वदे ? उवरि भण्णमाणसुत्तादो। एत्थ वि माया-कोध-माणाणुभागाणं कमेण विसेसहीणत्तं वत्तव्वं।

अट्ठाभिणि-परिभोगे चक्खू तिण्णि तिय पंचणोकसाया।
णिद्दाणिद्दा पयलापयला णिद्दा य पयला य ॥ २ ॥

एदस्स बिदियगाहासुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा– 'अट्ठ' इदि वुत्ते अट्ठकसायाणं गहणं। तत्थ पच्चक्खाणावरणीयाणं लोभे जेण अणंतगुणहीणाहियारो अणुवट्टदे तेण माणसंजलणाणुभागादो पच्चक्खाणावरणीयलोभाणुभागो अणंतगुणहीणो। माया विसेसहीणा कोधो विसेसहीणो माणो विसेसहीणो पयडिविसेसेण। कुदो ? अणंतगुणहीणअहियाराणणुवुत्तीदो। अपच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो, तत्थ तदणुवुत्तीदो। उवरि विसेसहीणदा, तदणणुवुत्तीदो। कधं सव्वमिदं णव्वदे ? उवरि भण्णमाण–

इसप्रकार आगेके सूत्रोंमें [illegible] 'जा' कहनेपर चार संज्वलन कषायोंका ग्रहण किया है। उनमेंसे संज्वलन लोभमें अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अनुवृत्ति होती है, आगेकी कषायोंमें नहीं होती।

शंका–– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान–– यह आगे कहे जानेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

यहाँ भी माया, क्रोध और मानके अनुभागोंमें क्रमशः विशेषहीनताका कथन करना चाहिये।

आठ कषाय अर्थात् चार प्रत्याख्यानावरण और चार अप्रत्याख्यानावरण, आभिनिबोधिक ज्ञानावरण और परिभोगान्तराय ये दो, चक्षुदर्शनावरण, तीन त्रिक अर्थात् श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ, अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ, मनःपर्ययज्ञानावरण, स्त्यानगृद्धि और दानान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ, पाँच नोकषाय अर्थात् नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला निद्रा और प्रचला ये प्रकृतियाँ क्रमशः उत्तरोत्तर अनन्तगुणहीन हैं ॥ २ ॥

इस द्वितीय गाथासूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा 'अट्ठ' ऐसा कहनेपर आठ कषायोंका ग्रहण किया गया है। उनमेंसे प्रत्याख्यानावरण लोभमें चूंकि अनन्तगुणहीन अधिकारकी अनुवृत्ति आती है अतः संज्वलनमानके अनुभागसे प्रत्याख्यानावरण लोभका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है। उससे प्रकृतिविशेष होनेके कारण माया विशेष हीन है, उससे क्रोध विशेष हीन है, उससे मान विशेष हीन है, क्योंकि इनमें अनन्तगुणहीन अधिकारकी अनुवृत्ति नहीं होती। उससे अप्रत्याख्यानावरण लोभ अनन्तगुणाहीन है, क्योंकि, उसमें अनन्तगुणहीन पदकी अनुवृत्ति होती है। आगे माया आदि क्रमशः विशेष हीन हैं, क्योंकि, उनमें अनन्तगुणहीन पदकी अनुवृत्ति नहीं होती।

शंका–– यह सब किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

मार्गदर्शक **चुण्णिसुत्तादो। 'आभिणि' त्ति वुत्ते आभिणिबोहियणाणावरणीयस्स गहणं। 'परिभोगे' त्ति वुत्ते परिभोगंतराइयस्स गहणं। एदाणि दो वि अण्णोण्णं तुल्लाणि होदूण पुव्विल्लाणुभागादो अणंतगुणहीणाणि। कधं तुल्लत्तं णव्वदे? परमगुरूवएसादो। 'चक्खू' इदि वुत्ते चक्खुदंसणावरणीयस्स गहणं। 'तिण्णि' त्ति वुत्ते सुदणाणावरणीय-अचक्खुदंसणावरणीय-भोगंतराइयाणं अण्णोण्णं पेक्खिदूण अणुभागेण समाणाणं गहणं। कधमेदेसिं तुल्लत्तं णव्वदे? ण, आइरियोवदेसादो। तेण एत्थ अणंतगुणहीणाहियारो पादेक्कं ण संबज्झदे किंतु समुदायम्मि। 'तिय' इदि वुत्ते ओहिणाणावरणीय-ओहिदंसणावरणीय-लाहंतराइयाणं अणुभागं पेक्खिदूण अण्णोण्णेण समाणाणं गहणं। कधं समाणत्तं णव्वदे? उवरि भण्णमाणचुण्णिसुत्तादो। मणपज्जयणाणावरणीय-थीणगिद्धि-दाणंतराइयाणं च अणुभागेण अण्णोण्णं तुल्लाणं 'तिण्णि तिय' णिद्देसेणेव गहणं, अन्यथा त्रि-त्रिकत्वानुपपत्तेः एत्थ वि अणंतगुणहीणाहियारो समुदाए अणुवट्टावेदव्वो। 'पंच णोकसाया' इदि वुत्ते पंचण्णं(१) णोकसायाणं गहणं। एत्थ**

समाधान – आगे कहे जानेवाले चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है। पृ. ५० से ५३ तक

'आभिणि' ऐसा कहनेपर अभिनिबोधिक ज्ञानावरणका ग्रहण होता है। 'परिभोग' कहनेपर परिभोगान्तरायका ग्रहण होता है। ये दोनों ही परस्पर समान होकर पूर्वके अनुभागसे अनन्तगुणे हीन हैं।

शंका – इनकी समानता परिज्ञान किस प्रमाणसे होता है?

समाधान – उसका परिज्ञान परमगुरुके उपदेशसे होता है।

'चक्खू' ऐसा कहनेपर चक्षुदर्शनावरणीयका ग्रहण होता है। 'तिण्णि' पदके निर्देशसे एक दूसरेको देखते हुए अनुभागकी अपेक्षा समान श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तरायका ग्रहण होता है।

शंका– इनकी समानता किस प्रमाणसे जानी जाती है?

समाधान– नहीं, क्योंकि, वह आचार्योंके उपदेशसे जानी जाती है।

इस कारण इनमेंसे प्रत्येकमें अनन्तगुणहीन पदके अधिकारका सम्बन्ध नहीं है, किन्तु समुदायमें है। 'तिय' ऐसा कहनेपर अनुभागकी अपेक्षा परस्पर समान अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तरायका ग्रहण होता है।

शंका– यह समानता किस प्रमाणसे जानी जाती है?

समाधान– वह आगे कहे जानेवाले चूर्णिसूत्रसे जानी जाती है। पृ ५५-५६

परस्पर अनुभागकी अपेक्षा समानताको प्राप्त हुई मनःपर्ययज्ञानावरणीय, स्त्यानगृद्धि और दानान्तराय इन तीन प्रकृतियोंका भी ग्रहण 'तिण्णितिय' पदके निर्देशसे ही होता है, क्योंकि, इसके विना तीन त्रिक घटित नहीं होते। यहांपर भी अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अनुवृत्ति समुदायमें ही करानी चाहिये। 'पंच णोकसाया' ऐसा कहनेपर पांच नोकषायोंका ग्रहण होता है।

---

(१) प्रतिषु 'पचण्णं कसायाणं णोकसा-' इति पाठः।

अणंतगुणहीणाहियारो पादेक्कमणुवट्टावेदव्वो । तं जहा–णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो । अरदी अणंतगुणहीणा । सोगो अणंतगुणहीणो । भयमणंतगुणहीणं । दुगुंछा अणंतगुणहीणा त्ति । ' णिद्दाणिद्दा पयलापयला णिद्दा य पयला य ' एदाओ पयडीओ कमेण अणंतगुणहीणाओ, पादेक्कमणंतगुणहीणाहियारस्स संबंधादो ।

अजसो णीचागोदं णिरय-तिरिक्खगइ इत्थि पुरिसो य ।
रदि-हस्सं देवाऊ णिरयाऊ मणुय-तिरिक्खाऊ ॥ ३ ॥

एदिस्से तदिय सुत्तगाहाए अत्थो वुच्चदे । तं जहा– ' अजसो णीचागोदं ' इदि वुत्ते अजसकित्तिणीचागोदाणमणुभागेण समाणाणं अणंतगुणहीणाहियारेण समुदाएण बज्झमाणाणं गहणं । ' णिरय ' इदि वुत्ते णिरयगदी घेतव्वा । ' तिरिक्खगइ-इत्थि-वेद-पुरि-सवेद-रदि हस्स-देवाउ-णिरयाउ-मणुस्साउ-तिरिक्खाऊ जहासंखाए अणंतगुणहीणा त्ति घेतव्वा ।

एदाहि तीहि गाहाहि परूविदचउसट्ठिपदियउक्कस्साणुभागमहादंडयअप्पाबहुगस्स मंदमेहाविजणाणुग्गहाय अत्थपरूवणट्ठमुवरिमसुत्तं भणदि–

एत्तो उक्कस्सओ चउसट्ठिपदियो महादंडओ कायव्वो भवदि । ६५ ।

यहाँ अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अनुवृत्ति प्रत्येकमें करानी चाहिये । यथा– नपुंसक वेद अनन्तगुणा हीन है । उससे अरति अनन्तगुणी हीन है । उससे शोक अनन्तगुणा हीन है । उससे भय अनन्तगुणा हीन है । उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी हीन है । निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा और प्रचला ये प्रकृतियां क्रमशः उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं, क्योंकि, अनन्तगुणहीन पदके अधिकारका सम्बन्ध इनमेंसे प्रत्येकमें है ।

अयशःकीर्ति और नीचगोत्र ये दो, नरकगति, तिर्यग्गति, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, रति, हास्य, देवायु, नारकायु, मनुष्यायु और तिर्यगायु ये प्रकृतियां अनुभागकी अपेक्षा उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ३ ॥

इस तृतीय गाथासूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा– ' अजसो णीचागोदं ' ऐसा कहनेपर अनुभागकी अपेक्षा समान और अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अपेक्षा समुदायरूपसे बंधनेवाली अयशःकीर्ति और नीचगोत्र प्रकृतियोंका ग्रहण होता है । ' णिरय ' इस पदसे नरकगतिका ग्रहण करना चाहिए । तिर्यग्गति, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, रति, हास्य, देवायु, नरकायु, मनुष्यायु और तिर्यगायु ये प्रकृतियां यथाक्रमसे अनन्तगुणी हीन हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

इन तीन गाथाओं द्वारा कहे गए चौंसठ पदवाले उत्कृष्ट अनुभागके अल्पबहुत्व सम्बन्धी महादण्डकका मन्दबुद्धि शिष्योंका अनुग्रह करनेवाले अर्थका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं–

यहांसे आगे चौंसठ पदवाला उत्कृष्ट महादण्डक करना चाहिये ॥ ६५ ॥

जहण्ण-उक्कस्स-जहण्णुक्कस्सभेदेण तिविय्पे अप्पाबहुए परूविदूण समत्ते किमट्ठं चउसट्ठिपदियमहादंडओ वुच्चदे? ण एस दोसो, पुव्विल्लमूलपयडिअप्पाबहुगं जेण देसामासियं तेण तमज्ज वि ण समत्तं। तदो तेणामासिदउत्तरपयडिउक्कस्स-जहण्णाणुभागअप्पाबहुगं भणिदूण तं समाणणट्ठ(?) मिदं वुच्चदे।

सव्वतिव्वाणुभागं सादावेदणीयं ॥ ६६ ॥

अइसुहपयडित्तादो सुहुमसांपराइयचरिमसमयतिव्वविसोहीए पबद्धत्तादो संसारसुहहेदुत्तादो वा।

जसगित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥६७॥

सादावेदणीयादो एदाणि दो वि कम्माणि सुहत्तणेण सुहुमसांपराइयचरिमसमए बंधभावेण च सरिसाणि होदूण कधं तत्तो अणंतगुणहीणाणि? ण, जसकित्ति-उच्चागोदेहिंतो अइसुहसरूवत्तादो। ण च सुहाणं कम्माणं सव्वेसिं समाणत्तं वोत्तुं सक्किज्जदे, तरतमभावेण अण्णत्थ सुहत्तुवलंभादो। जसकित्ति-उच्चागोदाणि सुहाणि त्ति कादूण तक्कारण

शंका- जघन्य, उत्कृष्ट और जघन्य-उत्कृष्टके भेदसे तीन प्रकारके अल्पबहुत्वका कथन करके उसके समाप्त हो जानेपर फिर चौंसठ पदवाले महादण्डकको किस लिये कहा जाता है?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, पहिलेका मूल प्रकृति अल्पबहुत्व चूंकि देशामर्शक है अतः वह आज भी समाप्त नहीं हुआ है। इस कारण उसके द्वारा आमर्शित उत्तर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और जघन्य अनुभाग सम्बन्धी अल्पबहुत्वको कहकर उसे समाप्त करनेके लिये उक्त महादण्डक कहा जा रहा है।

सातावेदनीय प्रकृति सर्व तीव्र अनुभागसे संयुक्त है ॥ ६६ ॥

क्योंकि, वह अतिशय शुभ प्रकृति है, अथवा सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें तीव्र विशुद्धिसे उसका बन्ध हुआ है अथवा वह संसार सुखका कारण है।

इससे यशकीर्ति और उच्चगोत्र ये दोनों ही परस्पर तुल्य होकर अनन्तगुणे हीन हैं ॥ ६७ ॥

शंका- ये दोनों ही कर्म शुभ होनेके कारण तथा सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें बंधनेके कारण सातावेदनीयके समान है। ऐसी अवस्थामें उससे अनन्तगुणे हीन कैसे हो सकते हैं?

समाधान- नहीं, क्योंकि, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी अपेक्षा सातावेदनीय अतिशय शुभ है। सब शुभकर्म समान ही हों, यह नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अन्यत्र तरतम भावसे शुभपना उपलब्ध होता है। यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके शुभ होनेसे उनके कारणभूत कर्म भी शुभ

(?) प्रतिषु-'णट्ठमिदि' वुच्चदे इति पाठः।

कम्माणि वि सुहाणि । सादवेदणीयं पुण अइसुहमुप्पादेदि त्ति सुहदमं । तदो तमणंतगुणमिदि भणिदं ।

देवगदी॓ अणंतगुणहीणा ॥ ६८ ॥

अपुव्वखवगेण चरिमसमयसुहुमसांपराइयविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा सगद्धासत्तभागेसु छट्ठभागचरिमसमयट्ठिदेण बद्धत्तादो ।

कम्मइयसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ६९ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

दोण्णं पि समाणपरिणामेहि बद्धाणं कधं विसरिसत्तं जुज्जदे ? ण, जीवविवागिपोग्गलविवागीणं च अणुभागाणं सरिसत्ताणुववत्तीदो । कम्मइयसरीरं पोग्गलविवागी, तप्फलस्स अविसयस्स उवलंभादो । देवगदी॓ पुण जीवविवागी, तप्फलेण जीवे अणिमादिगुणदंसणादो । तदो जीवविवागिदेवगदिअणुभागादो बहिरंगपोग्गलविवागिकम्मइयसरीराणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति सिद्धं । अंतरंग-बहिरंगाणं ण समाणत्तं, लोगे तहाणुवलंभादो ।

तेयासरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७० ॥

हैं । परन्तु सातावेदनीय यतः अतिशय सुखको उत्पन्न करता है अतएव वह शुभतम है । इसी कारण वह उन दोनोंकी अपेक्षा अनन्तगुणा है यह कहा गया है ।

उनसे देवगति अनन्तगुणी हीन है ॥ ६८ ॥

कारण कि अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिककी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले अपूर्वकरण क्षपकके द्वारा अपने कालके सात भागोंमेंसे छठे भागके अन्तिम समयमें उसका बन्ध होता है ।

उससे कार्मण शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ६९ ॥

शंका-- जब कि ये दोनों कर्म समान परिणामोंके द्वारा बांधे जाते हैं तब उनमें विसदृशता कैसे उचित है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, जीवविपाकी और पुद्गलविपाकी प्रकृतियोंके अनुभागोंमें समानता सम्भव नहीं है । कार्मण शरीर पुद्गलविपाकी है, क्योंकि, उसका फल पुद्गलसे अभिन्न उपलब्ध होता है । परन्तु देवगति जीवविपाकी है, क्योंकि, उसके फलसे जीवमें अणिमा, महिमा आदि गुण देखे जाते हैं । इसीलिये जीवविपाकी देवगति के अनुभागकी अपेक्षा बहिरंग पुद्गलविपाकी कार्मण शरीरका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है । यदि कहा जाय कि अन्तरंग और बहिरंगकी समानता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि लोकमें वैसा उपलब्ध नहीं होता ।

उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७० ॥

॓ प्रतिषु ' देवगदी णं अणंत- ' इति पाठः । ॓ प्रतिषु ' देवगदीए पुण ' इति पाठः ।

पोग्गलविवागित्तणेण बंधसामित्तेण कम्मइयसरीरेण तेजइयसरीरं समाणं वट्टदे, तदो अणंतगुणहीणत्तं ण घडदि त्ति? ण, कज्जमहत्तादो कम्मइयसरीराणुभागस्स महत्तसिद्धीदो, तेजइयसरीरकम्मादो तेजइयसरीरस्सेव णिप्फत्ती, कम्मइयसरीरं पुण गंधिल्लपेलियावेंटो व्व सव्वकम्माणमासयभावफलं। तदो तेजइयसरीरेण कीरमाण-कज्जादो कम्मइयसरीरेण कीरमाणकज्जमइमहल्लं त्ति तदणुभागस्स अणंतगुणत्त-मवगम्मदे।

आहारसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७१ ॥

योगदेशक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो एवं णव्वदे? उव्वेल्लिज्जमाणत्तादो। ण च तिव्वाणुभागो उव्वेल्लिय णिस्संतो कादुं सक्किज्जदे। आहारसरीरं पुण उव्वेल्लिय णिस्संतं कीरमाणमुवल-ब्भदे। तदो तेजइयसरीराणुभागादो आहारसरीराणुभागो अणंत(?) गुणहीणो त्ति सिद्धं।

वेउव्वियसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७२ ॥

कुदो? पयडिविसेसेण। को पयडिविसेसो? आहारसरीरं पेक्खिदूण पसत्थभावेण

शंका– चूंकि तैजस शरीर पुद्गलविपाकी होनेकी अपेक्षा व बन्धस्वामित्वकी अपेक्षा कार्मण शरीरके समान है, अतएव उसमें कार्मण शरीरकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीनता घटित नहीं होती ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, कार्यके महत्त्वमें कार्मण शरीरके अनुभागकी भी महत्ता सिद्ध होती है। तैजस शरीर नामकर्मसे केवल तैजस शरीरकी उत्पत्ति होती है, किन्तु कार्मण शरीर गन्धवाले पेलिया वृत्तके समान सब कर्मोंके आस्रवका कारण है इसलिये तैजस शरीरके द्वारा किये जानेवाले कार्यकी अपेक्षा कार्मण शरीरके द्वारा किया जानेवाला कार्य अतिशय महान् है, अतएव उसका अनुभाग अनन्तगुणा है यह निश्चय होता है।

उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७१ ॥

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– क्योंकि, वह उद्वेलनाको प्राप्त होनेवाली प्रकृति है। तीव्र अनुभागकी उद्वेलना करके उसे निःसत्त्व करना तो शक्य नहीं है। परन्तु आहारक शरीरकी उद्वेलना करके उसे निःसत्त्व करते हुए देखा जाता है। इस कारण तैजस शरीरके अनुभागकी अपेक्षा आहारक शरीरका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है।

उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७२ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है।

शंका– वह प्रकृतिकी विशेषता क्या है ?

समाधान– आहारक शरीरमें जितनी प्रशस्तता है उसकी अपेक्षा इसमें वह कम है, यही प्रकृति विशेषता है।

(?) प्रतिषु ' अणंतगुणो त्ति ' इति पाठः।

ऊणदा। आहारयसरीरादो वेउव्वियसरीरमप्पसत्थमिदि कधं णव्वदे ? ण, आहारयसरीरस्सेव संजदेसु चेव वेउव्वियसरीरस्स बंधाणुवलंभादो।

मणुसगदी अणंतगुणहीणा ॥ ७३ ॥

कुदो ? अपुव्वखवगविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहीएण☼ देवासंजदसम्मादिट्ठिणा पबद्धत्तादो।

ओरालियसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७४ ॥

दोण्णं पयडीणं उक्कस्सबंधस्स एक्कम्हि चेव सामीए संते कधमणुभागं पडि विसरिसत्तं✿? ण एस दोसो, पयडिविसेसेण विसरिसत्तुवयत्तीदो। को पयडिविसेसो? जीवविवागि-पोग्गलविवागित्तं। मणुसगदी जीवविवागी, ओरालियसरीरं पोग्गलविवागी। तेण मणुसगदीदो ओरालियसरीरस्स अणंतगुणहीणत्तं सिद्धं।

मिच्छत्तमणंतगुणहीणं ॥ ७५ ॥

सव्वदव्वपज्जायसद्दहणम्मि णिबद्धजीवविवागिमिच्छत्ताणुभागादो पोग्गलविवागि-

---

शंका- आहारक शरीरकी अपेक्षा वैक्रियिक शरीर अप्रशस्त है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, जिस प्रकार आहारक शरीरका बन्ध संयत जीवोंके ही होता है उस प्रकार वैक्रियिक शरीरका बन्ध मात्र संयतोंके नहीं उपलब्ध होता। इसीसे उसकी अप्रशस्तता जानी जाती है।

उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी हीन है ॥ ७३ ॥

क्योंकि, अपूर्वकरण क्षपककी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाला असंयत सम्यग्दृष्टि देव उसे बांधता है।

उससे औदारिक शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७४ ॥

शंका- दोनों प्रकृतियोंके उत्कृष्ट बन्धका स्वामी एक ही जीव है फिर इनके अनुभागमें विसदृशता कैसे सम्भव है ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, प्रकृतिविशेष होनेके कारण उनमें विसदृशता सम्भव है।

शंका- वह प्रकृतिविशेष क्या है ?

समाधान- जीवविपाकित्व और पुद्गलविपाकित्व ही यहाँ प्रकृतिविशेष है। मनुष्यगति प्रकृति जीवविपाकी है और औदारिक शरीर पुद्गलविपाकी है। इस कारण मनुष्यगतिकी अपेक्षा औदारिक शरीर अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है।

उससे मिथ्यात्व प्रकृति अनन्तगुणी हीन है ॥ ७५ ॥

शंका- सब द्रव्यों व उनकी पर्यायोंके अश्रद्धानसे सम्बन्ध रखनेवाली जीवविपाकी

☼ अप्रतौ 'विसोहीए' इति पाठः। ✿ अप्रतौ 'सरिसत्तं' इति पाठः।

ओरालियसरीराणुभागो कधमणंतगुणो ? ण च अंतरंगकारणकम्मेहिंतो बहिरंगकारणकम्माणमणुभागेण महल्लत्तं, ✲विरोहादो त्ति ? ण एस दोसो, पयडिविसेसेण अणंतगुणहीणत्तविरोहादो । को पयडिविसेसो ? ओरालियसरीरमिच्छत्ताणं पसत्थापसत्थत्तं । कधमोरालियसरीरस्स पसत्थत्तं णव्वदे ? मिच्छत्तस्सेव मिच्छाइट्ठिम्हि चेव ओरालियसरीरस्स बंधाणुवलंभादो णव्वदे ।

केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं असादावेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ७६ ॥

एदासिं चदुण्णं पयडीणमुक्कस्साणुभागस्स मिच्छाइट्ठी सव्वसंकिलिट्ठो मिच्छत्तस्सेव सामी । तदो तत्तो एदासिमणंतगुणहीणत्तं ण जुज्जदे ? ण, पयडिविसेसेण तदुववत्तीदो । कुदो पयडिविसेसो णव्वदे ? मिच्छत्तोदए संते केवलणाणावरणादिसव्व-

---

मिथ्यात्व प्रकृतिके अनुभागकी अपेक्षा पुद्गलविपाकी औदारिक शरीरका अनुभाग अनन्तगुणा कैसे हो सकता है ? यदि कहा जाय कि अन्तरंगमें प्रवृत्त हुए कर्मोंकी अपेक्षा बहिरंगमें प्रवृत्त हुए कर्म अनुभागकी अपेक्षा महान् होते हैं सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, ऐसा मानने में विरोध आता है ।

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, प्रकृतिविशेष होनेके कारण औदारिक शरीरकी अपेक्षा मिथ्यात्वके अनन्तगुणे हीन होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

शंका-- वह प्रकृतिविशेष क्या है ?

समाधान-- औदारिकशरीर प्रशस्त है और मिथ्यात्व अप्रशस्त है, यही यहाँ प्रकृतिविशेष है ।

शंका-- औदारिक शरीर प्रशस्त है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- जिस प्रकार मिथ्यात्वका बन्ध एक मात्र मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें होता है इस प्रकार औदारिक शरीरका बन्ध केवल वहाँ ही नहीं होता । इसीसे औदारिक शरीरकी प्रशस्तता जानी जाती है ।

केवल ज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय ये चारों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर उससे अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ७६ ॥

शंका-- चूंकि मिथ्यात्वके समान इन चार प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीव ही होता है, अतएव मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा ये चार प्रकृतियाँ अनन्तगुणहीन नहीं बन सकतीं ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, प्रकृति विशेष होनेके कारण वे चारों ही प्रकृतियाँ अनन्तगुणी हीन बन जाती हैं ।

शंका-- इनकी प्रकृतिगत विशेषताका परिज्ञान किस प्रमाणसे होता है ?

समाधान- मिथ्यात्वका उदय होनेपर केवलज्ञानावरणादि सब प्रकृतियोंके बन्ध व सत्त्वका

✲ प्रतिषु ' विरोहादि त्ति ' इति पाठः ।

पयडीणं बंध-संत-विणासाभावदंसणादो केवलणाणावरणादीणमुवए संते मिच्छत्तस्स बंध-संतविणासुवलंभादो ।

अणंताणुबंधिलोभो अणंतगुणहीणो ॥ ७७ ॥

कुदो? पयडिविसेसेण । को पयडिविसेसो? तीहंतो दुब्बलत्तं । कधं दुब्बलभावो णव्वदे? सम्मत्तपरिणामेहि विसंजोयणुवलंभादो, चदुण्णं वण तदुवलंभादो ।

माया विसेसहीणा ॥ ७८ ॥

कुदो? पयडिविसेसेण ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ७९ ॥

पयडिविसेसेण ।

माणो विसेसहीणो ॥ ८० ॥

पयडिविसेसेण ।

संजलणाए लोभो अणंतगुणहीणो ॥ ८१ ॥

अणंताणुबंधि-संजलणाणं मिच्छाइट्ठिम्हि चेव उक्कस्सबंधे संते अणंताणुबंधीभागादो

विनाश नहीं देखा जाता है, परन्तु केवलज्ञानावरणादिकोंके उदयमें मिथ्यात्वके बन्ध व सत्त्वका विनाश उपलब्ध होता है । इसीसे इनकी प्रकृतिगत विशेषताका ज्ञान होता है ।

उनसे अनन्तानुबन्धी लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ७७ ॥

क्योंकि, इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका – वह प्रकृतिगत विशेषता क्या है ?

समाधान – उपर्युक्त चारों प्रकृतियोंकी अपेक्षा इसकी दुर्बलता ही प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका – इसकी दुर्बलता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान – क्योंकि, सम्यक्त्व परिणामोंके द्वारा उसका विसंयोजन उपलब्ध होता है, परन्तु इन चारोंका विसंयोजन उपलब्ध नहीं होता है, अतएव ज्ञात होता है कि अनन्तानुबन्धी लोभ उन चारोंकी अपेक्षा दुर्बल है ।

उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष हीन है ॥ ७८ ॥

इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेषहीन है ॥ ७९ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अनन्तानुबन्धी मान विशेषहीन है ॥ ८० ॥

यहाँ भी कारण प्रकृति विशेष ही है ।

उससे संज्वलन लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ८१ ॥

शंका – जब कि अनन्तानुबन्धी और संज्वलनका उत्कृष्ट बन्ध मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही

कधं संजलणाणुभागो अणंतगुणहीणो ? पयडिविसेसादो । तं जहा– अणंताणुबंधिचउक्कं सम्मत्त-संजमाणं घादयं, संजलणचदुक्कं पुण चारित्तस्सेव विणासयं । तदो अणंताणुबंधिचउक्कसत्तीदो संजलणचउक्कसत्तीए अप्पयरत्तं णव्वदे । तेण अणंताणुबंधिअणुभागादो संजलणाणुभागस्स अणंतगुणहीणत्तं णव्वदे ।

माया विसेसहीणा ॥ ८२ ॥

पयडिविसेसेण ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ८३ ॥

पयडिविसेसेण ।

माणो विसेसहीणो ॥ ८४ ॥

मार्गदर्शक :- [illegible] विद्यासागर जी महाराज

पच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो ॥ ८५ ॥

कुदो? पयडिविसेसेण । कधं पयडिविसेसो णव्वदे? संजलणचउक्कं जहाक्खादसंजमघादयं पच्चक्खाणावरणीयं पुण सरागसंजमघादयं । तेण पच्चक्खाणादो संजलणाणु-

---

होता है तब अनन्तानुबन्धीके अनुभागकी अपेक्षा संज्वलनका अनुभाग अनन्तगुणा हीन कैसे हो सकता है ?

समाधान– प्रकृतिविशेष होनेके कारण वैसा होना सम्भव है । यथा – अनन्तानुबन्धिचतुष्क सम्यक्त्व और संयमका घातक है, परन्तु संज्वलनचतुष्क केवल चारित्रका ही घात करनेवाला है । इसीसे अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी शक्तिकी अपेक्षा संज्वलनचतुष्ककी शक्ति अल्पतर है यह जाना जाता है और इस कारण अनन्तानुबन्धीके अनुभागसे संज्वलनका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है, यह जाना जाता है ।

उससे संज्वलन माया विशेषहीन है ॥ ८२ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे संज्वलन क्रोध विशेष हीन है ॥ ८३ ॥

कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे संज्वलन मान विशेष हीन है ॥ ८४ ॥

कारण प्रकृति की विशेषता है ।

उससे प्रत्याख्यानावरण लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ८५ ॥

इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका– यह प्रकृतिगत विशेषता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान– संज्वलनचतुष्क यथाख्यात संयमका घातक है, परन्तु प्रत्याख्यानावरणीय सरागसंयमका घातक है । इसीसे प्रत्याख्यानावरणकी अपेक्षा संज्वलनका अनुभाग अतिशय महान् है यह जाना जाता है । दूसरे, प्रत्याख्यानावरणका उदय संयतासंयत गुणस्थान तक होता है,

भागमहल्लत्तं णव्वदे । किंच, पच्चक्खाणावरणस्स उदओ संजदासंजदगुणट्ठाणं जाव। उदओ संजलणाणं पुण संजलण जाव सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदचरिमसमओ त्ति । उवरिमपरिणामेहिं⊙ संजदासंजद तो अणंतगुणेहि परिणामेहि वि उदयविणासाणुवलंभादो वा णव्वदे जहा संजलणाणुभागादो पच्चक्खाणावरणीयपयडीए अणंतगुणहीणत्तं ।

माया विसेसहीणा ॥ ८६ ॥

पयडिविसेसेण । कुदो पयडिविसेसो णव्वदे ? मायाए लोभपुरंगमत्तुवलंभादो ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ८७ ॥

पयडिविसेसेण । कुदो एसो णव्वदे ? उवसंहरिदकोधमहारिसीणं पि लोभ-माया-णमुदओवलंभादो ।

माणो विसेसहीणो ॥ ८८ ॥

कोधपुरंगमत्तदंसणादो ।

अपच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो ॥ ८९ ॥

परन्तु संज्वलनोंका उदय सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धि संयतके अन्तिम समय तक रहता है । अथवा उपरिम अनन्तगुणी संयतासंयत परिणामोंके भी द्वारा संज्वलनके उदयका विनाश नहीं उपलब्ध होता । इससे भी जाना जाता है कि संज्वलनके अनुभागकी अपेक्षा प्रत्याख्यानावरणीय प्रकृतिका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है ।

उससे प्रत्याख्यानावरण माया विशेष हीन है ॥ ८६ ॥

इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका-- यह प्रकृतिगत विशेषता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान-- यतः माया लोभपूर्वक उपलब्ध होती है, अतः उससे प्रकृतिगत विशेषता जानी जाती है ।

उससे प्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष हीन है ॥ ८७ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका-- यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- जिन महर्षियोंने क्रोधका उपसंहार कर लिया है उनके भी लोभ और मायाका उदय उपलब्ध होता है । इससे प्रकृति विशेषका निश्चय होता है ।

उससे प्रत्याख्यानावरण मान विशेष हीन है ॥ ८८ ॥

कारण कि वह क्रोधपूर्वक देखा जाता है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ८९ ॥

⊙ प्रतिषु-- ' मेहिंतो अणंत ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो? पयडिमाहप्पेण । तं कधं णव्वदे? कज्जथोवबहुत्तदंसणादो । तं जहा– संजमासंजमघादयमपच्चक्खाणावरणीयं पच्चक्खाणावरणीयं पुण संजमघादयं । तेण अपच्चक्खाणावरणादो पच्चक्खाणावरणमहल्लत्तं णव्वदे ।

माया विसेसहीणा ॥ ९० ॥

पयडिविसेसेण ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ९१ ॥

पयडिविसेसेण ।

माणो विसेसहीणो ॥ ९२ ॥

पयडिविसेसेण ।

आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९३ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो? पयडिविसेसेण । पयडिमाहप्पं कधं णव्वदे? सव्वघादि-देसघादित्तणेहि । अपच्चक्खाणावरणचदुक्कं सव्वघादि, णिस्सेसदेससंजमघादित्तादो। आभिणिबोहियणाणाव-

---

इसमें प्रकृतिका महत्त्व ही कारण है ।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– उसका परिज्ञान कार्यके अल्पबहुत्वको देखनेसे होता है । यथा–अप्रत्याख्यानावरणीय संयमासंयमका घातक है, परन्तु प्रत्याख्यानावरणीय संयमका विघातक है । इससे अप्रत्याख्यानावरणकी अपेक्षा प्रत्याख्यानावरणकी महत्ता जानी जाती है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरण माया विशेष हीन है ॥ ९० ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष हीन है ॥ ९१ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरण मान विशेष हीन है ॥ ९२ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणे हीन हैं ॥ ९३ ॥

क्योंकि ये प्रकृति विशेष हैं ।

शंका– प्रकृतिका माहात्म्य किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान– उसका परिज्ञान सर्वघाती व देशघाती स्वरूपसे होता है । अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क सर्वघाती है, क्योंकि, वह पूर्णतया देशसंयमका घात करता है । परन्तु आभिनिबोधिक-ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय देशघाती हैं, क्योंकि, ये दोनों क्रमशः मतिज्ञान और

रणीयं परिभोगंतराइयं च देसघादि, मदिणाण-परिभोगाणमेगदेसघादित्तादो । तदो एदेसिं दोण्णं कम्माणमणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति सिद्धं ।

चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं ॥ ९४ ॥

पयडिविसेसेण । एदस्स सत्तीए ऊणत्तं कधं णव्वदे ? किमिदि ण णव्वदे[1] आभिणिबोहियणाणावरणीय-परिभोगंतराइयाणं व सव्वत्थ खओवसमस्स अणुवलंभादो । ण च थोवेसु चेव जीवेसु खओवसमं गंतूण अणंतजीवरासिं सव्वं चक्खिंदियं घाइदूण ट्ठिदस्स चक्खिंदियावरणस्स सत्तीए ऊणत्तं, विरोहादो ? ण एस दोसो, आभिणिबोहियणाणावरणीयं जेण पंचिंदियणोइंदियपडिबद्धअसेसणाणघादयं चक्खुदंसणावरणीयं पुण चक्खुदंसणोवजोगमेत्तघादयं, तदो अप्पकज्जकरणादो चक्खुदंसणावरणीयसत्ती थोवेत्ति णव्वदे ।

सुदणाणावरणीयमचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइय च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९५ ॥

परिभोगान्तरायके एक देशका घात करनेवाले हैं । इस कारण इन दोनों कर्मोंका अनुभाग अप्रत्याख्यानावरण मानके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है ।

उनसे चक्षुदर्शनावरणीय प्रकृति अनन्तगुणी हीन है ॥ ९४ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका– उन दोनोंकी अपेक्षा इसकी शक्ति हीन है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान– क्यों नहीं जाना जाता है अर्थात् अवश्य जाना जाता है, क्योंकि, आभिनिबोधिकज्ञानावरणीय और परिभोगान्तरायके समान चक्षुदर्शनावरणीयका सर्वत्र क्षयोपशम नहीं पाया जाता है ।

शंका– चूंकि चक्षुदर्शनावरणका थोडे ही जीवोंमें क्षयोपशम होता है इसके सिवा अनन्त जीवराशिमें वह पूर्ण रूपसे चक्षुरिन्द्रियका घातक है अतः उसकी शक्ति हीन नहीं हो सकती, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय चूंकि स्पर्शनादि पाँच इन्द्रिय और नोइन्द्रियसे सम्बन्ध रखनेवाले सब ज्ञानका घातक है, परन्तु चक्षुदर्शनावरणीय केवल चक्षुदर्शनोपयोग मात्रका घातक है, अतः अल्प कार्य करनेके कारण चक्षुदर्शनावरणीयकी शक्ति स्तोक है, यह जाना जाता है ।

श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय ये तीनों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर चक्षुदर्शनावरणीयसे अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ९५ ॥

---

[1] प्रतिषु ' राइयाणं च सव्वत्थ ' इति पाठः ।

सुदणाणावरणीयं काम महाविसयं, सुदकेवलणाणेण तत्थ परिच्छेदिसुदणाणघायणे वावदत्तादो । सेसदोपयडिअणुभागो वि महल्लो चेव, सुदणाणावरणीयसमाणत्तादो । तदो एदेसिमणुभागेण चक्खुदंसणावरणीयअणुभागादो अणंतगुणहीणेण होदव्वमिदि महाविसयस्स अणुभागो महल्लो होदि, थोवविसयस्स अणुभागो थोवो होदि त्ति । एदमत्थं मोत्तूण तो क्खहि एवं घेत्तव्वं । तं जहा-- खवगसेडीए देसघादिबंधकरणे जस्स पुव्वमेव अणुभागबंधो देसघादी जादो तस्साणुभागो थोवो । जस्स पच्छा जादो तस्स बहुओ । एदासिं च अणुभागबंधो चक्खुदंसणावरणीयअणुभागबंधादो पुव्वमेव देसघादी जादो । तं जहा-- मिच्छाइट्ठिमादिं कादूण जाव अणियट्टिअद्धाए संखेज्जा भागा ताव एदासिमणुभागबंधो सव्वघादी बज्झदि । पुणो तत्थ मणपज्जयणाणावरणीयं दाणंतराइयं च बंधेण देसघादिं करेदि । तदो उवरि अंतोमुहुत्तं गंतूण ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाहंतराइयं च तिण्णि वि बंधेण देसघादिं करेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि वि बंधेण देसघादिं करेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण चक्खुदंसणावरणीयं बंधेण देसघादिं करेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च तदो वि बंधेण देसघादिं करेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण वीरियंतराइयं बंधेण देसघादिं करेदि त्ति । तेण चक्खुदंसणावरणीय--

---

शंका-- श्रुतज्ञानावरणका विषय महान् है, क्योंकि, वह परोक्ष स्वरूपसे सब पदार्थोंको जाननेवाले श्रुतज्ञानके घातनेमें प्रवृत्त है । शेष दो प्रकृतियोंका अनुभाग भी महान् ही है, क्योंकि वह श्रुतज्ञानावरणके अनुभागके ही समान है । इस कारण इनका अनुभाग चक्षुदर्शनावरणीयके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होना चाहिये, क्योंकि, महान् विषयवाली प्रकृतिका अनुभाग महान् होता है और अल्प विषयवाली प्रकृतिका अनुभाग अल्प होता है ।

समाधान-- यदि ऐसा है तो इस अर्थको छोडकर ऐसा ग्रहण करना चाहिये । यथा-- क्षपकश्रेणिमें देशघाती बन्धकरणके समय जिसका अनुभाग बन्ध पहिले ही देशघाती हो गया है उसका अनुभाग स्तोक होता है और जिसका अनुभागबन्ध पीछे देशघाती होता है उसका अनुभाग बहुत होता है । इस नियमके अनुसार इन तीन प्रकृतियों का अनुभागबन्ध चक्षुदर्शनावरणीयके अनुभागबन्धसे पहिले ही देशघाती हो जाता है । यथा-- मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरणकालके संख्यात बहुभाग तक इनका अनुभागबंध सर्वघाती बंधता है । फिर वहाँ मनःपर्यय ज्ञानावरण और दानान्तरायको बन्धकी अपेक्षा देशघाती रूप करता है । इसके आगे अन्तर्मुहूर्त जाकर अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय इन तीनों प्रकृतियोंको बन्धकी अपेक्षा देशघाती रूप करता है । पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय इन तीनोंको बन्धकी अपेक्षा देशघाती रूप करता है । पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर चक्षुदर्शनावरणीयको बन्धकी अपेक्षा देशघाती रूप करता है । पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय इन दोनों प्रकृतियोंको बन्धकी अपेक्षा देशघाती रूप करता है । पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर वीर्यान्तरायको बन्धकी अपेक्षा

अणुभागो एदासिं तिण्णमणुभागादो ✡अणंतगुणो । एसो अत्थो बारसण्णं देसघादि-बंधपयडीणं सव्वत्थ✡ जोजेयव्वो ।

ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाहंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९६ ॥

कारणं पुव्वं परूविदमिदि णेह परूविज्जदे ।

मणपज्जयणाणावरणीयं थीणगिद्धी दाणंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९७ ॥

कारणं सुगमं ।

णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो ॥ ९८ ॥

णोकसायत्तादो ।

अरदी अणंतगुणहीणा ॥ ९९ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण । तं जहा- इट्ठगावागसण्णिहो णवुंसयवेदोदओ, अरदी पुण अरमणमेत्तुप्पाइया । तेण अणंतगुणहीणा ।

देशघाती करता है । इस कारण चक्षुदर्शनावरणीयका अनुभाग इन तीन प्रकृतियोंके अनुभागसे अनन्तगुणा है । इस अर्थकी बारह देशघाती बन्ध प्रकृतियोंके सम्बन्धमें सर्वत्र योजना करनी चाहिये ।

उनसे अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय, ये तीनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ९६ ॥

इसका कारण पहिले बतला आये हैं इसलिए यहां उसका कथन नहीं करते हैं ।

उनसे मनःपर्यय ज्ञानावरणीय, स्त्यानगृद्धि और दानान्तराय ये तीनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ९७ ॥

इसका कारण सुगम है ।

उनसे नपुंसकवेद प्रकृति अनन्तगुणी हीन है ॥ ९८ ॥

क्योंकि, वह नोकषाय है ।

उससे अरति अनन्तगुणी हीन है ॥ ९९ ॥

क्योंकि, इनमें प्रकृतिगत विशेषता है । यथा-नपुंसक वेदका उदय ईंटोंके पाकके समान है, परन्तु अरति तो मात्र नहीं रमनेरूप भावको उत्पन्न करनेवाली है, इस कारण वह नपुंसक वेदकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन है ।

✡ प्रतिषु 'अणंतगुणहीणो' इति पाठः । ✡ अ-आ-क प्रतिषु 'सव्वत्थो' इति पाठः ।

सोगो अणंतगुणहीणो ॥ १०० ॥

कुदो? अरदिपुरंगमत्तादो। कधमरदिपुरंगमत्तं? अरदीए विणा सोगाणुप्पत्तीए।

भयमणंतगुणहीणं ॥ १०१ ॥

भयउदयकालादो सोगुदयकालस्स महल्लत्तुवलंभादो। सोगो उक्कस्सेण छम्मासमेत्तो चेव, भयस्स कालो णेरइएसु तेत्तीससागरोवममेत्तो त्ति भयमणंतगुणं किण्ण जायदे? ण णेरइएसु वि भयकालस्स अंतोमुहुत्तस्समेत्तस्स उवलंभादो।

दुगुंछा अणंतगुणहीणा ॥ १०२ ॥

पयडिविसेसेण।

णिद्दाणिद्दा अणंतगुणहीणा ॥ १०३ ॥

कस्स वि जीवस्स कहिं पि उदयदंसणादो।

पयलापयला अणंतगुणहीणा ॥ १०४ ॥

लालासंदणेण थोवकालपडिबद्धचेयणाभावदंसणादो, णिद्दाणिद्दाए उदएण तदणुवलंभादो।

णिद्दा अणंतगुणहीणा ॥ १०५ ॥

उससे शोक अनन्तगुणा हीन है ॥ १०० ॥

क्योंकि, वह अरतिपूर्वक होता है।

शंका– वह अरतिपूर्वक कैसे होता है?

समाधान– क्योंकि, अरतिके विना शोक नहीं उत्पन्न होता है।

उससे भय अनन्तगुणा हीन है ॥ १०१ ॥

क्योंकि, भयके उदयकालकी अपेक्षा शोकका उदयकाल बहुत पाया जाता है।

शंका– चूंकि शोक उत्कृष्टसे छह मास पर्यन्त ही होता है, परन्तु भयका काल नारकियोंमें तेतीस सागरोपम प्रमाण है, अतएव शोककी अपेक्षा भय अनन्तगुणा क्यों नहीं होता?

समाधान– नहीं, क्योंकि, नारकियोंमें भी भयका काल अन्तर्मुहूर्त मात्र ही उपलब्ध होता है।

उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी हीन है ॥ १०२ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है।

उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी हीन है ॥ १०३ ॥

क्योंकि, किसी भी जीवके कहीं पर ही उसका उदय देखा जाता है।

उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी हीन है ॥ १०४ ॥

क्योंकि, लार बहनेसे थोड़े कालसे सम्बन्ध रखनेवाला चैतन्यका अभाव देखा जाता है, परन्तु निद्रानिद्राके उदयमें उसकी उपलब्धि नहीं होती।

उससे निद्रा अनन्तगुणी हीन है ॥ १०५ ॥

एदिस्से उदएण सचेयण व्व णिद्दुवलंभादो ।

पयला अणंतगुणहीणा ॥ १०६ ॥

एदिस्से उदएण बोल्लंतस्स चट्ठाए वहंतस्स वा सीसस्स अइथोवसंचालदंसणादो

अजसकित्ती णीचागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ १०७ ॥

कुदो? साभाविया दो । ण च सहाओ परपज्जणियोगारिहो ।

णिरयगई अणंतगुणहीणा ॥ १०८ ॥

कुदो? णेरइयभावणिव्वत्तयत्तादो ।

तिरिक्खगई अणंतगुणहीणा ॥ १०९ ॥

कुदो? णेरइयगई व्व तेत्तीससागरोवमफलुप्पायणसत्तीए अभावादो, णिरयगबीए इव एदिस्से दुक्खकारणत्ताभावादो वा ।

इत्थिवेदो अणंतगुणहीणो ॥ ११० ॥

कुदो? अरइगब्भमुम्मरग्गिसमदुक्खुप्पायणादो ।

पुरिसवेदो अणंतगुणहीणो ॥ १११ ॥

कुदो ? तणग्गिसमथोवदुक्खुप्पायणादो ।

क्योंकि, इसके उदय से सचेतन के समान निद्रा उपलब्ध होती है ।

उससे प्रचला अनन्तगुणी हीन है ॥ १०६ ॥

क्योंकि, इसके उदयसे बोलते हुए, बैठे हुए अथवा चलते हुए जीवके सिरका संचार बहुत स्तोक देखा जाता है ।

उससे अयशःकीर्ति और नीचगोत्र ये दोनों प्रकृतियाँ तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ १०७ ॥

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है, और स्वभाव दूसरोंके प्रश्नके योग्य नहीं होता ।

उनसे नरकगति अनन्तगुणी हीन है ॥ १०८ ॥

क्योंकि, वह नारक पर्यायको उत्पन्न करानेवाली है ।

उससे तिर्यग्गति अनन्तगुणी हीन है ॥ १०९ ॥

क्योंकि, उसमें नरकगतिके समान तेतीस सागरोपम कालतक फल उत्पन्न कराने की शक्ति नहीं है, अथवा वह नरकगतिके समान दुःखकी कारण नहीं है ।

उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा हीन है ॥ ११० ॥

क्योंकि, वह अरतिगर्भित कण्डेकी आगके समान दुःखोत्पादक है ।

उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा हीन है ॥ १११ ॥

क्योंकि, वह तृणाग्निके समान थोडे दुःखको उत्पन्न करनेवाला है ।

रदो अणंतगुणहीणा ॥ ११२ ॥

कुदो ? मायालोभतिवेदपुरंगमत्तादो ।

हस्समणंतगुणहीणं ॥ ११३ ॥

कुदो ? रदिपुरंगमत्तादो ।

देवाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११४ ॥

कुदो ? साभावियादो ।

णिरयाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११५ ॥

कुदो ? देवाउअं पेक्खिदूण अप्पसत्थभावादो ।

मणुसाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११६ ॥

णिरयाउअस्सेव मणुसाउअस्स दीहकालमुदयाणुवलंभादो । णिरयाउआदो मणुसाउअं पसत्थमिदि अणंतगुणं किण्ण जायदे ? ण, पसत्थभावेण जणिदाणुभागादो दीहकालोदयाणबंधणाणुभागस्स पाधण्णियादो ।

तिरिक्खाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११७ ॥

कुदो ? मणुस्साउआदो तिरिक्खाउअस्स अप्पसत्थत्तदंसणादो ।

एवमुक्कस्सओ चउसट्ठिपदियो महादंडओ कदो भवदि ।

उससे रति अनन्तगुणी हीन है ॥ ११२ ॥

क्योंकि, वह माया, लोभ और तीन वेद पूर्वक होती है ।

उससे हास्य अनन्तगुणा हीन है ॥ ११३ ॥

क्योंकि, वह रतिपूर्वक होता है ।

उससे देवायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११४ ॥

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे नारकायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११५ ॥

कारण कि वह देवायुकी अपेक्षा अप्रशस्त है ।

उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११६ ॥

कारण कि नारकायुके समान मनुष्यायुका बहुत समय तक उदय नहीं पाया जाता ।

शंका– चूंकि नारकायुकी अपेक्षा मनुष्यायु प्रशस्त है, अतः वह उससे अनन्तगुणी क्यों नहीं होती ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, यहां प्रशस्ततासे उत्पन्न अनुभागकी अपेक्षा बहुत समय तक रहनेवाले उदय निमित्तिक अनुभागकी प्रधानता है ।

उससे तिर्यगायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११७ ॥

कारण कि मनुष्यायुकी अपेक्षा तिर्यगायुके अप्रशस्तता देखी जाती है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट चौंसठ पदवाला महादण्डक समाप्त हुआ ।

संपहि एदेण अप्पाबहुएण सूचिदउत्तरपयडिसत्थाणुक्कस्साणुभागअप्पाबहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा– सव्वतिव्वाणुभागं केवलणाणावरणीयं । आभिणिबोहियणाणावरणीयं अणंतगुणहीणं । सुदणाणावरणीयं अणंतगुणहीणं ओहिणाणावरणीयमणंतगुणहीणं । मणपज्जवणाणावरणीयमणंतगुणहीणं ।

सव्वतिव्वाणुभागं केवलदंसणावरणीयं । चक्खुदंसणावरणीयं अणंतगुणहीणं । अचक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं । ओहिदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं । थीणगिद्धी अणंतगुणहीणा । णिद्दाणिद्दा अणंतगुणहीणा । पयलापयला अणंतगुणहीणा । णिद्दा अणंतगुणहीणा । पयला अणंतगुणहीणा ।

सव्वतिव्वाणुभागं सादमसादमणंतगुणहीणं ।

सव्वतिव्वाणुभागं मिच्छत्तं । अणंताणुबंधिलोभो अणंतगुणहीणो । माया विसेसहीणा । कोधो विसेसहीणो । माणो विसेसहीणो । सजलणाए लोभो अणंतगुणहीणो । माया विसेसहीणा । कोधो विसेसहीणो । माणो विसेसहीणो । एवं पच्चक्खाणचदुक्कापच्चक्खाणचदुक्कस्स च वत्तव्वं । णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो । अरदी अणंतगुणहीणा । सोगो अणंतगुणहीणो । भयमणंतगुणहीणं । दुगुंछा अणंतगुणहीणा । इत्थिवेदो

अब इस अल्पबहुत्वसे सूचित होनेवाला उत्तर प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभागविषयक स्वस्थान अल्पबहुत्व कहते हैं । यथा–केवलज्ञानावरण सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है । उससे श्रुतज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है । उससे अवधिज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है । उससे मनःपर्ययज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है ।

केवलदर्शनावरणीय सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे चक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणी हीन है । उससे अचक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणी हीन है । उससे अवधि दर्शनावरणीय अनन्तगुणी हीन है । उससे स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी हीन है । उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी हीन है । उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी हीन है । उससे निद्रा अनन्तगुणी हीन है । उससे प्रचला अनन्तगुणी हीन है ।

सातावेदनीय सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे असातावेदनीय अनन्तगुणी हीन है ।

मिथ्यात्व प्रकृति सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे अनन्तानुबन्धी लोभ अनन्तगुणा हीन है । उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष हीन है । उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष हीन है । उससे अनन्तानुबन्धी मान विशेष हीन है । उससे संज्वलनलोभ अनन्तगुणा हीन है । उससे संज्वलन माया विशेष हीन है । उससे संज्वलन क्रोध विशेष हीन है । उससे संज्वलन मान विशेष हीन है । इसी प्रकार प्रत्याख्यानावरण चतुष्क और अप्रत्याख्यानावरण चतुष्कके विषयमें कहना चाहिये । अप्रत्याख्यानावरण मानसे नपुंसकवेद अनन्तगुणा हीन है । उससे अरति अनन्तगुणी हीन है । उससे शोक अनन्तगुणा हीन है । उससे भय अनन्तगुणा हीन है । उससे जुगुप्सा

अणंतगुणहीणो। पुरिसवेदो अणंतगुणहीणो। रदी अणंतगुणहीणा। हस्समणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागं देवाउअं। णिरयाउअमणंतगुणहीणं। मणुसाउअमणंतगुणहीणं। तिरिक्खाउअमणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागा देवगई। मणुसगई अणंतगुणहीणा। णिरयगई अणंतगुणहीणा। तिरिक्खगई अणंतगुणहीणा।

सव्वतिव्वाणुभागा पंचिंदियजादी। एइंदियजादी अणंतगुणहीणा। बेइंदियजादी अणंतगुणहीणा। तेइंदियजादी अणंतगुणहीणा। चउरिंदियजादी अणंतगुणहीणा।

सव्वतिव्वाणुभागं कम्मइयसरीरं। तेजइयसरीरं अणंतगुणहीणं। आहारसरीरमणंतगुणहीणं। वेउव्वियसरीरमणंतगुणहीणं। ओरालियसरीरमणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागं समचउरससंठाणं हुंडसंठाणमणंतगुणहीणं। वामणसंठाणमणंतगुणहीणं। खुज्जसंठाणमणंतगुणहीणं। सादियसंठाणमणंतगुणहीणं। णग्गोधसंठाणमणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागमाहारसरीरअंगोवंगं। वेउव्वियसरीरअंगोवंगमणंतगुणहीणं। ओरालियसरीरअंगोवंगमणंतगुणहीणं।

अनन्तगुणी हीन है। उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा हीन है। उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा हीन है। उससे रति अनन्तगुणी हीन है। उससे हास्य अनन्तगुणा हीन है।

देवायु सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे नारकायु अनन्तगुणी हीन है। उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी हीन है। उससे तिर्यंगायु अनन्तगुणी हीन है।

देवगति सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी हीन है। उससे नरकगति अनन्तगुणी हीन है। उससे तिर्यंग्गति अनन्तगुणी हीन है।

पंचेन्द्रिय जाति सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे एकेन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है। उससे द्वीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है। उससे त्रीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है। उससे चतुरिन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है।

कार्मण शरीर सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा हीन है। उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा हीन है। उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा हीन है। उससे औदारिक शरीर अनन्तगुणा हीन है।

समचतुरस्र संस्थान सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे हुंडक संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे वामन संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे कुब्जक संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे स्वाति संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान अनन्तगुणा हीन है।

आहारक शरीरांगोपांग सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे वैक्रियिक शरीरांगोपांग अनन्तगुणा हीन है। उससे औदारिक शरीरांगोपांग अनन्तगुणा हीन है।

संघडणाणं संठाणभंगो । सव्वतिव्वाणुभागं ☼पसत्थ वण्णचउक्कमप्पसत्थवण्ण चउक्कमणंतगुणहीणं । ☼जहा गई तहाणुपुव्वी । (सव्वतिव्वाणु० अगुरु० उस्सासं अणंतगुणहीणं । परघाद० अणंतगुणहीणं । उवघादअणंतगुणहीणं) एत्तो सव्वजुगलाणं सव्वतिव्वाणि पसत्थाणि । अप्पसत्थाणि पडिवक्खाणि अणंतगुणहीणाणि ।)

एत्तो सव्वजुगलाणं सव्वतिव्वाणुभागाणि पसत्थाणि । अप्पसत्थाणि पडिवक्खाणि अणंतगुणहीणाणि ।

सव्वतिव्वाणुभागं उच्चागोदं । णीचागोदमणंतगुणहीणं । सव्वतिव्वाणुभागं विरियंतराइयं । हेट्ठा कमेण दाणंतराइया अणंतगुणहीणा ।

एवं सत्थाणप्पाबहुगं समत्तं ।

संज-मण-दाणमोही लाभं सुदचक्खु-भोग चक्खुं च ।
आभिणिबोहिय परिभोग विरिय णव णोकसायाया ॥ ४ ॥

'संज' त्ति उत्ते चत्तारि वि संजलणाणि घेत्तव्वाणि । 'मण☼-दाणं' इदि वुत्ते मणपज्जयणाणावरणीयस्स दाणंतराइयस्स च गहणं । 'ओहि' त्ति वुत्ते ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं घेत्तव्वं । 'लाभ' णिद्देसो लाभंतराइयगहणट्ठो । 'सुद' णिद्देसो सुदणाणावरणीयपण्णवणट्ठो ।

संहननोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा संस्थानोंके समान है । प्रशस्त वर्णचतुष्क सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे अप्रशस्त वर्णचतुष्क अनन्तगुणा हीन है । आनुपूर्वीकी प्ररूपणा गति नामकर्मके समान है । अगुरुलघु सबसे तीव्र अनुभागवाला है । इससे उच्छ्वास अनन्तगुणाहीन है । उससे परघात अनन्तगुणाहीन है । उससे उपघात अनन्तगुणाहीन है । सब युगलोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग तीव्र है । उससे अप्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है ।

आगे त्रस-स्थावरादि सब युगलोंमें प्रशस्त प्रकृतियां सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त हैं । उनकी प्रतिपक्षभूत अप्रशस्त प्रकृतियां अनन्तगुणी हीन हैं ।

उच्चगोत्र सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे नीचगोत्र अनन्तगुणा हीन है ।

वीर्यान्तराय सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उसके नीचे क्रमशः दानान्तरायादिक अनन्तगुणे हीन हैं ।

इस प्रकार स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

संज्वलनचतुष्क, मनःपर्ययज्ञानावरण, दानान्तराय, अवधिज्ञानावरण, अवधिदर्शनावरण, लाभान्तराय, श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण, भोगान्तराय, चक्षुदर्शनावरण, आभिनिबोधिकज्ञानावरण, परिभोगान्तराय, वीर्यान्तराय और नौ नोकषाय ये प्रकृतियां उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हैं ॥ ४ ॥

'संज' ऐसा कहनेपर चारों ही संज्वलन कषायोंका ग्रहण करना चाहिये । 'मण-दाणं' यह कहनेपर मनःपर्ययज्ञानावरणीय और दानान्तरायका ग्रहण करना चाहिये । 'ओहि' ऐसा कहनेपर अवधिज्ञानावरणीयका ग्रहण करना चाहिये । 'लाभ' पदका निर्देश लाभान्तरायका ग्रहण करनेके लिये किया है । श्रुतज्ञानावरणीयका ज्ञान करानेके लिये 'सुद' पदका निर्देश किया है । अचक्षु-

---

☼ अप्रतौ ' त्रुटितोऽत्र पाठः, मप्रतौ ' सव्वतिव्वाणुभागं पसत्थवण्णं चउक्कमणंतगु० ' इति पाठः ।

☼ अप्रतौ ' महा ' इति पाठः ।

'अचक्खु' णिद्देसो अचक्खुदंसणावरणीयगहणणिमित्तो। 'भोग' णिद्देसो भोगंतराइयस्स परूवओ। 'चक्खुं चेदि' णिद्देसो चक्खुदंसणावरणीयग्गहणणिमित्तो। किमट्ठं च 'अचक्खु-भोगा सुदवरणीय-अचक्खुदंसणावरणीय-भोगंतराइयं च एदाणि तिण्णि वि कम्माणि जहा अणुभागेण अण्णोण्णं समाणाणि तहा चक्खुदंसणावरणीयं ण होदि त्ति जाणावणट्ठं कीरदे। 'आभिणिबोहिय' णिद्देसेण आभिणिबोहियणाणावरणीयं घेत्तव्वं। 'परिभोग' वयणेण परिभोगंतराइयं घेत्तव्वं। 'णं व च' इदि चसद्देण एदासिमणंतराओ पयडीणमणुभागो सरिसो त्ति सूचिदो। 'विरिय इत्ति भणिदे विरियंतराइयस्स गहणं। 'णव णोकसाया' त्ति वुत्ते णवण्णं णोकसायाणं गहणं कायव्वं। एत्थ सव्वत्थ अणंतगुणसद्दस्स अज्झाहारोकायव्वो।

मार्गदर्शक

के-प-णि-अट्ठ-त्तिय-अण-मिच्छा-ओ-वे-तिरिक्ख-मणुसाऊ।
तेयाकम्मसरीरं तिरिक्ख-णिरय-मणुव-देवगई ॥ ५ ॥

केवलणाणावरणीय-केवलदंसणावरणीयाणं गहणट्ठं 'के' इति णिद्देसो कदो। ताणि च दो वि सरिसाणि त्ति जाणावणट्ठं 'के' इदि एगसद्देण णिद्दिट्ठाणि। 'प' इदि उत्ते

दर्शनावरणीयका ग्रहण करनेके निमित्त 'अचक्खु' पदका निर्देश किया है। 'भोग' पदका निर्देश भोगान्तरायका प्ररूपक है। 'चक्खुं च' यह निर्देश चक्षुदर्शनावरणीयका ग्रहण करनेके निमित्त है।

शंका— 'चक्खुं च' यहाँ 'च' शब्दका उच्चारण किसलिये किया है?

समाधान— जिस प्रकार श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ अनुभागकी अपेक्षा परस्पर समान हैं उस प्रकार चक्षुदर्शनावरणीय समान नहीं है, यह जतलानेके लिये 'च' शब्दका निर्देश किया है।

'आभिणिबोहिय' पदके निर्देशसे आभिनिबोधिकज्ञानावरणीयका ग्रहण करना चाहिये। 'परिभोग' इस वचनसे परिभोगान्तरायका ग्रहण करना चाहिये। 'णव च' यहाँ किये गये 'च' शब्दके निर्देशसे इन प्रकृतियोंसे अव्यवहित प्रकृतियोंका अनुभाग सदृश है, यह सूचना की गई है। 'विरिय' कहनेपर वीर्यान्तरायका ग्रहण किया गया है। 'णव णोकसाया' ऐसा कहनेपर नौ नोकषायोंका ग्रहण करना चाहिये। यहाँ सर्वत्र 'अनन्तगुण' शब्दका अध्याहार करना चाहिये।

केवलज्ञानावरण व केवलदर्शनावरण, प्रचला, निद्रा, आठ कषाय, स्त्यानगृद्धि आदि तीन, अनन्तानुबन्धिचतुष्क, मिथ्यात्व, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तिर्यगायु, मनुष्यायु, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, तिर्यग्गति, नरकगति, मनुष्यगति और देवगति ये प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी हैं ॥ ५ ॥

केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीय का ग्रहण करनेके लिये 'के' ऐसा निर्देश किया है। वे दोनों ही प्रकृतियाँ सदृश हैं, यह जतलानेके लिये 'के' इस एक ही शब्दके द्वारा

ओ अ-आ-क-प्रतिषु 'ओघ' इति पाठः। ⊖ अ-का-प्रत्योः 'देव-मणुवगई' इति पाठः।

पयला घेत्तव्वा, णामेगदेसादो वि णामिल्लपडिवत्तिदंसणादो । 'णि' इदि वुत्ते णिद्दाए गहणं । कारणं पुव्वं व वत्तव्वं । 'अट्ठ' इदि वुत्ते अट्ठकसाया घेत्तव्वा । 'तिय' त्ति भणिदे थीणगिद्धितियं घेत्तव्वं । कुदो? आइरियोवदेसादो । 'अण' इदि णिद्देसो अणंताणुबंधिचउक्कगहणणिमित्तो । 'मिच्छा' णिद्देसो मिच्छत्तस्स गाहओ । 'ओ' इदि वुत्ते ओरालियसरीरं घेत्तव्वं । ओहिणाणं किण्ण घेप्पदे? ण, तस्स पुव्वं परूविदत्तादो । 'वे' इदि भणिदे वेउव्वियसरीरस्स गहणं ण अण्णस्स, असंभवादो । ☼ 'तिरिक्ख-मणुसाऊ' इदि भणिदे दोण्णमाउआणं गहणं, आउअसद्दस्स पादेक्कमभिसंबंधादो । 'तेया-कम्मइयसरीरं' इदि वुत्ते तेजइय-कम्मइयसरीराणं गहणं । 'तिरिक्ख-णिरय-मणुव-देवगदि' त्ति भणिदे चत्तारिगदीओ घेत्तव्वाओ, गइसद्दस्स पादेक्कमभिसंबंधादो ।

णीचागोदं अजसो असादमुच्चं जसो तहा सादं ।
णिरयाऊ देवाऊ आहारसरीरणामं च ॥ ६ ॥

एसा गाहा सुगमा ।

उन दोनोंका निर्देश किया गया है । 'प' ऐसा कहनेपर प्रचलाका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, नामके एकदेशसे भी नामवालेका बोध होता हुआ देखा जाता है । 'णि' इस निर्देशसे निद्राका ग्रहण करना चाहिये । कारण पहिलेके समान कहना चाहिये । 'अट्ठ' ऐसा कहनेपर प्रत्याख्यानावरणचतुष्क और अप्रत्याख्यानावरणचतुष्क इन आठ कषायोंका ग्रहण करना चाहिये । 'तिय' कहनेपर स्त्यानगृद्धित्रयका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, ऐसा आचार्योंका उपदेश है । 'अण' यह निर्देश अनन्तानुबन्धिचतुष्कका ग्रहण करनेके निमित्त है । 'मिच्छा' शब्दका निर्देश मिथ्यात्वका ग्राहक है । 'ओ' कहनेपर औदारिक शरीरका ग्रहण करना चाहिए ।

शंका – 'ओ' कहनेपर अवधिज्ञानावरणका ग्रहण क्यों नहीं किया जाता ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उसका पहिले कथन कर आये हैं ।

'वे' ऐसा कहनेपर वैक्रियिक शरीरका ग्रहण करना चाहिये, अन्यका नहीं; क्योंकि उससे अन्यका ग्रहण करना सम्भव ही नहीं है । 'तिरिक्ख–मणुसाऊ' ऐसा कहनेपर तिर्यगायु और मनुष्यायु इन दो आयुओंका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, आयु शब्दका प्रत्येकके साथ सम्बन्ध है । 'तेया-कम्मसरीरं' ऐसा कहनेपर तैजस और कार्मण शरीरका ग्रहण करना चाहिये । 'तिरिक्ख-णिरय-मणुव-देवगई' ऐसा कहनेपर चारों गतियोंका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, गति शब्दका सम्बन्ध प्रत्येकके साथ है ।

नीचगोत्र, अयशःकीर्ति, असातावेदनीय, उच्चगोत्र, यशःकीर्ति तथा सातावेदनीय, नारकायु, देवायु और आहारशरीर, ये प्रकृतियां उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हैं ६।

यह गाथा सुगम है ।

☼ अप्रतौ ' तिरिक्खमणुसाऊ ' इति पाठः ।

एत्तो जहण्णओ चउसट्ठिपदिओ महादंडओ कायव्वो भवदि ॥ ११८ ॥

पुव्विल्लप्पाबहुएण देसामासियेण जहण्णेण सूचिदचउसट्ठिपदियमप्पाबहुगं भणिस्सामो।

सव्वमंदाणुभागं लोभसंजलणं ॥ ११९ ॥

अणियट्टिचरिमसमयबंधगहणादो । सुहुमसांपराइयचरिमसमयलोभो सुहुमकिट्टिसरूवो किण्ण घेप्पदे ? ण, बंधाधियारे सत्तगहणाणुववत्तीदो । ण वेयणाए संतं चेव परूविज्जदे, बंध-संताणं दोण्णं पि परूवयत्तादो । एदाणि चउसट्ठिपदियाणि जहण्णुक्कस्सप्पाबहुगाणि बंधं चेव अस्सिदूण अवट्ठिदाणि । तं कधं णव्वदे ? महाबंधसुत्तुवइट्ठत्तादो ।

मायासंजलणमणंतगुणं ॥ १२० ॥

अणियट्टिचरिमसमयादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोदरियट्ठिदमायाकसायचरिमाणुभागबंधगहणादो । कुदो एदं णव्वदे ? अणियट्टिचरिमाणुभागबंधादो दुचरिमाणुभागबंधो अणंतगुणो । तत्तो तिचरिमाणुभागबंधो अणंतगुणो । एवं सव्वत्थ अणियट्टिकालब्भंतरे

आगे चौंसठ पदवाला जघन्य महादण्डक करने योग्य है ॥ ११८ ॥

पूर्वोक्त जघन्य अल्पबहुत्वसे सूचित चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वको कहते हैं।

संज्वलनलोभ सबसे मन्द अनुभागसे युक्त है ॥ ११९ ॥

क्योंकि अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी बन्धका यहाँ ग्रहण किया गया है।

शंका– सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्म कृष्टि स्वरूप लोभका ग्रहण क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, बन्धके अधिकारमें सत्त्वका ग्रहण करना नहीं बन सकता है। वेदनामें केवल सत्त्वका ही कथन नहीं किया जा रहा है, क्योंकि, वह बन्ध और सत्त्व दोनोंका ही प्ररूपक है। ये चौंसठ पदवाले जघन्य व उत्कृष्ट अल्पबहुत्व बन्धका आश्रय करके ही अवस्थित हैं।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– यह महाबन्ध सूत्रके उपदेशसे जाना जाता है।

उससे माया संज्वलन अनन्तगुणा है ॥ १२० ॥

क्योंकि, अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयसे नीचे अन्तर्मुहूर्त उतर कर स्थित माया कषायके अनुभागबन्धका यहाँ ग्रहण किया है।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभागबन्धकी अपेक्षा उसका द्विचरम समय संबंधी अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। उससे त्रिचरम समय सम्बन्धी अनुभाग–

अणुभागबुड्ढिदंसणादो ।

माणसंजलणमणंतगुणं ॥ १२१ ॥

मायासंजलणजहण्णबंधपदेसादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोदरिय ट्ठिदमाणजहण्णबंधग्गहणादो । एत्थ वि अणंतगुणत्तस्स कारणं पडिसमयमणंतगुणाए सेडीए हेट्ठिमाणुभागबंधबुड्ढी ।

कोधसंजलणमणंतगुणं ॥ १२२ ॥

तत्तो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोदिण्णजहण्णबंधग्गहणादो ।

मणपज्जयणाणावरणीयं दाणंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२३ ॥

कुदो ? कोधसंजलणं जहण्णाणुभागबंधो बादरकिट्टी, एदासिं दोण्णं पयडीणमणुभागो पुण फद्दयं; एवासिं सुहुमसांपराइयचरिमजहण्णबंधस्स फद्दयत्तं मोत्तूण किट्टित्ताभावादो । तेण कोधसंजलणजहण्णबंधादो अप्पिद-दोपयडीणं जहण्णबंधो अणंतगुणो ।

ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२४ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण । सो कधं णव्वदे ? खवगसेडीए देसघादिबंधकरणेसु

बन्ध अनन्तगुणा है । इस प्रकार सर्वत्र अनिवृत्तिकरण कालके भीतर अनुभागकी वृद्धि देखे जानेसे उक्त कथनका परिज्ञान होता है ।

उससे मान संज्वलन अनन्तगुणा है ॥ १२१ ॥

क्योंकि, माया संज्वलनके जघन्य बन्ध सम्बन्धी स्थानसे पीछे अन्तर्मुहूर्त जाकर स्थित मान संज्वलनके जघन्य बन्धका यहां ग्रहण किया है। यहां भी अनन्तगुणेका कारण प्रतिसमय अनन्तगुणी श्रेणिरूपसे पीछे अनुभागबन्धकी वृद्धि है ।

उससे क्रोध संज्वलन अनन्तगुणा है ॥ १२२ ॥

क्योंकि, उससे पीछे अन्तर्मुहूर्त जाकर स्थित जघन्य बन्धका यहां ग्रहण किया है ।

उससे मनःपर्ययज्ञानावरणीय और दानान्तराय ये दोनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ १२३ ॥

क्योंकि, संज्वलन क्रोधका जघन्य अनुभागबन्ध बादर कृष्टि स्वरूप है, परन्तु इन दोनों प्रकृतियोंका अनुभाग स्पर्धक स्वरूप है, क्योंकि, इनका सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें जो जघन्य बन्ध होता है वह स्पर्धकरूप होता है वह कृष्टि स्वरूप नहीं हो सकता इसलिये संज्वलन क्रोधके जघन्य बन्धकी अपेक्षा विवक्षित इन दो प्रकृतियोंका जघन्य बन्ध अनन्तगुणा है ।

अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय, ये तीनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर उनसे अनन्तगुणी हैं ॥ १२४ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– क्षपक श्रेणिके भीतर देशघातिबन्धकरणविधानमें जो यह बतलाया गया है

पुव्विल्लेहिंतो पच्छा देसघादित्तमुववण्णत्तादो णव्वदे ।

सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२५ ॥

कुदो ? पयडिविसेसादो । सो कुदो णव्वदे ? पच्छा देसघादिबंधजोगादो ।

चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं ॥ १२६ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कारणं सुगमं ।

आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२७ ॥

सुगमं ।

विरियंतराइयमणंतगुणं ॥ १२८ ॥

एदं पि सुगमं ।

पुरिसवेदो अणंतगुणो ॥ १२९ ॥

विरियंतराइयस्स अणुभागो देसघादी एगट्ठाणियो, पुरिसवेदस्स वि अणुभागो

कि " जिन प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध पूर्वमें देशघाती हो जाता है उनका अनुभाग स्तोक होता है, तथा जिनका अनुभागबन्ध पीछे देशघाती होता है उनका अनुभाग बहुत होता है । " उसीसे वह जाना जाता है ।

श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय ये तीनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर उनसे अनन्तगुणी हैं ॥ १२५ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका-- वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- चूंकि इन प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध पीछे देशघातित्वको प्राप्त होता है अतः इसीसे उसका निश्चय हो जाता है ।

उनसे चक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणी है ॥ १२६ ॥

इसका कारण सुगम है ।

उससे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय ये दोनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ १२७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है ॥ १२८ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा है ॥ १२९ ॥

वीर्यान्तरायका अनुभाग देशघाती एकस्थानीय है तथा पुरुषवेदका भी अनुभाग इसी

एरिसो चेव । किं तु अंतोमुहुत्तं हेट्ठा ओदरिय बद्धो तेण अणंतगुणहीणो जादो ।

हस्समणंतगुणं ॥ १३० ॥

अपुव्वकरणचरिमसमयसव्वघादिविट्ठाणियजहण्णाणुभागबंधग्गहणादो ।

रदी अणंतगुणा ॥ १३१ ॥

तप्पुरंगमत्तादो ।

दुगुंछा अणंतगुणा ॥ १३२ ॥

दोण्णं पयडीणं अपुव्वकरणचरिमसमए चेव जदि वि जहण्णबंधो जादो तो वि रदीदो दुगुंछा अणंतगुणा, पयडिविसेसमस्सिदूण संसारावत्थाए सव्वत्थ तहावट्ठाणादो ।

भयमणंतगुणं ॥ १३३ ॥

पयडिविसेसेण ।

सोगो अणंतगुणो ॥ १३४ ॥

कुदो ? अपुव्वकरणविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा पमत्तसंजदेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अरदी अणंतगुणा ॥ १३५ ॥

प्रकारका है । परन्तु वह चूंकि अन्तर्मुहूर्त पीछे जा कर बांधा गया है अतः वह अनन्तगुणा हीन है ।

उससे हास्य अनन्तगुणा है ॥ १३० ॥

कारण कि यहां अपूर्वकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी सर्वघाती द्विस्थानीय जघन्य अनुभागबन्धका ग्रहण किया गया है ।

उससे रति अनन्तगुणी है ॥ १३१ ॥

कारण कि वह हास्यपूर्वक होती है ।

उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी है ॥ १३२ ॥

यद्यपि रति और जुगुप्सा इन दोनों प्रकृतियोंका अपूर्वकरणके अन्तिम समय में ही जघन्य बन्ध हो जाता है तो भी रतिकी अपेक्षा जुगुप्सा अनन्तगुणी है, क्योंकि, प्रकृतिविशेषका आश्रय करके संसार अवस्थामें सर्वत्र इसी प्रकार की स्थिति है ।

उससे भय अनन्तगुणा है ॥ १३३ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

उससे शोक अनन्तगुणा है ॥ १३४ ॥

कारण यह है कि अपूर्वकरणकी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले प्रमत्त संयतके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहाँ ग्रहण किया है ।

उससे अरति अनन्तगुणी है ॥ १३५ ॥

साभावियादो ।

इत्थिवेदो अणंतगुणो ॥ १३६ ॥

पमत्तसंजवविसोहीदो अणंतगुणहीणसव्वविसुद्धमिच्छाइट्ठिणा बद्धइत्थिवेदजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

णवुंसयवेदो अणंतगुणो ॥ १३७ ॥

मिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण संजमाहिमुहेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १३८ ॥

एदासिं दोण्णं पि पयडीणं सुहुमसांपराइयचरिमसमए अंतोमुहुत्तमणंतगुणहाणी गंतूण जहण्णाणुभागबंधो जदि वि जादो तो वि मिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण बद्धणवुंसयवेदजहण्णाणुभागबंधादो अणंतगुणो । कुदो ? साभावियादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पयला अणंतगुणा ॥ १३९ ॥

अपुव्वकरणेण सगद्धाए पढमसत्तमभागे वट्टमाणेण चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स विसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिया बद्धत्तादो ।

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा है ॥ १३६ ॥

कारण यह है कि यहाँ प्रमत्तसंयतकी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धि युक्त सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका ग्रहण किया है।

उससे नपुंसकवेद अनन्तगुणा है ॥ १३७ ॥

कारण कि संयमके अभिमुख हुए सर्व विशुद्ध मिथ्यादृष्टिके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका ग्रहण किया है ।

उससे केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीय ये दोनों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ १३८ ॥

यद्यपि इन दोनों ही प्रकृतियोंका अन्तर्मुहूर्तकाल तक अनन्तगुणी हानि होकर सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें जघन्य अनुभागबन्ध होता है तो भी सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टिके द्वारा बांधे गये नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागबन्धकी अपेक्षा वह अनन्तगुणा है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उनसे प्रचला अनन्तगुणी है ॥ १३९ ॥

क्योंकि, वह अपने कालके सात भागोंमेंसे प्रथम भाग में वर्तमान और अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिककी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवके द्वारा बांधी जाती है ।

णिद्धा अणंतगुणा ॥ १४० ॥

एदिस्से वि तत्थेव जहण्णबंधो जादो । किं तु पयडिविसेसेण अणंतगुणा ।

पच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो ॥ १४१ ॥

कुदो ? अपुव्वकरणखवगविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा सव्वविसुद्धेण संजदासंजदेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

कोधो विसेसाहिओ ॥ १४२ ॥

पयडिविसेसेण ।

माया विसेसाहिया ॥ १४३ ॥

पयडिविसेसेण ।

लोभो विसेसाहिओ ॥ १४४ ॥

पयडिविसेसेण ।

अपच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो ॥ १४५ ॥

संजदासंजदविसोहीदो अणंतगुणविसोहिणा असंजदसम्माइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण चरिमसमए बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

कोधो विसेसाहिओ ॥ १४५ ॥

उससे निद्रा अनन्तगुणी है ॥ १४० ॥

यद्यपि इसका जघन्य बन्ध वहींपर होता है, तो भी प्रकृतिविशेषके कारण वह प्रचलासे अनन्तगुणी है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय मान अनन्तगुणा है ॥ १४१ ॥

क्योंकि, अपूर्वकरण क्षपककी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले तथा सर्वविशुद्ध संयतासंयत जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहां ग्रहण किया है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध विशेष अधिक है ॥ १४२ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय माया विशेष अधिक है ॥ १४३ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय लोभ विशेष अधिक है ॥ १४४ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय मान अनन्तगुणा है ॥ १४५ ॥

क्योंकि, संयतासंयतकी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले सर्वविशुद्ध असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहां ग्रहण किया है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय क्रोध विशेष अधिक है ॥ १४६ ॥

पयडिविसेसेण ।

माया विसेसाहिया ॥ १४७ ॥

पयडिविसेसेण ।

लोभो विसेसाहिओ ॥ १४८ ॥

पयडिविसेसेण ।

णिद्दाणिद्धा अणंतगुणा ॥ १४९ ॥

असंजदसम्मादिट्ठिविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिमिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण बद्धत्तादो ।

पयलापयला अणंतगुणा ॥ १५० ॥

जदि वि दोण्णं पि जहण्णाणुभागबंधाणमेक्को चेव सामी तो वि पयडिविसेसेण पयलापयला अणंतगुणा ।

थीणगिद्धी अणंतगुणा ॥ १५१ ॥

पयडिविसेसेण ।

अणंताणुबंधिमाणो अणंतगुणो ॥ १५२ ॥

संजमाहिमुहचरिमसमयमिच्छाइट्ठिजहण्णबंधग्गणादो ।

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय माया विशेष अधिक है ॥ १४७ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय लोभ विशेष अधिक है ॥ १४८ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है ॥ १४९ ॥

क्योंकि, वह असंयतसम्यग्दृष्टिकी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधी जाती है।

उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है ॥ १५० ॥

यद्यपि इन दोनों ही प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागबन्धका एक ही स्वामी है, तो भी प्रकृतिविशेष होनेसे प्रचलाप्रचला निद्रानिद्राकी अपेक्षा अनन्तगुणी है ।

उससे स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है ॥ १५१ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी मान अनन्तगुणा है ॥ १५२ ॥

क्योंकि, संयमके अभिमुख हुए अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागबन्धका यहां ग्रहण किया है ।

कोधो विसेसाहिओ ॥ १५३ ॥

पयडिविसेसेण ।

माया विसेसाहिआ ॥ १५४ ॥

पयडिविसेसेण । मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

लोभो विसेसाहिओ ॥ १५५ ॥

पयडिविसेसेण ।

मिच्छत्तमणंतगुणं ॥ १५६ ॥

मिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण संजमाहिमुहेण सगद्धाए चरिमसमए वट्टमाणेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो । दोण्णं पि पयडीणं मिच्छाइट्ठिम्हि चेव सामीए संते कधं मिच्छत्तस्स अणंतगुणत्तं जुज्जदे? ण, पयडिविसेसेण तदविरोहादो ।

ओरालियसरीरमणंतगुणं ॥ १५७ ॥

जेणेसा पसत्थपयडी तेणेदिस्से संकिलेसेण जहण्णबंधो होदि । पुणो एसा जदि वि मिच्छाइट्ठिउक्कडसंकिलेसेण बद्धा तो वि मिच्छत्तादो* अणंतगुणा । कुदो ? सुहाणं पयडीणं संकिलेसेण महल्लाणुभागक्खयाभावादो ।

उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष अधिक है ॥ १५३ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष अधिक है ॥ १५४ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी लोभ विशेष अधिक है ॥ १५५ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे मिथ्यात्व अनन्तगुणा है ॥ १५६ ॥

क्योंकि, संयमके अभिमुख हुए व अपने कालके अन्तिम समयमें स्थित सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहां ग्रहण किया है ।

शंका- जब कि इन दोनों ही प्रकृतियोंका एक ही मिथ्यादृष्टि जीव स्वामी है तब अनन्तानुबन्धी लोभकी अपेक्षा मिथ्यात्वका अनन्तगुणा होना कैसे उचित है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, प्रकृतिविशेष होनेसे उसमें कोई विरोध नहीं आता ।

उससे औदारिक शरीर अनन्तगुणा है ॥ १५७ ॥

चूंकि यह प्रशस्त प्रकृति है इसलिये इसका संक्लेशसे जघन्य बन्ध होता है । यद्यपि यह प्रकृति मिथ्यादृष्टिसम्बन्धी उत्कृष्ट संक्लेशसे बांधी गई है, तो भी वह मिथ्यात्वकी अपेक्षा अनन्तगुणी है, क्योंकि, संक्लेशसे शुभ प्रकृतियोंके महान् अनुभागका क्षय नहीं होता ।

---

* अप्रतौ ' विच्छित्तादो ' इति पाठः ।

वेउव्वियसरीरमणंतगुणं ॥ १५८ ॥

ओरालियसरीरं पेक्खिदूण पसत्थतमत्तादो ।

तिरिक्खाउअमणंतगुणं । १५९ ।

उक्कस्ससंकिलेस-विसोहीहि बंधाभावेण तप्पाओग्गसंकिलेस-विसोहीहि बद्धतिरिक्खअपज्जत्तजहण्णाउग्गहणादो ।

मणुसाउअमणंतगुणं ॥ १६० ॥

तिरिक्खाउआदो विसुद्धतमत्तादो ।

तेजइयसरीरमणंतगुणं ॥ १६१ ॥

तेजइयसरीरं जेण सुहुपयडी तेणे दिस्से जहण्णबंधो सव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठिम्हि होदि । होंतो वि मणुस्साउआदो अणंतगुणो । कुदो ? सुहाणं बहुअणुभागबंधोसरणाभावादो ।

कम्मइयसरीरमणंतगुणं । १६२ ।

पयडिविसेसेण ।

तिरिक्खगदी अणंतगुणा । १६३ ।

कुदो ? सव्वविसुद्धसत्तमपुढविणेरइमिच्छाइट्ठिणा बद्धत्तादो ।

णिरयगदी अणंतगुणा । १६४ ।

उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा है । १५८ ।

क्योंकि, औदारिक शरीरकी अपेक्षा वैक्रियिक शरीर अतिशय प्रशस्त है ।

उससे तिर्यगायु अनन्तगुणी है । १५९ ।

क्योंकि उत्कृष्ट संक्लेश व विशुद्धिके द्वारा आयुका बन्ध नहीं होता अतएव तत्प्रायोग्य संक्लेश व विशुद्धिके द्वारा बांधी गई तिर्यंच अपर्याप्तककी जघन्य आयुका यहां ग्रहण किया है ।

उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी है । १६० ।

क्योंकि, वह तिर्यंचायुकी अपेक्षा अतिशय विशुद्ध है ।

उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा है । १६१ ।

चूंकि तैजस शरीर शुभ प्रकृति है । अतएव इसका जघन्य बन्ध सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीवके होता है । मिथ्यादृष्टिके होता हुआ भी वह मनुष्यायुकी अपेक्षा अनन्तगुणा है, क्योंकि, शुभ प्रकृतियोंके बहुत अनुभागबन्धका अपसरण नहीं होता ।

उससे कार्मण शरीर अनन्तगुणा है । १६२ ।

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे तिर्यग्गति अनन्तगुणी है । १६३ ।

कारण कि वह सर्वविशुद्ध सातवीं पृथिवीके मिथ्यादृष्टि नारकी जीवके द्वारा बांधी गई है ।

उससे नरकगति अनन्तगुणी है । १६४ ।

असण्णिपंचिंदियतिरिक्खगइसंकिलेसादो अणंतगुणसंकिलेसेण बद्धत्तादो ।

मणुसगदी अणंतगुणा ॥ १६५ ॥

जदि वि एदिस्से एइंदिएसु जहण्णबंधो जादो तो वि एसा णिरयगदिं पेक्खिदूण अणंतगुणा, सुहपयडित्तादो ।

देवगदी अणंतगुणा ॥ १६६ ॥

जदि वि एदिस्से जहण्णबंधो असण्णिपंचिंदिएसु परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेसु जादो तो वि मणुसगदिं पेक्खिदूण देवगदी अणंतगुणा, एइंदियपरियत्तमाणमज्झिमपरिणामादो असण्णिपंचिंदियपरियत्तमाणमज्झिमपरिणामाणमणंतगुणत्तदंसणादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णीचागोदमणंतगुणं ॥ १६७ ॥

जदि वि एदस्स सत्तमपुढवीणेरइएसु सव्वविसुद्धपरिणामेसु जहण्णं जादं तो वि देवगदीदो णीचागोदमणंतगुणं, साभावियादो ।

अजसकित्ती अणंतगुणा ॥ १६८ ॥

पमत्तसंजदेण सव्वविसुद्धेण पबद्धत्तादो ।

असादावेदणीयमणंतगुणं ॥ १६९ ॥

एदस्स जहण्णबंधो जदि वि पमत्तसंजदम्मि चेव जादो तो वि तत्तो एदस्स

क्योंकि वह असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच गतिके संक्लेशकी अपेक्षा अनन्तगुणे संक्लेशके द्वारा बांधी गई है ।

उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी है ॥ १६५ ॥

यद्यपि इसका एकेन्द्रियोंमें जघन्य बन्ध होता है तो भी यह नरकगतिकी अपेक्षा अनन्तगुणी है, क्योंकि, वह शुभ प्रकृति है ।

उससे देवगति अनन्तगुणी है ॥ १६६ ॥

यद्यपि इसका जघन्य बन्ध परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे युक्त असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके होता है तो भी मनुष्यगतिकी अपेक्षा देवगति अनन्तगुणी है, क्योंकि, एकेन्द्रियके परिवर्तमान मध्यम परिणामोंकी अपेक्षा असंज्ञी पंचेन्द्रियके परिवर्तमान मध्यम परिणाम अनन्तगुणे देखे जाते हैं।

उससे नीचगोत्र अनन्तगुणा है ॥ १६७ ॥

यद्यपि सर्वविशुद्ध परिणामवाले सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें इसका जघन्य बन्ध होता है, तो भी देवगतिकी अपेक्षा नीचगोत्र अनन्तगुणा है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे अयशःकीर्ति अनन्तगुणी है ॥ १६८ ॥

क्योंकि, वह सर्वविशुद्ध प्रमत्तसंयत जीवके द्वारा बांधी गई है ।

उससे असातावेदनीय अनन्तगुणी है ॥ १६९ ॥

यद्यपि इसका जघन्य बन्ध प्रमत्तसंयतके ही होता है, तो भी उससे इसका अनुभाग

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अणुभागो अणंतगुणो पयडिविसेसेण ।

जसकित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥१७०॥

एदेसिं दोण्णं पि पंचिंदिएसु अइतिव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठीसु जदि वि जहण्णं जादं तो वि तत्तो एदेसिमणुभागो अणंतगुणो, सुहपयडीणं बहुवाणुभागबंधोसरणाभावादो।

सादावेदणीयमणंतगुणं ॥ १७१ ॥

एदस्स वि जहण्णाणुभागबंधस्स सव्वसंकिलिट्ठो मिच्छाइट्ठी चेव सामी, किंतु पयडिविसेसेण अणंतगुणो ।

णिरयाउअमणंतगुणं ॥ १७२ ॥

कुदो ? साभाविदादो ।

देवाउअमणंतगुणं ॥ १७३ ॥

कारणं सुगमं ।

आहारसरीरमणंतगुणं ॥ १७४ ॥

अप्पमत्तसंजदेण तप्पाओग्गविसुद्धेण पबद्धत्तादो ।

एवं जहण्णयं चउसट्ठिपदियं परत्थाणप्पाबहुगं समत्तं ।

संपहि एदेण सूचिदसत्थाणप्पाबहुगं वत्तइस्सामो--सव्वमंदाणुभागं मणपज्जय-

---

प्रकृतिविशेष होनेसे अनन्तगुणा है ।

उससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्र दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणे हैं । १७० ।

यद्यपि अति तीव्र संक्लेशयुक्त पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंमें इन दोनों ही प्रकृतियोंका जघन्य बन्ध होता है, तो भी असाता वेदनीयकी अपेक्षा इनका अनुभाग अनन्तगुणा है, क्योंकि, शुभ प्रकृतियों के बहुत अनुभाग बन्धका अपसरण नहीं होता ।

उनसे सातावेदनीय अनन्तगुणी है । १७१ ।

इसके भी जघन्य अनुभागबन्धका स्वामी सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीव ही है, किन्तु प्रकृतिविशेष होनेसे वह उक्त दोनों प्रकृतियोंसे अनन्तगुणी है ।

उससे नारकायु अनन्तगुणी है । १७२ ।

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे देवायु अनन्तगुणी है ॥ १७३ ॥

इसका कारण सुगम है ।

उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा है ॥ १७४ ॥

क्योंकि, वह तत्प्रायोग्य विशुद्धिको प्राप्त अप्रमत्तसंयत जीवके द्वारा बांधा गया है ।

इस प्रकार चौंसठ पदवाला जघन्य परस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

अब इससे सूचित होनेवाले स्वस्थान अल्पबहुत्वको कहते हैं-- मनःपर्ययज्ञानावरणीय

णाणावरणीयं । ओहिणाणावरणीयमणंतगुणं । मणपज्जवणाणावरणीयमणंतगुणं । आभिणिबोहियणाणावरणीयमणंतगुणं । केवलणाणावरणीयमणंतगुणं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सव्वमंदाणुभागमोहिदंसणावरणीयं । अचक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं । चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं । केवलदंसणावरणीयमणंतगुणं । पचला अणंतगुणा । णिद्दा अणंतगुणा । णिद्दाणिद्दा अणंतगुणा । पयलापयला अणंतगुणा । थीणगिद्धी अणंतगुणा ।

सव्वमंदाणुभागमसादावेदणीयं । सादावेदणीयमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागं लोभसंजलणं । मायासंजलणमणंतगुणं । माणसंजलणमणंतगुणं । कोधसंजलणमणंतगुणं । पुरिसवेदो अणंतगुणो । हस्समणंतगुणं । रदी अणंतगुणा । दुगुंछा अणंतगुणा । भयमणंतगुणं । सोगो अणंतगुणो । अरदी अणंतगुणा । इत्थिवेदो अणंतगुणो । णवुंसयवेदो अणंतगुणो । पच्चक्खाणमाणो अणंतगुणो । कोधो विसेसाहिओ । माया विसेसाहिया । लोभो विसेसाहिओ । अपच्चक्खाणमाणो अणंतगुणो । कोधो विसेसाहिओ । माया विसेसाहिया । लोभो विसेसाहिओ । अणंताणुबंधिमाणो अणंतगुणो । कोधो विसेसाहिओ । माया विसेसाहिया । लोभो विसेसाहिओ । मिच्छत्तमणंतगुणं ।

सर्वमन्द अनुभागसे युक्त है । उससे अवधिज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है । उससे श्रुतज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है । उनसे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है । उससे केवलज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है ।

अवधिदर्शनावरणीय सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे अचक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणा है । उससे चक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणा है । उससे केवल दर्शनावरणीय अनन्तगुणा है । उससे प्रचला अनन्तगुणी है । उससे निद्रा अनन्तगुणी है । उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है । उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है । उससे स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है ।

असातावेदनीय सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे सातावेदनीय अनन्तगुणा है ।

संज्वलन लोभ सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे संज्वलन माया अनन्तगुणी है । उससे संज्वलन मान अनन्तगुणा है । उससे संज्वलन क्रोध अनन्तगुणा है उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा है । उससे हास्य अनन्तगुणा है । उससे रति अनन्तगुणी है । उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी है । उससे भय अनन्तगुणा है । उससे शोक अनन्तगुणा है । उससे अरति अनन्तगुणी है । उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । उससे नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । उससे प्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । उससे प्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष अधिक है । उससे प्रत्याख्यानावरण माया विशेष अधिक है । उससे प्रत्याख्यानावरण लोभ विशेष अधिक है । उससे अप्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । उससे अप्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष अधिक है । उससे अप्रत्याख्यानावरण माया विशेष अधिक है । उससे अप्रत्याख्यानावरण लोभ विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धी मान अनन्तगुणा है । उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धी लोभ विशेष अधिक है । उससे मिथ्यात्व अनन्तगुणा है ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सव्वमंदाणुभागं तिरिक्खाउगं । मणुसाउअमणंतगुणं । णिरयाउअमणंतगुणं । देवाउअमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागा तिरिक्खगई । णिरयगई अणंतगुणा । मणुसगई अणंतगुणा । देवगई अणंतगुणा ।

सव्वमंदाणुभागा चउरिंदियजादी । तीइंदियजादी अणंतगुणा । बीइंदियजादी अणंतगुणा । एइंदियजादी अणंतगुणा । पंचिंदियजादी अणंतगुणा ।

सव्वमंदाणुभागं ओरालियसरीरं । वेउव्वियसरीरमणंतगुणं । तेजइयसरीरमणंतगुणं । कम्मइयसरीरमणंतगुणं । आहारसरीरमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागं णग्गोधसंठाणं । सादियसंठाणमणंतगुणं । खुज्जसंठाणमणंतगुणं । वामणसंठाणमणंतगुणं । हुंडगसंठाणमणंतगुणं । समचउरससंठाणमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागमोरालियसरीरअंगोवंगं । वेउव्वियसरीरअंगोवंगमणंतगुणं । आहारसरीरअंगोवंगमणंतगुणं ।

संघडणाणं संठाणभंगो । सव्वमंदाणुभागमप्पसत्थवण्णाइचउक्कं । पसत्थचउक्कमणंतगुणं । जहा गई तहा आणुपुव्वी । सव्वमंदाणुभागं उवघादं । परघादमणंतगुणं

तिर्यगायु सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी है । उससे नारकायु अनन्तगुणी है । उससे देवायु अनन्तगुणी है ।

तिर्यग्गति सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे नरकगति अनन्तगुणी है । उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी है । उससे देवगति अनन्तगुणी है ।

चतुरिन्द्रिय जाति सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे त्रीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है । उससे द्वीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है । उससे एकेन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है । उससे पंचेन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है ।

औदारिक शरीर सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा है । उससे तेजस शरीर अनन्तगुणा है । उससे कार्मण शरीर अनन्तगुणा है । उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा है ।

न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे स्वाती संस्थान अनन्तगुणा है । उससे कुब्जक संस्थान अनन्तगुणा है । उससे वामन संस्थान अनन्तगुणा है । उससे हुंडक संस्थान अनन्तगुणा है । उससे समचतुरस्र संस्थान अनन्तगुणा है ।

औदारिक शरीर अंगोपांग सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे वैक्रियिकशरीरांगोपांग अनन्तगुणा है । उससे आहारकशरीरांगोपांग अनन्तगुणा है ।

संहननोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा संस्थानोंके समान है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे प्रशस्त वर्णादिचतुष्क अनन्तगुणा है । जिस प्रकार गतिके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार आनुपूर्वीके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनी चाहिये । उपघात

उस्सासमणंतगुणं । अगुरुअलहुवमणंतगुणं । सव्वमंदाणुभागा अप्पसत्थविहायगई । पसत्थविहायगई अणंतगुणा । तसादिदसजुगलस्स साद्धासावभंगो ।

सव्वमंदाणुभागं णीचागोदं । उच्चागोदमणंतगुणं । सव्वमंदाणुभागं दाणंतराइयं । एवं चदुण्हं पडीणं उवरिमचत्तारि वि अणंतगुणा । एवं सत्थाणजहण्णप्पाबहुगं समत्तं ।

पढमा चूलिया

संपहि एत्तो उवरि चूलियं भणिस्सामो । तं जहा--

सम्मत्तुप्पत्ती वि य सावय-विरदे अणंतकम्मंसे ।
दंसणमोहक्खवए कसायउवसामए य उवसंते ॥ ७ ॥
खवए य खीणमोहे जिणे य णियमा भवे असंखेज्जा ।
तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणाए सेडीए ॥ ८ ॥

एदाओ दो वि गाहाओ एक्कारसगुणसेडीयो णिज्जरमाणपदेसकालेहि विसेसिदूण

सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे परघात अनन्तगुणा है । उससे उच्छ्वास अनन्तगुणा है । उससे अगुरुलघु अनन्तगुणा है ।

अप्रशस्त विहायोगति सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे प्रशस्त विहायोगति अनन्तगुणी है । त्रसादिक दस युगलोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा साता व असाता वेदनीयके समान है ।

नीच गोत्र सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे उच्च गोत्र अनन्तगुणा है ।

दानान्तराय सर्वमन्द अनुभागसे सहित है, इस प्रकार परिपाटी क्रमसे आगेकी चार अन्तराय प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हैं ।

इस प्रकार जघन्य स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

अब यहाँसे आगे चूलिकाको कहते हैं । वह इस प्रकार है --

सम्यक्त्वोत्पत्ति अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि, श्रावक अर्थात् देशव्रती, विरत अर्थात् महाव्रती, अनन्तानुबन्धी कषायका विसंयोजन करनेवाला, दर्शनमोहका क्षपक, चारित्रमोहका उपशामक, उपशान्तकषाय, क्षपक, क्षीणमोह और स्वस्थान जिन व योगनिरोधमें प्रवृत्त जिन इन स्थानोंमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी निर्जरा होती है । परन्तु निर्जराका काल उससे विपरीत अर्थात् आगेसे पीछेकी ओर बढ़ता हुआ है जो संख्यातगुणित श्रेणि रूप है ॥ ७-८ ॥

ये दोनों ही गाथायें निर्जीर्ण होनेवाले प्रदेश और कालसे विशेषित ग्यारह गुणश्रेणियोंका कथन करती हैं ।

अ-आ-का प्रतिषु 'सव्वेज्जगुणा य सेडीओ' इति पाठः । ता-प्रतौ 'संखेज्जगुणा य सेडीए' इति पाठः ।

त. सू. ९-४५ । जयध. अ. ३१७ । गो. जी. ६३. सम्मत्तुप्पत्तीसावय-विरए संजोयणाविणासे य । दंसणमोहक्खवगे कसायउवसामगुवसंते ॥ खवगे य खीणमोहे जिणेसु दुविहे असंखगुणसेढी । उदओ तव्विवरीओ कालो संखेज्जगुणसेढी ॥ क. प्र. ६, ८-९.

परूवेंति । भावविहाणे परूविज्जमाणे एक्कारसगुणसेडिपदेसणिज्जरपरूवणा तक्का-लपरूवणा च किमट्ठं कीरदे ? विसोहीहि अणुभागक्खएण पदेसणिज्जराजाणावण-दुवारेण जीवकम्माणं संबंधस्स अणुभागो चेव कारणमिदि जाणावणट्ठं वुच्चदे । अहवा वेयणदव्वविहाणे जहण्णसामित्ते भण्णमाणे गुणसेडिणिज्जरा सूचिदा । तिस्से गुणसेडिणिज्जराए भावो कारणमिदि भावविहाणे तव्वियप्पपरूवणट्ठं वुच्चदे ।

'सम्मत्तुप्पत्ति' त्ति भणिदे दंसणमोहउवसामणं कादूण पढमसम्मत्तुप्पायणं घेत्तव्वं । 'सावए' त्ति भणिदे देसविरदीए गहणं । 'विरदे' त्ति भणिदे संजयस्स गहणं । 'अणंतकम्मंसे' त्ति वुत्ते अणंताणुबंधिविसंजोयणा घेत्तव्वा । 'दंसणमोहक्खवगे' त्ति वुत्ते दंसणमोहणीयक्खवगो घेत्तव्वो । 'कसायउवसामगे' त्ति वुत्ते चरित्तमोहणी-यउवसामगो घेत्तव्वो । 'उवसंते' त्ति वुत्ते उवसंतकसाओ घेत्तव्वो । 'खवगे' त्ति वुत्ते चरित्तमोहणीयक्खवगो घेत्तव्वो । 'खीणमोहे' त्ति भणिदे खीणकसायस्स गहणं । 'जिणे' त्ति भणिदे सत्थाणजिणाणं जोगिणिरोहे वावदजिणाणं च गहणं ।

एदेण* गाहासुत्तकलावेण एक्कारस॰ पदेसगुणसेडिणिज्जरा परूविदा । 'तव्वदिरित्तो

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शंका– भावविधानकी कथन करते समय बारह गुणश्रेणियोंमें होनेवाली प्रदेशनिर्जरा-का कथन और उसके कालका कथन किसलिये करते हैं ?

समाधान– विशुद्धियोंके द्वारा अनुभागक्षय होता है और उससे प्रदेशनिर्जरा होती है [प्रु. ७] इस बातका ज्ञान करानेसे जीव और कर्मके सम्बन्धका कारण अनुभाग ही है, इस बातको बतलानेके लिये उक्त कथन किया जा रहा है । अथवा वेदना द्रव्यविधानमें जघन्य स्वामित्वकी प्ररूपणा करते हुए गुणश्रेणिनिर्जराकी सूचना की गई थी । उस गुणश्रेणिनिर्जराका कारण भाव है, अतएव यहां भावविधानमें उसके विकल्पोंका कथन करनेके लिये यह कथन किया जा रहा है ।

पूर्वोक्त गाथामें 'सम्मत्तुप्पत्ती' ऐसा कहनेपर दर्शनमोहका उपशम करके प्रथम सम्य-क्त्वकी उत्पत्तिका ग्रहण करना चाहिये । 'सावए' कहनेसे देशविरतिका ग्रहण किया गया है । 'विरदे' कहनेपर संयतका ग्रहण करना चाहिये । 'अणंतकम्मंसे' ऐसा निर्देश कहनेपर अनन्ता-नुबन्धी कषायकी विसंयोजनाका ग्रहण करना चाहिये । 'दंसणमोहक्खवगे' ऐसा कहनेपर दर्शनमोहनीयके क्षपकका ग्रहण करना चाहिये । 'कसायउवसामगे' कहनेपर चारित्रमोहनीयका उपशम करनेवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये । 'उवसंते' कहनेपर उपशान्तकषाय जीवका ग्रहण करना चाहिये । 'खवगे' कहनेपर चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये । 'खीणमोहे' ऐसा कहनेपर क्षीणकषाय जीवका ग्रहण करना चाहिये । 'जिणे' कहनेपर स्वस्थान जिनोंका और योगनिरोधमें प्रवर्तमान जिनोंका ग्रहण करना चाहिए ।

इस गाथा सूत्रकलापके द्वारा ग्यारह प्रकारकी प्रदेशगुणश्रेणिनिर्जराओंकी प्ररूपणा की गई है ।

---

* प्रतिषु 'एवेण सुत्त' इति पाठः । ॰ प्रतिषु 'एक्कारसगाहापदेस–' इति पाठः ।

कालो' एदेसिं गुणसेडिणिक्खेवद्धाणं पुण विवरीदं होदि । उवरिदो हेट्ठा बड्ढमाणं गच्छदि त्ति भणिदं होदि । पुव्वं व असंखेज्जगुणसेडीए पत्तबुड्ढीए पडिसेहट्ठं 'संखेज्जगुणाए सेडीए' त्ति भणिदं । एवं दोगाहाहि परूविदएक्कारसगुणसेडीणं बालजणाणुग्गहट्ठं पुणरवि परूवणं कीरदे त्ति उवरिमसुत्तं भणदि–

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सव्वत्थोवा दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिगुणो ॥ १७५ ॥

गुणो गुणगारो, तस्स सेडी ओली पंती गुणसेडी णाम । दंसणमोहुवसामयस्स पढमसमए णिज्जिण्णदव्वं थोवं । बिदियसमए णिज्जिण्णदव्वमसंखेज्जगुणं । तदिय-समए णिज्जिण्णदव्वमसंखेज्जगुणं । एवं णेयव्वं जाव दंसणमोहउवसामगचरिमसमओ त्ति । एसा गुणगारपत्ती गुणसेडि त्ति भणिदं होदि । गुणसेडीए गुणो गुणसेडिगुणो, गुणसेडिगुणगारो त्ति भणिदं होदि । एदस्स भावत्थो- सम्मत्तुप्पत्तीए जो गुणसेडि-गुणगारो सव्वमहंतो सो[1] वि उवरि भण्णमाणजहण्णगुणगारादो वि थोवो त्ति भणिदं होदि ।

संजदासंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १७६ ॥

संजदासंजदस्स गुणसेडिणिज्जराए जो जहण्णओ गुणगारो सो पुव्विल्लउक्क-स्सगुणगारादो असंखेज्जगुणो ।

'तव्वविरीदो कालो' परन्तु इनका गुणश्रेणिनिक्षेप अध्वान उससे विपरीत है, अर्थात् आगेसे पीछेकी ओर वृद्धिगत होकर जाता है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है । पूर्वके समान असंख्यात-गुणित श्रेणिक्रमसे प्राप्त वृद्धिका प्रतिषेध करनेके लिये 'संखेज्जगुणाए सेडीए' यह कहा है ।

इस प्रकार दो गाथाओंके द्वारा कही गई ग्यारह गुणश्रेणियोंका मन्दबुद्धि शिष्योंका अनुग्रह करनेके लिए पुनः दूसरी बार कथन करते हैं । इसके लिये आगेका सूत्र कहते हैं –

दर्शनमोहका उपशम करनेवालेका गुणश्रेणिगुणकार सबसे स्तोक है ॥ १७५ ॥

गुण शब्दका अर्थ गुणकार है । तथा उसकी श्रेणि, आवलि या पंक्तिका नाम गुण-श्रेणि है । दर्शनमोहका उपशम करनेवाले जीवका प्रथम समयमें निर्जराको प्राप्त होनेवाला द्रव्य स्तोक है । उससे द्वितीय समयमें निर्जराको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा है । उससे तीसरे समयमें निर्जराको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा है । इस प्रकार दर्शनमोह उपशामकके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये । यह गुणकारपंक्ति गुणश्रेणि है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । तथा गुणश्रेणिका गुण गुणश्रेणिगुण अर्थात् गुणश्रेणिगुणकार कहलाता है यह उक्त कथ-नका तात्पर्य है । इसका भावार्थ यह है– सम्यक्त्वकी उत्पत्तिमें जो गुणश्रेणिगुणकार सर्वोत्कृष्ट है वह भी आगे कहे जानेवाले गुणकारकी अपेक्षा स्तोक है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

उससे संयतासंयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १७६ ॥

संयतासंयतकी गुणश्रेणिनिर्जराका जो जघन्य गुणकार है यह पूर्वके उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा असंख्यातगुणा है ।

[1] अ-काप्रत्योः 'सो' इति पाठः ।

अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १७७ ॥

संजदासंजदस्स उक्कस्सगुणसेडिगुणगारादो सत्थाणसंजदस्स जहण्णगुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो । संजमासंजमपरिणामादो जेण संजमपरिणामो अणंतगुणो तेण पदेसणिज्जराए वि अणंतगुणाए होदव्वं, एदम्हादो अण्णत्थ सव्वत्थ कारणाणुरूवकज्जुवलंभादो त्ति ? ण, जोगगुणगाराणुसारिपदेसगुणगारस्स अणंतगुणत्तविरोहादो । ण च पदेसणिज्जराए अणंतगुणत्तमभुवगमो जुत्तो, गुणसेडिणिज्जराए बिदियसमए चेव णिव्वुद्दप्पसंगादो । ण च कज्जं कारणाणुसारी चेवेत्ति णियमो अत्थि, अंतरंगकारणावेक्खाए पवुत्तस्स कज्जस्स बहिरंगकारणाणुसारित्तणियमाणुववत्तीदो । सम्मत्तसहायसंजम-संजमासंजमेहि जायमाणा गुणसेडिणिज्जरा सम्मत्तवविरित्तसंजमसंजमासंजमेहि चेव होदि त्ति कधमुच्चदे ? ण, अप्पहाणीकयसम्मत्तभावादो । अधवा, सो संजमो जो सम्मत्ताविणाभावी ण अण्णो, तत्थ गुणसेडिणिज्जराकज्जाणुवलंभादो । तदो संजमगहणादेव सम्मत्तसहायसंजमसिद्धी जादा ।

आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज

उससे अधःप्रवृत्तसंयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १७७ ॥

संयतासंयतके उत्कृष्ट गुणश्रेणिगुणकारकी अपेक्षा स्वस्थानसंयतका जघन्य गुणकार असंख्यातगुणा है ।

शंका– यतः संयमासंयम रूप परिणामकी अपेक्षा संयमरूप परिणाम अनन्तगुणा है, अतः संयमासंयम परिणामकी अपेक्षा संयम परिणामके द्वारा होनेवाली प्रदेशनिर्जरा भी अनन्तगुणी होनी चाहिये, क्योंकि, इससे दूसरी जगह सर्वत्र कारणके अनुरूप ही कार्यकी उपलब्धि होती है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, प्रदेशनिर्जराका गुणकार योगगुणकारका अनुसरण करनेवाला है, अतएव उसके अनन्तगुणे होनेमें विरोध आता है । दूसरे, प्रदेशनिर्जरामें अनन्तगुणत्व स्वीकार करना उचित नहीं है, क्योंकि, ऐसा स्वीकार करनेपर गुणश्रेणिनिर्जराके दूसरे समयमें ही मुक्तिका प्रसंग आवेगा । तीसरे, कार्य कारणका अनुसरण करता ही हो, ऐसा भी कोई नियम नहीं है, क्योंकि, अन्तरंग कारणकी अपेक्षा प्रवृत्त होनेवाले कार्यके बहिरंग कारणके अनुसरण करनेका नियम नहीं बन सकता ।

शंका– सम्यक्त्व सहित संयम और संयमासंयमसे होनेवाली गुणश्रेणिनिर्जरा सम्यक्त्वके विना संयम और संयमासंयमसे ही होती है, यह कैसे कहा जा सकता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, यहाँ सम्यक्त्व परिणामको प्रधानता नहीं दी गई है । अथवा, संयम वही है जो सम्यक्त्वका अविनाभावी है अन्य नहीं । क्योंकि, अन्यमें गुणश्रेणिनिर्जरा रूप कार्य नहीं उपलब्ध होता । इसलिए संयमके ग्रहण करनेसे ही सम्यक्त्व सहित संयमकी सिद्धि हो जाती है ।

अणंताणुबंधीविसंजोएंतस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।१७८।

सत्थाणसंजदउक्कस्सगुणसेडिगुणगारादो असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-संजदेसु अणंताणुबंधि विसंजोएंतस्स जहण्णगुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो। एत्थ सव्वत्थ गुणसेडिगुणगारो त्ति वुत्ते गलमाणपदेसगुणसेडिगुणगारो णिसिंचमाणपदेसगुणसेडिगुणगारो च घेत्तव्वो। कधमेवं लब्भदे ? गुणसेडिगुणो त्ति सामण्णणिद्देसादो। संजमपरिणामेहिंतो अणंताणुबंधि विसंजोएंतस्स असंजदसम्मादिट्ठिस्स परिणामो अणंतगुणहीणो, कधं तत्तो असंखेज्जगुणपदेसणिज्जरा जायदे ? ण एस दोसो, संजमपरिणामेहिंतो अणंताणुबंधीणं विसंजोजणाए कारणभूदाणं सम्मत्तपरिणामाणमणंतगुणत्तुवलंभादो। जदि सम्मत्तपरिणामेहि अणंताणुबंधीणं विसंजोजणा कीरदे तो सव्वसम्माइट्ठीसु तब्भावो पसज्जदि त्ति वुत्ते ण, विसिट्ठेहि चेव सम्मत्त परिणामेहि तव्विसंजोयणब्भुवगमादो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उससे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवालेका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ।। १७८ ।।

स्वस्थान संयतके उत्कृष्ट गुणश्रेणिगुणकारकी अपेक्षा असंयतसम्यग्दृष्टि, संयतासंयत और संयत जीवोंमें अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेवाले जीवका जघन्य गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ।

यहाँ सब जगह ' गुणश्रेणिगुणकार ' ऐसा कहनेपर गलमान प्रदेशोंका गुणश्रेणिगुणकार और निसिंचमान प्रदेशोंका गुणश्रेणिगुणकार ग्रहण करना चाहिये ।

शंका-- यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- यह ' गुणश्रेणिगुणकार ' ऐसा सामान्य निर्देश करनेसे जाना जाता है ।

शंका-- संयमरूप परिणामोंकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टिका परिणाम अनन्तगुणा हीन होता है, ऐसी अवस्थामें उससे असंख्यातगुणी प्रदेश निर्जरा कैसे हो सकती है ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संयमरूप परिणामोंकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजनामें कारणभूत सम्यक्त्वरूप परिणाम अनंतगुणे उपलब्ध होते हैं ।

शंका-- यदि सम्यक्त्वरूप परिणामोंके द्वारा अनंतानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजना की जाती है तो सभी सम्यग्दृष्टि जीवोंमें उसकी विसंयोजनाका प्रसंग आता है ?

समाधान-- ऐसा पूछने पर उत्तरमें कहते हैं कि सब सम्यग्दृष्टियोंमें उसकी विसंयोजना का प्रसंग नहीं आ सकता, क्योंकि, विशिष्ट सम्यक्त्वरूप परिणामोंके द्वारा ही अनन्तानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजना स्वीकार की गई है ।

✿ प्रतिषु ' तदभावो ' इति पाठः । ✱ प्रतिषु ' सव्वत्थ ' इति पाठः ।

दंसणमोहक्खवगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १७९ ॥

अणंताणुबंधि विसंजोएंतस्स दोण्णं गुणसेडीणमुवकस्सगुणगारादो दंसणमोहणीयं खवेंतस्स दुविहगुणसेडीणं जहण्णगुणगारो असंखेज्जगुणो । तीदाणागद-वट्टमाणपदेसगुणगारो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो त्ति वत्तव्वो ।

कसायउवसामगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १८० ॥

दंसणमोहणीयं खवेंतस्स दुविहगुणसेडीणमुवकस्सगुणगारादो कसाए उवसामेंतस्स जहण्णओ वि गुणगारो असंखेज्जगुणो । दंसणमोहणीयखवगगुणसेडिगुणगारादो अपुव्वउवसामगस्स गुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो । अणियट्टिउवसामगस्स गुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो । सुहुमसांपराइयस्स गुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो । एवं चारित्तमोहक्खवगाणं पि पुध पुध गुणगारप्पाबहुए भण्णमाणे गुणसेडिणिज्जरा एक्कारसविहा फिट्टिदूण पण्णारसविहा होदि त्ति भणिदे ण, णइगमणए अवलंबिज्जमाणे तिण्णमुवसामगाणं तिण्णं खवगाणं च एगत्तप्पणाए एक्कारसगुणसेडिणिज्जरुववत्तीदो ।

उससे दर्शनमोहका क्षय करनेवाले जीवका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १७९ ॥

अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जीवके दोनों गुणश्रेणि सम्बन्धी उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा दर्शनमोहका क्षय करनेवाले जीवकी दोनों प्रकारकी गुणश्रेणियोंका जघन्य गुणकार असंख्यातगुणा है । अतीत, अनागत और वर्तमान प्रदेशगुणश्रेणिगुणकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण जानना चाहिये ।

उससे कषायोपशामक जीवका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १८० ॥

दर्शनमोहनीयका क्षय करनेवाले जीवकी दोनों प्रकारकी गुणश्रेणियोंके उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा कषायोंका उपशम करनेवाले जीवका जघन्य गुणकार असंख्यातगुणा है । दर्शनमोहनीयके क्षपक के गुणश्रेणिगुणकारसे अपूर्वकरण उपशामकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है । उससे अनिवृत्तिकरण उपशामकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है । उससे सूक्ष्मसाम्परायिकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ।

शंका-- इसी प्रकार चारित्रमोहके क्षपकोंके भी पृथक् पृथक् गुणकारके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेपर गुणश्रेणिनिर्जरा ग्यारह प्रकारकी न रहकर पन्द्रह प्रकारकी हो जाती है ?

समाधान-- इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि वह पन्द्रह प्रकारकी नहीं होती, क्योंकि, नैगम नयका अवलम्बन करनेपर तीन उपशामकों और तीन क्षपकोंके एकत्वकी विवक्षा होनेपर ग्यारह प्रकारकी गुणश्रेणिनिर्जरा बन जाती है ।

☼ ता प्रतिपाठोऽयम् । अ आ--प्रत्योः ' गुणगारो ' इति पाठः ।

उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्ज-गुणो ॥ १८१ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । एत्थ मोहणीयं मोत्तूण सेसकम्माणं दुविहगुणसेडीणं गुणगारस्स अप्पाबहुगपरूवणं कायव्वं, उवसंतमोहणीय-कम्मस्स णिज्जरा भावविरोहादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कसायखवगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १८२ ॥

उवसंतकसायदुविहगुणसेडिउक्कस्सगुणगारेहिंतो तिण्णं खवगाणं दव्वट्ठियणएण-एयत्तमावण्णाणं दुविहगुणसेडिगुणगारो जहण्णओ वि असंखेज्जगुणो । सेसं सुगमं ।

खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्ज-गुणो ॥ १८३ ॥

कुदो ? मोहणीयस्स बंधुदय-संताभावेण वड्ढिदअणंतगुणकम्मणिज्जरणसत्तीदो ?

अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १८४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । कुदो ? घादिकम्मक्खएण वड्ढिदाणंतगुणकम्मणिज्जरणपरिणामादो ।

उससे उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यात-गुणा है ॥ १८१ ॥

शंका- गुणकार कितना है ?

समाधान- वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

यहां मोहनीय कर्मको छोड़कर शेष कर्मोंकी दोनों गुणश्रेणियोंके गुणकार सम्बन्धी अल्प-बहुत्वकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, यहाँ उपशम भावको प्राप्त मोहनीय कर्मकी निर्जरा सम्भव नहीं है ।

उससे कषायक्षपकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १८२ ॥

उपशान्तकषायकी दोनों गुणश्रेणियों सम्बन्धी उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा द्रव्यार्थिक नयसे अभेदको प्राप्त हुए तीन क्षपकोंका जघन्य भी गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है । शेष कथन सुगम है ।

उससे क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ।१८३।

क्योंकि, मोहनीयके बन्ध, उदय व सत्त्वका अभाव हो जानेसे कर्मनिर्जराकी शक्ति अनन्तगुणी वृद्धिगत हो जाती है ।

उससे अधःप्रवृत्त केवली संयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥१८४॥

गुणकार क्या है ? गुणकार पल्योपमका असंख्यातवां भाग है, क्योंकि, घातिया कर्मोंके क्षीण हो जानेसे कर्मनिर्जराका परिणाम अनन्तगुणी वृद्धिको प्राप्त हो जाता है ।

जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।१८५।

कुदो ? साभावियादो ।

संपहि 'तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणाए सेडीए' एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

सव्वत्थोवो जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो ।१८६।

जोगणिरोधं कुणमाणो सजोगिकेवली आउअवज्जाणं कम्माणं पदेसमोकड्डिदूण उदए थोवं देदि । बिदियसमए असंखेज्जगुणं देदि । तदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं णिसिंचदि । एवं ताव णिसिंचदि जाव अंतोमुहुत्तं । तदुवरिमसमए असंखेज्जगुणहीणं णिसिंचदि । तत्तो विसेसहीणं जाव अप्पप्पणो अइच्छावणावलियमपत्तो त्ति । एत्थ जं गुणसेडीए कम्मपदेसणिक्खेवद्धाणं तं थोवं, सव्वजहण्णअंतोमुहुत्तपमाणत्तादो ।

अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।१८७।

एत्थ वि उदयादिगुणसेडिकमो पुव्वं व परूवेदव्वो । णवरि पुव्विल्लगुणसेडिपदेसणिक्खेवद्धाणादो एदस्स गुणसेडीए पदेसणिक्खेवद्धाणं संखेज्जगुणं । को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।१८८।

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

उससे योगनिरोधकेवली संयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ।१८५।

क्योंकि ऐसा स्वभाव है ।

अब 'तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणाए सेडीए' इस गाथासूत्रके अर्थका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

योगनिरोध केवली संयतका गुणश्रेणिकाल सबसे स्तोक है ।। १८६ ।।

योगनिरोध करनेवाला सयोगकेवली आयुको छोडकर शेष कर्मोंके प्रदेशोंका अपकर्षण कर उदयमें स्तोक देता है। उससे द्वितीय समयमें असंख्यातगुणा देता है। उससे तीसरी स्थितिमें असंख्यातगुणा निक्षिप्त करता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक निक्षिप्त करता है। उससे आगेके समयमें असंख्यातगुणे हीन प्रदेश निक्षिप्त करता है। आगे अपनी अपनी अतिस्थापनावलिको नहीं प्राप्त होने तक विशेष हीन निक्षिप्त करता है। यहां गुणश्रेणि कर्मप्रदेशनिक्षेपका अध्वान स्तोक है, क्योंकि, वह सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है।

उससे अधःप्रवृत्त केवली संयतका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ।। १८७ ।।

यहांपर भी उदयादि गुणश्रेणिका क्रम पहिलेके ही समान कहना चाहिए। विशेष इतना है कि पहिलेके गुणश्रेणिप्रदेशनिक्षेपके अध्वानसे अधःप्रवृत्त केवलीके गुणश्रेणिप्रदेशनिक्षेपका अध्वान संख्यातगुणा है। गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है।

उससे क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ।१८८।

गुणकार क्या है। गुणकार संख्यात समय है।

---

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'संखेज्जगुणो २८ सेडीए', ताप्रतौ-- 'संखेज्जगुणाय सेडीए' इति पाठः।

कसायखवगस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १८९ ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया । एत्थ गुणसेडीए पदेसणिक्खेवकमो संभरिय वत्तव्वो ।

उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्ज-गुणो ॥ १९० ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया ।

कसायउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९१ ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया ।

दंसणमोहक्खवयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९२ ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया ।

अणंताणुबंधिविसंजोएंतस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९३ ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया ।

अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९४ ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया । ㊀अधापवत्तसंजदो एयंताणुवड्ढिआदिकिरि-याविरहिदसंजदो त्ति एयट्ठो ।

संजदासंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९५ ॥

उससे कषायक्षपकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १८९ ॥

गुणकार क्या है? गुणकार संख्यात समय है । यहां गुणश्रेणिके प्रदेशनिक्षेपक्रमको स्मरण करके कहना चाहिये ।

उससे उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९० ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे कषायोपशामकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९१ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे दर्शनमोहक्षपकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९२ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे अनन्तानुबन्धिविसंयोजकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९३ ॥

गुणकार क्या है । गुणकार संख्यात समय है ।

उससे अधःप्रवृत्तसंयतका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९४ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है । अधःप्रवृत्तसंयत स्वस्थान अप्रमत्तसंयत और एकान्तानुवृद्धि आदि क्रियाओंसे रहित संयत, इन दोनोंका अर्थ एक है ।

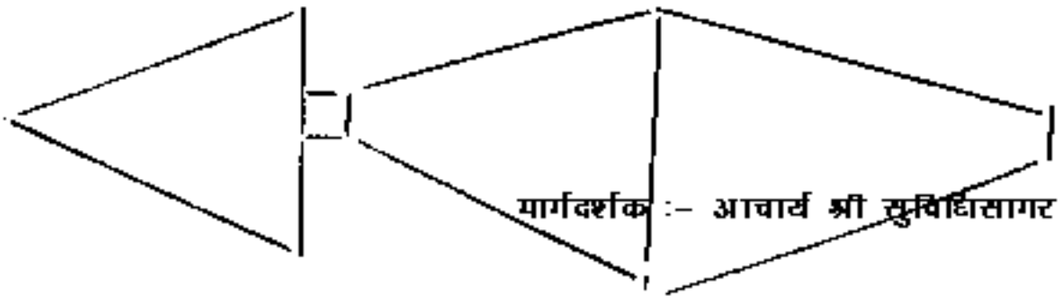
उससे संयतासंयतका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९५ ॥

㊀ आप्रतौ – 'संखेज्ज संजदो' इति पाठः ।

को गुणगारो? संखेज्जा समया ।

दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९६ ॥

को गुणगारो? संखेज्जा समया । एत्थ संदिट्ठी♣–



एवं पढमा चूलिया समत्ता ।

विदिया चूलिया

संपहि विदियचूलियापरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

एत्तो अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणदाए तत्थ इमाणि बारस अणुयोगद्दाराणि ॥ १९७ ॥

' अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि ' त्ति उत्ते अणुभागट्ठाणाणं गहणं कायव्वं ।

गुणकार क्या है? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे दर्शनमोहोपशामकका गुणश्रेणिकाल असंख्यातगुणा है ॥ १९६ ॥

गुणकार क्या है? गुणकार संख्यात समय है ।

विशेषार्थ– यहाँ मूलमें गुणश्रेणि रचनाका ज्ञान करानेके लिये तथा रचनाके आकार मात्रको प्रदर्शित करनेके लिये संदृष्टि दी है । गुणश्रेणि रचना दो प्रकारकी होती है– उदयादि गुणश्रेणि रचना और उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि रचना । इन दोनों विकल्पोंको ध्यानमें रख कर यह संदृष्टि दी गई है । यदि उदयादि गुणश्रेणि रचना होती है तो उदय समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण निषेकोंकी असंख्यात गुणित क्रमसे प्रदेश रचना होती है और यदि उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि रचना होती है तो उदयावलिको छोड कर आगेके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण निषेकोंकी असंख्यात गुणित क्रमसे प्रदेश रचना होती है । इससे आगे प्रथम समयमें असंख्यातगुणे हीन प्रदेश निक्षिप्त होते हैं और तदनन्तर एक एक न्यून क्रमसे प्रदेश निक्षिप्त होते हैं । यही भाव इस संदृष्टिमें निहित है ।

इस प्रकार प्रथम चूलिका समाप्त हुई ।

अब द्वितीय चूलिकाकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं–

इसके आगे अनुभागबंधाध्यवसान स्थानकी प्ररूपणाका अधिकार है । उसमें ये बारह अनुयोगद्वार हैं ॥ १९७ ॥

अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान कहनेपर अनुभागस्थानोंका ग्रहण करना चाहिये ।

♣ ताप्रतावत्र ' एत्थ संदिट्ठी– ' इत्येतन्निर्देशपुरस्सरं या संदृष्टिरुपादत्ता सा खलु प्रतौ १९६ तमसूत्रस्यान्ते ' बाहुबल्लियं ण णवरि० एत्थ संदिट्ठी ' एवंविधोल्लेखपूर्वकमुपादत्ता : आप्रतौ त्वेषा संदृष्टिः ' अधापवत्तकेवलि..... कालो संखेज्जगुणो ' इत्यादिसूत्राणां मध्य उपादत्ता ।

कधमणुभागबंधट्ठाणाणमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणसण्णा ? ण एस दोसो, कज्जे कारणोवयारेण तेसिं तण्णामुववत्तीदो । किमट्ठमेसा चूलिया आगया ? अजहण्णअणुक्कस्सट्ठाणाणि पुव्विल्लेसु तिसु अणुयोगद्दारेसु सूचिदाणि चेव ण परूविदाणि, तेसिं परूवणट्ठमिमा आगदा; अण्णहा अवुत्तसमाणत्तप्पसंगादो । तम्हि परूविज्जमाणे वि बारस चेव अणुयोगद्दाराणि होंति, अण्णेसिमसंभवादो । तेसिमणुयोगद्दाराणं णामणिद्देसो उत्तरसुत्तेण कीरदे--

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अविभागपडिच्छेदपरूवणा ट्ठाणपरूवणा अंतरपरूवणा कंडयपरूवणा ओजजुम्मपरूवणा छट्ठाणपरूवणा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समयपरूवणा वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूवणा पज्जवसाणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ॥ १९८ ॥

अविभागपडिच्छेदपरूवणा किमट्ठमागदा ? एक्केक्कम्हि अणुभागबंधट्ठाणे एत्तिया अविभागपडिच्छेदा होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा । ठाणपरूवणा णाम किमट्ठमागदा? अणुभागबंधट्ठाणाणि सव्वाणि वि एत्तियाणि चेव होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा। अंतरपरूवणा किमट्ठमागदा ? एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स संखेज्जासंखेज्जाणंताविभागपडिच्छेदेहि

शंका-- अनुभाग बन्धस्थानोंकी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान संज्ञा कैसे सम्भव है ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, कार्यमें कारणका उपचार करनेसे उनकी वह संज्ञा बन जाती है।

शंका-- इस चूलिकाका अवतार किसलिये हुआ है ?

समाधान-- पहिले तीन अनुयोगद्वारोंमें अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थानोंकी सूचना मात्र की है, प्ररूपणा नहीं की है। अतएव उनकी प्ररूपणा करनेके लिये इस चूलिकाका अवतार हुआ है, क्योंकि, अन्यथा अनुक्तसमानताका प्रसंग आता है।

उनकी प्ररूपणा करनेपर भी बारह ही अनुयोगद्वार होते हैं, क्योंकि, और दूसरे अनुयोगद्वारोंकी सम्भावना नहीं है। उन अनुयोगद्वारोंका नामनिर्देश आगेके सूत्र द्वारा करते हैं--

अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, अन्तरप्ररूपणा, काण्डकप्ररूपणा, ओज-युग्मप्ररूपणा, षट्स्थानप्ररूपणा, अधस्तनस्थानप्ररूपणा, समयप्ररूपणा, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, पर्यवसानप्ररूपणा और अल्पबहुत्व ॥ १९८ ॥

अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा किसलिये की गई है ? एक एक अनुभागबन्धस्थानमें इतने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं, यह बतलानेके लिये उक्त प्ररूपणा की गई है।

स्थानप्ररूपणा किसलिये की गई है ? सभी अनुभागबन्ध इतने ही होते हैं, यह बतलानेके लिये उक्त प्ररूपणा की गई है।

अन्तरप्ररूपणा किसलिये की गई है ? एक एक स्थानका संख्यात, असंख्यात व अनन्त अविभागप्रतिच्छेदोंके द्वारा अन्तर नहीं होता, किन्तु सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेदोंसे

अंतरं ण होदि त्ति, किं तु सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तअविभागपडिच्छेदेहि अंतरिदूण अण्णं ट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति जाणावणट्ठमागदा । कंडयपरूवणा किमट्ठमागदा ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो एगं कंडयं । पुणो एगकंडयपमाणेण अणंतभागवड्ढी-असंखेज्जभाग-वड्ढी--संखेज्जभागवड्ढी--संखेज्जगुणवड्ढी--असंखेज्जगुणवड्ढी--अणंतगुणवड्ढीयो कादूण जोइज्जमाणे सव्ववड्ढीयो णिरग्गाओ होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा । ओज-जुम्मपरूवणा किमट्ठमागदा ? सव्वाणि अणुभागट्ठाणाणि सव्वाविभागपडिच्छेदा वग्गणाओ फड्डयाणि कंडयाणि च कदजुम्माणि चेव होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा । छट्ठा-णपरूवणा किमट्ठमागदा ? अणंतभागवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिभागहारो सव्वजीवरासी, असं-खेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिभागहारो असंखेज्जा लोगा, संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिभाग-हारो उक्कस्ससंखेज्जयं, संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिगुणगारो उक्कस्ससंखेज्जयं, असं-खेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिगुणगारो असंखेज्जा लोगा, अणंतगुणवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिगुणगारो सव्वजीवरासी होदि त्ति जाणावणट्ठमागदा । हेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढीयो गंतूण असंखेज्जभागवड्ढी होदि, कंडयमेत्तअसंखे-ज्जभागवड्ढीयो गंतूण संखेज्जभागवड्ढी होदि, कंडयमेत्तसंखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण संखेज्जगुणवड्ढी होदि, कंडयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण असंखेज्जगुणवड्ढी होदि

अन्तरको प्राप्त होकर दूसरा स्थान उत्पन्न होता है, यह जतलानेके लिए अन्तरप्ररूपणा की गई है।

काण्डकप्ररूपणा किसलिये आई है? अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र एक काण्डक होता है। पुनः एक काण्डकके प्रमाणसे अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यात-गुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि, इन वृद्धियोंको करके देखनेपर वे निरग्र होती है, यह बतलानेके लिये काण्डकप्ररूपणा आई है।

ओज-युग्मप्ररूपणा किसलिये आई है? सब अनुभागस्थान, सब अविभागप्रतिच्छेद, वर्गणायें, स्पर्धक और काण्डक कृतयुग्म ही होते है, यह जतलानेके लिये उक्त प्ररूपणा आई है।

षट्स्थानप्ररूपणा किसलिये आई है? अनन्तभागवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका भागहार सर्व जीवराशि है, असंख्यातभागवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका भागहार असंख्यात लोक है, संख्यातभाग-वृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका भागहार उत्कृष्ट संख्यात है, संख्यातगुणवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका गुणकार उत्कृष्ट संख्यात है, असंख्यातगुणवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका गुणकार असंख्यात लोक है तथा अनन्तगुणवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका गुणकार सर्व जीवराशि है, यह बतलानेके लिये षट्स्थानप्ररूपणा आई है।

अधस्तनस्थानप्ररूपणा किसलिये आई है? काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियाँ होने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है, काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ होने पर संख्यातभागवृद्धि होती है, काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ होने पर संख्यातगुणवृद्धि होती है, काण्डकप्रमाण संख्यात-गुणवृद्धियाँ होनेपर असंख्यातगुणवृद्धि होती है, तथा काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियाँ होनेपर

कंडयमेत्तअसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण अणंतगुणवड्ढी होदि त्ति जाणावणट्ठमागदा। समयपरूवणा किमट्ठमागदा ? एदाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि जहण्णेण एत्तियं कालं बज्झंति उक्कस्सेण एत्तियमिदि जाणावणट्ठमागदा। वड्ढिपरूवणा किमट्ठमागदा ? अणुभागबंधट्ठाणेसु अणंतभागवड्ढि-हाणीयो आदिं कादूण वड्ढि-हाणीयो छच्चेव होंति। एदासिं बंधकालो जहण्णुक्कस्सेण एत्तियो होदि त्ति जाणावणट्ठमागदा। जवमज्झ-परूवणा किमट्ठमागदा ? अणंतगुणवड्ढिम्हि कालजवमज्झस्स आदी होदूण अणंत-गुणहाणीए समत्ता त्ति जाणावणट्ठमागदा। पज्जवसाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? सव्वसमयट्ठाणाणं पज्जवसाणं *अणंतगुणस्स उवरि अणंतगुणं भविस्सदि त्ति पज्जवसाणं जादमिदि जाणावणट्ठमागदा। अप्पाबहुए त्ति किमट्ठमागदं। [illegible] परूवणट्ठमागदं। एवं देसामासियं सुत्तं, तेण ☼बंधसमुप्पत्तिय☼-हदसमु-

---

अनन्तगुणवृद्धि होती है, यह दिखलानेके लिये उक्त प्ररूपणा आई है।

समय प्ररूपणा किसलिये आई है ? ये अनुभागबन्धस्थान जघन्य रूपसे इतने काल तक बँधते हैं और उत्कृष्ट रूपसे इतने काल तक बँधते हैं, यह बतलानेके लिये समय प्ररूपणा आई है।

वृद्धिप्ररूपणा किसलिये आई है ? अनुभागबन्धस्थानोंमें अनन्तभागवृद्धि और अनन्तभा-गहानिसे लेकर वृद्धियाँ व हानियाँ छह ही होती हैं, इनका बन्धकाल जघन्य व उत्कृष्ट रूपसे इतना है, यह बतलानेके लिये वृद्धिप्ररूपणा आई है।

यवमध्यप्ररूपणा किसलिये आई है ? अनन्तगुणवृद्धिमें कालयवमध्यका प्रारम्भ होकर वह अनन्तगुणहानिमें समाप्त होता है, यह बतलानेके लिये यवमध्यप्ररूपणा आई है।

पर्यवसानप्ररूपणा किसलिये आई है ? सब समयस्थानों का पर्यवसान अनन्तगुणितके ऊपर अनन्तगुणा होगा तब पर्यवसान होता है, यह बतलानेके लिये पर्यवसानप्ररूपणा आई है।

अल्पबहुत्व किसलिये आया है ? एक षट्स्थानमें अनन्तगुणवृद्धि आदि स्थानोंके अल्प-बहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये आया है।

यह देशामर्शक सूत्र है, अतएव बन्धसमुत्पत्तिक, हतसमुत्पत्तिक और हतहतसमु-

---

* प्रतिषु 'पज्जवसाणअणंत--' इति पाठः। ☼ तत्थ हदसमुप्पत्तिय कादूणल्लियमूहमणिगोदल-द्धिअपज्जत्तयस्स पढमसमयआहारयस्स पढमसमयतब्भवत्थस्स जहण्णाणुभागसंतट्ठाणसमाणबंधट्ठाणमादिं कादूण जाव सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसव्वुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणे त्ति ताव एदाणि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि बंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि त्ति भण्णंति, बंधेण समुप्पण्णत्तादो। जयध. अ. प. ३१३. ✿ पुणो एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं मज्झे अणंतगुणवड्ढिअणंतगुणहाणिअट्ठंकुव्वं-काणं विच्चालेसु असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि हदसमुप्पत्तियसंकम्मट्ठाणाणि भणंति, बंधट्ठाणघादेण बंध-ट्ठाणाणं विच्चालेसु जच्चंतरभावेण उप्पण्णत्तादो। जयध. अ. प. ३१३-१४

प्पत्तियं* हदहदसमुप्पत्तियं* ट्ठाणेसु तिसु वि एक्काणि बारसाणुयोगद्दाराणि परूवेदव्वाणि । तत्थ ताव बंधट्ठाणेसु एक्काणि अणुयोगद्दाराणि भणिस्सामो । कुदो ? बंधादो संतुप्पत्तिदंसणादो ।

अविभागपडिच्छेदपरूवणदाए* एक्केक्कम्हि चेव ट्ठाणम्हि केवडिया अविभागपडिच्छेदा ? अणंता अविभागपडिच्छेदा सव्वजीवेहि अणंतगुणा, एवदिया अविभागपडिच्छेदा ॥ १९९ ॥

संपहि जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमस्सिदूण अविभागपडिच्छेदपमाणपरूवणा कीरदे—को अणुभागो णाम ? [अट्ठण्णं वि कम्माणं जीवपदेसाणं* च अण्णोण्णाणुगमणहेदुपरिणामो ।] पयडी अणुभागो किण्ण होदि ? ण, जोगादो उप्पज्जमाणपयडीए कसायदो उप्पत्तिविरोहादो । ण च भिण्णकारणाणं कज्जाणमेयत्तं, विप्पडिसेहादो । किं च अणुभागवुड्ढी पयडिवुड्ढिणिमित्ता, तीए महंतीए संतीए पयडिकज्जस्स अण्णाणादियस्स

त्पत्तिक इन तीनों ही स्थानोंमें इन बारह अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये । उनमें पहिले बन्धस्थानोंमें इन अनुयोगद्वारोंको कहेंगे, क्योंकि, बन्धसे सत्त्वकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणाका प्रकरण है— एक एक स्थानमें कितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं ? अनन्त अविभागप्रतिच्छेद होते हैं जो सब जीवोंसे अनन्तगुणे होते हैं, इतने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं ॥ १९९ ॥

अब जघन्य अनुभागबन्धस्थानका आश्रय लेकर अविभागप्रतिच्छेदोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं ।

शंका— अनुभाग किसे कहते हैं ?

समाधान— आठों कर्मों और जीवप्रदेशोंके परस्परमें अन्वय (एकरूपता) के कारण- पु. १९ भूत परिणामको अनुभाग कहते हैं ।

शंका— प्रकृति अनुभाग क्यों नहीं होती ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, प्रकृति योगके निमित्तसे उत्पन्न होती है, अतएव उसकी कषायसे उत्पत्ति होनेमें विरोध आता है । भिन्न कारणोंसे उत्पन्न होनेवाले कार्योंमें एकरूपता नहीं हो सकती, क्योंकि इसका निषेध है । दूसरे, अनुभागकी वृद्धि प्रकृतिकी वृद्धिमें निमित्त होती है,

---

* इमे चानिते समुत्पत्तिर्यस्य तदुत्तरसमुत्पत्तिकं कर्म अणुभागसंतकम्मे वा जमुव्वरिदं जहण्णाणुभागसंतकम्मं तस्स हदसमुप्पत्तियकम्ममिदि सण्णा । जयध. अ. प. ३२२.

* पुणो एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्ताणं हदसमुप्पत्तियसंतकम्मट्ठाणाणमणंतगुणवड्ढि-हाणिअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चालेसु असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणा हदहदसमुप्पत्तियसंतट्ठाणाणि वुच्चंति, बादेणुभागगट्ठाणेहिंतो विसरिसाणि चादिय बंधसमुप्पत्तिय-हदसमुप्पत्तियअणुभागट्ठाणेहिंतो विसरिसभावेण उप्पायिदत्तादो । जयध. अ. प. ३१४.

* अप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ प्रत्योः ' कम्माणं जे पदेसाणं,' ताप्रतौ ' कम्माणं (जे) पदेसाणं ' इति पाठः ।

तम्हा ण पयडीअणुभागो त्ति घेत्तव्वं । अण्णोण्णं पासहेदुगुणस्स अणुभागत्ते संते उदयावलियाए ट्ठिदपदेसग्गाणमुक्कस्साणुभागाभावो पसज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, ठिदिक्खएण अण्णोण्णपासविरहियस्स णिज्जमाणुवलंभादो । तत्थ एक्कम्हि परमाणुम्हि जो जहण्णेणवट्ठिदो अणुभागो तस्स अविभागपडिच्छेदा त्ति सण्णा । ठाणम्हि जहण्णेणवट्ठिद अणुभागस्स अविभागपडिच्छेदसण्णा णत्थि, तत्थ णिव्विअप्पत्ताभावादो । पुणो एदेण अविभागपडिच्छेदपमाणेण जहण्णाणुभागट्ठाणे कदे सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्ता अविभागपडिच्छेदा होंति ।

एत्थ ताव दव्वट्ठियणयमस्सिदूण जं जहण्णट्ठाणं तस्साविभागपडिच्छेदाणमवट्ठाणक्कमो उच्चदे । तं जहा– णइगमणयमस्सिदूण जं जहण्णाणुभागट्ठाणं तस्स सव्वपरमाणुपुंजं एक्कदो कादूण ट्ठविय तत्थ सव्वमंदाणुभागपरमाणुं घेत्तूण वण्ण-गंध-रसे मोत्तूण पासं चेव बुद्धीए घेत्तूण तस्स पण्णाच्छेदो कायव्वो जाव विभागवज्जिदपरिच्छेदो त्ति । तस्स अंतिमस्स खंडस्स अछेज्जस्स अविभागपडिच्छेद इदि सण्णा । पुणो तेण पमा-

---

क्योंकि, उसके महान् होनेपर प्रकृतिके कार्य रूप अज्ञानादिकी वृद्धि देखी जाती है । इस कारण प्रकृति अनुभाग नहीं हो सकती, ऐसा यहाँ जानना चाहिये ।

शंका–– परस्पर स्पर्शके हेतुभूत गुणको यदि अनुभाग स्वीकार किया जाता है तो उदयावलिमें स्थित प्रदेशाग्रोंके उत्कृष्ट अनुभागके अभावका प्रसंग आता है ?

समाधान–– ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, स्थितिके क्षयसे परस्पर स्पर्शका अभाव होता है, ऐसा नियम नहीं बनता ।

एक परमाणुमें जो जघन्यरूपसे अवस्थित अनुभाग है उसकी अविभागप्रतिच्छेद संज्ञा है । स्थानमें जघन्यरूपसे अवस्थित अनुभागकी अविभागप्रतिच्छेद संज्ञा नहीं है, क्योंकि वहाँ निर्विकल्परूपता नहीं उपलब्ध होती । अब इस अविभागप्रतिच्छेदके प्रमाणसे जघन्य अनुभाग–स्थानका विभाग करनेपर वहाँ सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद होते हैं ।

यहाँ सर्व प्रथम द्रव्यार्थिक नयका आश्रय करके जो जघन्य स्थान है उसके अविभाग–प्रतिच्छेदोंके अवस्थानक्रमको कहते हैं । यथा– नैगमनयका आश्रय करके जो जघन्य अनुभाग–स्थान है उसके सब परमाणुओंके समूहको एकत्रित करके स्थापित करे । फिर उनमेंसे सर्वमन्द अनुभागसे संयुक्त परमाणुको ग्रहण करके वर्ण, गन्ध और रसको छोड़कर केवल स्पर्शका ही बुद्धिसे ग्रहण कर उसका विभाग रहित छेद होने तक प्रज्ञाके द्वारा छेद करना चाहिये । उस नहीं छेदने योग्य अन्तिम खण्डकी अविभागप्रतिच्छेद संज्ञा है । पश्चात् उक्त प्रमाणसे सब स्पर्श–

अ-आप्रत्योः ' वड्ढीदो ', ताप्रतौ ' वड्ढिदो ' इति पाठः । अप्रतौ ' ठाणम्हि जेण वड्ढि ', आ-ता-प्रत्योः ' ठाणम्हि जहण्णेण वड्ढिद ' इति पाठः । ताप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः ' वग्गो गंध रसे ' इति पाठः । ताप्रतौ ' पण्ण ' इति पाठः । आप्रतौ ' जाव विभागपडिछेदो ' इति पाठः ।

णेण सव्वापासखंडेसु खंडिदेसु सव्वजीवेहि अणंतागुणा-सव्वगासपदेसेहि वि अणंतगुणा अविभागपडिच्छेदा लब्भंति । तेसिं सव्वेसिं पि वग्ग इदि सण्णा । सो च संदिट्ठीए अणंतो वि संतो अट्ठ इदि घेत्तव्वो (८) । पुणो तम्हि चेव परमाणुपुंजम्हि तस्सरिस-विदियपरमाणुं घेत्तूण तप्पासस्स पुव्वं व पण्णच्छेदणए कदे एत्थ वि तत्तिया चेव अविभागपडिच्छेदा लब्भंति । अछेज्जस्स परमाणुस्स कधं छेदो कीरदे ? ण एस दोसो, तस्स दव्वमेव अछेज्जं, ण गुणा इदि अब्भुवगमादो । परमाणुगुणाणं वड्ढि-हाणीए संतीए परमाणुत्तं कधं ण विरुज्झदे ? ण दव्वट्ठियणयं पडुच्च तस्स परमाणुत्तब्भु-वगमादो । एसो विदियो वग्गो अणंतो वि संतो संदिट्ठीए अट्ठसंखो पुव्विल्लवग्गपासे ट्ठवेयव्वो (८ ८) । एदेण कमेण गुणेण पुव्विल्लपरमाणुसरिसएगेगपरमाणुं घेत्तूण तेसिं तेसिं गहिदपरमाणूणं पासस्स अविभागपडिच्छेदे कदे एगेगो वग्गो उप्पज्जदि । एवं ताव कादव्वं जाव जहण्णगुणपरमाणू सव्वे णिट्ठिदा त्ति । एवं कदे अभवसिद्धिएहि अणंत-गुणा सिद्धाणमणंतभागमेत्ता वग्गा लद्धा भवंति । तेसिं पमाणं संदिट्ठीए एवं (८ ८ ८ ८) । एदेसिं सव्वेसिं पि दव्वट्ठियणए अवलंबिदे वग्गणा इदि सण्णा ।

खंडोंके खण्डित करनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद प्राप्त होते है । उन सभीकी वर्ग यह संज्ञा है । उसका प्रमाण अनन्त होकर भी संदृष्टिमें आठ (८) ऐसा ग्रहण करना चाहिए । पुनः उसी परमाणुपुंजमेंसे उसके सदृश दूसरे परमाणुको ग्रहण कर उसके स्पर्शके पहिलेके समान प्रज्ञाके द्वारा च्छेद करनेपर यहाँ भी उतने ही अविभागप्रतिच्छेद उपलब्ध होते हैं । See पु. १४ पृ. ५८

शंका– नहीं छिदने योग्य परमाणुका छेद कैसे किया जा सकता है?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उसका केवल द्रव्य ही अच्छेद्य है, गुण नहीं ऐसा स्वीकार किया गया है ।

शंका– परमाणुके गुणोंमें वृद्धि एवं हानि होनेपर उसका परमाणुपना कैसे विरोधको नहीं प्राप्त होगा ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, द्रव्यकी अपेक्षा वृद्धि व हानिके अभावका आश्रय लेकर उसका परमाणुपना स्वीकार किया गया है ।

यह द्वितीय वर्ग अनन्त होता हुआ भी संदृष्टिमें आठ संख्या रूप है। इसे पूर्व वर्गके पासमें स्थापित करना चाहिये । ८८ । इस क्रमसे गुणकी अपेक्षा पूर्व परमाणुके सदृश एक एक परमाणुको लेकर उन ग्रहण किये गये परमाणुओंमें स्थित स्पर्शके अविभागप्रतिच्छेद करनेपर एक एक वर्ग उत्पन्न होता है । इस क्रियाको जघन्य गुणवाले सब परमाणुओंके समाप्त होने तक करना चाहिये । ऐसा करनेपर अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग प्रमाण वर्ग प्राप्त होते है । उनका प्रमाण संदृष्टिमें इस प्रकार है ८ ८ ८ ८ । इन सबोंकी द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर 'वर्गणा' संज्ञा है । पु. १० पृ. ५

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कधं वग्गाणं वग्गणा इदि ववएसो ? ण, वग्ग-वग्गणाणं भेदोवलंभादो । वग्गाणं समूहो वग्गणा, तेसिं चेव असमूहो वग्गो । वग्गणा एगा, वग्गा अणंता । तम्हा ण तेसिमेयत्तमिदि । जदि पुण वग्गेहिंतो वग्गणाए अभेदो विवक्खिज्जदे तो वग्गणाओ वि अणंताओ चेव, वग्गभेदेण तदभिण्णवग्गणाए वि भेदुवलंभादो । तम्हा एगा वि वग्गणा होदि वग्गमेत्ता वि, णत्थि एत्थ एयंतो । तत्थ दव्वट्ठियणयावलंबणाए एसा एया वग्गणा त्ति पज्जवट्ठियणयावलंबणाए एदाओ अणंताओ वग्गणाओ त्ति वा पुध ट्ठवेदव्वं । एवं ठविय पुणो अण्णं परमाणुं पुव्विल्लपुंजादो घेत्तूण पण्णच्छेदणाए कदे संपहि पुव्विल्लपुंजादो एग* परमाणुअविभागपडिच्छेदेहिंतो एगाविभागपडिच्छेदेण अहिओ लब्भदि (१) त्ति एसो चेव एत्थ वग्गो त्ति पुध ट्ठवेदव्वो । पुणो एदेण कमेण तस्सरिसमेगेगपरमाणुं घेत्तूण तप्पडिच्छेदं कादूण अणंता वग्गणा उप्पादेदव्वा जाव तस्सरिसपरमाणू सव्वे णिट्ठिदा* त्ति । तेसिं पामणमेदं (९९९) एत्थ वि पुव्वं व एसा वग्गणा एया अणंता त्ति वा वत्तव्वं । एयत्तं मोत्तूण अणंतत्तं ण प्पसिद्धमिदि चे ? एयत्तं कत्थ ण सिद्धं(२) ? पाहुडचुण्णिसुत्ते सुपसिद्धं, लोगपूरणाए एया वग्गणा जोगस्स(३) इति भणिदत्तादो । वग्गणावियप्पो

शंका– वर्गोंकी वर्गणा संज्ञा कैसे हो सकती है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, वर्ग और वर्गणामें भेद उपलब्ध होता है । वर्गोंके समूहका नाम वर्गणा है और उन्हींके असमूहका नाम वर्ग है । वर्गणा एक होती है, परन्तु वर्ग अनन्त होते हैं । इस कारण ये दोनों एक नहीं हो सकते ।

पु.५५० परन्तु यदि वर्गोंसे वर्गणाका अभेद कहना चाहते हैं तो वर्गणायें भी अनन्त ही होंगी, क्योंकि, वर्गोंके भेदसे उनसे अभिन्न वर्गणाका भी भेद पाया जाता है । इसलिये वर्गणा एक भी होती है और वर्गोंके बराबर भी इस विषयमें कोई एकान्त नहीं है । द्रव्यार्थिक नयका अवलंबन करनेपर यह एक वर्गणा है और पर्यायार्थिक नयका अवलंबन करनेपर ये अनन्त वर्गणायें हैं । इसलिए इसको पृथक् स्थापित करना चाहिये । इस प्रकार स्थापित करके पुनः पूर्ववत् पुंजमेंसे अन्य परमाणुको ग्रहण कर बुद्धिसे छेद करनेपर अब पूर्वोक्त पुंजसे एक परमाणुके अविभागप्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा इसमें एक अधिक अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं । १ । यह यहांपर वर्ग है, अतः उसे पृथक् स्थापित करना चाहिये । पुनः इस क्रमसे तन्मात्र एक एक परमाणुको ग्रहण कर तथा उस एक एक परमाणुके प्रतिच्छेद करके उसके सदृश सब परमाणुओंके समाप्त होने तक अनन्त वर्गोंको उत्पन्न करना चाहिये । उनका प्रमाण यह है । ९९९ । यहां भी पहिलेके ही समान यह वर्गणा एक भी है अथवा अनन्त भी है, ऐसा कहना चाहिये ।

शंका– वर्गणाकी एक संख्याको छोड़कर अनन्तता प्रसिद्ध नहीं है ?

पु.५५१ प्रतिशंका– उसकी एकता कहां प्रसिद्ध है ?

प्रतिशंकाका समाधान– वह कषायप्राभृतके चूर्णिसूत्रमें प्रसिद्ध है, क्योंकि वहां ' लोकपूरण

---

* अ-आप्रत्योः ' एगा ' इति पाठः । * अ-आप्रत्योः ' णेट्ठिदा ' इति पाठः ।

(१) लोगो पुण्णे एक्का वग्गणा जोगस्स त्ति समजोगो त्ति णादव्वो । जयध. १२३९.

(२) ता-प्रतौ अ-आ-काप्रतिषु ' कथ सिद्धं ' इति पाठः ।

एगवियप्पो जोगो सव्वजीवपदेसाणं जादो त्ति उत्तं होदि? ण एस दोसो, एक्किस्से वग्गणाए कत्थ वि अणेयववहारुवलंभादो। तं कधं णव्वदे? एगपदेसियवग्गणा केवडिया? अणंता, दुपदेसियवग्गणा अणंता, इच्चादिवग्गणवक्खाणादो णव्वदे। ण हि ॐवक्खाणमप्पमाणं, चुण्णिसुत्तस्स विवक्खाणत्तणेण॑ समाणस्स अप्पमाणत्तप्पसंगादो। पुणो एदमुक्खविय॒ पढमवग्गणाए उवरि दुविदे बिदियवग्गणा होदि। एवं तदिय-चउत्थ-पंचमादियग्गणाओ अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण उवरि उवरि वड्ढमाणाओ॑ उप्पादेदव्वाओ जाव अभव्वसिद्धिएहि अणंतगुण सिद्धाणमणंतभागमेत्तवग्गणाओ उप्पण्णाओ त्ति। पुणो एत्तियमेत्तवग्गणाओ घेत्तूण जहण्णट्ठाणस्स एगं जहण्णफद्दयं होदि।

कधं फद्दयसण्णा? [कमेण स्पर्द्धते वर्द्धत इति स्पर्द्धकम्] एदस्स कधमेयत्तं ?

अवस्थामें योगकी एक वर्गणा होती है, ऐसा कहा गया है। लोकपूरणसमुद्घातके होनेपर समस्त जीवप्रदेशोंमें एक विवक्षित क्षयोपशमके होनेसे वर्गणा एक होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंकाका समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, एक वर्गणामें कहींपर अनेकत्वका भी व्यवहार उपलब्ध होता है।

शंका– वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– एक प्रदेशवाली वर्गणा कितनी हैं ? अनन्त हैं। दो प्रदेशवाली वर्गणा अनन्त हैं, इत्यादि वर्गणा व्याख्यानसे जाना जाता है। यदि कहा जाय कि यह वर्गणाव्याख्यान अप्रमाण है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, व्याख्यान रूपसे चूर्णिसूत्र भी समान है इसलिए उसकी भी अप्रमाणकताका प्रसंग आता है।

पुनः इसको उठाकर प्रथम वर्गणाके आगे रखनेपर द्वितीय वर्गणा होती है। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक अविभागप्रतिच्छेदकी अधिकताके क्रमसे आगे आगे अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र वर्गणाओंके उत्पन्न होने तक तृतीय, चतुर्थ व पंचम आदि वर्गणाओंको उत्पन्न कराना चाहिये। इतनी मात्र वर्गणाओंको ग्रहण कर जघन्य स्थानका एक स्पर्द्धक होता है।

शंका– स्पर्द्धक संज्ञा कैसे है ?

समाधान– क्रमसे जो स्पर्धा करता है अर्थात् बढ़ता है वह स्पर्द्धक है।

शंका– वह एक कैसे है ?

ॐ 'प्रतिषु' 'ण वि वक्खाण–' इति पाठः। ॐ ताप्रतौ 'विवक्खाणत्तणेण' इति पाठः। ॒ ताप्रतौ 'एदमक्खिविय' इति पाठः। ॑ अ-आप्रत्योः 'वड्ढमाणीए', ताप्रतौ 'वड्ढमाणीए' (ओ) इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अंतरिदूण वड्ढीए अणुवलंभादो । पढमवग्गणाविभागपडिच्छेदसमूहादो विदियवग्गणाविभागपडिच्छेदसमूहो अणंतेहि अविभागपडिच्छेदेहि ऊणो, विदियादो* तदियो वि तत्तो विसेसाहिएहिंतो ऊणो त्ति फड्डयत्तं ण जुज्जदे, कमवड्ढीए कमहाणीए वा अभावादो ? ण, भावविहाणे अप्पहाणीकयसमाणधणपरमाणुपुंजे एगोलीवड्ढिं मोत्तूण णाणोलिवड्ढि-हाणिग्गहणाभावादो । ण च एगोलीए कमवड्ढी णत्थि, उवलंभादो । किमट्ठं भावविहाणे समाणधणपरमाणुविवक्खा ण कीरदे ? बंधाणुभागखंडयघादेहि विणा उक्कड्डुण-ओकड्डुणाहि वड्ढि-हाणीयो ण होंति त्ति जाणावणट्ठं । तं पि किमट्ठं जाणाविज्जदे ? एगपरमाणुम्हि ट्ठिदाणुभागस्स ट्ठाणत्तब्भुवायणट्ठं । ण भिण्णपरमाणुट्ठिदअणुभागो ट्ठाणं, एक्कम्हि चेव अणुभागट्ठाणे अणंतट्ठाणत्तप्पसंगादो । ण जोगट्ठाणेण वियहिचारो, एयदव्वसत्तीए एयत्तं पडि विरोहाभावादो । ण जीवपदेसभेदेण भेदो,

---

समाधान– क्योंकि उसमें अन्तर देकर वृद्धि नहीं उपलब्ध होती, अतः वह एक है ।

शंका– चूंकि प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके समूहसे द्वितीय वर्गणाके अविभाग-प्रतिच्छेदोंका समूह अनन्त अविभाग प्रतिच्छेद हीन है तथा द्वितीयकी अपेक्षा तृतीय भी उनसे विशेष अधिक अविभागप्रतिच्छेद हीन है इसलिए पूर्वोक्त स्पर्द्धकका स्वरूप नहीं बनता, क्योंकि, उसमें क्रमवृद्धि अथवा क्रमहानिका अभाव है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, समान धनवाले परमाणुपुंजको अप्रधान करनेवाले भावविधान अनुयोग द्वारमें एक श्रेणिवृद्धिको छोड़कर नानाश्रेणिरूप वृद्धि व हानिका ग्रहण नहीं किया गया है और एक श्रेणिसे क्रमवृद्धि न हो, ऐसा भी नहीं है, क्योंकि वह पाई जाती है ।

शंका– भावविधान अनुयोगद्वारमें समान धनवाले परमाणुओंकी विवक्षा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान– बन्धानुभाग की काण्डकघातोंके बिना उत्कर्षण और अपकर्षणके द्वारा वृद्धि व हानि नहीं होती, इस बातके ज्ञापनार्थ वहां समान धनवाले परमाणुओंकी विवक्षा नहीं की गई है ।

शंका– उसका ज्ञापन किसलिये कराया जा रहा है ?

समाधान– एक परमाणुमें स्थित अनुभागकी स्थानरूपता बतलानेके लिये उसका ज्ञापन कराया जा रहा है । भिन्न परमाणुओंमें स्थित अनुभाग स्थान नहीं हो सकता, क्योंकि, इस प्रकारसे एक ही अनुभागस्थान में अनन्त स्थानरूपताका प्रसंग आता है । यदि कहा जाय कि इस प्रकारसे योगस्थानके साथ व्यभिचार होना सम्भव है, तो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, एक द्रव्य शक्तिमें योगस्थानकी एकतामें कोई विरोध नहीं है । जीवप्रदेशोंके भेदसे भी स्थानभेद होना सम्भव नहीं है, क्योंकि, अवयवोंके भेदसे द्रव्यभेद असम्भव है ।

योगस्थान एक जीव के ही प्रदेशों में होते हैं। अतः वे एक जीव द्रव्य की शक्ति है। परमाणु भिन्न-२ द्रव्य है। अतः भिन्न-२ शक्ति द्रव्य की शक्ति नहीं हो सकती है।

* अप्रतौ ' विदियादो तदियादो तत्तो ' इति पाठः ।

अवयवभेदेण दव्वभेदाभावादो । कम्मपरमाणूणं पि खंडभावेण ट्ठिदाणमेगत्तमत्थि त्ति समाणधणाणं✱ पि गहणं किण्ण कीरदे? ण, दव्वभावेण एयत्ताभावादो । भावे वा ण भेदो होज्ज, एयत्तादो जीवगास-धम्मत्थियादीणं व । अण्णं च, फद्दयपरूवणा एगोलिं चेव अस्सिदूण ट्ठिदा, अण्णहा जोगट्ठाणे फद्दयाणमभावप्पसंगादो । ण च एवं, जोगट्ठाणे सुत्तप्पसिद्धफद्दयपरूवणुवलंभादो । ण च एवं घेप्पमाणे अणंताहि वग्गणाहि एगं फद्दयं होदि त्ति एदं विरुज्झदे, एक्कस्स वि वग्गस्स दव्वट्ठियणयादो वग्गणत्त-सिद्धीदो । भिण्णदव्वट्ठिदो त्ति अणुभागस्स जदि ण एयत्तं वुच्चदे, ण एगोली वि फद्दयं, भिण्णदव्वउत्तीए भेदाभावादो? ण एस दोसो, कमेण एगोलीए ✲वट्ठिदस-व्वाविभागपडिच्छेदाणमेक्कम्हि चरिमपरमाणुम्हि उवलंभादो । ण च भिण्णदव्वउ-त्तिअविभागपडिच्छेदाणं फद्दयत्तं, तेसिं चरिमपरमाणुम्हि संताणं गहणे पुणरुत्तदोस-प्पसंगादो भिण्णदव्वउत्तीणमेयत्तविरोहादो वा । जदि एवं तो एगणाणोलीपदेसरचणा

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शंका– खण्ड स्वरूपसे स्थित कर्मपरमाणुओंमें चूंकि एकरूपता विद्यमान है, अतएव समान धनवाले उनका भी ग्रहण क्यों नहीं करते ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उनमें द्रव्य स्वरूपसे एकता नहीं है । यदि उनमें द्रव्य स्वरूपसे एकता मानी जाय तो फिर भेद होना अशक्य है, क्योंकि, उनमें द्रव्य स्वरूपसे एकता है, जैसे जीव आकाश व धर्म अस्तिकाय । दूसरे, स्पर्द्धकप्ररूपणा एक श्रेणिका ही आश्रय करके स्थित है, क्योंकि, इसके बिना योगस्थानमें स्पर्द्धकोंके अभावका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, योगस्थानमें सूत्रप्रसिद्ध स्पर्द्धकप्ररूपणा पायी जाती है । यदि कहा जाय कि ऐसा स्वीकार करनेपर 'अनन्त वर्गणाओंसे एक स्पर्द्धक होता है' यह कथन विरोधको प्राप्त होगा, सो भी नहीं है, क्योंकि, एक वर्गके भी द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा वर्गणात्व सिद्ध है । स्पो. ३/४ नहीं है ।

शंका– भिन्न द्रव्य में रहनेके कारण यदि अनुभागकी एकता स्वीकार नहीं की जाती है तो फिर एक श्रेणिको भी स्पर्द्धक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, भिन्नद्रव्यवृत्तित्वकी अपेक्षा उसमें कोई भेद नहीं है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, क्रमशः एक श्रेणिरूपसे अवस्थित समस्त अविभागप्रतिच्छेद एक अंतिम परमाणुमें पाये जाते हैं । भिन्न द्रव्यमें रहनेवाले अविभागप्रति-च्छेदोंके स्पर्द्धकरूपता सम्भव भी नहीं है, क्योंकि, अन्तिम परमाणुमें रहनेवाले उक्त अविभाग-प्रतिच्छेदोंको ग्रहण करनेपर पुनरुक्त दोषका प्रसंग आता है, अथवा भिन्न द्रव्यमें रहनेवाले अविभागप्रतिच्छेदोंके एक होनेका विरोध है ।

शंका- यदि ऐसा है तो एक व नानाश्रेणि स्वरूपसे प्रदेशरचना प्ररूपणा किसलिये की जाती है?

✱ अ-आप्रत्योः 'समाणधाणाणं' इति पाठः । ✲ ताप्रतौ 'वट्ठिद' इति पाठः ।

परूवणा किमट्ठं कीरदे ? ण, एदस्सेव अणुभागफद्दयस्स एगपरमाणुम्हि अवट्ठिदस्स ㊀अविणाभावीणमणुभागपदेसाणं परूवणदुवारेण तप्परूवणत्तादो । ण च अणिच्छिदवविरेगस्स अण्णए णिच्छओ अत्थि, अण्णत्थ तहाणुवलंभादो ।

पुणो एवं पढमफद्दयं पुध ट्ठविय पुव्विल्लपुंजम्मि एगपरमाणुं घेत्तूण पण्णच्छेदणए कदे सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तअविभागपडिच्छेदेहि* अंतरिदूण विदियफद्दयस्स अण्णो वग्गो उप्पज्जदि । संदिट्ठीए तस्स पमाणमेदं (१६) । एदेण कमेण अभवसिद्धिएहि* अणंतगुणे सिद्धाणमणंतभागमेत्ते समाणघणपरमाणू घेत्तूण परमाणुमेत्तवग्गेसु उप्पाइदेसु विदियफद्दयस्स आदिवग्गणा होदि । एवं पढमफद्दयचरिमवग्गणाए उवरि अंतरमुल्लंघिय ठवेदव्वं । एदेण कमेण वग्ग-वग्गणाओ फद्दयाणि जाणिदूण उप्पादेदव्वाणि जाव पुव्विल्लपरमाणुपुंजो समत्तो त्ति । एवं फद्दयरचणाए कदाए अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाणि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताणि फद्दयाणि वग्गणाओ च उप्पण्णाणि हवंति । एत्थ चरिमफद्दयचरिमवग्गणाए एगपरमाणुम्हि ट्ठिदिअणुभागो जहण्णट्ठाणं* ।

समाधान— नहीं, क्योंकि, एक परमाणुमें अवस्थित इसी अनुभाग स्पर्द्धकके अविनाभावी अनुभाग प्रदेशोंकी प्ररूपणा द्वारा उक्त रचनाकी प्ररूपणा की गई है । दूसरे, जिसके व्यतिरेकका निश्चय नहीं है उसके अन्वयके विषयमें निश्चय नहीं हो सकता; क्योंकि, अन्यत्र वैसा पाया नहीं जाता ।

इस प्रथम स्पर्द्धकको पृथक् स्थापित करके पूर्वोक्त परमाणुपुंजमेंसे एक परमाणुको ग्रहण कर बुद्धिसे छेद करनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणे मात्र अविभागप्रतिच्छेदोंके द्वारा अन्तर करके द्वितीय स्पर्द्धकका अन्य वर्ग उत्पन्न होता है । संदृष्टिमें इसका प्रमाण यह है—१६ । इस क्रमसे अभव्यसिद्धिकोंसे अनन्तगुणे व सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र समान धनवाले परमाणुओंको ग्रहण करके परमाणु प्रमाण वर्गोंके उत्पन्न करानेपर द्वितीय स्पर्द्धककी प्रथम वर्गणा होती है । इसे प्रथम स्पर्द्धककी अन्तिम वर्गणाके ऊपर अन्तरको लाँघ कर स्थापित करना चाहिये । इस क्रमसे वर्ग, वर्गणाओं और स्पर्द्धकोंको जानकर पूर्वोक्त परमाणुपुंजके समाप्त होने तक उत्पन्न कराना चाहिये । इस प्रकार स्पर्द्धक रचनाके किये जानेपर अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र स्पर्द्धक व वर्गणायें उत्पन्न होती हैं । यहां अन्तिम स्पर्द्धककी अन्तिम वर्गणा सम्बन्धी एक परमाणुमें स्थित अनुभाग जघन्य स्थान रूप है ।

㊀ ताप्रतौ ' अविणाभावीण ' इति पाठः ।
* अ-आप्रत्योः ' अविभागवडिच्छेदेहि ' इति पाठः ।
* प्रतिषु ' भवसिद्धिएहि ' इति पाठः ।
* अणुभागट्ठाणं णाम चरिमफद्दयचरिमवग्गणाए एगपरमाणुम्मि ट्ठिदअणुभागाविभागपडिच्छेदकलावो । जयध. अ. प. ३५९.

एत्थ एसा संदिट्ठी--

०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	
११	१९	२७	३५	४३	५१
१०१०	१८	२६	३४	४२	५०
९९९९	१७	२५	३३	४१	४९
[illegible]	१६	२४	३२	४०	४८

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सो च सव्वजीवेहि अणंतगुणो । एवमेकट्ठाणे वग्गणाओ फद्दयाणि च ठविय अविभागपडिच्छेदपरूवणं कस्सामो । सा च अविभागपडिच्छेदपरूवणा तिविहा-- वग्गणपरूवणा फद्दयपरूवणा अंतरपरूवणा चेदि । अविभागपडिच्छेदपरूवणाए सह चउव्विहा परूवणा किण्ण उत्ता ? ण, अणवगयाणं अविभागपडिच्छेदाणमाधारत्तं विरुज्झदि त्ति कट्टु अविभागपडिच्छेदपरूवणाए पुव्वं चेव कदत्तादो । तत्थ वग्गण-परूवणा तिविहा- परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेदि । तत्थ परूवणा सुगमा, अविभाग-पडिच्छेदपरूवणादो चेव वग्गणसण्णिदअविभागपडिच्छेदाणमत्थित्तसिद्धीदो ।

यहाँ यह संदृष्टि है-- (मूलमें देखिये) ।

वह सब जीवोंसे अनन्तगुणा है । इस प्रकार एक स्थानमें वर्गणाओं और स्पर्द्धकोंको स्थापित करके अविभागप्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा करते हैं-- वह अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा तीन प्रकारकी है-- वर्गणाप्ररूपणा, स्पर्द्धकप्ररूपणा और अन्तरप्ररूपणा ।

शंका- अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणाके साथ वह चार प्रकारकी प्ररूपणा क्यों नहीं कही गई है?

समाधान- नहीं, क्योंकि, अविभागप्रतिच्छेदोंके अज्ञात होनेपर उनके आधारका कथन करना विरोधको प्राप्त होता है, ऐसा मानकर अविभागप्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा पहिले ही कर आये हैं ।

उनमेंसे वर्गप्ररूपणा तीन प्रकारकी है-- प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व । इनमेंसे प्ररूपणा सुगम है, क्योंकि, अविभागप्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा करनेसे ही वर्गणा संज्ञावाले अवि-भाग प्रतिच्छेदोंका अस्तित्व सिद्ध होता है ।

अ-आप्रत्योः [१९९]

तत्थ पमाणं उच्चदे । तं जहा– अणंताओ वग्गणाओ अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाओ सिद्धाणमणंतभागमेत्ताओ । पमाणपरूवणा गदा।

अप्पाबहुगं उच्चदे । सव्वत्थोवा जहण्णियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा उक्कस्सियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा। को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो। कुदो ? चरिमसमयसुहुमसम्पराइयजहण्णबंधग्गहणादो तत्थावट्ठिदफद्दयंतरुवलंभादो। अजहण्ण-अणुक्कस्सवग्गणाविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा । को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो। एसा परूवणा एगोलिमस्सिदूण कदा, अण्णहा उक्कस्सियवग्गणादो अजहण्ण-अणुक्कस्सवग्गणाए अणंतगुणत्ताणुववत्तीदो ।

संपहि फद्दयपरूवणा वि तिविहा–परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेदि । परूवणा सुगमा, अविभागपडिच्छेदपरूवणाए चेव परूविदत्तादो । संपहि फद्दयाणं पमाणं उच्चदे--अणंताहि वग्गणाहि सव्वत्थ अवट्ठिदसंखाहि एगं फद्दयं होदि । ताणि च जहण्णबंधट्ठाणे अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाणि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताणि । पमाणं गदं ।

अप्पाबहुगं उच्चदे - सव्वत्थोवा जहण्णफद्दयअविभागपडिच्छेदा । उक्कस्सफद्दयाविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा । अजहण्ण-अणुक्कस्सफद्दयाणमविभागपडिच्छेदा अणंत-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अब प्रमाणका कथन करते हैं । यथा वर्गणाएं अनन्त हैं जो अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी हैं और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र हैं । प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अब अल्पबहुत्व कहते हैं–जघन्य वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद सबसे स्तोक है। उनसे उत्कृष्ट वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं। गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र गुणकार है । कारण कि यहां अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके जघन्य बन्धका ग्रहण करनेसे वहां अवस्थित स्पर्द्धकका अन्तर उपलब्ध होता है। उनसे अजघन्य-अनुत्कृष्ट वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं। गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र गुणकार है। यह प्ररूपणा एक श्रेणिका आश्रय करके की गई है, क्योंकि इसके बिना उत्कृष्ट वर्गणाकी अपेक्षा अजघन्यअनुत्कृष्ट वर्गणामें अनन्तगुणत्व नहीं बन सकता ।

स्पर्द्धकप्ररूपणा भी तीन प्रकारकी है । प्ररूपणा प्रमाण और अल्पबहुत्व । प्ररूपणा सुगम है क्योंकि अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणासे ही उसकी प्ररूपणा हो जाती है। अब स्पर्द्धकोंका प्रमाण कहते हैं । सर्वत्र अवस्थित संख्यावाली अनन्त वर्गणाओंसे एक स्पर्द्धक होता है । वे जघन्य बन्धस्थानमें अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे व सिद्धों के अनन्तवें भाग मात्र होते हैं । प्रमाण समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्व कहते है- जघन्य स्पर्द्धक के अविभागप्रतिच्छेद सबसे स्तोक हैं ।उनसे उत्कृष्ट स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं । उनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्पर्द्धकोंके अविभागप्रतिच्छेद

गुणा। को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो। फद्दय-परूवणा गदा।

अंतरपरूवणा तिविहा-- परूवणा पमाणमप्पाबहुअं चेदि। परूवणा सुगमा, बहुफद्दयपरूवणादो चेव अंतरस्स अत्थित्तसिद्धीदो। ण च अंतरेण विणा विदियादि-फद्दयाणं संभवो, विरोहादो।

पमाणं वुच्चदे- सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तेहि अविभागपडिच्छेदेहि एगेगं फद्दयंतरं होदि। पमाणपरूवणा गदा। अप्पाबहुअं णत्थि, जहण्णट्ठाणसव्वफद्दयाणं सारिसत्तुवलंभादो।

संपहि अविभागपडिच्छेदाधारपरमाणू वि अविभागपडिच्छेदा भण्णंति* आधारे आधेयोवयारादो। तदो पदेसपरूवणा वि अविभागपडिच्छेदपरूवणा त्ति कट्टु एत्थ जहण्णट्ठाणे पदेसपरूवणं कस्सामो। तं जहा- एत्थ छ अणुयोगद्दाराणि-परूवणा पमाणं सेडी अवहारो भागाभागमप्पाबहुगं चेदि। बेसदछप्पण्णमादिं कादूण जाव णव इत्ति संदिट्ठीए ट्ठविय एदिस्से उवरि बालजणाणुग्गहट्ठं छ अणुयोगद्दाराणि भणिस्सामो- जहण्णियाए वग्गणाए णिसित्ता अत्थि कम्मपदेसा। विदियाए वग्गणाए णिसित्ता अत्थि

अनन्तगुण हैं। गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र गुणकार हैं। स्पर्द्धकप्ररूपणा समाप्त हुई।

अन्तरप्ररूपणा तीन प्रकारकी है-- प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। प्ररूपणा सुगम है, क्योंकि बहुत्व स्पर्द्धकोंकी प्ररूपणासे ही अन्तरका अस्तित्व सिद्ध होता है। अन्तरके बिना द्वितीय आदि स्पर्द्धकोंकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेमें विरोध आता है।

प्रमाण कहते हैं-- सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेदोंसे एक एक स्पर्द्धकका अन्तर होता है। प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई। अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, जघन्य स्थानके सब स्पर्द्धक समान पाये जाते हैं।

अब आधारमें आधेयका उपचार करनेसे अविभागप्रतिच्छेदोंके आधारभूत परमाणु भी अविभागप्रतिच्छेद कहे जाते हैं। इसलिये प्रदेशप्ररूपणाको भी अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा मानकर यहाँ जघन्य स्थानमें प्रदेशप्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है-- यहाँ छह अनुयोगद्वार हैं-- प्ररूपणा, प्रमाण, श्रेणि, अवहार, भागाभाग और अल्पबहुत्व। दो सौ छप्पनसे लेकर नौ तक संदृष्टिमें स्थापित कर इसके ऊपर अज्ञानी जनोंके अनुग्रहार्थ छह अनुयोगद्वारोंको कहते हैं-- जघन्य वर्गणामें दिये गये कर्मप्रदेश हैं। द्वितीय वर्गणामें दिये गये कर्मप्रदेश हैं। इस प्रकार

अ-आप्रत्योः 'फद्दयंतराणं' इति पाठः। अप्रतौ 'वि' इति पदं नास्ति।

आ-ताप्रत्योः 'भणंति' इति पाठः। 'अविभागपडिच्छेदा भण्णंति आधारे आधेयोवयारादो। तदो पदेसपरूवणा वि अविभाग' इत्येतावानयं पाठस्ता-मप्रत्योः पुनरनुपलभ्यते। ३

कम्मपदेसा । एवं णेदव्वं जाव उक्कस्सिया वग्गणा त्ति । परूवणा गदा ।

जहण्णियाए वग्गणाए णिसित्ता कम्मपदेसा अणंता अभवसिद्धिएहि अणंतगुणा सिद्धाणमणंतभागमेत्ता । एवं णेयव्वं जाव उक्कस्सिया वग्गणा त्ति । पमाणपरूवणा गदा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सेडिपरूवणा दुविहा- अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा चेदि । अणंतरोवणिधाए जहण्णियाए वग्गणाए कम्मपदेसा बहुगा । विदियाए वग्गणाए कम्मपदेसा विसेसहीणा । एवं विसेसहीणा[१] विसेसहीणा जाव उक्कस्सिया वग्गणा त्ति । विसेसो पुण अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । एदस्सवडिभागो वि अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । सो वि तिविहो- अवट्ठिदभागहारो रूवूणभागहारो छेदभागहारो चेदि । एदेहि तीहि भागहारेहि अणंतरोवणिधा जाणिदूण परूवेदव्वा ।

परंपरोवणिधाए[२] जहण्णियाए वग्गणाए कम्मपदेसेहिंतो अभवसिद्धिएहि अणंतगुणं-सिद्धाणमणंतभागमेत्तमद्धाणं गंतूण दुगुणहाणी होदि । एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा जाव-चरिमदुगुणहाणी त्ति । एत्थ दुगुणहाणिविहाणं भणिस्सामो । तं जहा[३]-अभवसिद्धिएहि अणंतगुण-सिद्धाणमणंतभागमेत्तणिसेगभागहारं[४] विरलेदूण जहण्णवग्गणपदेसेसु

उत्कृष्ट वर्गणा तक ले जाना चाहिये । प्ररूपणा समाप्त हुई ।

जघन्य वर्गणामें दिये गये कर्मप्रदेश अनन्त हैं जो अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे हैं और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र हैं । इस प्रकार उत्कृष्ट वर्गणा तक ले जाना चाहिये । प्रमाण-प्ररूपणा समाप्त हुई ।

श्रेणिप्ररूपणा दो प्रकारकी है-- अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा । अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा जघन्य वर्गणामें कर्मप्रदेश बहुत हैं । उनसे द्वितीय वर्गणामें कर्मप्रदेश विशेष हीन हैं । इस प्रकार उत्कृष्ट वर्गणा तक उत्तरोत्तर विशेषहीन हैं । विशेषका प्रमाण अभव्य-सिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र है । इसका प्रतिभाग भी अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र है । वह भी तीन प्रकारका है- अवस्थितभाग-हार, रूपोनभागहार और छेदभागहार । इन तीन भागहारों द्वारा अनन्तरोपनिधाको जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये ।

परम्परोपनिधाकी अपेक्षा जघन्य वर्गणाके कर्मप्रदेशोंकी अपेक्षा अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे व सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र स्थान जाकर दुगुणी हानि होती है । इस प्रकार अन्तिम दुगुणहानि तक उत्तरोत्तर दुगुने दुगुने हीन कर्मप्रदेश हैं । यहाँ दुगुणहानिका विधान कहते हैं । यथा-- अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र निषेकभागहार विरलन करके

---

[१] अ-ताप्रत्योः ' एवं विसेसहीणा जाव ' इति पाठः । [२] प्रतिषु ' अणंतरोवणिधाए जहण्णि' इति पाठः । [३] प्रतिषु ' तम्हा अभवसिद्धि-' इति पाठः । [४] अ-आप्रत्योः ' भेत्ता-णिसेग-', ताप्रतौ ' भेत्ताणि सेग ' इति पाठः ।

समखंडं कादूण दिण्णेसु विरलणरूवं पडि वग्गणविसेसपमाणं पावदि। पुणो एत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण जहण्णवग्गणाए अवणिदे बिदियवग्गणापमाणं होदि। एवमेगेगरूवधरिदमुप्पण्णुप्पण्णवग्गणाए अवणेदूण णेदव्वं जाव णिसेगभागहारस्स अद्धं गदं ति। तदित्थवग्गणाकम्मपदेसा पढमवग्गणकम्मपदेसेहिंतो दुगुणहीणा। पुणो एदं दुगुणहीणवग्गणकम्मपदेसपिंडमवट्ठिदभागहारस्स समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगवग्गणविसेसपमाणं पावदि। णवरि पढमगुणहाणिविसेसादो इमो विसेसो दुगुणहीणो अवट्ठिदभागहारेण पुव्वं विहत्तरासीए अद्धस्स च्छिज्जमाणस्स उवलंभादो।

एत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण बिदियगुणहाणिपढमवग्गणाए अवणिदे तिस्से चेव तदणंतरबिदियवग्गणपमाणं होदि। एवमेत्थ वि एगेगविसेसमवेदूण जाव अवट्ठिदभागहारस्स अद्धमेत्तविसेसा झीणा त्ति तत्थ दुगुणहाणी होदि। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाओ सिद्धाणमणंतभागमेत्ताओ दुगुणहाणीओ उप्पण्णाओ त्ति।

*एत्थ तिण्णि अणुयोगद्दाराणि-परूवणा पमाणप्पाबहुगं चेदि। परूवणा गदा, एगगुणहाणिट्ठाणंतरस्स णाणागुणहाणिट्ठाणंतराणं च परंपरोवणिधाए चेव अत्थित्तसिद्धीदो।

जघन्य वर्गणाके प्रदेशोंको समखण्ड करके देनेपर विरलन अंकके प्रति वर्गणाविशेषका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः इसमेंसे एक अंकके ऊपर रखी हुई राशिको ग्रहण कर जघन्य वर्गणामेंसे कम कर देनेपर द्वितीय वर्गणाका प्रमाण प्राप्त होता है। इस प्रकार एक एक अंकके ऊपर रखी हुई राशिको उत्पन्न-उत्पन्न (उत्तरोत्तर) वर्गणामेंसे कम करके निषेकभागहारका अर्ध भाग समाप्त होने तक ले जाना चाहिये। वहांकी वर्गणाके कर्मप्रदेश प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंकी अपेक्षा दुगुने हीन होते हैं। फिर इस दुगुने हीन वर्गणाके कर्म प्रदेशपिण्डको अवस्थित भागहारके समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक वर्गणाविशेषका प्रमाण प्राप्त होता है। विशेष इतना है कि प्रथम गुणहानिके विशेषसे यह विशेष दुगुना हीन है, क्योंकि अवस्थितभागहारके द्वारा पूर्वमें विभक्त हुई राशिका आधा भाग क्षीण होता हुआ देखा जाता है।

यहां एक अंकके ऊपर रखी हुई राशिको ग्रहण कर द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणामेंसे कम कर देनेपर उसकी ही तदनन्तर द्वितीय वर्गणाका प्रमाण होता है। इस प्रकार यहांपर भी एक एक विशेषको कम करके अवस्थितभागहारके अर्ध भाग प्रमाण विशेषोंको क्षीण होने तक वहां दुगुनी हानि होती है। इस प्रकार जानकर अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र दुगुणहानियोंके उत्पन्न होने तक ले जाना चाहिये।

यहां तीन अनुयोगद्वार हैं– प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। प्ररूपणा अवगत है क्योंकि, एकगुणहानिस्थानान्तर और नानागुणहानिस्थानान्तर अस्तित्व परम्परोपनिधासे ही सिद्ध है।

---

* त्रुटितोऽत्र प्रतिभाति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पमाणं वुच्चदे- णाणापदेसगुणहाणिट्ठाणंतरसलागाणमेगपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्स च पमाणमभवसिद्धिएहि अणंतगुणं सिद्धाणमणंतभागमेत्तं होदि। पमाणपरूवणा गदा।

अप्पाबहुगं उच्चदे-- सव्वत्थोवाओ णाणापदेसगुणहाणिट्ठाणंतरसलागाओ। एगपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरमणंतगुणं। को गुणगारो? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो। एवं सेडिपरूवणा गदा।

अवहारो उच्चदे- पढमाए वग्गणाए कम्मपदेसपमाणेण सव्ववग्गणकम्मपदेसा केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति? अणंतेण कालेण, पढमणिसेयपमाणेण सव्वदव्वे कीरमाणे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमणिसेयाणमुवलंभादो। एत्थ दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमणिसेयाणं उप्पायणविहाणं जहा दव्वविहाणे भणिदं तहा भणिय गेण्हिदव्वं। बिदियाए वग्गणाए कम्मपदेसपमाणेण सव्ववग्गणकम्मपदेसा केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति? सादिरेयदिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जंति। तं जहा- संदिट्ठीए* सव्ववग्गणदव्वमेदं (३०७२)। पढमवग्गणभागहारदिवड्ढपमाणं संदिट्ठीए एदं (१२)। दिवड्ढं विरलेदूण सव्वदव्वं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स पढमवग्गणपदेसपमाणं पावदि। पुणो तासु दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमवग्गणासु बिदियवग्गणापमाणेण

प्रमाणका कथन करते हैं-- नानाप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरशलाकाओं और एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका प्रमाण अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र है। प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई।

अल्पबहुत्वका कथन करते हैं-- नानाप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरशलाकायें सबसे स्तोक हैं। उनसे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है। गुणकार क्या है? गुणकार अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण है। इस प्रकार श्रेणिप्ररूपणा समाप्त हुई।

अवहारका कथन करते हैं-- प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके प्रमाणसे सब वर्गणाओंके कर्मप्रदेश कितने कालद्वारा अपहृत होते हैं? अनन्त काल द्वारा अपहृत होते हैं, क्योंकि, सब द्रव्यको प्रथम निषेकके प्रमाणसे करनेपर डेढ गुणहानि मात्र प्रथम निषेक पाये जाते हैं। यहाँ डेढ गुणहानि मात्र प्रथम निषेकोंके उत्पादनकी विधि जैसे द्रव्यविधानमें कही गई है वैसे कहकर ग्रहण करना चाहिये। द्वितीय वर्गणाके कर्मप्रदेशप्रमाणसे सब वर्गणाओंके कर्मप्रदेश कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं? साधिक डेढ गुणहानिस्थानान्तर काल द्वारा अपहृत होते हैं। यथा-- संदृष्टिमें सब वर्गणाओंका द्रव्य यह है- ३०७२। प्रथम वर्गणाके भागहार स्वरूप डेढ गुणहानिका प्रमाण यह है- १२। डेढ गुणहानिका विरलन कर समस्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर उन डेढ गुणहानि मात्र प्रथम वर्गणाओंको द्वितीय वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर एक एकके प्रति एक एक वर्गणा-

---

* अ-ताप्रत्योः 'संदिट्ठी' इति पाठः।

अवहिरिज्जमाणासु वारं पडि वारं पडि एगेगो वग्गणविसेसो अवचिट्ठदे । पुणो एत्थ अवणिदविदियवग्गणाओ दिवड्ढगुणहाणिमेत्ताओ होंति । पुणो अवणिदसेसा दिवड्ढगुणहाणिमेत्ता वग्गणविसेसा अत्थि । सव्वे वि विदियवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणा एक्कं पि विदियवग्गणपमाणं ण पूरेंति, रूवूणणिसेगभागहारमेत्तविसेसेहि एगविदियणिसेगुप्पत्तीदो । ण च दिवड्ढगुणहाणिमेत्तविसेसा रूवूणणिसेयभागहारमेत्तविसेसा होंति, गुणहाणीए अद्धरूवूणमेत्तविसेसेहि ऊगस्स तप्पमाणत्तविरोहादो ।

पुणो एदस्स विरलणे भण्णमाणे रूवूणणिसेगभागहारेण दिवड्ढगुणहाणिमोवट्टिय जं लद्धं तं विरलणमिदि भाणिदव्वं । एदम्मि दिवड्ढगुणहाणीए पक्खित्ते विदियणिसेगभागहारो होदि । तस्स पमाणमेदं $\frac{९}{८}$ । एदेण सव्वदव्वे भागे हिदे विदिय-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वग्गणदव्वं होदि । अथवा, दिवड्ढगुणहाणिक्खेत्तं ठविय ✡एगव-

ग्गणविसेस✡विक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणिआयामेण च एक्कोलीए फालिय रूवूणणिसेय-

16 16 16 16 16 (१२वार) कम

विशेष अवस्थित रहता है । अब यहाँ अपनीत द्वितीय वर्गणायें डेढ गुणहानि मात्र होती हैं । अपनयनसे शेष रहे वर्गणाविशेष डेढ गुणहानि मात्र होते हैं । ये सभी द्वितीय वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत होकर एक भी द्वितीय वर्गणाके प्रमाणको पूरा नहीं करते हैं, क्योंकि, एक कम निषेकभागहार प्रमाण विशेषोंका आश्रयकर एक द्वितीय निषेक उत्पन्न होता है । परन्तु डेढ गुणहानि मात्र विशेष एक कम निषेकभागहार मात्र विशेष नहीं होते हैं, क्योंकि, गुणहानिके एक अंक कम अर्ध भाग मात्र विशेषोंसे हीनके उतने मात्र होनेका विरोध है ।

पुनः इसके विरलनका कथन करनेपर एक कम निषेकभागहारसे डेढ गुणहानिको अपवर्तितकर जो लब्ध हो वह विरलनका प्रमाण होता है, ऐसा कहलाना चाहिये । इसको डेढ गुणहानिमें मिलानेपर द्वितीय निषेकका भागहार होता है । उसका प्रमाण यह है- $१२ \times \frac{१}{२} - १ = ५$; $१२ + ५ = १७$ । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर द्वितीय वर्गणाका द्रव्य होता है (३०७२ ÷ १७ = २४०) । अथवा, डेढ गुणहानि मात्र क्षेत्रको स्थापित कर (मूलमें देखिये) उसे एक वर्गणाविशेषके विस्तार रूपसे और डेढ गुणहानिके आयाम रूपसे एक श्रेणिसे फाडकर एक

✡ ताप्रतौ एवंविधात्र संदृष्टिः

✡ प्रतिषु ' विसेसे ' इति पाठः ।

इति पाठः

भागहारमेत्तवग्गणविसेसविक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणि-आयामेण दिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतर-खेत्तस्सुवरि ठविदे सादिरेयदिवड्ढगुणहाणी भागहारो होदि ।

संपहि तदियवग्गणकम्मपदेसपमाणेण सव्ववग्गणकम्मपदेसा केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयरूवाहियदिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जंति । तं जहा- पुव्विल्लविरलणम्मि दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमवग्गणासु रूवं पडि तदियवग्गणपमाणे अवणिदे दिवड्ढगुणहाणिमेत्ततदियवग्गणाओ लब्भंति । पुणो एक्केक्कस्स रूवस्स उवरि दो-दो-वग्गणविसेसा अवणेदव्वा । एवं दिवड्ढगुणहाणिमेत्तेसु तदियवग्गणपमाणेसु अवहिरिज्जमाणेसु सादिरेयरूवमेत्तो अवहारकालो लब्भदि । तं जहा- दुरूवूणदोगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसे घेत्तूण जदि एगं तदियवग्गणपमाणं लब्भदि तो तिण्णिगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सादिरेयमेगरूवमागच्छदि । पुणो अण्णेसु केत्तिएसु वग्गणविसेसु संतेसु विदियरूवमुप्पज्जदि त्ति भणिदे चदुरूवूणगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसेसु संतेसु उप्पज्जदि । एदम्मि दिवड्ढगुणहाणिम्मि पक्खित्ते सादिरेयरूवेण अहियदिवड्ढगुणहाणी भागहारो होदि । तिस्से पमाणमेदं $१\frac{१}{२}$ । एदेण सव्वदव्वे भागे

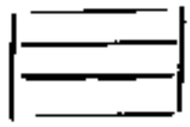
कम निषेकभागहार मात्र वर्गणाविशेष रूप विष्कम्भ व डेढ गुणहानि आयामसे डेढ गुणहानि-स्थानान्तर क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर साधिक डेढ गुणहानि भागहार होता है ।

अब तृतीय वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके प्रमाणसे सब वर्गणाओंके कर्म प्रदेश कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? साधिक एक अधिक डेढ गुणहानिस्थानान्तर काल द्वारा अपहृत होते हैं । यथा- पूर्वोक्त विरलनमें जो डेढ गुणहानि मात्र प्रथम वर्गणायें स्थापित है उनमें प्रत्येकमेंसे तृतीय वर्गणाके प्रमाणको घटानेपर डेढ गुणहानि मात्र तृतीय वर्गणायें उपलब्ध होती हैं और एक एक अंकके ऊपर दो दो वर्गणाविशेष उपलब्ध होते हैं । अब उनको तृतीय वर्गणाके प्रमाण अपहृत करनेपर साधिक एक अंक प्रमाण अवहारकाल उपलब्ध होता है । यथा- दो अंक कम दो गुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंको ग्रहणकर यदि एक तृतीय वर्गणाका प्रमाण आता है तो तीन गुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंको ग्रहणकर कितनी तृतीय वर्गणायें होंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर साधिक एक अंक आता है ।

शंका-- अन्य कितने वर्गणाविशेषोंके होनेपर द्वितीय अंक उत्पन्न होता है ?

समाधान-- ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि चार अंक कम गुणहानि मात्र अन्य वर्गणाविशेषोंके होनेपर द्वितीय अंक उत्पन्न होता है ।

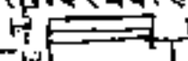
इसको डेढ गुणहानिमें मिलानेपर साधिक एक अङ्क अधिक डेढ गुणहानि भागहार होता है । उसका प्रमाण यह है- ८×२ - २ = १४; १४×१६ = ३२४ तृतीय वर्गणा; ८×३×१६ = ३८४; $\frac{३२४}{३८४} = \frac{९}{१६}$; $१\frac{१}{२} = \frac{२४}{१६}$; $\frac{२४}{१६} + \frac{९}{१६} = \frac{३३}{१६}$ । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर तृतीय वर्गणाका प्रमाण होता है-- ३०७२ ÷ $\frac{३३}{१६}$ = २२४ ।

हिदे तदियवग्गणपमाणं होदि । अधवा, दिवड्ढगुणहाणिमेत्तखेत्तं ठविय 

एगेगवग्गणविसेसविक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणिआयामेण दोफालीयो पाडिय वुरूवूणणिसेयभागहारमेत्तवग्गणविसेसविक्खंभ-दिवड्ढगुणहाणिआयामखेत्तस्सुवरि ठविदे सादिरेयरूवाहियदिवड्ढगुणहाणी भागहारो* होदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संपहि चउत्थवग्गणपमाणेण सव्वदव्वे अवहिरिज्जमाणे सादिरेयदुरूवाहियदिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जदि । तं जहा-दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमवग्गणासु चउत्थवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणासु वारं पडि वारं पडि तिण्णि-तिण्णिवग्गणविसेसा उव्वरंति । एवमवहिरिदे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तचउत्थवग्गणाओ लब्भंति । पुणो उव्वरिववग्गणविसेसेसु तिगुणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तेसु चउत्थवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणेसु सादिरेयदोरूवाणि लब्भंति । पुणो एत्थ अण्णेसु केत्तिएसु वग्गणविसेसेसु संतेसु तदिया भागहारसलागा लब्भदि त्ति भणिदे णवरूवूणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसेसु संतेसु उप्पज्जदि । ण च एत्तियमत्थि । तेण सादिरेयदोरूवमेत्तो चेव पक्खेवो होदि । एवम्मि दिवड्ढगुणहाणिम्मि पक्खित्ते सादिरेयदोरूवाहियदिवड्ढगुणहाणीयो भागहारो होदि । सो



$12\times2=24\div14=1\frac{5}{7}+12=13\frac{5}{7}$

अथवा, डेढ गुणहानि मात्र क्षेत्रको स्थापित कर (संदृष्टि मूल में देखिये) एक एक वर्गणाविशेषके विष्कम्भरूप और डेढ गुणहानि आयामरूप दो फालियाँ फाडकर दो अंक कम निषेकभागहार प्रमाण वर्गणाविशेष विष्कम्भवाले और डेढगुणहानि आयामवाले क्षेत्रके ऊपर रखनेपर साधिक एक अधिक डेढ गुणहानि भागहार होता है ।

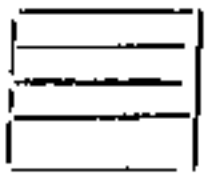
अब चतुर्थ वर्गणाके प्रमाणसे सब द्रव्यको अपहृत करनेपर वह साधिक दो अंक अधिक डेढगुणहानिस्थानान्तरकालके द्वारा अपहृत होता है । यथा-डेढगुणहानि प्रमाण प्रथम वर्गणाओंको चतुर्थ वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर प्रत्येक बार तीन तीन वर्गणाविशेष शेष रहते हैं । इस प्रकार अपहृत करनेपर डेढ गुणहानि मात्र चतुर्थ वर्गणायें प्राप्त होती हैं । फिर शेष रहे तिगुनी डेढगुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंको चतुर्थ वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर साधिक दो अंक प्राप्त होते हैं । पुनः यहाँ अन्य कितने वर्गणाविशेषोंके होनेपर तृतीय भागहारशलाका प्राप्त होती है ऐसा पूछनेपर कहते हैं कि नौ अंक कम डेढ गुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंके होनेपर तृतीय भागहारशलाका प्राप्त होती है । $12-9=3\times16=48$ शेष रहे पद $\frac{10}{13}$ के प्रक्षेपका

परन्तु यहाँ इतना नहीं है अतएव साधिक दो अंक मात्र ही प्रक्षेप होता है । इसको डेढ गुणहानिमें मिलानेपर साधिक दो अंक अधिक डेढ गुणहानियां भागहार होती हैं । वह भी यह

$14\frac{10}{13}$

* प्रतिषु ' गुणहाणिभागहारो ' इति पाठः ।

वि एसो✡ $\frac{१०}{१३}$ । एदेण सव्वदव्वे भागे हिदे चउत्थवग्गणपमाणमागच्छदि ।

अथवा,  दिवड्ढखेत्तं ठविय एगेगवग्गणविसेसविक्खंभेण दिवड्ढगुण-

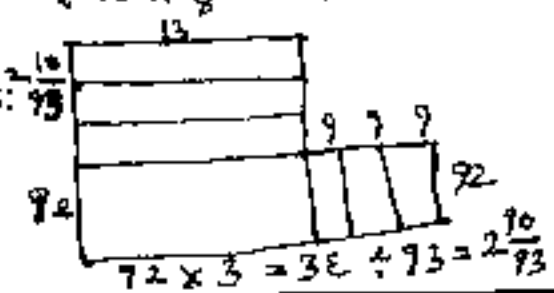
हाणिआयामेण तिण्णिफालीयो पादिय तिरूवूणणिसेयभागहारमेत्तवग्गणविसेसविक्खंभदिवड्ढगुणहाणिआयामखेत्तस्सुवरि ठविदे सादिरेयबोरूवाहियदिवड्ढगुणहाणिभागहारो होदि । सेसं जाणिय वत्तव्वं । एवमणेण विहाणेण ताव णेयव्वं जाव पढमगुणहाणीए रूवाहियमद्धं चडिदं ति । तदित्थवग्गणपमाणेण सव्वदव्वे अवहिरिज्जमाणे दोगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जदि । तं जहा-- दिवड्ढगुणहाणिविरलणरूवमेत्तपढमवग्गणाओ तदित्थवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणाओ वारं पडि वारं पडि णिसेयभागहारमेत्तवग्गणविसेसा अवहिरिज्जंति । कुदो ? णिसेयभागहारतिण्णिचदुब्भागमेत्तवग्गणविसेसेहि तदित्थवग्गणुप्पत्तीदो । जे रूवं पडि उव्वरिदणिसेयभागहारचदुब्भागमेत्तवग्गणविसेसा ते वि तप्पमाणेण कस्सामो । तं जहा- णिसेयभागहारतिण्णिचदुब्भागमेत्तवग्ग--

---

है- $\frac{३}{४}\frac{१}{२}$ = २$\frac{१}{२}$; १२ + २$\frac{१}{२}$ = $\frac{२५}{२}$ । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर चतुर्थ वर्गणाका प्रमाण आता है (३०२ ÷ $\frac{२५}{२}$ = २०८)

अथवा, डेढ गुणहानि प्रमाण क्षेत्रको स्थापितकर (संदृष्टि मूलमें देखिये) एक एक वर्गणाविशेषके विष्कम्भरूप व डेढ गुणहानि आयामरूप तीन फालियां फाडकर उन्हें तीन अंक कम निषेकभागहार मात्र विस्तृत और डेढ गुणहानि आयत क्षेत्रके ऊपर रखनेपर साधिक दो अंक अधिक डेढ गुणहानि भागहार होता है । शेष जानकर कहना चाहिये । इस प्रकार इस विधिसे प्रथम गुणहानिका एक अधिक आधा भाग जाने तक ले जाना चाहिये । वहांकी वर्गणाके प्रमाणसे सब द्रव्यको अपहृत करनेपर वह दो गुणहानिस्थानान्तरकालके द्वारा अपहृत होता है । यथा – डेढ गुणहानिके विरलन अंक प्रमाण प्रथम वर्गणाओंको वहांकी वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर प्रत्येक एकके प्रति निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणाविशेष ($\frac{१६ \times ३}{४} \times \frac{१६}{२} = १९२$) अपहृत होते हैं, क्योंकि, निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणाविशेषोंसे वहांकी वर्गणा उत्पन्न होती है ।

तथा जो प्रत्येक अंकके प्रति निषेकभागहारके चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणाविशेष शेष रहते हैं उन्हें भी उसके प्रमाणसे करते हैं । यथा– निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणा–



✡ अप्रतौ ' होदि सो विसेसो $\frac{१९२}{१३}$ ', आप्रतौ ' होदि $\frac{१९२}{१३}$ ' इति पाठः ।

णविसेसाणं जदि दिवड्ढगुणहाणि भागहारो होदि तो णिसेयभागहारचदुब्भागमेत्त-वग्गणविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए गुणहाणीए अद्धमागच्छदि । तम्मि दिवड्ढगुणहाणिम्मि पक्खित्ते वीगुणहाणीयो भागहारो होदि । एदेण सव्वदव्वे ३०७२ भागे हिदे तदित्थवग्गणपमाणं होदि । संदिट्ठीए तस्स पमाणमेदं १९२ ।

अधवा दिवड्ढगुणहाणिखेत्तं ठविय  चत्तारि फालीयोकादूण एक्केक्किस्से फालीए विक्खंभो णिसेयभागहारस्स चदुब्भागमेत्तो, आयामो पुण दिवड्ढगुणहाणिमेत्तो । एत्थ तिण्णिफालीयो मोत्तूण सेसेगफालिं घेत्तूण आयामेण तिण्णि खंडाणि करिय सेसतीसु फालीसु समयाविरोहेण ढोइदे बेगुणहाणिमेत्तायाम-णिसेगभागहार-तिण्णिचदुब्भागमेत्त* वग्गणविक्खंभखेत्तं होदि ।

एवं सयलाए पढमगुणहाणीए चडिदाए तिण्णिगुणहाणी* भागहारो होदि । तं जहा- एगगुणहाणी चडिदा त्ति पमाणं विरलिय दुगं करिय अण्णोण्णब्भत्थे कदे तत्थुप्पण्णरासिणा दिवड्ढगुणहाणीए गुणिदाए तिण्णिगुणहाणीयो भागहारो होदि । कुदो? पढमगुणहाणिपढमवग्गणकम्मपदेसेहिंतो विदियगुणहाणिपढमवग्गणकम्मपदेसा-

---

विशेषोंका यदि डेढ गुणहानि भागहार होता है तो निषेकभागहारके चतुर्थ भाग मात्र वर्गणा-विशेषोंका कितना भागहार होगा, इस प्रकार फलगुणित इच्छा राशिको प्रमाण राशिसे अपवर्तित करनेपर गुणहानिका अर्ध भाग आता है । उसको डेढ गुणहानिमें मिलानेपर दो गुणहानियां भागहार होती है । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर (३०७२ ÷ १६ = १९२) वहांकी वर्गणाका प्रमाण होता है । संदृष्टिमें उसका प्रमाण यह है– १९२ ।

अथवा, डेढ गुणहानि प्रमाण क्षेत्रको स्थापितकर (संदृष्टि मूलमें देखिये) चार फालियां करके, इनमेंसे एक एक फालिका विष्कम्भ निषेकभागहारके चतुर्थ भाग प्रमाण होता है परन्तु आयाम डेढ गुणहानि प्रमाण होता है । इनमेंसे तीन फालियोंको छोडकर शेष एक फालिको ग्रहण कर और आयामकी ओरसे तीन खण्ड करके आगमानुसार शेष तीन फालियोंमें जोड देनेपर दो गुणहानि मात्र आयामरूप और निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग मात्र वर्गणा विष्कंभ रूप क्षेत्र होता है ।

इस प्रकार समस्त प्रथम गुणहानि जानेपर तीन गुणहानियां भागहार होती हैं । यथा –चूंकि एक गुणहानि गये हैं, अतः एक अंकका विरलनकर दुगुना करके परस्पर गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उससे डेढ गुणहानिको गुणित करनेपर तीन गुणहानियां भागहार होती है, क्योंकि, प्रथम गुणहानिकी प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंसे द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेश आधे

---

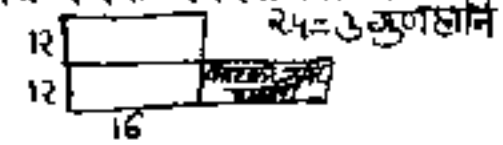
* मप्रतौ ' तिण्णिचदुब्भागहारचदुब्भागमेत्त ' इति पाठः । * प्रतिषु ' गुणहाणिभागहारो ' इति पाठः ।

णमद्धत्तुवलंभादो । संदिट्ठीए तिण्णिगुणहाणिभागहारो एसो २४ ।

अथवा, डेढ गुणहानि क्षेत्रको स्थापित कर (संदृष्टि मूलमें देखिये) अन्योन्याभ्यस्त राशि प्रमाण फालियाँ करके उनमेंसे एक फालिके ऊपर शेष फालियोंको स्थापित करनेपर तीन गुणहानियां भागहार होती हैं । इस विधिसे क्षेत्रप्ररूपणा और त्रैराशिक क्रमको जानकर जघन्य अनुभागस्थानकी अन्तिम वर्गणा तक ले जाना चाहिये । इस प्रकार अवहारप्ररूपणा समाप्त हुई ।

जैसी अवहारकी प्ररूपणा की गई है वैसी ही भागाभागकी भी प्ररूपणा है, क्योंकि इससे उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

अल्पबहुत्वका कथन करते हैं- उत्कृष्ट वर्गणामें कर्मप्रदेश सबसे स्तोक हैं (९) । उनसे जघन्य वर्गणामें कर्मप्रदेश अनन्तगुणे हैं (२५६) । गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र कुछ कम अन्योन्याभ्यस्त राशि गुणकार है । उनसे अजघन्य-अनुत्कृष्ट वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश अनन्तगुणे हैं (२८०७) । गुणकार क्या है ? कुछ कम डेढ गुणहानियां गुणकार है । उनसे अप्रथम वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश विशेष अधिक हैं (२८१६) । विशेषका प्रमाण कितना है ? उत्कृष्ट वर्गणाके बराबर है । उनसे अनुत्कृष्ट वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश विशेष अधिक हैं (३०६३) । विशेष कितना है ? उत्कृष्ट वर्गणाके कर्मप्रदेशोंसे हीन प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके बराबर है । उनसे सब वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश विशेष अधिक हैं (३०७२) । विशेष



पाये जाते हैं । संदृष्टिमें तीन गुणहानिरूप भागहार यह है-- २४ ।

अ-आप्रत्योः 'तेरासियकम्मं' इति पाठः । ताप्रतौ 'संदृष्टिरियं' किंचूणण्णोण्णब्भत्थरासी' इत्यतः परचादुपलभ्यते इति पाठ । अप्रतौ 'अणंतगुणा' इति पाठः । ताप्रतौ 'भागमेत्तो । किंचूण' इति पाठः ।

सव्वासु वग्गणासु कम्मपदेसा विसेसाहिया ३०७२ । केत्तियमेत्तो विसेसो? उक्कस्सवग्गणकम्मपदेसमेत्तो । एवं दुचरिमादिअणुभागबंधट्ठाणाणं पि वत्तव्वं । णवरि जहण्णबंधट्ठाणादो विदियबंधट्ठाणमणंतगुणं । तदियं बंधट्ठाणमणंतगुणं । एवं णेयव्वं जाव अपुव्वसंजदो त्ति । तत्तो अणुभागबंधट्ठाणाणि छव्विहाए वड्ढीए गच्छंति जाव उक्कस्सअणुभागबंधट्ठाणे त्ति । जहण्णट्ठाणं मोत्तूण सेससव्वट्ठाणेसु जहण्णवग्गण-जहण्णफद्दयअविभागपडिच्छेदेहिंतो उक्कस्सवग्गण-उक्कस्सफद्दयअविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा । को गुणगारो ? सव्वजीवेहि अणंतगुणो । फद्दयंतराणि विसरिसाणि, छव्विहवड्ढीए अणुभागबंधवुड्ढिदंसणादो । एवं हदसमुप्पत्तियहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं पि अविभागपडिच्छेदपरूवणा कायव्वा । एवमविभागपडिच्छेदपरूवणा समत्ता ।

ठाणपरूवणदाए केवडियाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जलोगट्ठाणाणि एवडियाणि ट्ठाणाणि ॥ २०० ॥

किं ठाणं णाम? एगजीवम्मि एक्कम्हि समए जो दीसदि कम्माणुभागो तं ठाणं णाम । तं च ठाणं दुविहं– अणुभागबंधट्ठाणं अणुभागसंतट्ठाणं चेवि । तत्थ जं बंधेण णिप्फण्णं तं बंधट्ठाणं णाम । पुव्वबंधाणुभागे घादिज्जमाणे जो बंधाणुभागेण सरिसो

कितना है ? उत्कृष्ट वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके बराबर है ।

इसी प्रकार द्विचरमादि अनुभागबन्धस्थानोंका भी कथन करना चाहिये । विशेष इतना है कि जघन्य बन्धस्थानसे द्वितीय बन्धस्थान अनन्तगुणा है । उससे तृतीय बन्धस्थान अनन्तगुणा है । इस प्रकार अपूर्वकरणसंयत तक ले जाना चाहिये । उससे आगेके अनुभागबन्धस्थान उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान तक छह प्रकारकी वृद्धिसे जाते हैं । जघन्य स्थानको छोड़कर शेष सब स्थानोंमें जघन्य वर्गणा व जघन्य स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेदोंसे उत्कृष्ट वर्गणा व उत्कृष्ट स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार सब जीवोंसे अनन्तगुणा है । स्पर्द्धकान्तर विसदृश हैं, क्योंकि, छह प्रकारकी वृद्धि द्वारा अनुभागबन्धकी वृद्धि देखी जाती है । इसी प्रकारसे हतसमुत्पत्तिक और हतहतसमुत्पत्तिक स्थानोंके भी अविभाग प्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये । इस प्रकार अविभागप्रतिच्छेद-प्ररूपणा समाप्त हुई ।

स्थानप्ररूपणतासे स्थान कितने हैं? असंख्यात लोक प्रमाण हैं । इतने स्थान हैं ॥ २०० ॥

स्थान किसे कहते हैं? एक जीवमें एक समयमें जो कर्मानुभाग दिखता है उसे स्थान कहते हैं । वह स्थान दो प्रकारका है अनुभागबन्धस्थान और अनुभागसत्त्वस्थान । उनमेंसे जो बन्धसे उत्पन्न होता है वह बन्धस्थान कहा जाता है । पूर्वबद्ध अनुभागका घात किये जानेपर जो बन्ध

ताप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः ' बंधट्ठाणादो चदियबंधट्ठाणमणंतगुणं तदिय ' मप्रतौ ' बंधट्ठाणादो चदियबंधट्ठाणमणंतगुणं विदियबंधट्ठाणमणंतगुणं तदिय ' इति पाठः । आप्रतौ ' णिप्फलं ' इति पाठः ।

होदूण पदवि तं पि बंधट्ठाणं चेव, तस्सरिसअणुभागबंधुवलंभादो✡ । जमणुभागट्ठाणं घादिज्जमाणं बंधाणुभागट्ठाणेण✡ सरिसं ण होदि, बंधअट्ठंक-ऊव्वंकाणं विच्चाले हेट्ठिमउव्वंकादो अणंतगुणं उवरिमअट्ठंकादो अणंतगुणहीणं होदूण चिट्ठदि, तमणुभागसंतकम्मट्ठाणं णाम । पुणो अणुभागबंधट्ठाणाणि संतकम्मट्ठाणाणि च असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति त्ति कुदो णव्वदे ? एगजीवम्हि अवट्ठिदकम्मपरमाणुसु जो उक्कस्साणुभागसहिदकम्मपरमाणू सो चेव ट्ठाणं, भिण्णपरमाणुट्ठिदअणुभागाणं अप्पिदपरमाणुट्ठिदअणुभागेण सह पवुत्तीए अभावेण बुद्धीए✱ पत्तएयत्ताणं एयट्ठाणत्तविरोहादो । एक्कम्हि परमाणुम्हि जदि ट्ठाणं होदि तो अणंताणं तत्थतणवग्गणाणं फद्दयाणं च अभावो होदि त्ति भणिदे- ण, फद्दय-वग्गणसण्णिदाणुभागाणं सव्वेसिं पि तत्थेवुवलंभादो । अण्णत्थ एस ववहारो ण प्पसिद्धो त्ति उत्ते-ण, ♠ट्ठिदिपरूवणाए चरिमणिसेगम्मि एगपरमाणुकालं चेव घेत्तूण उक्कस्सट्ठिदिपरूवणदंसणादो । ण परमाणुकालसंकलणा सजादि-

---

अनुभागके सदृश होकर पडता है वह भी बन्धस्थान ही है, क्योंकि, उसके सदृश अनुभागबन्ध पाया जाता है । बाता जानेवाला जो अनुभागस्थान बन्धानुभागके सदृश नहीं होता है, किन्तु बन्ध सदृश अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें अधस्तन ऊर्वकसे अनन्तगुणा और उपरिम अष्टांकसे अनन्तगुणा हीन होकर स्थित रहता है वह अनुभाग सत्कर्मस्थान है । अनुभागबन्धस्थान और सत्कर्मस्थान असंख्यात लोक मात्र होते हैं । यहां अनुभागबन्धस्थान और सत्कर्मस्थान, ऐसा कहनेपर एक जीवमें अवस्थित कर्मपरमाणुओंमें जो उत्कृष्ट अनुभाग सहित कर्मपरमाणु हैं वही स्थान होता है, क्योंकि भिन्न परमाणुओंमें स्थित अनुभागोंकी विवक्षित परमाणुमें स्थित अनुभागके साथ प्रवृत्ति न होनेसे बुद्धिसे एकताको प्राप्त हुए उनकी एकस्थानताका विरोध है ।

शंका- यदि एक परमाणुमें स्थान होता है तो उनमें अनन्त वर्गणाओं और स्पर्द्धकोंका अभाव होता है ?

समाधान- ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि नहीं, क्योंकि, स्पर्द्धक और वर्गणा संज्ञावाले सभी अनुभाग वहां ही पाये जाते हैं ।

शंका- अन्यत्र यह व्यवहार प्रसिद्ध नहीं है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, स्थितिप्ररूपणामें अन्तिम निषेकमें एक परमाणुकालको ही ग्रहण कर उत्कृष्ट स्थितिकी प्ररूपणा देखी जाती है ।

परमाणुकालसंकलना सजाति व विजाति स्वरूप नहीं ग्रहण की जाती है, क्योंकि, वैसा

✡ अणुभागसंतट्ठाणवादेण जमुप्पण्णमणुभागसंतट्ठाणं तं पि णवबंधट्ठाणाणि त्ति घेत्तव्वं, बंधट्ठाणसमाणत्तादो । जयध. अ. प. ३१३. । ✡ ताप्रतौ ' बंधाणुभागट्ठाणेहि ' इति पाठः । ✱ किमट्ठंकं णाम ? अणंतगुणवड्ढी । कधमेदिस्से अट्ठंकसण्णा ? अट्ठण्हं अंकाणमणंतगुणवड्ढि त्ति ठवणादो । जयध. अ. प. ३५८. । ✱ अप्रतौ ' वुत्तीए ' इति पाठः । ♠ अ-आप्रत्योः ' ट्ठिदद ' इति पाठः ।

विजाविसरूवा घेप्पदे, कालस्स आणंतियप्पसंगादो। ण च सेसपरूवणा णिप्फला, अप्पिदअणुभागपरमाणुणा अविणाभाविअणुभागपरूवणाए पयदस्सेव परूवणाए सफलत्तादो। एगेण चेव परमाणुणा जदि एगं ट्ठाणं णिप्फज्जदि* तो एगसमए एगजीवम्मि ट्ठाणाणमाणंतियं पसज्जदे ? जदि एवं घेप्पदि तो सव्वमणंताणि* चेव ट्ठाणाणि होंति। ण च एवं, दव्वट्ठियणयावलंबणादो। तं जहा– ण ताव समाणधणाणं गहणं, तवणुभागस्स समाणत्तणेण अप्पिदेण एगत्तमुवगयस्स तत्थेव उवलंभादो। ण असमाणाणं गहणं, सदृ* संखाए एगादिसंखाए व हेट्ठिमाणुभागाणमुक्कस्साणुभागे उवलंभादो। एत्थ दव्वट्ठियणओ अवलंबिदो त्ति कधं णव्वदे ? ओकड्डुक्कड्डुणाए ट्ठाणहाणि-वड्ढीणमभावादो संतस्स हेट्ठा अणुभागे बज्झमाणे* अणुभागट्ठाणवुड्ढीए अणुवलंभादो संतं पेक्खिदूण एक्कम्हि समए अणंतभागवड्ढीए बंधे वि अणुभागवुड्ढिदंसणादो अगुणियकम्मंसियम्मि उक्कस्साणुभागाभावावत्तीए* च। ण च समाणासमाणधणेसु

होनेपर कालकी अनन्तताका प्रसंग आता है। यदि कहा जाय कि शेष प्ररूपणा निष्फल है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि विवक्षित अनुभाग परमाणुके साथ अविनाभाव रखनेवाले अनुभागकी प्ररूपणा द्वारा प्रकृत की ही प्ररूपणा सफल है।

शंका– एक ही परमाणुसे यदि एक स्थान उत्पन्न होता है तो एक समयमें एक जीवमें स्थानोंकी अनन्तताका प्रसंग आता है ?

समाधान– यदि ऐसा ग्रहण करते हैं तो सचमुचमें सब अनन्तस्थान होते हैं। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है। वह इस प्रकारसे– समान धनवाले परमाणुओंका तो ग्रहण हो नहीं सकता, क्योंकि, उनके अनुभागकी समानता होनेसे विवक्षितके साथ एकताको प्राप्त हुआ वह वहाँ ही पाया जाता है। असमान धनवाले परमाणुओंका भी ग्रहण नहीं हो सकता है, क्योंकि, जिस प्रकार एक आदि संख्यायें शत संख्यामें पायी जाती हैं उसी प्रकार अधस्तन अनुभाग उत्कृष्ट अनुभागमें पाये जाते हैं।

शंका– यहाँ द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान– अपकर्षण व उत्कर्षण द्वारा स्थानकी हानि व वृद्धि का अभाव होनेसे, सत्त्वके नीचे अनुभागके बाँधे जानेपर अनुभागस्थानवृद्धिके न पाये जानेसे, सत्त्वकी अपेक्षा एक समयमें अनन्तभागवृद्धि द्वारा बन्धके होनेपर भी अनुभागवृद्धिके देखे जानेसे, तथा गुणितकर्मांशिकसे अन्य जीवमें उत्कृष्ट अनुभागके अभावकी आपत्ति आनेसे जाना जाता है कि यहाँ द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है। इसके अतिरिक्त समान व असमान धनवाले पुद्गलोंको ग्रहण करनेपर

---

* आ-ताप्रत्योः ' णिप्पज्जदि ' इति पाठः। * अप्रतौ ' सव्वमणंताणि ', आप्रतौ ' सव्वधणंताणि ' ताप्रतौ ' सच्च (व्व) मणंताणि ' इति पाठः। * आप्रतौ ' राग ' इति पाठः। * अप्रतौ ' अणुभागे बज्झमाणे ' इत्येतावान् पाठो नास्ति। * अप्रतौ ' भावादो व वत्तीए च ', आप्रतौ ' भावादो वड्ढीए च ' ताप्रतौ ' भावादो वत्तीए च ' मप्रतौ ' भावादो वत्तीए ' इति पाठः।

पोग्गलेसु घेप्पमाणेसु सव्वजीवरासिपडिभागअणंतभागब्भहियत्तं जुज्जदे, विरोहादो । एवं असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणं पादेक्कं सरूवपरूवणं कायव्वं । एवं ट्ठाणसंखापरूवणा समत्ता ।

अंतरपरूवणदाए एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स केवडियमंतर ? सव्वजीवेहि अणंतगुणं, एवडिय[ब] मंतरं ॥ २०१ ॥

असंखेज्जलोगमेत्ताणि अणुभागबंधट्ठाणाणि संतट्ठाणाणि च परूविदाणि । एदम्हादो चेव परूवणादो णव्वदे जहा ट्ठाणाणमंतरमत्थि त्ति, अण्णहा ट्ठाणभेदाणुववत्तीदो । तदो अंतरपरूवणा णिप्फले त्ति? ण णिप्फला, अंतरपमाणपरूवणदुवारेण सहलत्तदंसणादो । ण च ट्ठाणभेदावगममेत्तेण अंतरपमाणमवगम्मदे, तहाणुवलंभादो । ण च ट्ठाणाणमंतरेण होदव्वमेव इत्ति णियमो अत्थि, अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण गयाणं पि ठाणत्तं पडि विरोहाभावादो[ब] । किं ठाणंतरं णाम? हेट्ठिमट्ठाणमुवरिमट्ठाणम्हि सोहिय रूवूणे कदे जं लद्धं तं ट्ठाणंतरं णाम । तत्थ जं जहण्णट्ठाणंतरं तं पि सव्वजीवेहिंतो अणंतगुणं, एगम्मि अणंतभागवड्ढिपक्खेवे वि सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तअविभागपडि-

सब जीवराशिके प्रतिभाग रूप अनन्तभागसे अधिकता भी घटित नहीं होती, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र स्थानोंमेंसे प्रत्येकके स्वरूपकी प्ररूपणा करनी चाहिये । इस प्रकार स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अन्तरप्ररूपणामें एक एक स्थान का अन्तर कितना है ? सब जीवोंसे अनन्तगुणा है, इतना अन्तर है ॥ २०१ ॥

शंका– असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान और सत्स्थानोंकी प्ररूपणा की जा चुकी है । इसी प्ररूपणासे जाना जाता है कि स्थानोंमें अन्तर है, क्योंकि, इसके बिना स्थानभेद घटित नहीं होता । इस कारण अन्तरप्ररूपणा निष्फल है ?

समाधान– वह निष्फल नहीं है, क्योंकि अन्तरके प्रमाणकी प्ररूपणा द्वारा उसकी सफलता देखी जाती है । कारण कि स्थानभेदके जान लेने मात्रसे अन्तरका प्रमाण नहीं जाना जाता, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता है । दूसरे स्थानोंका अन्तर होना ही चाहिये, ऐसा नियम भी नहीं है, क्योंकि, एक एक अविभागप्रतिच्छेदकी अधिकताके क्रमसे गये हुए भी स्थानोंकी स्थानरूपतामें कोई विरोध नहीं है ।

शंका– स्थानान्तर किसे कहते हैं ?

समाधान– उपरिम स्थानोंमेंसे अधस्तन स्थानको घटाकर एक कम करनेपर जो प्राप्त हो वह स्थानोंका अन्तर कहा जाता है ।

उसमें जो जघन्य स्थानान्तर है वह भी सब जीवोंसे अनन्तगुणा है, क्योंकि, एक अनन्तभाग वृद्धि प्रक्षेपमें भी सब जीवोंसे अनन्तगुणे मात्र अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं । यहां

अ-आप्रत्योः 'केवडिय', मप्रतौ 'येवडिय' इति पाठ । ब अप्रतौ 'विरोहाभावो' इति पाठः ।

च्छेदुवलंभादो। एत्थ अणुभागबंधट्ठाणाणमंतराणि जोगट्ठाणंतराणि इव सरिसाणि ण होंति, जोगट्ठाणपक्खेवाणं व अणुभागट्ठाणपक्खेवाणं सरिसत्ताभावादो। अणुभागट्ठाणेसु छव्विहवड्ढिदंसणादो वा णाणुभागट्ठाणंतराणं सरिसत्तण[1] मत्थि। तं जहा- सुहुमसांपराइयचरिमसमए जहण्णाणुभागबंधट्ठाणं चेव होदि। जोगवड्ढिवसेण सुहुमसांपराइयचरिमसमए अजहण्णाणुभागबंधट्ठाणं पि किण्ण होदि त्ति जीवविसेसे किण्ण होदि? ण, जोगवड्ढीदो अणुभागवड्ढीए अभावादो। तं कधं णव्वदे? वेदणीय-णामा-गोदाणं सजोगि-अजोगि केवलीसु उक्कस्साणुभागो चेव होदि त्ति वेयणसामित्तसुत्ते परूविदत्तादो। जदि पुण जोगवड्ढी अणुभागवड्ढीए कारणं होज्ज तो ण एसो णियमो जुज्जदे, उक्कस्साणुक्कस्साणं दोण्णं पि अणुभागट्ठाणाणं संभवादो। वेयणसण्णियासविहाणे जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स भाववेयणा णियमा उक्कस्से त्ति परूविदत्तादो वा णव्वदे जहा जोगवड्ढि-हाणीयो अणुभागवड्ढि-हाणीणं कारणं होंति त्ति। सजोगिकेवलिस्स लोगपूरणे वट्टमाणस्स खेत्तमुक्कस्सं जादं। भावो वि सुहुमसांपराइयखवगेण जो बद्धो[2] सो उक्कस्सो वा अणुक्कस्सो[3] वा लोगमावूरिदकेवलिम्हि होदि त्ति अभणिदूण

अनुभागबन्धस्थानोंके अन्तर योगस्थानान्तरोंके समान सदृश नहीं होते हैं, क्योंकि, योगस्थान-प्रक्षेपोंके समान अनुभागस्थानप्रक्षेपोंमें सदृशताका अभाव है। अथवा अनुभागस्थानोंमें छह प्रकारकी वृद्धिके देखे जानेसे अनुभागस्थानान्तरोंमें सदृशता नहीं है। वह इस प्रकारसे- सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें जघन्य अनुभागबन्धस्थान ही होता है।

शंका- योगवृद्धिके प्रभावसे सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें किसी जीवविशेषमें अजघन्य अनुभागस्थान भी क्यों नहीं होता?

समाधान- नहीं क्योंकि, योगवृद्धिसे अनुभागवृद्धि सम्भव नहीं है।

शंका- वह कैसे जाना जाता है?

समाधान- वेदनीय, नाम और गोत्र कर्मका सयोग और अयोग केवलियोंमें उत्कृष्ट अनुभाग ही होता है; ऐसा चूंकि वेदनास्वामित्व सूत्रमें कहा जा चुका है, अतः इससे जाना जाता है कि योगवृद्धिके होनेसे अनुभागवृद्धि सम्भव नहीं है। यदि योगवृद्धि अनुभागवृद्धिका कारण होती तो यह नियम उचित नहीं था, क्योंकि, वैसा होनेपर उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट दोनों ही अनुभागस्थान वहाँ सम्भव थे। अथवा, जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है, उसके भाववेदना नियमसे उत्कृष्ट होती है; इस प्रकार जो वेदनासंनिकर्षविधानमें प्ररूपणा की गई है उससे भी जाना जाता है कि योगकी वृद्धि व हानि अनुभागकी वृद्धि व हानिमें कारण नहीं है। लोकपूरण समुद्घातमें वर्तमान केवलीका क्षेत्र उत्कृष्ट होता है। भाव भी जो सूक्ष्मसांपरायिक क्षपकके द्वारा बांधा गया है वह लोकपूरणको प्राप्त केवलीमें उत्कृष्ट भी होता है व अनुत्कृष्ट भी

---

[1] अ-आप्रत्योः 'सरिसत्तण' इति पाठः। [2] अ-आप्रत्योः 'लद्धो', ताप्रतौ 'ल (ब) द्धो' इति पाठः। [3] आप्रतौ 'उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा' इति पाठः।

तथा भाव भी वही उत्कृष्ट होता है।

होदि त्ति परूविदत्तादो जोगवड्डि-हाणीयो अणुभागवड्डिहाणीणं कारणं ण होंति त्ति भणिदं होदि । कसायपाहुडे सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागो दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सव्वत्थ होदि त्ति परूविदत्तादो वा णव्वदे । खविदकम्मंसियलक्खणेण वा गुणिदकम्मंसियलक्खणेण वा आगंतूण सम्मत्तं घेत्तूण बे-छावट्ठीयो भमिय दंसणमोहक्खवगअपुव्वकारणपढमाणुभागखंडओ जाव ण पददि ताव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागो चेव होदि त्ति भणिदं । अण्णहा खविदकम्मंसियं मोत्तूण गुणिदकम्मंसिएण चेव सम्मत्ते गहिदे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्साणुभागो होज्ज, तत्थ जोगबहुत्तुवलंभादो । एवं संते दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण समत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणुभागो उक्कस्सो वा अणुक्कस्सो वा सव्वत्थ होज्ज । ण च एवं, तहोवदेसाभावादो । तम्हा जोगो अणुभागकारणं ण होदि त्ति सिद्धं । वुत्तं च--

---

होता है, ऐसा न कहकर ' उत्कृष्ट ही होता है ' इस प्रकार की गई प्ररूपणासे निश्चित होता है कि योगकी वृद्धि व हानि अनुभागकी वृद्धि व हानिका कारण नहीं है, यह अभिप्राय है । अथवा कषायप्राभृतमें दर्शनमोहक्षपकको छोडकर सर्वत्र सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग होता है, यह जो कहा गया है उससे भी जाना जाता है कि योगवृद्धि अनुभागवृद्धिका कारण नहीं है । इसीसे क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे अथवा गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागरोपम परिभ्रमण करके दर्शनमोहक्षपक अपूर्वकरणका जब तक प्रथम अनुभागकाण्डक पतित नहीं होता है तब तक सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग ही होता है ऐसा कहा है । अन्यथा (योगवृद्धिको अनुभागवृद्धिका कारण माननेपर) क्षपितकर्मांशिकको छोडकर गुणित कर्मांशिकके द्वारा ही सम्यक्त्वके ग्रहण किये जानेपर सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग होना चाहिये, क्योंकि, वहाँ योगकी अधिकता पायी जाती है । और ऐसा होनेपर दर्शनमोहक्षपकको छोडकर सर्वत्र सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वका अनुभाग उत्कृष्ट अथवा अनुत्कृष्ट होना चाहिये । परन्तु ऐसा है नहीं क्योंकि, वैसा उपदेश नहीं है । इसलिये योग अनुभागका कारण नहीं है, यह सिद्ध होता है । कहा भी है--

---

ताप्रतौ ' परूविदत्तादो । जोग ' इति पाठः । ताप्रतौ ' कारणं (ण) होंति ' इति पाठः । । वेयणासण्णियाससुत्तण्णहाणुववत्तीदो च ण अज्जदे जहा अणुभागबड्ढीए कसाओ चेव कारणं ण जोगो त्ति । तं जहा- जस्स णामा-गोद-वेयणीयवेयणा थोवदो उक्कस्सा तस्स भावदो णियमा उक्कस्सा त्ति वेयणासुत्तं । णेदं घडदे, खविदकम्मंसि यजोगिम्मि लोगपूरणाए वट्टमाणम्मि उक्कस्साणुभागाभावादो । तदो ण जोगत्थोवत्तमणुभागत्थोवत्तस्स कारणमिदि सद्दहेयव्वं । जयध अ प. ३६०। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स ? सुगममेदं । दंसणमोहक्खवयं मोत्तूण सव्वस्स उक्कस्सयं । जयध अ. प. ३२१। ताप्रतौ ' भणि- (भि) अ ' इति पाठः । अप्रतौ ' जाव ण ' इति पाठः । प्रतिषु ' सव्व-वुत्त ' इति पाठः ।

किं च ण परमाणुबहुत्तमणुभागबहुत्तस्स कारणं, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तुक्कस्साणुभागसामित्तसुत्तण्णहाणुववत्तीदो । तं जहा- दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सव्वम्हि उक्कस्समिदि सामित्तसुत्तं । णेदं घडदे, गुणिदकम्मंसियलक्खणेण (णा) गंतूण सम्मत्तं पडिवण्णस्स गुणसंकमचरिमसमए वट्टमाणस्स चेव सम्मत्तुक्कस्साणुभागदंस

' जोगा✽ पयडि पदेसे ट्ठिदि-अणुभागे कसायदो कुणदि । ' त्ति।

खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय बे-छावट्ठीयो भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय एगं ठिदिं वुसमयकालं करेवूण अच्छिदजहण्णसंतकम्मियस्स वि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्साणुभागुवलंभादो सरिसधणियपइट्ठीए अणुभागवड्ढी णत्थि त्ति णव्वदे । एदेण सरिसधणि-
मार्गदर्शक :- आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज
एहि बहुएहि संतेहि अणुभागबहुत्तं होदि त्ति एसो अग्गहो ओसारिदो होदि । असरिसधणियएगोलीबहुत्तं णाणुभागबहुत्तस्स कारणं ' केवलणाणावरणीयं केवल-दंसणावरणीयं असादावेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि ' त्ति चउस-ट्ठिवदियउक्कस्साणुभागअप्पाबहुगादो णव्वदे । तं जहा- वीरियंतराइयस्स लवा✽ समाणजहण्णफद्दयप्पहुडि एगट्ठाण-विट्ठाण-तिट्ठाण-चउट्ठाणाणि गंतूण उक्कस्साणु-भागो ट्ठिदो । केवलणाण-केवलदंसणावरणीयाणं पुण सव्वघादिजहण्णफद्दयप्पहुडि जाव दारुसमाणस्स अणंते भागे गंतूण पुणो तिट्ठाण-चउट्ठाणाणि च गंतूण उक्कस्साणुभागो अवट्ठिदो । एत्थ केवलदंसणाणकेवलदंसणा-

---

'जीव योगसे प्रकृति और प्रदेशबन्धको तथा कषायसे स्थिति और अनुभागबन्धको करता है।'

क्षपित कर्मांशिक स्वरूपसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त करके दो छयासठ सागरोपम काल-तक भ्रमण करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो दीर्घ उद्वेलनकाल द्वारा सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्या-त्वकी उद्वेलना कर दो समय काल प्रमाण एक स्थिति करके स्थित हुए जघन्य सत्त्ववालेके भी चूंकि सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है अतएव इससे जाना जाता है कि समान धन युक्त वृद्धिसे अनुभागकी वृद्धि नहीं होती। इससे समान धनवाले बहुत परमाणुओंके होनेसे अनुभागकी अधिकता होती है, इस आग्रहका निराकरण होता है।

असमान धनवालोंकी एक पंक्तिकी अधिकता अनुभागकी अधिकताका कारण नहीं है, यह बात 'केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय, ये चारों ही प्रकृतियाँ तुल्य (व मिथ्यात्वसे अनन्तगुणे हीन अनुभागसे युक्त) हैं' इस चौंसठ पदवाले उत्कृष्ट अनुभाग संबंधी अल्पबहुत्वसे जानी जाती है। यथा- वीर्यान्तरायके लता समान जघन्य स्पर्द्धकसे लेकर एकस्थान, द्विस्थान, त्रिस्थान और चतुःस्थान जाकर उत्कृष्ट अनुभाग स्थित है। परन्तु केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीयके सर्वघाती जघन्य स्पर्द्धकसे लेकर दारु समान अनुभागका अनन्त बहुभाग जाकर, इससे आगे त्रिस्थान व चतुःस्थान जाकर उत्कृष्ट अनुभाग अवस्थित है। यहां केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीयके अनुभागस्पर्द्धकोंकी

णादो। सुत्ताहिप्पाएण पुण खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय बेछावट्ठिसागरोवमाणि भमिय दंसणमोहक्खवणं पारभिय जाव अपुव्वकरणपढमाणुभागकंडयस्स चरिमफालीं ण पदादि ताव सम्मत्तस्सुक्कस्स-मणुभागसंतकम्ममिदि। जयध. अ. प. ३६०

✽ मूला. ५-४७ जोगा पयडि-पदेसा ठिदि-अणुभागा कसायदो होंति। गो. क. २५७.

✿ अ-आप्रत्योः ' लद्धा ' इति पाठः।

वरणीयअणुभागफद्दयपंतीदो वीरियंतराइयस्स अणुभागफद्दयपंती बहुआ केत्तियमेत्तेण ? लदासमाणफद्दएहि दारुसमाणफद्दयाणं अणंतिमभागेण च । तदो चदुण्हं कम्माणं अणुभागस्स सरिसत्तं ण जुज्जदे । भणिदं च सुत्ते सरिसत्तं । तेण असरिसधणियएगोलीपरमाणूणमणुभागे मेलाविदे वि णाणुभागट्ठाणं होदि त्ति णव्वदे । एदं जहण्णट्ठाणं सव्वजीवेहि अणंतगुणेण गुणगारेण गुणिदे सुहुमसाम्पराइयदुचरिमसमए पबद्धबिदियाणुभागट्ठाणपमाणं होदि । एदम्मि जहण्णट्ठाणं सोहिय रूवूणे कदे दोण्णं ट्ठाणाणं अंतरं होदि । वड्ढिफद्दयसलागाओ विरलिय वड्ढिदअणुभागं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स वड्ढिफद्दयपमाणं होदि । एवाओ फद्दयवड्ढीयो, जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्स उवरि पक्खविज्जमाणत्तादो । कधमेदासिं* फद्दयसण्णा? चिराण अणुभागं मोत्तूण अक्कमेण वड्ढिदूण कमवड्ढिमुवगयाणुभाग* वड्ढीए चेव फद्दयत्तुवलंभादो । एत्थ पढमरूवधरिदं जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्सुवरि पक्खित्ते वड्ढिफद्दएसु पढमफद्दयं होदि । फद्दयवड्ढीरूवूणा फद्दयंतरं होदि । फद्दयवड्ढी चेव एगफद्दयवग्गणाहि उणा हेट्ठिम-उवरिमवग्गणाणमंतरं होदि । पुणो बिदियफद्दयं घेत्तूण पक्खेवपढमफद्दयं पडिरासिय पक्खित्ते बिदियफद्दयं होदि ।

पंक्तिसे वीर्यान्तरायके अनुभाग स्पर्द्धकोंकी पंक्ति बहुत हैं । कितनी मात्रसे वह बहुत है ? वह लता समान अनुभागस्पर्द्धकों तथा दारु समान अनुभागस्पर्द्धकोंके अनन्तवें भाग मात्र अधिक है । इसी कारण उक्त चार कर्मोंके अनुभागकी समानता उचित नहीं है । परन्तु सूत्रमें सदृशता बतलायी गई है । इससे जाना जाता है कि असमान धनवाले एक पंक्ति रूप परमाणुओंके अनुभागके मिलानेपर भी अनुभागस्थान नहीं होता है ।

इस जघन्य स्थानको सब जीवोंसे अनन्तगुणे गुणकारके द्वारा गुणित करनेपर सूक्ष्मसाम्परायिकके द्विचरम समयमें बाँधे गये द्वितीय अनुभागस्थानका प्रमाण होता है । इसमेंसे जघन्य स्थानको घटाकर एक कम करनेपर दोनों स्थानोंका अन्तर होता है । वृद्धिस्पर्द्धक शलाकाओंका विरलन कर वृद्धिगत अनुभागको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति वृद्धिस्पर्द्धकोंका प्रमाण होता है । ये स्पर्द्धकवृद्धियाँ है क्योंकि, जघन्य स्थानके अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर इनका प्रक्षेप किया जानेवाला है ।

शंका – इनकी स्पर्द्धक संज्ञा कैसे है ?

समाधान– कारण कि चिरअनुभागको छोड़कर युगपत् वृद्धिको प्राप्त होकर क्रमवृद्धिको प्राप्त अनुभागकी वृद्धिके ही स्पर्द्धकपना पाया जाता है । यहां प्रथम अंकके ऊपर रखी हुई राशिको जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर रखनेपर वृद्धिस्पर्द्धकोंमेंसे प्रथम स्पर्द्धक होता है । एक कम स्पर्द्धकवृद्धि प्रमाण उन स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है । एक स्पर्द्धक वर्गणाओंसे हीन स्पर्द्धकवृद्धि ही अधस्तन और उपरिम वर्गणाओंका अन्तर होता है ।

पुनः द्वितीय स्पर्द्धकको ग्रहण कर प्रक्षेपसूत्र प्रथम स्पर्द्धककी प्रतिराशि करके उसमें मिलाने-

---

* ताप्रतौ ' कथं? एदासिं ' इति पाठः । * अप्रतौ कमवड्ढीमुवरिगदाणुभाग ' इति पाठः ।

रूवूणा वड्ढीफद्दयंतरं । सा* चेव वड्ढी एगफद्दयवग्गणाहि ऊणा उवरिम-हेट्ठिमफद्दयाणं जहण्णुक्कस्सवग्गणाणमंतरं होदि । तदियफद्दयं घेत्तूण विदियफद्दयं पडिरासिय पक्खित्ते तदियफद्दयं होदि । वड्ढिदव्वं रूवूणं फद्दयंतरं । एगफद्दयवग्गणाहि ऊणं जहण्णुक्कस्सवग्गणंतरं । एवं णेयव्वं जाव विरलणचरिमरूवधरिदे दुचरिमफद्दयम्मि पक्खित्ते विदियं ठाणं चरिमफद्दओ च उप्पज्जदि । ण च विदियट्ठाणस्स तस्सेव चरिमफद्दयस्स च एगत्तं, चरिमरूवधरिदवड्ढीए अक्कमेण वड्ढिदूण कमवड्ढिमुवगयाए पाधण्णपदे फद्दयत्तब्भुवगमादो दुचरिमफद्दएण सह चरिमवड्ढीए ट्ठाणत्तब्भुवगमादो । जदि एवं तो वड्ढीए पक्खित्ताए फद्दयमुप्पज्जदि त्ति कधं घडदे ? ण एस दोसो, संजोगसरूवेण पुव्वणिप्पण्णफद्दयस्स वि कधं उप्पत्तीए अब्भुवगमादो ।

एदस्स विदियट्ठाणस्स फद्दयंतराणि जहण्णट्ठाणफद्दयंतरेहिंतो अणंतगुणाणि । को गुणकारो? सव्वजीवेहि अणंतगुणो । तं जहा-जहण्णट्ठाणफद्दयसलागाहि अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाहि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताहि जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगं फद्दयं होदि । तं रूवूणं जहण्णट्ठाणफद्दयंतरं । पुणो विदियट्ठाणवड्ढि वड्ढिफद्दयसलागाहि खंडिदे फद्दयं

पर द्वितीय स्पर्द्धक होता है । एक कम वृद्धि उक्त स्पर्द्धकोंका अन्तर होती है । एक स्पर्द्धककी वर्गणाओंसे हीन वही वृद्धि उपरिम और अधस्तन स्पर्द्धकोंकी जघन्य एवं उत्कृष्ट वर्गणाओंका अन्तर होती है । तृतीय स्पर्द्धकको ग्रहण कर द्वितीय स्पर्द्धकको प्रतिराशि करके उसमें मिलाने-पर तृतीय स्पर्द्धक होता है । एक कम वृद्धिगत द्रव्य दोनों स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है । एक स्पर्द्धककी वर्गणाओंसे हीन वही जघन्य व उत्कृष्ट वर्गणाओंका अन्तर होता है । इस प्रकार विरलन राशिके चरम अंकके प्रति प्राप्त राशिको द्विचरम स्पर्द्धकमें मिलानेपर द्वितीय स्थान और अन्तिम स्पर्द्धकके उत्पन्न होने तक ले जाना चाहिये । यहाँ द्वितीय स्थान और उसका ही अन्तिम स्पर्द्धक एक नहीं हो सकते, क्योंकि, अन्तिम अंकके प्रति प्राप्त वृद्धिसे युगपत् वृद्धिगत होकर क्रमवृद्धिको प्राप्त (अनुभागकी वृद्धिको) प्राधान्य पदमें स्पर्द्धक स्वीकार किया गया है, तथा द्विचरम स्पर्द्धकके साथ अन्तिम वृद्धिको स्थान स्वीकार किया गया है ।

शंका- यदि ऐसा है तो वृद्धिका प्रक्षेप करनेपर स्पर्द्धक होता , यह कथन कैसे घटित होगा ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संयोग स्वरूपसे पहिले उत्पन्न हुए स्पर्द्धककी भी कथंचित् उत्पत्ति स्वीकार की गई है ।

इस द्वितीय स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकोंके अन्तर जघन्य स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकोंके अंतरोंसे अनन्तगुणे हैं । गुणकार क्या है? वह सब जीवोंसे अनन्तगुणा है । यथा- अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र जघन्य स्थानसंबंधी स्पर्द्धक शलाकाओंका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक स्पर्द्धक होता है । उसमेंसे एक कम करनेपर जघन्य स्थान संबंधी स्पर्द्धकोंका

---

* अप्रतौ 'सो' इति पाठ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

होदि। तम्हि रूवूणे कदे फद्दयंतरं होदि। जहण्णट्ठाणफद्दएण बिदियट्ठाणवड्ढिफद्दए भागे हिदे(?) सव्वजीवेहि अणंतगुणो गुणगारो आगच्छदि। एवं फद्दयंतरस्स वि गुणगारो साधेयव्वो। एवं सुहुमसांपराइयतिचरिमसमयप्पहुडि जाणि बंधट्ठाणाणि तेसिं सव्वेसिं पि एवं चेव फद्दयचरणा कायव्वा। णवरि बिदियबंधट्ठाणादो तदियबंधट्ठाणमणंतगुणं। तदियादो चउत्थबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवमणंतगुणाए सेडीए सुहुमसांपराइय-अणियट्टिखवगद्धासु णेदव्वं। पुणो एदेसु बंधट्ठाणेसु हेट्ठिमट्ठाणंतरादो उवरिमट्ठाणंतरमणंतगुणं। हेट्ठिमट्ठाणफद्दयंतरादो वि उवरिमट्ठाणफद्दयंतरमणंतगुणं। कुदो? अणंतगुणाए सेडीए वड्ढिमुवगदत्तादो।

सव्वविसुद्धसंजमाहिमुहचरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स णाणावरणजहण्णट्ठिदिबंधपाओग्गाणि असंखेज्जलोगमेत्तविसोहिट्ठाणाणि। पुणो तेसिं उक्कस्सचरिमविसोहीए असंखेज्जलोगमेत्तउत्तरकारणसहायाए बज्झमाणअणुभागविसोहिट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि। तत्थ असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि हवंति।

किं छट्ठाणं णाम? जत्थ अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि कंडयमेत्ताणि गंतूण सइमसंखेज्जभागवड्ढी होदि। पुणो वि अणंतभागवड्ढीए चेव कंडयमेत्तट्ठाणाणि गंतूण बिदिय-

होती है। तब रूपोन करनेपर स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है। जघन्य स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकका द्वितीय स्थान सम्बन्धी वृद्धिस्पर्द्धकमें भाग देनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणा गुणकार आता है। इसी प्रकार स्पर्द्धकोंके अन्तरका भी गुणकार सिद्ध करना चाहिए।

इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिकके त्रिचरम समयसे लेकर जो बन्धस्थान हैं उन सभीके स्पर्द्धकोंकी रचना इसी प्रकार करना चाहिए। विशेष इतना है कि द्वितीय बन्धस्थानसे तृतीय बन्धस्थान अनन्तगुणा है। तृतीय से चतुर्थ बन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार अनन्तगुणित श्रेणिसे सूक्ष्मसाम्पराय और अनिवृत्तिकरण क्षपककालोंमें ले जाना चाहिए। पुनः इन बन्धस्थानोंमें अधस्तन स्थानके अन्तरसे उपरिम स्थानका अन्तर अनन्तगुणा है। तथा अधस्तन स्थानके स्पर्द्धकोंके अन्तरसे भी उपरिम स्थानके स्पर्द्धकोंका अन्तर अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह अनन्तगुणित श्रेणिसे वृद्धिको प्राप्त हुआ है।

संयमके अभिमुख हुए सर्वविशुद्ध अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके ज्ञानावरणके जघन्य स्थितिबन्धके योग्य असंख्यात लोक मात्र विशुद्धिस्थान हैं। फिर उनमें असंख्यात लोक मात्र उत्तर कारणोंकी सहायता युक्त उत्कृष्ट अन्तिम विशुद्धिके द्वारा बाँधे जानेवाले अनुभागके विशुद्धिस्थान असंख्यात लोक मात्र हैं। वहां असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं।

शंका – षट्स्थान किसे कहते हैं?

समाधान – जहांपर अनन्त भागवृद्धिस्थान काण्डक प्रमाण जाकर एक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है। फिर भी अनन्त भागवृद्धिके ही काण्डक प्रमाण स्थान जाकर द्वितीय असंख्यात-

(?) अ-आप्रत्योः 'भागे हि' इति पाठः

असंखेज्जभागवड्ढी होदि । अणेण विहाणेण कंडयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढीसु गदासु पुणो कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढीयो गंतूण सइं संखेज्जभागवड्ढी होदि । पुणो पुव्वुद्दिट्ठहेट्ठिल्लमद्धाणं सयलं गंतूण विदिया संखेज्जभागवड्ढी होदि । पुणो वि तेत्तियं चेव अद्धाणं गंतूण तदिया संखेज्जभागवड्ढी होदि । एवं कंडयमेत्तासु संखेज्जभागवड्ढीसु गदासु अण्णेगं संखेज्जभागवड्ढिसमप्पत्तीए पाओग्गमद्धाणं गंतूण सइं संखेज्जगुणवड्ढी होदि । पुणो हेट्ठिमद्धाण संपुण्णमुवरि गंतूण विदिया संखेज्जगुणवड्ढी होदि । एदेण विहाणेण कंडयमेत्तासु संखेज्जगुणवड्ढीसु गदासु पुणो अण्णेगं संखेज्जगुणवड्ढिविसयं गंतूण सइमसंखेज्जगुणवड्ढी होदि । पुणो हेट्ठिल्लमद्धाणं संपुण्णं गंतूण विदियमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । एवं कंडयमेत्तासु असंखेज्जगुणवड्ढीसु गदासु पुणो अण्णेगमसंखेज्जगुणवड्ढिविसयं गंतूण अणंतगुणवड्ढी सइं होदि । एवं एगछट्ठाणं । एरिसाणि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पुणो तत्थ सव्वजहण्णं णाणावरणीयस्स अणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदेसिं चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणीयउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं पुणो तस्सेव चरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णविसोहीए बज्झमाणजहण्णाणुभागट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदेसिं चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो दुचरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजह-

---

भागवृद्धि होती है । इस क्रमसे काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंके बीतनेपर फिरसे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियां जाकर एक बार संख्यातभागवृद्धि होती हैं । पश्चात् पूर्वोद्दिष्ट समस्त अधस्तन अध्वान जाकर द्वितीय संख्यातभागवृद्धि होती है । फिरसे भी उतना मात्र ही अध्वान जाकर तृतीय संख्यातभागवृद्धि होती है । इस प्रकार काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियोंके बीतनेपर संख्यातभागवृद्धिकी उत्पत्तिके योग्य एक अन्य अध्वान जाकर एक बार संख्यातगुणवृद्धि होती है । पश्चात् फिरसे आगे समस्त अधस्तन अध्वान जाकर द्वितीय संख्यात गुणवृद्धि होती हैं । इस विधिसे काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियोंके बीतनेपर फिरसे संख्यातगुणवृद्धि विषयक एक अन्य अध्वान जाकर एक बार असंख्यातगुणवृद्धि होती है । फिर अधस्तन समस्त अध्वान जाकर असंख्यातगुणवृद्धिका द्वितीय स्थान होता है । इस प्रकार काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियोंके बीतनेपर फिर असंख्यातगुणवृद्धिविषयक एक अन्य अध्वान जाकर एक बार अनन्तगुणवृद्धि होती है । यह एक षट्स्थान है । ऐसे असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं ।

पुनः उनमें ज्ञानावरणीयका सर्वजघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर इन्हीं असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणीयका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर अन्तिम समयवर्ती उसी मिथ्यादृष्टिका जघन्य विशुद्धिके द्वारा बांधा जानेवाला जघन्य अनुभागस्थान अनन्तगुणा है । फिर इन्हीं असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर द्विचरम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी

ण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदिस्से चेव विसोहीए असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तम्हि चेव दुचरिमसमए जहण्ण-विसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं तिचरिमादिसुसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। पुणो तत्तो मिच्छाइट्ठिस्स सत्थाणुक्कस्सविसोहिपरिणामट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव सत्थाणजहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं।

एदस्सुवरि सव्वविसुद्धअसण्णिपंचिंदियमिच्छाइट्ठिचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणाए सेडीए ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। पुणो असण्णिपंचिंदियसत्थाणउक्कस्स-

---

ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर इसी विशुद्धिके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसी द्विचरम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान संबंधी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। इस प्रकार त्रिचरमादि समयोंमें अनंतगुणित क्रमसे अंतर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। पुनः उससे आगे मिथ्यादृष्टिके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धि परिणाम संबंधी जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान संबंधी जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है।

इसके आगे सर्वविशुद्ध असंज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टिके अंतिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान संबंधी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही अंतिम समयमें, जघन्य विशुद्धिस्थान संबंधी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों संबंधी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनंतगुणित श्रेणिसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। फिर असंज्ञी पंचेन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य

विसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्ज-लोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव सत्थाण-जहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव जहण्ण-विसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव जहण्णविसो-हिट्ठाणस्स असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

पुणो एवस्सुवरि सव्वविसुद्धचउरिंदियचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसो-हिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एवस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । एवं दुचरि-मादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति । पुणो चउरिंदियस-त्थाणुक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव चउरिंदियस्स सत्थाणविसोहिजहण्णट्ठाणस्स* णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणं-तगुणं । पुणो तस्सेव जहण्णविसोहिट्ठाणस्स असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरण-उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोकमात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही स्वस्थान जघन्य विशु-द्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही जघन्य विशुद्धिस्थानके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागस्थान अनन्तगुणा है ।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध चतुरिन्द्रियके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसीके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही अन्तिम समयमें होनेवाला जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । इसी प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणित क्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये । फिर चतुरिन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसी चतु-रिन्द्रियके स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही जघन्य विशुद्धिस्थानके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है ।

* अप्रतौ ' सत्थाणविसोहिट्ठाणस्स जहण्णणाणा ' इति पाठः ।

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धचरिमसमयतेइंदियउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। पुणो तेइंदियसत्थाणविसोहिउक्कस्सट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव सत्थाणविसोहिजहण्णट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणेसु उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं।

पुणो एदस्सुवरि बेइंदियसव्वविसुद्धचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणेसु उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणाए सेडीए ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। तत्तो बेइंदियसत्थाणउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध चरमसमयवर्ती त्रीन्द्रियके उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान संबंधी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों संबंधी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर उसके ही अंतिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान संबंधी जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों संबंधी उत्कृष्ट अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। इसी प्रकारसे द्विचरमादिक समयोंमें अनंतगुणितक्रमसे अंतर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। फिर त्रीन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्ध स्थानसंबंधी जघन्य अनुभागबंधस्थान अनंतगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही स्वस्थान जघन्य विशुद्धि स्थानसम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध द्वीन्द्रियके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धि स्थानसम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनंतगुणित श्रेणिरूपसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। इसके पश्चात् द्वीन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान संबंधी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनंतगुणा है। फिर इसके ही

असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव जहण्ण-विसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धबादरेइंदियचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । एवमणंतगुणकमेण दुचरिमादिसमएसु ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति । तत्तो बादरेइंदियसत्थाणुक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबन्धट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव बादरेइंदियसत्थाणजहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धसुहुमणिगोदअपज्जत्तचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणंपुणो तस्सेव चरिमसमयजहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभाग-

---

असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है ।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध बादर एकेन्द्रियके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थानसम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र छहस्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणितक्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये । उसके आगे बादर एकेन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसी बादर एकेन्द्रियके स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग-बन्धस्थान अनन्तगुणा है ।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बंधस्थान अनंतगुणा है । उसीके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसीके असं-

बंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाण-मणंतगुणं । एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति । तदो हदसमुप्पत्तियं ☆कादूणच्छिदसुहुमणिगोदअपज्जत्तसत्थाणुक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव सुहुमणिगोदअपज्जत्तसत्था-णजहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणबंध-संतसरिसअणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

एदेसिं ट्ठाणाणमंतराणि छवड्ढीए अवट्ठिदाणि । तं जहा- अणंतभागवड्ढिट्ठाणंतराणि फद्दयंतराणि च अणंतभागब्भहियाणि । अणंतभागवड्ढिट्ठाणंतराणि फद्दयंतराणि✲ च पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि--असंखेज्जगुणवड्ढि अणंतगुणवड्ढीणं ट्ठाणंतराणि✱ फद्दयंतराणि च अणंतगुणाणि । असंखेज्जभागवड्ढि-अब्भंतरमणंतभागवड्ढीणं✱ ट्ठाणंतराणि फद्दयंतराणि च असंखेज्जभागब्भहियाणि । संखेज्जभागवड्ढिअब्भंतरं अणंतभागवड्ढीणं ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि संखेज्जभागब्भहि-याणि । संखेज्जगुणवड्ढिअब्भंतरअणंतभागवड्ढीणं ट्ठाणंतर-फद्दयंतराणि संखेज्जगुण-

---

स्थात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणितक्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये । तत्पश्चात् हतस-मुत्पत्ति करके स्थित सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानाव-रणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसी सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका बन्ध व सत्त्वके सदृश अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है ।

इन स्थानोंके अन्तर छह प्रकारकी वृद्धिमें अवस्थित हैं । यथा- अनन्तभागवृद्धिस्था-नोंके अन्तर और स्पर्द्धकोंके अन्तर अनन्तवें भागसे अधिक हैं । अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तरों और स्पर्द्धकोंके अन्तरोंकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि , संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि सम्बन्धी स्थानोंके अन्तर व स्पर्द्धकोंके अन्तर अनन्तगुणे हैं । असंख्यातभागवृद्धिके भीतर अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातवें भाग अधिक हैं । संख्यातभागवृद्धिके भीतर अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर संख्यातवें भाग अधिक हैं । संख्यातगुणवृद्धिके भीतर अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर संख्यातगुणे अधिक हैं । असंख्यातगुणवृद्धिके भीतर

☆ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-ताप्रतिषु ' कादूणद्विद ' इति पाठः । ✲ अप्रतौ ' फद्दयंतराणि ' इत्येतत् पदं नास्ति । ✱ अप्रतौ ' वड्ढीट्ठाणंतराणि ' इति पाठः ।

ब्भहियाणि । असंखेज्जगुणवड्ढिअब्भंतरं अणंतभागवड्ढीणं ट्ठाणंतर--फद्दयंतराणि असंखेज्जगुणब्भहियाणि । एवं सेसाणं पि ट्ठाणाणमंतरपरूवणा जाणिय* कायव्वा ।

संपहि एत्थ चोदगो भणदि– सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णाणुभागट्ठाणादो हेट्ठिमअणुभागबंधट्ठाणाणं केवलाणं ण कदाचि वि कहिं वि जीवे संभवो अत्थि । तदो ण तेसिमणुभागट्ठाणसण्णा । बंधं पडि ट्ठाणसण्णा होदि त्ति भणिदे– ण, तेण सरूवेण अणुवलंभमाणस्स सरिसधणिएसु एगोलीए ट्ठिदपरमाणुपोग्गलेसु च अंतब्भावं गयस्स अपत्तसंताणुभागट्ठाणपमाणस्स अणुभागट्ठाणत्तविरोहादो । तदो सुहुमणिगोदपज्जत्त-जहण्णसंताणुभागट्ठाणादो हेट्ठिमअणुभागट्ठाणाणं परूवणा अणत्थिए त्ति? ण एस दोसो, एवस्सेव जहण्णाणुभागट्ठाणस्स सरूवपरूवणट्ठं तप्परूवणाकरणादो । ण च तेहि अपरूविदेहि जहण्णट्ठाणाणुभागपमाणं फद्दयपमाणं तत्थतणवग्गणपमाणं अंतरपमाणं च अवगम्मदे । तदो हेट्ठिमबंधट्ठाणपरूवणा सफला त्ति घेत्तव्वा । एवं सेस-असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं पि अंतरपरूवणा कायव्वा ।

एवमंतरपरूवणा समत्ता ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातगुणे अधिक हैं । इसी प्रकार शेष स्थानोंके भी अन्तरोंकी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिये ।

शंका– यहाँ शंकाकार कहता है कि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके जघन्य अनुभागस्थानसे नीचेके अनुभागबंधस्थान केवल कभी भी किसी भी जीवमें सम्भव नहीं हैं । इस कारण उनकी अनुभागस्थान संज्ञा संगत नहीं है । बंधके प्रति स्थान संज्ञा हो सकती है, ऐसा कहनेपर कहते हैं कि वैसा भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, उस स्वरूपसे न पाये जानेवाले, समान धनवालों व एक पंक्ति रूपसे स्थित परमाणु पुद्गलोंमें अन्तर्भावको प्राप्त हुए, तथा सत्त्वानुभागस्थानके प्रमाणको न प्राप्त करनेवालेके अनुभागस्थान होनेका विरोध है । इस कारण सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके जघन्य अनुभागसत्त्वस्थानसे नीचेके अनुभागस्थानोंकी प्ररूपणा अनर्थक है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि इसी जघन्य अनुभागस्थानके स्वरूपकी प्ररूपणा करनेके लिये उक्त अनुभागस्थानोंकी प्ररूपणा की गई है । कारण कि उनकी प्ररूपणाके विना जघन्य अनुभागस्थानका प्रमाण, स्पर्द्धकोंका प्रमाण, उनकी वर्गणाओंका प्रमाण और अंतरका प्रमाण नहीं जाना जा सकता है । अतएव उक्त नीचेके बंधस्थानोंकी प्ररूपणा सफल है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

इसी प्रकारसे शेष असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंकी भी अंतर प्ररूपणा करनी चाहिये ।

इस प्रकार अन्तरप्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

* आ-नप्रत्योः ' जाणिदूण ' इति पाठः ।

कंडयपरूवणदाए अत्थि अणंतभागपरिवड्ढिकंडयं असंखेज्जभाग-परिवड्ढिकंडयं संखेज्जभागपरिवड्ढिकंडयं संखेज्जगुणपरिवड्ढिकंडयं असंखेज्जगुणपरिवड्ढिकंडयं अणंतगुणपरिवड्ढिकंडयं ॥ २०२ ॥

सुहुमणिगोदजहण्णसंतट्ठाणप्पहुडि उवरिमेसु ट्ठाणेसु कंडयपरूवणा कीरदे। कुदो? एदम्हादो अण्णस्स अक्खवगाणुभागसंतकम्मस्स थोवीभूदस्स अभावादो। कुदो णव्वदे? सव्वविसुद्धसंजमाहिमुहमिच्छाइट्ठिस्स णाणावरणीयजहण्णाणुभागबंधो थोवो। सव्व-विसुद्धअसण्णिणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो। सव्वविसुद्धचउरिंदियणाणा-वरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो। एवं तेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंत-गुणो। बेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो। सव्वविसुद्धबादरेइंदियणाणा-वरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो। सव्वविसुद्धसुहुमेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभाग-बंधो अणंतगुणो। तस्सेव हदसमुप्पत्तियं *कादूणच्छिदणाणावरणजहण्णाणुभागसंत-कम्ममणंतगुणं। बादरेइंदियजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं। बेइंदियणाणावरणजहण्णा-णुभागसंतकम्ममणंतगुणं। तेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं। चउ-रिंदियणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं असण्णिपंचिंदियणाणावरणजहण्णा-

पूज्य गणिनी आर्यिका श्री सुविधिसागर जी महाराज

काण्डकप्ररूपणामें अनन्तभागवृद्धिकाण्डक, असंख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यातगुणवृद्धिकाण्डक, असंख्यातगुणवृद्धिकाण्डक और अनन्तगुणवृद्धिकाण्डक होते हैं ॥ २०२ ॥

सूक्ष्म निगोद जीवके जघन्य सत्त्वस्थानसे लेकर ऊपरके स्थानोंमें काण्डक प्ररूपणा की जाती है, क्योंकि, अक्षपकका इससे अल्प और कोई अनुभागसत्त्वस्थान नहीं है।

शंका- यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान- संयमके अभिमुख हुए सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टिके ज्ञानावरणीयका जघन्य अनुभागबन्ध स्तोक है। उससे सर्वविशुद्ध असंज्ञी (पंचेन्द्रिय) के ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। उससे सर्वविशुद्ध चतुरिन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। इस प्रकार त्रीन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध उससे अनन्तगुणा है। उससे द्वीन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। उससे सर्वविशुद्ध बादर एकेन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। उससे सर्वविशुद्ध सूक्ष्म एकेन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। हतसमुत्पत्ति करके स्थित हुए उसके ही ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है। उससे बादर एकेन्द्रियके (ज्ञानावरणका) जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है। उससे द्वीन्द्रियके ज्ञानावरण जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है। उससे त्रीन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है। उससे चतुरिन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है। उससे असंज्ञी पंचेन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व

* प्रतिषु 'कादूणट्ठिद' इति पाठः।

णुभागसंतकम्ममणंतगुणं सण्णिपंचिंदियसंजमाहिमुहमिच्छाइट्ठिणाणावरणीयजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणमिदि अणुभागप्पाबहुगादो ।

एक्केक्कस्स गुणगारो असंखेज्जलोगमेत्तसव्वजीवरासीणं असंखेज्जलोगमेत्तअसंखेज्जलोगाणं असंखेज्जलोगमेत्तउक्कस्स[1] संखेज्जाणं असंखेज्जलोगमेत्तअण्णोण्णब्भत्थरासीणं च गुणगारसरूवेण ट्ठिदाणं संवग्गो[2] ।

आचार्यरत्न श्री सुविधिसागर जी महाराज

खीणकसायचरिमसमए णाणावरणीयजहण्णाणुभागसंतकम्मं होदि त्ति सामित्तसुत्ते उत्तं । तदो प्पहुडि कंडयपरूवणा किण्ण कीरदे? ण, तदो प्पहुडि कमेण छण्णं वड्ढीणमभावादो । ण च कमेण णिरंतरं वड्ढिविरहिदट्ठाणेसु कंडयपरूवणा कादुं सक्किज्जदे, विरोहादो । अविभागपडिच्छेदट्ठाणंतरपरूवणाओ किमिदि जहण्णबंधट्ठाणप्पहुडि परूविदाओ? ण एस दोसो, तेसिं तप्पहुडि परूवणाए कीरमाणाए वि दोसाभावादो । अधवा, तेसु वि सुहुमेइंदियजहण्णाणुभागसंतकम्मट्ठाणप्पहुडि उवरिमट्ठाणाणं परूवणा कायव्वा । कुदो ? हेट्ठिमाणं अणुभागबंधट्ठाणाणं संतसरूवेण उवलंभाभावादो ।

एदं च सुहुमणिगोदजहण्णाणुभागसंतट्ठाणं बंधट्ठाणेण सरिसं । कुदो एदं णव्वदे? एदस्सुवरि एगपक्खेवुत्तरं कादूण बंधे अणुभागस्स जहण्णिया वड्ढी, तम्मि चेव अंतो-

---

अनन्तगुणा है । उससे संयमके अभिमुख हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टिके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । इस अनुभाग अल्पबहुत्वसे यह जाना जाता है ।

इनमेंसे एक एकका गुणकार असंख्यात लोक मात्र सब जीवराशियाँ, असंख्यात लोक मात्र असंख्यात लोक, असंख्यात लोक मात्र उत्कृष्ट संख्यात और असंख्यात लोक मात्र अन्योन्याभ्यस्त राशियाँ, इन गुणकार स्वरूपसे स्थित राशियोंका संवर्ग है ।

शंका– क्षीणकषायके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणीयका जघन्य अनुभागसत्त्व होता है, यह स्वामित्वसूत्रमें कहा जा चुका है । उससे लेकर काण्डकप्ररूपणा क्यों नहीं की जाती है?

समाधान– नहीं, क्योंकि उससे लेकर क्रमसे छह वृद्धियोंका अभाव है । और क्रमसे निरन्तर वृद्धिसे रहित स्थानोंमें काण्डकप्ररूपणा करना शक्य नहीं है, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

शंका– फिर अविभागप्रतिच्छेदस्थानोंकी अन्तरप्ररूपणायें जघन्य बंधस्थानसे लेकर क्यों कही गई हैं ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उससे लेकर उनकी प्ररूपणाके करनेमें भी कोई दोष नहीं है । अथवा, उनमें भी सूक्ष्म एकेंद्रियके जघन्य अनुभागसत्त्वस्थानसे लेकर ऊपरके स्थानोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, अधस्तन बंधस्थान सत्ता रूपसे उपलब्ध नहीं है ।

यह सूक्ष्मनिगोदका जघन्य अनुभागसत्त्वस्थान बंधस्थानके सदृश है ।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– वह 'इसके आगे एक प्रक्षेप अधिक करके बंध होनेपर अनुभागकी जघन्य जयधवला पु. ३०२

---

[1] आप्रतौ ' मेत्तउक्कस्साणं ' इति पाठः । [2] अप्रतौ 'सव्वग्गो', आ-ता-प्रतिषु 'सव्वग्गो' इति पाठः ।

मुहुत्तेण खंडयघादेण घादिदे जहण्णिया हाणी होदि त्ति कसायपाहुडे परूविदत्तादो। बंधेण असरिसे सुहुमणिगोदजहण्णाणुभागट्ठाणे संजादे एवाओ जहण्णट्ठिव-हाणीयो ण लब्भंति। किं कारणं? बंधेण विणा वड्ढीए अभावादो। घादट्ठाणस्सुवरि एगपक्खेव-ववड्ढी किण्ण होदि त्ति भणिदे वुच्चदे-घादसंतट्ठाणं णाम बंधसरिसअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले हेट्ठिमउव्वंकादो अणंतगुणं उवरिमअट्ठंकादो अणंतगुणहीणं होदूण चेट्ठदि। एवस्सुवरि जदि वि सुट्ठु जहण्णेण वड्ढिदूण बंधदि तो वि उवरिमअट्ठंकसमाणबंधेण होदव्वं। तेण एत्थ अणंतगुणवड्ढी चेव लब्भदि, णाणंतभागवड्ढी। एत्थ जहण्ण-हाणी किण्ण घेप्पदे? ण, जहण्णबंधट्ठाणादो संखेज्जट्ठाणाणि उवरि अब्भुस्सरिय ट्ठिदसंतट्ठाणस्स अणंतगुणहाणिं मोत्तूण अणंतभागहाणीए अभावादो। तेणेदं सुहुम-णिगोदजहण्णट्ठाणं संतट्ठाणं ण होदि, किंतु बंधट्ठाणमिदि सिद्धं। होंति पि एवम-णंतगुणवड्ढीए चेव ट्ठिदमिदि वत्तव्वं।

एवमट्ठंकमेव ट्ठत्ति कधं णव्वदे? उवरि हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए* एगछट्ठाणमस्सिदूण ट्ठिदाए जहण्णट्ठाणादो अणंतभागब्भहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढियं ट्ठाणं होदि त्ति परूविदत्तादो णव्वदे जहा जहण्णट्ठाणमुव्वंकं ण होदि त्ति, उव्वंकम्हि संते सयलकंडयमेत्त-

वृद्धि तथा उसीका अन्तर्मुहूर्तमें काण्डकघातके द्वारा घात कर डालनेपर जघन्य हानि होती है' इस कषायप्राभृतकी प्ररूपणासे जाना जाता है। सूक्ष्म निगोदके जघन्य अनुभागस्थानके बन्धके सदृश न होनेपर यह जघन्य वृद्धि और हानि नहीं पायी जा सकती है, कारण कि बन्धके विना वृद्धिकी सम्भावना नहीं है।

शंका- घातस्थानके ऊपर एक प्रक्षेपकी वृद्धि क्यों नहीं होती है?

समाधान- ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि घात सत्त्वस्थान बन्धके सदृश अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें नीचेके ऊर्वकसे अनन्तगुणा और ऊपरके अष्टांकसे अनन्तगुणा हीन होकर स्थित है। इसके ऊपर यद्यपि अतिशय जघन्य स्वरूपसे बढकर बांधता है तो भी ऊपरके अष्टांक समान बन्ध होना चाहिये। इस कारण यहां अनन्तगुणवृद्धि पायी जाती है, न कि अनंतभागवृद्धि।

शंका- यहाँ जघन्य हानि क्यों नहीं ग्रहण की जाती है?

समाधान- नहीं, क्योंकि, जघन्य बंधस्थानके संख्यात स्थान आगे हटकर स्थित सत्त्व-स्थानकी अनंतगुणहानिको छोडकर अनंतभागहानिका अभाव है। इसी कारण यह सूक्ष्म निगोदका जघन्य स्थान सत्त्वस्थान नहीं है, किंतु बधस्थान ही है, यह सिद्ध है। बंधस्थान होकर भी वह अनंतगुणवृद्धिमें ही स्थित है, ऐसा जानना चाहिये।

शंका- यह अष्टांक ही है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान- एक षट्स्थानका आश्रय करके स्थित आगे की अधस्तनस्थानप्ररूपणामें जघन्य स्थानसे अनंतवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर असंख्यातवें भागसे अधिक (असंख्यात-भागवृद्धिका) स्थान होता है' यह जो प्ररूपणा की गई है उससे जाना जाता है कि जघन्य स्थान

(ता) अ-आप्रत्योः 'संखेज्जछट्ठाणाणि' इति पाठः। * अ-आप्रत्योः 'ट्ठाणपरूवणा', ताप्रतौ 'ट्ठाणपरूवणा (ए)' इति पाठः।

गमणाणुववत्तीदो। चत्तारिअंकं पि ण होदि, कंडयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण पढमासंखेज्जाभागवड्ढी होदि त्ति तत्थेव भणिदत्तादो। पंचंकं पि ण होदि संखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जगुणवड्ढी होदि त्ति परूविदत्तादो। छअंकं पि ण होदि, कंडयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण असंखेज्जगुणवड्ढी होदि त्ति वयणादो। सत्तंकं पि ण होदि, कंडयमेत्तअसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण अणंतगुणवड्ढी होदि त्ति वयणादो। तदो परिसेसियादो जहण्णट्ठाणमट्ठंकं त्ति सिद्धं। किमट्ठंकं णाम ? हेट्ठिमउव्वंकं सव्वजीवरासिणा गुणिदे जं लद्धं तेत्तियमेत्तेण हेट्ठिमउव्वंकादो जमहियं ट्ठाणं तमट्ठंकं णाम। हेट्ठिमउव्वंकं रूवाहियसव्वजीवरासिणा गुणिदे अट्ठंकमुप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि।

हेट्ठिमट्ठाणंतरादो अट्ठंकट्ठाणंतरमणंतगुणं। तं जहा–अणंतरहेट्ठिमउव्वंके रूवाहियसव्वजीवरासिणा भागे हिदे लद्धं रूवूणमुव्वंकट्ठाणंतरं होदि। सव्वजीवरासिणा हेट्ठिमउव्वंकं गुणिय रूवूणे कदे अट्ठंकट्ठाणंतरं होदि। उव्वंकट्ठाणंतरादो अट्ठंकट्ठाणंतरमणंतगुणं। को गुणगारो? रूवाहियसव्वजीवरासिणा गुणिदसव्वजीवरासी। दोसु वि वड्ढीसु

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ऊर्वक नहीं होता है, क्योंकि, ऊर्वकके होनेपर समस्त काण्डक प्रमाण गमन घटित नहीं होता है। वह चतुरंक भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियां जाकर प्रथम संख्यातभागवृद्धि होती है, ऐसा वहां ही कहा गया है। वह पंचांक भी नहीं हो सकता है, क्योंकि, संख्यातवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर संख्यातगुणवृद्धि होती है, ऐसा बतलाया गया है। वह षष्टांक भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, काण्डक मात्र संख्यातगुणवृद्धियां जाकर असंख्यातगुणवृद्धि होती है, ऐसा वचन है। वह सप्तांक भी नहीं हो सकता है, क्योंकि काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियां जाकर अनन्तगुणवृद्धि होती है, ऐसा वचन है। अतएव परिशेष स्वरूपसे वह जघन्य स्थान अष्टांक ही है, यह सिद्ध होता है।

शंका–– अष्टांक किसे कहते हैं ?

परिभाषा पृ. 170 पर

समाधान––[अधस्तन ऊर्वकको सब जीवराशिसे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतने मात्रसे जो अधस्तन ऊर्वकसे अधिक स्थान है उसे अष्टांक कहते हैं।] अधस्तन ऊर्वकको एक अधिक सब जीवराशिसे गुणित करनेपर अष्टांक उत्पन्न होता है, यह उसका अभिप्राय है।

अधस्तन स्थानके अन्तरसे अष्टांकस्थानका अन्तर अनन्तगुणा है। वह इस प्रकारसे– अनन्तर अधस्तन ऊर्वकमें एक अधिक सब जीवराशिका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसमेंसे एक कम करनेपर ऊर्वकस्थानका अन्तर होता है। अधस्तन ऊर्वकको सब जीवराशिसे गुणित करके एक कम करनेपर अष्टांकस्थानका अन्तर होता है। ऊर्वकस्थानके अन्तरसे अष्टांकस्थानका अंतर अनन्तगुणा है। गुणकार क्या है ? एक अधिक सब जीवराशिसे गुणित सब जीवराशि गुणकार है। दोनों ही वृद्धियोंको अपनी अपनी स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर

✡ पुणो अवरमेगमसंखेज्जगुणवड्ढिविसयं गंतूण जं चरिममुव्वंकट्ठाणमवट्ठिदं तम्मि रूवाहियसव्वजीवरासिणा गुणिदे पढममट्ठंकट्ठाणमुप्पज्जदि। जयध. अ. प. ३६८.।

सगसगफद्दयलागाहि ओवट्टिदासु फद्दयं होदि । रूवूणे कदे फद्दयंतरं । उव्वंकफद्दयंतरादो अट्ठंकफद्दयंतरमणंतगुणं । को गुणगारो ? ठाणंतरगुणगारस्स अणंतिमभागो । एवंविहजहण्णट्ठाणप्पहुडि सव्वट्ठाणाणमणंतभागवड्ढिकंडयसलागाओ घेत्तूण वड्ढीए पुंजं कादूण ट्ठवेयव्वा । एवमसंखेज्जभागवड्ढिकंडयसलागाओ विउव्विणिदूण[1] पुध ट्ठवेयव्वाओ । तहा संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि अणंतगुणवड्ढीणं च कंडयसलागाओ उव्विणिदूण पुध पुध ट्ठवेयव्वाओ । तासिं सलागाणं पमाणं वुच्चदे । तं जहा- एगट्ठाणब्भंतरे अणंतभागवड्ढीयो पंचण्णं कंडयाणमण्णोण्णब्भासमेत्तीयो चत्तारिकंडयवग्गावग्गमेत्तीयो छकंडयघणमेत्तीयो चत्तारिकंडयवग्गमेत्तीयो कंडयमेत्तीयो च । तासिं सविट्ठी- १०२४ २५६ २५६ २५६ २५६ ६४ ६४ ६४ ६४ ६४ ६४ १६ १६ १६ १६ ४ । असंखेज्जभागवड्ढीओ एगकंडयवग्गावग्गमेत्तीयो तिण्णिकंडयघणमेत्तीयो तिण्णिकंडयवग्गमेत्तीओ कंडयमेत्तीओ च । एदासिं संदिट्ठी- २५६ ६४ ६४ ६४ १६ १६ १६ ४ । संखेज्जभागवड्ढीयो एगकंडयघणमेत्तीयो बेकंडयवग्गमेत्तीयो कंडयं च । एदासिं संदिट्ठी- ६४ १६ १६ ४ । संखेज्जगुणवड्ढीयो कंडयवग्ग-कंडयमेत्तीओ । एदासिं संदिट्ठी-- १६ ४ । असंखेज्जगुणवड्ढीयो कंडयमेत्तीओ । तासिं संदिट्ठी ४ । अट्ठंकमेक्कं ।

स्पर्द्धक होता है । इसमेंसे एक कम करने पर स्पर्द्धकका अंतर होता है । ऊर्वक स्पर्द्धकके अंतरसे अष्टांक स्पर्द्धकका अंतर अनंतगुणा है । गुणकार क्या है ? गुणकार स्थानांतरके गुणकारका अनंतवां भाग है । इस प्रकारके जघन्य स्थानसे लेकर सब स्थानोंकी अनंतभागवृद्धिकाण्डकशलाकाओंको ग्रहण कर वृद्धिका पुंज करके स्थापित करना चाहिये । इसी प्रकार असंख्यातभागवृद्धिकाण्डकशलाकाओंको उत्पन्न करके पृथक् स्थापित करना चाहिये । तथा संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और अनंतगुणवृद्धिकी काण्डकशलाकाओंको उत्पन्न करके पृथक् पृथक् स्थापित करना चाहिये । उन शलाकाओंका प्रमाण बतलाते हैं । वह इस प्रकार है-- एक स्थानके भीतर अनंतभागवृद्धियां पांच काण्डकोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि (४×४×४×४×४ = १०२४) के बराबर, चार काण्डकोंके वर्गके वर्ग प्रमाण, छह काण्डकोंके घन प्रमाण, चार काण्डकोंके वर्ग प्रमाण और एक काण्डक प्रमाण हैं । इनकी संदृष्टि- १०२४; २५६, २५६, २५६, २५६, ६४, ६४, ६४, ६४, ६४, ६४, १६, १६, १६ १६, ४ । संख्यात भागवृद्धियां एक काण्डकके वर्गावर्ग प्रमाण, तीन काण्डकोंके घन प्रमाण, तीन काण्डकोंके वर्ग प्रमाण और एक काण्डक प्रमाण हैं । इनकी संदृष्टि २५६; ६४, ६४, ६४, १६, १६, १६, ४ । संख्यातभागवृद्धियां एक काण्डकके घन प्रमाण, दो काण्डकोंके वर्ग प्रमाण और एक काण्डक प्रमाण हैं। इनकी संदृष्टि- ६४; १६, १६; ४। संख्यातगुणवृद्धियां एक कांडकके वर्ग व कांडक प्रमाण हैं । इनकी संदृष्टि- १६, ४ । असंख्यात-

---

[1] मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-प्रत्योः ' -सलागाओ एउव्विणिदूण ', काप्रतौ ' सलागाओ (ए) उव्विणिदूण ' इति पाठः । [2] अ-आप्रत्योः ' एगट्ठाण ' इति पाठः ।

सं च जहण्णट्ठाणमिदि घेत्तव्वं । एदं पुध पुध असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणसलागाहि गुणिदे सव्वट्ठाणाणं अप्पिदवड्ढीयो होंति । एदासु एगकंडएण पुध पुध ओवट्टिदासु लद्धमप्पणो कंडयसलागाओ होंति । एवं दव्वियं । एवंसि परूवणा सुत्ते उद्दिट्ठा । तं जहा- अणंतभागपरिवड्डिकंडयं असंखेज्जभागपरिवड्डिकंडयं संखेज्जभागपरिवड्डिकंडयं संखेज्जगुणपरिवड्डिकंडयं असंखेज्जगुणपरिवड्डिकंडयं अणंतगुणपरिवड्ढिकंडयं पि अत्थि । कधमेत्थ बहूणमेगवयणणिद्देसो? ण, जादिदुवारेण बहूणं पि एगत्ताविरोहादो । एदं परूवणासुत्तं देसामासियं, सूचिदपमाणप्पाबहुगत्तादो । तेण तेसिं दोण्णं पि एत्थ परूवणा कीरदे । तं जहा- अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीओ च असंखेज्जलोगमेत्ताओ । कुदो ? असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणसलागाहि अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसग-सगकंडयसलागासु गुणिदासु वि असंखेज्जलोगमेत्तरासिसमुप्पत्तीए । पमाणं गदं ।

अप्पाबहुगं उच्चदे- सव्वत्थोवाओ अणंतगुणवड्ढिकंडयसलागाओ । असंखेज्जगुणवड्ढिकंडयसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेगं कंडयं । संखेज्जगुणवड्डिकंडयसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो? रूवाहियकंडयं

गुणवृद्धियों काण्डक प्रमाण हैं । उनकी संदृष्टि- ४ । अष्टांक एक है । वह जघन्य स्थान है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । इसको पृथक् पृथक् असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानशलाकाओंसे गुणित करनेपर सब स्थानोंकी विवक्षित वृद्धियां होती हैं । इनको एक काण्डकसे पृथक् पृथक् अपवर्तित करनेपर जो लब्ध हो उतनी अपनी काण्डकशलाकायें होती हैं । इस प्रकार स्थापित करके इनकी प्ररूपणा सूत्रमें कही है । यथा- अनन्तभागवृद्धिकाण्डक, असंख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यातगुणवृद्धिकाण्डक, असंख्यातगुणवृद्धिकाण्डक और अनन्तगुणवृद्धिकाण्डक भी हैं ।

शंका- यहां बहुतोंके लिये एक वचनका निर्देश कैसे किया है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, जातिके द्वारा बहुतोंके भी एक होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

यह प्ररूपणासूत्र देशामर्शक है, क्योंकि, वह प्रमाण और अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारोंका सूचक है । इसलिये उन दोनोंकी भी यहां प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- अनन्तभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि ये असंख्यात लोक प्रमाण हैं, क्योंकि, असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानशलाकाओंके द्वारा अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अपनी अपनी काण्डकशलाकाओंको गुणित करनेपर भी असंख्यात लोक मात्र राशि उत्पन्न होती है । प्रमाण समाप्त हुआ ।

अल्पबहुत्वको कहते हैं- अनन्तगुणवृद्धिकाण्डक शलाकायें सबसे स्तोक हैं । उनसे असंख्यातगुणवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है? गुणकार अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र एक काण्डक है । उससे संख्यातगुणवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या

संखेज्जभागवड्ढिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो? रूवाहियकंडयं । असंखेज्जभागवड्ढिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो? रूवाहियकंडयं । अणंतभागवड्ढिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो? रूवाहियकंडयं । एत्थ कारणं जाणिदूण वत्तव्वं । एवमप्पाबहुगं समत्तं । कंडयपरूवणा गदा ।

ओजजुम्मपरूवणदाए अविभागपडिच्छेदाणि कदजुम्माणि, ट्ठाणाणि कदजुम्माणि, कंडयाणि कदजुम्माणि ॥ २०३ ॥

अविभागपडिच्छेदाणं सरूवपरूवणं पुव्वं वित्थारेण कदमिदि णेह कीरदे । सव्वाणुभागट्ठाणाणं अविभागपडिच्छेदाणि कदजुम्माणि चदुहि अवहिरिज्जमाणे णिरंसत्तादो । सव्वेसिं ट्ठाणाणं चरिमवग्गणाए एगेगपरमाणुम्हि ट्ठिदअविभागपडिच्छेदा कदजुम्मा, तत्थ ट्ठिदअणुभागस्सेव ट्ठाणववएसादो । दुचरिमादिवग्गणाणमविभागपडिच्छेदा पुण कदजुम्मा चेवेत्ति णत्थि णियमो, तत्थ कद-बादरजुम्म-कलिओज-तेजोजाणं पि उवलंभादो । 'ठाणाणि कदजुम्माणि' त्ति उत्ते ट्ठाणाणि सगसंखाए फद्दयसलागाहि एगफद्दयवग्गणसलागाहि एगेगपक्खेवफद्दयसलागाहि य ट्ठाणाणि कदजुम्माणि त्ति उत्तं होदि । 'कंडयाणि कदजुम्माणि' त्ति भणिदे एगकंडयपमाणेण छण्णं वड्ढीणं पुध पुध कंडयसलागाहि य कंडयाणि कदजुम्माणि । एवमोजजुम्मपरूवणा समत्ता ।

है ? गुणकार एक अधिक काण्डक है । उनसे संख्यातभागवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है? गुणकार एक अधिक काण्डक है । उनसे असंख्यातभागवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार एक अधिक काण्डक है । उनसे अनन्तभागवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार एक अधिक काण्डक है । यहां कारणको जानकर कहना चाहिये । इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । काण्डकप्ररूपणा समाप्त हुई ।

ओज-युग्मप्ररूपणामें अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म हैं, स्थान कृतयुग्म हैं, और काण्डक कृतयुग्म हैं ॥ २०३ ॥

अविभागप्रतिच्छेदोंके स्वरूपकी प्ररूपणा पहिले विस्तारसे की जा चुकी है, अतएव अब यहां उनकी प्ररूपणा नहीं की जाती है । समस्त अनुभागस्थानोंके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म है, क्योंकि उन्हें चारसे अपहृत करनेपर कुछ शेष नहीं रहता । सब स्थानोंकी अन्तिम वर्गणाके एक एक परमाणुमें स्थित अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म हैं, क्योंकि, उसमें स्थित अनुभागका नाम ही स्थान है । परन्तु द्विचरमादिक वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म ही हों, ऐसा नियम नहीं है; क्योंकि, उनमें कृतयुग्म, बादरयुग्म, कलिओज और तेजोज संख्यायें भी पायी जाती हैं । 'स्थान कृतयुग्म है' ऐसा कहनेपर स्थान अपनी संख्यासे स्पर्द्धकशलाकाओंसे, एक स्पर्द्धककी वर्गणशलाकाओंसे तथा एक एक प्रक्षेपस्पर्द्धककी शलाकाओंसे कृतयुग्म हैं, ऐसा अभिप्राय ग्रहण करना चाहिये 'काण्डक कृतयुग्म है' ऐसा कहनेपर एक काण्डकके प्रमाणसे तथा छह वृद्धियोंकी पृथक् पृथक् काण्डकशलाकाओंसे काण्डक कृतयुग्म हैं, ऐसा समझना चाहिये । इस प्रकार ओज-युग्मप्ररूपण समाप्त हुई ।

छट्ठाणपरूवणदाए अणंतभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए वड्ढिदा? सव्वजीवेहि अणंतभागपरिवड्ढी । एवडिया परिवड्ढी ॥ २०४ ॥

' अणंतभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए वड्ढिदेत्ति ' पुच्छिदे अणंतभागपरिवड्ढी सव्वजीवेहि वड्ढिदा । ' सव्वजीवेहि ' त्ति उत्ते सव्वजीवाणं गहणं ण होदि, जीवेहिंतो अणुभागवड्ढीए असंभवादो । किंतु सव्वजीवरासिस्स जा संखा सा तदभेदेण 'सव्वजीवेत्ति' घेत्तव्वा । तेहि सव्वजीवेहि भागहारेभावेण करणत्तमावण्णेहि वड्ढिदा । सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं सा वड्ढी, जहण्णट्ठाणे पडिरासिय वड्ढिदपक्खेवे पक्खित्ते पढममणंतभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि । जहण्णट्ठाणे सव्वजीवरासिणा खंडिदे तत्थ एगखंडेणोवड्ढिय* पढममणंतभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि जं भणिदं तण्ण घडदे । तं जहा– जहण्णट्ठाणं पण्णारसविहं, परमाणुफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदेसु एग-दुगादि-अक्खसंचारवसेण पण्णारसविहजहण्णट्ठाणुप्पत्तिदंसणादो । एदेसु पण्णारसविहजहण्णट्ठाणेसु सव्वजीवरासिणा कं ठाणं छिज्जदे ? ण ताव परमाणू छिज्जंति, सव्वजीवेहि अभव्वसिद्धिएहिंतो अणंतगुणहीणकम्मपोग्गलेसु छिज्जमाणेसु एगपरमाणुअणंतिमभागस्स उवलंभादो । ण च पक्खेवो एगपरमाणुअणंतिमभागमेत्तो होदि, अणंतेहि परमाणूहि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

षट्स्थानप्ररूपणामें अनन्तभागवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा वृद्धिगत हुई है ? अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिगत हुई है । इतनी मात्र वृद्धि है ॥ २०४ ॥

अनंतभागवृद्धि किस वृद्धि द्वारा वृद्धिगत हुई है ', ऐसा पूछनेपर अनंतभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिगत हुई है । ' सब जीवोंसे ' ऐसा कहनेपर सब जीवोंका ग्रहण नहीं होता है, क्योंकि, जीवोंसे अनुभागवृद्धि सम्भव नहीं है । किंतु सब जीवराशिकी जो संख्या है वह उक्त जीवोंसे अभिन्न होनेके कारण ' सब जीवोंसे ' ग्रहण करने योग्य है । भागहार स्वरूपसे करणकारक अवस्थाको प्राप्त हुए उन सब जीवोंसे वह वृद्धिको प्राप्त हुई है । सब जीवराशिका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो वह वृद्धिका प्रमाण है । जघन्य स्थानको प्रतिराशि करके उसमें वृद्धिप्राप्त प्रक्षेपको मिलानेपर प्रथम अनंतभागवृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है, यह उसका अभिप्राय है ।

शंका– जघन्य स्थानको सब जीवराशिसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खंड द्वारा वर्धित प्रथम अनंतभागवृद्धिका स्थान होता है, यह जो कहा गया है वह घटित नहीं होता है । वह इस प्रकारसे- जघन्य स्थान पंद्रह प्रकारका है, क्योंकि परमाणु, स्पर्द्धक, वर्गणा और अविभागप्रतिच्छेद इनमें एक, दो आदिरूपसे अक्षसंचारके वश पंद्रह प्रकारके जघन्य स्थानकी उत्पत्ति देखी जाती है । इन पंद्रह प्रकारके जघन्य स्थानोंमेंसे सब जीवराशिके द्वारा कौनसा स्थान खंडित किया जाता है? उसके द्वारा परमाणु तो खण्डित किये नहीं जा सकते, क्योंकि, अभव्यसिद्धोंकी अपेक्षा अनंतगुणा और सिद्धजीवोंकी अपेक्षा अनंतगुणे हीनकर्मपुद्गलोंको सब जीवों द्वारा खंडित करनेपर एक परमाणुका अनंतवां भाग पाया जाता है। परंतु प्रक्षेप एक परमाणुके अनंतवें भाग मात्र होता नहीं है, क्योंकि, अभव्यसिद्धोंसे

---

* प्रतिषु ' खंडेणोवड्ढिय (भा) ' इति पाठः ।

अभवसिद्धिएहि अणंतगुणेहि एगपक्खेवणिप्फत्तीदो । ण फद्दयाणि छिज्जंति, सव्व-जीवेहि सिद्धेहितो अणंतगुणहीणजहण्णट्ठाणफद्दएसु छिज्जमाणेसु एगफद्दयस्स अणंतिमभागागमुवलंभादो । ण च जहण्णट्ठाणजहण्णफद्दयाणि अणंताणि आगच्छंति त्ति पक्खेवागमो वोसं सविफज्जदे, जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयसरिसेहि अणंतेहि फद्दएहि पक्खेवणिप्फत्तीदो । ण च जहण्णट्ठाणम्हि सव्वजीवेहितो अणंतगुणाणि फद्दयाणि अत्थि जेण सव्वजीवरासिणा भागे हिदे अणंताणि फद्दयाणि आगच्छेज्ज । जहण्णट्ठाणफद्दयाणि परमाणू च सिद्धाणमणंतिमभागमेत्ता चेव इत्ति एवं कुदो णव्वदे ? सव्व-ट्ठाणपरमाणू फद्दयाणि वि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताणि चेव इत्ति जिणोवदेसादो । ण जिणा वप्पलओ, तक्कारणाभावादो । ण वग्गणाओ छिज्जंति, तासु वि छिज्जमा-णासु एगवग्गणाए अणंतिमभागस्स आगममुवलंभादो । ण च एगवग्गणाए अणंतिम-भागेण पक्खेवो णिप्फज्जदि, अणंताहि वग्गणाहि णिप्फज्जमाणस्स एक्किस्से वग्गणाए अणंतिमभागेण णिप्फत्तिविरोहादो । ण च वग्गणाओ सव्वजीवेहि अणं-तगुणाओ जेण सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणवग्गणासु ओवट्टिदासु अणंतगुणाओ वग्गणाओ आगच्छेज्ज । सव्वाओ वि वग्गणाओ सिद्धाणमणंतभागमेत्ताओ, एगफद्द-यवग्गणसलागाओ ठविय जहण्णट्ठाणफद्दयसलागाहि गुणिदे सिद्धाणमणंतभागमे-

---

अनंतगुणे अनंत परमाणुओंके द्वारा एक प्रक्षेप उत्पन्न होता है। सब जीवों द्वारा स्पर्द्धक भी नहीं खण्डित किये जा सकते, क्योंकि, सिद्धोंसे अनंतगुणे हीन जघन्य स्थानके स्पर्द्धकोंको सब जीवों द्वारा खण्डित करनेपर एक स्पर्द्धकके अनंतवें भागका आना पाया जाता है। परंतु जघन्य स्थान संबंधी जघन्य स्पर्द्धक अनंत नहीं आते हैं। इसीलिये उक्त रीतिसे प्रक्षेपका आना बतलाना शक्य नहीं है, क्योंकि, जघन्य स्थान संबंधी अंतिम स्पर्द्धकके सदृश अनंत स्पर्द्धकोंसे प्रक्षेपकी उत्पत्ति होती है। और जघन्य स्थानमें सब जीवोंसे अनंतगुणे स्पर्द्धक हैं नहीं जिससे कि उनमें सब जीवराशिका भाग देनेपर अनंत स्पर्द्धक आ सकें। जघन्य स्थानके स्पर्द्धक और परमाणु सिध्दोंके अनंतवें भाग मात्र ही हैं, यह कहांसे जाना जाता है ? स्थानोंके परमाणु और स्पर्द्धक भी सिध्दोंके अनंतवें भाग मात्र ही है, ऐसा जो जिन भगवान का उपदेश है उसीसे वह जाना जाता है। यदि कहा जाय कि जिन भगवान असत्यवक्ता हैं सो यह सम्भव नहीं है, क्योंकि, उनके असत्यवक्तापना होनेका कोई कारण नहीं है। वर्गणायें भी सब जीवराशिके द्वारा खण्डित नहीं की जा सकती हैं, क्योंकि, उनके भी खण्डित किये जानेपर एक वर्गणाके अनंतवें भागका आगमन पाया जाता है। और एक वर्गणाके अनंतवें भागसे प्रक्षेप उत्पन्न होता नहीं है, क्योंकि, जो प्रक्षेप अनंत वर्गणाओं द्वारा उत्पन्न होनेवाला है उसको एक वर्गणाके अनंतवें भागसे उत्पत्तिका विरोध है। और वर्गणायें सब जीवोंसे अनंतगुणी हैं नहीं, जिससे कि सब जीवराशि द्वारा जघन्य स्थानकी वर्गणाओंको अपवर्तित करनेपर अनंतगुणी वर्गणायें आ सकें। सभी वर्गणायें सिध्दोंके अनंतवें भाग मात्र हैं, क्योंकि, एक स्पर्द्धककी वर्गणाशलाकाओंको स्थापित करके जघन्य स्थानकी स्पर्द्ध-कशलाकाओंसे गुणित करनेपर सिद्धोंके अनंतवें भाग मात्र राशि उत्पन्न होती है। इनके संयोगसे

त्तरासिसमुप्पत्तीदो। एदेसिं संजोगजणिदजहण्णट्ठाणेसु वि अवहिरिज्जमाणेसु एसो चेव दोसो, सिद्धाणमणंतिमभागं पडि विसेसाभावादो। ण जहण्णट्ठाणअविभागपडिच्छेदा वि सव्वजीवरासिणा छिज्जंति, जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयअविभागपडिच्छेदाणमणंतिमभागमेत्तअविभागपडिच्छेदेहि* पक्खेवाविभागपडिच्छेदाणमुप्पत्तीए अभावादो। ण च अणंताणं जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयाणं अविभागपडिच्छेदेहि उप्पज्जमाणो पक्खेवो जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयअविभागपडिच्छेदाणमणंतिमभागेण उप्पज्जदि, विरोहादो*। ण च पक्खेवफद्दयाणमणंतत्तमसिद्धं, पक्खेवाहिच्छावणणिक्खेवफद्दयाणि अणंताणि त्ति पाहुडसुत्तसिद्धत्तादो।

अविभागपडिच्छेदसंजोगजणिदजहण्णट्ठाणाणि वि छिज्जंति, पादेक्कभंगदोसदूसिदत्तादो। ण चापुव्वेहि फद्दएहि विणा सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तअविभागपडिच्छेदेसु उक्कड्डिदेसु बिदियट्ठाणमुप्पज्जदि, उक्कड्डणाए वड्ढीए इच्छिज्जमाणाए सरिसधणियपरमाणुवड्ढीए वि अणुभागट्ठाणवड्ढिप्पसंगादो। ण च एवं, जोगादो वि अणुभागस्स वड्ढिप्पसंगादो। ण च एवं, गुणिदकम्मंसिए मोत्तूण अण्णत्थ उक्कस्साणुभागट्ठाणस्स अभावावत्तीदो। ण च एवं, उक्कस्साणुभागट्ठाणकालस्स जहण्णेण एगसमयावट्ठाणप्पसंगादो। ण च एवं, उक्कस्साणुभागकालस्स जहण्णुक्कस्सेण

उत्पन्न हुए जघन्य स्थानोंको भी अपहृत करनेपर यही दोष है, क्योंकि, सिद्धोंके अनंतवें भागके
(3) प्रति कोई भेद नहीं है। जघन्य स्थानके अविभाग प्रतिच्छेद भी सब जीवराशिके द्वारा खण्डित नहीं किये जा सकते, क्योंकि, जघन्य स्थान संबंधी अंतिम स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेदोंके अनंतवें भाग मात्र अविभागप्रतिच्छेदोंसे प्रक्षेप संबंधी अविभागप्रतिच्छेदोंकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है। जघन्य स्थान संबंधी अनंत अंतिम स्पर्द्धकोंके अविभागप्रतिच्छेदोंसे उत्पन्न होनेवाला प्रक्षेप जघन्य स्थान संबंधी अंतिम स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेदोंके अनंतवें भागसे नहीं उत्पन्न हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है। और प्रक्षेपस्पर्द्धकोंकी अनंतता असिद्ध नहीं है, क्योंकि,
(5) प्रक्षेप, अतिस्थापना और निक्षेप स्पर्द्धक अनंत हैं; यह प्राभृतसूत्रसे सिद्ध है।

(6) अविभागप्रतिच्छेदोंके संयोगसे उत्पन्न जघन्य स्थान भी उक्त सब जीवराशि द्वारा खंडित नहीं किये जा सकते हैं, क्योंकि, जो दोष प्रत्येक भंगमें संभव हैं वे ही दोष यहां भी संभव हैं। दूसरे, अपूर्व स्पर्द्धकोंके विना सब जीवराशि द्वारा जघन्य स्थानको खंडित करनेपर उसमेंसे एक खंड मात्र अविभागप्रतिच्छेदोंके उत्कर्षणको प्राप्त होनेपर द्वितीय स्थान उत्पन्न भी नहीं हो सकता है, क्योंकि, उत्कर्षण द्वारा वृद्धिको स्वीकार करनेपर समान धनवाले परमाणुओंकी वृद्धिसे भी अनुभागस्थानकी वृद्धिका प्रसंग आता है। परंतु ऐसा है नहीं; क्योंकि, योगके द्वारा भी अनुभाग वृद्धिका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं; क्योंकि, गुणितकर्मांशिकको छोडकर अन्यत्र उत्कृष्ट अनुभागस्थानके अभावकी आपत्ति आती है। परंतु ऐसा है नहीं, क्योंकि, इस प्रकारसे उत्कृष्ट अनुभागस्थानके कालके जघन्य स्वरूपसे एक समय अवस्थानका प्रसंग आता है। परन्तु

---

* अ-आप्रत्योः '-पडिच्छेदेहि' इति पाठः। * आप्रतौ '-भागेण उप्पज्जदि त्ति विरोहादो', ताप्रतौ '-भागेणे त्ति ण उप्पज्जदि त्ति विरोहादो' इति पाठः।

अंतोमुहुत्तभुवगमादो । ण च अद्धभुवगमो णिण्णिबंधणो, जहण्णुक्कस्सकालपरूवयकसायपाहुडसुत्तावट्ठंभबलेण तदुप्पत्तीदो । किं च ण उक्कड्डणाए अणुभागवड्ढी होदि, ओकड्डणाए हाणिप्पसंगादो । ण च एवं अणुभागट्ठाणस्स एगसमयावट्ठाणप्पसंगादो । उक्कड्डिदअणुभागो अचलावलियमेत्तकालेण विणा ण ओकड्डिज्जदि, तदो एगसमओ ण लब्भदि त्ति उत्ते ण, अधाट्ठिदीए गलंतपरमाणू विट्ठाणसंतकम्मोक्कड्डणं च पेक्खिय तदुवलंभादो । ण च ओक्कड्डणाए अणुभागस्स खंडयघादेण विणा अत्थि घादो, तहाणुवलंभादो । ण च उक्कड्डिदअणुभागो खंडयघादेण घादिज्जदि, सयलसरिसधणियाणं घादाभावेण अणुभागखंडयस्स घादाभावादो । तं कुदो णव्वदे ? अणुभागहाणीए जहण्णुक्कस्सेण एगो चेव समओ त्ति कालणिद्देससुत्तादो णव्वदे । अध ओकड्डिदअणुभागो जहण्णट्ठाणादो उवरि अपुव्वफद्दयाणं सरूवेण* पददि, थोवत्तादो । ण च सरिसधणियं होदूण चेट्ठदि, पुव्वुत्तदोसप्पसंगादो । किं तु जहण्णट्ठाणफद्दयाणं विच्चालेसु अणंतेसु अपुव्वफद्दयागारो होदूण चेट्ठदि त्ति । णवरि उक्कड्डिज्जमाणपरमाणूणमणुभागो बज्झमाणपरमाणूणमणुभागसमाणो चेव होदि, णाहियो ण चूणो; 'बंधे उक्कड्डिज्जदि' त्ति वयणादो वग्गणवड्ढीए अणुभागवड्ढीए अभावादो च ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ऐसा है नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागस्थानका काल जघन्य उत्कृष्ट रूपसे अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्वीकार किया गया है। और वैसा स्वीकार करना अकारण नहीं है, क्योंकि, जघन्य व उत्कृष्ट कालकी प्ररूपणा करनेवाले कषायप्राभृतसूत्रके आश्रयबलसे वह सुसंगत ही है। इसके अतिरिक्त, उत्कर्षण द्वारा अनुभागकी वृद्धि नहीं हो सकती है, क्योंकि, वैसा माननेपर अपकर्षण द्वारा उसकी हानिका भी प्रसंग अनिवार्य होगा। परंतु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर अनुभागस्थानके एक समय अवस्थानका प्रसंग आता है। यदि कहा जाय कि उत्कर्षण प्राप्त अनुभाग अचलावली मात्र कालके विना चूंकि अपकर्षणको प्राप्त होता नहीं है, अतएव एक समय अवस्थान नहीं पाया जा सकता है; तो ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि वैसा नहीं है, क्योंकि अधःस्थितिके गलनेवाले परमाणुओंकी तथा द्विस्थान सत्कर्मके उत्कर्षकी अपेक्षा करके उक्त एक समय पाया जाता है। दूसरे कांडकघातके विना अपकर्षण द्वारा अनुभागका घात संभव नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता है। और उत्कर्षणप्राप्त अनुभाग कांडकघातके द्वारा घाता भी नहीं जा सकता है, क्योंकि, समस्त समान धनवाले परमाणुओंका घात न होनेसे अनुभागकांडकके घातका अभाव है। वह किस प्रमाणसे जाना जाता है? वह "अनुभागहानिका जघन्य व उत्कृष्ट रूपसे काल एक ही समय है" इस कालनिर्देशसूत्रसे जाना जाता है। यहां यह शंका की जा सकती है कि अपकर्षणप्राप्त अनुभाग जघन्य स्थानके ऊपर अपूर्व स्पर्द्धकोंके स्वरूपसे गिरता है, क्योंकि, वह स्तोक है। वह समान धन युक्त होकर स्थित नहीं होता है, क्योंकि, पूर्वोक्त दोषोंका प्रसंग आता है। किन्तु वह जघन्य स्थानसंबंधी स्पर्द्धकोंके अनंत अंतरालोंमें अपूर्व स्पर्द्धकोंके आकार होकर स्थित होता है। उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाले परमाणुओंका अनुभाग बांधे जानेवाले परमाणुओंके अनुभागसे समान ही होता है, न अधिक और न हीन; क्योंकि, "बन्धके समय उत्कर्षण करता है" ऐसा वचन है, तथा वर्गणा-

* अ-आप्रत्योः 'सरूवेण ण पददि' इति पाठः। ♣ ताप्रतौ 'ओकड्डिज्जमाण' इति पाठः।

बंधे जाने वाले परमाणुओं के अनुभाग से उत्कर्षण को प्राप्त होने वाले परमाणुओं का अनुभाग हीन समान नहीं होता। उत्कर्षण हो जाने पर बंधने वालों से न हीन न अधिक होता है। क्यों बंध के समय ही उत्कर्षण होता है।

तदो फद्दयंतरेसु उक्कड्डिदूण अपुव्वाणि फद्दयाणि करेदि; त्ति ण घडदे । एवं अपुव्वफद्दयाणि करेंतो वि ण सव्वफद्दयंतरेसु करेदि अहिच्छावणाए ♣ विणा णिक्खेवस्साभावादो । णाहिच्छावणं मोत्तूण उवरिमफद्दयंतरेसु करेदि, एदस्स ट्ठाणस्स बंधसंताणुभागट्ठाणेहिंतो पुधत्तप्पसंगादो । ण ताव एवं बंधट्ठाणं, बंधट्ठाणत्तेण सिद्धजहण्णट्ठाणचरिमफद्दयादो उवरि अणंतफद्दयरयणाभावेण अणुभागवड्ढीए अभावादो । ण च मज्झे अपुव्वेसु फद्दयेसु ढोइदेसु अणुभागट्ठाणवड्ढी होदि, केवलणाणावरणुक्कस्साणुभागादो फद्दयसंखाए अहियवीरियंतरायउक्कस्साणुभागट्ठाणस्स महल्लत्तप्पसंगादो । ण चेदं संतट्ठाणं पि, तस्स अट्ठंकुव्वंकाणमंतरे उप्पज्जमाणस्स अट्ठंकादो अणंतगुणहीणस्स उव्वंकादो अणंतगुणस्स फद्दयंतरेसु उप्पत्तिविरोहादो । ण च संतट्ठाणाणि बंधेण ओकड्डुक्कड्डणाए वा उप्पज्जंति, तेसिमणुभागफद्दयघादेण उप्पत्तिदंसणादो । ण च बंधेण विणा उक्कड्डणादो चेव अपुव्वाणं फद्दयाणं उप्पत्ती, तहाणुवलंभादो । उवलंभे वा खंडयघादेण विणा ओकड्डणाए चेव फद्दयाणं सुण्णत्तं होज्ज । ण च एवं, एवंविहजिणवयणाणुवलंभादो । किं च, एवं जहण्णट्ठाणस्सुवरि वड्ढिकंडयमेत्तअणंतभागवड्ढीयो घादिय जहण्णट्ठाणं ण उप्पावेदुं

वृद्धिका और अनुभागवृद्धिका अभाव भी है । इस कारण स्पर्द्धकोंके अंतरालोंमें उत्कर्षण करके अपूर्व स्पर्द्धकोंका करता है, यह कथन घटित नहीं होता है । इसी प्रकार अपूर्व स्पर्द्धकोंको करता हुआ भी वह सब स्पर्द्धकोंके अंतरालोंमें नहीं करता है, क्योंकि, अतिस्थापनाके विना निक्षेपका अभाव है । यदि कहा जाय कि अतिस्थापनाको छोडकर उपरिम स्पर्द्धकोंके अंतरालोंमें अपूर्व स्पर्द्धकोंको करता है तो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे इस स्थानके बंधस्थान और सत्त्वस्थानसे पृथक् होनेका प्रसंग आता है । वह बंधस्थान तो हो नहीं सकता है, क्योंकि, बंधस्थान स्वरूपसे सिद्ध जघन्य स्थानके अंतिम स्पर्द्धकसे ऊपर अनंत स्पर्द्धकोंकी रचनाका अभाव होनेसे अनुभागवृद्धिका अभाव है । यदि कहा जाय कि मध्यमें अपूर्व स्पर्द्धकोंकी रचना करनेपर अनुभागस्थानकी वृद्धि हो सकती है, तो यह कहना भी उचित नहीं है; क्योंकि, ऐसा होनेपर केवल ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा स्पर्द्धक संख्यासे अधिक वीर्यान्तरायके उत्कृष्ट अनुभागस्थानके महान् होनेका प्रसंग आता है । वह सत्त्वस्थान भी नहीं हो सकता है, क्योंकि, अष्टांकसे अनंतगुणे हीन व ऊर्वकसे अनंतगुणे होकर अष्टांक व ऊर्वकके अंतरालमें उत्पन्न होनेवाले उसकी स्पर्धकान्तरोंमें उत्पत्तिका विरोध है । दूसरे, सत्त्वस्थान बंध, अपकर्षण या उत्कर्षणसे उत्पन्न भी नहीं होते हैं, क्योंकि, उनकी उत्पत्ति अनुभागस्पर्द्धकोंके घातसे देखी जाती है । और बन्धके विना केवल उत्कर्षणसे ही अपूर्व स्पर्द्धकोंकी उत्पत्ति संभव नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता । यदि वैसा पाया जाना स्वीकार किया जाय तो कांडकघातके विना अपकर्षणसे ही स्पर्द्धकोंकी शून्यता हो जानी चाहिये । परन्तु वैसा है नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारका जिनवचन नहीं पाया जाता है । और भी, इस प्रकार जघन्य स्थानके ऊपर वृद्धिगत कांडक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियोंका घात करके जघन्य स्थानको उत्पन्न कराना शक्य नहीं है, क्योंकि, सन्धिके विना मध्यमें अनुभागकांडकघात-

♣ ताप्रतौ ' वि ण, ' इति पाठः । ♡ अ-आप्रत्योः ' अणुभाग खंडय घादेण ' इति पाठः ।

सक्किज्जदे, संधीए विणा मज्झे अणुभागखंडयघादस्स अभावादो। काओ अणुभागट्ठाणसंधीयो णाम ? बंधछवड्ढीयो। ण च ओकड्डुणाए घादेदि, सरिसधणियपरमाणूणमणुभागोवट्टणाए वावदाए तिस्सु फद्दयंतरेसु ट्ठिदफद्दयाणमभावे वावारविरोहादो। अध सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे भागे हिदे असंखेज्जलोगमेत्तसव्वजीवरासीओ असंखेज्जलोगमेत्तअसंखेज्जा लोगा असंखेज्जलोगमेत्तउक्कस्ससंखेज्जाणि असंखेज्जलोगमेत्तअण्णोण्णब्भत्थरासीयो च अण्णोण्णगुणिदमेत्तजहण्णबंधट्ठाणाणि आगच्छंति। तेसु वि जहण्णफद्दयपमाणेण कीरमाणेसु अणंताणि होंति त्ति सिद्धाणमणंतिमभागेण गुणिदेसु जहण्णफद्दयाणं पमाणं होदि। एदाणि फद्दयाणि एगादिएगुत्तरकमेण जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्सुवरि पवेसिय♠ अणंतभागवड्ढिट्ठाणं जदि उप्पाइज्जदि तं पि ण घडदे, एगअणंतभागवड्ढिपक्खेवब्भंतरे सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तफद्दयाणं उप्पत्तिदंसणादो। तं पि कुदो णव्वदे ? जहण्णपक्खेवजहण्णफद्दयसलागाणमट्ठुत्तरगुणिदाणमत्तरूवूण✡विगुणादिवग्गसहिदाणं वग्गमूलमुवरिममूलेण बिगुणुत्तरभाजिदलद्धे वि अणंतसव्वजीवरासीणमुवलंभादो। ण च एदं जुज्जदे, सव्वट्ठाणाणं फद्दयाणि वग्गणाओ परमाणू च सिद्धाणमणंतिमभागमेत्ता होंति त्ति सुत्तेण सह विरोहादो। तदो सव्वजीवरासी वड्ढीए भागहारो

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

का अभाव है। अनुभागस्थानसन्धियोंसे क्या अभिप्राय है ? उनसे अभिप्राय बंधगत छह वृद्धियोंका है। दूसरे अपकर्षणसे घात होता भी नहीं है, क्योंकि, समान धनवाले परमाणुओंके अनुभागके अपवर्तन (अपकर्षण) में व्यापृत उसके स्पर्द्धकान्तरोंमें स्थित स्पर्द्धकोंके अभावमें व्यापृत होनेका विरोध है। यहां शंका उपस्थित हो सकती है कि सब जीवराशिका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर असंख्यात लोक मात्र सब जीवराशियों, असंख्यात लोक मात्र असंख्यात लोकों, असंख्यात लोक मात्र उत्कृष्ट संख्याओं और असंख्यात लोक मात्र अन्योन्याभ्यस्त राशियोंको परस्पर गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतने मात्र जघन्य स्थान आते हैं। उनको भी जघन्य स्थानके स्पर्द्धकोंके प्रमाणसे करनेपर चूंकि वें अनन्त होते है, अतएव सिद्धोंके अनंतवें भागसे गुणित करनेपर जघन्य स्पर्द्धकोंका प्रमाण होता है। इन स्पर्द्धकोंको एकको आदि लेकर एक अधिक क्रमसे जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर प्रवेश कराकर यदि अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है तो वह भी घटित नहीं होता है, क्योंकि, एक अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपके भीतर सब जीवोंसे अनन्तगुण स्पर्द्धकोंकी उत्पत्ति देखी जाती है। वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ? चूंकि आठ व उत्तरसे गुणित व उत्तर कम द्विगुणित आदिके वर्गसे सहित ऐसी जघन्य प्रक्षेप सम्बन्धी जघन्य स्पर्द्धकशलाकाओंके प्रक्षेप वर्गमूलसे कम वर्गमूलमें दुगुणे उत्तरका भाग देनेपर जो लब्ध होता है उसमें भी अनंत सब जीवराशियां पायी जाती हैं; अतएव इसीसे वह जाना जाता है। परन्तु यह योग्य नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेपर स्थानोंके स्पर्द्धक, वर्गणायें और परमाणु सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र होते हैं, इस सूत्रके साथ विरोध आता है। इस कारण

♠ मप्रतिपाठोऽयम्। अ० आ० ताप्रतिषु, ' पदेसिय ' इति पाठः।

✡ अ-आप्रत्योः ' मूलरूवूण ' इति पाठः।

ण होदि त्ति घेत्तव्वं । सव्वजीवेहिंतो सिद्धेहिंतो च अणंतगुणहीणो अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणो जहण्णट्ठाणभागहारो होदि । एदेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे अणंताणि फद्दयाणि अणंताओ वग्गणाओ कम्मपरमाणू च आगच्छंति । तत्थ जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयाणि पक्खेवसलागमेत्ताणि घेत्तूण जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्स उवरि पंतियागारेण ट्ठविय फद्दयसलागसंकलणं विरलिय गलिद* सेसाविभागपडिच्छेदे समखंडं करिय दिण्णे रूवं पडि फद्दयविसेसो पावदि । तत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण पढमपडिरासीए पक्खित्ते पक्खेवस्स फद्दयं होदि । दोरूवधरिदं घेत्तूण विदियपडिरासीए पक्खित्ते विदियफद्दयं होदि । तिण्णिरूवधरिदं घेत्तूण तदियपडिरासीए पक्खित्ते तदियफद्दयं होदि । एवं णेयव्वं जाव चरिमफद्दए त्ति । णवरि पक्खेवफद्दयसलागमेत्तरूवधरिदं घेत्तूण चरिमपडिरासीए पक्खित्ते चरिमफद्दयं होदि । एसो एत्थ घेत्तव्वो एसो अत्थो घेत्तव्वो त्ति ?

एत्थ परिहारो उच्चदे तं जहा– तुम्हेहि उत्तभागहारो सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तसंखो ण घडदे, अणंतभागपरिवड्ढी सव्वजीवेहि वड्ढिदा त्ति सुत्तेण सह विरोहादो । तदियाबहुवयणंतं सव्वजीवसद्दं मोत्तूण पंचमीए एगवयणंते गहिदे ण सुत्तविरोहो होदि

सब जीवराशि वृद्धिका भागहार नहीं होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । किन्तु सब जीवों और सिद्धोंसे अनन्तगुणा हीन तथा अभवसिद्धोंसे अनन्तगुणा जघन्य स्थानका भागहार होता है। इसका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर अनन्त स्पर्द्धक, अनन्त वर्गणायें और अनन्त कर्मपरमाणु आते हैं। उनमें प्रक्षेपशलाकाओं प्रमाण जघन्य स्थानके अन्तिम स्पर्द्धकोंको ग्रहण करके जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर पंक्तिके आकारसे स्थापित कर स्पर्द्धकशलाकाओंके संकलनका विरलन कर गलनेसे शेष रहे अविभागप्रतिच्छेदोंको समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति स्पर्द्धकविशेष प्राप्त होता है। उसमेंसे एक अंकके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर प्रथम प्रतिराशिमें मिलानेपर प्रक्षेपक स्पर्द्धक होता है। दो अंकोंके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर द्वितीय प्रतिराशिमें मिलानेपर द्वितीय स्पर्द्धक होता है। तीन अंकोंके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर तृतीय प्रतिराशिमें मिलानेपर तृतीय स्पर्द्धक होता है। इस प्रकार अन्तिम स्पर्द्धक तक ले जाना चाहिये। विशेष इतना है कि प्रक्षेपस्पर्द्धकशलाकाओं प्रमाण अंकके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर अन्तिम प्रतिराशिमें मिलानेपर अन्तिम स्पर्द्धक होता है। इस कारण पूर्वोक्त समस्त दोषोंसे रहित होनेके कारण इस अर्थको ग्रहण करना चाहिये ?

समाधान– यहां इस शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है– तुम्हारे द्वारा कहा गया सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र संख्यावाला भागहार घटित नहीं होता है, क्योंकि, उसे माननेपर 'अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिको प्राप्त होती है' इस सूत्रके साथ विरोध प्राप्त होता है। यदि कहा जाय कि सूत्रमें स्थित 'सव्वजीव' शब्दको तृतीयाका बहुवचनान्त न लेकर पंचमीका

---

* अ-काप्रत्योः 'गहिद' इति पाठः ।

त्ति वोत्तुं ण जुत्तं, पंचमीए ✿एगवयणंते गहिदे वि सव्वजीवरासिस्सेव भागहारत्तुवलंभादो । तं पि कुदो णव्वदे? सर्वजीवादन्यस्य राशेरनिष्टत्वात्, ततः ✱ कर्तृविवक्षायामनन्तभागवृद्धिः सर्वजीवैर्वर्द्धिता, हेतुविवक्षायां सर्वजीवाद् वृद्धिः इति सिद्धम् । ण च सुत्तविरुद्धं वक्खाणं होदि, तस्स वक्खाणाभासत्तप्पसंगादो । किं च, एसो भागहारो अणुभागट्ठाणवड्ढीए अण्णस्स, अण्णहा अणंतभागवड्ढी सव्वजीवेहि वड्ढिदा त्ति सुत्तेण सह विरोहादो । ✿णावि अणुभागट्ठाणवड्ढी ण सरिसधणपरमाणुउड्ढीए होदि, जोगवड्ढीदो वि अणुभागवड्ढिप्पसंगादो । ण च एवं; वेदणीयस्स उक्कस्सखेत्ते जादे तस्सेव भावो णियमा उक्कस्सो ⓨ त्ति सुत्तवयणादो । उक्कड्डणाए अणुभागवड्ढिप्पसंगादो ओकड्डणाए अणुभागहाणिप्पसंगादो ण च सरिसधणियपरमाणुवड्ढीए अणुभागट्ठाणवड्ढी । जोगट्ठाणम्मि सरिसधणियजीवपदेसाणमविभागपडिच्छेदवड्ढीए जहा जोगट्ठाणवड्ढी गहिदा तहा एत्थ किण्ण घेप्पदे? ण, णाणापोग्गलदव्वट्ठिदसत्तीणं एगजीवदव्वट्ठिदसत्तीणं च एगत्तविरोहादो । ण च भण्णदव्वट्ठिदसत्तीणं तव्वड्ढीणं वा एगत्तमत्थि, अइप्पसंगादो ।

एक वचनान्त ग्रहण करनेपर सूत्रके साथ विरोध नहीं होता है, सो ऐसा कहना भी योग्य नहीं है; क्योंकि, पंचमीका एकवचनान्त ग्रहण करनेपर भी सब जीवराशिके ही भागहारपना पाया जाता है । यह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है? कारण कि सब जीवराशिसे भिन्न अन्य भागहार अनिष्ट है । इसलिये कर्तृत्व विवक्षामें अनन्तभागवृद्धि सब जीवों द्वारा वृद्धिको प्राप्त होती है और हेतु विवक्षामें सब जीवराशिके निमित्तसे वृद्धि होती है, यह सिद्ध है । दूसरे, सूत्रसे विरुद्ध व्याख्यान होता नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे उसके व्याख्यानाभास होनेका प्रसंग आता है । और भी- यह भागहार अनुभागस्थानवृद्धिसे अन्यका है, क्योंकि, अन्यथा ' अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिको प्राप्त होती है ' इस सूत्रके साथ विरोध होता है । वह भी अनुभागस्थानवृद्धि समान धनवाले परमाणुओंकी वृद्धिसे नहीं होती है, क्योंकि वैसा होनेपर योगवृद्धिसे भी अनुभागवृद्धिके होनेका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ' वेदनीय कर्मका उत्कृष्ट क्षेत्र हो जानेपर उसीका भाव नियमसे उत्कृष्ट होता है ' ऐसा सूत्र वचन है । उत्कर्षणसे अनुभागकी वृद्धिका प्रसंग होनेसे तथा अपकर्षणसे अनुभागकी हानिका प्रसंग होनेसे भी समान धनवाले परमाणुओंकी वृद्धिसे अनुभागस्थानकी वृद्धि नहीं होती है ।

शंका- योगस्थानमें समान धनवाले जीवप्रदेशोंके अविभागप्रतिच्छेदोंकी वृद्धिसे जैसे योगस्थानकी वृद्धि ग्रहण की गई है वैसे यहाँ यह क्यों नहीं ग्रहण की जाती है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि नाना पुद्गल द्रव्योंमें स्थित शक्तियों और एक जीव द्रव्यमें स्थित शक्तियोंके एक होनेका विरोध है । और भिन्न द्रव्योंमें स्थित शक्तियां अथवा उनकी वृद्धियां एक नहीं हो सकती, क्योंकि वैसा होनेपर अतिप्रसंग दोष आता है ।

✿ ताप्रतौ ' जुत्तं पि (त्ति), पंचमीए ' । ✱ अप्रतौ ' रनिष्टत्वातद्राशीनः ', आप्रतौ रनिष्टत्वात्तद्रीतिः ' इति पाठः । ✿ अ-आप्रत्योः ' णो ' इति पाठः । ⓨ अ-आप्रत्योः ' उक्कस्सा ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

किं च सरिसधणियपरमाणूहि अणुभागवुड्ढीए संतीए सरिसधणियपरमाणुपरिक्खएण अणुभागहाणीए होदव्वं । ण च एवं, पढमाणुभागखंडयफालीए पदमाणाए वि* अणुभागट्ठाणहाणिप्पसंगादो । सजोगिकेवलिम्हि गुणसेडीए उच्चागोवपरमाणुपोग्गलक्खंधेसु गलमाणेसु वि उच्चागोदाणुभागस्स उक्कस्सत्तुवलंभादो वा ण सरिसधणिएहि अणुभागवुड्ढी । तदो पक्खेवफद्दयवग्गणाणं एसो भागहारो होदि, तव्वुड्ढीए अणुभागट्ठाणवुड्ढिदंसणादो । ण च पक्खेवस्स एगोलीए ट्ठिदपरमाणूणमविभागपडिच्छेदेहि ट्ठाणवुड्ढी होदि, भिण्णदव्वट्ठिदाणं सत्तीणमेयत्तविरोहादो । केवलणाणावरणुक्कस्साणुभागादो वीरियंतराइयस्स तप्फद्दएहिंतो बहुवरफद्दयसंखस्स अणुभागेण समाणत्तण्णहाणुववत्तीदो वा एगोलिट्ठिदपरमाणूणमविभागपडिच्छेदा णाणुभागवुड्ढीए कारणं । तदो सरिसधणियाणुभागस्सेव एगोलीअणुभागस्स वि ण एसो भागहारो । किं तु एगपक्खेवचरिमवग्गणाए अणुभागवुड्ढीए एसो भागहारो ।

पुणो एदेण भागहारेण जहण्णट्ठाणसण्णिदएगपरमाणुअणुभागे भागे हिदे जहण्णट्ठाणस्स अणंतिमभागो आगच्छदि त्ति सव्वजीवरासिभागहारस्सुवरि जे उत्तभाविददोसा ते सव्वे एत्थ पावेंति त्ति एसो पक्खो ण णिरवज्जो । सुत्तुद्दिट्ठत्तादो सव्वजीवरासी चेव

दूसरे, समान धनवाले परमाणुओंसे अनुभागवृद्धिके होनेपर समान धनवाले परमाणुओंकी हानिसे अनुभागकी हानि भी होनी चाहिये । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर अनुभागकाण्डककी प्रथम फालिके नष्ट होनेके समयमें भी अनुभागस्थानकी हानिका प्रसंग अनिवार्य होगा । इसके अतिरिक्त सयोगकेवली गुणस्थानमें गुणश्रेणिद्वारा उच्च गोत्रके परमाणुओंसम्बन्धी पुद्गलस्कन्धोंके गलनेके समयमें भी चूंकि उच्चगोत्रका अनुभाग उत्कृष्ट पाया जाता है इसलिये भी समान धनवाले परमाणुओंसे अनुभागकी वृद्धि होना संभव नहीं है । इस कारण यह भागहार प्रक्षेपस्पर्द्धकोंकी वर्गणाओंका है, क्योंकि, उनकी वृद्धिसे अनुभागस्थानकी वृद्धि देखी जाती है । प्रक्षेपके एक पंक्तिमें स्थित परमाणुओं सम्बन्धी अविभागप्रतिच्छेदोंसे भी स्थानवृद्धि नहीं होती है, क्योंकि, भिन्न द्रव्योंमें स्थित शक्तियोंके एक होनेका विरोध है। अथवा केवलज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागसे उसके स्पर्द्धकोंकी अपेक्षा अधिक स्पर्द्धकसंख्यावाले वीर्यान्तरायके अनुभागरूपसे समानता अन्यथा बन नहीं सकती अतः एक पंक्तिमें स्थित परमाणुओंके अविभागप्रतिच्छेद अनुभागवृद्धिके कारण नहीं हो सकते । अतएव समान धनवाले अनुभागके समान एक पंक्ति रूप अनुभागका भी यह भागहार संभव नहीं है । किन्तु एक प्रक्षेप सम्बन्धी अन्तिम वर्गणाकी अनुभागवृद्धिका यह भागहार है ।

इस भागहारका जघन्य स्थान संज्ञावाले एक परमाणुके अनुभागमें भाग देनेपर चूंकि जघन्य स्थानका अनन्तवां भाग आता है, अतएव सब जीवराशि भागहारके ऊपर जो दोष दिये गये हैं वे सब यहां पाये जाते हैं । इसीलिये यह निर्दोष पक्ष नहीं है । इस कारण सूत्रोपदिष्ट

---

* अ-आप्रत्योः ' पढमट्ठाणाए वि ' ; ताप्रतौ ' पढमणाए वि ' इति पाठः ।

भागहारो होदि त्ति घेत्तव्वं ण। च पुव्वुत्तदोसा एत्थ संभवंति, जिणवयणे दोसाणमवट्ठाणाभावादो। तं जहा– ण ताव परमाणुफद्दयवग्गणासण्णिदजहण्णट्ठाणे विहज्जमाणे वुत्तदोसाणं संभवो, भावविहाणे अभावेहि संववहाराभावादो। ण तत्थतणदुसंजोगादिसु उत्तदोससंभवो वि, अभावे उत्तदोसाणं भावम्हि उत्तिविरोहादो। एदेणेव कारणेण भावाणुभागसंजोगेण दव्वफद्दयवग्गणासु उप्पादजहण्णट्ठाणम्हि उत्तदोसा ण संति। ण चउत्थसंजोगम्हि उत्तदोसा वि संभवंति, फद्दयंतरेसु णिसेगाणमणब्भुवगमादो ओकड्डुक्कड्डणाहि हाणी-वड्ढीणमणब्भुवगमादो जहण्णफद्दयाणि संकलणागारेण जहण्णट्ठाणस्सुवरि पवेसिय बिदियट्ठाणमुप्पाइज्जदि त्ति पइज्जाभावादो सव्वजीवरासिपडिभागेणपक्खेवम्मि अणंताणं फद्दयाणमुवलंभादो ण। च वड्ढिं[⊖] मोत्तूण पुव्विल्लाणुभागस्स फद्दयत्तं, तत्थ तल्लक्खणाभावादो। तम्हा सव्वजीवरासी भागहारो णिरवज्जो त्ति घेत्तव्वो।

तदो सव्वजीवरासिं विरलिय जहण्णट्ठाणसण्णिदएगपरमाणुअविभागं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि पक्खेवपमाणं पावदि। तत्थ एगपक्खेवं घेत्तूण जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते बिदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि।

जम्हि वा तम्हि वा पक्खेवे अणंतेहि फद्दएहि होदव्वं। एत्थ पुण एक्को वि फद्दओ

होनेसे सब जीवराशि ही भागहार होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। इसके अतिरिक्त इस पक्षमें दिये गये पूर्वोक्त दोष यहां सम्भव नहीं है, क्योंकि, जिनवचनमें दोषोंका रहना अशक्य है। वह प्रकारसे– परमाणु स्पर्द्धक और वर्गणा संज्ञावाले जघन्य स्थानको विभक्त करनेमें जो दोष बतलाये गये हैं वे सम्भव नहीं हैं, क्योंकि, भावविधानमें अभावोंसे संव्यवहारका अभाव है। वहां द्विसंयोगादिक भंगोंमें बतलाये गये दोषोंकी भी सम्भावना नहीं है, क्योंकि, अभावमें जो दोष बतलाये गये हैं उनके भावमें रहनेका विरोध है। इसी कारण भावानुभाग–संयोगसे द्रव्य रूप स्पर्द्धकवर्गणाओंमें उत्पन्न हुए जघन्य स्थानमें उक्त दोष सम्भव नहीं हैं। चतुर्थ संयोगमें कहे गये दोष भी सम्भव नहीं हैं, क्योंकि स्पर्द्धकान्तरोंमें निषेकोंको स्वीकार नहीं किया गया है, अपकर्षण व उत्कर्षणके द्वारा हानि व वृद्धि नहीं स्वीकार की गई है, जघन्य स्पर्द्धकोंको संकलनके आकारसे जघन्य स्थानके ऊपर प्रवेश कराकर द्वितीय स्थान उत्पन्न कराया जाता है ऐसी प्रतिज्ञाका अभाव है और सब जीवराशिके प्रतिभाग रूप एक प्रक्षेपमें अनन्त स्पर्द्धक पाये जाते हैं। और वृद्धिको छोडकर पूर्वके अनुभागके स्पर्द्धकरूपता भी नहीं बनती, क्योंकि, उसमें उसके लक्षणका अभाव है। इसलिये सब जीवराशि भागहार निर्दोष है, ऐसा समझना चाहिये।

इस कारण सब जीवराशिका विरलनकर जघन्य स्थान संज्ञावाले एक परमाणुअविभागको समखंड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है। उनमें एक प्रक्षेपको ग्रहण कर जघन्य स्थानको प्रतिराशि करके उसमें मिलानेपर अनंतभागवृद्धिका द्वितीय स्था होता है।

शंका– जिस किसी भी प्रक्षेपमें अनन्त स्पर्द्धक होने चाहिये। परन्तु यहां एक भी स्पर्द्धक

⊖ अ-आप्रत्योः 'अणुभागं' इति पाठः।

णत्थि, कधमेदस्स पक्खेवत्तं जुज्जदे? ण, एत्थ वि अणंताणं फद्दयाणं उवलंभादो। मार्गदर्शक:—अनेकेषामद्धानामर्धच्छिदः प्रक्षेपं समखंडं कादूण विण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगफद्दयपमाणं पावदि। कधमेदस्स फद्दयववएसो? अंतरिदूण कमेण वड्ढिदाविभागपडिच्छेदा सांतरा फद्दयं। तेणेत्थ एगरूवधरिदस्स फद्दयसण्णा। तं रूवूणं फद्दयंतरं। एत्थ एगफद्दयम्मि सगवग्गणासलागूणा सव्वजीवेहि सव्वागासादो वि सव्वपोग्गलादो वि अणंतगुणमेत्ता अविभागपडिच्छेदा वग्गणंतरं। एदेहि अविभागपडिच्छेदेहि जहण्णट्ठाणादो एगुत्तरादिकमेण जुत्तपरमाणू तिसु वि कालेसु सव्वजीवेसु णत्थि त्ति उत्तं होदि।

वग्गणंतरादो अविभागपडिच्छेदुत्तरभावो पढमफद्दयआदिवग्गणा होदि। तत्तो पहुडि णिरंतरं अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण वग्गणाओ गंतूण पढमफद्दयस्स चरिमवग्गणा होदि। वग्गणसण्णिदाणमविभागपडिच्छेदाणमाधारभूदा परमाणू अत्थि त्ति वुत्तं होदि। एवं पक्खेवस्स जहण्णफद्दयं पडिरासिय विदियरूवधरिदे पक्खित्ते विदियफद्दयं होदि। एगरूवधरिदाविभागपडिच्छेदाणं जुत्ता फद्दयसण्णा, अंतरिदूण

नहीं है, फिर इसको प्रक्षेप मानना कैसे योग्य है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, यहां भी अनन्त स्पर्द्धक पाये जाते हैं यथा– प्रक्षेपस्पर्द्धक शलाकाओंका विरलन कर प्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक स्पर्द्धकका प्रमाण प्राप्त होता है।

Dee पृ. 95 शंका– इसकी स्पर्द्धक संज्ञा कैसे है ?

समाधान– अन्तर करके क्रमसे वृद्धिको प्राप्त हुए सान्तर अविभागप्रतिच्छेदोंको स्पर्द्धक कहा जाता है। इसी कारण यहां एक अंकके प्रति प्राप्त राशिकी स्पर्द्धक संज्ञा है।

उसमेंसे एक अंक कम कर देनेपर स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है। यहां एक स्पर्द्धकमें अपनी वर्गणाशलाकाओंसे कम सब जीवों, समस्त आकाश तथा सब पुद्गलोंसे भी अनन्तगुणे मात्र अविभाग प्रतिच्छेद वर्गणाओंके अन्तर होते हैं। अभिप्राय यह है कि इन अविभागप्रतिच्छेदोंसे जघन्य स्थानसे उत्तरोत्तर एक एक अधिक क्रमसे युक्त परमाणु तीनों ही कालोंमें सब जीवोंमें नहीं हैं।

वर्गणान्तरसे एक एक अविभागप्रतिच्छेदसे अधिक अनुभागका नाम प्रथम स्पर्द्धककी आदि वर्गणा है। उससे लेकर निरन्तर एक एक अविभाग प्रतिच्छेदकी अधिकताके क्रमसे वर्गणामें जाकर प्रथम स्पर्द्धककी अन्तिम वर्गणा होती है। वर्गणा संज्ञावाले अविभागप्रतिच्छेदोंके आधारभूत परमाणु हैं, यह उसका अभिप्राय है। प्रक्षेपके इस जघन्य स्पर्द्धकको प्रतिराशि करके उसमें द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त राशिको मिलानेपर द्वितीय स्पर्द्धक होता है।

शंका– एक अंकके प्रति प्राप्त अविभागप्रतिच्छेदोंकी स्पर्द्धक संज्ञा योग्य है, क्योंकि अन्तरको प्राप्त होकर क्रमसे उनमें वृद्धि देखी जाती है। किंतु जघन्य स्थानसे सहित स्पर्द्धककी

कमेण तत्थ वड्ढिदंसणादो, ण जहण्णट्ठाणसहिदफद्दयस्स फद्दयसण्णा जुज्जदे? ण एस दोसो, सहचारेण अभेदेण वा जहण्णट्ठाणस्स फद्दयसहिदस्स फद्दयत्तब्भुवगमादो ।

बिदियफद्दयस्स वि अणंतभागा वग्गणंतरं, सेसअणंतिमभागो बिदियफद्दयवग्गणाओ । कुदो? एगपक्खेवब्भंतरफद्दयाणं फद्दयंतराणि सरिसाणि त्ति जिणोवदेसादो । एवं सव्वत्थ परूवेदव्वं । तदियफद्दयं घेत्तूण बिदियफद्दयस्सुवरि पक्खित्ते ओवचारियफद्दयं होदि । एवं णेदूण चरिमफद्दए ओवचारियदुचरिमफद्दयस्सुवरि पक्खित्ते पढममणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि । एवमेगपक्खेवम्मि अणंताणं फद्दयाण अत्थित्तपरूवणा कदा ।

किमट्ठं फद्दयपरूवणा कीरदे? एदेसु ट्ठाणसण्णिदअविभागपडिच्छेदेसु एदेसिमविभागपडिच्छेदट्ठाणाणमाधारभूदा परमाणू अत्थि एदेसिं च णत्थि त्ति जाणावणट्ठं कीरदे । तेसिं परूवणा सुत्ते किण्ण कदा? ण, एगोलीअविणाभाविट्ठाणपरूवणाए कदाए एदम्हादो चेव तेसिमेगोलीट्ठिदपरमाणूणमविभागपडिच्छेदाणं च अत्थित्तसिद्धीदो । सरिसधणियपरमाणुपरूवणा सुत्ते किण्ण कदा? अण्णहा एसा सीसो विभासाए कुदो? जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेण पदेसपरूवणा वि एदेण सूचिदा चेव । तदो एत्थ पदेसपरूवणा

स्पर्द्धक संज्ञा योग्य नहीं है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, स्पर्द्धक सहित जघन्य स्थानको सहचारसे अथवा अभेदसे स्पर्द्धक रूप स्वीकार किया गया है ।

द्वितीय स्पर्द्धकका भी अनन्त बहुभाग वर्गणान्तर और शेष अनन्तवाँ भाग द्वितीय स्पर्द्धककी वर्गणायें होती हैं, क्योंकि, एक प्रक्षेपके भीतर स्पर्द्धकोंके स्पर्द्धकान्तर सदृश होते हैं, ऐसा जिन भगवान्‌का उपदेश है । इसी प्रकार सब जगह प्ररूपणा करनी चाहिये । तृतीय स्पर्द्धकको ग्रहण करके द्वितीय स्पर्द्धकके ऊपर मिलानेपर औपचारिक स्पर्द्धक होता है । इस प्रकार जाकर अन्तिम स्पर्द्धकका औपचारिक द्विचरम स्पर्द्धकके ऊपर प्रक्षेप करनेपर अनन्तभागवृद्धिका प्रथम स्थान होता है । इस प्रकार एक प्रक्षेपमें अनन्त स्पर्द्धकोंके अस्तित्वकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका– स्पर्द्धकप्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान– स्थान संज्ञावाले इन अविभागप्रतिच्छेदोंमें इन अविभागप्रतिच्छेदस्थानोंके आधारभूत परमाणु हैं और इनके नहीं हैं, इस बातका ज्ञान करानेके लिये उक्त स्पर्द्धकप्ररूपणा की जा रही है ।

शंका– उनकी प्ररूपणा सूत्रमें क्यों नहीं की गई है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, एक श्रेणिके अविनाभावी स्थानोंकी प्ररूपणा कर चुकनेपर इससे ही उन एक श्रेणिमें स्थित परमाणुओं और अविभागप्रतिच्छेदोंका अस्तित्व सिद्ध हो जाता है ।

शंका– समान धनवाले परमाणुओंकी प्ररूपणा सूत्रमें क्यों नहीं की गई है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, वह कर ही दी गई है । क्योंकि यह सूत्र देशामर्शक है, अतएव प्रदेश प्ररूपणा भी इसीके द्वारा ही सूचित की गई है ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जहा बंधजहण्णट्ठाणम्हि परूविदा तहा परूवेदव्वा। णवरि संतकम्मपरमाणुं मोत्तूण णवकबंधपरमाणूणमुक्कड्डिदपरमाणूहि सह णिसेगविण्णासकमो परूवेदव्वो। संतस्स पुण णिसेगविण्णासकमो णत्थि, ओकड्डुक्कड्डुणाहि तस्स बंधसमए रचिदसरूवेण अवट्ठाणाभावादो।

एक्कम्हि परमाणुम्हि ट्ठिदअणुभागस्स ट्ठाणसण्णा ण घडदे, अणंतफद्दएहि वग्गणाहि विणा अणुभागट्ठाणासंभवादो? ण एस दोसो, जहण्णबंधट्ठाणस्स जहण्ण-फद्दयस्स जहण्णवग्गणमादिं कादूण सव्ववग्गणाणं सव्वफद्दयाणं सव्वट्ठाणाणं च एत्थेव उवलंभादो। जहा सव्वसंखा अविखत्तएगादिसंखा तहा एदमणंतभागवड्ढिट्ठाणं पि सगकुक्खिणिक्खित्तअसेसहेट्ठिमट्ठाणं। तदो ण पुव्वुत्तदोसप्पसंगो त्ति। किं च, मिच्छ-त्तस्स उक्कस्साणुभागो चउट्ठाणीयो त्ति सुत्तसिद्धो। तस्स चउट्ठाणसण्णा ण घडदे, सव्वघादित्तणेण एगट्ठाणाभावादो। सम्मामिच्छत्ताणुभागस्स वि दुट्ठाणत्तं ण जुज्जदे, तस्स दारुसमाणट्ठाणं मोत्तूण अण्णट्ठाणाभावादो। अह देसघादिजहण्णफद्दयस्स जह-ण्णवग्गणाविभागपडिच्छेदप्पहुडि सव्वाविभागपडिच्छेदा एग-दो-तिण्णि-चत्तारिट्ठाण-सण्णिदा सव्वे मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठाणम्मि अत्थि त्ति जदि तस्स चदुट्ठाणत्तं उच्चदि

इस कारण जिस प्रकारसे जघन्य बन्धस्थानमें प्रदेशप्ररूपणा की गई उसी प्रकारसे यहां भी उसकी प्ररूपणा करनी चाहिये। विशेषता इतनी है कि सत्कर्मपरमाणुको छोडकर नवकबन्ध-परमाणुओं सम्बन्धी निषेकोंके विन्यासक्रमकी प्ररूपणा उत्कर्षण प्राप्त परमाणुओंके साथ करनी चाहिये। परन्तु सत्त्वका निषेक विन्यासक्रम नहीं है, क्योंकि अपकर्षण व उत्कर्षणके द्वारा उसके बन्धसमयमें रचित स्वरूपसे रहनेका अभाव है।

शंका- एक परमाणुमें स्थित अनुभागकी स्थान संज्ञा घटित नहीं होती, क्योंकि अनन्तस्पर्द्धकोंसे व वर्गणाओंके बिना अनुभागस्थानकी सम्भावना नहीं है?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जघन्य बन्धस्थान और जघन्य स्पर्द्धककी जघन्य वर्गणासे लेकर सब वर्गणायें, सब स्पर्द्धक और सब स्थान यहां हो पाये जाते हैं। जिस प्रकार सौ संख्यामें एक आदि संख्याएं गर्भित हैं, उसी प्रकार यह अनन्तभागवृद्धिस्थान भी अपनी कुक्षिके भीतर समस्त नीचेके स्थानोंको रखनेवाला है, इसलिये पूर्वोक्त दोषका प्रसंग नहीं आता है। दूसरे, मिथ्यात्व प्रकृतिका अनुभाग चतुःस्थानीय है यह सूत्रसिद्ध है। उसकी चतुःस्थान संज्ञा घटित नहीं होती, क्योंकि सर्वघाती प्रकृति होनेसे उसके एक स्थानका अभाव है। सम्यङ्मिथ्यात्व प्रकृतिके अनुभागके भी द्विस्थानरूपता योग्य नहीं है, क्योंकि उसके एक दारु समान स्थानको छोडकर अन्य स्थानोंका अभाव है। देशघाती जघन्य स्पर्द्धकके जघन्य वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदसे लेकर एक, दो, तीन व चार स्थान संयुक्त सब अविभागप्रतिच्छेद मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थानमें विद्यमान हैं, अतएव यदि उसके चतुःस्थानरूपता कही जाती है तो एक स्थानमें नीचेके समस्त स्थान स्पर्द्धक और वर्गणाओंके अस्तित्वको क्यों नहीं कहते; क्योंकि,

तो एक्कम्हि ट्ठाणे हेट्ठिमासेसट्ठाणफद्दयवग्गणाणमत्थित्तं किण्ण वुच्चदे, विसेसाभावादो ।

ॐएसा अणंतभागवड्ढी उक्कड्डणादो ण होदि, बंधादो चेव होदि । तं जहा– जहण्णकसायोदयट्ठाणपक्खेवुत्तरअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेण जेण वा तेण वा जोगेण वड्ढिदूण बंधे अणंतभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संपहि एदस्स णवगबंधस्स फद्दयरचणं कस्सामो । तं जहा– जहण्णट्ठाणादो अणुभागेण अहियपरमाणू समयपबद्धम्मि अवणिय पुध ट्ठवेदूण पुणो जहण्णट्ठाणसमाणसेसपरमाणू सव्वे घेत्तूण रचणाए कीरमाणाए जहण्णट्ठाणजहण्णवग्गणप्पहुडि जाव तस्सेव उक्कस्सवग्गणा इत्तिताव एदेसु सरिसधणिया होदूण सव्वे पदंति । पुणो अवणिदपरमाणू अणंता अत्थि, तेसु पक्खेवजहण्णफद्दयमेत्तपरमाणू घेत्तूण जहासरूवेण जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्स उवरिमे देसे ट्ठविदे पक्खेवपढमफद्दयं समुप्पज्जदि । पुणो तस्सेव बिदियफद्दयमेत्तपरमाणू घेत्तूण पक्खेवपढमफद्दयस्सुवरि अंतरमुल्लंघिय ट्ठविदे बिदियफद्दयमुप्पज्जदि । एवं पुणो पुणो घेत्तूण फद्दयरचणा कायव्वा जाव पुध ट्ठवियपरमाणू समत्ता त्ति । एत्थ एगपरमाणुट्ठिदउक्कस्साणुभागो ट्ठाणं णाम । एत्थ जहण्णट्ठाणे अवणिदे सेसं वड्ढी होदि । एदिस्से पमाणं सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे भागे हिदे लद्धमेत्तं होदि ।

उससे यहाँ कोई विशेषता नहीं है ।

यह अनन्तभागवृद्धि उत्कर्षणसे नहीं होती है, केवल बन्धसे ही होती है । यथा– जघन्य कषायोदयस्थान प्रक्षेपसे अधिक अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानसे व जिस किसी भी योगसे वृद्धिगत हो बन्धमें अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है ।

अब इस नवकबन्धकी स्पर्द्धकरचनाको करते हैं । वह इस प्रकार है– जघन्य स्थानसे अनुभागमें अधिक परमाणुओंको समयप्रबद्धमेंसे कम करके पृथक् स्थापित कर फिर जघन्य स्थानके समान शेष सब परमाणुओंको ग्रहण कर रचनाके करनेपर जघन्य स्थानकी जघन्य वर्गणासे लेकर उसीकी उत्कृष्ट वर्गणा तक इनमें समान धन युक्त होकर सब गिरते हैं । फिर कम किये गये जो अनन्त परमाणु हैं उनमेंसे प्रक्षेपरूप जघन्य स्पर्द्धक प्रमाण परमाणुओंको ग्रहण कर उन्हें यथाविधि जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके उपरिम देशके ऊपर स्थापित करनेपर प्रक्षेप रूप प्रथम स्पर्द्धक उत्पन्न होता है । फिर उसीके द्वितीय स्पर्द्धक प्रमाण परमाणुओंको ग्रहण कर प्रक्षेप रूप प्रथम स्पर्द्धकके ऊपर अन्तरको लाँघकर स्थापित करनेपर द्वितीय स्पर्द्धक उत्पन्न होता है । इस प्रकार बार बार ग्रहण करके पृथक् स्थापित परमाणुओंके समाप्त होने तक स्पर्द्धक रचना करनी चाहिये । यहाँ एक परमाणुमें स्थित उत्कृष्ट अनुभागका नाम स्थान है । इसमेंसे जघन्य स्थानको कम कर देनेपर शेष वृद्धि होती है । इसका प्रमाण सब जीवराशिका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उतना मात्र है ।

ॐ ताप्रतौ ' जा एसा ' इति पाठः ।

संपहि पढमअणंतभागवड्ढिट्ठाणं सव्वजीवरासिणा खंडिय लद्धे पडिरासिदपढमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे पक्खित्ते विदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि। पुव्विल्लट्ठाणंतरादो एवं ट्ठाणंतरं अणंतभागब्भहियं । केत्तियमेत्तेण? सव्वजीवरासिवग्गेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं तेत्तियमेत्तेण । अणंतरहेट्ठिमट्ठाणपक्खेवफद्दयंतरादो एदस्स पक्खेवस्स फद्दयंतरमणंतभागब्भहियं । कुदो ? पुव्विल्लविहज्जमाणरासीदो संपहि विहज्जमाणरासीए अणंतभागब्भहियत्तादो अणंतरहेट्ठिमपक्खेवफद्दयसलागाहिंतो संपहियपक्खेवफद्दयसलागाणं तुल्लत्तादो । पक्खेवफद्दयसलागाणं तुल्लत्तं कधं णव्वदे? सव्वेसिमणंतभागवड्ढीणं पक्खेवफद्दयसलागाओ अण्णोण्णं समाणाओ, असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणपक्खेवाणं पि फद्दयसलागाओ अण्णोण्णेहि तुल्लाओ, संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणपक्खेवफद्दयसलागाओ वि परोप्परं तुल्लाओ, एवं संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढिफद्दयसलागाणं पि तुल्लत्तं वत्तव्वमिदि जिणवयणादो । अणंतभागवड्ढीसु हेट्ठिमपक्खेवफद्दयंतरादो उवरिमपक्खेवफद्दयंतरमणंतभागब्भहियमिदि वयणादो वा णव्वदे ? फद्दयसलागासु विसरिसासु संतासु कधमणंतभागब्भहियत्तं ण घडदे ? उच्चदे– रूवाहियसव्वजीवरासिणा अणंतरहेट्ठिमअणंतभा--

---

अब प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानको सब जीवराशिसे खण्डित कर जो लब्ध हो उसे प्रतिराशिभूत प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें मिलानेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है। पूर्वके स्थानान्तरसे यह स्थानान्तर अनन्तवें भागसे अधिक है। कितने मात्रसे अधिक है ? सब जीवराशिके वर्गका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उतने मात्रसे अधिक है। अनन्तर अधस्तन स्थान सम्बन्धी प्रक्षेप रूप स्पर्द्धकके अन्तरसे इस प्रक्षेपके स्पर्द्धकका अन्तर अनन्तवें भागसे अधिक है, क्योंकि, पूर्वोक्त विभज्यमान राशिसे इस समयकी विभज्यमान राशि अनन्तवें भागसे अधिक है, तथा अनन्तर अधस्तन प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकाओंसे इस समयकी प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकायें तुल्य हैं।

शंका– प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकाओंकी तुल्यता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान- सब अनन्तभागवृद्धियोंकी प्रक्षेपस्पर्द्धकशलाकायें परस्परमें समान है, असंख्यातभागवृद्धिस्थानों सम्बन्धी प्रक्षेपोंकी भी स्पर्द्धकशलाकायें परस्परमें तुल्य हैं, संख्यातभागवृद्धिस्थानों सम्बन्धी प्रक्षेपोंकी स्पर्द्धकशलाकायें भी परस्पर तुल्य हैं। इसी प्रकार संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि सम्बन्धी स्पर्द्धकशलाकाओंकी भी समानता बतलानी चाहिये। इस जिनवचनसे उनकी तुल्यता जानी जाती है। अथवा, वह ' अनन्तभागवृद्धियोंमें अधस्तन प्रक्षेप स्पर्द्धकोंके अन्तरसे उपरिम प्रक्षेप स्पर्द्धकोंका अन्तर अनन्तवें भागसे अधिक है ' इस वचनसे जानी जाती है।

शंका– स्पर्द्धकशलाकाओंके विसदृश होनेपर अनन्तवें भागसे अधिकता कैसे घटित नहीं होती है ?

समाधान– इसका उत्तर कहते हैं। अनन्तर अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानमें एक अधिक

गवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे ट्ठाणंतरं होदि । पुणो तं चेव* फद्दयसलागाहि खंडिदेगखंडं फद्दयंतरं होदि । पुणो तम्हि चेव* ट्ठाणे सव्वजीवरासिणा भागे हिदे उवरिमट्ठाणंतरं होदि । पुणो तम्हि ट्ठाणंतरे उवरिमफद्दयसलागाहि भागे हिदे तत्थतणफद्दयंतरं होदि । संपहि पुव्विल्लफद्दयसलागाहिंतो उवरिमट्ठाणफद्दयसलागाओ जदि एगरूवेण अहियाओ होंति तो वि पुव्विल्लभागहारादो उवरिमट्ठाणफद्दयंतरभागहारो अणंतभागब्भहियो त्ति घेत्तव्वं । कुदो ? पुव्विल्लफद्दयंतरप्पहुडि सव्वफद्दयंतराणं अणंतभागहीणं होज्ज । ण च एवमणब्भुवगमादो । तदो सव्वपक्खेवाणं फद्दयसलागाओ सजादिपक्खेवफद्दयसलागाहि सरिसाओ त्ति घेत्तव्वं । सेसं पुव्वं व वत्तव्वं । सव्वजीवरासिणा विदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं तं तम्हि चेव पडिरासिय पक्खित्ते तदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि । एवं ट्ठाणंतरमणंतरादीदट्ठाणंतरादो अणंतभागब्भहियं । एवम्हि ट्ठाणंतरे फद्दयसलागाहि भागे◌ हिदे फद्दयंतरं होदि । एवं च फद्दयंतरं पुव्विल्लफद्दयंतरादो अणंतभागब्भहियं । कुदो ? फद्दयसलागाहि तुल्लत्तादो । पुणो सव्वजीवरासिणा तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं तं तम्हि चेव पडिरासिय पक्खित्ते चउत्थमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि । एत्थ वि ट्ठाणंतरफद्दयंतराणं परिक्खा

सब जीवराशिका भाग देनेपर स्थानांतर होता है । फिर उसी स्थानान्तरको स्पर्द्धकशलाकाओंसे खण्डित करनेपर एक खण्ड प्रमाण स्पर्द्धकांतर होता है । फिर उसी स्थानमें सब जीवराशिका भाग देनेपर ऊपरका स्थानांतर होता है । फिर उस स्थानांतरमें उपरिम स्पर्द्धकशलाकाओंका भाग देनेपर वहांका स्पर्द्धकांतर होता है । अब पूर्वकी स्पर्द्धकशलाकाओंसे उपरिम स्थानकी स्पर्द्धकशलाकायें यद्यपि एक अंकसे अधिक होती हैं तो भी पूर्वके भागहारसे उपरिम स्थान संबंधी स्पर्द्धकांतरका भागहार चूंकि अनंतवें भागसे अधिक है । अतएव अधस्तन स्पर्द्धकांतरसे उपरिम प्रक्षेप स्पर्द्धकांतर अनंतवें भागसे हीन होना चाहिये । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा स्वीकार नहीं किया गया है । इस कारण सब प्रक्षेपोंकी स्पर्द्धकशलाकायें सजाति प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकाओंके समान है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

शेष कथन पहिलेके ही समान कहना चाहिये । सब जीवराशिका द्वितीय अनंतभागवृद्धि-स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसमें ही प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय अनंतभाग-वृद्धिस्थान होता है । यह स्थानांतर अनन्तर अतीत स्थानांतरकी अपेक्षा अनंतवें भागसे अधिक है । इस स्थानांतरमें स्पर्द्धकशलाकाओंका भाग देनेपर स्पर्द्धकांतर होता है । यह स्पर्द्धकांतर पूर्वके स्पर्द्धकांतरकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक है, क्योंकि, वह स्पर्द्धकशलाकाओंके समान है । फिर सब जीवराशिका तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसीमें प्रतिराशि करके मिलानेपर चतुर्थ अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है । यहांपर भी स्थानांतर और

---

* अ-आप्रत्योः ' तच्चेव ' इति पाठः । तरं होदि । पुणो तम्हि चेव ट्ठाणे इति पाठः ।

** प्रतिषु तम्हि चेव फद्दयसलागाहि खंडिदेगखंडं फद्दयं-

◌ ताप्रतौ ' फद्दयसलागाहि (दे) भागे ' इति पाठः ।

पुव्वं व कायव्वा। एवं णेयव्वं♠ जाव कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढि-ट्ठाणाणि समत्ताणित्ति।

असंखेज्जभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ॥ २०५ ॥

एवं पुच्छासुत्तं जहण्णपरित्तासंखेज्जमादिं कादूण जाव उक्कस्समसंखेज्जासंखेज्जे त्ति एदाणि ♣असंखेज्जसंखाट्ठाणाणि अवलंबिय ट्ठिदं। एवं पुच्छिदे उत्तरसुत्तेण परिहारो उच्चदे—

असंखेज्जलोगभागपरिवड्ढीए✲ एवडिया परिवड्ढी ॥२०६॥

असंखेज्जलोग इदि वुत्ते जिणदिट्ठभावाणमसंखेज्जाणं लोगाणं गहणं कायव्वं, विसिट्ठोवएसाभावादो। पढमअणंतभागवड्ढिकंडयस्स चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे असंखेज्जलोगेहि भागे हिदे भागलद्धे तम्हि चेव पक्खित्ते पढमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि। एसो पक्खेवो अविभागपडिच्छेदूणो✡ ट्ठाणंतरं होदि। एवं ट्ठाणंतरं हेट्ठिमट्ठाणंतरादो अणंतगुणं। को गुणगारो? असंखेज्जलोगेहि ओवट्टिय रूवाहियसव्वजीवरासी। असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवं ठविय एत्थतणफद्दयसलागाहि ओवट्टिदे असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स फद्दयंतरं होदि। एवं फद्दयंतरं हेट्ठिमपक्खेवफद्दयंतरादो अणंतगुणं। अणंतगुणत्तं कधं

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्पर्द्धकान्तरकी परीक्षा पहिलेके ही समान करनी चाहिये। इस प्रकार काण्डक मात्र अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके समाप्त होने तक ले जाना चाहिये।

असंख्यातभागवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा होती है? ॥ २०५ ॥

यह पृच्छासूत्र जघन्य परीतासंख्यातसे लेकर उत्कृष्ट असंख्यातसंख्यात तक इन असंख्यात संख्याके स्थानोंका अवलम्बन करके स्थित है इस प्रकार पूछनेपर उत्तर सूत्रमे उसका परिहार कहते हैं—

उक्त वृद्धि असंख्यात लोक भागवृद्धि द्वारा होती है। इतनी मात्र वृद्धि होती है ॥ २०६ ॥

'असंख्यात लोक' ऐसा कहनेपर जिन भगवान्‌के द्वारा जिनका स्वरूप देखा गया है ऐसे असंख्यात लोकोंका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, इस सम्बन्धमें विशिष्ट उपदेशका अभाव है। प्रथम अनन्तभागवृद्धिकाण्डकके अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें असंख्यात लोकोंका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसको उसीमें मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिका प्रथम स्थान उत्पन्न होता है। यह प्रक्षेप एक अविभागप्रतिच्छेदसे रहित होकर स्थानान्तर होता है। यह स्थानान्तर अधस्तन स्थानान्तरसे अनन्तगुणा है। गुणकार क्या है? गुणकार असंख्यात लोकोंसे अपवर्तित एक अधिक सब जीवराशि है। असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको स्थापित करके यहांकी स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपका स्पर्धकान्तर होता है। यह स्पर्धकान्तर अधस्तन प्रक्षेपके स्पर्धकान्तरसे अनन्तगुणा है।

♠ अप्रतौ 'एवं कोणेयव्वं' इति पाठः। ♣ अ-आ-प्रत्योः 'असंखेज्जासंखा' इति पाठः।
✲ ताप्रतौ '-परिवड्ढी (ए)', इति पाठः। ✡ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'पडिछेदाणो' ताप्रतौ 'पडिच्छेदाणं' इति पाठः।

णव्वदे ? भागहारमाहप्पादो। तं जहा– हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिफद्दयसलागाहि रूवाहिय-सव्वजीवरासिं गुणेदूण चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे फद्दयंतरं होदि। अणंत-भागवड्ढिपक्खेवफद्दयसलागाहिंतो असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवफद्दयसलागाओ विसेसाहि-याओ। केत्तियमेत्तेण ? असंखेज्जदिभागमेत्तेण ? तत्तो संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवफद्द-यसलागाओ विसेसाहियाओ। केत्तियमेत्तेण। संखेज्जदिभागमेत्तेण। तत्तो संखेज्ज-गुणवड्ढिफद्दयसलागाओ संखेज्जगुणाओ। को गुणगारो ? संखेज्जा समया। तत्तो असंखेज्जगुणवड्ढीए फद्दयसलागाओ असंखेज्जगुणाओ। को गुणगारो ? असंखेज्जा समया। अणंतगुणवड्ढिफद्दयसलागाओ अणंतगुणाओ।

पुणो एत्थ असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवफद्दयसलागाहि असंखेज्जलोगे गुणिय चरिमअणंत-भागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स फद्दयंतरं होदि। हेट्ठिमफद्दयंतरेण उवरिमफद्दयंतरे भागे हिदे जं भागलद्धं सो गुणगारो। एदम्हादो असंखेज्जभागवड्ढिट्ठा-णादो उवरिमकंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं परूवणा पुव्व व कायव्वा। णवरि असं-खेज्जभागवड्ढिफद्दयंतरट्ठाणंतरेहिंतो उवरिमअणंतभागवड्ढिपक्खेवाणं ट्ठाणंतरफद्दयंत-राणि अणंतगुणहीणाणि। हेट्ठिमकंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं *ट्ठाणंतरफद्दयंतरेहिंतो

शंका–– वह उससे अनन्तगुणा है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान–– वह भागहारके माहात्म्यसे जाना जाता है। यथा– अधस्तन अनन्तभा-गवृद्धिस्पर्द्धक शलाकाओंसे एक अधिक सब जीवराशिको गुणित करके अंतिम अनन्तभागवृद्धि-स्थानमें भाग देनेपर स्पर्धकान्तर होता है।

अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्द्धकशलकाओंसे असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्द्धकशलाकायें विशेष अधिक हैं। कितने मात्र विशेषसे वे अधिक हैं ? वे असंख्यातवें भाग मात्रसे अधिक हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्द्धकशलाकायें विशेष अधिक हैं। कितने मात्रसे वे अधिक हैं ? वे संख्यातवें भागमात्रसे अधिक हैं। उनसे संख्यातगुणवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्धकशलाकायें संख्या-तगुणी हैं। गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है। उनसे असंख्यातगुणवृद्धिकी स्पर्ध-कशलाकायें असंख्यातगुणी हैं। गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात समय है। उनसे अनन्तगुणवृद्धिकी स्पर्धकशलाकायें अनन्तगुणी हैं।

पुनः यहां असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्धक शलाकाओंसे असंख्यात लोकोंको गुणित करके अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपका स्पर्धकान्तर होता है। अधस्तन स्पर्द्धकान्तरका उपरिम स्पर्धकान्तरमें भाग देनेपर जो लब्ध हो वह गुणकार होता है। इस असंख्यातभागवृद्धिस्थानसे ऊपरके काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थानोंकी प्ररूपणा पहिलेके समान करनी चाहिये। विशेष इतना है कि असंख्यातभागवृद्धिके स्पर्धकान्तरों और स्थानान्तरोंसे उपरिम अनंतभागवृद्धिप्रक्षेपोंके स्थानान्तर और स्पर्धकान्तर अनन्तगुणे हीन हैं। काण्डक प्रमाण अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके स्थानान्तरों और स्पर्धकान्तरोंसे ऊपरके काण्डक प्रमाण

---

* अप्रतौ ' अणंतर–– ' इति पाठः।

उवरिमकंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि असंखेज्जभागब्भहियाणि। एत्थ कारणं चिंतिय वत्तव्वं। विदियकंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं चरिमट्ठाणे असंखेज्जलोगेहि भागे हिदे जं लद्धं तं तम्हि चेव पडिरासिय पक्खित्ते (१) विदियमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं* होदि। एयम्हादो पक्खेवादो एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं होदि। एवं ट्ठाणंतरं हेट्ठिमासेसअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं। उवरिमासेसअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो वि अणंतगुणमेव। एत्थ कारणं जाणिय परूवेदव्वं। हेट्ठिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरादो एदं ट्ठाणंतरमसंखेज्जभागब्भहियं। केत्तियमेत्तेण ? एगअसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण। एवं फद्दयंतराणं परिक्खा कायव्वा। एवं कंडयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढीणं जाणिदूण परूवणा कायव्वा। णवरि हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जभागवड्ढिविसयम्हि ट्ठिदअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि असंखेज्जभागब्भहियाणि। संखेज्जभागवड्ढिविसयम्मि ट्ठिदाणं संखेज्जभागब्भहियाणि। संखेज्जगुणवड्ढिविसयम्मि ट्ठिदाणं संखेज्जगुणब्भहियाणि। असंखेज्जगुणवड्ढिविसयम्मि ट्ठिदाणं संखेज्जगुणाणि। अणंतगुणवड्ढिविसयम्मि ट्ठिदाणमणंतगुणाणि। एवमसंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढिट्ठाणाण

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनंतभागवृद्धिस्थानोंके स्थानांतर और स्पर्द्धकांतर असंख्यातवें भागसे अधिक हैं। यहां कारणको विचारकर कहना चाहिये। कांडक प्रमाण द्वितीय अनंतभागवृद्धिके स्थानोंमेंसे अंतिम स्थानमें असंख्यात लोकोंका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसीमें प्रतिराशि करके मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिका द्वितीय स्थान होता है। इस प्रक्षेपमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानांतर होता है। यह स्थानांतर अधस्तन समस्त अनंतभागवृद्धि स्थानांतरों से अनंतगुणा है। वह उपरिम समस्त अनंतभागवृद्धिस्थानोंसे भी अनंतगुणा ही है। यहां कारण जानकर बतलाना चाहिये। अधस्तन असंख्यातभागवृद्धिस्थानांतरसे यह स्थानांतर असंख्यातवें भागसे अधिक है। कितने मात्रसे वह अधिक है ? एक असंख्यातभागवृद्धि प्रक्षेपके असंख्यातवें भाग मात्रसे अधिक है। इस प्रकार स्पर्द्धकांतरोंकी परीक्षा करनी चाहिये। इस प्रकार काण्डकप्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंको जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये। विशेष इतना है कि अधस्तन अनन्तभागवृद्धि स्थानांतरोंसे असंख्यातभागवृद्धिके विषयमें स्थित अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके स्थानांतर और स्पर्द्धकांतर असंख्यातवें भागसे अधिक हैं। संख्यातभागवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानांतर और स्पर्द्धकांतर संख्यातवें भागसे अधिक हैं। संख्यातगुणवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानांतर और स्पर्द्धकांतर संख्यातगुणे अधिक हैं। असंख्यातगुणवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातगुणे हैं। अनंतगुणवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानांतर और स्पर्द्धकांतर अनंतगुणे हैं। इस प्रकार असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि

---

(१) ताप्रतौ ' लद्धं तम्हि चेव पक्खित्ते पडिरासिय विदिय- ' इति पाठः।

* प्रतिषु ' वड्ढिट्ठाणं ' इति पाठः।

ट्ठाणंतरफद्दयंतराणंच पंच-चदु-ति-दु-एगविहवड्ढीयो जहाकमेण वत्तव्वाओ । एवम-संखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणम्मि ट्ठिदअसंखेज्जभागवड्ढीणं परूवणा कायव्वा ।

संखेज्जभागवड्ढी काए परिवड्ढीए ॥ २०७ ॥

एदं पुच्छासुत्तं दोण्णि आदिं कादूण जाव उक्कस्ससंखेज्जयं ति ताव एदाणि संखेज्जवियप्पट्ठाणाणि अवेक्खदे[✲] । एदस्स णिण्णयत्थं उत्तरसुत्तं भणदि--

जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स संखेज्जभागपरिवड्ढी, एवडिया परिवड्ढी ॥ २०८ ॥

'जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्से' त्ति भणिदे उक्कस्सं संखेज्जयं घेत्तव्वं । उज्जुएण उक्कस्ससंखेज्जेण इत्ति अभणिदूण सुत्तगउरवं कादूण किमट्ठं उच्चदे 'जहण्णयस्स[✱] असंखेज्जयस्स रूवूणयस्से' त्ति ? उक्कस्ससंखेज्जयस्स पमाणेण सह संखेज्जभागवड्ढीए पमाणपरूवणट्ठं । परियम्मादो उक्कस्ससंखेज्जयस्स पमाणमवगमिदि ण पच्चवट्ठाणं कादुं जुत्तं, तस्स सुत्तत्ताभावादो । एदस्स णिस्सेसस्स आइरियाणुग्गहणेण पदविणिग्गयस्स एदम्हादो पुधत्तविरोहादो वा ण तदो उक्कस्स-संखेज्जयस्स पमाणसिद्धी गच्छदि त्ति [illegible] उक्कस्ससंखेज्जेण रूवाहियकंडएण गुणिद-कंडयमेत्ताणमणंतभागवड्ढीणं चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे जं भाग-

और अनन्तगुणवृद्धि स्थानोंके स्थानान्तरों और स्पर्द्धकांतरोंके यथाक्रमसे, पांच, चार, तीन, दो और एक वृद्धियां कहनी चाहिये । इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानमें स्थित असंख्यातभागवृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

संख्यातभागवृद्धि किस वृद्धि द्वारा वृद्धिको प्राप्त होती है ? ॥ २०७ ॥

यह पृच्छासूत्र दो से लेकर उत्कृष्ट संख्यात तक इन संख्यात विकल्पोंकी अपेक्षा करता है इसके निर्णयके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

एक कम जघन्य असंख्यातकी वृद्धिसे संख्यातभागवृद्धि होती है । इतनी वृद्धि होती है ॥ २०८ ॥

'एक कम जघन्य असंख्यात' के कहनेपर उत्कृष्ट संख्यातको ग्रहण करना चाहिये ।

शंका-- सीधेसे उत्कृष्ट संख्यात न कहकर सूत्रको बडा करके 'एक कम जघन्य असंख्यात' ऐसा किसलिये कहा जा रहा है ?

समाधान-- उत्कृष्ट संख्यातके प्रमाणके साथ संख्यातभागवृद्धिके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये वैसा कहा गया है । यदि कहा जाय कि उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण परिकर्मसे अवगत है, तो ऐसा प्रत्यवस्थान करना योग्य नहीं है, क्योंकि, उसमें सूत्ररूपता नहीं है । अथवा, आचार्यके अनुग्रहसे परिपूर्ण होकर पद रूपसे निकले हुए इस परिकर्मके चूंकि इससे पृथक् होनेका विरोध है, अतएव भी उससे उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण सिद्ध नहीं होता ।

इस उत्कृष्ट संख्यातका एक अधिक कांडकसे गुणित कांडक प्रमाण अनंतभागवृद्धियोंसे

✲ अ-आ-ताप्रतिषु 'उवेक्खदे' इति पाठः । ✱ ताप्रतौ 'वुच्चदे? जहण्णयस्स' इति पाठः ।

लद्धं तं तम्हि चेव पडिरासिय पक्खित्ते पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । एदम्हादो पक्खेवादो एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं होदि । एवं हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । उवरिमअणंतगुणवड्ढीए हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जगुणवड्ढीए हेट्ठिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । असंखेज्जगुणं । अणंतगुणवड्ढीए हेट्ठिमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणतरेहिंतो संखेज्जविभागहीणं संखेज्जगुणहीणं असंखेज्जगुणहीणं वा । एवं फद्दयंतराणं पि थोवबहुत्तं जाणिय वत्तव्वं । असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणब्भंतरे ट्ठिदसंखेज्जभागवड्ढीणमेसो चेव परूवणा कायव्वा ।

संखेज्जगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ? ॥ २०९ ॥

सुगमं ।

जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स संखेज्जगुणवड्ढी, एवडिया परिवड्ढी ॥ २१० ॥

कंडयमेत्तसंखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण पुणो उवरि संखेज्जभागवड्ढिविसयम्मि ट्ठिदचरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे उक्कस्ससंखेज्जेण गुणिदे संखेज्जगुणवड्ढी होदि। पुणो हेट्ठिमट्ठाणम्मि पडिरासिदम्मि इमाए वड्ढीए पक्खित्ताए पढमं संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाण होदि । उक्कस्ससंखेज्जमेत्तउव्वंकेसु एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं

आन्तम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसमें ही प्रतिराशि करके मिलानेपर संख्यातभागवृद्धिका प्रथम स्थान उत्पन्न होता है । इसमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा है । असंख्यातभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा है । उपरिम अनन्तगुणवृद्धिके अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा है । असंख्यातगुणवृद्धिके अधस्तन असंख्यातभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा है । अनन्तगुणवृद्धिके अधस्तन संख्यातभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे संख्यातवें भागसे हीन, संख्यातगुणाहीन अथवा असंख्यातगुणा हीन है । इस प्रकार स्पर्द्धकान्तरोंके भी अल्पबहुत्वको जानकर कहना चाहिये । असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके भीतर स्थित संख्यातभागवृद्धियोंकी इसी प्रकार ही प्ररूपणा करनी चाहिये ।

संख्यातगुणवृद्धि किस वृद्धिसे वृद्धिगत है ? ॥ २०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह एक जघन्य असंख्यातकी वृद्धिसे वृद्धिगत है । इतनी मात्र वृद्धि होती है ॥ २१० ॥

काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियां जाकर फिर आगे संख्यातभागवृद्धिके विषयमें स्थित अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानको उत्कृष्ट संख्यातसे गुणित करनेपर संख्यातगुणवृद्धि होती है। फिर प्रतिराशिभूत अधस्तन स्थानमें इस वृद्धिको मिलानेपर प्रथम संख्यातगुणवृद्धिस्थान होता है । उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण ऊर्वंकोंमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह

तरेहिंतो अणंतगुणं। चत्तारिअंकट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। पंचंकट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। उवरिमअट्ठंक-हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं। पढमछट्ठाणम्हि उक्कस्सम्ज पढमसत्तंकादो हेट्ठिमचत्तारिअंकट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। विदियसंखेज्जगुणवड्ढीए हेट्ठिमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो संखेज्जगुणं संखेज्जभागहीणं संखेज्जगुणहीणं असंखेज्जगुणहीणं वा. इमं चेव संखेज्जगुणवड्ढिं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तउव्वंकं संखेज्जगुणवड्ढिअब्भंतरफद्दयसलागाहि ओवट्टिय रूवे अवणिदे फद्दयंतरं होदि एवं हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिपक्खेवफद्दयंतरेहिंतो अणंतगुणं। चत्तारिअंकफद्दयंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। पंचंकपक्खेव फद्दयंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। एवमुवरिमफद्दयंतरेहि वि सह जाणिदूण सण्णियासो कायव्वो। एवमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणब्भंतरे ट्ठिदसंखेज्जगुणवड्ढीणं परूवणा कायव्वा। एत्थ गंथबहुत्तभएण जण्ण लिहिदं तमेदेण उवदेसेण भणिय गेण्हियव्वं।

असंखेज्जगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ॥ २११ ॥

सुगमं।

असंखेज्जलोगगुणपरिवड्ढी, एवडिया परिवड्ढी ॥ २१२ ॥

कंडयमेत्तछअंकेसु गदेसु समयाविरोहेण वड्ढिदउवरिमछअंकविसयम्मि ट्ठिदचरिमउव्वंके असंखेज्जेहि लोगेहि गुणिदे असंखेज्जगुणवड्ढी उप्पज्जदि। उव्वंकं पडिरासिय

स्थानान्तर अधस्तन ऊर्वक स्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा, चतुरंक स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा पंचांक स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, उपरिम अष्टांकके अधस्तन ऊर्वकस्थानान्तरोंसे अनंतगुणा प्रथम षट्स्थानमें उपरिम प्रथम सप्तांकसे अधस्तन चतुरंकस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा तथा द्वितीय संख्यातगुणवृद्धिसे अधस्तन संख्यातभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे संख्यातगुणा, संख्यातभागहीन संख्यातगुणाहीन अथवा असंख्यातगुणा हीन है। इसी संख्यातगुणवृद्धिको उत्कृष्ट संख्यात मात्र ऊर्वकको संख्यातगुणवृद्धिके भीतर स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित कर एक अंकके कम करनेपर स्पर्द्धकान्तर होता है। यह अधस्तन अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपस्पर्द्धकान्तरोंसे अनन्तगुणा, चतुरंक-स्पर्द्धकान्तरोंसे असंख्यातगुणा और पंचांकप्रक्षेपस्पर्द्धकान्तरोंसे असंख्यातगुणा है। इसी प्रकार उपरिम स्पर्द्धकान्तरोंके भी साथ जानकर तुलना करनी चाहिये। इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके भीतर स्थित संख्यातगुणवृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। यहाँ ग्रन्थविस्तारके भयसे जो नहीं लिखा गया है उसे इस उपदेशसे कहकर ग्रहण करना चाहिये।

असंख्यातगुणवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा वृद्धिगत है ? ॥ २१२ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह असंख्यात लोकोंसे वृद्धिगत है। इतनी वृद्धि होती है ॥ २११ ॥

कांडक प्रमाण छह अंकोंके बीतनेपर यथाविधि वृद्धिको प्राप्त उपरिम षडंकके विषयमें स्थित अंतिम ऊर्वकको असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर असंख्यातगुणवृद्धि उत्पन्न होती है। ऊर्वकको

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तत्थ तम्मि पक्खित्ते असंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । असंखेज्जगुणवड्ढीए एगाविभाग-पडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं होदि । एवं हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जभागवड्ढि--संखेज्जभागवड्ढि--संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । उवरिमअसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणादो हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो संखेज्जगुणं संखेज्जभागहीणं संखेज्जगुणहीणं असंखेज्जगुणहीणं वा । संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणहीणं । उवरि जाणिय णेयव्वं । इमाए असंखेज्जगुणवड्ढीए एत्थतणफद्दयसलागाहि ओवट्टिदाए फद्दयं होदि । एत्थ एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे फद्दयंतरं होदि । एवं पि हेट्ठिम-उवरिमफद्दयंतरेहि सह सण्णिकासिदव्वं ।

अणंतगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ॥ २१३ ॥

सुगमं ।

सव्वजीवेहि अणंतगुणपरिवड्ढी एवडिया परिवड्ढी ॥ २१४ ॥

हेट्ठिमउव्वंके सव्वजीवरासिणा गुणिदे अणंतगुणवड्ढी होदि । तं चेव पडिरासिय अणंतगुणवड्ढि पक्खित्ते अणंतगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । एदाए चेव वड्ढीए अणंतगुण-वड्ढिफद्दयसलागाहि ओवट्टिदाए फद्दयं होदि । एत्थ वि ट्ठाणंतर-फद्दयंतरसण्णिकासो कायव्वो ।

प्रतिराशि करके उसमें उसे मिलानेपर असंख्यातगुणवृद्धिस्थान होता है । असंख्यातगुणवृद्धिमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा; असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, उपरिम असंख्यात गुणवृद्धिस्थानसे नीचेके अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा, असंख्यातभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, संख्यातभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे संख्यातगुणा, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन अथवा असंख्यातगुणहीन, तथा संख्यातगुणवृद्धि व असंख्यातगुणवृद्धिस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा हीन है । आगे जानकर ले जाना चाहिये । इस असंख्यातगुणवृद्धिको यहांकी स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर स्पर्द्धक होता है । इसमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्पर्द्धकान्तर होता है । इसकी भी अधस्तन व उपरिम स्पर्द्धकान्तरोंके साथ तुलना करनी चाहिये ।

अनन्तगुणवृद्धि किस वृद्धिसे वृद्धिगत है ? ॥ २१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अनन्तगुणवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिगत है । इतनी मात्र वृद्धि होती है ।२१४।

अधस्तन ऊर्वकको सब जीवराशिसे गुणा करनेपर अनन्तगुणवृद्धि होती है । उसीको प्रतिराशि करके अनन्तगुणवृद्धिको मिलानेपर अनन्तगुणवृद्धिस्थान होता है । इसी वृद्धिको अनन्तगुणवृद्धि स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर स्पर्द्धक होता है । यहाँपर भी स्थानान्तर और स्पर्द्ध-

एवमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणट्ठिदअणंतगुणवड्ढीणं परूवणा कायव्वा। एदेण सुत्तेण अणंतरोवणिधा परूविदा।

संपधि एदेणेव देसामासियभावेण सूचिदं परंपरोवणिधं भणिस्सामो। तं जहा- जहण्णट्ठाणे सव्वजीवरासिणा भागे हिदे जं भागलद्धं तम्मि जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते पढममणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि। पुणो विदिये अणंतभागवड्ढिट्ठाणे भण्णमाणे पढमअणंतभागवड्ढिट्ठाणम्मि वड्ढिदपक्खेवे अवणिदे जहण्णट्ठाणं होदि। पुणो सव्व-जीवरासिं विरलिय जहण्णट्ठाणे समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स पक्खेवपमाणं पावदि। पुणो अवणिदपक्खेवं पि एदिस्से विरलणाए समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स सव्वजीवरासिणा सगलपक्खेवं खंडेदूण एगखंडपमाणं पावदि। पुणो एदस्स सगलपक्खेवअणंतिमभागस्स पिसुल इत्ति सण्णा होदि। पुणो एत्थ एगरूवं हेट्ठिमस-गलपक्खेवमेगपिसुलं च घेत्तूण पढमअणंतभागवड्ढिट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते विदि-यमणंतभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि।

संपहि जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण विदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं दोहि पक्खेवेहि एगपिसुलेण च अहियं होदि त्ति। एदमधियपमाणं जहण्णट्ठाणादो आणिज्जदे। तं जहा- सव्वजी-वरासिअद्धं विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं करिय दिण्णे रूवं पडि दो-दोपक्खेव--

---

कान्तरोंसे तुलना करनी चाहिये। इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें स्थित अनंतगुण-वृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। इस सूत्रके द्वारा अनन्तरोपनिधाकी प्ररूपणा की गई है।

अब इसी सूत्रके द्वारा देशामर्शक रूपसे सूचित परंपरोपनिधाको कहते हैं। वह इस प्रकार है- जघन्य स्थानमें सब जीवराशिका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसको जघन्य स्थानकी प्रतिराशि करके मिलानेपर प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है। पुनः द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थानकी प्ररूपणामें प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानमेंसे वृद्धिप्राप्त प्रक्षेपको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है। पुनः सब जीवराशिका विरलन करके जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है। अब कम किये गये प्रक्षेपको भी इस विरलनके समान खंड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति सब जीवराशिसे सकल प्रक्षेपको खण्डित कर एक खंड प्रमाण प्राप्त होता है। सकलप्रक्षेपके अनन्तवें भाग प्रमाण इसकी पिशुल संज्ञा है। यहाँ एक अंक, अधस्तन सकल प्रक्षेप और एक पिशुलको भी ग्रहण करके प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानको प्रतिराशि कर मिला देनेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है।

अब जघन्य स्थानकी अपेक्षा द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान दो प्रक्षेपों और एक पिशुलसे अधिक होता है। जघन्य स्थानसे इस अधिकताके प्रमाण को लाते हैं। यथा- सब जीवराशिके अर्ध भागका विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकसे प्रति दो दो

पमाणं पावदि । पुणो एदेसिमुवरि एगपिसुलागमणमिच्छामो त्ति दुगुणसव्वजीवरासिहेट्ठा विरलेदूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिददोपक्खेवे घेत्तूण समखंडं कादूण दिण्णे विरलिदरूवं पडि एगेगपिसुलपमाणं पावदि । पुणो एत्थ एगेगपिसुलं घेत्तूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिददोपक्खेवेसु दिण्णे हेट्ठिमविरलणमेत्तट्ठाणं गंतूण एगरूवपरिहाणी दिस्सदि । एदस्स पिसुलस्स दोहि पक्खेवेहि सह आगमणे इच्छिज्जमाणे दुगुणं रूवाहियं सव्वजीवरासिं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो सव्वजीवरासिअद्धम्मि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स चदुब्भागो किंचूणं आगच्छदि । केत्तियो(1) णूणो ? एगरूवस्स अणंतिमभागेण । संपधि एदम्मि किंचूणेगरूवचदुब्भागे उवरिमविरलणाए सव्वजीवरासिदुभागमेत्तीए अवणिदे सेसं किंचूणं सव्वजीवरासिअद्धं भागहारो होदि । पुणो एदेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगपिसुलसहिददोपक्खेवा आगच्छंति । एदेसु जहण्णट्ठाणस्सुवरि पक्खित्तेसु विदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संपहि तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणं भणिस्सामो । तं जहा- विदियट्ठाणम्मि एगपिसुले दोपक्खेवेसु च अवणिदेसु जहण्णट्ठाणं होदि । तम्मि सव्वजीवरासिणा भागे हिदे

प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है । अब इनके ऊपर चूंकि एक पिशुलका लाना अभीष्ट है, अतएव दुगुणी सब जीवराशिका नीचे विरलन कर उपरिम विरलन राशिके एक अंकके प्रति प्राप्त दो प्रक्षेपोंको ग्रहण कर समखण्ड करके देनेपर विरलित अंकके प्रति एक एक पिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर इनमेंसे एक एक पिशुलको ग्रहण कर उपरिम विरलनके एक अंकके प्रति दो प्रक्षेपोंमें देनेपर अधस्तन विरलन मात्र अध्वान जाकर एक अंककी हानि देखी जाती है । इस पिशुलके दो प्रक्षेपोंके साथ लानेकी इच्छा करनेपर एक अधिक दुगुणी सब जीवराशि जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जावेगी तो सब जीवराशिके आधेमें क्या प्राप्त होगा, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम चतुर्थ भाग आता है ।

शंका- वह कितना कम है ?

समाधान- वह एक अनन्तवें भागसे कम है ।

अब एक अंकके कुछ कम इस चतुर्थ भागको सब जीवराशिके अर्ध भाग प्रमाण उपरिम विरलनमेंसे कम कर देनेपर शेष कुछ कम सब जीवराशिका अर्ध भाग भागहार होता है । इसका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक पिशुल सहित दो प्रक्षेप आते हैं । इनको जघन्य स्थानके ऊपर मिलानेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है ।

अब तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थानकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- द्वितीय स्थानमेंसे एक पिशुल और दो प्रक्षेपोंको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है । उसमें सब जीवराशिका

---

(1) ताप्रतौ ' केत्तिएगूणो ' इति पाठः ।

एगपक्खेवो आगच्छदि । इमं पुध ट्ठविय पुणो तेणेव सव्वजीवरासिणा दोपक्खेवेसु भागे हिदेसु दोपिसुलाणि आगच्छंति । पुणो एदाणि दो वि पिसुलाणि पुव्विल्लपक्खेवपस्से ठविय पुणो तेणेव भागहारेण एगपिसुले भागे हिदे एगं पिसुलापिसुलमागच्छदि । पुणो एगपक्खेवं दोपिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च घेत्तूण विदियवड्ढिट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते तदियं वड्ढिट्ठाणं होदि । एदं तदियवड्ढिट्ठाणं जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण तीहि पक्खेवेहि तीहि पिसुलेहि एगेण पिसुलापिसुलेण च अहियं होदि ।

पुणो एदेसिं जहण्णट्ठाणादो आणयणविधिं भणिस्सामो । तं जहा- सव्वजीवरासितिभागं विरलिय जहण्णट्ठाणं समखण्डं करिय दिण्णे विरलिदरूवं पडि तिण्णि-तिण्णिपक्खेवपमाणं पावदि । पुणो एदिस्से* विरलणाए हेट्ठा सव्वजीवरासिं विरलेदूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स तिण्णि-तिण्णिपिसुलपमाणं पावदि । पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा तिगुणं सव्वजीवरासिं विरलेदूण मज्झिमविरलणाए एगरूवधरिदं घेत्तूण समखण्डं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगपिसुलापिसुलपमाणं पावदि । पुणो तिगुणं सव्वजीवरासिं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो सव्वरासिमेत्तमज्झिमविरलणम्हि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स तिभागो

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

भाग देनेपर एक प्रक्षेप आता है । इसको पृथक् स्थापित करके उसी सब जीवराशिका दो प्रक्षेपोंमें भाग देनेपर दो पिशुल आते हैं । फिर इन दोनों ही पिशुलोंको पूर्व प्रक्षेपके पासमें स्थापित कर फिरसे उसी भागहारका एक पिशुलमें भाग देनेपर एक पिशुलापिशुल आता है । पुनः एक प्रक्षेप, दो पिशुल और एक पिशुलापिशुलको ग्रहणकर द्वितीय वृद्धिस्थानको प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय वृद्धिस्थान होता है । यह तृतीय वृद्धिस्थान जघन्य स्थानकी अपेक्षा तीन प्रक्षेपों, तीन पिशुलों और एक पिशुलापिशुलसे अधिक होता है ।

अब इनको जघन्य स्थानसे लानेकी विधी कहते हैं । वह इस प्रकार है– सब जीवराशिके तृतीय भागका विरलन कर जघन्य स्थानको समखंड करके देनेपर विरलित अंकके प्रति तीन-तीन प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर इस विरलनके नीचे सब जीवराशिका विरलनकर उपरिम विरलन राशिके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति तीन-तीन पिशुलोंका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर इस विरलनके नीचे तिगुणी सब जीवराशिका विरलन कर मध्यम विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको ग्रहणकर समखण्ड करके देनेपर एक-एक अंकके प्रति एक एक पिशुलापिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है । अब एक अधिक तिगुणी सब जीवराशि जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो सब जीवराशि प्रमाण मध्यम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित

---

* ताप्रतौ ' एदेसिं ' इति पाठः ।

किंचूणो आगच्छदि । पुणो इमं सव्वजीवरासिम्हि सोहिय सुद्धसेसं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अणंतभागहीणो एगरूवस्स तिभागो आगच्छदि । एवं सव्वजीवरासितिभागम्मि सोहिय सुद्धसेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे तिण्णि पक्खेवाणि तिण्णि पिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च आगच्छदि । पुणो एवम्मि जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते तदियं वड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । एदेण बीजपदेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तउव्वंकट्ठाणाणं पुध पुध परूवणा कायव्वा जाव पढमअसंखेज्जभागवड्ढीए हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणे त्ति ।

पुणो कंडयमेत्तट्ठाणं गंतूण ट्ठिदचरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणस्स भागहारपरूवणा कीरदे । तं जहा- तत्थ एगकंडयमेत्तपक्खेवाअत्थि, एगादिएगुत्तरकमेण पक्खेयवड्ढिदंसणादो । रूवूणकंडयस्स संकलणमेत्तपिसुलाणि अत्थि, पढममणंतभागवड्ढिट्ठाणमोत्तूण उवरि संकलणागारेण पिसुलाणं वड्ढिदंसणादो । दुरूवूणकंडयस्स संकलणासंकलणमेत्तपिसुलापिसुलाणि अत्थि, तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणप्पहुडि उवरि संकलणासंकलणसरूवेण पिसुलापिसुलाणं वड्ढिदंसणादो । तिरूवूणकंडयस्स तदियवारसंकलणमेत्तचुण्णियाओ अत्थि, चउट्ठाणप्पहुडि तदियवारसंकलणाकमेण चुण्णियाणं वड्ढिदंसणादो । एवं कंडयगच्छो एगादिएगुत्तरकमेण हायमाणो गच्छदि जावएगरूवावसेसो

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

करनेपर एक अन्ककी कुछ कम एक तृतीय भाग आता है । इसको सब जीवराशियोंमेंसे कम करके जो शेष रहे उससे एक अधिक जाकर यदि एक अन्ककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका अनन्तवें भागसे हीन तृतीय भाग आता है । इसको सब जीवराशिके तृतीय भागमेंसे कम करके शेषका जघन्यस्थानमें भाग देनेपर तीन प्रक्षेप, तीन पिशुल और एक पिशुलापिशुल आता है । अब इसे जघन्य स्थानको प्रतिराशिकर उसमें मिला देनेपर तृतीय वृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । इस बीजपदसे प्रथम असंख्यातभागवृद्धिके अधस्तन ऊर्वक स्थान तक अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र ऊर्वकस्थानोंकी पृथक् पृथक् प्ररूपणा करनी चाहिये ।

अब काण्डक प्रमाण अध्वान जाकर स्थित अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानके भागहारकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- उसमें एक काण्डक प्रमाण प्रक्षेप हैं, क्योंकि, एकको आदि लेकर उत्तरोत्तर एक एक अधिक क्रमसे प्रक्षेपकी वृद्धि देखी जाती है । एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण पिशुल हैं, क्योंकि, प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानको छोडकर आगे संकलनके आकारसे पिशुलोंकी वृद्धि देखी जाती है । दो कम काण्डकके दो वार संकलन प्रमाण पिशुलापिशुल है, क्योंकि, तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थानसे लेकर आगे दो वार संकलन स्वरूपसे पिशुलापिशुलोंकी वृद्धि देखी जाती है । तीन काण्डकके तीन बार संकलन प्रमाण चूर्णिकायें हैं, क्योंकि, चतुर्थ स्थानसे लेकर तीन वार संकलनके क्रमसे चूर्णिकाओंकी वृद्धि देखी जाती है । इस काण्डकगच्छ एकको आदि लेकर एक एक अधिक क्रमसे हीन होता हुआ एक रूप शेष रहने तक जाता

त्ति । पक्खेवा एगादिकमेण, पिसुलाणि-संकलणसरूवेण, पिसुलापिसुलाणि विदिय-वारसंकलणसरूवेण, चुण्णियाओ तिण्णिवारसकलणासरूवेण, चुण्णाचुण्णियाओ चउत्थवारसंकलणसरूवेण, भिण्णाओ पंचमवारसंकलणासरूवेण, भिण्णाभिण्णाओ छट्ठवारसंकलणसरूवेण गच्छंति । एवं छिण्ण-छिण्णाछिण्ण-तुट्ट-तुट्टतुट्ट-दलिद-दलिददलिदादीणं पि णेदव्वं । एत्थोवसंहारगाहाओ [श्री सुविधिसागर जी महाराज

एकोत्तरपदवृद्धो रूपाद्यैर्भाजितश्च पदवृद्धेः । गच्छस्संपातफलं (?)समाहतस्सन्निपातफलम् ✿ ।२।

संपहि एदेसिं सव्वेसिं पि जहण्णट्ठाणादो आणयणविहाणं वुच्चदे । तं जहा—पढमकंडएणोवट्टिदसव्वजीवरासिं विरलिय जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स कंडयमेत्ता सयलपक्खेवा पावेंति । पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा रूवूणकंडयद्धेणोवट्टिदसव्वजीवरासिं विरलेदूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स रूवूणकंडयस्स संकलणमेत्तपिसुलाणि पावेंति । पुणो एदिस्से विदियविरलणाए हेट्ठा रूवूणकंडयसंकलणगुणिदसव्वजीवरासिं दुरूवूणकंड-यस्स विदियवारसंकलणाए ओवट्टिय लद्धं विरलेदूण विदियविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स दुरूवूणकंडयस्स विदियवारसंकलणामेत्त-

है । प्रक्षेप एक आदि क्रमसे, पिशुल संकलन स्वरूपसे, पिशुलापिशुल द्वितीय वार संकलन स्वरूपसे, चूर्णिकायें तीन वार संकलन स्वरूपसे, चूर्णाचूर्णिकायें चतुर्थ वार संकलन स्वरूपसे भिन्न पंचम वार संकलन स्वरूपसे तथा भिन्नाभिन्न छठे वार संकलन स्वरूपसे जाते हैं । इसी प्रकार छिन्न, छिन्नाछिन्न त्रुटित, त्रुटितात्रुटित, दलित और दलितादलित आदिकोंके भी ले जाना चाहिये । इनके लानेका सूत्र—

एक एक अधिक होकर पद प्रमाण वृद्धिगत गच्छको पद प्रमाण वृद्धिको प्राप्त हुए एक आदि अंकोंसे भाजित करनेपर संपातफल अर्थात् एक संयोगी भंगोंका प्रमाण आता है । इनको परस्पर गुणित करनेसे सन्निपातफल अर्थात् द्विसंयोगी आदि भंग आते हैं ।।

अब इन सभीके जघन्य स्थानसे लानेकी विधिका कथन करते हैं । वह इस प्रकार है—प्रथम काण्डकसे अपवर्तित सब जीवराशिका विरलन करके जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति काण्डक प्रमाण सकलप्रक्षेप प्राप्त होते हैं । फिर इस विरलनके नीचे एक कम काण्डकके अर्ध भागसे अपवर्तित सब जीवराशिका विरलन कर उपरिम विर-लनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण पिशुल प्राप्त होते हैं । फिर इस द्वितीय विरलनके नीचे एक कम काण्डकके संतुलनसे गुणित सब जीवराशिको दो कम काण्डकके द्वितीय वार संकलनसे अपवर्तित कर लब्धका विरलन करके द्वितीय विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देने पर एक अंकके प्रति दो कम काण्डकके द्वितीय वार संकलन प्रमाण पिशुलापिशुल प्राप्त होते हैं । इस प्रकार काण्डक प्रमाण विरलन राशियोंको जान करके

(?) अ-आप्रत्योः ' समाहितः ' इति पाठः । ✿ अ-आ-प्र० ५ पृ० १९३, क० पा० २, पृ ३०० ।

त्ताओ विरलणाओ जाणिदूण विरलेदव्वाओ। तत्थ चउत्थादिविरलणाओ अप्पहाणाओ त्ति छोडिदूण तदिय-विदिय पढमाणं पक्खेवसंकलणमाणयणं वुच्चदे। तं जहा- रूवाहियतदियविरलणमेत्तद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स किंचूण बे-तिभागो आगच्छदि। तम्मि मज्झिमविरलणाए अवणिय रूवाहियं काऊण ताए फलगुणिदमिच्छमोवट्टिय लद्धं किंचूणरूवस्सद्धं उवरिमविरलणाए अवणिदाए जहण्णट्ठाणे भागे हिदे लद्धं जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते चत्तारिअंकस्स हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणं होदि। पुणो तं ट्ठाणमसंखेज्जेहि लोगेहि ओवट्टिय तम्मि चेव पडिरासीकदे पक्खित्ते असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि।

संपहि जहण्णट्ठाणादो असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं उप्पाइज्जदे। तं जहा- चत्तारिअंकादो हेट्ठिमउव्वंकम्हि कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवेसु रूवूणकंडयस्स संकलणमेत्तपिसुलेसु दुरूवूणकंडयविदियवारसंकलणमेत्तपिसुलापिसुलेसु सेसचुण्णियभागेसु च अवणिदेसु जहण्णट्ठाणं होदि। पुणो असंखेज्जलोगे विरलिय जहण्णट्ठाणं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो होदि। पुणो पुव्वमवणिदकंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवादिं पि समखंडं कादूण दिण्णे जहासरूवेण पावदि। पुणो एदस्स एगभागहारेणागमणट्ठकिरियं वत्तइस्सामो। तं जहा- असंखेज्जलोगे विरलिय जहण्णट्ठाणं समखंडं

विरलन करना चाहिए। उनमें चतुर्थ आदि विरलन राशियां चूंकि अप्रधान हैं, अतएव उनको छोड़कर तृतीय; द्वितीय और प्रथम प्रक्षेपांशोंके लानेकी विधि कहते हैं। वह इस प्रकार है- एक अधिक तृतीय विरलन मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकके कुछ कम दो तृतीय भाग आते हैं। उनको मध्यम विरलनमेंसे कमकर एक अधिक करके उससे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करके प्राप्त हुए एक रूपके कुछ कम अर्ध भागको उपरिम विरलनमेंसे कम कर देनेपर जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे जघन्य स्थानकी प्रतिराशि करके मिलानेपर चतुरंकके नीचेका ऊर्वक स्थान होता है। फिर उस स्थानको असंख्यात लोकोंसे अपवर्तित कर प्रतिराशीकृत उसीमें मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है।

अब जघन्य स्थानसे असंख्यातभागवृद्धिस्थानको उत्पन्न कराते हैं। यथा- चतुरकसे नीचेके ऊर्वकमेंसे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपों, एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण पिशुलों, दो कम काण्डकके द्वितीयवार संकलन प्रमाण पिशुलापिशुलों तथा शेष चूर्णिकभागोंको कम करने पर जघन्य स्थान होता है। फिर असंख्यात लोकोंका विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति असंख्यातभागवृद्धिका प्रक्षेप होता है। फिर पहिले कम किये गये काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप आदिको भी समखण्ड करके देनेपर यथा स्वरूपसे प्राप्त होता है। अब इसके एक भागहार रूपसे लानेकी क्रिया करते हैं। वह इस प्रकार है- असंख्यात लोकों-

कादूण दिण्णे जहण्णट्ठाणस्स असंखेज्जदिभागो एक्केक्कस्स रूवस्स पावदि । पुणो असंखेज्जेहि लोगेहि ओवट्टिदसव्वजीवरासिं[1] हेट्ठा विरलिय उवरिमएगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगअणंतभागवड्ढिपक्खेवो पावदि । पुणो एगकंडएणोवट्टियं विरलिय उवरिमेगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवा पावेंति । पुणो सेसाणं पि आगमणट्ठं भागहारम्हि अणंतिमभागो असंखेज्जदिभागो च अवणेयव्वो । [2]एदमुवरिमरूवधरिदेसु दादूण समकरणे कीरमाणे परिहीणरूवाणं पमाणं वुच्चदे । तं जहा– रूवाहियविरलणमेत्तद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणम्हि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स अणंतिमभागो आगच्छदि । तं उवरिमविरलणाए अवणिय सेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे लद्धे *पडिरासीकयजहण्णट्ठाणस्सुवरि पक्खित्त असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि । संपहि एदस्सुवरि अणंतभागवड्ढीणं कंडयमेत्ताणमुप्पायणविहाणं जाणिदूण वत्तव्वं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संपहि विदियअसंखेज्जभागवड्ढिउप्पायणविहाणं वुच्चदे । तं जहा तदो हेट्ठिमउव्वंकस्सुवरि असंखेज्जभागवड्ढि-अणंतभागवड्ढिपक्खेवेसु च अवणिदेसु सेसं जहण्णट्ठाणं होदि । तम्मि असंखेज्जेहि लोगेहि भागे हिदे असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो आगच्छदि ।

का विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति जघन्य स्थानका असंख्यातवां भाग प्राप्त होता है । फिर असंख्यात लोकोंसे अपवर्तित सब जीवराशिका नीचे विरलन कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है । फिर काण्डकसे अपवर्तित उसे विरलित कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होते हैं । फिर शेष रहे उनको भी लानेके लिये भागहारमेंसे अनन्तवें भाग व असंख्यातवें भागको भी कम करना चाहिये । इसे उपरिम विरलन अंकोंके प्रति प्राप्त द्रव्योंमें देकर समकरण करनेपर हीन अंकोंका प्रमाण बतलाते हैं । वह इस प्रकार है– एक अधिक विरलन मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका अनन्तवां भाग आता है । उसको उपरिम विरलनमेंसे कम कर शेषका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर लब्धको प्रतिराशिकृत जघन्य स्थानके ऊपर मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है । अब इसके आगे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियोंके उत्पन्न करानेकी विधि जानकर कराना चाहिये ।

अब द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिके उत्पन्न करानेकी विधि कहते हैं । वह इस प्रकार है- उससे अधस्तन ऊर्वकके ऊपर असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपोंको कम करनेपर शेष जघन्य स्थान होता है । उसमें असंख्यात लोकोंका भाग देनेपर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त

[1] अप्रतौ ' जीवरासिहि ' इति पाठः । [2] अप्रतौ ' एव ' इति पाठः । * अ-आप्रत्योः ' पडिरासीय ' इति पाठः ।

एवं पुध ट्ठविय पुणो अवणिदपक्खेवेसु अणंतभागवड्ढिपक्खेवो अप्पहाणो त्ति ते छोड्डिय असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवे असंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थ एगखंडमसंखेज्जभागवड्ढि-पिसुलं होदि । एवं पिसुलं पुव्विल्लपक्खेवं च घेत्तूण चरिमउव्वंकं पडिरासिय पक्खित्ते विदियमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । पुणो एवं जहण्णट्ठाणादो दोहि असंखेज्ज-भागवड्ढिपक्खेवेहि एगपिसुलेण च अहियं होदि । एवं अहियदव्वं जहण्णट्ठाणस्स केव-डियो भागो होदि त्ति पुच्छिदे- असंखेज्जलोगे विरलिय जहण्णट्ठाणे समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगो असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो पावदि । पुणो दोपक्खेवे इच्छामो त्ति पुव्विल्लभागहारस्स अद्धेण भागे हिदे रूवं पडि दो-दोपक्खेवपमाणं पावदि । पुणो एदाणमुवरि एगअसंखेज्जभागवड्ढिपिसुलागमणमिच्छामो त्ति पुव्वि-ल्लविरलणाए* हेट्ठा दुगुणअसंखेज्जलोगे विरलिय उवरिमएगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कपिसुलपमाणं पावदि । पुणो एद विरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणम्हि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणि-विच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स चदुब्भागं किंचूणमागच्छदि । पुणो एदम्मि उवरिम-विरलणाए सोहिदे सुद्धसेसं भागहारो होदि । एदेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे दोप-

---

होता है । इनको पृथक् स्थापित कर फिर कम किये गये प्रक्षेपोंमें चूंकि अनन्त भागवृद्धिप्रक्षेप अप्रधान हैं, अतएव उनको छोडकर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको असंख्यात लोकसे खण्डित करने पर उसमेंसे एक खण्ड असंख्यातभागवृद्धिपिशुल होता है । इस पिशुल और पूर्वके प्रक्षेपको ग्रहण कर अन्तिम ऊर्वंकको प्रतिराशि करके मिलानेपर द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । यह जघन्य स्थानकी अपेक्षा दो असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपों और एक पिशुलसे अधिक होता है ।

शंका– यह अधिक द्रव्य जघन्य स्थानके कितनेवें भाग प्रमाण होता है ?

समाधान– ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि असंख्यात लोकोंका विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक असंख्यातवृद्धि प्रक्षेप प्राप्त होता है । पुनः चूंकि दो प्रक्षेप अभीष्ट हैं अत. पूर्वके भागहारके अर्ध भागका भाग देनेपर एक अंकके प्रति दो दो प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः इनके ऊपर एक असंख्यातभागवृद्धि पिशुलका लाना अभीष्ट है, अतः पूर्व विरलनके नीचे दुगुणे असंख्यात लोकोंका विरलन कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक पिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर एक अधिक इस विरलन प्रमाण जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम चतुर्थ भाग आता है फिर इसको उपरिम विरलनमेंसे कम करनेपर जो शेष रहे वह भागहार होता है । इसका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर दो प्रक्षेप और एक पिशुल प्राप्त होता है । इसको

---

* अ-आप्रत्योः ' विरलणा ', ताप्रतौ ' विरलणा (ए) ' इति पाठः ।

क्खेवा एगपिसुलं च लब्भदि। पुणो एदम्मि जहण्णट्ठाणे पडिरासिय पक्खित्ते विदिय-मसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एदस्सुवरि सव्वजीवरासी भागहारो होदूण ताव गच्छदि जाव कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं चरिमउव्वंकट्ठाणे त्ति।

पुणो एदस्सचरिमतदियअसंजेज्जभागवड्ढिट्ठाणे ☼ भण्णमाणे चरिमउव्वंकस्सुव-रिमअसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवे अवणिय पुध ट्ठविदे जहण्णट्ठाणं होदि अप्पहाणीकयअ-णंतभागवड्ढिपक्खेवत्तादो। पुणो असंखेज्जलोगेहि जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगो पक्खेवो आगच्छदि। इमं पुध ट्ठविय पुणो पडिपुण्णअसंखेज्जलोगेहि चेव दोसु पक्खेवेसु अवहि-रिदेसु ✽ दोअसंखेज्जभागवड्ढिपिसुलाणि आगच्छंति। एवे पुध ट्ठविय पुणो तेणेव भाग-हारेण असंखेज्जभागवड्ढिपिसुले खंडिदे एगं पिसुलापिसुलमागच्छदि। पुणो एगमसंखेज्ज-भागवड्ढिपक्खेवं तिस्से वड्ढीए दोपिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च घेत्तूण चरिमउव्वंकं पडिरासिय पक्खित्ते तदियअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि। तदियअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं णाम जहण्णट्ठाणादो तिहि असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवेहि तिहि ☆ असंखेज्जभागवड्ढिपिसु-लेहि एगेण पिसुलापिसुलेण च अधियं होदि। ✿ पुणो एदमहियदव्वं जहण्णट्ठाणादो उप्पा-इज्जदे। तं जहा- असंखेज्जालोगाणं तिभागं ✤ विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण

जघन्य स्थानमें प्रतिराशि करके मिलानेपर द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। फिर इसके आगे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तिम ऊर्वकस्थान तक सब जीव-राशि भागहार होकर जाती है।

पुनः इसके ऊपरके तृतीय असंख्यातभागवृद्धिस्थानका कथन करनेपर अन्तिम ऊर्वकके ऊप-रके असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको कम करके पृथक् स्थापित करनेपर जघन्य स्थान होता है, क्योंकि, यहाँ अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपको प्रधान नहीं किया गया है। फिर असंख्यात लोकोंका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक प्रक्षेप आता है। इसको पृथक् स्थापित करके फिर पूर्वोक्त असंख्यात लोकोंसे ही दो प्रक्षेपोंके अपहृत करनेपर दो असंख्यातभागवृद्धिपिशुल आते हैं। इनको पृथक् स्थापित करके उसी भागहारसे असंख्यातभागवृद्धिपिशुलको खण्डित करनेपर एक पिशुलापिशुल आता है। अब एक असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप, उसी वृद्धिके दो पिशुलों और एक पिशुलापिशु-लको ग्रहण कर अन्तिम ऊर्वकको प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय असंख्यातभागवृद्धि स्थान होता है। तृतीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान जघन्य स्थानकी अपेक्षा तीन असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपों, तीन असंख्यातभागवृद्धिपिशुलों और एक पिशुलापिशुलसे अधिक है। अब जघन्य स्थानसे इस अधिक द्रव्यको उत्पन्न कराते हैं। यथा- असंख्यात लोकोंके तृतीय भागका विरलन करके

☼ आ-ताप्रतिषु ' वड्ढिट्ठाणेहि ' इति पाठः। ✽ अ-आप्रत्योः ' दो ' इति पदं नोपलभ्यते, ताप्रतौ तूपलभ्यते। ☆ अ-आताप्रतिषु ' तेहि ' इति पाठः। ✿ अ-आ-ताप्रतिषु ' एदमादियदव्वं ' इति पाठः। ✤ ताप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-प्रत्योः '-लोगाणंतिभागं ' इति पाठः।

विण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स तिण्णि-तिण्णिपक्खेवपमाणं पावदि। पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा असंखेज्जलोगे विरलिय ✡ एगरूवधरिदतिण्णिपक्खेवे घेत्तूण समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स तिण्णि तिण्णि पिसुलाणि पावंति। पुणो एदिस्से विदियविरलणाए हेट्ठा तिगुणअसंखेज्जलोगे विरलिय उवरिमएगेगरूवधरिद ✱ तिण्णि-तिण्णि-पिसुलाणि घेत्तूण समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगपिसुलापिसुलपमाणं पावदि। पुणो एस विरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो मज्झिम-मविरलणम्मि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए किंचूणो एगरूवस्स तिभागो आगच्छदि। पुणो एदं मज्झिमविरलणाए सोहिय सुद्धसेसं रूवाहियमेलद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स तिभागो किंचूणो आगच्छदि। पुणो एदमुवरिमविरलणम्हि सोहिय जहण्णट्ठाणे भागे हिदे तिण्णिपक्खेवा तिण्णिपिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च आगच्छदि। पुणो एदम्मि जहण्णट्ठाणस्सुवरि पक्खित्ते तदियमसंखेज्जगभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एदेण बीजपदेण उवरि वि णेयव्वं जाव अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं चरिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणे त्ति।

पुणो चरिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणस्स भागहारो उच्चदे। तं जहा-अंगुलस्स

जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति तीन तीन प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इस विरलनके नीचे असंख्यात लोकोंका विरलन कर एक अंकके प्रति प्राप्त तीन प्रक्षेपोंको ग्रहणकर समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति तीन तीन पिशुल प्राप्त होते हैं फिर इस द्वितीय विरलनके नीचे तिगुणे असंख्यात लोकोंका विरलन करके उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त तीन तीन पिशुलोंको ग्रहण कर समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक पिशुलापिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः एक अधिक इस विरलन प्रमाण जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो मध्यम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम एक तृतीय भाग आता है। फिर इसको मध्यम विरलनमेंसे कम करके जो शेष रहे उससे एक अधिक मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी; इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित करनेपर एक अंकका कुछ कम तृतीय भाग आता है। फिर इसको उपरिम विरलनमेंसे कम करके जघन्य स्थानमें भाग देनेपर तीन प्रक्षेप, तीन पिशुल और एक पिशुलापिशुल आता है। पुनः इसको जघन्य स्थानके ऊपर मिला देनेपर तृतीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। इस बीजपदसे अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिस्थानोंमें अन्तिम असंख्यातभागवृद्धिस्थान तक ले जाना चाहिये।

अब अन्तिम असंख्यातभागवृद्धिस्थानके भागहारको कहते हैं। वह इस प्रकार है- अंगुलके

✡ म प्रतौ '-धरिद' इति पाठः ✱ अ-आ-प्रत्योः '-धरिदं' इति पाठः।

असंखेज्जदिभागेण असंखेज्जलोगमोवट्टिय किंचूणं कादूण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे जं भागलद्धं तम्हि कंडयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा रूवूणकंडयस्स संकलणमेत्ताणि असंखेज्जभागवड्ढिपिसुलाणि दुरूवूणकंडयस्स संकलणासंकलणमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढि-पिसुलापिसुलाणि सेसचुण्णाणि च आगच्छंति। एदं सव्वं घेत्तूण* जहण्णट्ठाणस्सुवरि पक्खित्ते चरिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि। पुणो एदस्सुवरि सव्वजीवरासिं भागहारं होदूण कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि गच्छंति* जाव चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे त्ति।

पुणो एदस्सुवरि पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि। तम्मि उप्पाइज्जमाणे चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणस्सुवरि वड्ढिदव्वे अवणिदे जहण्णट्ठाणं होदि। पुणो उक्कस्ससंखेज्जं विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण दिण्णे संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो आगच्छदि। अवणिद-पक्खेवेसु संखेज्जरूवेहि ओवट्टिदेसु (1)लद्धदव्वमप्पहाणं, संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स* असंखेज्जभागत्तादो। पुणो तम्मि आणिज्जमाणे हेट्ठा असंखेज्जलोगे विरलिय संखेज्ज-भागवड्ढिपक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स असंखेज्जभागवड्ढिपक्खे-वस्स संखेज्जदिभागो पावदि। पुणो सगलपक्खेवमिच्छामो त्ति असंखेज्जलोगे उक्कस्स-संखेज्जेणोवट्टिय विरलेदूण संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे विरलणरूवं

असंख्यातवें भागसे असंख्यात लोकोंको अपवर्तित कर कुछ कम करके जघन्य स्थानमें भाग देने-पर जो लब्ध हो उसमें काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप, एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिपिशुल दो कम काण्डकके संकलनासंकलन प्रमाण असंख्यातभागवृद्धि-पिशुला पिशुल और शेष चूर्ण आते हैं। इस सबको ग्रहण करके जघन्य स्थानके ऊपर मिला-नेपर अन्तिम असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। पुनः इसके आगे सब जीवराशि भाग-हार होकर अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थान तक काण्डक प्रमाण अनंतभागवृद्धिस्थान जाते हैं।

फिर इसके आगे प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। इसको उत्पन्न करानेमें अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानके ऊपर वृद्धिप्राप्त द्रव्यको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है। अब उत्कृष्ट संख्यातका विरलन करके जघन्य स्थानको समखंड करके देनेपर असंख्यातभागवृद्धि प्रक्षेप आता है। कम किये हुए प्रक्षेपोंको संख्यात अंकोंसे अपवर्तित करनेपर जो द्रव्य लब्ध हो वह अप्रधान है, क्योंकि, वह संख्यातभागवृद्धि प्रक्षेपके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसको लाते समय नीचे असंख्यात लोकोंका विरलन कर संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपका संख्यातवां भाग प्राप्त होता है। अब चूंकि सकल प्रक्षे-पका लाना अभीष्ट है, अतः असंख्यात लोकोंको उत्कृष्ट संख्यातसे अपवर्तित कर लब्धका विर-लन करके संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको समखंड करके देनेपर विरलन अंकके प्रति असंख्यातभा-

---

* अप्रतौ 'एदं सद्धं घेत्तूण' इति पाठः। * ताप्रतौ 'आगच्छंति' इति पाठः।
(1) प्रतिषु 'अद्धं' - इति पाठः। * प्रतिषु -- 'वत्स अणंत असंखे' - इति पाठः।

पडि असंखेज्जभागवड्ढिसगलपक्खेवो पावदि । पुणो कंडयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढि-पक्खेवे इच्छामो त्ति एगकंडएण इच्छाणीतणविरलिवरासिमोवट्टिय विरलेदूण संखेज्ज-भागवड्ढिपक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे कंडयमेत्ता असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा ☼विर-लणरूवं पडि पावेंति । पुणो कंडयसहिवकंडयवग्गमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवे इच्छामो त्ति कंडयगुणिदसव्वजीवरासिं विरलिय कंडयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स अणंतभागवड्ढिपक्खेवस्स असंखेज्जदिभागो पावदि । पुणो सगलमणंतभागवड्ढिपक्खेवमिच्छामो त्ति असंखेज्जलोगेहि कंडयगुणिदसव्वजीव-रासिमोवट्टिय विरलेदूण मज्झिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि सगलपक्खेवपमाणं पावदि । पुणो कंडयसहिवकंडयवग्गेणोवट्टिय विरलेदूण मज्झिमविरलणेगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे सकंडय-कंडयवग्ग✽मेत्तअणंत-भागवड्ढिपक्खेवा होंति । पुणो समकरणं कादूण अवणयणरूवाणं पमाणं वुच्चदे-हेट्ठिमविरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो मज्झिमवि-रलणम्हि केवडियरूवपरिहाणिं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओव-ट्टिदाए एगरूवस्स अणंतिमभागो आगच्छदि । एवं मज्झिमविरलणाए सोहिय सुद्धसेसं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरल--

---

पार्धका सकल प्रक्षेप प्राप्त होता है । पुनः काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपोंकी चूंकि इच्छा है, अतएव एक काण्डकसे इस समयकी विरलित राशिको अपवर्तित करके विरलित कर संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप विरलन अंकके प्रति प्राप्त होते हैं । पुनः काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपोंके लानेकी इच्छा है, अतएव काण्डकसे गुणित सब जीवराशिका विरलन कर काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपका असंख्यातवां भाग प्राप्त होता है । अब चूंकि अनन्तभागवृद्धिका सकल प्रक्षेप अभीष्ट है, अतएव असंख्यात लोकों द्वारा काण्डकसे गुणित सब जीवराशिका अपवर्तन कर विरलित करके मध्यम विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक अंकके प्रति सकल प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर उसे कांडक सहित कांडकके वर्गसे अपवर्तित करके विरलित कर मध्यम विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर काण्डकके साथ कांडक-वर्ग प्रमाण अनंतभागवृद्धिप्रक्षेप होते हैं । फिर समीकरण करके हीन अंकोंका प्रमाण बतलाते हैं-एक अधिक अधस्तन विरलन जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो मध्यम विरलनमें कितने अंकोंकी हानि पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका अनंतवां भाग आता है । इसको मध्यम विरलनमेंसे कम करके जो शेष रहे उससे एक अधिक जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी,

---

☼ प्रतिषु ' विरलणरूवं ति ' इति पाठः ✽ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः ' समकंदयवग्ग ', ताप्रतौ मप्रतिसमः पाठः ।

णाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स असंखेज्जदिभागो लब्भदि। एदमुव्वंकस्सासंखेज्जम्हि सोहिय㊀ सेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगो संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो कंडयमेत्ता㊁ असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा㊂ सकंडय-कंडय-वग्गमेत्ता अणंतभागवड्ढिपक्खेवा च लब्भंति। पुणो एत्तियदव्वं जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि।

एत्थ अणंतभागवड्ढीए उव्वंकसण्णा, असंखेज्जभागवड्ढी चत्तारिअंको, संखेज्जभागवड्ढी पंचंको, संखेज्जगुणवड्ढी छअंको, असंखेज्जगुणवड्ढी सत्तंको, अणंतगुणवड्ढी अट्ठंको त्ति घेत्तव्वो㊃। एदीए सण्णाए एगछट्ठाणसंदिट्ठी जोजेयव्वो।

संपहि पयदं उच्चदे- अणंतभागवड्ढिपक्खेवा जे एत्थ एगभागहारेण आणिदा सकंडय-कंडयवग्गमेत्ता ते सरिसा ण होंति◆, अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढिसरूवेण तेसिमवट्ठाणादो। असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा वि सरिसा ण होंति, अण्णोण्णं पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढीए अवट्ठाणादो। तदो एगभागहारेण आणयणं ण जुज्जदे। अह पिसुलपिसुलापिसुलादीणं पुध पुध भागहारे उप्पाइय भागहारपरिहाणिं कादूण एगभागहारेण

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अङ्कका असंख्यातवां भाग पाया जाता है। इसको उत्कृष्ट संख्यातमें से कम करके शेषका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप, काण्डक प्रमाण असंख्यातभाग वृद्धिप्रक्षेप और काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप पाये जाते हैं। इतने द्रव्यको जघन्य स्थानको प्रतिराशि कर उसमें प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है।

यहां अनन्तभागवृद्धिकी ऊर्वक संज्ञा, असंख्यातभागवृद्धिकी चतुरंक, संख्यातभागवृद्धिकी पंचांक, संख्यातगुणवृद्धिकी षडंक, असंख्यातगुणवृद्धिकी सप्तांक और अनन्तगुणवृद्धिकी अष्टांक संज्ञा जानना चाहिये। इस संज्ञासे एक षट्स्थान संदृष्टिकी योजना करनी चाहिये।

अब यहां प्रकृतका कथन करते हैं--

शंका- काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण जो अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप एक भागहारके द्वारा लाये गये हैं वे सदृश नहीं हैं, क्योंकि, उनका अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि स्वरूपसे अवस्थान है। असंख्यातभागवृद्धिके प्रक्षेप भी सदृश नहीं होते, क्योंकि, उनका परस्परकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि स्वरूपसे अवस्थान है। इसीलिये उनका एक भागहारसे लाना योग्य नहीं है। यदि कहा जाय कि पिशुल व पिशुलापिशुल आदिकोंके पृथक् पृथक् भागहारोंको उत्पन्न कराकर भागहारकी हानि कराकर एक भागहारके द्वारा वे लाये जा सकते हैं तो यह भी घटित

㊀ अप्रतौ '-संखेज्जं सोहिय' इति पाठः। ㊁ अ-आप्रत्योः 'कंडयमेत्तो' इति पाठः। ㊂ ताप्रतौ 'तोऽग्रे' (कंडयमेत्ता असंखे०भागवड्ढिपक्खेवा) ' इत्यधिकः पाठः कोष्ठकान्तर्गतः।

㊃ उव्वंकं चउरंकं पण-छस्सत्तंक अट्ठअंकं च। छव्वड्ढीणं सण्णा कमसो संदिट्ठिकरणट्ठं॥ गो० जी० ३२५. ◆ मप्रतौ ' सारिसाणि होंति ' इति पाठः।

आणिज्जंति त्ति णेदं पि घडदे, एगभवम्मि संखेज्जकिरियस्स पुरिसस्स असंखेज्जकिरियासु वावारविरोहादो। तदो पुव्वपरूविदभागहारपरूवणा ण घडदे त्ति ? सच्चमेदं किंतु असरिसत्तं पक्खेवाणमविवक्खिय सरिसा इदि बुद्धीए संकप्पिय भागहारपरूवणा कीरदे। अलीयवयणेण कधं ण कम्मबंधो♣ ? णेदमलीयवयणं, एयंतग्गहाभावादो। ण च एदेण वयणेण मिच्छाणाणमुप्पाइज्जदे, असंखेज्जेहि वासेहि पुध पुध तेरासियं काऊण उप्पाइदभागहारेहिंतो समुप्पण्णणाणसमाणसुदणाणुप्पत्तीदो। ण च अंतेवासीणमाइरिया सव्वसुत्तत्थं भणंति, तहाविहसत्तीए अभावादो। कधं पुण सयलसुदणाणुप्पत्ती ? ण एस दोसो, अणुत्तोवग्गह-ईहावाय-धारणाहि तदुप्पत्तीदो। उत्तं च--

पण्णवणिज्जा भावा अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं।
पण्णवणिज्जाणं पुण अणंतभागो सुदणिबद्धो✿ ॥ ३ ॥
आचार्य ✾पादमाचष्टे पादः शिष्य स्वमेधया✿
तद्विद्यसेवया पादः पादः कालेन पच्यते ॥ ४ ॥

नहीं होता है, क्योंकि, संख्यात क्रिया युक्त पुरुषके असंख्यात क्रियाओंमें व्यापारका विरोध है। इस कारण पूर्व प्ररूपित भागहारकी प्ररूपणा घटित नहीं होती ?

समाधान-- यह सत्य है, किन्तु प्रक्षेपोंकी असमानताकी विवक्षा न कर बुद्धिसे उन्हें सदृश कल्पित कर भागहारकी प्ररूपणा की जा रही है।

शंका-- इस असत्यभाषणसे कर्मबन्ध कैसे न होगा ?

समाधान-- यह असत्यभाषण नहीं है, क्योंकि, इसमें एकान्त आग्रहका अभाव है। इस वचनसे मिथ्याज्ञान भी नहीं उत्पन्न कराया जा रहा है, क्योंकि, उसके द्वारा असंख्यात वर्षोंसे पृथक् पृथक् त्रैराशिक करके उत्पन्न कराये गये भागहारोंसे उत्पन्न ज्ञानके समान श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है। दूसरे, आचार्य शिष्योंके लिये समस्त सूत्रार्थको नहीं कहते हैं, क्योंकि, वैसी सामर्थ्य नहीं है।

शंका-- तो फिर पूर्ण श्रुतज्ञान कैसे उत्पन्न हो सकता है ?

समाधान -- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अनुक्तावग्रह, ईहा, अवाय और धारणाके द्वारा वह उत्पन्न हो सकता है। कहा भी है --

वचनके अगोचर अर्थात् केवल केवलज्ञानके विषयभूत जीवादिक पदार्थोंके अनंतवें भाग-मात्र प्रज्ञापनीय अर्थात् तीर्थंकरकी सातिशय दिव्यध्वनिके द्वारा प्रतिपादनके योग्य हैं। तथा प्रतिपादनके योग्य उक्त जीवादिक पदार्थोंका अनंतवाँ भाग मात्र श्रुतनिबद्ध है ॥ ३ ॥ See पु ९ पृ 57

आचार्य एक पादको कहते हैं, एक पादको शिष्य अपनी बुद्धिसे ग्रहण करता है, एक पाद उसके जानकार पुरुषोंकी सेवासे प्राप्त होता है, तथा एक पाद समयानुसार परिपाकको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

♣ अप्रतौ 'कम्मबंधो' इति पाठः। ✾ गो० जी० ३३४, विशेषा० १४१.। ✿ अ-आ-प्रत्योः 'पद-' इति पाठः। ✿ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'पादः शिष्यस्य' मेधया, ताप्रतौ 'पादः शिष्यस्य मेधया' इति पाठः।

एदिस्से संखेज्जभागवड्ढीए उवरि सव्वजीवरासी भागहारो होदूण गच्छदि जाव कंडयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं चरिमउव्वंकट्ठाणे त्ति। पुणो असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एवस्स भागहारो असंखेज्जा लोगा। एवं सकंडय-कंडयवग्गमेत्ताणि अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि कंडयमेत्ताणि असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि च गंतूण विदियसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि। जहण्णट्ठाणं पुण पेक्खिदूण पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणादो उवरि दुगुणवड्ढीदो हेट्ठा सव्वत्थ संखेज्जभागवड्ढी चेव। संपहि एत्तो प्पहुडि उवरिमसंखेज्जभागवड्ढीणं परूवणाए कीरमाणाए अणंतभागवड्ढिअसंखेज्जभागवड्ढीयो छोडिदूण परूवणं कस्सामो। कुदो? तासिं वड्ढीणं अइत्थोवत्तणेण पहाणत्ताभावादो।

संपहि विदियसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा- हेट्ठिमउव्वंकस्सुवरि वड्ढिदद्व्वं पुध ट्ठविदे सेसं जहण्णट्ठाणं* होदि। पुणो तम्हि उक्कस्ससंखेज्जेण भागे हिदे एगो संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो लब्भदि। एवं पुध ट्ठविय पुणो उक्कस्ससंखेज्जेण भागे हिदे एगो संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो लब्भदि। एवं पुध ट्ठविय पुणो उक्कस्ससंखेज्जेण भागे हिदे पुव्वं पुध ट्ठविदसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवे एगं संखेज्जभागवड्ढिपिसुलं लब्भदि त्ति[✿]।

इस संख्यातभागवृद्धिके आगे सब जीवराशि भागहार होकर काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तिम ऊर्वक स्थानतक जाती है। फिर असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है, इसका भागहार असंख्यात लोक है। इस प्रकार काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थान और काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिस्थान जाकर द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। परन्तु जघन्यस्थानकी अपेक्षा प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थानसे ऊपर और दुगुणवृद्धिसे नीचे सर्वत्र संख्यातभागवृद्धि ही होती है।

अब यहाँ से लेकर उपरिम संख्यातभागवृद्धियोंकी प्ररूपणा करनेमें अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिको छोडकर प्ररूपणा करते हैं, क्योंकि, बहुत थोडी होनेसे उन वृद्धियोंकी प्रधानता नहीं है।

अब द्वितीय संख्यातभागवृद्धिकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- अधस्तन ऊर्वकके ऊपर वृद्धिप्राप्त द्रव्यको पृथक् स्थापित करनेपर शेष रहा जघन्य स्थान होता है। फिर उसमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है। इसको पृथक स्थापित कर फिर उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है। इसको पृथक् स्थापितकर फिर उत्कृष्ट संख्यातका पूर्वमें पृथक् स्थापित संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपमें भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धि पिशुल होता है। इस प्रकार एक प्रक्षेप और एक पिशुलको

---

* अप्रतौ 'जहण्णट्ठाणं' इति पाठः। ✿ अ-आप्रत्योः 'लब्भदि तो' इति प्रतौ 'लब्भदि तो (त्ति)' इति पाठः।

एवमेगपक्खेवमेगपिसुलं च घेत्तूण उवरिमउव्वंकं पडिरासिय पक्खित्ते विदियसंखेज्ज भागवड्ढिट्ठाणं होदि । विदियसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं णाम जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण दोहि संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवेहि एगेण संखेज्जभागवड्ढिपिसुलेण च अहियं होदि ।

एदेसिं जहण्णट्ठाणादो उप्पत्ती वुच्चदे । तं जहा- उक्कस्ससंखेज्जयस्स अद्धं विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स दो-दोसगलपक्खेवा पावेंति । पुणो एदस्स हेट्ठा दुगुणमुक्कस्ससंखेज्जं विरलेदूण उवरिमएगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि एगेगपिसुलपमाणं पावदि । पुणो एदमुवरिमरूवधरिदेसु* कादूण समकरणे कीरमाणे परिहीणरूवाणं पमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा- रूवाहियहेट्ठिमविरलणमेत्तट्ठाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए किंचूणो एगरूवस्स चदुब्भागो आगच्छदि । एदमुवरिमविरलणाए सोहिय सुद्धसेसेण जहण्ण-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ट्ठाणे भागे हिदे बेपक्खेवा एगपिसुलं च लब्भदि । पुणो लद्धं जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते विदियसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । एवमुवरिमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं सव्वेसिं पि जाणिदूण भागहारो परूवेदव्वो जाव चरिमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणे त्ति । तदुवरि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं होदि ।

संपहि संखेज्जभागवड्ढिकमेण जहण्णट्ठाणादो अणुभागट्ठाणेसु वड्ढमाणेसु केत्तिय-

---

ग्रहण कर उपरिम ऊर्वकको प्रतिराशि करके मिलानेपर द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान जघन्य स्थानकी अपेक्षा दो संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपों और एक संख्यातभागवृद्धिपिशुलसे अधिक होता है ।

इनकी जघन्य स्थानसे उत्पत्तिको कहते हैं । वह इस प्रकार है- उत्कृष्ट संख्यातके अर्ध भागका विरलनकर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति दो दो प्रक्षेप प्राप्त होते हैं । फिर इसके नीचे दुगुणे उत्कृष्ट संख्यातका विरलन कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक अंकके प्रति एक एक पिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है । इसको उपरिम अंकोंके प्रति प्राप्त द्रव्योंमें देकर समीकरण करनेपर हीन अंकोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- एक अधिक अधस्तन विरलन मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम चतुर्थभाग आता है । इसको उपरिम विरलनमेंसे कम करके शेषका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर दो प्रक्षेप और एक पिशुल प्राप्त होता है । फिर लब्धको प्रतिराशीकृत जघन्य स्थानमें मिलानेपर द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार अन्तिम संख्यातभागवृद्धिस्थानतक सभी उपरिम संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके भागहारकी जानकर प्ररूपणा करना चाहिये । इससे आगे संख्यातगुणवृद्धिस्थान होता है ।

अब संख्यातभागवृद्धिक्रमसे जघन्य स्थानसे अनुभागस्थानोंके बढनेपर कितना अध्वान

---

* अ-आप्रत्योः ' एवमुवरि रूवधरिदेसु ' ; ताप्रतौ ' एवमुवरिमधरिदेसु ' इति पाठः ।

मद्धाणं गंतूण दुगुणवड्ढी होदि त्ति जाणावणट्ठं परूवणा कीरदे। तं जहा-एत्थ बाल-जणाणं बुद्धिजणणट्ठं तीहि पयारेहि दुगुणवड्ढिपरूवणा कीरदे(१)। कधं तिविहा परू-वणा कीरदे? थूला मज्झिमा सुहुमा चेदि। तत्थ ताव थूला परूवणा कस्सामो-जह-ण्णट्ठाणादो उवरि उक्कस्ससंखेज्जमेत्तेसु संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु गदेसु दुगुणवड्ढी होदि। कुदो? उक्कस्ससंखेज्जमेत्त* संखेज्जभागपक्खेवेहि एगजहण्णठाणुप्पत्तीदो वड्ढिजणिदजहण्णट्ठाणेण सह ओघजहण्णट्ठाणस्स तत्तो दुगुणत्तदंसणादो। कधमेदिस्से परूवणाए थूलत्तं? पिसुलादीणि मोत्तूण पक्खेवेहिंतो चेव उप्पण्णजहण्णट्ठाणेण दुगुण-त्तपरूवणादो।

संपहि मज्झिमपरूवणा कीरदे। तं जहा-अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेसु संखेज्ज-भागवड्ढिट्ठाणेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्त* संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं पढमट्ठाणप्पहुडि रचणं कादूण तत्थ उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तट्ठाणमुवरि गंतूण दुगुणवड्ढी होदि। उक्कस्ससंखेज्जयमिदि संदिट्ठीए सोलस घेत्तव्वा। उक्कस्ससंखेज्जेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे संखेज्जभागववड्ढी होदि। तम्मि जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते पढमसंखेज्जभागव-ड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि। दोपक्खेवेसु एगपिसुले च जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते बिदियसंखेज्ज-भागवड्ढिट्ठाणं होदि। तिसु पक्खेवेसु तिसु पिसुलेसु एगपिसुलापिसुले च जहण्णट्ठाण

जाकर दुगुणी वृद्धि होती है, यह जतलानेके लिए प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- यहां अज्ञानी जनोंके बुद्धि उत्पन्न करानेके लिए तीन प्रकारसे दुगुणवृद्धिकी प्ररूपणा करते है कैसे तीन प्रकारसे प्ररूपणा की जाती है? वह स्थूल, सूक्ष्म और मध्यमके भेदसे तीन प्रकार है। उनमें पहिले स्थूल प्ररूपणा करते हैं- जघन्य स्थानके आगे उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातभा-गवृद्धिस्थानोंके बीतनेपर दुगुणवृद्धि होती है, क्योंकि, उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातभागप्रक्षे-पोंसे एक जघन्य स्थानके उत्पन्न होनेसे वृद्धिजनित जघन्य स्थानके साथ ओघ जघन्य स्थान उससे दुगुणा देखा जाता है।

शंका – यह प्ररूपणा स्थूल कैसे है?

समाधान – कारण कि इसमें पिशुलादिकोंको छोड़कर प्रक्षेपोंसे ही उत्पन्न जघन्य स्थानसे दुगुणत्वकी प्ररूपणा की गई है।

अब मध्यम प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है- अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र संख्यातभागवृद्धिस्थानोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके प्रथम स्थानसे लेकर रचना करे। उनमें उत्कृष्ट संख्यातका तीन चतुर्थभाग (¾) मात्र अध्वान आगे जाकर दुगुण वृद्धि होती है। उत्कृष्ट संख्यातके लिये संदृष्टिमें सोलह (१६) अङ्क ग्रहण करने चाहिये। उत्कृष्ट संख्यातका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर संख्यातभागवृद्धि होती है। उसको जघन्य स्थानमें मिलानेपर प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। दो प्रक्षेपों और एक पिशुलको जघन्य स्थानमें मिलानेपर द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। तीन प्रक्षेपों, तीन

(१) अप्रतौ 'कीरदे' इत्येतत् पद नोपलभ्यते इति पाठः। ✿ ताप्रतौ '-संखेज्जमेत्तसंखेज्जमेत्त' इति पाठः। ✤ मुद्रित प्रतौ 'संखेज्जस्स' इति पाठः।

पडिरासिय पक्खित्ते तदियसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि । चदुसु पक्खेवेसु छसु पिसुलेसु चदुसु पिसुलापिसुलेसु एगपिसुलापिसुलपिसुले* च जहण्णट्ठाणे पडिरासिय पक्खित्ते चउत्थसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि । एवमुवरि वि जाणिदूण णेयव्वं । णवरि पक्खेवा एगादिएगुत्तरकमेण वड्ढंति । पिसुलाणि रूवूणचडिदद्धाणसंकलणासरूवेण वड्ढंति । पिसुलापिसुलाणि दूरूवूणचडिदद्धाणविदियवारसंकलणासरूवेण वड्ढंति । पिसुलापिसुलापिसुलाणि तिरूवूणचडिदद्धाणतदियवारसंकलणासरूवेण गच्छंति । एवमुवरिमाणं पि वत्तव्वं । तेसिमेसा संदिट्ठी--

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ः ✡
ः
ः
ः
ः०००००००००००० । ३
ः०००००००००००
ः००००००००००
ः०००००००००
ः०००००००
ः०००००००
ः००००००
ः०००००
ः०००
ः०

तीन एक पिशुल मिलाने पर १२ के स्थान पर १२ पिशुल हो जाते हैं ।

पिशुलों और एक पिशुलापिशुलको जघन्य स्थानमें प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है । चार प्रक्षेपों, छह पिशुलों, चार पिशुलापिशुलों और पिशुलापिशुलपिशुलको जघन्य स्थानमें प्रतिराशि करके मिलानेपर चतुर्थ संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है । इस प्रकारसे आगे भी जानकर ले जाना चाहिये । विशेष इतना है कि प्रक्षेप एकसे लेकर एक अधिक क्रमसे बढते हैं । पिशुल एक कम बीते हुए अध्वानके सङ्कलन स्वरूपसे बढते हैं । पिशुलापिशुल दो कम गये हुए अध्वानके द्वितीय वार सङ्कलन स्वरूपसे बढते हैं । पिशुलापिशुलपिशुल तीन कम गये हुए अध्वानके तृतीय वार संकलन स्वरूपसे जाते हैं । इस प्रकारसे आगे भी कहना चाहिये । उनकी यह संदृष्टि है (मूल में देखिये)

---

* ताप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः ' एगपिसुलापिसुले ' इति पाठः ।

✡ अ-आ-काप्रतिषु प्रारम्भे शून्यमेकमधिकं तथा समाप्तौ शून्यद्वयमुपलभ्यते ।

संदिट्ठीए एत्थ पक्खेवा बारस १२। पिसुलाणि छासट्ठी ६६। पिसुलापिसुलाणि वीसुत्तरबिसदमेत्ताणि २२०। एवं ट्ठविय दुगुणवड्ढी वुच्चदे। तं जहा-उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्ता पक्खेवा अत्थि*। ते पुध ट्ठविय १२ पुणो एत्थ उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागमेत्ता सगलपक्खेवा जदि होंति तो दुगुणवड्ढिट्ठाणं होदि। ण च एत्तियमत्थि। तदो एत्थ दुगुणवड्ढी ण उप्पज्जदि त्ति? ण, पिसुलेहिंतो उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागमेत्तपक्खेवुवलंभादो। तं जहा- उक्कस्ससंखेज्जतिण्णिचदुब्भागस्स रूवूणस्स संकलणमेत्ताणि पिसुलाणि उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमुवरि चडिदूण ट्ठिदसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणम्हि अत्थि। तेसिमेगादिएगुत्तरकमेण ट्ठिदाणं समकरणे कीरमाणे पढमिल्लमेगपिसुलं घेत्तूण चरिमपिसुलेसु पक्खित्ते उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपिसुलाणि होंति। विदियट्ठाणट्ठिददोपिसुलाणि घेत्तूण दुचरिमपिसुलेसु रूवूणेसु पक्खित्ते एत्थ वि उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपिसुलाणि होंति। तदियट्ठाणट्ठिदतिण्णिपिसुलाणि घेत्तूण तिचरिमपिसुलेसु तिरूवूणेसु पक्खित्ते उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपिसुलाणि होंति। एवं सव्वेसिं समकरणे कदे उक्कस्ससंखेज्जयस्स

संदृष्टिमें यहां प्रक्षेप बारह (१२), पिशुल छयासठ (६६) और पिशुलापिशुल दो सौ बीस (२२०) मात्र हैं। इस प्रकार स्थापित करके दुगुणी वृद्धिकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है-

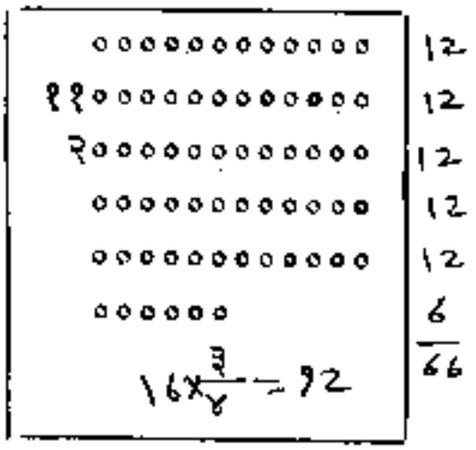
शंका – उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग (१६×¾ = १२) मात्र प्रक्षेप हैं। इनको पृथक स्थापित करके फिर यहां उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग मात्र सकल प्रक्षेप होते है तो दुगुणी वृद्धिका स्थान होता है परन्तु इतना है नहीं। अतएव यहां दुगुणी वृद्धि नहीं उत्पन्न होती है?

समाधान – नहीं, क्योंकि, पिशुलोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट संख्यातके भाग मात्र प्रक्षेप पाये जाते हैं। यथा– उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र आगे जाकर स्थित संख्यातभागवृद्धिस्थानमें उत्कृष्ट संख्यातके एक कम तीन चतुर्थ भागके संकलन प्रमाण पिशुल हैं। एकको आदि लेकर एक अधिक क्रमसे स्थित उनका समीकरण करनेमें प्रथम स्थानके एक पिशुलको ग्रहणकर अंतिम पिशुलोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र पिशुल होते हैं। द्वितीय स्थानमें स्थित दो पिशुलोंको ग्रहणकर दो कम द्विचरम पिशुलोंमें मिलानेपर यहां भी उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र पिशुल होते हैं। तृतीय स्थानमें स्थित तीन पिशुलोंको ग्रहणकर तीन त्रिचरम पिशुलोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र पिशुल होते हैं। इस प्रकार सबका समीकरण करनेपर उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग आयत और एक कम तीन

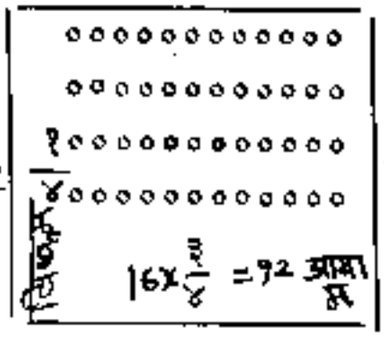
---

* प्रतिषु १२ संख्येयम् 'ते पुध ट्ठविय' इत्यत परं चाधुपलभ्यते।

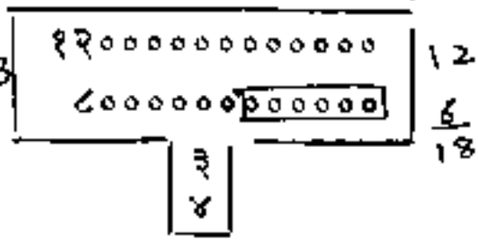
तिण्णि व दुब्भागायामं रूवूणतिण्णिचदुब्भागद्धविक्खंभखेत्तं होदूण चिट्ठदि । तं चेदं– 9



पुणो एत्थ उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागविक्खंभेण तिण्णिचदुब्भागायामेण तच्छेदूण पुध ट्ठवेदव्वं । तं च एदं– 2



सेसखेत्तमुक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भायायामं 3 उक्कस्ससंखेज्जयस्सेव अद्धरूवूणट्ठमभागविक्खंभखेत्तं होदूण चिट्ठदि ।



पुणो एदं तिण्णिखंडाणि कादूण तत्थ तदिखंडम्हि उक्कस्ससंखेज्जयस्स अट्ठमभागमेत्तपिसुलाणि घेत्तूण पढम-बिदियखंडम्मि ऊणपंतीए ढोइदे(1) पढम-बिदियखंडाणि उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागायामेण तस्स अट्ठमभागविक्खंभेण चिट्ठंति । पुणो तत्थ बिदियखंडं घेत्तूण पढमखंडस्सुवरि ठविदे उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भाग-

भागके अर्ध भाग प्रमाण विस्तृत क्षेत्र होकर स्थित होता है। वह यह है (संदृष्टि मूलमें देखिये)।

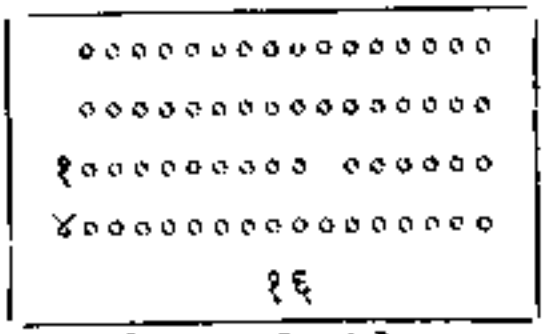
फिर इसमेंसे उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग विष्कम्भ और उसके तीन चतुर्थ भाग आयामके प्रमाणसे छीलकर पृथक् स्थापित करना चाहिये। वह यह है–(मूलमें देखिये।)

शेष क्षेत्र उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग आयत और उत्कृष्ट संख्यातके ही अर्ध $\frac{16}{8}-\frac{9}{2}=1$ अंकसे कम आठवें भाग विस्तृत क्षेत्र होकर स्थित होता है (संदृष्टि मूलमें देखिये)।

फिर इसके तीन खण्ड करके उनमें तृतीय खण्डमेंसे उत्कृष्ट संख्यातके आठवें भाग मात्र पिशुलोंको ग्रहणकर प्रथम व द्वितीय खण्डकी हीन पंक्तिमें मिलानेपर प्रथम और द्वितीय खण्ड उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग आयाम और उसके आठवें भाग विष्कम्भसे स्थित होते हैं। फिर उनमेंसे द्वितीय खण्डको ग्रहणकर प्रथम खण्डके ऊपर स्थापित करनेपर उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ

(1) अ-आप्रत्योः 'धोइदे' इति पाठः ।

विक्खंभायामं समचउरसखेत्तं होदि । एदं पुव्विल्ल-
खेत्तम्हि उक्कस्ससंखेज्जचदुब्भागविक्खंभम्मि तिण्णि-
चदुब्भागायाममम्मि संधिदे उक्कस्ससंखेज्जायामं तच्चदु
ब्भागविक्खंभं खेत्तं होदूण चिट्ठदि। तस्स पमाणमेदं



इदि संदिट्ठी घेत्तव्वं । एत्थ उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलाणि घेत्तूण एगो संखेज्जभाग-
वड्ढिपक्खेवो होदि त्ति उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागमेत्तसगलपक्खेवा लब्भंति ।
एदेसु पक्खेवेसु (४) पुव्विल्लउक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपक्खेवेसु (१२)
पक्खित्तेसु (१६) उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा होंति । एदे सव्वे
मिलिदूण एगं जहण्णट्ठाणं होदि । एदम्मि* जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते दुगुणवड्ढी होदि ।
सेसपिसुलाणि पिसुलापिसुलाणि च तहा चेव चिट्ठंति । एसो वि थूलत्थो ।

संपधि एदम्हादो सुहुमत्थपरूवणा कीरदे । तं जहा -उक्कस्ससंखेज्जं छप्पण्ण-
खंडाणि कादूण तत्थ इगिदालखंडाणि पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणादो उवरि चढिदूण
उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं चरिमट्ठाणादो पण्णारसखंडाणि हेट्ठा ओस-
रिदूण तदित्थट्ठाणम्मि दुगुणवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । तं जहा—इगिदालमेत्तखंडाणि उवरि
चढिदूण ट्ठिदतदित्थट्ठाणम्मि इगिदालखंडमेत्ता चेव सगलपक्खेवा लब्भंति (४१)।

भाग विष्कम्भ और आयाम युक्त समचतुरस्र क्षेत्र होता है। इसको उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग विष्कम्भ और उसके तीन चतुर्थ भाग आयामवाले पूर्वके क्षेत्रमें मिला देनेपर उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण आयाम और उसके चतुर्थ भाग विष्कम्भ युक्त क्षेत्र होकर स्थित रहता है। उसका प्रमाण यह है (मूलमें देखिये), ऐसा संदृष्टिमें ग्रहण करना चाहिये। यहाँ चूंकि उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण पिशुलोंको ग्रहणकर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप होता है, अतएव समस्त प्रक्षेप उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग प्रमाण होते हैं। इन (४) प्रक्षेपोंको पहिले उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण (१२) प्रक्षेपोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यात (१६) प्रमाण संख्यातभाग-वृद्धिप्रक्षेप होते हैं। ये सब मिलकर एक जघन्य स्थान होता है। इसे एक जघन्य स्थानमें मिलानेपर दुगुणी वृद्धि होती है। शेष पिशुल और पिशुलापिशुल उसी प्रकारसे स्थित रहते हैं। यह भी स्थूल अर्थ है।

अब इसकी अपेक्षा सूक्ष्म अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है– उत्कृष्ट संख्यातके छप्पन खण्ड करके उनमेंसे इकतालीस खण्ड प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थानसे आगे जाकर अथवा उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके अन्तिम स्थानसे पन्द्रह खण्ड नीचे उतरकर वहाँ के स्थानमें दुगुणी वृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है। यथा–इकतालीस मात्र खण्ड ऊपर चढ़कर स्थित वहाँ के स्थानमें इकतालीस (४१) खण्ड प्रमाण ही सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं।

यहाँ प्रक्षेप का प्रमाण $\frac{६५}{५६}$

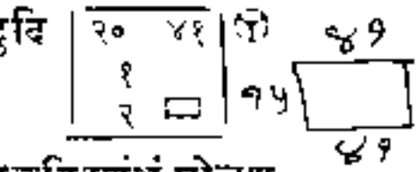
* प्रतिषु 'एगम्मि' इति पाठः ।

जघन्य स्थान (६४) के उत्कृष्ट संख्यात रूप ५६ खंडे करके

संपहि एत्थ पण्णारसखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु संतेसु एगं जहण्णट्ठाणं उप्पज्जदि। तेसिं उप्पत्तिविहाणं वुच्चदे। तं जहा–तदित्थट्ठाणपिसुलपमाणमिगिदालखंडसंकलणमेत्तं[1] (४१)। रूवूणमिदि किण्ण भण्णदे ? ण, थोवभावेण अप्पहाणत्तादो। पुणो समकरणे कदे इगिदालखंडायाममिगिदालदुभागविक्खंभं च होदूण चेट्ठदि $\frac{४१ \times ४१}{२} = ४१ \times \frac{४१}{२} = ४१ \times २०\frac{१}{२}$

२०	४१
१	
२	□

(१)



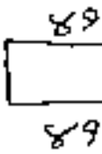
एवं ट्ठिदक्खेत्तब्भंतरे पुव्विल्लायामपमाणेण पण्णारसखंडमेत्तपिसुलविक्खंभं मोत्तूण एगखंडदुभागाहियपंचखंडविक्खंभं इगिदालखंडायामक्खेत्तं खंडेदूणमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं पण्णारसखंडविक्खंभइगिदालखंडायामखेत्तग्गहणट्ठं।

११	४१
२	□

पुणो एत्थ एगखंडद्धविक्खंभेण इगिदालखंडायामेण खेत्तं घेत्तूण पुध ट्ठवेदव्वं

१	४१
२	□

(५)



पुणो एत्थ एगखंडद्धविक्खंभेण एगखंडायामेण तच्छेदूण पुध ट्ठवेदव्वं।

१	१
२	□

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अब यहाँ पन्द्रह खण्ड प्रमाण सकल प्रक्षेपोंके होनेपर एक जघन्य स्थान उत्पन्न होता है। उनकी उत्पत्तिका विधान बतलाते हैं। वह इस प्रकार है–वहाँ के स्थान सम्बन्धी पिशुलोंका प्रमाण इकतालीस खण्डोंके संकलन मात्र है (४१)।

शंका– वह एक अंकसे कम है, ऐसा क्यों नहीं कहते ? $\frac{४१ \times ४१}{२} = ४१ \times \frac{४१}{२} = ४१ \times २$

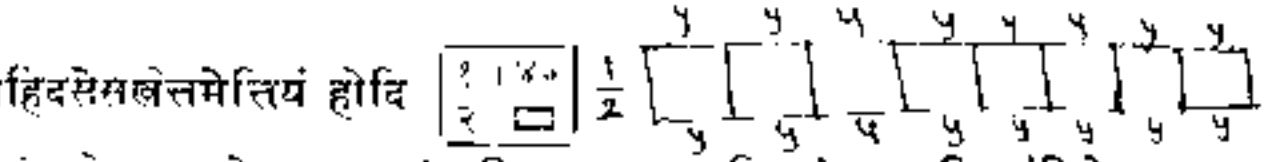
समाधान– नहीं, क्योंकि, स्तोक स्वरूप होनेसे यहाँ उसकी प्रधानता नहीं है।

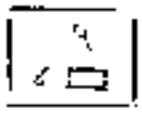
फिर उनका समीकरण करनेपर इकतालीस खण्ड प्रमाण आयाम और इकतालीसके द्वितीय भाग प्रमाण विष्कम्भसे युक्त होकर क्षेत्र स्थित होता है–$२०\frac{१}{२}$ □ ४१। इस प्रकारसे स्थित क्षेत्रके भीतर पन्द्रह खण्ड विस्तृत और इकतालीस खण्ड आयत क्षेत्रको ग्रहण करनेके लिये–पहिले आयामके प्रमाणसे पन्द्रह खण्ड मात्र पिशुलोंके बराबर विष्कम्भको छोडकर एक खण्डके द्वितीय भागसे अधिक पाँच खण्ड प्रमाण विस्तृत और इकतालीस खण्ड प्रमाण आयत क्षेत्रको खण्डित करके अलग करके पृथक् स्थापित करना चाहिये $\frac{१}{२}$ □ ४१। फिर इसमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग मात्र विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड मात्र आयामसे क्षेत्रको ग्रहणकर पृथक् स्थापित करना चाहिये $\frac{१}{२}$ □ ४१। फिर इसमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग मात्र विष्कम्भ और एक खण्ड मात्र आयामसे काटकर पृथक् स्थापित करना चाहिये $\frac{१}{२}$ □ १। इस ग्रहण किये गये क्षेत्रसे शेष क्षेत्र

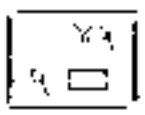
[1] प्रतिषु 'मेत्त' इति पाठः। (१) तावती

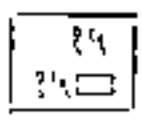
२०	४१
१	
१	□

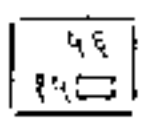
एवविधात्र संदृष्टिः।

गहिदसेसखेत्तमेत्तियं होदि  ।

एदं खेत्तमायामेण अट्ठखंडाणि कादूण विक्खंभस्सुवरि संधिदे चत्तारिखंडविक्खंभ-पंचखंडायामं खेत्तं होदि 

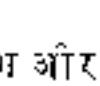
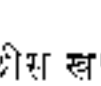
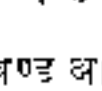
एदं पंचखंडविक्खंभ-इगिदालखंडायामखेत्तस्स सीसम्हि ट्ठविदे पंचखंडविक्खंभं पणदालखंडायामखेत्तं होदि 

एदं तिण्णिखंडाणि कादूण एगखंडविक्खंभस्सुवरि सेसदोखंडविक्खंभेसु ट्ठोइदेसु विक्खंभायामेहि पण्णारसखंडमेत्तं समचउरसखेत्तं होदि 

एदं घेत्तूण पण्णारसखंडविक्खंभइगिदालखंडायामखेत्तस्स सीसम्मि ट्ठविदे पण्णारसखंडविक्खंभ-छप्पण्णखंडायामखेत्तं होदि 

आयामछप्पण्णखंडेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलाणि होंति । उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलेहि वि एगो सगलपक्खेवो होदि, एगसगलपक्खेवे उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदे एगपिसुलुवलंभादो । तम्हा एत्थ पण्णारसखंडमेत्ता सगलपक्खेवा लब्भंति । एदेसु सगलपक्खेवेसु इगिदालखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु पक्खित्तेसु छप्पण्णखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति । ते च सव्वे मेलिदूण एगं जहण्णट्ठाणं, छप्पण्णखंडमेत्तसगलपक्खेवेहि उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवउप्पत्तीदो। उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपक्खेवेहि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इतना होता है  । इस क्षेत्रके आयामकी ओरसे आठ खण्ड करके विष्कम्भके ऊपर जोड देनेपर चार खण्ड विष्कम्भ और पाँच खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है  । इसको पाँच खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके शिरके ऊपर स्थापित करनेपर पाँच खण्ड विष्कम्भ और पैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है  । इसके तीन खण्ड करके एक खण्डके विष्कम्भके ऊपर शेष दो खण्डोंके विष्कम्भको जोड देनेपर विष्कम्भ और आयामसे पन्द्रह खण्ड मात्र समचतुष्कोण क्षेत्र होता है  । इसको ग्रहणकर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके शिरपर स्थापित करनेपर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है  । आयामके छप्पन खण्डोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुल होते हैं । उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुलोंमें भी एक सकल प्रक्षेप होता है, क्योंकि, एक सकल प्रक्षेपको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर एक पिशुल पाया जाता है । इसलिये इसमें पन्द्रह खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं। इन सकल प्रक्षेपोंको इकतालीस खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपोंमें मिलानेपर छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं। वे सब मिलकर एक जघन्य स्थान होता है, क्योंकि छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपों द्वारा उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं ।

जहण्णट्ठाणं होदि त्ति कधं णव्वदे? उक्कस्ससंखेज्जेण जहण्णट्ठाणे खंडिदे तत्थ एगखंडस्स सगलपक्खेवो त्ति अब्भुवगमादो। एदम्मि जहण्णट्ठाणे मूलिल्लजहण्णट्ठाणम्मि पक्खित्ते दुगुणवड्ढी होदि। पुणो पुव्विल्लअवणियट्ठविदखेत्तं एगखंडद्धविक्खंभं एगखंडायामं विक्खंभेण छप्पण्णखंडाणि कादूण एगखंडस्सुवरि सेसखंडेसु ट्ठविदेसु एगखंडं बारहोत्तरसदेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति। पुणे सगलपक्खेवा सेसपिसुलापिसुलाणि च अधिया होंति। एसा वि परूवणा थूला चेव।

अधवा, पुव्विल्लखेत्तस्स अण्णेण पयारेण खंडणविहाणं वुच्चदे। तं जहा-इगिदालमेत्तखंडाणि उवरि चडिदूण ट्ठिदट्ठाणम्मि सव्वपिसुलाणि इगिदालीसखंडाणं संकलणमेत्ताणि हवंति। पुणो एदाणं एगादिएगुत्तरसंकलणसरूवेण ट्ठिदाणं तिकोणखेत्तागाराणं समकरणे कदे एगखंडद्धजुदवीसखंडविक्खंभ-इगिदालखंडायामं खेत्तं होदि। पुणो एत्थ पण्णारसखंडविक्खंभेण इगिदालखंडायामेण तच्छिय पुध ट्ठविदे सेसखेत्तमिगिदालखंडायामं अद्धछट्ठखंडविक्खंभं होदूण चिट्ठदि। पुणो एत्थ एगखंडद्धविक्खंभ-इगिदालायामखेत्तमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो सेसखेत्तम्हि पंचखंडविक्खंभम्मि इगिदालखंडायामम्मि पंचखंडविक्खंभ-एक्कारसखंडायामखेत्तं छिदिय पुध ट्ठविय पुणो पंचखंडविक्खंभं तीसखंडायामं सेसखेत्तं मज्झे सरिसदोखंडाणि कादूण विदियखंडं परावत्तिय

शंका—उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेपोंसे जघन्य स्थान होता है, यह कैसे जाना जाता है?

समाधान—उसका कारण यह है कि जघन्य स्थानमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर उसमेंसे जो एक भाग प्राप्त होता है उसको सकल प्रक्षेप स्वीकार किया गया है।

इस जघन्य स्थानको मूलके जघन्य स्थानमें मिलानेपर दुगुणी वृद्धि होती है। फिर एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और एक खण्ड आयाम रूप पूर्वमें अपनीत करके स्थापित क्षेत्रके विष्कम्भकी ओरसे छप्पन खण्ड करके एक खण्डके ऊपर शेष खण्डोंके स्थापित करनेपर एक खण्डको एकसौ बारहसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं। ये सकल प्रक्षेप और शेष पिशुलापिशुल अधिक होते हैं। यह प्ररूपणा भी स्थूल ही है।

अथवा, पूर्वोक्त क्षेत्रके खण्डनकी विधिका अन्य प्रकारसे कथन करते हैं। यथा—इकतालीस मात्र खण्ड आगे जाकर स्थित स्थानमें सब पिशुल इकतालीस खण्डोंके संकलन प्रमाण होते हैं। फिर एकसे लेकर एक एक अधिक रूप संकलन स्वरूपसे स्थित त्रिकोणाकार इस क्षेत्रका समीकरण करनेपर एक खण्डके अर्ध भाग सहित बीस खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। फिर इनमेंसे पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयामसे छीलकर पृथक् स्थापित करनेपर शेष क्षेत्र इकतालीस खण्ड आयाम और साढे पाँच खण्ड विष्कम्भसे युक्त होकर स्थित रहता है। फिर इसमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग मात्र विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको अलग करके पृथक् स्थापित करना चाहिये। फिर पाँच खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त शेष क्षेत्रमेंसे पाँच खण्ड विष्कम्भ और ग्यारह खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको काटकर पृथक् स्थापित करके पश्चात् पाँच खण्ड विष्कम्भ और तीस खण्ड आयाम युक्त शेष क्षेत्रके मध्यमेंसे समान दो खण्ड करके द्वितीय खण्डको परिवर्तित

पढमखंडस्सुवरि ठविदे दसखंडविक्खंभपण्णारसखंडायामखेत्तं होदूण अच्छदि। संपहि पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदपंचखंडविक्खंभ-एक्कारखंडायामखेत्तं घेत्तूण एदस्सुवरि ट्ठविदे दक्खिण-पच्छिमदिसासु पण्णारसखंडमेत्तं पुव्वुत्तरदिसासु दस-एक्कारसखंडपमाणं होदूण चिट्ठदि। पुणो पुव्वमवणेदूण पुध ट्ठविदखेत्तम्हि एगखंडद्धविक्खंभम्मि इगिदालखंडायामम्मि एगखंडद्धविक्खंभ-सगलेगखंडायामं खेत्तं घेत्तूण पुध ट्ठविय सेसदखेत्तायामट्ठखंडाणि कादूण परावत्तिय एगखंडस्सुवरि सेसखंडेसु ट्ठविदेसु चत्तारिखंडविक्खंभं पंचखंडायामं ⊖खेत्तं होदि। तम्मि पुव्विल्लखेत्ते समयाविरोहेण ट्ठविदे समचउरसं पण्णारसखंडविक्खंभायामं खेत्तं होदि। एदं घेत्तूण पण्णारसखंडविक्खंभ-इगिदालखंडायामखेत्तस्सुवरि ट्ठविदे पण्णारसखंडविक्खंभ-छप्पण्णखंडायामखेत्तं होदि। एत्थ एगपंतिसगलपक्खेवो होदि, उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलाणं तत्थुवलंभादो। तेणेत्थ पण्णारसखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति त्ति इगिदालखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु पक्खित्तेसु छप्पण्णखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति। एदे सव्वे मिलिदूण जहण्णट्ठाणं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवाणमेत्थुवलंभादो। एदम्हि जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते दुगुणवड्ढी होदि। पुणो एगखंडद्धविक्खंभ-सगलेगखंडायामं पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदखेत्तं विक्खंभेण छप्पण्ण-

मंगलोत्सव आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कर प्रथम खण्डके ऊपर स्थापित करनेपर दस खण्ड विष्कम्भ और पन्द्रह खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होकर स्थित रहता है। अब पूर्वमें अपनीत करके पृथक् स्थापित पाँच खण्ड विष्कम्भ और ग्यारह खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको ग्रहणकर इसके ऊपर स्थापित करनेपर दक्षिणपश्चिम दिशाओंमें पन्द्रह खण्ड मात्र और पूर्व-उत्तर दिशाओंमें दस-ग्यारह खण्ड प्रमाण होकर स्थित होता है। फिर एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त पूर्वमें अपनयन करके पृथक् स्थापित क्षेत्रमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और सम्पूर्ण एक खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको ग्रहणकर पृथक् स्थापित करके शेष क्षेत्रके आयामकी ओरसे आठ खण्ड करके परिवर्तितकर एक खण्डके ऊपर शेष खण्डोंके स्थापित करनेपर चार खण्ड विष्कम्भ और पाँच खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। उसको यथाविधि पहिलेके क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और उतने ही आयामसे युक्त क्षेत्र होता है। इसको ग्रहणकर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। यहाँ एक पंक्ति रूप सकल प्रक्षेप होता है, क्योंकि, वहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुल पाये जाते हैं। इसीलिये चूंकि यहाँ पन्द्रह खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं, अतएव इकतालीस खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपोंके मिलानेपर छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं। ये सब मिलकर जघन्य स्थान होता है, क्योंकि, यहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं। इसको जघन्य स्थानमें मिलानेपर दुगुणी वृद्धि होती है। फिर एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और एक सम्पूर्ण खण्ड आयाम रूप पहिले अपनीत करके पृथक्

⊖ अ-ताप्रत्योः '-खंडायामखेत्तं' आप्रतौ 'खंडायामपखेत्तं' इति पाठः।

खंडाणि कादूण एगखंडस्स सीसे सेसखंडेसु संधिदेसु छप्पण्णखंडायामं एगखंडस्स बारहोत्तरसदभागविक्खंभखेत्तं होदि। एत्थ विक्खंभमेत्ता चेव सगलपक्खेवा उप्पज्जंति। पुणो सेसपिसुलापिसुलाणि वि सगलपक्खेवे कादूण पुव्विल्लेहि सह दुगुणवड्ढिम्हि पक्खित्ते जहण्णट्ठाणादो सादिरेयदुगुणमेत्तं होदि।

संपहि जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण तिण्णिवड्ढिट्ठाणं दुगुणवड्ढिट्ठाणस्स उवरि इगिदालदुभागमेत्तखंडाणि तिहि खंडेहि अहियाणि गंतूण होदि। तं जहा- इगिदालदुभागस्सुवरि तिसु खंडेसु पक्खित्तेसु साद्धतेवीसखंडाणि होंति। | २३½ |

दुगुणवड्ढीए उवरि एत्तियमेत्तमद्धाणं गंतूण ट्ठिदट्ठाणम्मि सगलपक्खेवा चडिदद्धाणमेत्ता होंति। | २३ १ २ |

एदे पक्खेवा दुगुणवड्ढिअद्धाणपक्खेवेहिंतो दुगुणा, उक्कस्ससंखेज्जेण दोसु जहण्णट्ठाणेसु अक्कमेण खंडिज्जमाणेसु दोसगलपक्खेवुप्पत्तीदो। तेण एदेसु पक्खेवेसु दुगुणिदेसु एत्थ पुव्विल्लपक्खेवा सत्तेतालीसखंडमेत्ता होंति। एदेहि पक्खेवेहि जहण्णट्ठाणं ण उप्पज्जदि, अण्णेसिं णवण्णं खंडाणमभावादो।

संपहि तेसिमुप्पत्तिविहाणं उच्चदे। तं जहा–साद्धतेवीसखंडगच्छस्स एगादिएगुत्तरसंकलणतिकोणखेत्तं ठविय समकरणे कदे एगखंडतिण्णिचदुब्भागेण समहियएक्कारसखंडविक्खंभं | ११ ३ ४ | साद्धतेवीसखंडायामं खेत्तं | २३ १ २ | होदूण चेट्ठदि।

उसका भाग

करके पृथक् स्थापित क्षेत्रके विष्कम्भकी ओरसे छप्पन खण्ड करके एक खण्डके शिरपर शेष खण्डोंके स्थापित करनेपर छप्पन खण्ड आयाम और एक खण्डके एक सौ बारहवें भाग विष्कम्भ युक्त क्षेत्र होता है। यहाँ विष्कम्भके बराबर ही सकल प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं। फिर शेष पिशुलापिशुलोंको भी सकल प्रक्षेप करके पूर्व पिशुलापिशुलोंके साथ दुगुणी वृद्धिमें मिलानेपर जघन्य स्थानकी अपेक्षा साधिक दुगुण मात्र होता है।

अब जघन्य स्थानकी अपेक्षा तिगुणी वृद्धिका स्थान दुगुणवृद्धिस्थानसे आगे इकतालीसके द्वितीय भाग मात्र खण्ड तीन खण्डोंसे अधिक जाकर होता है। वह इस प्रकारसे–इकतालीस खण्डोंके द्वितीय भागके ऊपर तीन खण्डोंके मिलानेपर साढे तेईस खण्ड होते हैं | २३½ |। दुगुणवृद्धिके आगे इतने मात्र स्थान जाकर स्थित स्थानमें सकल प्रक्षेप गत स्थानोंके बराबर होते हैं २३½। ये प्रक्षेप दुगुणवृद्धिके स्थानों सम्बन्धी प्रक्षेपोंसे दुगुणे होते हैं, क्योंकि, दो जघन्य स्थानोंमें एक साथ उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर दो सकल प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं। इसलिये इन प्रक्षेपोंकी दूने करनेपर यहाँ पहलेके प्रक्षेप सैंतालीस खण्ड प्रमाण होते हैं। इन प्रक्षेपोंसे जघन्य स्थान नहीं उत्पन्न होता है, क्योंकि, दूसरे नौ खण्डोंका यहाँ अभाव है।

अब उनकी उत्पत्तिके विधानको कहते हैं। वह इस प्रकार है–साढे तेईस खण्ड गच्छके एकसे लेकर उत्तरोत्तर एक एक अधिक संकलन प्रमाण त्रिकोण क्षेत्रको स्थापित करके समीकरण करनेपर एक खण्डके तीन चतुर्थ भागसे अधिक ग्यारह खण्ड विष्कम्भ (११¾) और साढे तेईस खण्ड (२३½) आयाम युक्त क्षेत्र होकर स्थित रहता है।

णवरि एदं खेत्तं दोपिसुलबाहल्लमिदि कट्टु अब्भपटलं व मज्झे दोफालीओ कादूण एगफालीए उवरि विदियफालीए दुविदाए तिण्णिचदुब्भागाहियएक्कारसखंडविक्खंभं सत्तेतालीसखंडायामक्खेत्तं होदि। एत्थ तिण्णिचदुब्भागाहियदोखंडविक्खंभेण सत्तेत्तालखंडायामेण तच्छेदूण अवणिय पुध दुविदे सेसखेत्तपमाणं णवखंडविक्खंभं सत्तेतालखंडायामं होदि। पुणो पुव्वमवणेदूण पुध दुविदखेत्तम्हि[1] तिण्णिचदुब्भागविक्खंभेण सत्तेतालीसखंडायामेण तच्छेदूण पुध दुविय सेसखेत्तं दोखंडविक्खंभं सत्तेतालीसखंडायामं मज्झे दोफालीयो कादूण एगफालीए उवरि विदियफालीए संधिदाए एगखंडविक्खंभं चदुणवदिखंडायामं खेत्तं होदि। एत्थ एगासीदिमेत्तखंडवग्गं घेत्तूण पदरागारेण ठइदे समचउरंसं णवखंडायाम-विक्खंभखेत्तं होदि। एदं घेत्तूण पुव्वुत्तणवविक्खंभसगदालीसखंडायामखेत्तस्स पासे दुविदे णवविक्खंभ-छप्पण्णायामखेत्तं होदि। एत्थ णवखंडमेत्तसगलपक्खेवा लब्भंति; एगोलीए उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलुवलंभादो। एदे सगलपक्खेवे घेत्तूण सत्तेतालीसखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु पक्खित्ते छप्पण्णखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति। एदेहि सगलपक्खेवेहि एगं जहण्णट्ठाणं होदि, एदेसु छप्पण्णखंडेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवुलंभादो।एदम्मि उप्पण्णजहण्णट्ठाणे दुगुणवड्ढिट्ठाणम्हि*

दुगुणी वृद्धि के आगे पिशुल

विशेष इतना है कि यह क्षेत्र चूंकि दो पिशुल बाहल्य रूप है, इसलिये अभ्रपटलके समान बीचमेंसे दो फालियां करके एक फालिके ऊपर दूसरी फालिको स्थापित करनेपर तीन चतुर्थ भागोंसे अधिक ग्यारह खण्ड विष्कम्भ और पैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। इसमेंसे तीन चतुर्थ भागसे अधिक दो खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयामसे काटकर पृथक् स्थापित करनेपर शेष क्षेत्रका प्रमाण नौ खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयामरूप होता है। फिर पहिले अपनयन करके पृथक् स्थापित क्षेत्रमेंसे तीन चतुर्थ भाग विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयामसे क्षेत्रको काटकर पृथक् स्थापित करके दो खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त शेष क्षेत्रके बीचमेंसे दो फालियां करके एक फालिके ऊपर दूसरी फालिको जोड देनेपर एक खण्ड विष्कम्भ और चौरानवें खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। इसमेंसे इक्यासी मात्र खण्डोंके वर्गको ग्रहणकर प्रतराकारसे स्थापित करनेपर नौ खण्ड विष्कम्भ और नौ खण्ड आयाम युक्त समचतुष्कोण क्षेत्र होता है। इसको ग्रहणकर पूर्वोक्त नौ खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके पार्श्व भागमें स्थापित करनेपर नौ खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। यहाँ नौ खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं, क्योंकि, एक पंक्तिमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुलोंकी उपलब्धि है। इन सकल प्रक्षेपोंको ग्रहण करके सैंतालीस खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपोंमें मिलानेपर छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं। इन सकल प्रक्षेपोंसे एक जघन्य स्थान होता है, क्योंकि, इन छप्पन खण्डोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं। उत्पन्न हुए इस जघन्य

[1] अप्रतौ 'दुविदे खेत्तम्हि' इति पाठः।
* अप्रतौ 'वड्ढिट्ठाणेहि', ताप्रतौ 'वड्ढिट्ठाणे (हि)' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पक्खित्ते तिगुणवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि । संपहि एगासीदिखंडेसु गहिदेसु सेसखेत्तमेगखंड विक्खंभं तेरसखंडायामं एगखंडतिण्णिचदुब्भागविक्खंभसत्तेतालीसखंडायामखेत्तं च अधियं होदि । एदाणि दो वि खेत्ताणि एक्कदो करिय तिगुणट्ठाणम्मि पक्खित्ते सादिरेयतिगुणवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । तेणेसा परूवणा थूलत्था ।

जदि थूलत्था, किमट्ठं उच्चदे? अव्वुप्पण्णजणवुप्पायणट्ठं । अधवा, इगिवालदुभागस्सुवरि सादिरेयदोखंडेसु पक्खित्तेसु तिगुणवड्ढिअद्धाणं होदि, तत्थतणपिसुलापिसुलेसु वुरूवूणगच्छतिभागगुणिदरूवूणगच्छसंकलणमेत्तेसु पक्खित्तेसु तिगुणट्ठाणुप्पत्तीदो ।

संपहि तिगुणवड्ढीए उवरि इगिवालखंडतिभागं किंचूणतिखंडाहियं गंतूण चदुगुणवड्ढी उप्पज्जदि । केत्तिएणूणाणं तिण्णं खंडाणं पक्खेवो कीरदे ? एगखंडतिभागेण ऊणाणं पक्खेवो कीरदे । चडिदद्धाणखंडपमाणमेदं $\boxed{\frac{१\frac{६}{७}}{३}}$

पुणो एत्तियमेत्तखंडायाम-विक्खंभेण तिण्णिपिसुलबाहल्लेण तिकोणं होदूण पिसुलखेत्तमागच्छदि । एत्थ पक्खेवा पुण तिगुणचडिदद्धाणमेत्ता लब्भंति । किमट्ठं पक्खेवाणं तिगुणत्तं कीरदे? ण एस दोसो, तिसु जहण्णट्ठाणेसु उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिज्जमाणेसु तिण्ण

स्थानमें दुगुणवृद्धिस्थानको मिलानेपर त्रिगुणवृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है । अब इक्यासी खण्डोंके ग्रहण करनेपर शेष क्षेत्र एक खण्ड विष्कम्भ और तेरह खण्ड आयाम युक्त तथा एक खण्डके तीन चतुर्थ भाग विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र अधिक होता है । इन दोनों ही क्षेत्रोंको इकट्ठा करके त्रिगुणवृद्धिस्थानमें मिलानेपर साधिक त्रिगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । इस कारण यह स्थूलार्थ प्ररूपणा है ।

शंका- यदि यह प्ररूपणा स्थूलार्थ है तो उसका कथन किसलिये किया जा रहा है ?

समाधान- उसका कथन अव्युत्पन्न जनोंको व्युत्पन्न करानेके लिये किया जा रहा है ।

अथवा, इकतालीस खण्डके द्वितीय भागके ऊपर साधिक दो खण्डोंके मिलानेपर त्रिगुणवृद्धिका अध्वान होता है, क्योंकि, दो कम गच्छके तृतीय भागसे गुणित एक कम गच्छके संकलन प्रमाण वहाँके पिशुलापिशुलोंको मिलानेपर तिगुणी वृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है ।

अब त्रिगुण वृद्धिके ऊपर कुछ कम तीन खण्डोंसे अधिक इकतालीस खण्डके तृतीय भाग प्रमाण जाकर चौगुणी वृद्धि उत्पन्न होती है ।

शंका- कितने मात्रसे हीन तीन खण्डोंका प्रक्षेप किया जाता है ?

समाधान- एक खण्डके तृतीय भागसे हीन तीन खण्डोंका प्रक्षेप किया जाता है । गत अध्वानखण्डोंका प्रमाण यह है- $१६\frac{१}{३}$ । फिर इतने मात्र खण्ड आयाम व विष्कम्भ तथा तीन पिशुल बाहल्यसे त्रिकोण होकर पिशुलक्षेत्र आता है । परन्तु यहाँ प्रक्षेप गत अध्वानसे तिगुणे मात्र पाये जाते हैं ।

शंका- प्रक्षेपोंको तिगुणा किसलिये किया जाता है ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, तीन जघन्य स्थानोंको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर एक साथ तीन प्रक्षेपोंकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

पक्खेवाणमवक्कमेणुप्पत्तिवंसणादो। तेसिं पमाणमेदं। ४९।। संपहि एत्थ सत्तखंडमेत्तपक्खेवा जदि होंति तो अण्णं जहण्णट्ठाणं उप्पज्जदि। सत्तखंडमेत्तपक्खेवाणमेत्थतणपिसुलेहिंतो उप्पत्तिविहाणं वुच्चदे। तं जहा-- $\begin{vmatrix}१६\\१\\३\end{vmatrix}$ ✡

एवस्स गच्छस्स संकलणाए समकरणे कदे सच्छभागअट्ठखंडविक्खंभ $\begin{vmatrix}८\\१\\६\end{vmatrix}$

सतिभागसोलसखंडायामं $\begin{vmatrix}१६\\१\\३\end{vmatrix}$

खेत्तं होदि। संपहि तिण्णिपिसुलमेत्तो एदस्स खेत्तस्स ✤पहवो होदि त्ति बाहल्लेण तिण्णि फालीयो कादूण एगफालीए सेसदोफालीसु संधिदासु आयामो पुव्विल्लायामादो तिगुणो होदि। ४९।। विक्खंभो पुण पुव्विल्लो चेव। एवंविहखेत्तम्हि सत्तखंडविक्खंभेण एगूणवंचासखंडायामेण खेत्तं मोत्तूण सच्छभागएगखंडविक्खंभं एगूणवंचासखंडायामं✡ खेत्तं (पावेदूण पुध ट्ठविय पुणो एत्थ एगखंडछब्भागविक्खंभं एगूणवंचासखंडायामं◆ तच्छेदूण) पुध ट्ठवेदव्वं। पुणो एगखंडविक्खंभ-एगूणवंचासायामखेत्तं सत्तफालीयो कादूण पदरागारेण ट्ठइदे आयाम-विक्खंभेहि सत्तखंडपमाणसमचउरसखेत्तं होदि। पुणो एदम्मि सत्तविक्खंभएगूणवंचासायामखेत्तस्सुवरि ठविदे सत्तखंडविक्खंभ-छप्पण्णा-

$16\frac{1}{3}\times16\frac{1}{3}$ / 2 $= 8\frac{2}{6}\times16\frac{1}{3}$

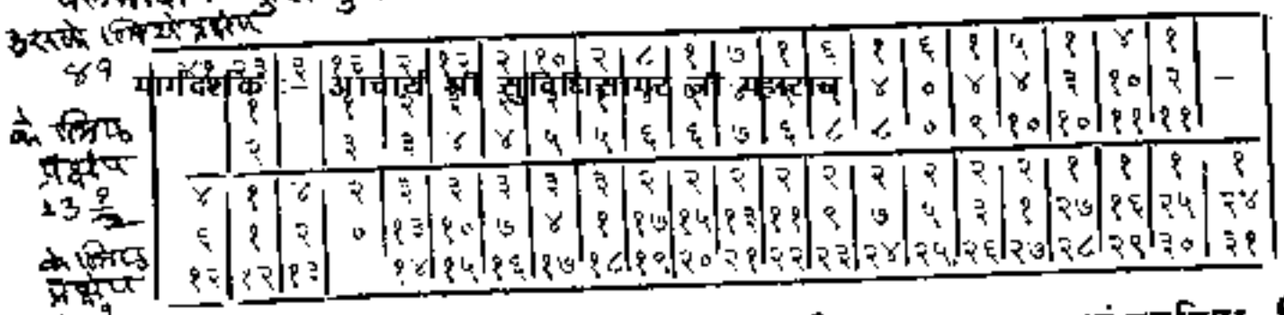
उनका प्रमाण यह है- ४९। अब यहाँ यदि सात खण्ड मात्र प्रक्षेप होते हैं तो अन्य जघन्य स्थान उत्पन्न होता है। यहाँ के पिशुलोंसे सात खण्ड मात्र प्रक्षेपोंकी उत्पत्तिके विधानको कहते हैं। वह इस प्रकार है- १६ $\frac{1}{3}$ इस गच्छके संकलनका समीकरण करनेपर छठे भाग सहित आठ (८ $\frac{1}{6}$) खण्ड विष्कम्भ और एक तृतीय भाग सहित सोलह (१६ $\frac{1}{3}$) खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। अब चूंकि इस क्षेत्रका प्रमाण तीन पिशुल प्रमाण होता है, अतएव इसकी बाहल्यकी ओरसे तीन फालियाँ करके एक फालिके ऊपर शेष दो फालियोंको रखनेपर पूर्व आयामसे तिगुणा आयाम होता है। १६ $\frac{1}{3}\times3 = ४९$। परन्तु विष्कम्भ पहिलेका ही रहता है। इस प्रकार स्थित क्षेत्रमें सात खण्ड विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको छोडकर छठे भाग सहित एक खड विष्कम्भ और उनचास खड आयाम युक्त क्षेत्रको (फाडकर पृथक् स्थापित करके फिर यहाँ एक खण्डके छह भाग विष्कम्भ एवं उनंचास खंड आयाम युक्त क्षेत्रको काटकर) पृथक् स्थापित करना चाहिये। फिर एक खण्ड विष्कम्भ और उनचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रकी सात फालियाँ करके प्राकारसे स्थापित करनेपर आयाम व विष्कम्भसे सात खण्ड प्रमाण समचतुष्कोण क्षेत्र होता है। फिर इसको सात खण्ड विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके

✡ ताप्रतौ $\begin{vmatrix}१६\\१\\३\end{vmatrix}$ इति पाठः। ✤ प्रतिषु 'पोहवो होदि' इति पाठः।

✡ ताप्रतौ 'खंडायामेण' इति पाठः। ◆ अ-आप्रत्योरनुपलभ्यमानीदं पाठस्ताप्रतितोऽत्र योजितः

यामपक्खेत्तं होदि । एत्थ सत्तखंडमेत्तपक्खेवा लब्भंति, छप्पण्णखंडमेत्तपिसुलेहि एगपक्खेवुप्पत्तीदो । पुणो एदे सत्तखंडमेत्तपक्खेवे घेत्तूण एगूणवंचासखंडमेत्तपक्खेवेसु पक्खित्तेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवा होंति, छप्पण्णखंडमेत्तपक्खेवेहि उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपक्खेवुप्पत्तीदो । एदेहि सव्वेहि पक्खेवेहि एगं जहण्णट्ठाणं होदि । तम्मि ठ्ठिदीसु जहण्णट्ठाणेसु पक्खित्तेसु चदुगुणवड्ढी होदि ।

पुणो पुव्वमवणिवछब्भागविक्खंभएगूणवंचासखंडायामपक्खेत्ते समकरणं करिय पक्खित्ते सादिरेयचदुगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । सेसपिसुलासुलाणं पि जाणिय पक्खेवो कायव्वो । संपहि दुगिदालदुभाग-तिभागादिसु पक्खेवखंडाणि णावट्ठिदसरूवेण गच्छंति, तहाणुवलंभादो । कुदो पुण पक्खेवपमाणमवगम्मदे ? ईहादो । तत्थ संदिट्ठी-- एसा



संदिट्ठी पिसुलाणि चेव अस्सिदूणुप्पण्णदुगुणवड्ढीणमद्धाणपरूवणट्ठं ट्ठविदा, पिसुलापिसुलेहि विणा दुगुणत्तुवलंभादो ।

ऊपर रखनेपर सात खंड विष्कम्भ और छप्पन खंड आयाम युक्त क्षेत्र होता है । इसमें सात खंड मात्र प्रक्षेप पाये जाते हैं, क्योंकि, छप्पन खंड मात्र पिशुलोंसे एक प्रक्षेप उत्पन्न होता है । फिर इन सात खंड प्रमाण प्रक्षेपोंको ग्रहणकर उनंचास खंड मात्र प्रक्षेपोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं, क्योंकि, छप्पन खंड मात्र प्रक्षेपोंसे उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं । इन सब प्रक्षेपोंसे एक जघन्य स्थान होता है । उसे तीन जघन्य स्थानोंमें मिलानेपर चतुर्गुणी वृद्धि होती है ।

फिर पहिले अलग किये गये छठे भाग (सहित एक खण्ड) विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको समीकरण करके मिलानेपर साधिक चौगुणी वृद्धिका स्थान होता है शेष पिशुलापिशुलोंका भी जानकर प्रक्षेप करना चाहिये । अब इकतालीस द्वितीय भाग और तृतीय भागादिकोंमें प्रक्षेपखण्ड अवस्थित स्वरूपसे नहीं जाते हैं, क्योंकि, वैसे पाये नहीं जाते हैं ।

शंका--फिर प्रक्षेपोंका प्रमाण कैसे जाना जाता है ?

समाधान--वह ईहासे जाना जाता है ।

यहां संदृष्टि (मूलमें देखिये) । यह संदृष्टि पिशुलोंका ही आश्रय करके उत्पन्न दुगुणवृद्धियोंके अध्वानकी प्ररूपणा करनेके लिये स्थापित की गई है, क्योंकि, पिशुलापिशुलोंके बिना दुगुणापन पाया जाता है ।

ॐ ताप्रतौ ' दि (त्ति) मू ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संपहि एत्थ एगकंडयमेत्तसंखेज्जभागवड्ढीसु पण्णाए पुध कादूण एगपंतियागारेण ठविदासु सव्वगुणहाणीणमद्धाणं सरिसं चेव, गुणहाणिअद्धाणाणं विसरिसत्तस्स कारणाणुवलंभादो। ण ताव गुणहाणिं पडि पक्खेवपिसुलादीणं दुगुणत्तं गुणहाणीणं विसरिसत्तस्स कारणं, गुणहाणिं पडि दुगुण-दुगुणपक्खेवकसाउदयट्ठाणगुणहाणीणं पि विसरिसत्तब्भुवगमादो। ण च पक्खेवाणं गुणहाणिं पडि दुगुणत्तेण विणा गुणहाणीणमवट्ठिदत्तं संभवइ, अण्णासिं तव्वड्ढि-हाणीणं तेण विरोहुवलंभादो। ण च एत्थ पक्खेवादीणं दुगुणत्तमसिद्धं, अवट्ठिदभागहारेण दुगुण-दुगुणविहज्जमाणरासीसु ओवट्टिज्जमाणासु विहज्जमाणरासिपडिभागबाहल्लस्सुवलंभादो। छप्पण्णोवट्टिदउक्कस्स संखेज्जस्स इगिदालंसाणं दुभाग-तिभागादिसु संकलिदेसु गुणहाणिअद्धाणस्स णावट्ठिदत्तमुवलंभदि त्ति णासंकणिज्जं, तेसु वि संकलिदेसु पढमगुणहाणिपमाणेणेव उप्पज्जेयव्वं, पढमगुणहाणिपक्खेवादीहिंतो दुगुणेसु विदियगुणहाणिपक्खेवादिसु संतेसु विदियगुणहाणीए अद्धाणस्स ✡विसरिसत्तविरोहादो। पच्चक्खेण गुणहाणीण

---

(५६) अब यहाँ एक काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियोंको बुद्धिसे पृथक् करके एक पंक्तिके आकारसे स्थापित करनेपर सब गुणहानियोंका अध्वान समान ही रहता है, क्योंकि, गुणहानियोंके अध्वानोंके असमान होनेका कोई कारण नहीं पाया जाता। यदि कहा जाय कि प्रत्येक गुणहानिमें प्रक्षेप पिशुलादिकोंकी दुगुणता गुणहानियोंकी असमानताका कारण है, सो यह भी ठीक नहीं है; क्योंकि, प्रत्येक गुणहानिमें दूने दूने प्रक्षेप, कषायोदयस्थान और गुणहानियोंकी भी असमानता स्वीकार की गई है। प्रत्येक गुणहानिमें प्रक्षेपोंके दूने होनेका बिना गुणहानियोंका अवस्थित रहना सम्भव भी नहीं है, क्योंकि, उससे अन्य उक्त वृद्धि-हानियोंका विरोध पाया जाता है। दूसरे, यहाँ प्रक्षेप आदिकोंका दूना होना असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि, अवस्थित भागहारके द्वारा दूनी दूनी विभज्यमान राशियोंको अपवर्तित करनेपर विभज्यमान राशि मात्र प्रतिभाग बाहुल्य पाया जाता है।

शंका- छप्पनसे अपवर्तित उत्कृष्ट संख्यातके इकतालीस अंशोंके द्वितीय व तृतीय भागादिकोंके संकलनोंमें गुणहानिअध्वान अवस्थित नहीं पाया जाता है ?

समाधान- ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, उन संकलनोंको भी प्रथम गुणहानिके प्रमाणसे ही उत्पन्न होना चाहिये, क्योंकि, प्रथम गुणहानि सम्बन्धी प्रक्षेपादिकोंसे द्वितीय गुणहानि सम्बन्धी प्रक्षेपादिकोंके दूने होनेपर द्वितीय गुणहानि सम्बन्धी अध्वानके विसदृश होनेका विरोध है।

शंका- गुणहानियोंकी सदृशता तो प्रत्यक्षसे बाधित है ?

समाधान- यह शंका ठीक नहीं है, क्योंकि, खण्डोंके प्रक्षेपोंका विधान चूंकि अन्यथा

✡ ताप्रतौ ' वि सरिसत्त ' इति पाठः।

सरिसत्तं बाहिज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, खंडाणं पक्खेवविहाणण्णहाणुववत्तीए तत्थु-प्पाइदगुणहाणिअद्धाणस्स पुधत्ताभावसिद्धीदो । ण च गुणहाणिअद्धाणस्स संखेज्जदि-भागहीणत्तं संखेज्जगुणहीणत्तं वा वोत्तुं जुत्तं, गुणहाणिअद्धाणस्स णिस्सेसविलयत्त-प्पसंगादो । ण च एवं, अप्पिददुगुणवड्ढीदो अवराए दुगुणवड्ढीए एगपक्खेवाहिय-मेत्तेण दुगुणत्तप्पसंगादो । तं पि ण घडदे, पमाणविसयमुल्लंघिय अवट्ठिदत्तादो । तम्हा सव्वासिं गुणहाणीणमद्धाणं सरिसं त्ति वट्टव्वं । एवं संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदूण तात्र गच्छदि जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्तगुणहाणीयो गदाओ त्ति पढमदुगुणवड्ढीदो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्तासु दुगुणवड्ढीसु गदासु पढमा असंखेज्जगुणवड्ढी उप्पज्जदि, जहण्णपरित्तासंखेज्जेण जहण्णट्ठाणे गुणिदे तदित्थट्ठाणुप्पत्तीदो । एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ असंखेज्जगुणवड्ढी चेव जाव अट्ठंकहेट्ठिमतदणंतरउव्वंके त्ति । पढमअट्ठंकप्पहुडि जाव पज्जवसाणउव्वंके त्ति ताव सव्वट्ठाणाणि जहण्णट्ठाणादो अणंतगुणाणि, अट्ठंकेसु पुध पुध सव्वजीवरा-सिगुणगारुवलंभादो ।

संपहि वड्ढीणं जहण्णट्ठाणमवलंबिय विसयपमाणपरूवणा कीरदे । तं जहा– अणं-तभागवड्ढीए विसओ एगकंडयमेत्तो, उवरि असंखेज्जभागवड्ढिदंसणादो । संपहि असंखेज्जभागवड्ढिविसयस्स पमाणपरूवणा कीरदे । तं जहा– कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्तो

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

बनता नहीं है अतएव वहां उत्पन्न कराये गये गुणहानिअध्वानकी अभिन्नता (सदृशता) सिद्ध है । गुणहानिअध्वान संख्यातवें भागसे हीन अथवा संख्यातगुणा हीन है, ऐसा कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे गुणहानिअध्वानके पूर्णतया नष्ट होनेका प्रसंग आता है। परन्तु (नष्ट होने ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर विवक्षित दुगुणवृद्धिकी अपेक्षा इतर दुगुणवृद्धिके एक प्रक्षे-पकी अधिकता मात्रसे दूने होनेका प्रसंग आता है ।

वह भी घटित नहीं होता है, क्योंकि, प्रमाणविषयताका उल्लंघन करके उसका अवस्थान है । इस कारण सब गुणहानियोंका अध्वान सदृश है, ऐसा समझना चाहिये ।

इस प्रकार संख्यातगुणवृद्धि ही होकर तब तक जाती है जब तक कि जघन्य परीतासंख्यात के एक अंकसे हीन अर्धच्छेदोंके बराबर गुणहानियां समाप्त नहीं होती है । प्रथम दुगुणवृद्धिसे जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर दुगुणवृद्धियोंके समाप्त होनेपर प्रथम असंख्यातगुण-वृद्धि उत्पन्न होती है, क्योंकि, जघन्य परीतासंख्यातसे जघन्य स्थानको गुणित करनेपर वहांका स्थान उत्पन्न होता है । इससे आगे अष्टांकके अधस्तन तदनन्तर ऊर्वक तक सर्वत्र असंख्यातगुण-वृद्धि ही है । प्रथम अष्टांकसे लेकर अन्तिम ऊर्वक तक सब स्थान जघन्य स्थानसे अनन्तगुणे हैं, क्योंकि, अष्टांकोंमें पृथक् पृथक् सब जीवराशि गुणकार पाया जाता है ।

अब जघन्य स्थानका आलम्बन करके वृद्धियोंके विषयके प्रमाणकी प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है- अनन्तभागवृद्धिका विषय एक काण्डक प्रमाण है, क्योंकि, आगे असंख्यातभाग-वृद्धि देखी जाती है । अब असंख्यातभागवृद्धि विषयक प्रमाणकी प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है- असंख्यातभागवृद्धिका विषय एक काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण है ।

असंखेज्जभागवड्ढीए विसओ। तं जहा- एक्किस्से असंखेज्जभागवड्ढीए जदि रूवाहियकंडयमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्ढीओ लब्भंति तो कंडयमेत्तासु असंखेज्जभागवड्ढीसु केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंडयसहिद-कंडयवग्गमेत्तो असंखेज्जभागवड्ढिविसओ होदि।

मार्गदर्शक :- संपहि संखेज्जभागवड्ढिविसयपमाणपरूवणं कीरदे। तं जहा- रूवाहिय♠-कंडएण एगकंडए गुणिदे दोण्णं संखेज्जभागवड्ढीणं अंतरं होदि। पुणो तत्थ पढम-संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणे पक्खित्ते रूवाहियमंतरं होदि। पुणो एक्कसंखेज्जभागवड्ढीए जदि एत्तियो संखेज्जभागवड्ढिविसओ लब्भदि तो उक्कस्ससंखेज्जं छप्पण्णखंडाणि कादूण तत्थ इगिचालखंडेसु जत्तियाणि रूवाणि तत्तियासु संखेज्जभागवड्ढीसु किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए संखेज्जभागवड्ढिविसओ होदि।

संपहि संखेज्जगुणवड्ढिविसयस्स पमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा- पुव्विल्लसंखेज्ज-भागवड्ढिविसयं ठविय तेरासियकमेण जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणएहि रूवूण-एहि सव्व॰॰गुणहाणिअद्धाणाणि सरिसाणि त्ति गुणिदे संखेज्जगुणवड्ढिविसयो होदि।

संपहि असंखेज्जगुणवड्ढिविसयप्पमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा- संखेज्जभागवड्ढि-विसओ अणंतरोवणिधाए अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो। एवस्स असंखेज्ज-

अधिक पृ १९८ यथा-एक असंख्यातभागवृद्धिमें यदि एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियां पायी जाती हैं तो काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंमें वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक काण्डकके साथ काण्डकके वर्ग मात्र असंख्यातभाग-वृद्धिका विषय होता है।

अब संख्यातभागवृद्धिके विषयप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं वह इस प्रकार है-एक अधिक काण्डकसे एक काण्डकको गुणित करनेपर दोनों संख्यातभागवृद्धियोंका अन्तर होता है। फिर उसमें प्रथमसंख्यातभागवृद्धिके स्थानको मिलानेपर एक अंकसे अधिक अन्तर होता है। अब एक संख्यातभागवृद्धिमें यदि संख्यातभागवृद्धिविषयक इतना अन्तर पाया जाता है तो उत्कृष्ट संख्यातके छप्पन खंड करके उनमेंसे इकतालीस खंडोंमें जितने अंक हैं उतनी मात्र संख्यातभाग-वृद्धियोंमें वह कितना पाया जावेगा, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर संख्यातभागवृद्धिका विषय होता है।

अब संख्यातगुणवृद्धिके विषयप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है-पूर्वोक्त संख्यातभागवृद्धिके विषयको स्थापित करके त्रैराशिक क्रमसे जघन्य परीतासंख्यातके एक अंकसे हीन अर्धच्छेदोंसे सब गुणहानिअध्वानोंको सदृश होनेके कारण गुणित करनेपर संख्यातगुण-वृद्धिका विषय होता है।

अब असंख्यातगुणवृद्धिके विषयप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है-संख्यात-भागवृद्धिका विषय अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र है। इसके असंख्या-

♠ ताप्रतौ 'दुरूवाहिय' इति पाठः। ॰॰ अप्रतौ 'रूवूणमव्व' इति पाठः।

विभागे चेव अणंतभागवड्डि-असंखेज्जभागवड्डि-संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्ढीओ समत्ताओ त्ति संखेज्जभागवड्डिअद्धाणस्स असंखेज्जा भागा, संखेज्जगुणवड्डि-असंखेज्जगुणवड्ढिअद्धाणाणि च संपुण्णाणि असंखेज्जगुणवड्ढिविसओ होदि ।

संपहि पढमअट्ठंकप्पहुडि जाव चरिम उव्वंके त्ति ताव अणंतगुणवड्ढीए विसओ । एत्थ तिण्णि अणुयोगद्दाराणि– परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेवि । परूवणाए अत्थि एगाणुभागदुगुणवड्ढिट्ठाणंतरं णाणादुगुणवड्ढिसलागाओ च । पमाणं– एगाणुभागदुगुणवड्ढिट्ठाणंतरमंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । णाणादुगुणवड्ढिट्ठाणंतरसलागाओ असंखेज्जा लोगा । अप्पाबहुगं– एगाणुभागदुगुणवड्ढिट्ठाणंतरं थोवं । णाणादुगुणवड्ढिट्ठाणंतरसलागाओ असंखेज्जगुणाओ ।

अवहारो– जहण्णट्ठाणफद्दयपमाणेण सव्वट्ठाणफद्दयाणि अणंतेण कालेण अवहिरिज्जंति। एवं सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जहण्णट्ठाणप्पहुडि उवरिमट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि अणंतेण कालेण अवहिरिज्जंति त्ति वत्तव्वं । णवरि चरिमअट्ठंकप्पहुडि जाव पज्जवसाणउव्वंके त्ति ताव एदेसिं ट्ठाणाणं पमाणेण सव्वट्ठाणेसु अवहिरिज्जमाणेसु असंखेज्जेण कालेण अवहिरिज्जंति, कंडयमेत्तअसंखेज्जलोगेसु कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्तउक्कस्ससंखेज्जेसु अंगुलस्स असंखेज्जविभागमेत्त असंखेज्जलोगअण्णोण्णब्भत्थरासीसु च परोप्परं गुणिदासु वि अणंतरासिसमुप्पत्तीए अभावादो । पज्जवसाणउव्वंकपमाणेण सव्व–

तवें भागमें ही अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, और संख्यातगुणवृद्धि वृद्धियाँ चूंकि समाप्त हो जाती हैं, अतएव संख्यातभागवृद्धिअध्वानका असंख्यातबहुभाग तथा संख्यातगुणवृद्धि एवं असंख्यातगुणवृद्धिका सम्पूर्ण अध्वान असंख्यातगुणवृद्धिका विषय होता है।

अब प्रथम अष्टांकसे लेकर चरिम ऊर्वक तक अनन्तगुणवृद्धिका विषय है। यहां तीन अनुयोगद्वार हैं– प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। प्ररूपणाकी अपेक्षा– एकानुभागदुगुणवृद्धि–स्थानान्तर और नानादुगुणवृद्धिशलाकायें हैं। प्रमाण– एकानुभागदुगुणवृद्धिस्थानान्तर अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। नानादुगुणवृद्धिस्थानान्तरशलाकायें असंख्यात लोक प्रमाण है। अल्पबहुत्व एकानुभागदुगुणवृद्धिस्थानान्तर स्तोक है। उससे नानादुगुणवृद्धिस्थानान्तरशलाकायें असंख्यातगुणी हैं।

अवहारकी प्ररूपणा करते हैं– जघन्य स्थानसम्बन्धी स्पर्द्धकके प्रमाणसे सब स्थानोंके स्पर्द्धक अनंतकालसे अपहृत होते हैं। इसी प्रकार सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानसे लेकर आगेके स्थानोंके प्रमाणसे सब स्थान अनंतकालसे अपहृत होते हैं, ऐसा कहना चाहिये। विशेष इतना है कि अन्तिम अष्टांकसे लेकर अन्तिम ऊर्वक तक इन स्थानोंके प्रमाणसे सब स्थानोंके अपहृत करनेपर वे असंख्यातकालसे अपहृत होते हैं, कारण कि कांडक प्रमाण असंख्यात लोकों, कांडक सहित कांडकके वर्ग प्रमाण उत्कृष्ट संख्याओं और अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र असंख्यात लोकोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशियोंको परस्पर गुणित करनेपर भी अनन्त राशिके उत्पन्न होनेकी सम्भावनाका अभाव है। अन्तिम ऊर्वकके प्रमाणसे सब स्थानोंको अपहृत करनेपर

ट्ठाणेसु अवहिरिज्जमाणेसु केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? एगवारमवहिरिज्जंति, चरिमुव्वंकम्मि सव्वट्ठाणाणमुवलंभादो । दुचरिमउव्वंकट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयएगरूवेण । तिचरिमउव्वंकट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयएगरूवेण । एवं णेयव्वं जाव दुगुणहीणट्ठाणउवरिमट्ठाणं[1] त्ति । पुणो दुगुणहीणट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? दोहि रूवेहि । तत्तो हेट्ठिमट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति? संखेज्जेहि रूवेहि । एवं णेयव्वं जाव पज्जवसाणउव्वंकट्ठाणं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तअणुभागट्ठाणस्स उवरिमट्ठाणं त्ति । तत्तो हेट्ठिमट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? जहण्णपरित्तासंखेज्जेण । एवं हेट्ठिमअणुभागट्ठाणाणं पमाणेण अवहिरिज्जमाणे असंखेज्जेण कालेण अवहिरिज्जंति त्ति णेयव्वं जाव पढमअणंतगुणहाणीए उवरिमट्ठाणे त्ति । सेसं चिंतिय वत्तव्वं गंथबहुत्तभएण जं ण लिहिदं [illegible] अवहारो समत्तो ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

भागाभागो जधा अवहारकालो तधा वत्तव्वो । अप्पाबहुगं– सव्वत्थोवाणि जहण्णट्ठाणे फद्दयाणि । अणुक्कस्सए ट्ठाणे फद्दयाणि अणंतगुणाणि । को गुणगारो ? अवि-

---

वे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? वे एक वार में अपहृत होते हैं, क्योंकि, अन्तिम ऊर्वकके सब स्थान पाये जाते हैं । द्विचरम ऊर्वकस्थानके प्रमाणसे सब स्थान प्रमाणसे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे साधिक एक अंकके द्वारा अपहृत होते हैं । त्रिचरम ऊर्वक-स्थानके प्रमाणसे वे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे साधिक एक अंकके द्वारा अपहृत होते हैं । इस प्रकार दुगुणहीनस्थानसे आगेके स्थान तक ले जाना चाहिए । पुनः दुगुणहीनस्थानके प्रमाणसे सब स्थान कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे दो अंकोंके द्वारा अपहृत होते हैं । उससे नीचेके स्थानके प्रमाणसे वे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे संख्यात अंकोके द्वारा अपहृत होते हैं । इस प्रकार अन्तिम ऊर्वकस्थानको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डितकर उसमेंसे एक खण्ड मात्र अनुभागस्थानके उपरिम स्थानतक ले जाना चाहिए । उससे नीचेके स्थानके प्रमाणसे सब स्थान कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे जघन्य परीतासंख्यातके द्वारा अपहृत होते हैं । इस प्रकार अधस्तन स्थानोंके प्रमाणसे अपहृत करनेपर वे असंख्यात काल द्वारा अपहृत होते हैं, ऐसा प्रथम अनन्त गुणहानिके उपरिम स्थान तक ले जाना चाहिये । शेष अर्थकी प्ररूपणा विचारकर करना चाहिए, जो कि यहां ग्रन्थबहुत्वके भयसे नहीं लिखा गया है । अवहार समाप्त हुआ ।

जैसा अवहारकाल कहा गया है वैसे ही भागाभागका कथन करना चाहिये । अल्पबहुत्वका कथन करते हैं– जघन्य स्थानमें स्पर्द्धक सबसे स्तोक हैं । अनुत्कृष्ट स्थानमें उनसे अनन्तगुण स्पर्द्धक हैं । गुणकार क्या है ? अविभागप्रतिच्छेदोंका आश्रय करके वह सब जीवोंसे अनन्त-

---

[1] ताप्रतौ ' जाव गुणहीणउवरिमट्ठाणं ' इति पाठः ।

भागपडिच्छेदे पडुच्च सव्वजीवेहि अणंतगुणो फद्दयगणणाए अभवसिद्धिएहि अणंत-गुणो सिद्धाणमणंतिमभागो । उक्कस्सए ट्ठाणे फद्दयाणि विसेसाहियाणि । एवं छट्ठाणपरूवणा॑ समत्ता ।

हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए अणंतभागवड्ढिठ्ठभहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढिठ्ठभहियं ट्ठाणं ॥ २१५ ॥

असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं णिरुंभिय हेट्ठिमट्ठाणाणं परूवणट्ठमिदं सुत्तमागयं । अणंतभागब्भहियट्ठाणाणं कंडयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । किं कंडय-पमाणं ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । तस्स को भागहारो? विसिट्ठुवदेसाभावादो ण णव्वदे॑ । फद्दयवग्गणप्पमाणं व सव्वकंडयाण पमाणं सरिसं । कुदो णव्वदे ? अविसंवादिगुरुवयणादो । चरिमसमयसुहुमसांपराइयजहण्णाणुभागबंधट्ठाणप्पहुडि दुचरिमादिअणुभागबंधट्ठाणाणमणंतगुणवड्ढिअणुभागबंधदंसणादो " जहण्णट्ठाणादो अणंतभागब्भहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि " त्ति जं भणिदं तण्ण घडदे? ण एस दोसो, जत्थ छव्विहवड्ढिक्कमेण छव्विहहाणिकमेण च अणुभागो ♠बज्झदि

गुणा है, तथा स्पर्द्धकगणनाकी अपेक्षा अभवसिद्धिकोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र है। उनसे उत्कृष्ट स्थानमें विशेष अधिक स्पर्द्धक हैं। इस प्रकार षट्स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अधस्तनस्थानप्ररूपणामें अनन्त भागवृद्धि अधिक काण्डक प्रमाण जाकर असंख्यातवृद्धि भागवृद्धि अधिकका स्थान होता है ॥ २१५ ॥

असंख्यातभागवृद्धिस्थानकी विवक्षाकर नीचेके स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये यह सूत्र आया है। अनन्त भागवृद्धि स्थानवृद्धिका काण्डक जाकर असंख्यातभागवृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है। काण्डकका प्रमाण कितना है ? उसका प्रमाण अंगुलका असंख्यातवां भाग है। उसका भागहार क्या है ? विशिष्ट उपदेशका अभाव होनेसे उसका परिज्ञान नहीं है। स्पर्द्धककी वर्गणाओंके प्रमाणके समान सब काण्डकोंका प्रमाण सदृश है। वह किस प्रमाणसे जाना जाता है? वह गुरुके विसंवाद रहित उपदेशसे जाना जाता है।

शंका– अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके जघन्य अनुभागबन्धस्थानसे लेकर द्विचरम आदि अनुभागबन्धस्थानोंका अनुभागबन्ध चूंकि अनन्तगुणवृद्धि युक्त देखा जाता है, अतएव ' जघन्य स्थानसे अनन्तवें भागवृद्धि काण्डक जाकर असंख्यातभागवृद्धिका स्थान होता है ' ऐसा जो कहा गया है वह घटित नहीं होता है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जहाँपर छह प्रकारकी वृद्धि अथवा छह प्रकारकी हानिके क्रमसे अनुभाग बंधता है उसका आश्रय करके उस प्रकारकी प्ररूपणा की गई

॑ अ-आप्रत्योः ' छट्ठाणपरूवणा ' इति पाठः। ॑ अ-आप्रत्योः विसुट्ठुवदेसाभावो णव्वदे ' इति पाठः। ♠ अप्रतौ ' वड्ढदि ' इति पाठः।

तमासेज्ज तधा परू विवत्तादो । ण च सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणम्हि छव्विहाए वड्ढीए बंधो अत्थि, विरोहादो । पुणो कस्सो प्पहुडि एसा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा कीरदे ? सुहुमेइंदियजहण्णट्ठाणप्पहुडि कीरदे । एवम्हादो हेट्ठिमट्ठाणेसु एगं ट्ठाणं णिरुंभिय परूवणा किण्ण कीरदे ? ण, हेट्ठा एदम्हादो ऊणसंतट्ठाणाभावादो । चरिमसमयखीणकसायस्स संतट्ठाणप्पहुडि परूवणा किण्ण कीरदे ? ण, तत्तो प्पहुडि ट्ठाणाणं छव्विहवड्ढीए अभावादो । जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेण अणंतभागब्भहियट्ठाणाणं कंडयं गंतूण संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जगुणवड्ढी असंखेज्जगुणवड्ढी अणंतगुणवड्ढी च उप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं* । संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणणिरुंभणं काऊण हेट्ठिमट्ठाणपरूवणट्ठं उवरिमसुत्तं भणदि--

असंखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं॥२१६॥

कंडयमेत्ताणि असंखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि जाव ण गदाणि ताव णिच्छएण संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं ण उप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि । असंखेज्जभागवड्ढीणं विच्चालेसु अणंत-

---

है । परन्तु सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें छह प्रकारकी वृद्धिसे बन्ध नहीं होता, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

शंका–तो फिर कौनसे जघन्य स्थानसे लेकर यह अधस्तनस्थानप्ररूपणा की जा रही है ?

समाधान--वह सूक्ष्म एकेन्द्रियके जघन्य स्थानसे लेकर की जा रही है ।

शंका--इससे नीचेके स्थानोंमेंसे एक स्थानकी विवक्षाकर वह प्ररूपणा क्यों नहीं की जाती है ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, नीचे इससे हीन सत्त्वस्थानका अभाव है ।

शंका--अन्तिम समयवर्ती क्षीणकषायके सत्त्वस्थानसे लेकर उक्त प्ररूपणा क्यों नही की जाती है ?

समाधान--नही, क्योंकि, उस स्थानसे लेकर जो स्थान है उनके छह प्रकारकी वृद्धि सम्भव नहीं है ।

यह सूत्र चूंकि देशामर्शक है अतएव अनन्तवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि उत्पन्न होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिये । अब संख्यातभागवृद्धिस्थानकी विवक्षा करके अधस्तन स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं-

असंख्यात भाग वृद्धि काण्डक जाकर संख्यात भाग वृद्धि स्थान होता है ॥२१६॥

असंख्यात भाग वृद्धि काण्डक प्रमाण स्थान जबतक नहीं बीतते है तबतक निश्चयसे संख्यातभागवृद्धिका स्थान नही उत्पन्न होता है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है ।

---

* १ अ-आप्रत्योः 'वत्तव्वं' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

भागवड्ढीयो वि कंडयमेत्ताओ अत्थि, ताओ किं ण परूविदाओ ? ण एस होदि दोसो, "अणंतभागब्भहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जभागब्भहियट्ठाणं होदि" त्ति पुव्विल्लसुत्तादो चेव तदवगमादो उवरिमसुत्तेण भण्णमाणत्तादो वा । संपहि संखेज्जगुणवड्ढिमाधारं कादूण हेट्ठिमट्ठाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

संखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं । २१७ ।

संखेज्जभागवड्ढीयो कंडयमेत्ताओ जाव ण गदाओ ताव संखेज्जगुणवड्ढी ण उप्पज्जदि, कंडयमेत्ताओ संखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण चेव उप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं । असंखेज्जगुणवड्ढिमाधारं कादूण हेट्ठिमसंखेज्जगुणवड्ढिपमाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

संखेज्जगुणब्भहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ।२१८ ।

असंखेज्जगुणवड्ढी उप्पज्जमाणा संखेज्जगुणवड्ढीणं कंडयं गंतूण चेव उप्पज्जदि, अण्णहा ण उप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं । अणंतगुणवड्ढिणिरुंभणं कादूण हेट्ठिमट्ठाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमागयं--

असंखेज्जगुणब्भहियं कंडयं गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ।२ १९।

शंका--असंख्यातभागवृद्धियोंके बीच बीचमें अनन्तभागवृद्धियाँ भी काण्डक प्रमाण होती हैं, उनकी सूत्रमें प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान--यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, "अनन्त भाग वृद्धि काण्डक प्रमाण जाकर असंख्यात भाग वृद्धि स्थान होता है" इस पूर्वोक्त सूत्रसे उसका ज्ञान हो जाता है । अथवा, उसका कथन आगे कहे जानेवाले सूत्रके द्वारा किया जायगा ।

अब संख्यातगुणवृद्धिको आधार करके नीचेके स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं --

संख्यात भाग वृद्धि काण्डक जाकर संख्यातगुणवृद्धिका स्थान होता है । २१७ ।

जबतक संख्यातभागवृद्धियाँ काण्डक प्रमाण नहीं बीतती हैं तबतक संख्यातगुणवृद्धि नहीं उत्पन्न होती है, किन्तु काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ जाकर ही वह उत्पन्न होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । अब असंख्यातगुणवृद्धिको आधार करके उससे नीचेकी संख्यातगुणवृद्धिके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

संख्यातगुणवृद्धि काण्डक जाकर असंख्यातगुणवृद्धि स्थान होता है । २१८ ।

असंख्यातगुणवृद्धि उत्पन्न होती हुई संख्यातगुणवृद्धियोंके काण्डकके बीतने पर ही उत्पन्न होती है, इसके बिना वह उत्पन्न नहीं होती; ऐसा ग्रहण करना चाहिये । अब अनन्तगुणवृद्धिकी विवक्षा करके नीचे के स्थानों की प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र प्राप्त होता है --

असंख्यातगुणवृद्धि काण्डक जाकर अनन्तगुणवृद्धि स्थान उत्पन्न होता है । २१९ ।

अणंतगुणवड्ढी उप्पज्जमाणा सव्वा वि असंखेज्जगुणवड्ढीणं कंडयं गंतूण चेव उप्पज्जदि, ण अण्णहा इदि वट्टव्वं। एवं पढमा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता।

अणंतभागब्भहियाणं* कंडयवग्गं कंडयं च गतूण संखेज्जभागब्भहियट्ठाणं।। २२० ।।

एसा विदिया हेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? संखेज्जभागवड्ढि संखेज्जगुणवड्ढि असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं च हेट्ठिमअणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं पमाणपरूवणट्ठं। संखेज्जभागवड्ढी उप्पज्जमाणा अणंतभागवड्ढीणं कंडयवग्गं कंडयब्भहियं गंतूण चेव उप्पज्जदि $\frac{१६}{४}$, ण अण्णहा, विरोहादो। एदेसिमुप्पायणविहाणमणुवायादो उच्चदे। कोऽनुपातः ? त्रैराशिकम्। तं जहा-एक्किस्से असंखेज्जभागवड्ढीए हेट्ठा जदि कंडयमेत्ताओ अणंतभागवड्ढीयो लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणमसंखेज्जभागवड्ढीणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्ताओ अणंतभागवड्ढीयो लब्भंति।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनन्तगुणवृद्धि उत्पन्न होती हुई सब ही असंख्यातगुणवृद्धियोंके काण्डकको बिताकर ही उत्पन्न होती है, इसके बिना वह उत्पन्न नहीं होती; ऐसा समझना चाहिये। प्रथम अधस्तन-स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई।

अनन्तभाग अधिक अर्थात् अनन्तभागवृद्धियोंके काण्डकका वर्ग और एक काण्डक जाकर संख्यातभागवृद्धिका स्थान होता है। २२०।

शंका- यह द्वितीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा किस लिये प्राप्त हुई है ?

समाधान- वह संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, व अनन्तगुणवृद्धि, इनके तथा नीचेकी अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि; इन वृद्धियोंके भी प्रमाण की प्ररूपणा करनेके लिये प्राप्त हुई है।

संख्यातभागवृद्धि उत्पन्न होती हुई अनन्तभागवृद्धियोंके एक काण्डकसे अधिक काण्डकके वर्गको बिताकर ही उत्पन्न होती है (४×४+४), इसके विना वह उत्पन्न नहीं होती; क्योंकि, उसमें विरोध है। इनके उत्पन्न करानेकी विधि अनुपातसे कहते हैं।

शंका- अनुपात किसे कहते हैं ?

समाधान- त्रैराशिकको अनुपात कहते हैं।

यथा- एक असंख्यातभागवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियां पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धियां पायी जाती हैं।

* ताप्रतौ ' अणंतभागब्भहियं ' इति पाठः।

पुव्वं संखेज्जभागवड्ढीदो हेट्ठा कंडयमेत्ताओ चेव असंखेज्जभागवड्ढीयो सुत्तेण परूविदाओ। संपहि तेरासिए* कीरमाणे रूवाहियकंडयादो अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं उप्पायणं कधं जुज्जदे? ण एस दोसो, संखेज्जभागवड्ढीए हेट्ठा असंखेज्जभागवड्ढीयो कंडयमेत्ताओ चेव, किंतु अण्णेक्किस्से असंखेज्जभागवड्ढीए विसयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढिपाओग्गट्ठाणे असंखेज्जभागवड्ढी अहोदूण* संखेज्जभागवड्ढिसमुप्पत्तीदो।

असंखेज्जभागवड्ढियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण संखेज्जगुणवड्ढियट्ठाणं ॥ २२१ ॥ $\frac{१६}{४}$

एदेसिमुप्पायणविहाणं उच्चदे। तं जहा- एक्किस्से संखेज्जभागवड्ढीए हेट्ठा जदि कंडयमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्ढीयो लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणं किं लभामो त्ति पमाणेणफलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंडयसहियकंडयवग्गमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्ढीयो होंति। सेसं सुगमं।

संखेज्जभागवड्ढियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण असंखेज्जगुणवड्ढियट्ठाणं ॥ २२२ ॥ $\frac{१६}{४}$

तं जहा- एक्किस्से संखेज्जगुणवड्ढीए हेट्ठा जदि कंडयमेत्ताओ संखेज्जभाग-

---

शंका— पहिले संख्यातभागवृद्धिके नीचे काण्डक प्रमाण ही असंख्यातभागवृद्धियाँ सूत्र द्वारा बतलाई गई हैं। अब त्रैराशिक करनेपर एक अधिक काण्डकसे अनन्तभागवृद्धिस्थानोंका उत्पन्न कराना कैसे योग्य है?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संख्यातभागवृद्धिके नीचे असंख्यातभागवृद्धियाँ काण्डक प्रमाण ही होती हैं, किन्तु अन्य एक असंख्यातभागवृद्धिके विषयको प्राप्त होकर असंख्यातवृद्धिके योग्य अध्वानमें असंख्यातभागवृद्धि न होकर संख्यातभागवृद्धि उत्पन्न होती है।

असंख्यातभागवृद्धियोंका काण्डकवर्ग व एक काण्डक जाकर (१६+४) संख्यातगुणवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२१ ॥

१६+४ इनके उत्पन्न करानेकी विधि बतलाते हैं। वह इस प्रकार है— एक संख्यातभागवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फल-गुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ होती हैं। शेष कथन सुगम है।

संख्यातभागवृद्धियोंका काण्डकवर्ग और एक काण्डक जाकर (१६+४) असंख्यातगुणवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२२ ॥

यथा- एक संख्यातगुणवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ पायी

---

* प्रतिषु ' तेरासीए ' इति पाठः। * अ-आ-प्रत्योः ' आहोदूण ' इति पाठः।

वड्ढीओ लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
ओवट्टिदाए कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्ताओ संखेज्जभागवड्ढीयो लब्भंति । सेसं सुगमं ।

संखेज्जगुणब्भहियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ॥ २२३ ॥ $\begin{smallmatrix}१६\\४\end{smallmatrix}$

एदेसिं उप्पत्तिविहाणं उच्चदे । तं जहा-- एक्किस्से असंखेज्जगुणवड्ढीए हेट्ठा जदि कंडयमेत्ताणि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्ताणि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि अट्ठंकादो हेट्ठा लद्धाणि होंति । एवं बिदिया हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

संखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंडयघणो बेकंडयवग्गा कंडयं च ॥ २२४ ॥ $\begin{smallmatrix}६४\\१६\\१६\\४\end{smallmatrix}$

तदियाहेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं हेट्ठदो* अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढीणं जहाकमेण

जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं । शेष कथन सुगम है ।

संख्यातगुणवृद्धियोंका काण्डकवर्ग और एक काण्डक (१६+४) जाकर अनन्तगुणवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२३ ॥

इनके उत्पन्न करानेकी विधि बतलाते हैं । वह इस प्रकार है-- एक असंख्यातगुणवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियाँ पायी जाती है तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर अष्टांकके नीचे काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण संख्यातगुणवृद्धिस्थान पाये जाते हैं । इस प्रकार द्वितीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

संख्यातगुणवृद्धिके नीचे अनन्तभागवृद्धियों का काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक ($४^३ + (४^२ \times २) + ४$) होता है ॥ २२४ ॥

शंका – तृतीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा किसलिये प्राप्त हुई है ?

समाधान-- वह संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि, इन वृद्धियोंके नीचे क्रमशः अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागवृद्धि इनका प्रमाण बतलानेके लिये प्राप्त हुई है ।

---

* अ-आप्रत्योः 'हेट्ठादो' इति पाठः ।

पमाणपरूवणट्ठं । एवस्स अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा- एक्किस्से संखेज्ज भागवड्ढीए हेट्ठा जदि कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्ताणि अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणं संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति कंडयवग्गं कंडयं च दो पडिरासीयो करिय जहाकमेण एगकंडएण एगरूवेण च गुणिय मेलाविदे एगकंड-यघणो बे-कंडयवग्गा कंडयं च उवलब्भदे ।

असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंडयघणो बेकंडयवग्गा कंडयं च ॥ २२५ ॥

६४
१६
१६
४

एवस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा-- एक्कस्स संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणस्स हेट्ठदो जदि कंडयसहिदकंडयवग्गमेत्ताणि असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहिय-कंडयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पुव्वं व दुप्पडिरासिं कादूण कमे-णेगकंडएणेगरूवेण च गुणिय मेलाविदे एगो कंडयघणो बेकंडयवग्गा कंडयं च उवलब्भदे ।

अणंतगुणस्स हेट्ठदो संखेज्जभागब्भहियाणं कंडयघणो बेकंडयवग्गा कंडयं च ॥ २२६ ॥

६४
१६
१६
४

इसकी अर्थप्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है-- एक संख्यातभागवृद्धिके नीचे यदि काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थान पाये जाते हैं तो एक अधिक कांडक प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके नीचे वे कितने पाये जावेंगे, इस प्रकार कांडकवर्ग और कांडक प्रमाण दो प्रतिराशियाँ करके क्रमशः एक काण्डक और एक अंकसे गुणित करके मिला देनेपर एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक पाया जाता है ।

असंख्यातगुणवृद्धिस्थानके नीचे असंख्यातभागवृद्धियोंका एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक ($४^३ + (४^२ \times २) + ४$) होता है ॥ २२५ ॥

इसका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है-- एक संख्यातगुणवृद्धिस्थानके नीचे यदि काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिस्थान पाये जाते हैं तो एक अधिक कांडक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके वे कितने पाये जावेंगे इस प्रकार पहलेके समान दो प्रतिरा-शियाँ करके क्रमशः एक काण्डक और एक अंकसे गुणित करके मिलानेपर एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक पाया जाता है ।

अनन्तगुणवृद्धिस्थानके नीचे संख्यातभागवृद्धिस्थानोंका एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक ($४^३ + (४^२ \times २) + ४$) होता है ॥ २२६ ॥

एदस्स अत्थो उच्चदे-- एक्कस्स असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो जदि कंडयसहिद-कंडयवग्गमेत्ताणि संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति फलं दुप्पडिरासीकदं कमेणेगकंडयेणेगरूवेण च गुणिय मेलाविदे कंडयघणो वेकंडयवग्गा कंडयं च लब्भदे । एवं तदिया हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

१ अ-आप्रत्योः ' हेट्ठादो ' इति पाठः ।

असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंडयवग्गावग्गो तिण्णिकंडयघणा तिण्णिकंडयवग्गा कंडयं च । २२७ ।

२५६
६४
६४
६४
१६
१६
१६
४

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

चउत्थो हेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? असंखेज्जगुणब्भहिय-अणंतगुणब्भहियट्ठाणाणं हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं* पमाणपरूवणट्ठं । एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा- कंडयघणं दोण्णिकंडयवग्गे कंडयं च दुप्पडिरासिं करिय ट्ठवेदूण एगकंडएण एगरूवेण च जहाकमेण गुणिदे कंडयवग्गावग्गो तिण्णिकंडयघणा तिण्णिकंडयवग्गा कंडयं च उप्पज्जदि त्ति ।

इसका अर्थ कहते हैं-- एक असंख्यातगुणवृद्धिस्थानके नीचे यदि काण्डक सहित कांडकवर्ग प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थान पाये जाते हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके नीचे वे कितने पाये जावेंगे, इस प्रकार दो प्रतिराशि रूप किये गये फलको क्रमशः एक कांडक और एक अंकसे गुणित करके मिला देनेपर एक काण्डकघन, दो कांडकवर्ग और एक कांडक पाया जाता है । इस प्रकार तृतीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

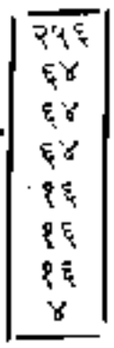
असंख्यातगुणवृद्धिके नीचे अनन्तभागवृद्धियोंका एक काण्डकवर्गावर्ग, तीन काण्डकघन, तीन काण्डकवर्ग और एक काण्डक ($४^२ = १६$; $१६^२ = २५६$; $२५६ + (४^३ \times ३) + (४^२ \times ३) + ४$) होता है ॥ २२७ ॥

शंका-- चतुर्थ अधस्थानप्ररूपणा किसलिये प्राप्त हुई है ?

समाधान-- वह असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि स्थानोंके नीचेके अनन्तभागवृद्धि स्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये प्राप्त हुई है ।

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है-- एक काण्डकघन, दो काण्डक वर्गों और एक काण्डकको दो प्रतिराशि रूप करके स्थापित कर एक काण्डक और एक अंकसे क्रमशः गुणित करनेपर एक काण्डकवर्गावर्ग, तीन काण्डकघन, तीन काण्डकवर्ग और एक काण्डक उत्पन्न होता है ।

* मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः ' हेट्ठिमअणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं ' इति पाठः ।



अणंतगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंडयवग्गा-वग्गो तिण्णिकंडयघणा तिण्णिकंडयवग्गा कंडयं च ।२२८।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एदेसिमंकाणमुप्पत्तीए भण्णमाणाए पुव्वं व वत्तव्वं, विसेसाभावादो। एवं चउत्थो हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता।



अणंतगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंडयो*-पंचहदो चत्तारिकंडयवग्गावग्गा छकंडयघणा चत्तारिकंडय-वग्गा कंडयं च ॥ २२९ ॥

एदेसिमंकाणमुप्पत्तिविहाणं वुच्चदे। तं जहा- कंडयवग्गावग्गं तिण्णि कंडयघणे

अनन्तगुणवृद्धिके नीचे असंख्यातभागवृद्धियोंका एक काण्डकवर्गावर्ग, तीन काण्डकघन, तीन काण्डकवर्ग और एक काण्डक होता (४× ४× १६) + (४³× ३) + (४²× ३) + ४) है ॥ २२८ ॥

इन अंकोंकी उत्पत्तिका कथन करते समय पहिलेके समान प्ररूपणा करनी चाहिये क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार चतुर्थी अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई।

अनन्तगुणवृद्धिके नीचे अनन्तभागवृद्धियोंका पांच वार गुणित काण्डक, चार काण्डकवर्गावर्ग, छह काण्डकघन, चार काण्डकवर्ग और एक काण्डक (४× ४× ४× ४× ४) + (४× ४× १६× ४) + (४³× ६) + (४²× ४) + ४) होता है ॥ २२९ ॥

५११ पृ 932

इन अंकोंके उत्पादनकी विधि कही जाती है। वह इस प्रकार है- एक काण्डक वर्गावर्ग, तीन

---

* अप्रतौ ' कंडयपंचहदो ' आप्रतौ ' कंडयपंचहदो ' इति पाठः।

तिण्णिकंडयवग्गे कंडयं च दोसु ट्ठाणेसु ट्ठविय जहाकमेण रूवेण एगकंडएणं* च गुणिय मेलाविदे कंडओ पंचहदो चत्तारिकंडयवग्गावग्गा छकंडयघणा चत्तारिकंडय-वग्गा कंडयं च उप्पज्जदि । एवं पंचमी हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

समयपरूवणाए चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३० ॥

संतपरूवणमकाऊण पमाणप्पाबहुआणं चेव परूवणा किमट्ठं कीरदे? ण एस दोसो, एदेहि दोहि अणुयोगद्दाराणि अवगदेहि तदवगमादो । ण च संतरहियाण पमाणं थोवबहुत्तं च संभवइ, विरोहादो । अधवा अविभागपडिच्छेदपरूवणाविअणुयोगद्दारेहि चेव अणुभागबंधट्ठाणाणं कालविसेसिदाणं संतस्स परूवणा कदा, एगसमयादिकालेण अविसेसिदाणं संतस्स गगणकुसुमसमाणत्तप्पसंगादो । जहण्णाणुभागबंधट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणे त्ति एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्ताणमणुभागबंधट्ठाणाणं पण्णाए एगपंतीए आयारेण रचणाए कदाए तत्थ हेट्ठिमाणि असंखेज्जलोगमेत्तअणु-भागबंधट्ठाणाणि चदुसमइयाणि । एगसमयमादिं कादूण उक्कस्सेण णिरंतरं चत्तारि-समयं बज्झंति त्ति भणिदं होदि । उवरि किण्ण बज्झंति? सहावियादो ।

कांण्डकघनों, तीन काण्डक वर्गों और एक काण्डकको दो स्थानोंमें स्थापित करके क्रमशः एक अंक और एक काण्डक द्वारा गुणित करके मिलानेपर पांचवार गुणित काण्डक, चार काण्डक-वर्गावर्ग, छह काण्डकघन, चार काण्डकवर्ग और एक काण्डक उत्पन्न होता है । इस प्रकार पंचम अधस्तनस्थान प्ररूपणा समाप्त हुई ।

समयप्ररूपणामें चार समयवाले अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३० ॥

शंका- सत्प्ररूपणा न करके प्रमाण और अल्पबहुत्वकी ही प्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, इन दो अनुयोगद्वारोंके अवगत हो जानेपर उनके द्वारा सत्प्ररूपणा का अवगम हो जाता है । कारण कि सत्त्वसे रहित पदार्थोंका प्रमाण और अल्पबहुत्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, उसमें विरोध है । अथवा, अविभागप्रतिच्छेद आदि अनुयोगद्वारोंके द्वारा ही कालसे विशेषित अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके सत्त्वकी प्ररूपणा की जा चुकी है, क्योंकि, एक समय आदि कालकी विशेषतासे रहित उनके सत्त्वके आकाशकुसुमके समान होनेका प्रसंग आता है ।

जघन्य अनुभागबन्धस्थानसे लेकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानतक इन असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थानोंकी वृद्धिसे एक पंक्तिके आकारसे रचना करनेपर उनमेंसे नीचेके असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान चार समयवाले हैं । अभिप्राय यह है कि ये स्थान एक समयसे लेकर उत्कर्षसे निरन्तर चार समयतक बंधते हैं ।

शंका- चार समयसे आगे वे क्यों नहीं बंधते हैं ?

---

* अ-आप्रत्योः ' जहाकमेण रूवेण रूवेण कंडएण ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पंचसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।। २३१ ।।

चदुसमइयपाओग्गअणुभागबंधट्ठाणेसु जमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणं तत्तो उवरिमअणुभागबंधट्ठाणं पंचसमइयं । तमणुभागबंधट्ठाणमादिं कादूण असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधट्ठाणाणि पंचसमइयाणि, एगसमयमादिं कादूण उक्कस्सेण पंचसमयं बज्झंति त्ति उत्तं होदि ।

एवं छसमइयाणि सत्तसमइयाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।। २३२ ।।

पंचसमइयअणुभागबंधट्ठाणेहिंतो उवरि असंखेज्जलोगमेत्ताणि अणुभागबंधट्ठाणाणि छसमइयाणि होंति । तेहिंतो उवरि सत्तसमइयाणि*अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति । तेहिंतो उवरि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति ।

पुणरवि सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।। २३३ ।।

अट्ठसमइयअणुभागबंधट्ठाणेहिंतो हेट्ठा जेण अणुभागबंधट्ठाणाणि सत्तसमइयपाओ-

---

समाधान-- वे स्वभावसे ही चार समयके आगे नहीं बंधते हैं ।

पाँच समयवाले अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातलोक प्रमाण हैं ।२३१।

चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंमें जो उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान है उससे आगेका अनुभागबन्धस्थान पाँच समयवाला है । उस अनुभागबन्धस्थानसे लेकर असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान पाँच समयवाले हैं, अर्थात् वे एक समयसे लेकर उत्कर्षसे पाँच समय-तक बंधते हैं ।

इस प्रकार छह समय, सात समय और आठ समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ।। २३२ ।।

पाँच समय योग्य स्थानोंसे आगे असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान छह समय योग्य है । उनसे आगे सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं । उनसे आगे आठ समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ।

फिरसे भी सात समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ।। २३३ ।।

चूंकि आठ समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंके नीचे सात समय योग्य अनुभागबंधस्थानोंकी

---

* मप्रतौ ‘ अयं संदृष्टिः नोपलभ्यते शेषप्रतिषु तु अस्ति ।

गाणि पुव्वं परूविदाणि तेण✲ पुणरवि त्ति भणिदं । एसो✲ 'पुणरवि' त्ति सद्दो उवरिमछप्पंच-चदुसमइयअणुभागबंधट्ठाणेसु अणुवट्टावेदव्वो । अणुभागबंधट्ठाणाणमणुभागबंधज्झवसाणववएसो कधं जुज्जदे ? ण एस दोसो, कज्जे कारणोवयारेण तेसिं✲ तदविरोहादो । अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि णाम जीवस्स परिणामो अणुभागबंधट्ठाणणिमित्तो । तेणेदस्स सण्ण✲ अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणं होदि त्ति जुज्जदे । एदाणि सत्तसमयपाओग्गअणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति । कुदो ? साभावियादो ।

एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३४ ॥

उवरिमसत्तसमइयअणुभागबंधट्ठाणेहिंतो उवरिमाणि छसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । तेहिंतो उवरि पंचसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । तेहिंतो उवरि चदुसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति । सेसं सुगमं ।

प्ररूपणा पहले की जा चुकी है, अतएव सूत्रमें 'पुणरवि' अर्थात् 'फिरसे भी' पदका प्रयोग किया गया है । इस 'पुणरवि' शब्दकी अनुवृत्ति आगेके छह पाँच और चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंमें लेनी चाहिये ।

शंका--अनुभागबन्धस्थानोंकी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान संज्ञा कैसे योग्य है ?

समाधान--यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, कार्यमें कारणका उपचार करनेसे उनकी उपर्युक्त संज्ञा करनेमें कोई विरोध नहीं है । अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानका अर्थ अनुभागबन्धस्थानमें निमित्तभूत जीवका परिणाम है । इस कारण इस अनुभागबन्धस्थानकी संज्ञा अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उचित है ।

ये सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है

इसी प्रकार छह समय योग्य, पाँच समय योग्य और चार समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३४ ॥

उपरिम सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंसे ऊपरके छह समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक मात्र हैं । उनसे आगे पाँच समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं । उनसे आगे चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । शेष कथन सुगम है ।

✲ १ प्रतिषु 'केण इति पाठः । ✲ ताप्रतौ 'भणिदं ? एसो' इति पाठः । ✲ आप्रतौ 'कारणेवयारादो ण तेसिं' इति पाठः । ✲ प्रतिषु सण्णा अणुभागबंधट्ठाणस्स होदि इति पाठः ।

उवरि तिसमइयाणि बिसमइयाणि अणुभागबंध वसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३५ ॥

मूलग्रन्थकर्ता श्रीभूतबलि आचार्य प्रणीत महाबन्धशास्त्र की महाराज

उवरिमचदुसमइएहिंतो उवरिमाणि तिसमइयाणि बिसमइयाणि च अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति त्ति घेत्तव्वं । एत्थतणउवरिसद्दो हेट्ठा सिंघावलोअण* क्कमेण उवरि णदीसोदक्कमेण अणुवट्टावेदव्वो, अण्णहा तदत्थपडिवत्तीए अभावादो । एवं पमाणपरूवणा समत्ता ।

एत्थ अप्पाबहुअं ॥ २३६ ॥

कादव्वमिदि अज्झाहारेयव्वं । किमट्ठमप्पाबहुअं कीरदे ? ण एस दोसो, अप्पाबहुए अणवगए अवगयपमाणस्स अणवगयसमाणत्तप्पसंगादो ।

सव्वत्थोवाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि ।२३७।

केहिंतो थोवाणि ? उवरि भण्णमाणट्ठाणेहिंतो । कुदो ? सहावियादो ।

दोसु वि पासेसु सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि दो वि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २३८ ॥

आगे तीन समय योग्य और दो समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३५ ॥

उपरिम चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंसे ऊपरके तीन समय योग्य और दो समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । यहाँ सूत्रमें प्रयुक्त 'उवरि' शब्दकी अनुवृत्ति पीछे सिंहावलोकनके क्रमसे और आगे नदीस्रोतके क्रमसे कर लेनी चाहिये क्योंकि, इसके बिना अर्थकी प्रतिपत्ति नहीं बनती है । इस प्रकार प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई ।

यहाँ अल्पबहुत्व करने योग्य है ॥ २३६ ॥

सूत्रमें 'कादव्व' अर्थात् करने योग्य है, इस पदका अध्याहार करना चाहिये ।

शंका—अल्पबहुत्व किसलिये किया जा रहा है ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अल्पबहुत्वके ज्ञात न होनेपर जाने हुए प्रमाणके भी अज्ञात रहनेके समान प्रसंग आता है ।

आठ समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं ॥ २३७ ॥ ध.१ पृ. २६

किनसे वे स्तोक हैं ? वे आगे कहे जानेवाले स्थानोंसे स्तोक हैं, क्योंकि ऐसा, स्वभावसे है ।

दोनों ही पार्श्वभागोंमें सात समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान दोनों ही तुल्य होकर पूर्वोक्त स्थानोंसे असंख्यातगुणे हैं ॥ २३८ ॥

---

* १ अ-आप्रयोः 'संघावलोव' इति पाठः ।

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा । कुदो एवं णव्वदे ? परमगुरूवदेसादो । एसो अविभागपडिच्छेदाणं गुणगारो ण होदि, किंतु ट्ठाणसंखाए अविभागपडिच्छेदस्स गुणगारो किण्ण होदि? ण, अणंतगुणहीणप्पसंगादो(१) । तं पि कुदो णव्वदे ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तअणुभागबंधट्ठाणेसु अदिक्कंतेसु असंखेज्जसव्वजीवरासिमेत्तगुणगारुवलंभादो। संपादक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि ॥ २३९ ॥

एवमिदि णिद्देसो किमट्ठं कदो? दोसु वि पासेसु ट्ठिदछ-पंच-चदुसमइयअणुभागट्ठाणाणं गहणट्ठं तत्तुल्लत्तपदुप्पायणट्ठं असंखेज्जलोगगुणगारजाणावणट्ठं च ।

उवरि तिसमइयाणि ॥ २४० ॥

तिसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । एत्थ गुणगारो असंखेज्जा लोगा । एदस्स सुत्तस्स असंपुण्णत्तं किमिदि ण पसज्जदे? ण,उवरिमसुत्तस्स

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है । यह कहांसे जाना जाता है ? वह परम गुरुके उपदेशसे जाना जाता है । यह अविभागप्रतिच्छेदोंका गुणाकार नहीं है, किन्तु स्थानसंख्याका गुणकार है ।

शंका – यह अविभागप्रतिच्छेदका गुणकार क्यों नहीं है ?

समाधान – नहीं क्योंकि, वैसा होनेपर उसके अनन्तगुणे हीन होनेका प्रसंग आता है ।

शंका– वह भी कहांसे जाना जाता है ?

समाधान– कारण यह कि अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अनुभागबन्धस्थानोंके अतिक्रान्त होनेपर असंख्यात सब जीवराशि प्रमाण गुणकार पाया जाता है ।

इसीप्रकार छह समय योग्य, पांच समय योग्य और चार समय योग्य स्थानोंका अल्पबहुत्व समझना चाहिये ॥ २३९ ॥

शंका– सूत्रमें 'एवं' पदका निर्देश किसलिये किया गया है ?

समाधान– दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित छह, पांच और चार समय योग्य अनुभागस्थानोंका ग्रहण करनेके लिए, उनकी समानता बतलानेके लिए, तथा असंख्यात लोक गुणकार बतलानेके लिए उक्त पदका निर्देश किया गया है ।

आगेके तीन समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उनसे असंख्यातगुणे हैं ॥ २४० ॥

तीन समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । यहां गुणकार असंख्यात लोक हैं ।

शंका – इस सूत्रके अपूर्ण होनेका प्रसंग क्यों नहीं आता ?

---

(१) आप्रतौ 'ण, अणंतगुणप्पसंगादो,' ताप्रतौ 'ण, अणंतगुणा (?) अणंतगुणहीणसपसंगादो ' इति पाठः ।

अवयवाणमेत्थ अणुवृत्तिभावेण* एदस्स असंपुण्णत्ताणुववत्तीदो ।

विसमट्ठयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।२४१।

एत्थ उवरिसद्दो अणुवट्टदे । अधवा अत्थावत्तीए चेव उवरित्तं णव्वदे । सेसं सुगमं । एदं चेव सुत्तमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं पि जोजेयव्वं, विसेसाभावादो । अणुभागबन्धट्ठाणाणं परूवणाए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं♠ परूवणा किमट्ठं कीरदे? ण, अणुभागबंधट्ठाणाणि सहेउआणि णिरहेउआणि ण होंति त्ति जाणावणट्ठं तक्कारणपरूवणा कीरदे । अणुभागट्ठाणपडिबद्धत्तादो* अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाण-परूवणा णासंबद्धा वि? अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाविभाग♣ पडिच्छेदाणमणंतत्तं कत्तो णव्वदे㊀ ? तक्कज्जकम्मपरमाणूणमविभागपडिच्छेदस्स आणंतियण्णहाणुववत्तीदो । अणुभागट्ठाणाणं संखामाहप्पजाणावणट्ठं पुव्वुत्तप्पाबहुअस्स सव्वपदेसु अवट्ठिदक्कमेण सुहुमतेउक्काइयकायट्ठिदी चेव गुणगारो होदि त्ति जाणावणट्ठं च उत्तरसुत्तं भणदि-

---

समाधान--नहीं, क्योंकि, आगेके सूत्रके अवयवोंकी यहाँ अनुवृत्ति होनेसे इस सूत्रकी अपूर्णता घटित नहीं होती ।

दो समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उससे असंख्यातगुणे हैं ॥ २४१ ॥

यहाँ 'उपरि' शब्दकी अनुवृत्ति आती है । अथवा, अर्थापत्तिसे ही उपरित्वका ज्ञान हो जाता है । शेष कथन सुगम है । इसी सूत्रकी योजना अनुभागबन्धस्थानोंकी भी करनी चाहिये क्योंकि, उनमें कोई विशेषता नहीं है ।

शंका--अनुभागबन्धस्थानोंकी प्ररूपणामें अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी प्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, अनुभागबन्धस्थान सहेतुक हैं, निर्हेतुक नहीं हैं; इस बातका ज्ञान करानेके लिये उनके कारणोंकी प्ररूपणा की जा रही है । अनुभागस्थानोंसे सम्बद्ध होनेके कारण अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी प्ररूपणा असंबद्ध भी नहीं है ।

शंका--अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके अविभागप्रतिच्छेदोंकी अनन्तता कहाँसे जानी जाती है ?

समाधान--उनके कार्यभूत कर्मपरमाणुओंके अविभागप्रतिच्छेदोंकी अनन्तता चूंकि उसके विना बन नहीं सकती है, अतएव इसीसे उनकी अनन्तता सिद्ध है ।

अनुभागस्थानोंकी संख्याका माहात्म्य जतलानेके लिये तथा पूर्वोक्त अल्पबहुत्वका गुणकार सब पदोंमें अवस्थित क्रमसे तेजकायिक जीवोंकी कायस्थिति ही होती है, इस बातको भी जतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं ।

५११ पृ.

---

* आप्रतौ अणुवत्तिभावेण' आमो 'अणुवत्तमत्थिभावेण, ताप्रतौ अणुवत्तिथ (त्ति) भावेण' इति पाठः । ♠ अ-आप्रत्योः 'ट्ठाणाणि, ट्ठाणाणि (णं), इति पाठः । * ताप्रतौ 'कीरदे, अणुभागबंध-ट्ठाणपडिबद्धत्तादो' । इति पाठः । ♣ आ-ताप्रत्योः '-ट्ठाणं विभाग-' इति पाठः । ㊀ ताप्रतौ'-मणंतत्तं (?) कत्तो णव्वदे' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुहुमतेउक्काइया* पवेसणेण असंखेज्जा लोगा ॥ २४२ ॥

अण्णकाइएहिंतो आगंतूण सुहुमअगणिकाएसु उववादो पवेसणं णाम । तेण पवेसणेण विसेसियातेउक्काइया जीवा असंखेज्जलोगमेत्ता होदूण थोवा भवंति उवरि भण्णमाणपदेहिंतो ।

अगणिकाइया असंखेज्जगुणा ॥ २४३ ॥

अगणिकाइयणामकम्मोदइल्ला सव्वे जीवा अगणिकाइया णाम । ते असंखेज्जगुणा, अंतोमुहुत्तसंचिदत्तादो । को गुणगारो ? अंतोमुहुत्तं ।

कायट्ठिदी असंखेज्जगुणा ॥ २४४ ॥

अण्णकाइएहिंतो अगणिकाइएसु उप्पण्णपढमसमए चेव अगणिकाइयणामकम्मस्स उदओ होदि । तदुदिदपढमसमयप्पहुडि उक्कस्सेण जाव असंखेज्जा लोगा त्ति तदुदयकालो होदि । सो कालो अगणिकाइयकायट्ठिदी णाम । सा अगणिकाइयरासीदो असंखेज्जगुणा । को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २४५ ॥

अणुभागबंधट्ठाणाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि च असंखेज्जगुणा त्ति भणिदं

सूक्ष्म तेजकायिक जीव प्रवेशकी अपेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण है ॥ २४२ ॥

अन्यकायिक जीवोंमेंसे आकर सूक्ष्म अग्निकायिक जीवोंमें उत्पन्न होनेका नाम प्रवेश है । उस प्रवेशसे विशेषताको प्राप्त हुए तेजकायिक जीव असंख्यात लोक प्रमाण होकर आगे कहे जानेवाले पदोंकी अपेक्षा स्तोक हैं ।

उनसे अग्निकायिक जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ २४३ ॥

अग्निकायिक नामकर्मके उदयसे संयुक्त सब जीव अग्निकायिक कहे जाते हैं । वे पूर्वोक्त जीवोंसे असंख्यातगुणे है क्योंकि, वे अन्तर्मुहूर्तमें संचित होते हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार अन्तर्मुहूर्त है ।

अग्निकायिकोंकी कायस्थिति उनसे असंख्यातगुणी है ॥ २४४ ॥

अन्यकायिक जीवोंमेंसे अग्निकायिक जीवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही अग्निकायिक नामकर्मका उदय होता है । उसके उदय युक्त प्रथम समयसे लेकर उत्कर्षसे असंख्यात लोक प्रमाण उसका उदयकाल है । वह काल अग्निकायिकोंकी कायस्थिति कहा जाता है । वह (कायस्थिति) अग्निकायिक जीवोंकी राशिसे असंख्यातगुणी है । गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २४५ ॥

अनुभागबंधस्थान और अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं, यह अभिप्राय है ।

---

* १ अ-आप्रत्योः 'तेउक्काइय' इति पाठः ।

होदि । कधं एदं लब्भदे ? वोण्णं पि अत्थाणं वाचगभावेण एवस्स सुत्तस्स उवलंभादो । एत्थ गुणगारपमाणमसंखेज्जा लोगा । तं कुदो णव्वदे ? गुरूवदेसादो ।

वड्ढिपरूवणवाए अत्थि अणंतभागवड्ढि-हाणी असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी अणंतगुणवड्ढि-हाणी ॥ २४६ ॥

एदेण सुत्तेण छण्णं वड्ढि-हाणीणं संतपरूवणा कदा । छट्ठाणपरूवणाए चेव अवगदसंताणं छण्णं वड्ढि-हाणीणं ण एत्थ परूवणा कीरदे, पुणरुत्तदोसप्पसंगादो ? ण एत्थ पुणरुत्तदोसो ढुक्कदे, वड्ढि-हाणीणं कालस्स पमाणप्पाबहुगपरूवणट्ठं छण्णं वड्ढि-हाणीणं संतस्स संभालणकरणादो । अधवा ⊙ अणंतगुणवड्ढि-हाणिकालो त्ति कालसद्दस्स अज्झाहारे कदे छण्णं वड्ढि-हाणीणं कालस्स संतपरूवणा त्ति कट्टु ण पुणरुत्तदोसो ढुक्कदे ।

पंचवड्ढि-पंचहाणीओ केवचिरं कालादो होंति ? ॥ २४७ ॥

एदं पुच्छासुत्तं एगसमयमादिं कादूण सगसंभवकप्पो त्तिकालं एवं कालमवेक्खदे त्ति घेत्तव्वं

शंका--यह कैसे पाया जाता है ?

समाधान--कारण कि यह सूत्र इन दोनों ही अर्थोंके वाचक स्वरूपसे पाया जाता है। यहाँ गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है । वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ? वह गुरुके उपदेशसे जाना जाता है ।

वृद्धिप्ररूपणाकी अपेक्षा अनन्तभागवृद्धि-हानि, असंख्यातभागवृद्धि-हानि संख्यातभागवृद्धि-हानि, संख्यातगुणवृद्धि-हानि, असंख्यातगुणवृद्धि-हानि और अनन्तगुणवृद्धि-हानि होती है ॥२४६ ॥

इस सूत्रके द्वारा छह वृद्धियों व हानियोंकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका--छह वृद्धियों व हानियोंका अस्तित्व चूंकि षट्स्थानप्ररूपणासे ही जाना जा चुका है अतएव उनकी प्ररूपणा यहाँ नहीं की जानी चाहिये, क्योंकि, पुनरुक्त दोषका प्रसंग आता है ?

समाधान--यहाँ पुनरुक्त दोष नहीं आता है, क्योंकि, वृद्धियों व हानियोंके कालके प्रमाण व अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये इस सूत्र द्वारा छह वृद्धियों व हानियोंके अस्तित्वका स्मरण कराया गया है । अथवा अनन्तगुणवृद्धि-हानिकाल इस प्रकार काल शब्दका अध्याहार करनेपर छह वृद्धियों व हानियोंके कालकी यह सत्प्ररूपणा है, ऐसा मानकर पुनरुक्त दोष नहीं आता है ।

पाँच वृद्धियाँ व हानियाँ कितने काल तक होती हैं ? ॥ २४७ ॥

यह पृच्छासूत्र एक समयसे लेकर जहाँ तक सम्भव है उतने कालकी अपेक्षा करता है ।

⊙ अ-आप्रत्योर्नोपलभ्यते पदमिदम्, ताप्रतौ त्वुपलभ्यते तत् ।

आप्रतौ 'जाव उक्कस्सो त्ति' इति पाठः । ✻ प्रतिषु ' उवेक्खदे' इति पाठः ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ २४८ ॥

एदाओ पंचवड्ढि-हाणीयो एगसमयं चेव कादूण विवियसमए अणप्पिदवड्ढि-हाणीसु गदे संते एगसमओ लब्भदि ।

उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥ २४९ ॥

पंचण्णं वड्ढि-हाणीणं मज्झे जदि एक्कस्से वड्ढीए हाणीए वा सुट्ठु दीहकालमच्छदि तो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव अच्छदि, णो आवलियादिक्कंतं कालं[1], सहावियादो । अणंतभागवड्ढिविसयं पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढिविसओ अंगुलस्स असंखेज्जदिभागगुणो[2] त्ति असंखेज्जभागवड्ढिकालो असंखेज्जपलिदोवममेत्तो किण्ण जायदे? ण, विसयगुणगारपडिभागेण अणुभागबंधकाले इच्छिज्जमाणे अणंतगुणवड्ढि-हाणीणमसंखेज्जलोगमेत्तबंधकालप्पसंगादो । ण च एवं, सुत्ते तासिमंतोमुहुत्त-मेत्तउक्कस्सकालणिद्देसादो ।

अणंतगुणवड्ढि-हाणीयो केवचिरं कालादो होंति? श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ २५१ ॥

कुदो ? अणंतगुणवड्ढिबंधमणंतगुणहाणिबंधं च एगसमयं कादूण विदियसमए

जघन्यसे ये एक समय होती हैं ॥ २४८ ॥

इन पांच वृद्धियों व हानियोंको एक समय ही करके द्वितीय समयमें अविवक्षित वृद्धियों व हानियोंके प्राप्त होनेपर इनका एक समय काल उपलब्ध होता है ।

ये उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग काल तक होती हैं ॥ २४९ ॥

पांच वृद्धियों व हानियोंके मध्यमें यदि एक वृद्धि अथवा हानिमें अतिशय दीर्घ काल तक रहता है तो वह आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र ही रहता है, आवलीका अतिक्रमण कर वह अधिक काल तक नहीं रहता, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

शंका—अनन्तभागवृद्धिके विषयकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धिका विषय चूंकि अंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणित है, अतएव असंख्यातभागवृद्धिका काल असंख्यात पल्योपम प्रमाण क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, विषयगुणकारके प्रतिभागसे अनुभागबन्धके कालको स्वीकार करनेपर अनन्तगुणवृद्धि व हानि सम्बन्धी बन्धकालके असंख्यात लोक मात्र होनेका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, सूत्रमें उनके उत्कृष्ट कालका निर्देश अन्तर्मुहूर्त मात्र काल ही किया है ।

अनन्तगुणवृद्धि और हानि कितने काल तक होती हैं ? ॥ २५० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे एक समय तक होती हैं ॥ २५१ ॥

कारण कि अनन्तगुणवृद्धिबन्ध और अनन्तगुणहानिबन्धको एक समय करके द्वितीय समय—

[1] प्रतिषु ' आवलियादिक्कंतं ' इति पाठः । [2] आप्रतौ ' असंखे० भागमेत्तगुणो ' इति पाठः ।

अणप्पिदवड्ढि-हाणीणं गदस्स तासिं एगसमयकालदंसणादो ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ २५२ ॥

एदासिं दोण्णं वड्ढि-हाणीणं मज्झे एक्किस्से वड्ढीए हाणीए वा सुट्ठु जदि दीहकालमच्छदि तो अंतोमुहुत्तं चेव णो अहियं, जिणोवएसाभावादो । विसुज्झमाणो णिरंतरमंतोमुहुत्तकालमसुहाणं पयडीणमणुभागट्ठाणाणि अणंतगुणहाणीए बंधदि, सुहाणमणंतगुणवड्ढीए । संकिलेसमाणो असुहाणं पयडीणमणुभागट्ठाणाणि णिरंतरमंतोमुहुत्तकालमणंतगुणवड्ढीए सुहाणमणुभागट्ठाणाणि अणंतगुणहाणीए बंधदि त्ति भणिदं होदि ।

एदेहि दोहि अणुयोगद्दारेहि सूचिदमणुभागवड्ढि-हाणिकालाणमप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा-सव्वत्थोवो अणंतभागवड्ढि-हाणिकालो । असंखेज्जभागवड्ढि-हाणिकालो असंखेज्जगुणो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । कुदो ? अणंतभागवड्ढि-हाणिविसयादो असंखेज्जभागवड्ढि-हाणिविसयस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो । संखेज्जभागवड्ढि-हाणिकालो संखेज्जगुणो । कुदो? असंखेज्जभागवड्ढि-हाणिविसयं पेक्खिदूण संखेज्जभागवड्ढि-हाणिविसयस्स संखेज्जगुणत्तुवलंभादो । तं च संखेज्जगुणत्तं कत्तो णव्वदे ? जुत्तीदो । सा च जुत्ती पुव्वं परूविदा त्ति णेह परू--

---

में अविवक्षित वृद्धि अथवा हानिके बन्धको प्राप्त हुए जीवके उनका एक समय काल देखा जाता है।

उत्कृष्टसे वे अन्तर्मुहूर्त काल तक होती हैं ॥ २५२ ॥

इन दो वृद्धि-हानियोंके मध्यमें एक वृद्धि अथवा हानिमें अतिशय दीर्घ काल तक यदि रहता है तो अन्तर्मुहूर्त ही रहता है, अधिक काल तक नहीं; क्योंकि, वैसा जिन भगवान्‌का उपदेश नहीं है। विशुद्धिको प्राप्त होनेवाला जीव निरन्तर अंतर्मुहूर्त काल तक अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको अनंतगुणवृद्धिके साथ बांधता है तथा शुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको अनंतगुणवृद्धिके साथ बांधता है। इसके विपरीत संक्लेशको प्राप्त होनेवाला जीव अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको निरंतर अंतर्मुहूर्त काल तक अनंतगुणवृद्धिके साथ बांधता है तथा शुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको अनंतगुणहानिके साथ बांधता है, यह उक्त कथनका अभिप्राय है।

इन दो अनुयोगद्वारोंके द्वारा सूचित अनुभागकी वृद्धि एवं हानिके काल सम्बन्धी अल्पबहुत्वको कहते हैं। वह इस प्रकार है- अनन्तभागवृद्धि व हानिका काल सबसे स्तोक है। उससे असंख्यातभागवृद्धि व हानिका काल असंख्यातगुणा है। गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है, क्योंकि, अनन्तभागवृद्धि व हानिके विषयकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि व हानिका विषय असंख्यातगुणा पाया जाता है। उससे संख्यातभागवृद्धि व हानिका काल संख्यातगुणा है, क्योंकि, असंख्यातभागवृद्धि व हानिके विषयकी अपेक्षा संख्यातभागवृद्धि व हानिका विषय संख्यातगुणा पाया जाता है।

शंका-- वह संख्यातगुणत्व किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान- वह युक्तिसे जाना जाता है। और वह युक्ति चूंकि पहिले बतलायी जा चुकी

विज्जदे । संखेज्जगुणवड्ढि-हाणिकालो संखेज्जगुणो । कुदो ? पुव्विल्लविसयादो एदासिं विसयस्स संखेज्जगुणत्तदंसणादो । ~~एदासिं संखेज्जगुणवड्ढि-हाणिविसयादो असंखेज्ज~~ गुणो । कुदो ? पुव्विल्लवड्ढि-हाणिविसयादो एदासिं विसयस्स जुत्तीए असंखेज्ज-गुणत्तुवलंभादो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । अणंतगुणवड्ढि-हाणिकालो असंखेज्जगुणो । कुदो ? पुव्विल्लविसयादो एदासिं वड्ढि-हाणीणं विसयस्स जुत्तीए असंखेज्जगुणत्तदंसणादो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । वड्ढिकालो विसेसाहिओ । केत्तियमेत्तेण ? हेट्ठिमासेसवड्ढिकालमेत्तेण । हाणिकालो वि वड्ढिकालेण सह किण्ण परूविदो । ण, वड्ढिकालेण हाणिकालो समाणो त्ति पुध परूवणाए फलाभावादो । एवं वड्ढिकालप्पाबहुगं समत्तं । एवं वड्ढिपरूवणा गदा ।

जवमज्झपरूवणदाए अणंतगुणवड्ढी अणंतगुणहाणी च जव-मज्झं ॥ २५३ ॥

एदं किं कालजवमज्झं आहो जीवजवमज्झमिदि ? जीवजवमज्झं ण होदि, अणु-भागट्ठाणेसु जीवाणमवट्ठाणक्कमस्स पुव्वमपरूविदत्तादो । तदो कालजवमज्झमेदं । जदि एवं तो जवमज्झपरूवणा ण कायव्वा, समयपरूवणाए चेव असंखेज्जलोगमेत्ताणं-

---

है, अतएव उसकी प्ररूपणा यहाँ नहीं की जाती है ।

उससे संख्यातगुणवृद्धि और हानिका काल संख्यातगुणा है, क्योंकि, पूर्वकी वृद्धि और हानिके विषयकी अपेक्षा इनका विषय संख्यातगुणा देखा जाता है । उससे असंख्यातगुणवृद्धि और हानि का काल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, पूर्वकी वृद्धि और हानिके विषयकी अपेक्षा इनका विषय युक्तिसे असंख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है । उससे अनन्तगुणवृद्धि और हानिका काल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, पूर्वकी वृद्धि व हानिके विषयकी अपेक्षा इन वृद्धि-हानियोंका विषय युक्तिसे असंख्यातगुणा देखा जाता है । गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है । वृद्धिका काल उससे विशेष अधिक है । कितने मात्रसे वह विशेष अधिक है ? वह अवस्तन समस्त वृद्धियोंके कालसे विशेष अधिक है ।

शंका--वृद्धिकालके साथ हानिकालकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, हानिकाल वृद्धिकालके बराबर है, अतः उसकी अलगसे प्ररूपणा करना निष्फल है ।

इस प्रकार वृद्धि कालका अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । इस प्रकार वृद्धिप्ररूपणा समाप्त हुई ।

यवमध्यकी प्ररूपणामें अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तगुणहानि यवमध्य है ॥ २५३ ॥

शंका--यह क्या कालयवमध्य है अथवा जीवयवमध्य ?

समाधान--वह जीवयवमध्य नहीं है, क्योंकि, अनुभागस्थानोंमें जीवोंके अवस्थानके क्रमकी पहिले प्ररूपणा नहीं की गई है । इस कारण यह कालयवमध्य है ।

शंका--यदि ऐसा है तो फिर यवमध्यकी प्ररूपणा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, समय-

मट्ठसमइयाणमणुभागट्ठाणाणं कालमस्सिदूण जवमज्झस्ससिद्धिदो ? सच्चमेदं, कालजवमज्झं समयपरूवणादो चेव सिद्धमिदि, किं तु तस्स जवमज्झस्स पारंभो परिसमत्ती च काए वड्ढीए हाणीए वा जादा त्ति ण णव्वदे । तस्स पारंभपरिसमत्तीओ एदासु वड्ढिहाणीसु जादाओ त्ति जाणावणट्ठं जवमज्झपरूवणा आगदा । अणंतगुणवड्ढीए जवमज्झस्स आदी होदि, पुव्वमुद्दिट्ठत्तादो गुरुवएसादो वा । परिसेसियादो अणंतगुणहाणीए परिसमत्ती होदि त्ति घेत्तव्वं । जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेणजवमज्झादो हेट्ठिम-उवरिम-चदु-पंच-छ-सत्तसमयपाओग्गट्ठाणाणं तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणं च पारंभो अणंतगुणवड्ढीए परिसमत्तो अणंतगुणहाणीए त्ति सिद्धं । संपहि सव्वट्ठाणाणं पज्जवसाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि*--

मार्गदर्शक**पज्जवसाणपरूवणदाए अणंतगुणस्स उवरि अणंतगुणं भविस्सदि त्ति पज्जवसाणं ॥ २५४ ॥**

सुहुमेइंदियजहण्णट्ठाणप्पहुडि पुव्वपरूविदासेसट्ठाणाणं पज्जवसाणं अणंतगुणस्सुवरि अणंतगुणं होहिदि त्ति अहोदूण ट्ठिदं*। एवं पज्जवसाणपरूवणा समत्ता ।

प्ररूपणासे ही आठ समय योग्य असंख्यात लोकमात्र अनुभागस्थानोंको कालका आश्रय करके यवमध्यपना सिद्ध है ।

समाधान--सचमुचमें यह कालयवमध्य समयप्ररूपणासे ही सिद्ध है, किन्तु उस यवमध्यका प्रारंभ और समाप्ति कौनसी वृद्धि अथवा हानिमें हुई है, यह नहीं जाना जाता है । इस कारण उसका प्रारंभ और समाप्ति इन वृद्धि हानियोंमें हुई है, यह जतलानेके लिये यवमध्यप्ररूपणा प्राप्त हुई है । अनन्तगुणवृद्धिसे यवमध्यका प्रारंभ होता है, क्योंकि, वह पूर्वमें उद्दिष्ट है अथवा गुरुका वैसा उपदेश है । पारिशेष न्यायसे अनन्तगुणहानिसे उसकी समाप्ति होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । चूंकि यह सूत्र देशामर्शक है अतएव यवमध्यसे नीचेके और ऊपरके चार, पाँच, छह और सात समय योग्य स्थानोंका तथा तीन समय व दो समय योग्य स्थानोंका प्रारंभ अनन्तगुणवृद्धिसे होती है, यह सिद्ध है ।

अब सब स्थानोंकी पर्यवसान प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

पर्यवसानप्ररूपणामें अनन्तगुणके ऊपर अनन्तगुणा होगा यह पर्यवसान है ॥ २५४ ॥

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवके जघन्य स्थानसे लेकर पहिले कहे गये समस्त स्थानोंका पर्यवसान अनन्तगुणके ऊपर अनन्तगुणा होगा, इस प्रकार होकर स्थित है । इस प्रकार पर्यवसानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

* १ अ-आप्रत्योः 'भणिदं' इति पाठः । २ आप्रतौ 'आहोदूणिट्ठिदं' ताप्रतौ 'अहोदू (ण) णिदिट्ठं' इति पाठः

अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि दुवे अणुयोगद्दाराणि अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ॥ २५५ ॥

मार्गदर्शक :- अणंतगुणवड्ढीए असंखेज्जगुणवड्ढीए संखेज्जगुणवड्ढीए संखेज्जभागवड्ढीए असंखेज्जभागवड्ढीए अणंतभागवड्ढीए अणंतरहेट्ठिमट्ठाणं पेक्खिदूण ट्ठिदट्ठाणाणं* जा थोवबहुत्तपरूवणा सा अणंतरोवणिधा । जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण अणंतभागब्भहियादिसरूवेण ट्ठिदट्ठाणाणं जा थोवबहुत्तपरूवणा सा परंपरोवणिधा । एवमेत्थ दुविहं चेव अप्पाबहुअं होदि, तदियस्स अप्पाबहुगभंगस्स असंभवादो ।

तत्थ अणंतरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि ॥ २५६ ॥

जदि वि एवमप्पाबहुगं सव्वट्ठाणाणि अस्सिदूणावट्ठिदं तो वि अव्वुप्पण्णजणस्स वुप्पत्तिजणणट्ठमेगछट्ठाणमस्सिदूण अप्पाबहुगपरूवणा कीरदे । जेण एगछट्ठाणम्मि अणंतगुणवड्ढिट्ठाणमेक्कं चेव तेण सव्वत्थोवमिदि भणिदं ।

असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २५७ ॥

एत्थ गुणगारो एगकंडयमेत्तो होदि, एगछट्ठाणब्भंतरे कंडयमेत्ताणं चेव असंखेज्जगुणवड्ढीणमुवलंभादो ।

संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २५८ ॥

अल्पबहुत्व-इस अधिकारमें अनन्तरोपनिधा और परंपरोपनिधा ये दो अनुयोगद्वार होते हैं ॥ २५५ ॥

अनन्तगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिमें अनन्तर अधस्तन स्थानको देखते हुए अवस्थित स्थानोंकी जो अल्पबहुत्व-प्ररूपणा है वह अनन्तरोपनिधा कहलाती है। जघन्य स्थानकी अपेक्षा करके अनन्तवें भागसे अधिक इत्यादि स्वरूपसे स्थित स्थानोंकी जो अल्पबहुत्वप्ररूपणा है वह परम्परोपनिधा है। इस प्रकार यहाँ दो प्रकारका ही अल्पबहुत्व होता है, क्योंकि, तृतीय अल्पबहुत्वभंगकी यहाँ सम्भावना नहीं है ।

उनमें अनन्तरोपनिधासे अनन्तगुणवृद्धिस्थान सबसे स्तोक हैं ॥ २५६ ॥

यद्यपि यह अल्पबहुत्व सब स्थानोंका आश्रय करके स्थित है तो भी अव्युत्पन्न जनको व्युत्पन्न करानेके लिये एक षट्स्थानका आश्रय करके अल्पबहुत्वप्ररूपणा की जा रही है । चूंकि एक षट्स्थानमें अनन्तगुणवृद्धिस्थान एक ही है, अतएव 'सबसे स्तोक' ऐसा कहा गया है ।

उनसे असंख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २५७ ॥

यहाँ गुणकार एक काण्डकमात्र है, क्योंकि एक षट्स्थानके भीतर काण्डक प्रमाण ही असंख्यातगुणवृद्धियाँ पायी जाती हैं ।

उनसे संख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २५८ ॥

---

* १ प्रतिषु ' वड्ढिट्ठाणाण ' इति पाठः

एत्थ गुणगारो रूवाहियकंडयं । कुदो ? कंडयमेत्तछाकाणि गंतूण एगसत्तंकुप्पत्तीदो । जदि कंडयमेत्ताणि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि गंतूण एगमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि तो एगं चेव कंडयं गुणगारो होदि, ण रूवाहियकंडयं; एगछट्ठाणम्मि कंडयमेत्ताणं चेव असंखेज्जगुणवड्ढीणमुवलंभादो ? ण एस दोसो, कंडयमेत्ताणि असंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि उप्पज्जिय अण्णेगमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं होहिदि त्ति अहोदूण जेण पढमछट्ठाणं दुवं तेण अण्णेगासंखेज्जगुणवड्ढीए अभावे वि तदो हेट्ठिमकंडयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढीयो लब्भंति । तेण रूवाहियकंडयं गुणगारो । एवं कारणं उवरि सव्वत्थ वत्तव्वं । एत्थ एवेसिमाणयणविहाणं उच्चदे- एगअसंखेज्जगुणवड्ढीए जदि कंडयमेत्ताओ संखेज्जगुणवड्ढीयो लब्भंति तो रूवाहियकंडयमेत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगछट्ठाणब्भंतरसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि उप्पज्जंति । एवेसु कंडयमेत्तअसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेहि ओवट्टिदेसु रूवाहियकंडयमेत्त गुणगारो होदि ।

संखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥२५९॥

को गुणगारो ? रूवाहियकंडयं । तं जहा-रूवाहियकंडयगुणिदकंडयमेत्त*संखेज्जगुणवड्ढीसु । ४ । ५ । रूवाहियकंडएण गुणिदासु एगछट्ठाणब्भंतरसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि

यहां गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है, क्योंकि, काण्डक प्रमाण छह अंक जाकर एक सात अंक उत्पन्न होता है ।

शंका--काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धिस्थान जाकर एक असंख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है तो एक ही काण्डक गुणकार होता है, न कि एक अंकसे अधिक काण्डक क्योंकि, एक षट्स्थानमें काण्डक प्रमाण ही असंख्यातगुणवृद्धियां पायी जाती हैं ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होकर अन्य एक असंख्यातगुणवृद्धिस्थान होगा, ऐसा न होकर चूंकि प्रथम षट्स्थान स्थित है अतएव अन्य एक असंख्यातगुणवृद्धिका अभाव होनेपर भी उससे नीचेके काण्डक प्रमाण संख्यात गुणवृद्धियां पायी जाती हैं । इस कारण एक अंकसे अधिक काण्डक गुणकार होता है । यह कारण आगे सब जगह बतलाना चाहिये ।

यहां इनके लानेकी विधि बतलाते हैं -एक असंख्यातगुणवृद्धिके यदि काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियां पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियोंके वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक षट्स्थानके भीतर संख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होते हैं । इनको काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके द्वारा अपवर्तित करनेपर एक अधिक काण्डक प्रमाण गुणकार होता है ।

उनसे संख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २५९ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है । वह इस प्रकारसे--एक अधिक काण्डकसे गुणित काण्डक (४×५) प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियोंको एक अधिक काण्डकके

---

* अ-आप्रत्योः 'मत्ते', ताप्रतौ 'मेत्ते (त्त)'।

होंति । ४ । ५ । ५ । । एदेसु संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेहि ओवट्टिदेसु रूवाहियकंडयं गुणगारो लब्भदे ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६० ॥

एत्थ वि गुणगारो रूवाहियकंडयं । कुदो ? संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि ठविय रूवाहियकंडएण गुणिदे एगछट्ठाणब्भंतरे असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि समुप्पज्जंति । ४ । ५ । ५ । ५ ।, हेट्ठिमरासिणा तेसु ओवट्टिदेसु㊥ गुणगारुप्पत्तीदो ।

अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६१ ॥

एत्थ वि गुणगारो रूवाहियकंडयं । कुदो ? रूवाहियकंडएण असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु गुणिदेसु एगछट्ठाणब्भंतरे अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणमुप्पत्तीदो । ४ । ५ । ५ । ५ । । एवाणि एगछट्ठाणब्भंतरअणंतगुणवड्ढि । । असंखेज्जगुणवड्ढि । ४ । संखेज्जगुणवड्ढि । ४ । ५ ✕ । संखेज्जभागवड्ढि । ४ । ५ । ५ । असंखेज्जभागवड्ढि । ४ । ५ । ५ । ५ । अणंतभागवड्ढि । ४ । ५ । ५ । ५ । ५ । ट्ठाणाणि ट्ठविय एगछट्ठाणब्भंतरे जदि एत्तियाणि अप्पिदट्ठाणाणि लब्भंति तो असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सव्वछट्ठाणाणमणंतगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-

द्वारा गुणित (४×५×५) करनेपर एक षट्स्थानके भीतर संख्यातभागवृद्धिस्थान हैं । इनको संख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके द्वारा अपवर्तित करनेपर एक अंकसे अधिक काण्डक गुणकार पाया जाता है ।

उनसे असंख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६० ॥

यहाँपर भी गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है, क्योंकि, संख्यातभागवृद्धिस्थानोंको स्थापित कर एक अधिक काण्डकसे गुणित करनेपर एक षट्स्थानके भीतर असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होते हैं- ४×५×५×५, क्योंकि, उनको अवस्तन राशिसे अपवर्तित करनेपर गुणकार उत्पन्न होता है ।

उनसे अनन्त भागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६१ ॥

यहांपर भी गुणकार एक अधिक काण्डक है, क्योंकि, एक अधिक काण्डकसे असंख्यातभागवृद्धिस्थानोंको गुणित करनेपर एक षट्स्थानके भीतर अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होते हैं ४×५×५×५×५ । एक षट्स्थानके भीतर इन अनन्तगुणवृद्धिस्थानों (१) असंख्यातगुणवृद्धिस्थानों (४) संख्यातगुणवृद्धिस्थानों (४×५), संख्यातभागवृद्धिस्थानों (४×५×५), असंख्यातभागवृद्धिस्थानों (४×५×५×५), और अनन्तभागवृद्धिस्थानों (४×५×५×५×५) को स्थापित कर एक षट्स्थानके भीतर यदि इतने विवक्षित स्थान पाये जाते हैं तो असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके वे कितने पाये जावेंगे, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर समस्त षट्स्थानोंकी अनन्तगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि संख्यातभागवृद्धि-

㊥ प्रतिषु ' वड्ढिसु ' इति पाठः । ✕ प्रतिषु । ४ । ४ । इति पाठः ।

संखेज्जगुणवड्ढि---संखेज्जभागवड्ढि---असंखेज्जभागवड्ढि---अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि होंति । जहा एगछट्ठाणस्स अप्पाबहुगं भणिदं तहा णाणाछट्ठाणाणं पि वत्तव्वं, गुणगारं पडि भेदाभावादो । एवमणंतरोवणिधाअप्पाबहुगं समत्तं ।

परंपरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि।२६२।

कुदो ? एगकंडयपमाणत्तादो ।

असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६३ ॥

एत्थ गुणगारो रूवाहियकंडयं । तं जहा- एगरूवंककंडयादो उवरि जदि रूवाहियकंडयमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्ढीयो लब्भंति तो कंडयमेत्ताणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि आगच्छंति । पुणो हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिमोवट्टिय साहेयव्वो ।

संखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ॥ २६४ ॥

कुदो? पढमपंचकस्स हेट्ठिमसव्वद्धाणमेगं कादूण तस्सरिसेसु उक्कस्सं संखेज्जं छप्पण्णखंडाणि कादूण तत्थ इगिदालखंडमेत्तसंखेज्जभागवड्ढिअद्धाणेसु गदेसु जेण दुगुणवड्ढी उप्पज्जदि तेण दुगुणवड्ढीदो हेट्ठिमअणंतभाग-असंखेज्जभागवड्ढिअद्धाणादो उवरिमसव्वद्धाणं संखेज्जभागवड्ढीए विसओ होदि । तेणेगमद्धाणं ठविय

असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिके स्थान होते हैं । जिस प्रकार एक षट्स्थानके अल्पबहुत्वका कथन किया गया है उसी प्रकारसे नाना षट्स्थानोंके भी अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये, क्योंकि, गुणकारके प्रति कोई भेद नहीं है । इस प्रकार अनन्तरोपनिधाअल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

परंपरोपनिधामें अनन्तभागवृद्धिस्थान सबसे स्तोक हैं ॥ २६२ ॥

कारण कि वे एक काण्डकके बराबर हैं ।

उनसे असंख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६३ ॥

यहां गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है । वह इस प्रकारसे- एक ऊर्वक काण्डकसे आगे यदि एक अंकसे अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियां पायी जाती हैं तो काण्डक प्रमाण उनके कितनी असंख्यात भागवृद्धियां पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित अपवर्तित करनेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान आते हैं । पश्चात् अधस्तन राशिसे उपरिम राशिको अपवर्तित करके गुणकारको सिद्ध करना चाहिये ।

उनसे संख्यातभागवृद्धिस्थान संख्यातगुणे हैं ॥ २६४ ॥

कारण यह कि प्रथम पंचकके नीचेके सब अध्वानको एक करके उत्कृष्ट संख्यातके छप्पन खण्ड करके उनमेंसे उसके सदृश इकतालीस खण्ड प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके बीतनेपर चूंकि दुगुणवृद्धि उत्पन्न होती है अतएव दुगुणवृद्धिसे नीचेका तथा अधस्तन अनन्तभागवृद्धि व असंख्यातभागवृद्धिके अध्वानसे ऊपरका सब अध्वान संख्यातभागवृद्धिका विषय होता है । इसलिये

इगिदालखंडेसु एगरूवमवणिय सेससव्वखंडेहि गुणिदे संखेज्जभागवड्ढिविसओ होदि एदम्मि हेट्ठिमरासिणा भागे हिदे लद्धसंखेज्जरूवाणि गुणगारो होदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ॥ २६५ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जरूवाणि । तं जहा- जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तदुगुणवड्ढिअद्धाणेसु गदेसु पढमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि । दुगुणवड्ढिअद्धाणाणि च सव्वाणि सरिसाणि त्ति एगं गुणहाणिअद्धाणं ठविय जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणेहि रूवूणेहि गुणिदे संखेज्जगुणवड्ढिअद्धाणं होदि । तम्हि संखेज्जभागवड्ढिअद्धाणेण भागे हिदे गुणगारो होदि ।

असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६६ ॥

एत्थ गुणगारो अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । कुदो ? अणंतरोवणिधाए जा संखेज्जभागवड्ढी तिस्से असंखेज्जे भागे संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि विसयं सव्वमवरुंधिय ट्ठिदत्तादो ।

अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६७ ॥

एत्थ गुणगारो असंखेज्जलोगा । कुदो ? पढमअट्ठंकप्पहुडि उवरिमअसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणवड्ढिसव्वाणुभागबंधट्ठाणाणं जहण्णट्ठाणादो अणंतगुणत्तुवलंभा । एवम-

---

एक अध्वानको स्थापित करके इकतालीस खण्डोंमेंसे एक अंक कम करके शेष सब खण्डोंके द्वारा गुणित करनेपर संख्यातभागवृद्धिका विषय होता है । इसमें अधस्तन राशिका भाग देने पर प्राप्त हुए संख्यात अंक गुणकार होते हैं ।

उनसे संख्यातगुणवृद्धिस्थान संख्यातगुणे हैं ॥ २६५ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात अंक हैं । यथा-जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेद प्रमाण दुगुणवृद्धिस्थानोंके बीतनेपर प्रथम संख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । दुगुणवृद्धिस्थान चूंकि सब सदृश हैं, अतएव एक गुणहानि अध्वानको स्थापित कर जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंसे गुणित करनेपर संख्यातगुणवृद्धि अध्वान होता है । उनमें संख्यातभागवृद्धि-अध्वानका भाग देनेपर गुणकारका प्रमाण होता है ।

उनसे असंख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६६ ॥

यहाँ गुणकार अंगुलका असंख्यातवां भाग है, क्योंकि, अनन्तरोपनिधामें जो संख्यात-भागवृद्धि है उसके असंख्यातवें भागमें संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धिके सब विषयका अवरोध करके स्थित है ।

उनसे अनन्तगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६७ ॥

यहां गुणकार असंख्यात लोक हैं, क्योंकि, प्रथम अष्टांकसे लेकर आगेके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें अवस्थित समस्त अनुभागबंधस्थान जघन्य स्थानसे अनन्तगुणे पाये जाते हैं ।

पाबहुगे समत्ते अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदाणं अणुभागसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो । पुव्वं परूविदबंधट्ठाणाणं एण्हिं भण्णमाणसंतकम्मट्ठाणाणं च को विसेसो ? उच्चदे–बंधेण जाणि णिप्फज्जंति ठाणाणि ताणि बंधट्ठाणाणि । अणुभागसंते घादिज्जमाणे जाणि णिप्फज्जंति ट्ठाणाणि ताणि वि काणि वि बंधट्ठाणाणि चेव भण्णंति, बज्झमाणाणुभागट्ठाणेण समाणत्तादो । जाणि पुण अणुभागट्ठाणाणि घादादो चेव उप्पज्जंति, ण बंधादो, ताणि अणुभागसंतकम्मट्ठाणाणि भण्णंति । तेसिं चेव हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि त्ति विदिया सण्णा । बंधट्ठाणपरूवणं मोत्तूण पढमं हदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणा किण्ण कदा ? ण, बंधादो उप्पज्जमाणाणं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं अणवगयबंधट्ठाणस्स अंतेवासिस्स पण्णवणोवायाभावादो ।

संपहि सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णाणुभागट्ठाणप्पहुडि जाव पज्जवसाणअणुभागट्ठाणे त्ति ताव एदाणि असंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि एगसेडिआगारेण रचेदूण पुणो एदेसिं बंधट्ठाणाणं घादकारणाणं असंखेज्जलोगमेत्तज्झवसाणट्ठाणाणं जहण्णपरिणामट्ठाणमादिं कादूण जाव उक्कस्सज्झवसाणट्ठाणपज्जवसाणाणमेगसेडिआगारेण वामपा-

---

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अब इस सूत्रसे सूचित अनुभागसत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं ।

शंका–– पहिले कहे गये बन्धस्थानोंमें और इस समय कहे जानेवाले सत्त्वस्थानोंमें क्या भेद ?

समाधान––इस शंकाका उत्तर कहते हैं । बन्धसे जो स्थान उत्पन्न होते हैं वे बन्धस्थान कहे जाते हैं । अनुभागसत्त्वके घाते जानेपर जो स्थान उत्पन्न होते हैं उनमेंसे कुछ तो बन्धस्थान ही कहे जाते हैं, क्योंकि, वे बांधे जानेवाले अनुभागस्थानके समान हैं । परन्तु जो अनुभागस्थान घातसे ही उत्पन्न होते हैं, बन्धसे उत्पन्न नहीं होते हैं; वे अनुभागसत्त्वस्थान कहे जाते हैं । उनकी ही हतसमुत्पत्तिकस्थान यह दूसरी संज्ञा है । See पृ 999, 99

शंका––बन्धस्थान प्ररूपणाको छोड़कर पहिले हतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान––नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर जो शिष्य बन्धस्थानोंके ज्ञानसे रहित है उसको बन्धसे उत्पन्न होनेवाले हतसमुत्पत्तिकस्थानोंका ज्ञान करानेके लिये कोई उपाय नहीं रहता ।

अब सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य अनुभागस्थानसे लेकर पर्यवसान अनुभागस्थान तक इन असंख्यात लोक मात्र बन्धसमुत्पत्तिकस्थानोंको एक पंक्तिके आकारसे रचकर फिर इन बन्धस्थानोंके घातके कारणभूत असंख्यात लोक मात्र अध्यवसानस्थानोंमें जघन्यपरिणामस्थानसे लेकर उत्कृष्ट अध्यवसानस्थान पर्यन्त स्थानोंको एक पंक्तिके आकारसे वाम पार्श्वभागमें

Ⓐ अ-आप्रत्योः 'एण्हं' इति पाठः । ✿ आप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम् ।

सेण रचणं कादूण तदो घादट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा-एगेण जीवेण सव्वुक्कस्सेण घादपरिणामट्ठाणेण परिणमिय चरिमाणुभागबंधट्ठाणे घादिदे चरिमअणंतगुणवड्ढिट्ठाणादो हेट्ठा अणंतगुणहीणं होदूण तदणंतरहेट्ठिमउव्वंकादो अणंतगुणं होदूण दोण्णं पि विच्चाले अण्णं हदसमुप्पत्तियट्ठाणं उप्पज्जदि। एदेण उक्कस्सविसोहिट्ठाणेण घादिज्जमाणचरिमाणुभागबंधट्ठाणं किं सव्वकालमट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले चेव पददि आहो कया वि बंधट्ठाणसमाणं होदूण पददि त्ति ? अट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले चेव पददि, घादपरिणामेहिंतो उप्पज्जमाणस्स ट्ठाणस्स बंधट्ठाणसमाणत्तविरोहादो। जदि घादिज्जमाणमणुभागट्ठाणं णियमेण बंधट्ठाणसमाणं ण होदि तो एइंदिएसु सगुक्कस्सबंधादो उवरि लब्भमाणअसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणघादे संतकम्मट्ठाणाणि चेव उप्पज्जेज्ज। ण च एवं, अणुभागस्स अणंतगुणहाणिं मोत्तूण सेसहाणीणं तत्थाभावप्पसंगादो। जदि एवं तो कधहि एवं घेत्तव्वं। घादपरिणामा दुविहा-संतकम्मट्ठाणणिबंधणा बंधट्ठाणणिबंधणा चेदि। तत्थ जे संतकम्मट्ठाणणिबंधणा परिणामा तेहिंतो◆ अट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले संतकम्मट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति, तत्थ अणंतगुणहाणिं मोत्तूण अण्णहाणीणमभावादो। जे बंधट्ठाणणिबंधणा परिणामा तेहिंतो छव्विहाए हाणीए बंधट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति, ण संत-

Aradhak :- Acharya Shri Suvidhisagarji Maharaj

रचकर पश्चात् घातस्थानोंकी प्ररूपणा करते है। वह इस प्रकार है-एक जीवके द्वारा सर्वोत्कृष्ट घातपरिणामस्थानसे परिणत होकर अन्तिम अनुभागबन्धस्थानके घाते जानेपर अन्तिम अनन्तगुणवृद्धिस्थानसे नीचे अनन्तगुण हीन होकर तदनंतर अधस्तन ऊर्वकसे अनन्तगुण होकर दोनोंके बीचमें अन्य हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है।

शंका--इस उत्कृष्ट विशुद्धिस्थानके द्वारा घाता जानेवाला अन्तिम अनुभागबन्धस्थान क्या सर्वदा अष्टांक और ऊर्वकके बीचमें ही पड़ता है या कदाचित् बन्धस्थानके समान होकर पड़ता है?

समाधान--वह अष्टांक और ऊर्वकके बीचमें ही पड़ता है, क्योंकि, घातपरिणामोंसे उत्पन्न होनेवाले स्थानके बन्धस्थानके समान होनेका विरोध है।

शंका--यदि घाता जानेवाला अनुभागस्थान नियमसे बन्धस्थानके समान नहीं होता है तो एकेन्द्रियोंमें अपने उत्कृष्ट बन्धसे ऊपर पाये जानेवाले असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंका घात होनेपर सत्त्वस्थान ही उत्पन्न होने चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि वैसा होनेपर अनुभागकी अनन्तगुणहानिको छोड़कर शेष हानियोंके वहां अभावका प्रसंग आता है।

समाधान--यदि ऐसा है तो ऐसा ग्रहण करना चाहिए कि घातपरिणाम दो प्रकारके हैं-सत्कर्मस्थाननिबन्धन घातपरिणाम और बन्धस्थाननिबन्धन घातपरिणाम। उनमें जो सत्कर्मस्थान निबन्धन परिणाम हैं उनसे अष्टांक और ऊर्वकके बीचमें सत्कर्मस्थान ही उत्पन्न होते हैं, क्योंकि, वहां अनन्तगुणहानिको छोड़कर अन्य हानियोंका अभाव है। जो बन्धस्थाननिबन्धन परिणाम हैं उनसे छह प्रकारकी हानि द्वारा बन्धस्थान ही उत्पन्न होते हैं, न कि सत्कर्मस्थान; क्योंकि. ऐसा

◆ अप्रतौ ' णिबंधणा परिणामेहिंतो ' इति पाठः।

कम्मट्ठाणाणि । कुदो ? साभावियादो । तेण एदेहिंतो घादट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति, ण बंधट्ठाणाणि त्ति सिद्धं ।

संतट्ठाणाणि त्ति अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले चेव होंति, चत्तारि-पंच-छ-सत्तंकाणं विच्चालेसु ण होंति त्ति कधं णव्वदे ? उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगं बंधट्ठाणं तं चेव संतकम्मट्ठाणं । दुचरिमे अणुभागबंधट्ठाणे एवमेव । एवं पच्छाणुपुव्वीए णेयव्वं जाव पढमअणंतगुणहीणं बंधट्ठाणमपत्तं त्ति । पुव्वाणुपुव्वीए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुण बंधट्ठाणं तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणं । एदम्हि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि एदम्हादो पाहुडसुत्तादो । चरिममुव्वंकं घादयमाणो किमट्ठंकपढमफद्दयादो हेट्ठा अणंतगुणहीणं करेदि आहो ण करेदि त्ति ? अणंतगुणहीणं करेदि । कुदो णव्वदे ? आइरियोवदेसादो । कंडय-घादेण अणुभागे घादिदे वि सरिसा पदेसरचणा किण्ण जायदे ? होदु णाम, इच्छि-ज्जमाणत्तादो । ण च विसरिसेसु भागहारेसु सरिसविहज्जमाणरासीदो लब्भमाणफलस्स

स्वभाव है। इसलिये इनसे घातस्थान ही उत्पन्न होते हैं, बन्धस्थान नहीं उत्पन्न होते; यह सिद्ध है।

शंका –सत्त्वस्थान अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें ही होते हैं, चतुरंक, पंचांक, षडंक और सप्तांकके बीचमें नहीं होते हैं; यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान–वह "उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानमें एक बन्धस्थान है। वही सत्कर्मस्थान है। द्विचरम अनुभागबन्धस्थानमें इसी प्रकार क्रम है। इसी प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे तब तक ले जाना चाहिये जब तक कि प्रथम अनन्तगुणहीन बन्धस्थान प्राप्त नहीं होता। पूर्वानुपूर्वीसे गणना करनेपर जो अन्तिम अनन्तगुण बन्धस्थान है उसके नीचे अनन्तर अनन्तगुण हीन है। इस बीचमें असंख्यात लोक प्रमाण घातस्थान हैं। वे ही सत्कर्मस्थान हैं।" इस प्राभृतसूत्रसे जाना जाता है।

शंका––अन्तिम ऊर्वंकको घातनेवाला जीव क्या अष्टांकके प्रथम स्पर्द्धकसे नीचे अनन्तगुणहीन करता है या नहीं करता है ?

समाधान––वह अनन्तगुणहीन करता है।

शंका––वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान––वह आचार्यके उपदेशसे जाना जाता है।

शंका––काण्डकघातसे अनुभागको घातनेपर भी समान प्रदेशरचना क्यों नहीं होती है ?

समाधान––यदि वह समान होती है तो हो, क्योंकि, हमें वह अभीष्ट है। किन्तु विसदृश भागहारोंमें सदृश विभज्यमान राशिसे प्राप्त होनेवाले फलकी सदृशता घटित नहीं है, क्योंकि,

---

आप्रतौ ' संतकम्माणि ' इति पाठः। उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगं संतकम्मं । तमेगं संतक-म्मट्ठाणं । दुचरिमे एसमेव । एवं ताव जाव पच्छाणुपुव्वीए पढममणंतगुणहीणबंधट्ठाणमपत्तं ति । ...तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणम्मि एदम्मि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि । ...ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि इति पाठः।

सरिसत्तं घडदे, विरोहादो । किं च बज्झमाणसमए चेव पदेसरचणाए विसे हीणकमेण अवट्ठाणणियमो, ण सव्वकालं, ओकड्डुक्कड्डणाहि विसोहि✿--संकिलेसवसेण वड्ढमाणहीयमाणपदेसाणं णिसित्तसरूवेण㊥ अवट्ठाणाभावादो ।

संपहि एदं♠ हदसमुप्पत्तियट्ठाणं एत्थ सव्वजहण्णं, उक्कस्सविसोहीए㊊सव्वुक्कस्सविसेसपच्चयसहिदाए घादिदत्तादो । पुणो अण्णेग✿ जीवेण दुचरिमविसोहिट्ठाणेण उवरिमउव्वंके घादिदे अट्ठंकुव्वंकाणं दोण्णं पि विच्चाले पुव्वुप्पण्णट्ठाणस्सुवरि अणंतभागब्भहियं होदूण विदियं हदसमुप्पत्तियट्ठाणं उप्पज्जदि । एत्थ जहण्णट्ठाणे केण भागहारेण भागे हिदे वड्ढिपक्खेवो आगच्छदि ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणेण सिद्धाणमणंतभागेण भागहारेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे पक्खेवो आगच्छदि । जहण्णट्ठाणं पडिरासिय तम्हि पक्खित्ते विदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि । संपहि एत्थ सव्वजीवरासिभागहारं मोत्तूण सिद्धाणमणंतिमभागे भागहारे कीरमाणे "अणंतभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ? सव्वजीवेहि ।" इच्चेदेण सुत्तेण✽ कधं ण विरुज्झदे ? ण एस दोसो, बंधट्ठाणाणि अस्सिदूण तं सुत्तं परूविदं । ण संतट्ठाणाणि, बंध-संतट्ठाणाणमेगत्ताभावादो । बंधवड्ढिकमेण एत्थ

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उसमें विरोध है । दूसरे, बन्ध होनेके समयमें ही प्रदेशरचनाके विशेष हीनक्रमसे रहनेका नियम है, न कि सर्वदा; क्योंकि, विशुद्ध व संक्लेशके वश होकर अपकर्षण व उत्कर्षण द्वारा बढ़ने व घटनेवाले प्रदेशोंके निषिक्त स्वरूपसे रहनेका अभाव है ।

अब यह हतसमुत्पत्तिकस्थान यहां सबसे जघन्य है, क्योंकि, सर्वोत्कृष्ट विशेष प्रत्ययोंसे सहित उत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा वह घातको प्राप्त हुआ है । फिर अन्य एक जीवके द्वारा द्विचरम विशुद्धिस्थानसे उपरिम ऊर्वकके घातनेपर अष्टांक और ऊर्वक दोनोंके ही बीचमें पूर्वोत्पन्न स्थानके आगे अनन्तवें भागसे अधिक होकर दूसरा हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है ।

शंका--यहां जघन्य स्थानमें किस भागहारका भाग देनेपर वृद्धिप्रक्षेप आता है ?

समाधान--अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र भागहारका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर प्रक्षेपका प्रमाण आता है । जघन्यस्थानको प्रतिराशि करके उसमें उसे मिलानेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है ।

शंका--अब यहां सब जीवराशि भागहारको छोड़कर सिद्धोंके अनन्तवें भागको भागहार करनेपर "अनन्तभागवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा होती है ? वह सब जीवोंके द्वारा होती है ।" इस सूत्रके साथ क्यों न विरोध आवेगा ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उस सूत्रकी प्ररूपणा बन्धस्थानोंका आश्रय करके की गई है, सत्त्वस्थानोंका आश्रय करके नहीं की गई है । कारण कि बन्धस्थान और सत्त्वस्थानका एक होना सम्भव नहीं है ।

✿ प्रतिषु 'विहि' इति पाठः । ㊥ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु 'परूवेण' इति पाठः । ♠प्रतिषु 'एवं' इति पाठः । ㊊ ताप्रतौ 'एत्थ सव्वजहण्णुक्कस्स-' इति पाठः । ✿ अ-आप्रत्योः 'अणेण' इति पाठः । ✽ भावविधान २०४ इति पाठः ।

इच्छिज्जमाणे को दोसो ? ण, सव्वजीवरासिणा संतट्ठाणे गुणिदे अट्ठंकादो अणंतगुणं होदूण संतट्ठाणस्सुप्पत्तिप्पसंगादो । ण चाट्ठंकादो उवरि संतट्ठाणाणं संभवो, सव्वेसिं संतट्ठाणाणमट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले चेव उप्पत्ती होदि त्ति गुरूवदेसादो । संतट्ठाणेसु विरोहदंसणादो सव्वजीवरासिगुणगारो मा होदू णाम, सेसगुणगार-भागहारा बंधट्ठाणसमाणा किण्ण होंति, विरोहाभावादो ? ते चेव[1] होंतु णाम जदि विरोधो णत्थि । एत्थ पुण ते ण होंति, विरोहुवलंभादो । एत्थ पुण केण विरोहो ? गुरूवदेसेण । केरिसो एत्थ गुरूवदेसो ? संतकम्मट्ठाणेसु अणंतभागवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं भागहार-गुणगारा अभवसिद्धिएहि अणंतगुणा सिद्धाणमणंतभागमेत्ता त्ति । अण्णासु वड्ढि हाणीसु बंधट्ठाणसमाणत्तं होदु णाम, पडिसेहाभावादो ।

पुणो अण्णेण जीवेण तिचरिमअज्झवसाणपरिणदेण तम्हि चेव चरिमउव्वंके घादिदे तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । एगादो चरिमुव्वंकट्ठाणादो कधमणेगाणं

शंका--बन्धवृद्धिके क्रमसे यहां स्वीकार करनेपर क्या दोष है ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर सर्व जीवराशिके द्वारा सत्त्वस्थानको गुणित करनेपर अष्टांकसे अनन्तगुणा होकर सत्त्वस्थानकी उत्पत्तिका प्रसंग आता है । परन्तु अष्टांकसे ऊपर सत्त्वस्थान सम्भव नहीं हैं, क्योंकि, समस्त सत्त्वस्थानोंकी उत्पत्ति अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें ही होती है, ऐसा गुरुका उपदेश है ।

शंका--सत्त्वस्थानोंमें विरोधके देखे जानेसे सब जीवराशि गुणकार न होवे, किन्तु शेष गुणकार और भागहार बन्धस्थान समान क्यों नहीं होते; क्योंकि, उसमें कोई विरोध नहीं है ?

समाधान--वे वहां भले ही वैसे हों जहां कि विरोधकी सम्भावना न हो । परन्तु यहां वे वैसे नहीं होते हैं, क्योंकि, विरोध पाया जाता है ।

शंका--परन्तु यहांपर किसके साथ विरोध आता है ?

समाधान--गुरुके उपदेशके साथ विरोध आता है ?

शंका--यहां गुरुका उपदेश कैसा है ?

समाधान--सत्कर्मस्थानोंमें अनन्तभागवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धिका भागहार और गुणकार दोनों अभव्य जीवोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग प्रमाण होते हैं, ऐसा गुरुका उपदेश है । अन्य वृद्धियों और हानियोंमें वे भले ही बन्धस्थानके समान हों, क्योंकि इसका वहां प्रतिषेध नहीं है ।

पुनः त्रिचरम अध्यवसानस्थानसे परिणत हुए अन्य जीवके द्वारा उसी अन्तिम उर्वंकका घात किये जानेपर तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है ।

शंका--एक अन्तिम ऊर्वंकस्थानसे अनेक सत्त्वस्थानोंकी उत्पत्ति कैसे सम्भव है ?

---

[1] अ-ताप्रत्योः ' च्चेव ' इति पाठः ।

संतट्ठाणाणं उप्पत्ती ? ण, घादकारणपरिणामभेदेण घादिदसेसाणुभागस्स वि भेदगमणं पडि विरोहाभावादो । घादपरिणामेसु जहा अणंतगुणवड्ढि-अणंतभागवड्ढीणं सव्वजीवरासी चेव गुणगारो भागहारो च जादो तहा संतकम्मट्ठाणेसु घादिदपरिणामाणुसारेण छव्वड्ढिमुवगएसु सव्वजीवरासी चेव गुणगारो भागहारो च किण्ण पसज्जदे ? ण, संतकम्मट्ठाणुप्पत्तिणिमित्तघादपरिणामाणमणंतगुणभागवड्ढीसु सिद्धाणमणंतभागमेत्तभागहार-गुणगारे* मोत्तूण सव्वजीवरासिभागहार-गुणगाराणं तत्थाभावादो । बंधट्ठाणागारेण जे घादणिमित्ता परिणामा तेसिमणंतभागवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीयो सव्वजीवरासिभागहार-गुणगारेहि वड्ढंति । तेहि घादिदसेसाणुभागट्ठाणं पि कारणाणुरूवेण चिट्ठदि त्ति घेत्तव्वं ।

पुणो अण्णेण चदुचरिमअज्झवसाणट्ठाणपरिणदेण चरिमउव्वंके घादिदे चउत्थमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि । एवं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जलोगछट्ठाण(?) परिणाममेत्ताणि कमेण छव्विहाए वड्ढीए उप्पादेदव्वाणि जाव सव्वजहण्णविसोहिट्ठाणेण पज्जवसाणउव्वंकं घादिय उप्पाइयउक्कस्साणुभागट्ठाणे त्ति । संपहि बंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणं चरिमउव्वंकमस्सिदूण चरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

समाधान-- नहीं, क्योंकि घातके कारणभूत परिणामोंके भिन्न होनेसे घातनेसे शेष अनुभागके भिन्न होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका-- जिस प्रकार घातपरिणामोंमें अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिका गुणकार व भागहार सब जीवराशि ही हुई है, उसी प्रकार घातित परिणामोंके अनुसार छह प्रकारकी वृद्धिको प्राप्त हुए सत्कर्मस्थानोंमें सब जीवराशि ही गुणकार और भागहार होनेका प्रसंग क्यों न होगा ?

समाधान नहीं क्योंकि सत्कर्मस्थानोंकी उत्पत्तिके निमित्तभूत घातपरिणामोंकी अनन्तगुणवृद्धि व अनन्तभागवृद्धिमें सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र भागहार और गुणकारको छोड़कर वहां सब जीवराशि भागहार व गुणकार होना सम्भव नहीं है । बन्धस्थानोंके आकारसे जो घातके निमित्तभूत परिणाम हैं उनकी अनन्तभागवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि सब जीवराशि रूप भागहार व गुणकारसे वृद्धिको प्राप्त होती हैं । उनके द्वारा घातनेसे शेष रहा अनुभागस्थान भी कारणके अनुरूप ही रहता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

पुनः चतुश्चरम अध्यवसानस्थान स्वरूपसे परिणत अन्य जीवके द्वारा अन्तिम ऊर्वकका घात किये जानेपर चतुर्थ अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है । इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके बराबर हतसमुत्पत्तिकस्थानोंको क्रमशः छह प्रकारकी वृद्धिके द्वारा तब तक उत्पन्न कराना चाहिये जब तक कि सर्वजघन्य विशुद्धिस्थानके द्वारा पर्यवसान ऊर्वकको घातकर उत्पन्न कराया गया उत्कृष्ट अनुभागस्थान प्राप्त नहीं होता ।

अब बन्धसमुत्पत्तिकस्थानोंके अन्तिम ऊर्वकका आश्रय करके अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके बीचमें हतसमुत्पत्तिकस्थान इतने मात्र ही होते हैं, अधिक नहीं होते, क्योंकि, कारणके

* प्रतिषु 'गुणगारेण' इति पाठः । (?) अत्रोः छट्ठाणमसंखेज्जलोगपरिणामः इति पाठः ।

एत्तियाणि चेव उप्पज्जंति, णाहियाणि, कारणेण विणा कज्जुप्पत्तिविरोहादो । संतकम्मट्ठाणाणं कारणं छव्विहवड्ढीए वड्ढिदघादपरिणामा । तेहिंतो परिणाममेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि उप्पज्जंति । अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीहि एगछट्ठाणं होदि । एरिसाणि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि । अण्णेगं रूवूणछट्ठाणं च जदि वि अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले उप्पण्णं तो वि अट्ठंकजहण्णफद्दयं ण पावेंति, संतकम्मट्ठाणे सव्वजीवरासिगुणगाराभावादो सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तगुणगारेसु असंखेज्जलोगमेत्तेसु संवग्गिदेसु वि सव्वजीवरासिपमाणाणुप्पत्तीदो । वड्ढिपक्खेवाणं पिसुलापिसुलादीणं[1] पिसुलाणं च पमाणाणयणे भागहारुप्पायणविहाणे वड्ढिपरिक्खाए च अविभागपडिच्छेदपरूवणाए ट्ठाणपरूवणाए कंडयपरूवणाए अंतरपरूवणाए ओज-जुम्मपरूवणाए छट्ठाणपरूवणाए हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए पज्जवसाणपरूवणाए अप्पाबहुवपरूवणाए च अणुभागबंधट्ठाणपरूवणाभंगो । णवरि सव्वत्थ सव्वजीवरासी भागहारो गुणगारो वा ण होदि त्ति अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो चेव गुणगारो भागहारो च होदि । के वि आइरिया संतट्ठाणाणं सव्वजीवरासी गुणगारो ण होदि, अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु चेव संतकम्मट्ठाणाणि होंति त्ति वक्खाणवयणेण सह विरोहादो । किं तु भागहारो सव्वजीवरासी चेव होदि, विरोहाभावादो त्ति भणंति । परिणामेसु वि एसो

विना कार्यकी उत्पत्तिका विरोध है । सत्त्वस्थानोंका कारण छह प्रकारकी वृद्धिके द्वारा वृद्धिगत घातपरिणाम हैं । उनसे परिणामोंके बराबर ही सत्त्वस्थान उत्पन्न होते हैं । अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि इनके द्वारा एक षट्स्थान होता है । ऐसे असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं । एक अंकसे हीन अन्य एक षट्स्थान यद्यपि अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें उत्पन्न हुआ है तो भी अष्टांक जघन्य स्पर्द्धकको नहीं पाते हैं, क्योंकि सत्कर्मस्थानमें सब जीवराशि गुणकार नहीं है । इसका भी कारण यह है कि असंख्यात लोकप्रमाण सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र गुणकारोंको संवर्गित करनेपर भी सब जीवराशिका प्रमाण नहीं पाया जाता है यहांपर अपने अपने वृद्धिप्रक्षेपों पिशुलापिशुलादिकों और पिशुलोंके प्रमाणके लानेमें, भागहारके उत्पादनविधानमें, और वृद्धिपरीक्षामें अविभागप्रतिच्छेद प्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, काण्डकप्ररूपणा, अंतरप्ररूपणा, ओज-युग्मप्ररूपणा, षट्स्थानप्ररूपणा, अधस्तनस्थानप्ररूपणा, पर्यवसानप्ररूपणा और अल्पबहुत्वप्ररूपणा ये सब अनुभागबन्धस्थानप्ररूपणाके समान हैं । विशेष इतना है कि सर्वत्र सब जीवराशि भागहार अथवा गुणकार नहीं होता है । किन्तु अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र ही गुणकार अथवा भागहार होता है ।

कितने ही आचार्य कहते हैं कि सत्त्वस्थानोंका गुणकार सब जीवराशि नहीं होता है, क्योंकि; वैसा होनेपर अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें ही सत्त्वस्थान होते हैं इस व्याख्यानके साथ विरोध आता है । किन्तु भागहार सब जीवराशि ही होता है, क्योंकि, उसमें कोई विरोध

---

[1] अ-ताप्रत्योः ' पिसुलापिसुलादीणं च ' इति पाठः ।

चेव कमो होदि, कारणाणुरूवकज्जुवलंभादो त्ति । तं जाणिय वत्तव्वं ।

पुणो चरिमपरिणामेण पज्जवसाणदुचरिमउव्वंके घादिदे हदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि । एवं ट्ठाणं सव्वजीवरासिणा रूवाहिएण उवरिमट्ठाणे खंडिदे तत्थ एगखंडेण हीणं होदि, समाणपरिणामेण घादिदत्तादो । पुणो दुचरिमपरिणामेण पज्जवसाणदुचरिमउव्वंके घादिदे पढमपरिवाडीए उप्पण्णहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणेण असरिसं होदूण विदियपरिवाडीए विदियं घादट्ठाणं उप्पज्जदि । एदेसिं दोण्णं ट्ठाणाणं असरिसत्तेण च णव्वदे* जहा संतकम्मट्ठाणेसु परिणामेसु च सव्वजीवरासी चेव भागहारो ण होदि त्ति । पुणो तिचरमादिपरिणामट्ठाणेहि दुचरिमउव्वंके घादिज्जमाणे परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि** होंति । एवं विदियपरिवाडी समत्ता ।

संपहि तदियपरिवाडी उच्चदे । तं जहा– चरिमपरिणामेणेव पज्जवसाणतिचरिमउव्वंके घादिदे विदियपरिवाडीए उप्पण्णहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा वामपासे अणंतभागहीणं होदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं उप्पज्जदि । पुणो तेणेव दुचरिमपरिणामेण तिचरिमे उव्वंके*** घादिदे अण्णं ट्ठाणमुप्पज्जदि । एवं परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्म-

---

नहीं है । परिणामोंके विषयमें भी यही क्रम है, क्योंकि, कारणके अनुसार ही कार्य पाया जाता है । उसका जान कर कथन करना चाहिये ।

पुनः अन्तिम परिणामके द्वारा पर्यवसान द्विचरम ऊर्वकके घाते जानेपर सर्वजघन्य हतसमुत्पत्तिकस्थानके नीचे अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है । यह स्थान एक अधिक सब जीवराशिके द्वारा उपरिम स्थानको खंडित करनेपर उसमें एक खंडसे हीन होता है, क्योंकि, वह समान परिणामके द्वारा घातको प्राप्त हुआ है । फिर द्विचरम परिणामके द्वारा पर्यवसान द्विचरम ऊर्वकके घाते जानेपर प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न हतसमुत्पत्तिक सर्वजघन्य स्थानसे असमान होकर द्वितीय परिपाटीसे द्वितीय घातस्थान उत्पन्न होता है । इन दोनों स्थानोंके विसदृश होनेसे जाना जाता है कि सत्कर्मस्थानोंमें और परिणामोंमें सब जीवराशि ही भागहार नहीं होता है । पश्चात् त्रिचरमादिक परिणामस्थानोंके द्वारा द्विचरम ऊर्वकके घाते जानेपर परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्त्वस्थान प्राप्त होते हैं । इस प्रकार द्वितीय परिपाटी समाप्त हुई ।

अब तृतीय परिपाटीकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है-अन्तिम परिणामके द्वारा ही पर्यवसान त्रिचरम ऊर्वकके घाते जानेपर द्वितीय परिपाटीसे उत्पन्न हतसमुत्पत्तिक सर्वजघन्य स्थानके नीचे वाम पार्श्वमें अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है । फिर उसी द्विचरम परिणामके द्वारा त्रिचरम ऊर्वकके घाते जानेपर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार तृतीय परिपाटीसे परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये।

---

* ताप्रतौ ' णज्जदे ' इति पाठः । ** अ-आप्रत्योः ' अट्ठाणि ' ; ताप्रतौ ' अ (ल) द्धाणि ' इति पाठः । *** अ-आप्रत्योः ' उव्वंको ' इति पाठः ।

ट्ठाणाणि तदियपरिवाडीए उप्पादेदव्वाणि । एवं तदियपरिवाडी गदा ।

संपहि चउत्थपरिवाडी उच्चदे । तं जहा–तेणेव चरिमपरिणामेण पज्जवसाणच-

जागृतिके :– आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

दुचरिमउव्वंके घादिदे तदियपरिवाडीए उप्पण्णहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि । एवमेत्थ वि परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि । एवं चउत्थपरिवाडी गदा ।

संपहि पंचमपरिवाडी उच्चदे । तं जहा–चरिमपरिणामेण पंचचरिमउव्वंके घादिदे चउत्थपरिवाडीए उप्पण्णजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णं ट्ठाणं उप्पज्जदि । एवं दुचरिमादिपरिणामेहि तं चेव ट्ठाणं घादिय पंचमपरिवाडीए ट्ठाणाणमुप्पत्ती वत्तव्वा । एवं सेसबंधट्ठाणाणि चरिमादिसव्वपरिणामेहि घादाविय ओदारेदव्वं जाव चरिमअट्ठंके त्ति । एवमोदारिदे ट्ठाणाणं विक्खंभो छट्ठाणमेत्तो आयामो पुण विसोहिट्ठाणमेत्तो होदूण चिट्ठदि । एवं उप्पण्णासेसट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि चेव, सरिसत्तस्स कारणाणुवलंभादो । पढमपंतीए पढमट्ठाणादो विदियपंतीए विदियट्ठाणं सरिसं त्ति णासंकणिज्जं ? पढमपंतिपढमट्ठाणं रूवाहियसव्व-जीवरासिणा खंडिय तत्थेगखंडेणूणविदियपंतिपढमट्ठाणमभवसिद्धिएहि अणंतगुण-सिद्धाणमणंतिमभागेण खंडिय तत्थेगखंडेणाहियस्स विदियपंतिविदियट्ठाणस्स

इस प्रकार तृतीय परिपाटी समाप्त हुई ।

अब चतुर्थ परिपाटीकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है–उसी अन्तिम परिणामके द्वारा पर्यवसान चतुश्चरम ऊर्वंकका घात होनेपर तृतीय परिपाटीसे उत्पन्न हतसमुत्पत्तिक सर्व-जघन्य स्थानके नीचे अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकारसे यहांपर भी परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये । इस प्रकार चतुर्थ परिपाटी समाप्त हुई ।

अब पांचवीं परिपाटीकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है–अन्तिम परिणामके द्वारा पंचचरम ऊर्वंकके घातनेपर चतुर्थ परिपाटीसे उत्पन्न जघन्य स्थानके नीचे अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । इसी प्रकार द्विचरमादिक परिणामोंके द्वारा उसी स्थानको घातकर पांचवीं परिपाटीसे स्थानोंकी उत्पत्तिका कथन करना चाहिए । इस प्रकार चरम आदि सब परिणामोंके द्वारा शेष बन्धस्थानोंका घात कराकर अन्तिम अष्टांक प्राप्त होने तक उतारना चाहिये । इस प्रकारसे उतारनेपर स्थानोंका विष्कम्भ षट्स्थान प्रमाण और आयाम विशुद्धि-स्थानोंके बराबर होकर स्थित होता है । इस प्रकारसे उत्पन्न हुए समस्त स्थान अपुनरुक्त ही होते हैं, क्योंकि, उनके समान होनेका कोई कारण नहीं पाया जाता है । प्रथम पंक्तिके प्रथम स्थानसे द्वितीय पंक्तिका द्वितीय स्थान सदृश है, ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, प्रथम पंक्तिके प्रथम स्थानको एक अधिक सब जीवराशिसे खण्डित कर उसमें एक खण्डसे हीन द्वितीय पंक्तिके प्रथम स्थानको अभव्योंसे अनन्तगुणे एवं सिद्धोंके अनन्तवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खंडसे

सरिसत्तविरोहादो। एवं सव्वपंतिविदियट्ठाणमसरिसत्तं परूवेदव्वं, समाणजाइत्तादो। एदेहिंतो सव्वपंतिसव्वट्ठाणमसरिसत्तं तक्कणिज्जं*।

संपहि दुचरिमअट्ठंकस्स हेट्ठा तदणंतरहेट्ठिमउव्वंकादो उवरि दोण्णं पि बंधट्ठाणाणं विच्चाले उप्पज्जमाणसंतट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा- एगेण जीवेण एगछट्ठाणेणूणउक्कस्साणुभागसंतकम्मिएण उक्कस्सपरिणामेण चरिमुव्वंके घादिदे दुचरिमअट्ठंकस्स हेट्ठा अणंतगुणहीणं तस्सेव हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणादो उवरि अणंतगुणं होदूण अण्णं हदसमुप्पत्तियट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो दुचरिमपरिणामट्ठाणेण तम्हि चेव चरिमउव्वंके घादिदे विदियमणंतभागवड्ढिघादट्ठाणं उप्पज्जदि। पुणो एत्थ वि पुव्वविहाणेण तिचरिमादिविसोहिट्ठाणेहि तं चेव चरिमउव्वंकं घादिय परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि। एवं चरिमबंधट्ठाणादो असंखेज्जलोगछट्ठाणमेत्ताणि रूवूणछट्ठाणसहिदट्ठाणाणि उप्पण्णाणि। पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं हेट्ठा परिणामट्ठाणमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पज्जंति। तं जहा - चरिमपरिणामेण दुचरिमबंधट्ठाणे घादिदे पुव्विल्लजहण्णट्ठाणादो हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णट्ठाणं उप्पज्जदि। पुणो दुचरिमपरिणामेण तम्हि चेव ट्ठाणे घादिदे अणंतभागब्भहियं होदूण अण्णं ट्ठाणमुप्पज्जदि। एवमणेण विहाणेण तिचरिमादिसव्वपरिणामट्ठाणेहि पुव्वं

मार्गदर्शक - आचार्य श्री सुविधिसागरजी महाराज

पंक्ति सम्बंधी द्वितीय स्थानके उसमे सदृश होनेका विरोध है। इस प्रकार सब पंक्तियों सम्बन्धी द्वितीय स्थानोंकी असमानताका कथन करना चाहिये, क्योंकि वे सब एक जातिके हैं। इनसे सब पंक्तियों सम्बन्धी स्थानोंकी असमानताकी तर्कणा (अनुभाग) करना चाहिये।

अब द्विचरम ऊर्वकके नीचे और तदनंतर अधस्तन अष्टांकके ऊपर दोनों ही बन्धस्थानोंके मध्यम उत्पन्न होनेवाले सत्त्वस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक षट्स्थानसे रहित उत्कृष्ट अनुभाग सत्कर्मवाले एक जीवके द्वारा उत्कृष्ट परिणामके बलसे अन्तिम ऊर्वकके घाते जानेपर द्विचरम अष्टांकके नीचे अनन्तगुण हीन और उसीके अधस्तन ऊर्वक स्थानसे ऊपर अनन्तगुणा होकर अन्य हतसमुत्पत्तिक स्थान उत्पन्न होता है। फिर द्विचरम परिणामस्थानके द्वारा उसी अन्तिम ऊर्वकके घाते जानेपर द्वितीय अनन्त भागवृद्धिघातस्थान उत्पन्न होता है। फिर यहाँपर भी पूर्व विधानसे त्रिचरम आदि विशुद्धिस्थानोंके द्वारा उसी अन्तिम ऊर्वकको घातकर परिणामस्थानोंके बराबर ही हतसमुत्पत्तिक स्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये। इस प्रकार अन्तिम बन्धस्थानके असंख्यातलोक षट्स्थानप्रमाण एक कम षट्स्थान सहित स्थान उत्पन्न होते हैं।

पुनः इन स्थानोंके नीचे परिणामस्थानोंके बराबर हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं। यथा— अन्तिम परिणामके द्वारा द्विचरम बन्धस्थानके घाते जानेपर पूर्व जघन्य स्थानसे नीचे अनन्तभाग हीन होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है। फिर द्विचरम परिणामके द्वारा उसी स्थानके घाते जानेपर अनन्तवें भागसे अधिक होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है। इस प्रकार इस विधिसे त्रिचरम

* अ-काप्रत्योः 'तक्कणेज्ज' इति पाठः.

णिरुद्धबंधट्ठाणे घादिज्जमाणे पुव्वुप्पण्णट्ठाणाणं हेट्ठा परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव घादिदट्ठाणाणि उप्पज्जंति । एवं तिचरिमादिअणुभागबंधट्ठाणाणि घादिय अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले विच्चाले छट्ठाणमेत्ताओ संतट्ठाणपंतीयो परिणामट्ठाणमेत्तायामाओ[1] दव्वट्ठियणयावलंबिदसुत्तट्ठाणपरूवणाए पुव्वं व कायव्वा । एवं दुचरिम-अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले संतकम्मट्ठाणपरूवणा कदा ।

संपहि दोछट्ठाणेहि परिहीणअणुभागबंधट्ठाणे पुव्वं व घादिज्जमाणे तिचरिमअट्ठंक उव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहियाणि उप्पज्जंति अहियाणि[☆] किण्ण उप्पज्जंति ? ण संतकम्मट्ठाणकारणविसोहिट्ठाणाणं अब्भहियाणमभावादो । पुणो दुचरिमादिट्ठाणेसु घादिज्जमाणेसु एक्केक्कम्हि अणुभागबंधट्ठाणे विसोहिट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति । एवं तिचरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले उप्पज्जमाणअसंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणा कदा होदि ।
एवं चदुचरिम-पंचचरिमादिअसंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तिय अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु पुव्वापरायामेण दक्खिणुत्तरविक्खंभेण असंखेज्जलोगमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणपदराणि उप्पज्जंति। किं सव्वेसिं अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु परिणामट्ठाणमेत्तयामेण छट्ठाणमेत्त

आदि सब परिणामोंके द्वारा पूर्व विवक्षित बन्धस्थानके घाते जानेपर पहिले उत्पन्न हुए स्थानोंके नीचे परिणामस्थानोंके बराबर ही घातित स्थान उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार त्रिचरम आदि अनुभाग बन्धस्थानोंको घातकर अष्टांक और ऊर्वकके बीच-बीचमें परिणामस्थान प्रमाण आयामवाली षट्स्थानके बराबर सत्त्वस्थानपंक्तियोंको उत्पन्न कराना चाहिये । यहां पुनरुक्त स्थानोंकी प्ररूपणा पहिलेके ही समान करनी चाहिये । इस प्रकार द्विचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें सत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा की गई है ।

अब दो षट्स्थानोंसे हीन अनुभागबन्धस्थानको पहिलेके समान घातनेपर त्रिचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें एक कम षट्स्थान सहित असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान उत्पन्न होते हैं ।

शंका--अधिक क्यों नहीं उत्पन्न होते हैं ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, सत्त्वस्थानोंके कारणभूत विशुद्धिस्थान अधिक नहीं हैं ।

पुनः द्विचरम आदि स्थानोंके घातनेपर एक एक अनुभागबन्धस्थानमें विशुद्धिस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थान पाये जाते हैं । इस प्रकार त्रिचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें उत्पन्न होनेवाले असंख्यात लोक प्रमाण सत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त होती है ।

इस प्रकार चतुश्चरम और पंचचरम आदि असंख्यातलोक प्रमाण बन्धसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें पूर्व पश्चिम आयाम और दक्षिण उत्तर विष्कम्भसे असंख्यात लोक मात्र सत्कर्मस्थानप्रतर उत्पन्न होते हैं ।

शंका--क्या सब अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें परिणामस्थानोंके बराबर आयाम और

☆ अ-आप्रत्योः ' अहियाण किण्ण उप्पज्जंते ' इति पाठः ।

विक्खंभेण संतकम्मट्ठाणपदराणि उप्पज्जंति आहो णेदि पुच्छिदे सुहुमणिगोदअपज्ज-
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
त्तजहण्णट्ठाणस्स उवरि संखेज्जाणं खंडसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं अंतराणि मोत्तूण उवरिमअसंखेज्जलोगमेत्तअट्ठंकुव्वंकंतरेसु सव्वेसु उप्पज्जंति । हेट्ठिमसंखेज्जअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति त्ति कुदो* णव्वदे ? आइरियोवदेसादो अणुभागवड्ढिहाणिअप्पाबहुगादो वा । तं जहा- सव्वत्थोवा हाणी, वड्ढी विसेसाहिया त्ति । एगसमएण जत्तियमुक्कस्सेण वड्ढिदूण बंधदि पुणो तं सव्व-क्कस्सविसोहीए एगवारेण एगाणुभागकंडयघादेण घादेदुं ण सक्कदि त्ति जाणावणट्ठं पदिदप्पाबहुगं कधं णाणासमयपबद्धवड्ढीए णाणाखंडयघादुप्पण्णहाणीए च ? उच्चदे ण एस दोसो, एदस्स अप्पाबहुअसुत्तस्स उभयत्थ पउत्तीए विरोहाभावादो । कधमेगमणेगेसु वट्टदे ? ण,* एगस्स मोग्गरस्स अणेगखप्परुप्पत्तीए वावारुवलं-भादो । कसायपाहुडस्स अणुभागसंकमसुत्तवक्खाणादो वा णव्वदे जहा सव्वत्थ ण उप्पज्जंति त्ति । तं जहा-- अणुभागसंकमे चउवीसअणुयोगद्दा-रेसु समत्तेसु भुजगारपदणिक्खेववड्ढीओ भणिय पच्छा अणुभागसंकमट्ठाणपरूवणं

षट्स्थानमात्र विष्कम्भसे सत्कर्मस्थानप्रतर उत्पन्न होते हैं अथवा नहीं होते हैं ?

समाधान-- ऐसा पूछनेपर उत्तरमें कहते हैं कि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानके ऊपर संख्यात खण्डसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंको छोडकर उपरिम असंख्यात लोकमात्र सब अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें उत्पन्न होते हैं ।

शंका-- अधस्तन संख्यात अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें हतसमुत्पत्तिक स्थान नहीं उत्पन्न होते हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- वह आचार्योंके उपदेशसे जाना जाता है । अथवा अनुभागवृद्धि-हानिके अल्पबहुत्वसे जाना जाता है । यथा- हानि सबमें स्तोक है । वृद्धि उससे विशेष अधिक है ।

शंका-- एक समयमें उत्कृष्टरूपसे जितना वृद्धिगत होकर बाँधता है उसे सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा एक बारमें एक अनुभागकाण्डकसे घातनेको समर्थ नहीं है, इस बातके जता-लानेके लिये जो अल्पबहुत्व आया है उसकी प्रवृत्ति नाना समयप्रबद्धोंकी वृद्धि और नानाका-ण्डकघातोंसे उत्पन्न हानिमें कैसे हो सकती है ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, इस अल्पबहुत्वसूत्रकी दोनों जगह प्रवृत्ति होनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

शंका-- एक अनेक विषयोंमें कैसे प्रवृत्ति कर सकता है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, एक मुद्गरका अनेक खप्परोंकी उत्पत्तिमें व्यापार पाया जाता है ।

अथवा कसायपाहुडके अनुभागसंक्रमसूत्रके व्याख्यानसे जाना जाता है कि उक्त स्थान सर्वत्र नहीं उत्पन्न होते हैं । यथा- अनुभागसंक्रममें चौबीस अनुयोगद्वारोंके समाप्त होनेपर भुजा-

---

* ताप्रतौ ' उप्पज्जंति त्ति । कुदो ' इति पाठः । * अ-आप्रत्योः ' वट्टिदेण ', ताप्रतौ ' वट्टिदेण (वट्टदे ? ण,) ' इति पाठः ।

भणदि । उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगसंतकम्मट्ठाणं । तमेगं चेव संकमट्ठाणं । दुचरिमे अणुभागबंधट्ठाणे एगं संतकम्मट्ठाणं । तमेगं चेव संकमट्ठाणं । एवं पच्छाणुपुव्वीए ताव णेयव्वं जाव पढमअणंतगुणहीणट्ठाणमपत्तं त्ति । पुणो पुव्वाणुपुव्वीए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुणबंधट्ठाणं तस्स हेट्ठा जमणंतरमणंतगुणहीणबंधट्ठाणं तस्स उवरि एदम्हि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । ताणि संतकम्मट्ठाणाणि चेव । ताणि चेव संकमट्ठाणाणि* । तदो पुणो बंधट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि च ताव तुल्लाणि होदूण ओयरंति जाव पच्छाणुपुव्वीए विदियमणंतगुणहीणं बंधट्ठाणमपत्तं त्ति । तदो विदियअणंत[1]गुणहीणबन्धट्ठाणस्स उवरि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । एदाणि संतकम्मट्ठाणाणि चेव । एदाणि चेव संकमट्ठाणाणि । पुणो एवं पच्छाणुपुव्वीए गंतूण तदियअणंतगुणहीणट्ठाणस्स उवरिल्लंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । एदाणि संतकम्मट्ठाणाणि । एदाणि चेव संकमट्ठाणाणि । पुणो एवं गंतूण चउत्थअणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्स उवरिमअंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । एदाणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि । एदाणि चेव संकमट्ठाणाणि च । एवं णेयव्वं जाव अप्पडिसिद्ध[2]अंतरे त्ति । हेट्ठा जाणि चेव बंधट्ठाणाणि ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि चे त्ति एसो[3] अत्थो विउलगिरिमत्थयत्थेण पच्चक्खीकयतिकालगोयरछद्दव्वेण वड्ढमाणभडारएण गोदमथेरस्स कहिदो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कार, पदनिक्षेप और वृद्धिको कहकर पश्चात् अनुभागसंक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं—उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानमें एक सत्त्वस्थान है । वह एक ही संक्रमस्थान है । द्विचरम अनुभागबन्धस्थानमें एक सत्कर्मस्थान है । यह एक ही संक्रमस्थान है । इस प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे हीं तब तक ले जाना चाहिये जब तक प्रथम अनन्त गुणहीन स्थान प्राप्त नहीं होता । पश्चात् पूर्वानुपूर्वीसे गणना करनेपर जो अन्तिम अनन्तगुणा बन्धस्थान है उसके नीचे जो अनन्तर अनन्तगुणा हीन बन्धस्थान है उसके ऊपर इस अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान हैं । वे सत्कर्मस्थान ही है । वे ही संक्रमस्थान हैं । तत्पश्चात् बन्धस्थान और संक्रमस्थान तब तक समान होकर उतरते हैं जब तक पश्चादानुपूर्वीसे द्वितीय अनन्तगुणहीन बन्धस्थान नहीं प्राप्त होता । पश्चात् द्वितीय अनन्तगुणहीन बन्धस्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकमात्र घातस्थान हैं । ये सत्कर्मस्थान ही हैं । ये ही संक्रमस्थान हैं । फिर इसी प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे जाकर तृतीय अनन्तगुणहीन स्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान हैं । ये सत्कर्मस्थान हैं । ये ही संक्रमस्थान हैं । फिर इसी प्रकार जाकर चतुर्थ अनन्तगुण बन्धस्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान हैं । ये ही सत्कर्मस्थान हैं और ये ही संक्रमस्थान भी हैं । इस प्रकारसे अप्रतिसिद्ध अन्तर तक ले जाना चाहिये । नीचे जो बन्धस्थान हैं वे ही सत्कर्मस्थान हैं और वे ही संक्रमस्थान भी हैं । इस अर्थकी प्ररूपणा विपुलाचलके शिखरपर स्थित व तीनों कालोंके विषयभूत छह द्रव्योंका प्रत्यक्षसे अवलोकन

---

[1] जयध. अ. पत्र २३०। * अ-आप्रत्योः 'विदियमणंत' इति पाठः। [2] अ-आप्रत्योः 'अपडिसिद्ध' इति पाठः। * आप्रतौ 'संतकम्मट्ठाणाणि चेति संकमट्ठाणाणि च एसो' इति पाठः।

पुणो सो अत्थो आइरियपरंपराए आगंतूण गुणहरभडारयं संपत्तो । पुणो तत्तो आइरियपरंपराए आगंतूण अज्जमंखु-णागहत्थिभडारयाणं मूलं पत्तो । पुणो तेहि दोहि वि कमेण जदिवसहभडारयस्स वक्खाणिदो । तेण वि अणुभागसंकमो ✡ सिस्साणुग्गहट्ठं चुण्णिसुत्ते लिहिदो । तेण जाणिज्जदि जहा सव्वट्ठंकुव्वंकाणं विच्चालेसु घादट्ठाणाणि णत्थि त्ति ।

एवं हदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

एत्तो उवरि ✤हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा– जहण्णविसोहिट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्सविसोहिट्ठाणे त्ति ताव एदाणि असंखेज्जलोगमेत्तविसोहिट्ठाणाणि घादिदसेसाणुभागघादकारणाणि एगसेडिसरूवेण रचेदूण पुणो एदेसिं दक्खिणपासे सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जहण्णट्ठाणप्पहुडि असंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि एगसेडिसरूवेण रचेदूण पुणो सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णट्ठाणस्सुवरि संखेज्जाणं छट्ठाणाणं अट्ठंकुव्वंकट्ठाणाणि मोत्तूण पुणो तदणंतरअप्पडिसिद्धअट्ठंकप्पहुडि जाव चरिमअट्ठंके त्ति ताव एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणमंतरेसु पुव्वावरायामेण असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि रचेदूण पुणो तत्थ चरिमबंधसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं मज्झे असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि होंति। पुणो एदेसु ट्ठाणेसु असंखेज्जलोगमेत्तअट्ठंकाणि रूवूणछट्ठाणं च अत्थि ।

करनेवाले वर्धमान भट्टारक द्वारा गौतम स्थविरके लिए की गई थी । पश्चात् वह अर्थ आचार्य परम्परासे आकर गुणधर भट्टारकको प्राप्त हुआ । फिर उनके पाससे वह आचार्य परम्परा द्वारा आकर आर्यमंक्षु और नागहस्ती भट्टारकके पास आया। पश्चात् उन दोनों ही द्वारा क्रमसे उसका व्याख्यान यतिवृषभ भट्टारकके लिये किया गया । उन्होंने भी उसे शिष्योंके अनुग्रहार्थ अनुभाग संक्रमको चूर्णिसूत्रमें लिखा है । उससे जाना जाता है कि समस्त अष्टांकों और ऊर्वकके अन्तरालोंमें घातस्थान नहीं है ।

इस प्रकार हतसमुत्पत्तिकस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

इसके आगे हतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है– जघन्य विशुद्धिस्थानसे लेकर उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान तक घातनेसे शेष रहे अनुभागके घातनेमें कारणभूत इन असंख्यात लोकप्रमाण विशुद्धिस्थानोंको एक पंक्तिके रूपसे रचकर फिर इनके दक्षिण पार्श्व भागमें सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानसे लेकर असंख्यात लोक प्रमाण बन्धसमुत्पत्तिक स्थानोंको एक पंक्ति स्वरूपसे रचकर तत्पश्चात् सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानके आगे संख्यात षट्स्थानों सम्बन्धी अष्टांक व ऊर्वक स्थानोंको छोड़कर फिर तदनन्तर अप्रतिषिद्ध अष्टांकसे लेकर अन्तिम अष्टांक तक इन असंख्यात लोकप्रमाण बन्धसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें पूर्व-पश्चिम आयामसे असंख्यात लोकप्रमाण हतसमुत्पत्तिक स्थानोंको रचकर फिर वहाँ अन्तिम बन्धसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें असंख्यातलोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । इन स्थानोंमें असंख्यात लोक प्रमाण अष्टांक और एक अंकसे रहित एक षट्स्थान भी है ।

✡ ताप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रतिपा– अणुभागसंकमे इति पाठः । ✤ आप्रतौ 'हदसमुप्पत्तिय' इति पाठः .

तत्थ ताव चरिमउव्वंकघादणविहाणं--उक्कस्सपरिणामट्ठाणेण पज्जवसाणउव्वंके घादिदे चरिमअट्ठंकस्स हेट्ठा अणंतगुणहीणं, तस्सेव हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणस्सुवरि अणंतगुणं होदूण दोण्णं पि अंतरे पढमं हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणं उप्पज्जदि । पुणो अणंतभागहीणदुचरिमपरिणामट्ठाणेण तम्हि चेव पज्जवसाणाणुभागे घादिदे पुव्वुप्पण्णट्ठाणस्सुवरि अणंतभागब्भहियं होदूण विदियं हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणमुप्पज्जदि । कुदो ? अणंतभागहीणविसोहिट्ठाणेण घादिदत्तादो । एवं जाए जाए हाणीए समण्णिदेण परिणामट्ठाणेण पज्जवसाणट्ठाणं घादिज्जदि तीए तीए सण्णाए सहिदाणि घादघादट्ठाणाणि उप्पज्जंति । एवं कदे चरिमअट्ठंकउव्वंकाणं विच्चाले परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि लद्धाणि होंति । पुणो उव्वंकस्स परिणामट्ठाणेण पज्जवसाणदुचरिमउव्वंके घादिदे सव्वजहण्णहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण वामपासे पढमट्ठाणमुप्पज्जदि । पुणो एदम्हादो अणुभागट्ठाणादो परिणाममेत्ताणि चेव हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि पुव्वं व उप्पादेदव्वाणि । पुणो तेणेव उक्कस्सपरिणामट्ठाणेण तिचरिमउव्वंके घादिदे पुव्वुप्पण्णपंतीए जहण्णट्ठाणादो अणंतभागहीणं होदूण अण्णं ट्ठाणं उप्पज्जदि । एवं एत्थ वि परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि उप्पज्जंति । पुणो चदुचरिमादिघादट्ठाणाणि कमेण घादिय परिणामट्ठाणमेत्ताणि घादघादट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि । एवं कदे छट्ठाणविक्खंभ-परिणामट्ठाणमेत्तायामं घादघादट्ठाणपदरं होदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महाराज

उनमें पहिले अन्तिम ऊर्वकस्थानके घातनेकी विधि बतलाते हैं--उत्कृष्ट परिणामस्थानके द्वारा पर्यवसान ऊर्वकके घाते जानेपर अन्तिम अष्टांकके नीचे अनन्तगुणाहीन व उसके ही अधस्तन ऊर्वकस्थानके ऊपर अनन्तगुणा होकर दोनोंके ही मध्यमें प्रथम हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है । पश्चात् अनन्तवें भागसे हीन द्विचरम परिणाम स्थानके द्वारा उसी पर्यवसान अनुभागके घाते जानेपर पूर्व उत्पन्न स्थानके ऊपर अनन्तवें भागसे अधिक द्वितीय हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है; क्योंकि, वह अनन्तभागहीन विशुद्धिस्थान द्वारा घातको प्राप्त हुआ है । इस प्रकार जिस जिस हानिसे सहित परिणामस्थानके द्वारा पर्यवसानस्थान घाता जाता है उस उस संज्ञासे सहित घातघात उत्पन्न होते हैं । इस विधानसे अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें परिणामस्थानोंके बराबर ही हतहतसमुत्पत्तिस्थान प्राप्त होते हैं । पश्चात् ऊर्वकके परिणामस्थान द्वारा पर्यवसान द्विचरम ऊर्वकके घाते जानेपर सर्वजघन्य हतहतसमुत्पत्तिकस्थानके नीचे अनन्तभागहीन होकर वाम पार्श्वभागमें प्रथम स्थान उत्पन्न होता है । तत्पश्चात् इस अनुभागस्थानसे परिणामस्थानोंके बराबर ही हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको पहिलेके ही समान उत्पन्न कराना चाहिये । फिर उसी उत्कृष्ट परिणामस्थानके द्वारा त्रिचरम ऊर्वकके घाते जानेपर पूर्व उत्पन्न पंक्तिके जघन्य स्थानसे अनन्तभागहीन होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकारसे यहांपर भी परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थान उत्पन्न होते हैं । तत्पश्चात् क्रमसे चतुश्चरम आदि घातस्थानोंको क्रमसे घातकर परिणामस्थानोंके बराबर घातघातस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये । ऐसा करनेपर षट्स्थान विष्कम्भ व परिणामस्थान आयाम युक्त घातघातस्थानप्रतर होता है ।

एवं ट्ठिदट्ठाणेसु अपुणरुत्तट्ठाणपरूवणं कस्सामो- एत्थ हेट्ठिमपढमट्ठाणपंतीए जं जहण्णट्ठाणं तमपुणरुत्तं, तेण समाणण्णट्ठाणाभावादो[1] । जं विदियट्ठाणं तं पुणरुत्तं, उवरिमविदियपरिवाडीए जहण्णट्ठाणेण समाणत्तादो । हेट्ठिमतदियट्ठाणं विदियपरिवाडीए विदियट्ठाणेण समाणं । एवं णेयव्वं जाव पढमपरिवाडीए पढमकंडयस्स चरिमउव्वंके त्ति । पुणो उवरिमचत्तारिअंकट्ठाणमपुणरुत्तं उवरि[2]सगपणिहिट्ठिद-ट्ठाणेण चत्तारिअंकस्स सरिसत्ताभावादो । पुणो तदणंतरउवरिमउव्वंकट्ठाणं पुणरुत्तं, विदियपरिवाडीए पढमचत्तारिअंकेण समाणत्तादो । एवं पुव्वं व विदियकंडयउव्वंक-ट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि चेव होदूण गच्छंति, विदियपरिवाडीए विदियकंडयउव्वंकट्ठाणेहि समाणत्तादो । पुणो पढमपंतीए विदियचत्तारिअंकमपुणरुत्तं, उवरिमपंतीए सगोवरि-ट्ठिदउव्वंकाण[3] समाणत्ताभावादो । एवं भणिज्जमाणे पढमपंतीए सव्वुव्वंकट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि चेव होंति । पुणो तेसिं पुणरुत्तट्ठाणमवणयणे कदे पढमाए ट्ठाण-पंतीए चत्तारिअंक-पचंक-छअंक-सत्तंक-अट्ठंकट्ठाणाणि चेव अपुणरुत्ताणि होदूण लब्भंति । जहा पढमपरिवाडीए उव्वंकट्ठाणाणि हेट्ठदो विदियपरिवाडीए उव्वंकट्ठाणेहि समाणाणि त्ति अवणिदाणि तहा विदियपरिवाडीए पढमउव्वंकं मोत्तूण सेसस्स उव्वंकट्ठाणाणि तदियपरिवाडीए उव्वंकट्ठाणेहि समाणाणि

आर्यिकारत्न ज्ञानमती माताजी सुविधिसागर जी महाराज

इस प्रकारसे स्थित स्थानोंमें अपुनरुक्त स्थानोंकी प्ररूपणा करते है- यहाँ अधस्तन प्रथम स्थानपंक्तिका जो जघन्य स्थान है वह अपुनरुक्त है, क्योंकि, उसके समान अन्य स्थानका अभाव है। जो द्वितीय स्थान है वह पुनरुक्त है, क्योंकि, वह उपरिम द्वितीय परिपाटीके जघन्य स्थानके समान है। अधस्तन तृतीय स्थान द्वितीय परिपाटीके द्वितीय स्थानके समान है। इस प्रकारसे प्रथम परिपाटीसंबंधी प्रथम कांडकके अंतिम ऊर्वक तक ले जाना चाहिये। पुनः ऊपरका चतु-रंकस्थान अपुनरुक्त है, क्योंकि, ऊपर अपनी प्रणिधिमें स्थित स्थानसे चतुरंककी समानताका अभाव है। तदनंतर उपरिम ऊर्वकस्थान पुनरुक्त है, क्योंकि, वह द्वितीय परिपाटीके प्रथम चतुरंक समान है। इस प्रकार पहिलेके समान द्वितीय कांडकके ऊर्वक स्थान पुनरुक्त ही होकर जाते हैं, क्योंकि, वे द्वितीय परिपाटीके द्वितीय कांडक सम्बन्धी ऊर्वकस्थानोंके समान हैं। पुनः प्रथम पंक्तिका द्वितीय चतुरंक अपुनरुक्त है, क्योंकि, उपरिम पंक्तिमें अपने ऊपर स्थित ऊर्वकोंसे उसकी समानता नहीं है। इस प्रकार कथन करनेपर प्रथम पंक्तिके सब ऊर्वकस्थान पुनरुक्त ही हैं। पुनः उन पुनरुक्त स्थानोंका अपनयन करनेपर प्रथमस्थानपंक्तिके चतुरंक, पचांक, षडंक, सप्तांक और अष्टांक ये स्थान ही अपुनरुक्त होकर पाये जाते हैं। जिस प्रकार प्रथम परिपाटीके ऊर्वक-स्थान चूंकि नीचे द्वितीय परिपाटीके ऊर्वकस्थानोंसे समान हैं, अतः उनका अपनयन किया गया है, उसी प्रकार चूंकि द्वितीय परिपाटीके प्रथम ऊर्वकको छोड़कर शेष ऊर्वकस्थान तृतीय परि-पाटीके ऊर्वकस्थानोंके समान हैं अतएव उनका अपनयन करना चाहिये। इस प्रकार पुनरुक्त

[1] अ-आप्रत्योः समाणट्ठाणाभावादो इति पाठः। [2] प्रतिषु 'सगपणिहि' इति पाठः।
[3] अ-आप्रत्योः '– ट्ठिदउव्वंकाण' इति पाठः।

त्ति अवणेदव्वाणि । एवं पुणरुत्तट्ठाणावणयणं करिय ताव णेदव्वं जाव कंडयमेत्तट्ठाणमुवरि चडिदूण ट्ठिदट्ठाणपंती पत्ता त्ति । तत्थ जं पढमं ट्ठाणं तमपुणरुत्तं, उवरिमपंतीए केण वि ट्ठाणेण समाणत्ताभावादो । जं विदियं ट्ठाणं तं पि अपुणरुत्तं चेव, सगपंतीए जहण्णट्ठाणादो अणंतभागब्भहियस्स उवरिमपंतीए जहण्णट्ठाणेण सगपंतिजहण्णट्ठाणादो असंखेज्जभागब्भहिएण समाणत्तविरोहादो। एवमप्पिदपंतीए कंडयमेत्तसव्वुव्वंकट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि चेव, सगपंतिजहण्णादो असंखेज्जभागब्भहिएहि उवरिमट्ठाणेहि हेट्ठा ततो* अणंतभागब्भहियाणं समाणत्तविरोहादो। पुणो हेट्ठिमपंतीए पढमचत्तारिअंकट्ठाणं उवरिमपंतीए* सगुवरिमउव्वंकट्ठाणेण समाणमिदि अवणेदव्वं । एवमेत्थ अप्पिदपरिवाडीए चत्तारिअंकट्ठाणाणि ताव पुणरुत्तट्ठाणाणि होदूण गच्छंति जाव अप्पिदपरिवाडीए पढमपंचंकट्ठाणादो हेट्ठिमचत्तारिअंकट्ठाणे त्ति । पुणो अप्पिदपरिवाडीए उवरिमसव्वट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि चेव, उवरिमपंतिट्ठाणेहि तेसिं समाणत्ताभावादो ।

जहा पढमकंडयमेत्तट्ठाणपंतीणं सरिसासरिसपरिक्खा कदा तहा विदियकंडयसव्वट्ठाणाणं पि परिक्खा कायव्वा । णवरि असंखेज्जभागब्भहियट्ठाणं जम्हि कंडए जहण्णं

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्थानोंका अपनयन करके तबतक ले जाना चाहिये जबतक कि काण्डक प्रमाण अध्वानके आगे जाकर स्थित स्थानपंक्ति प्राप्त नहीं होती है । उसमें जो प्रथम स्थान है वह अपुनरुक्त है, क्योंकि, वह उपरिम पंक्तिके किसी भी स्थानके समान नहीं है । जो द्वितीय स्थान है वह भी अपुनरुक्त ही है, क्योंकि, अपनी पंक्तिके जघन्य स्थानकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक उक्त स्थानकी, उपरिम पंक्तिके जघन्य स्थानसे जो कि अपनी पंक्तिके जघन्य स्थानकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक है, समानताका विरोध है । इस प्रकार विवक्षित पंक्तिके काण्डक प्रमाण सब ऊर्वंक स्थान अपुनरुक्त ही होते हैं, क्योंकि, अपनी पंक्तिके जघन्य स्थानकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक उपरिम स्थानोंसे नीचे उक्त स्थानकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक स्थानोंकी समानताका विरोध है । पुनः अधस्तन पंक्तिका प्रथम चतुरंकस्थान चूंकि उपरिम पंक्तिके अपने वंकस्थानके समान है, अतः उसका अपनयन करना चाहिये । इस प्रकारसे यहां विवक्षित परिपाटीके चतुरंकस्थान तब तक पुनरुक्तस्थान होकर जाते हैं जब तक कि विवक्षित परिपाटीके प्रथम पंचांकस्थानसे नीचेका चतुरंकस्थान नहीं प्राप्त होता है । पुनः विवक्षित परिपाटीके उपरिम सब स्थान अपुनरुक्त ही होते हैं, क्योंकि, उनकी उपरिम पंक्तिके स्थानोंसे समानता नहीं है ।

जिस प्रकारसे प्रथम काण्डक प्रमाण स्थान पंक्तियोंकी समानता व असमानताकी परीक्षा की गई है उसी प्रकारसे द्वितीय काण्डकके सब स्थानोंकी भी परीक्षा करनी चाहिये । विशेष इतना है कि जिस काण्डक में असंख्यातवें भागसे अधिक स्थान जघन्य है उसके अनन्तर अधस्तन

---

* अतोऽग्रे ताप्रतौ ' अणंतभागब्भहियाणं अट्ठंकाणंतरउवरिमपंतीए सगुवरिमउव्वंकसमाणत्तविरोहादो । पुणो हेट्ठिमपंतीए पढमचत्तारिट्ठाणेण समाणमिदि अवणेदव्वं । एवमेत्थ ईदृक् पाठः समुल्लभ्यते ।

* अ-आप्रत्योः ' अंकट्ठाणंतरउवरिम- ', ताप्रतावसंबद्धोऽत्र पाठः प्रतिभाति ।

तत्तो अणंतरहेट्ठिमअसंखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि । जम्हि कंडए संखेज्ज-भागब्भहियं ट्ठाणं जहण्णं होदि तत्तो हेट्ठिमपंतीए संखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि । एवं सव्वत्थ वत्तव्वं । एत्थ पुणरुत्ताणि अवणिय अपुणरुत्ताणि घेत्तव्वा ।

एदेण बीजपदेण* दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिमादिअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि जाव एदेसिं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं पढमअट्ठंके त्ति । एत्थ जहण्णबंधट्ठाणप्पहुडि जहा संखेज्जट्ठंकुव्वंकाणं अंतरेसु घादट्ठाणाणि पडिसिद्धाणि तथा एदेसिं पि घादट्ठाणाणं हेट्ठा संखेज्जट्ठंकुव्वंकाणंतरेसु घाद-घादट्ठाणाणं पडिसेहो किण्ण कीरदे ? ण, सुत्तागमाइरियवयणाणं च पडिसेहपडि-बद्धाणमणुवलंभादो । विधीए विणा कधं सव्वत्थट्ठंकुव्वंकंतरेसु घादघादपरूवणा कीरदे ? ण एत्थ अम्हाणमाग्गहो☆ सव्वट्ठंकुव्वंकट्ठाणंतरेसु घादघादट्ठाणाणि होंति चेवे त्ति । किंतु विहि-पडिसेहो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं परूविदं । एवं कदे एक्केक्कहदसमुप्पत्तियअट्ठंकट्ठाणस्स हेट्ठा असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्प-त्तियट्ठाणाणि उप्पण्णाणि होंति । पुणो पच्छाणुपुव्वीए ओदरिदूण बंधस-मुप्पत्तियदुचरिमअट्ठंक--उव्वंकाणमंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्प-

असंख्यातवें भागसे अधिक स्थान पुनरुक्त हैं, और जिस काण्डकमें संख्यातवें भागसे अधिक स्थान जघन्य होता है उससे अधस्तन पंक्तिके संख्यातवें भागसे अधिक स्थान पुनरुक्त है, ऐसा सब जगह कथन करना चाहिये । यहां पुनरुक्त स्थानोंका अवनयन करके अपुनरुक्त स्थानोंको ग्रहण करना चाहिये ।

इस बीज पदके द्वारा इन हतसमुत्पत्तिक स्थानोंके प्रथम अष्टांक तक द्विचरम, त्रिचरम व चतुश्चरम आदि अष्टांक एवं ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें हतसमुत्पत्तिकस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये ।

शंका- यहां जिस प्रकार जघन्य बन्धस्थानसे लेकर संख्यात अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें घातस्थानोंका प्रतिषेध किया गया है उसी प्रकार इन घातस्थानोंके भी संख्यात अष्टांक व ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें घातघातस्थानोंका प्रतिषेध क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, प्रतिषेधको सम्बद्ध न तो सूत्र पाये जाते है और न आचार्य वचन ही

शंका- विधिके बिना सर्वत्र अष्टांक और ऊर्वकस्थानोंके अन्तरालोंमें घातघातस्थानोंकी प्ररूपणा कैसे की जाती है ?

समाधान- हमारा यह आग्रह नहीं है कि सब अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्त-रालोंमें घातघातस्थान होते ही है, किन्तु उनकी विधि व प्रतिषेध नहीं है, यह जतलानेके लिये उनकी प्ररूपणा की गई है ।

[इस प्रकारसे एक एक हतसमुत्पत्तिक स्थानके नीचे असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । पुनः पश्चादानुपूर्वीसे उतर कर बन्धसमुत्पत्तिक द्विचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । फिर इन स्थानोंके

* अप्रतौ पाठोऽयम् । ब-आताप्रतिषु 'जीवपदेण' इति पाठः । ☆ आप्रतौ 'एत्थ अंवाणमागहो' इति पाठः ।

त्तियट्ठाणाणि उप्पण्णाणि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमअट्ठंकप्पहुडि जाव पढम-अट्ठंके त्ति ताव एदेसिमट्ठंकुव्वंकाणं अंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्प-त्तियट्ठाणाणि उप्पज्जंति । पुणो हेट्ठा ओदरिदूण बंधसमुप्पत्तियचरिमट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं असंखेज्जलोगमेत्तअट्ठंकुव्वंकंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्तहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि रूवूण-छट्ठाणसहिदाणि उप्पज्जंति । एवं बंधसमुप्पत्तियचदुचरिम-पंचचरिमादिअट्ठंकंत-रेसु♠ ट्ठिदाणं पच्छाणुपुव्वीए जाणिदूण णेदव्वं जाव अपडिसिद्धपढमअट्ठंके त्ति । तदो बंधसमुप्पत्तियअप्पडिसिद्धपढमअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि, पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमअट्ठंकुव्वंकाणमंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहियाणि उप्पज्जंति । एवं पडिलोमेण जाणिदूण णेदव्वं जाव एदेसिं हदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणं पढमअट्ठंके त्ति । एसा ताव हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणं एगा परिवाडी उत्ता होदि ।

संपहि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं बिदियपरिवाडीए भण्णमाणाए बंधसमुप्पत्तियचरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हद-समुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमअट्ठंकउव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि उप्पण्णाणि । पुणो एदेसिं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं पढमपरिवाडीए समुप्पण्णाणं

अन्तिम अष्टांकसे लेकर प्रथम अष्टांक तक इन अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । फिर नीचे उतर कर बन्धस-मुत्पत्तिक त्रिचरम अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें असंख्यात लोक प्रमाण हतस-मुत्पत्तिकषट्स्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके असंख्यात लोक प्रमाण अष्टांक व ऊर्वकके अन्तरालोंमें एक अंकसे कम षट्स्थान सहित असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक स्थान उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार बन्धसमुत्पत्तिक चतुश्चरम व पंचचरम आदि अष्टांक (व ऊर्वक) के अन्तरालोंमें स्थित उनको पश्चादानुपूर्वीसे जानकर ले जाना चाहिये जब तक अप्रतिसिद्ध प्रथम अष्टांक नहीं प्राप्त होता । पश्चात् बन्धसमुत्पत्तिक अप्रतिसिद्ध प्रथम अष्टांक व ऊर्वकके अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालमें एक कम षट्स्थान सहित असंख्यात लोक प्रमाण हतहतस-मुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार प्रतिलोमसे जानकर इन हतसमुत्पत्तिक षट्स्थानोंके अष्टांक तक ले जाना चाहिये । यह हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थानोंकी एक परिपाटी कही गई है ।

अब हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थानोंकी द्वितीय परिपाटीकी प्ररूपणामें बन्धसमुत्पत्तिक अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । फिर इन स्थानोंके अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थान उत्पन्न होते हैं । फिर प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न इन हतसमुत्पत्तिक स्थानोंके अन्तिम अष्टांक और

♠ प्रतिषु '-पंचचरिमा वि अट्ठंकंतरेसु ' इति पाठः ।

चरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले पुणो विदियपरिवाडीए असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहगदाणि हेट्ठिमअंकुसायारट्ठाणेहि सेडिबद्धेहि पुप्फपइण्णएहि च साहियाणि उप्पज्जंति । पुणो एदेसिं चेव ट्ठाणाणं दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिम-पंचचरिमादिहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पाइय ओदारेदव्वं जाव एदेसिं चेव ट्ठाणाणं पढमअट्ठंक-उव्वंकंतरे त्ति । एवं सेसपढमपरिवाडिसमुप्पण्णहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पाबेदूण ओदारेदव्वं जाव अप्पडिसिद्धबंधसमुप्पत्तियपढमअट्ठंक-उव्वंकविच्चाले त्ति । पुणो एवम्हि विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं① चरिमहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं② चरिमहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पज्जंति । एवं चेव अप्पिददुचरिम-तिचरिमअट्ठंकुव्वंकाणं अंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्ताणि

फिरसे द्वितीय परिपाटीसे एक कम षट्स्थान युक्त असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थान उत्पन्न होते हैं। जो कि अधस्तन अंकुशाकार श्रेणिबद्ध एवं पुष्प प्रकीर्णक स्थानोंके सहित होते है । पश्चात् इन्हीं स्थानोंके द्विचरम, त्रिचरम, चतुश्चरम और पंचचरम आदि हत-हतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालमें द्वितीय परिपाटीसे असंख्यात लोक प्रमाण हतहत-समुत्पत्तिकस्थानोंको उत्पन्न कराकर इन्हीं स्थानोंके प्रथम अष्टांक और ऊर्वकके अंतराल तक उता-रना चाहिये। इस प्रकार प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न शेष हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक ऊर्वकके मध्यमें द्वितीय परिपाटीसे हतहतसमुत्पत्तिक स्थानोंको उत्पन्न कराकर अप्रतिषिद्ध बंधसमुत्पत्तिक प्रथम अष्टांक और ऊर्वकके अंतराल तक उतारना चाहिये। पुनः इस अंतरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक स्थान होते हैं। पुनः इन स्थानोंके अंतिम हतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अंतरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं। पुनः इन स्थानोंके अंतिम हत-हतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अंतरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं। पुनः इन स्थानोंके अंतिम हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अंतरालमें द्वितीय परि-पाटीसे असंख्यात लोकमात्र हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकारसे विवक्षित द्विचरम व त्रिचरम अष्टांक व ऊर्वकके अंतरालोंमें द्वितीय परिपाटीसे असंख्यात लोक प्रमाण

① अतोऽग्रे ताडपत्रिपाठः- चरिमहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमु-प्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमहदसमुप्पत्तिय०अट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तिय० उप्पज्जंति एवं चेव ....। ② अतोऽग्रे ताडपत्रिपाठस्त्वेवंविधोऽस्ति-हदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकु० विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्ति० ट्ठाणाणि उप्पज्जंति एवं चेव .....।

विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि उप्पादियः ओदारेदव्वं जाव एवेसिं चेव पढमपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपढमअट्ठंकउव्वंकविच्चाले त्ति। पुणो एदेण कमेण एत्थुप्पण्णविदियपरिवाडिघादघादट्ठाणाणं जाणिदूण परूवणा कायव्वा। एवं कदे हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं विदियपरिवाडी समत्ता होदि।

पुणो एदेण कमेण बंधसमुप्पत्तियचरिम-अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले संपहि विदियपरिवाडीए समुप्पण्णहदहदसमुप्पत्तियचरिमअट्ठंकट्ठाणमादिं कादूण पच्छाणुपुव्वीए ताव ओदारेदव्वं जाव बंधसमुप्पत्तियअप्पडिसिद्धपढमअट्ठंक-उव्वंकविच्चाले विदियपरिवाडीए उप्पण्णहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु पुणो वि असंखेज्जलोगमेत्तहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणेसु तदियपरिवाडीए उप्पाइदेसु तदियहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणा समत्ता होदि एवं अणंतरुप्पण्णुप्पण्णअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चालेसु घादघादट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि जाव संखेज्जाओ परिवाडीओ गदाओ त्ति। पुणो पच्छिमघादघादट्ठाणमट्ठंकुव्वंकविच्चालेसु घादघादट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति, सव्वपच्छिमाणं घादघादट्ठाणाणं घादाभावादो। संखेज्जासु घादपरिवाडीसु गदासु पुणो सव्वपच्छिमस्स अणुभागस्स घादिदसेसस्स घादो णत्थि त्ति कुदो णव्वदे? अविरुद्धाइरियवयणादो, तं रागाणमाइ-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको उत्पन्न कराकर इन्हीं प्रथम परिपाटीमें उत्पन्न हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंके प्रथम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तराल तक उतारना चाहिये। पुनः इस क्रमसे यहाँ उत्पन्न द्वितीय परिपाटीके घातघात स्थानोंको जानकर प्ररूपणा करना चाहिये। ऐसा कहनेपर हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी द्वितीय परिपाटी समाप्त होती है।

पश्चात् इस क्रमसे बन्धसमुत्पत्तिक अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालमें अभी द्वितीय परिपाटीसे उत्पन्न हतहतसमुत्पत्तिक अन्तिम अष्टांकस्थानसे लेकर पश्चादानुपूर्वीसे बंधसमुत्पत्तिक अप्रतिषिद्ध प्रथम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तराल तक उतारना चाहिये। द्वितीय परिपाटीमें उत्पन्न हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें फिरसे भी असंख्यात लोकप्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको तृतीय परिपाटीसे उत्पन्न करानेपर तृतीय हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त होती है। इस प्रकार अनन्तर पुनः पुनः उत्पन्न हुए अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें घातघातस्थानोंको संख्यात परिपाटियाँ समाप्त होने तक उत्पन्न कराना चाहिये परंतु पश्चिम घातघातस्थानोंको अष्टांक और ऊर्वङ्कके अन्तरालोंमें घातघातस्थान उत्पन्न नहीं होते हैं, क्योंकि, सर्वपश्चिम घातघातस्थानोंका घात सम्भव नहीं है।

शंका-- संख्यात घातपरिपाटियोंके समाप्त होनेपर फिर घातनेसे शेष रहे सर्वपश्चिम अनुभागका घात नहीं होता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

: प्रतिषु 'अंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्प० असंखे० उप्पादिय' इति पाठः। अप्रतौ 'असंखेज्जाओ', आप्रतौ 'संखेज्ज-संखेज्जाओ' इति पाठः।

ताप्रतौ 'णत्थि त्ति। कुदो' इति पाठः।

रियाणं वयणं ण प्पमाणमिदि ण वोत्तुं, जुत्तं, अविरुद्धविसेसणेण ओसारिदरागादि-भावादो। ण च अविरुद्धाइरियपरंपरागदउवएसो एसो चप्पलो होदि, अव्ववत्थापत्तीदो।

णाणावरणीयस्स सव्वत्थोवाणि बंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि। हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। गुणगारो असंखेज्जा लोगा। हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्ज-गुणाणि। एत्थ वि गुणगारो असंखेज्जा लोगा। एसा ताव णाणावरणीयस्स तिविहा ट्ठाणपरूवणा पक्खविदा। एवं सेससत्तण्णं कम्माणं तिविहा ट्ठाणपरूवणा जाणिदूण परूवेदव्वा। णवरि आउअस्स परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण अपज्जत्तसंजुत्ततिरि-क्खाउअजहण्णाणुभागे पबद्धे तमेगं बंधसमुप्पत्तियट्ठाणं। पुणो पक्खेवुत्तरे पबद्धे बिदियबंधसमुप्पत्तियट्ठाणं। आउअस्स जहण्णपरिणामट्ठाणप्पहुडि असंखेज्जलोग-मेत्ताणि परिणामट्ठाणाणि होंति। जत्तियाणि परिणामट्ठाणाणि तत्तियाणि चेव अणुभागबंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि। हदसमुप्पत्तिय-हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए णाणावरणभंगो। एवमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणा णाम बिदिया चूलिया समत्ता।

समाधान– यह अविरुद्ध आचार्यवचनसे जाना जाता है। (यदि कहा जावे कि आचार्य चूंकि सराग होते है, अतएव उनके वचन प्रमाण नहीं हो सकते; सो ऐसा कहना युक्तियुक्त नहीं है, क्योंकि, अविरुद्ध इस विशेषणसे रागादिभावका निराकरण किया गया है। कारण कि आचार्यपरम्परासे आया हुआ यह उपदेश मिथ्या नहीं हो सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर अव्यवस्थाका होना अनिवार्य है।)

ज्ञानावरणीयके बन्धसमुत्पत्तिकस्थान सबसे स्तोक हैं। उनसे हतसमुत्पत्तिकस्थान असंख्यातगुणे हैं। गुणकार असंख्यात लोक है। उनसे हतसमुत्पत्तिकस्थान असंख्यातगुणे हैं। यहांपर भी गुणकार असंख्यात लोक है। यह ज्ञानावरणीयकी तीन प्रकारकी स्थानप्ररूपणा कही गई है। इसी प्रकारसे शेष सातों कर्मोंकी तीन प्रकारकी स्थानप्ररूपणाको जानकर कहना चाहिये। विशेष इतना है कि आयुकर्मका परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा अपर्याप्त संयुक्त तिर्यंच आयुके जघन्य अनुभागको बांधनेपर वह एक बन्धसमुत्पत्तिकस्थान होता है। पुनः उसे एक प्रक्षेप अधिक बांधनेपर द्वितीय बन्धसमुत्पत्तिकस्थान होता है। आयुके जघन्य परिणाम स्थानसे लेकर असंख्यात लोक प्रमाण परिणामस्थान होते हैं। जितने परिणामस्थान हैं उतने ही उसके अनुभागबन्धसमुत्पत्तिक स्थान है। हतसमु-त्पत्तिक और हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणाके करनेपर वह ज्ञानावरणके समान है। इस प्रकार अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानप्ररूपणा नामकी द्वितीय चूलिका समाप्त हुई।

तदिया चूलिया

जीवसमुदाहारे त्ति तत्थ इमाणि अट्ठ अणुयोगद्दाराणि--एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णाणाजीवकालपमाणाणुगमो वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूवणा फोसणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ॥ २६८ ॥

जीवसमुदाहारो किमट्ठमागदो ? पुव्वं परूविदबंधाणुभागट्ठाणेसु असंखेज्जलोगमेत्तेसु जीवा किं सव्वेसुसरिसा आहो विसरिसा वा सरिसा विसरिसावा त्ति पुच्छिदे एदेण सरूवेण तत्थ चिट्ठंति त्ति जाणावणट्ठं । अट्ठसु अणुयोगद्दारेसु एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? एक्केक्कम्हि ट्ठाणे♠ जीवा जहण्णेण एत्तिया होंति उक्कस्सेण वि एत्तिया त्ति जाणावणट्ठं । णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? णिरंतरजीवसहगदाणि अणुभागट्ठाणाणि जहण्णएण एत्तियाणि उक्कस्सेण वि एत्तियाणि वि होंति त्ति जाणावणट्ठं । सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? णिरंतरजीवविरहिदट्ठाणाणि जहण्णेण एत्तिट्ठाणि

तीसरी चूलिका

जीवसमुदाहार इस अधिकारमें ये आठ अनुयोगद्वार हैं--एकस्थानजीवप्रमाणानुगम, निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, नानाजीवकालप्रमाणानुगम, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, स्पर्शनप्ररूपणा और अल्पबहुत्व ॥ २६८ ॥

शंका--जीवसमुदाहार किसलिये आया है ?

समाधान--पहिले जिन असंख्यात लोक प्रमाण बन्धानुभागस्थानोंकी प्ररूपणा की गई है उन सब स्थानोंमें जीव क्या सदृश होते हैं, विसदृश होते हैं, अथवा सदृश (विसदृश) होते हैं; ऐसा पूछे जानेपर वे वहाँ इस स्वरूपसे स्थित होते हैं, यह बतलानेके लिये जीवसमुदाहार यहां प्राप्त हुआ है ।

शंका--आठ अनुयोगद्वारोंमें एकस्थानजीवप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान--एक एक स्थानमें जीव जघन्यसे इतने होते हैं; और उत्कृष्टसे इतने होते हैं; इस बातको बतलानेके लिये उपर्युक्त अनुगम प्राप्त हुआ है ।

शंका--निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान--निरन्तर जीवोंसे सहित अनुभागस्थान जघन्यसे इतने और उत्कृष्टरूप भी इतने ही होते हैं, इस बातके ज्ञापनार्थ उक्त अनुयोगद्वार प्राप्त हुआ है ।

शंका--सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान--निरन्तर जीवोंसे रहित स्थान जघन्यसे इतने और उत्कृष्टरूपसे भी इतने ही होते

♠ ताप्रतौ 'ट्ठाणेण', ताप्रतौ 'ट्ठाणे (ण)' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उक्कस्सेण वि एत्तियाणि वि होंति त्ति जाणावणट्ठं । णाणाजीवकालपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? एक्कक्कम्हि* ट्ठाणे जीवा जहण्णेण एत्तियं कालमुक्कस्सेण वि एत्तियं कालमच्छंति त्ति जाणावणट्ठं । वड्ढिपरूवणा किमट्ठमागदा? अणंतरोवणिधापरंपरोवणिधासरूवेण जीवाणं वड्ढिपरूवणट्ठं । जवमज्झपरूवणा किमट्ठमागदा ? कमेण वड्ढमाणाणं जीवाणं ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं होदूण तत्तो उवरिमसव्वट्ठाणाणि जीवेहि विसेसहीणाणि होदूण गदाणि त्ति जाणावणट्ठं । फोसणपरूवणा किमट्ठमागदा ? अदीदे काले एगजीवेण एगमणुभागट्ठाणं एत्तियं कालं पोसिदमिदि जाणावणट्ठं । अप्पाबहुगं किमट्ठमागदं ? पुव्वुत्ततिविहाणुभागट्ठाणेसु जीवाणं थोवबहुत्तपरूवणट्ठं ।

एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि जीवा जवि होंति एक्को वा दो वा तिण्णि वा जाव उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जविभागो ॥ २६९ ॥

हैं, इस बातके ज्ञापनार्थ वह अधिकार प्राप्त हुआ है ।

शंका– नानाजीवकालप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान– एक एक स्थानमें जीव जघन्यसे इतने काल तक और उत्कृष्टसे भी इतने काल तक रहते हैं, इसके ज्ञापनार्थ यह अधिकार आया है ।

शंका– वृद्धिप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान– वह अनन्तरोपनिधा और परंपरोपनिधा स्वरूपसे जीवोंकी वृद्धिप्ररूपणा करनेके लिये आयी है ।

शंका– यह मध्यप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान– क्रमसे वृद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवोंके स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यव-मध्य होकर उससे आगेके सब स्थान जीवोंसे विशेषहीन होकर गये हैं, यह बतलानेके लिये यवमध्यप्ररूपणा प्राप्त हुई है ।

शंका– स्पर्शनप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान– अतीत कालमें एक जीवके द्वारा एक अनुभागस्थानका इतने काल स्पर्शन किया गया है, यह जतलानेके लिये स्पर्शप्ररूपणा प्राप्त हुई है ।

शंका– अल्पबहुत्व किसलिये आया है ?

समाधान– वह पूर्वोक्त तीन प्रकारके अनुभागस्थानोंमें जीवोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये आया है ।

एकस्थानजीवप्रमाणानुगमसे एक एक स्थानमें जीव यदि होते हैं तो एक दो, तीन अथवा उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग तक होते हैं ॥ २६९ ॥

---

* मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु ' एक्कम्हि ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

असंखेज्जलोगमेत्ताणि अणुभागट्ठाणाणि उड्ढमेगपंत्तियागारेण पण्णाए ट्ठविय तत्थ एगेगअणुभागट्ठाणम्मि जहण्णुक्कस्सेण जीवपमाणं वुच्चदे । तं जहा--जहण्णेण एगो वा जीवो तत्थ होदि दो वा होंति तिण्णि वा होंति एवमेगुत्तरवड्ढीए एक्केक्कअणुभागट्ठाणम्मि उक्कस्सेण जाव आवलियाए असंखेज्जविभागमेत्ता होंति । अणुभागट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि, जीवरासी पुण अणंतो, तेण एक्केक्कम्हि अणुभागट्ठाणे जहण्णुक्कस्सेण अणंतेहि जीवेहि होदव्वं, अणुभागट्ठाणाणि विरलेदूण जीवरासिं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्मि अणंतजीवोवलंभादो त्ति ? ण एस दोसो, तसजीवे अस्सिदूण जीवसमुदाहारस्स परूविदत्तादो । थावरजीवे अस्सिदूण किमट्ठं जीवसमुदाहारो ण परूविदो ? ण, अणुभागट्ठाणेसु तसजीवाणमच्छणविहाणे अवगदे थावरजीवाणं तत्थावट्ठाणविहाणस्स सुहेण अवगंतुं सक्किज्जमाणत्तादो । थावरजीवाणमवट्ठाणविहाणे अवगदे तसजीवाणमवट्ठाणविहाणं किण्णावगम्मदे ? ण, एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि तसजीवपमाणस्स णिरंतरं तसजीवेहि णिरुद्धट्ठाणपमाणस्स[ओ] तसजीवविरहिदअणुभागट्ठाणपमाणस्स य[ो] तत्तो अवगंतुमसक्किज्जमाणत्तादो । एवमेयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो समत्तो ।

असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागस्थानोंको ऊपर एक पंक्तिके आकारसे बुद्धिद्वारा स्थापित करके उनमेंसे एक एक अनुभागस्थानमें जघन्य व उत्कृष्टसे जीवोंके प्रमाणको कहते हैं । वह इस प्रकार है–उसमें जघन्यसे एक जीव होता है, दो होते हैं, अथवा तीन होते हैं; इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एककी वृद्धिपूर्वक एक एक अनुभागस्थानमें उत्कृष्टसे वे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण तक होते हैं ।

शंका--अनुभागस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, परन्तु जीवराशि अनन्तानन्त है; अतएव एक एक अनुभागस्थानमें जघन्य व उत्कृष्टसे अनन्त जीव होने चाहिये, क्योंकि, अनुभागस्थानोंका विरलन करके जीवराशिको समखण्ड करके देनेपर एक एक स्थानमें अनन्त जीव पाये जाते हैं ?

समाधान--यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जीवसमुदाहारकी प्ररूपणा त्रस जीवोंका आश्रय करके की गई है ।

शंका--स्थावर जीवोंका आश्रय करके जीवसमुदाहारकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, अनुभागस्थानोंमें त्रस जीवोंके रहनेके विधानको जान लेनेपर उनमें स्थावर जीवोंके रहनेका विधान सुखपूर्वक जाना जा सकता है ।

शंका--स्थावर जीवोंके रहनेके विधानको जान लेनेपर त्रस जीवोंके रहनेका विधान क्यों नहीं जाना जाता है ?

समाधान--नहीं क्योंकि, उससे एक एक स्थानमें त्रस जीवोंके प्रमाणको, निरन्तर त्रस जीवोंसे निरुद्ध स्थानप्रमाणको तथा त्रस जीवोंसे रहित अनुभागस्थानोंके प्रमाणको जानना शक्य नहीं है । इस प्रकार एकस्थानजीवप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

[ओ] अप्रतौ ' णिरुद्धट्ठाण ' इति पाठः । [ो] आप्रतौ ' अणुभागट्ठाणस्स य ' इति पाठः ।

णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि अविरहिदट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।२७०।

जीवसहिदाणि ट्ठाणाणि एग-बो-तिण्णिट्ठाणाणि आदिं कादूण जाव उक्कस्सेण णिरंतरं जीवसहिदट्ठाणाणि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताणि चेव होंति । संपहि कसायपाहुडे उवजोगो णाम अत्थाहियारो । तत्थ कसाउदयट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि♣ तेसु वट्टमाणकाले जत्तिया तसा संति✿ तत्तियमेत्ताणि आवुण्णाणि त्ति कसायपाहुडसुत्तेण♣ भणिदं । तदो एसो वेयणासुत्तत्थो ण घडदे? ण, सुत्तस्स जिणवयणविणिग्गयस्स अविरुद्धाइरियपरंपराए आगयस्स अप्पमाणत्तविरोहादो । कधं पुण दोण्णं सुत्ताणमविरोहो? वुच्चदे– एत्थ वेयणाए जीवसहिदाणि ट्ठाणाणि णिरंतरं जदि होंति तो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताणि चेव होंति त्ति भणिदं । कसायपाहुडे पुणो✿ जीवसहिव–णिरंतरट्ठा⊙णपमाणपरूवणा ण कदा, किंतु वट्टमाणकाले णिरंतराणिरंतरविसेसणेण विणा जीवसहिदट्ठाणाणं पमाणपरूवणा कदा । तेण जीवसहिदट्ठाणाणि तत्थ

निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगमसे जीवोंसे सहित स्थान एक, अथवा दो, अथवा तीन, इस प्रकार उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग तक होते हैं ॥ २७० ॥

जीव सहित स्थान एक, दो व तीन स्थानोंसे लेकर उत्कृष्टसे निरन्तर जीव सहित स्थान आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र ही होते हैं ।

शंका-- कषायपाहुडमें उपयोग नामका अर्थाधिकार है । उसमें कषायोदयस्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । उनमें वर्तमानकालमें जितने त्रस जीव हैं उतने मात्र पूर्ण हैं, ऐसा कसायपाहुडसूत्रके द्वारा बतलाया गया है । इसलिये यह वेदनासूत्रका अर्थ घटित नहीं होता है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, जिन भगवान्‌के मुखसे निकले और अविरुद्ध आचार्य–परम्परासे आये हुए सूत्रके अप्रमाण होनेका विरोध है ।

शंका-- फिर इन दोनों सूत्रोंमें अविरोध कैसे होगा ?

समाधान – इसका उत्तर कहते हैं । यहाँ वेदना अधिकारमें, जीव सहित स्थान निरंतर यदि होते हैं तो आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र ही होते हैं, ऐसा कहा गया है । परंतु कषायपाहुडमें जीव सहित निरंतर स्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा नहीं की गई है, किन्तु वहाँ वर्तमान–कालमें निरंतर व सांतर विशेषणके बिना जीव सहित स्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा की गई है । इसलिए जीव सहित स्थान वहाँ प्रतरके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं · उतने होकरके भी त्रस-

---

♣ संपहि एत्थ पुच्छाविसईकयत्थस्स परूवणं कुणमाणो तत्थ ताव कसायुदयट्ठाणागमियत्तावहारणट्ठमुत्तरिमं सुत्तमाह– कसाउदयट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा । जयध. अ प. ९१९. । ✿ ताप्रतौ 'होंति' इति पाठः । ♣ तत्थ ताव वट्टमाणसमयम्मि तसजीवेहि केत्तियाणि ट्ठाणाणि आवूरिदाणि केत्तियाणि च सुण्णट्ठाणाणि त्ति एदस्स णिद्धारणट्ठमुवरिमसुत्तावयवेण– तेसु जत्तिया तसा तत्तियमेत्ताणि आवुण्णाणि । जयध. अ प. ९१९ ✿ आप्रतौ 'कसायपाहुडे सुणं', ताप्रतौ 'कसायपाहुडे सु (पु) णो' इति पाठः । ⊙ अ-आप्रत्योः 'णिरंतरट्ठाण' इति पाठः ।

पदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि होंति । होंताणि वि तसजीवमेत्ताणि ट्ठाणाणि तसजीवसहिदाणि वट्टमाणकाले होंति, एगेगुदयट्ठाणम्मि एगेगतसजीवे ट्ठविदे जीवसहिदट्ठाणाणं तसजीवमेत्ताणमुवलंभादो । एत्थ अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु जीवसमुदाहारो परूविदो । तत्थ कसायपाहुडे कसाउदयट्ठाणेसु । तदो दोण्णंपि जीवसमुदाहाराणं एगमहियरणं णत्थि त्ति विरोहुब्भावणमजुत्तं । तम्हा* दोण्णं सुत्ताणं णत्थि विरोहो त्ति सिद्धं । एवं णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो समत्तो ।

सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि विरहिदाणि ट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ॥ २७१ ॥

जीवेहि विरहिदमेगमणुभागबंधट्ठाणं होदि । णिरंतरं दो वि होंति, तिण्णि वि होंति, एवं जाव उक्कस्सेण जीवविरहिदट्ठाणाणि णिरंतरमसंखेज्जलोगमेत्ताणि वि होंति, असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधट्ठाणेसु जदि वि लोगमेत्तट्ठाणाणि तसजीवसहगवाणि होंति तो वि जीवविरहिदट्ठाणाणि णिरंतरमसंखेज्जलोगमेत्ताणं उवलंभादो । एवं सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो समत्तो ।

णाणाजीवकालपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्मि णाणा जीवा केवचिरं कालादो होंति ॥ २७२ ॥

जीवोंके बराबर स्थान त्रस जीवोंसे सहित वर्तमान कालमें होते हैं, क्योंकि, एक एक उदयस्थानमें एक एक त्रस जीवको स्थापित करनेपर जीवों सहित स्थान त्रस जीवोंके बराबर पाये जाते हैं । यहां अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें जीवसमुदाहार की प्ररूपणा की गई है, परन्तु वहां कषायपाहुडमें कषायोदस्थानोंमें उसकी प्ररूपणा की गई है । अतः उन दोनों समुदाहारोंका आधार न होनेसे विरोध बतलाना अनुचित है । इस कारण उन दोनों सूत्रोंमें कोई विरोध नहीं है, यह सिद्ध है ।

इस प्रकार निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगमसे जीवोंसे रहित स्थान एक, अथवा दो, अथवा तीन, इस प्रकार उत्कृष्टसे असंख्यात लोक प्रमाण होते हैं ॥ २७१ ॥

जीवोंसे रहित एक अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान होता है, निरन्तर दो भी होते हैं, और तीन भी होते हैं । इस प्रकार उत्कृष्टसे जीव रहित स्थान निरन्तर असंख्यात लोक प्रमाण भी होते हैं, क्योंकि, असंख्यातलोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थानोंमें यद्यपि लोक प्रमाण स्थान त्रस जीव सहित होते हैं तो भी जीव रहित स्थान निरन्तर असंख्यात लोक प्रमाण पाये जाते हैं । इस प्रकार सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

नानाजीवकालप्रमाणानुगमसे एक एक स्थानमें नाना जीवोंका कितना काल है ? ॥ २७२ ॥

(*) आप्रतौ ' तदोण्णं ', ताप्रतौ' तं दोण्णं ' इति पाठः । * अ-आप्रत्योः 'तं जहा ', ताप्रतौ ' तं जहा (तम्हा) इति पाठः ।

एवं पुच्छासुत्तं समयावलिय-खणलव-मुहुत्त-दिवस-पक्ख-मास-उदु-अयण-संवच्छरमादिं कादूण जाव कप्पो त्ति एवं कालविसेसमवेक्खदे* ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ २७३ ॥

मार्गदर्शक :- कुतो? श्रीएकस्मिन् जीवस्य एकमनुभागबंधद्वाणमेगसमयं बंधिय विदियसमए वड्ढिदूण अण्णमणुभागट्ठाणं बंधमाणस्स जहण्णेण एगसमयकालुवलंभादो ।

उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥ २७४ ॥

एगो जीवो एक्कम्हि ट्ठाणम्मि एगसमयमादिं कादूण जावुक्कस्सेण अट्ठ समया त्ति अच्छदि । जाव सो अण्णं ट्ठाणंतरं ण गच्छदि ताव अण्णेसु वि जीवेसु तत्थ आगच्छमाणेसु जीवेहि* अविरहिदं होदूण जेण ट्ठाणमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तकालं अच्छदि तेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स असुण्णकालो त्ति भणिदं । एवं णाणाजीवकालपमाणाणुगमो समत्तो ।

वड्ढिपरूवणदाए तत्थ इमाणि दुवे अणुयोगद्दाराणि – अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ॥ २७५ ॥

परूवणा-पमाण-भागाभागाणुयोगद्दाराणि एत्थ किण्ण परूविदाणि ? ण ताव

यह पृच्छासूत्र समय, आवली, क्षण, लव, मुहूर्त, दिवस, पक्ष, मास, ऋतु, अयन और संवत्सरसे लेकर कल्पकाल पर्यंत इस प्रकार कालविशेषकी अपेक्षा करता है ।

जघन्य काल एक समय है ॥ २७३ ॥

कारण कि एक अनुभागबन्धस्थानको एक समय बांधकर द्वितीय समयमें वृद्धिको प्राप्त होकर अन्य अनुभागबन्धस्थानको बांधनेवाले एक जीवका काल जघन्यसे एक समय पाया जाता है ।

उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भाग है ॥ २७४ ॥

एक जीव एक स्थानमें एक समयसे लेकर उत्कृष्टसे आठ समय तक रहता है । जब तक वह अन्य स्थानको नहीं प्राप्त करता है तब तक अन्य जीवोंके भी वहां जानेपर जीवोंके विरहसे रहित होकर चूंकि एक स्थान आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण काल तक रहता है, अतएव आवलीके असंख्यातवें भागमात्र ही एक एक स्थानका अविरहकाल होता है; यह सूत्रका अभिप्राय है । इस प्रकार नानाजीवकालप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

वृद्धिप्ररूपणा इस अधिकारमें ये दो अनुयोगद्वार हैं –अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा ॥ २७५ ॥

शंका– यहां प्ररूपणा, प्रमाण और भागाभागानुगम अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

---

* प्रतिषु ' भुवेक्खदे ' इति पाठः । * अप्रतौ ' जीवेसुहि ' इति पाठः ।

परूवणा वुच्चदे, सेसाणुयोगद्दारपरूवणण्णहाणुववत्तीदो चेव अणुभागट्ठाणेसु जीवाणमत्थित्तसिद्धीदो। ण पमाणाणुयोगद्दारं पि वत्तव्वं, एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमादो चेव तदवगमादो। ण भागाभागाणुगमो वि, अप्पाबहुगादो चेव तदवगमादो। तेण अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा चेदि दो चेव एत्थ अणुयोगद्दाराणि। ण वड्ढिणिबंधणसंतादिपरूवणा♠ वि जुज्जदे, एदेहि दोहि अणुयोगद्दारेहिंतो चेव तदवगमादो।

अणंतरोवणिधाए जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे थोवा जीवा ॥ २७६ ॥

कुदो? अइविसोहीए वट्टमाणजीवाणं पाएण संभवाभावादो। ते च आवलियाए असंखेज्जविभागमेत्ता चेव, एक्केक्कट्ठाणे एगसमएण सुट्ठु जदि बहुवा जीवा होंति तो आवलियाए असंखेज्जविभागमेत्ता चेव होंति त्ति एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमाणुयोगद्दारे परूविदत्तादो। होदु वट्टमाणकाले एगेगट्ठाणम्मि उक्कस्सेण जीवपमाणमावलियाए असंखेज्जदिभागो, एसा अणंतरोवणिधा च अदीदकालमस्सिऊण ट्ठिदा। कुदो णव्वदे? सव्वाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु एगसमयम्मि उक्कस्सेण संचिदएगट्ठाणजीवाणं✡ बुद्धीए कयसहजोगाणं वड्ढिपरूवणत्तादो। तदो एगेगट्ठाणम्मि अणंतेहि जीवेहि होदव्वमिदि ?

समाधान— प्ररूपणाके कहनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि, इसके बिना शेष अनुयोग द्वारोंकी प्ररूपणा चूंकि बनती नहीं है अतः इसीसे अनुभागस्थानोंमें जीवोंका अस्तित्व सिद्ध है। प्रमाणानुयोगद्वार भी यहां कहने योग्य नहीं है, क्योंकि, एकस्थानजीवप्रमाणानुगमसे ही उसका परिज्ञान हो जाता है। भागाभागानुगम अनुयोगद्वार भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, अल्पबहुत्वसे ही उसका परिज्ञान हो जाता है। इसलिये यहाँ अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा ये दो ही अनुयोगद्वार है। वृद्धिके कारणभूत सत् आदि अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा भी यहाँ योग्य नहीं है, क्योंकि, इन दो अनुयोगद्वारोंसे ही उनका अवगम हो जाता है।

अनन्तरोपनिधासे जघन्य अनुभागबंधाध्यवसानस्थानमें जीव सबसे स्तोक हैं। २७६।

कारण कि अतिशय विशुद्धिमें वर्तमान जीवोंकी प्रायः सम्भावना नहीं है। वे भी आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, क्योंकि, एक एक स्थानमें एक समयमें यदि बहुत अधिक जीव होते हैं तो आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा एकस्थानजीवप्रमाणानुगम अनुयोगद्वारमें कहा जा चुका है। S११ पृ. २४२ सूत्र २६९

शंका— वर्तमान कालमें एक एक स्थानमें उत्कृष्टसे जीवोंका प्रमाण आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र भले ही हो किन्तु यह अनन्तरोपनिधा अतीत कालका आश्रय करके स्थित है। यह कहांसे जाना जाता है ? वह सब अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें बुद्धिकृत सहयोग युक्त होते हुए एक समयमें उत्कर्षसे संचित एक स्थानके जीवोंकी वृद्धिकी जो प्ररूपणा की गई है, उससे जाना जाता है। इस कारण एक एक स्थानमें अनन्त जीव होने चाहिये ?

♠ अप्रतौ ' संताहिपरूवणा— ' इति पाठः। ✡ आ-ताप्रत्योः ' एगट्ठाणाणं जीवाणं ' इति पाठः।

ण एस दोसो, बहुएण वि कालेण वत्तिसरूवेणेव सत्तीणं वड्डि-हाणीए अभावादो । ण चोदंचणे समुद्दे वि पक्खित्ते बहुगं जलमत्थि त्ति सगप्पमाणादो वड्ढिमं पाणियं माइ । एवमदीवे वि काले वट्टमाणे इव एक्केक्कम्हि अणुभागबंधट्ठाणे उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जविभागमेत्ता चेव जीवा होंति त्ति । एगेगट्ठाणमहिट्ठियसव्वजीवे वुद्धीए मेलाविय तेसिमणंताणमणंतरोवणिधा किण्ण वुच्चदे ? ण, एवं संते हेट्ठिमचदुसमय-पाओग्गट्ठाणजीवेहिंतो जवमज्झादो उवरिमविसमयपाओग्गसव्वट्ठाणजीवाणमसंखेज्ज-

पाठभेदः — आप्रतौ 'श्री सुविधिसागर जी महाराज'

गुणत्तप्पसंगादो । ण च एवं, विसमयपाओग्गसव्वट्ठाणजीवे जीवेहिंतो हेट्ठिमचदुसमय-पाओग्गसव्वट्ठाणजीवा असंखेज्जगुणा त्ति उवरि भण्णमाणत्तादो । तदो एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि जीवा आवलियाए असंखेज्जविभागमेत्ता चेव उक्कस्सेण होंति त्ति घेत्तव्वं ।

विदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ॥ २७७ ॥

जहण्णट्ठाणादो असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि उवरि गंतूण जं ट्ठाणं ट्ठिदं तं विदियमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणमिदि घेत्तव्वं । असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि उवरि चडिदूण ट्ठिदट्ठाणस्स कधं विदियत्तं ? ण, वड्ढिमस्सिदूण परूवणाए कीरमाणाए

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, बहुतकालमें भी व्यक्ति स्वरूपसे ही शक्तियोंकी हानि-वृद्धिका अभाव है । उदञ्चनको समुद्रमें भी फेंकनेपर बहुत जल है इसलिए उसमें अपने प्रमाणसे अधिक पानी समा सकेगा ऐसा नहीं है (कारण कि उदञ्चन मिट्टीके पात्र विशेष) को समुद्रमें भी रखनेपर चूंकि वहां बहुत जल भरा हुआ है, अतः उसमें (उदञ्चनमें) अपने प्रमाणसे अधिक जल समा जावेगा; यह सम्भव नहीं है । इसी प्रकारसे अतीतकालमें वर्तमान कालके समान एक एक अनुभागस्थानमें उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही जीव होते हैं ।

शंका– एक एक स्थानको प्राप्त सब जीवोंको बुद्धिसे मिलाकर उन अनन्तानन्त जीवोंकी अनन्तरोपनिधा क्यों नहीं कही जाती है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, ऐसा होनेपर अधस्तन चार समय योग्य स्थानोंके जीवोंकी अपेक्षा यवमध्यसे ऊपरके दो समय योग्य सब स्थानोंके जीवोंके असंख्यातगुणे होनेका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, दो समय योग्य सब स्थानोंके जीव असंख्यातगुणे हैं, ऐसा आगे कहा जानेवाला है । इस कारण एक एक स्थानमें जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

उनसे द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव विशेष अधिक हैं ॥ २७७ ॥

अघन्य स्थानसे आगे असंख्यातलोक मात्र स्थान जाकर जो स्थान स्थित है वह द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

शंका– असंख्यातलोक प्रमाण स्थान आगे जाकर स्थित स्थान द्वितीय कैसे हो सकता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, वृद्धिका आश्रय करके प्ररूपणाके करनेपर अन्य द्वितीय स्थान

अ-आप्रत्योः ' ण चेदंचणे ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्सासंभवादो । ण च वड्ढीए परूविज्जमाणाए वड्ढिविरहिदं ट्ठाणं विदियं होदि, अणवत्थापसंगादो । असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि जीवाधारत्तणेण जहण्णट्ठाणेण समाणाणि त्ति कधं णव्वदे ? ण, अण्णहा जवमज्झादो हेट्ठा उवरिं च असंखेज्जलोगमेत्तदुगुणवड्ढि-हाणिप्पसंगा । ण च एवं, णाणाजीवेअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढिहाणिट्ठाणंतराणि आवलियाए असंखेज्जदिभागो त्ति उवरि परंपरोवणिधाए भण्णमाणत्तादो । किं च ण णिरंतरं सव्वट्ठाणेसु जीववड्ढी होदि, जवमज्झम्मि आवलियाए असंखेज्जदिभागं मोत्तूण असंखेज्जलोगमेत्तजीवप्पसंगादो । केत्तियमेत्तेण विसेसाहिया? * एगजीवमेत्तेण । जहण्णट्ठाणजीवे विरलेदूण तेदे चेव विरलणरूवं पडि समखंडं कादूण दिण्णेसु तत्थ एगखंडमेत्तेण विसेसाहिया त्ति भणिदं होदि ।

तदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ।२७८।

एत्थ वि पुव्वं व अवट्ठिदमसंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणं गंतूण विदियो जीवो वड्ढदि । हेट्ठिमसव्वट्ठाणाणि जीवेहि जहण्णट्ठाणजीवेहिंतो एगजीवाहियट्ठाणेण समाणाणि । कुदो ? साभाविगादो ।

सम्भव नहीं है । वृद्धिकी प्ररूपणा की जानेपर वृद्धिसे रहित स्थान दूसरा होता नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेपर अनवस्थाका प्रसंग आता है ।

शंका- असंख्यात लोकप्रमाण स्थान जीवाधार स्वरूपसे जघन्य स्थानके समान है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, इसके विना यवमध्यसे नीचे व ऊपर असंख्यात लोकप्रमाण दुगुणवृद्धि-हानिस्थानोंके होनेका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, नानाजीवों-सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके द्विगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर आवलीके असंख्यातवें भाग है; ऐसा आगे परम्परोपनिधामें कहा जानेवाला है । दूसरे, सब स्थानोंमें निरन्तर जीववृद्धि होती हो, ऐसा भी नहीं है, क्योंकि, यवमध्यमें आवलीके असंख्यातवें भागको छोडकर असंख्यात लोकमात्र जीवोंका प्रसंग आता है ।

शंका- कितने प्रमाणसे वे विशेष अधिक हैं ?

समाधान- एक जीव मात्रसे वे विशेष अधिक हैं । जघन्य स्थानके जीवोंका विरलन-कर उनको ही विरलन अंकके प्रति समखण्ड करके देनेपर उनमें एक खंड मात्रसे वे विशेष अधिक हैं, यह अभिप्राय है ।

उनसे तृतीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव विशेष अधिक हैं । २७८ ।

यहांपर भी पहिलेके समान अवस्थित असंख्यात लोकमात्र अध्वान जाकर द्वितीय जीव बढता है । अधस्तन सब स्थान जीवोंकी अपेक्षा जघन्य स्थानके जीवोंसे एक जीव अधिक स्थानके समान हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

---

* अ-आप्रत्योः ' विसेसाहियाए ', ताप्रतौ ' विसेसाहिया (ए) ' इति पाठः ।

एवं विसेसाहिया विसेसाहिया जाव जवमज्झं ॥ २७९ ॥

एदेण कमेण असंखेज्जलोगमेत्तद्धाणं गंतूण एगेगं जीवं वड्ढाविय णेदव्वं जाव जवमज्झं ति । सव्वत्थ एगेगो चेव जीवो वड्ढदि त्ति कधं णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धाइरियोवदेसादो । जेण गुणहाणिं पडि पक्खेवभागहारो दुगुणदुगुणकमेण जाव जवमज्झं ताव गच्छदि तेण पक्खेवो अवट्ठिदो एगजीवमेत्तो चेव होदि त्ति आइरिया भणंति । एदमाइरियवयणं पमाणं कादूण एगजीवो चेव वड्ढदि त्ति सद्दहेदव्वं ।

संपहि अणंतरोवणिधाए भावत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा– जहण्णट्ठाणजीवपमाणं विरलेदूण तेसु चेव जीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि । पुणो एत्थ एगजीवं घेत्तूण जहण्णए ट्ठाणे जीवा थोवा । विदिए जीवा तत्तिया चेव । एवमसंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणेसु जीवा तत्तिया चेव होंति त्ति । तदो उवरिमाणंतरट्ठाणे एगो जीवो पक्खिविदव्वो । पुणो विरलणाए विदियरूवधरिदजीवो तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवेसु पक्खिविदव्वो । तदो एदस्स ट्ठाणस्स जीवेहि समाणाणि होदूण असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि गच्छंति । तदो अणंतरउवरिमट्ठाणे तदियो जीवो वड्ढावेदव्वो । एवमणेण विहाणेण पुव्वुत्तद्धाणं धुवं कादूण एगेगजीवं वड्ढाविय णेयव्वं जाव जहण्णट्ठाणजीवेहिंतो दुगुणजीवा त्ति । पढम–

इस प्रकार यवमध्य तक जीव विशेष अधिक विशेष अधिक हैं ॥ २७९ ॥

इस क्रमसे असंख्यातलोक मात्र अध्वान जाकर एक एक जीव बढाकर यवमध्य तक ले जाना चाहिये ।

शंका–– सर्वत्र एक एक ही जीव बढता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान–– यह अचार्यके सूत्रविरोधसे रहित उपदेशसे जाना जाता है । चूंकि प्रत्येक गुणहानिमें यवमध्य तक प्रक्षेपभागहार दुगुणे दुगुणे क्रमसे जाता है, इसलिये प्रक्षेप अवस्थित होता हुआ एक जीव प्रमाण ही होता है; ऐसा आचार्य कहते हैं । आचार्योंके इस वचनको प्रमाण करके एक जीव ही बढता है, ऐसा श्रद्धान करना चाहिये ।

अब अनंतरोपनिधाके भावार्थकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है– जघन्य स्थानके जीवोंके प्रमाणका विरलनकर उन्हीं जीवोंको समखंड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः यहाँ एक जीवको ग्रहणकर जघन्य स्थानमें जीव स्तोक हैं । द्वितीय स्थानमें जीव उतने ही हैं । इस प्रकार असंख्यातलोक मात्र स्थानोंमें जीव उतने मात्र ही होते हैं । उनसे आगेके अनंतर स्थानमें एक जीवका प्रक्षेप करना चाहिये । फिर भी असंख्यात लोक मात्र स्थानोंमें जीव उतने मात्र ही होते हैं । तत्पश्चात् विरलन राशिके द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त एक जीवका तदनंतर आगेके स्थान संबधी जीवोंमें प्रक्षेप करना चाहिये । फिर इस स्थानके जीवोंसे समान होकर असंख्यातलोक मात्र स्थान जाते हैं । तत्पश्चात् अनन्तर आगेके स्थानमें तृतीय जीवको बढाना चाहिये । इस प्रकार इस विधिसे पूर्वोक्त अध्वानको ध्रुव करके एक एक जीवको बढाकर जघन्य स्थानके जीवोंसे दूने जीवोंके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये ।

दुगुणवड्ढीए एगेगजीववड्ढिअद्धाणं सरिसमिदि कधं णव्वदे ? गुरूवदेसादो । आइरियोवदेसो किण्ण चप्पलओ? ✿ गंगाणईए पवाहो व्व अविच्छेदेण आइरियपरंपराए आगदस्स उप्पमाणत्तविरोहादो । पुणो पुव्विल्लभागहारादो दुगुणं भागहारं विरलिय दुगुणवड्ढिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु रूवं पडि एगेगजीवपमाणं पावदि । पुणो एत्थ एगजीवं घेत्तूण आवलियाए असंखेज्जलोगमेत्तेसु [illegible] दुगुणवड्ढिजीवसमाणेसु ✿ ट्ठाणेसु गदेसु तदो उवरिमट्ठाणे पक्खित्ते तदित्थजीवपमाणं होदि । णवरि पढमदुगुणवड्ढीए◆ एगजीववड्ढिअद्धाणस्स अद्धं गंतूण विदियदुगुणवड्ढीए एगो जीवो वड्ढदि । पुणो एत्तियं चेव अद्धाणं गंतूण विदियो जीवो वड्ढदि । एवमणेण विहाणेण णेयव्वं जाव विरलणमेत्तजीवा पईट्ठा त्ति ताधे चउग्गुणवड्ढी होदि । विदियदुगुणवड्ढिअद्धाणं पढमदुगुणवड्ढिअद्धाणेण सरिसं । कुदो? पढमगुणहाणीए दुगुणवड्ढीए♣ एगजीववड्ढिअद्धाणस्स दुभागमवट्ठिदं सरिसं गंतूण विदियदुगुणवड्ढीए एगेगजीववड्ढिसमुवलंभादो ।

पुणो चदुग्गुण-पढमदुगुणवड्ढिभागहारं विरलेदूण चदुग्गुणवड्ढिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु रूवं पडि एगेगजीवपमाणं पावदि । पुणो चदुग्गुणवड्ढिजीवा आवलियाए

शंका – प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक एक जीवकी वृद्धिको प्राप्त अध्वान सदृश है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान – वह गुरुके उपदेशसे जाना जाता है ।

शंका – आचार्यका उपदेश मिथ्या क्यों नहीं हो सकता ?

समाधान – गंगानदीके प्रवाहके समान विच्छेदसे रहित होकर आचार्यपरम्परासे आये हुए उपदेशके अप्रमाण होनेका विरोध है ।

पश्चात् पूर्व भागहारसे दुगुणे भागहारका विरलनकर दुगुणवृद्धियुक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः यहां एक जीवको ग्रहण कर जीवोंसे अर्थात् जीवप्रमाणकी अपेक्षा दुगुणवृद्धि युक्त जीवोंके समान असंख्यातलोक मात्र स्थानोंके बीत जानेपर उससे आगेके स्थानमें उसे मिलानेपर वहांके जीवोंका प्रमाण होता है । विशेष इतना है कि प्रथम गुणहानिमें दुगुणवृद्धिमें एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वानका अर्ध भाग जाकर द्वितीय दुगुणवृद्धिमें एक जीव बढता है । फिर अध्वान जाकर द्वितीय विभाग जीव बढता है । इस प्रकार इस विधिसे विरलन राशि प्रमाण जीवोंके प्रविष्ठ होने तक ले जाना चाहिए । उस समय चतुर्गुणी वृद्धि होती है । द्वितीय दुगुणवृद्धिका अध्वान प्रथम दुगुणवृद्धिके अध्वानके सदृश है, क्योंकि, प्रथम एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वानका अर्ध भाग समानरूपसे अवस्थित जाकर द्वितीय दुगुणवृद्धिमें एक जीवकी वृद्धि पायी जाती है ।

पुनः प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारसे चौगुणे भागहारका विरलन करके चौगुणी वृद्धि युक्त जीवोंका समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता

✿ प्रतिषु ' चप्फलओ ' इति पाठः । ✿ ताप्रतौ ' सेत्तेसु जीवेसु जीवेहि ' इति पाठः । ✿ अ-आप्रत्योः ' समासेसु ' इति पाठः । ◆ प्रतिषु ' पढमगुणहाणीए इति पाठः । ♣ ताप्रतौ ' पढमगुणवड्ढीए इति पाठः

असंखेज्जविभागमेत्ता । तदणंतरउवरिमविदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । तदिए वि ट्ठाणे तत्तिया चेव । एवमसंखेज्जलोगमेत्तचदुग्गुणवड्ढिट्ठाणेसु गदेसु हेट्ठिमविरलणाए एगजीवं घेत्तूण तं तदित्थट्ठाणजीवेसु पक्खित्ते उवरिम-ट्ठाणजीवपमाणं होदि । णवरि पढमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणस्स चदुब्भागे एत्थ एगेगो जीवो वड्ढदि । पुणो विदियचदुब्भागमेत्तद्धाणं जीवेहि अवट्ठिदं गंतूण विदियो जीवो अधियो होदि । तदियचदुब्भागमेत्तद्धाणं जीवेहि अवट्ठिदं गंतूण तदियो जीवो अधियो होदि । पुणो चउत्थचदुब्भागमेत्तद्धाणं जीवेहि अवट्ठिदं गंतूण चउत्थो जीवो अधियो होदि । एवमवट्ठिदं चउत्थभागद्धाणं गंतूण एगेगजीवो वड्ढावेदव्वो जाव विरलणमेत्ता जीवा पविट्ठा त्ति । ताधे अट्ठगुणवड्ढिट्ठाणं होदि ।

पुणो पढमदुगुणवड्ढिभागहारअट्ठगुणं विरलिय अट्ठगुणवड्ढिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु रूवं पडि एगेगजीवपमाणं पावदि । पुणो चउत्थदुगुणवड्ढीए जह-ण्णट्ठाणे जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो । विदिए ट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं तत्तिया तत्तिया चेव जीवा होदूण गच्छंति जाव असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणे त्ति । तदो हेट्ठिमविरलणाए एगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु पक्खित्ते तदणंतरउवरिम-ट्ठाणजीवपमाणं होदि । णवरि पढमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणादो एदिस्से

है । पुनः चौगुणी वृद्धियुक्त जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। तदनन्तर आगेके द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव उतने ही हैं । तृतीय स्थानमें भी उतने ही जीव हैं । इस प्रकार असंख्यात लोक प्रमाण चौगुणी वृद्धि युक्त स्थानोंके बीतनेपर अधस्तन विरलनके एक जीवको ग्रहण कर उसे वहांके स्थानोंके जीवोंमें मिलानेपर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । विशेष इतना है कि प्रथम दुगुण वृद्धिमें एक जीववृद्धि युक्त अध्वानके चतुर्थ भागमें यहाँ एक जीव बढ़ता है । पुनः द्वितीय चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जीवोंसे अवस्थित जाकर द्वितीय जीव अधिक होता है । तृतीय चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जीवोंसे अवस्थित जाकर तृतीय जीव अधिक होता है । फिर चतुर्थ चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जीवोंसे अवस्थित जाकर चतुर्थ जीव अधिक होता है । इस प्रकार अवस्थित चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जाकर एक एक जीवको बढ़ाना चाहिये जब तक कि विरलन मात्र जीव प्रविष्ट होते हैं । तब अठगुणी वृद्धिका स्थान होता है ।

पश्चात् प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारसे अठगुणे भागहारका विरलन कर अठगुणी वृद्धि युक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः चतुर्थ दुगुणवृद्धिके जघन्य स्थानमें जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । द्वितीय स्थानमें जीव उतने ही हैं । इस प्रकार उतने उतने ही जीव होकर असंख्यात लोक प्रमाण स्थानों तक जाते हैं । तत्पश्चात् अधस्तन विरलनके एक जीवको ग्रहण कर उसे वहांके स्थानके जीवोंमें मिलानेपर तदनन्तर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है। विशेष इतना है कि एकजीवकी वृद्धि युक्त अध्वानसे इस दुगुणवृद्धिका एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वान आठवें भाग प्रमाण होता

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागरजी महाराज

दुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणमट्ठमभागो होदि । पुणो विदिय♣अट्ठमभागमेत्तद्धाणं गंतूण विदियो जीवो अधिओ होदि । पुणो तदियअट्ठमभागमेत्तद्धाणं गंतूण तदियो जीवो अधिओ होदि । चउत्थअट्ठमभागं गंतूण चउत्थो जीवो अधिओ होदि । पंचम-अट्ठमभागं गंतूण पंचमो जीवो अधिओ होदि । छट्ठअट्ठमभागं गंतूण छट्ठो जीवो अहिओ होदि । सत्तमअट्ठमभागं गंतूण सत्तमो जीवो अहिओ होदि । अट्ठमअट्ठमभागं गंतूण अट्ठमो जीवो अधिओ होदि । अणेण भागेण(Δ) अट्ठमभागं धुवं कादूण विरलणमेत्त-जीवेसु परिवाडीए पविट्ठेसु सोलसगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । एवं दुगुणवड्ढिअद्धाण पढमदुगुणवड्ढिअद्धाणेण समाणं, तत्थ एगजीववड्ढिअद्धाणस्स अट्ठमभागे एदिस्से गुणहाणीए एगजीववड्ढिदंसणादो ।

पुणो पढमदुगुणवड्ढिअद्धाणं सोलसगुणं विरलेदूण सोलसगुणवड्ढिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि । तदो पंचमदुगुणवड्ढिपढमाणुभाग-बंधज्झवसाणट्ठाणजीवा♣ आवलियाए असंखेज्जदिभागो । विदिय ट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं णेयव्वं जाव असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि त्ति । तदो हेट्ठिमविरलणाए एगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु पक्खित्ते तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि । णवरि पढम-दुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणस्स सोलसभागे एदिस्से गुणहाणीए एगो जीवो वड्ढदि त्ति घेत्तव्वं । पुणो विदियं सोलसभागं गंतूण विदियो जीवो अहियो होदि ।

है । पश्चात् द्वितीय अष्टम भाग प्रमाण अध्वान जाकर द्वितीय जीव अधिक होता है । पुनः तृतीय अष्टम भाग प्रमाण अध्वान जाकर तृतीय जीव अधिक होता है । चतुर्थ अष्टम भाग जाकर चतुर्थ जीव अधिक होता है । पंचम अष्टम भाग जाकर पाँचवाँ जीव अधिक होता है । छठा अष्टम भाग जाकर छठा जीव अधिक होता है । सातवाँ अष्टम भाग जाकर सातवाँ जीव अधिक होता है । आठवाँ अष्टम भाग जाकर आठवाँ जीव अधिक होता है । इस भागसे अष्टम भागको ध्रुव करके विरलन राशि प्रमाण जीवोंके परिपाटीसे प्रविष्ट होनेपर सोलहगुणी वृद्धिका स्थान होता है । यह दुगुणवृद्धिअध्वान प्रथम दुगुणवृद्धिअध्वानके समान है, क्योंकि, वहाँ एक जीववृद्धि-अध्वानके आठवें भागमें इस गुणहानिमें एक जीवकी वृद्धि देखी जाती है ।

पुनः प्रथम दुगुणवृद्धिके अध्वानको सोलहगुणा विरलन कर सोलहगुणी वृद्धि युक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । पश्चात् पाँचवीं दुगुणवृद्धिके प्रथम अनुभागबंधाध्यवसानस्थानके जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । द्वितीय स्थानमें जीव उतने ही हैं । इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र स्थानों तक ले जाना चाहिये । तत्पश्चात् अधस्तन विरलनके एक जीवको ग्रहण कर उसे वहाँके स्थानके जीवोंमें मिलाने-पर तदनंतर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । विशेष इतना है कि प्रथम दुगुणवृद्धि संबंधी एक जीववृद्धिअध्वानके सोलहवें भागमें इस गुणहानिका एक जीव बढता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । फिर द्वितीय सोलहवाँ भाग जाकर द्वितीय जीव अधिक होता है । इस प्रकार

♣ प्रतिषु ' पुणो वि अट्ठ ' इति पाठः ।
♣ अप्रतौ ' ट्ठाणाणि जीवा ' इति पाठः ।
(Δ) अ-आप्रत्योः ' विहाणेण ' इति पाठः ।

एवमेवं सोलसभागं धुवं कादूण एगेगजीवं♠ वड्ढाविय णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणमेत्त-जीवा पविट्ठा त्ति। ताधे बत्तीसगुणवड्ढी होदि। तदो एदं बीज㊟पदेसणाणेणावहारिय उवरि णेयव्वं जाव दुरूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तदुगुणवड्ढीयो उवरि चडिदाओ त्ति।

पुणो पढमदुगुणवड्ढिभागहारं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स चदुब्भागेण गुणिय विरलेदूण एवाए दुगुणवड्ढीए समखंडं कादूण दिण्णाए एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि। तदो जवमज्झस्स हेट्ठिमदुगुणवड्ढिट्ठाणे जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो। विदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। तदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। एवं णेयव्वं जाव पढमदुगुणवड्ढीए एगजीवदुगुणवड्ढिदद्धाणं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स चदुब्भागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तद्धाणमेदिस्से गुणहाणीए गदं त्ति। ताधे हेट्ठिमविरलणाए एगरूवधरिदे जीवो पक्खित्तो। पक्खित्ते उवरिमट्ठाणजीव-पमाणं होदि। पुणो एदेणेव जीवपमाणेण अवट्ठिदाणि होदूण पुव्वल्लद्धाणमेत्ताणि चेव ट्ठाणाणि गच्छंति। तदो हेट्ठिमविरलणाए एगरूवधरिदेगजीवे तदित्थट्ठाणजीवेसु आव-लियाए असंखेज्जदिभागमेत्तजीवेसु पक्खित्ते उवरिमतदणंतरट्ठाणजीवपमाणं होदि। एवमवट्ठिदमद्धाणं गंतूण एगेगजीवं विढाविय णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणमेत्तजीवा पविट्ठा त्ति। ताधे जवमज्झजीवपमाणं होदि। जहण्णट्ठाणजीवेसु जहण्णपरित्तासंखेज्ज-

इस सोलहवें भागको ध्रुव करके अधस्तन विरलन राशिप्रमाण जीवोंके प्रविष्ट होने तक एक एक जीवको बढाकर ले जाना चाहिये। तब बत्तीसगुणी वृद्धि होती है। पश्चात् इस बीज-पदसे इसका निश्चय कर दो अंकोंसे कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्द्धच्छेदों प्रमाण दुगुणवृद्धियाँ आगे जाने तक ले जाना चाहिये।

पुनः प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारको जघन्य परीतासंख्यातके चतुर्थ भागसे गुणित करके विरलन कर इस दुगुणवृद्धिको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है। तब यवमध्यके अधस्तन दुगुणवृद्धिस्थानमें जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। द्वितीय अनुभागबंधाध्यवसानस्थानमें जीव उतने ही हैं। तृतीय अनुभागबंधाध्यवसा-नस्थानमें जीव उतने ही है। इस प्रकारसे प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक जीवदुगुणवृद्धि युक्त अध्वानको जघन्य परीतासंख्यातके चतुर्थ भागसे खंडित कर उसमेंसे एक खंड प्रमाण अध्वान इस गुणहानिका जाने तक ले जाना चाहिये। तब अधस्तन विरलन राशिके एक जीवका प्रक्षेप करना चाहिये। उसका प्रक्षेप करनेपर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है। पश्चात् इसी जीवप्रमाणसे अवस्थित होकर पूर्वोक्त अध्वान प्रमाण ही स्थान व्यतीत होते हैं। तब अधस्तन विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको वहाँके स्थानके आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंमें मिलानेपर आगेके तदनन्तर स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है। इस प्रकारसे अवस्थित अध्वान जाकर एक एक जीवको बढाकर अधस्तन विरलनराशि प्रमाण सब जीवोंके प्रविष्ट होनेतक ले जाना चाहिये। तब यवमध्यके जीवोंका प्रमाण होता है। जघन्य स्थानके जीवोंको जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भागसे गुणित करनेपर

♠ अ-आप्रत्योः ' कादूण ण एगेग ' इति पाठः। ㊟ आ-आप्रत्योः ' बीजादमणेण ' इति पाठः।

यस्स दुभागेण गुणिदेसु जवमज्झजीवा होंति । जवमज्झादो हेट्ठिमदुगुणहाणीओ जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्ताओ होंति त्ति वुत्तं होदि । जवमज्झादो हेट्ठिमदुगुणवड्ढीयो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्तीयो होंति त्ति कधं णव्वदे ? जुत्तीदो । का सा जुत्ती ? उवरि भणिस्सामो ।

तेण परं विसेसहीणा ॥ २८० ॥

तेण जवमज्झेण परमुवरि जीवा विसेसहीणा होदूण गच्छंति । कुदो ? साभावियादो तिव्वसंकिलेसेण जीवाणं पाएण संभवाभावादो वा ।

एवं विसेसहीणा विसेसहीणा जाव उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति ॥ २८१ ॥

प्रतिदर्शक ☆ आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं विसेसहीणा विसेसहीणा त्ति ☆विच्छाणिद्देसो । तेण जवमज्झादो उवरिमसव्वट्ठाणाणि अणंतरोवणिधाए जीवेहि विसेसहीणाणि त्ति वत्तव्वं। एवस्स भावत्थो वुच्चदे। तं जहा-पढमदुगुणवड्ढिभागहारं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स दुभागेण गुणिय विरलेदूण जवमज्झजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि ।

यवमध्यके जीव होते हैं । अभिप्राय यह है कि यवमध्यसे नीचेकी दुगुणहानियाँ जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंके बराबर होती हैं ।

शंका – यवमध्यसे नीचेकी दुगुणवृद्धियां जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंके बराबर हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ।

समाधान – वह युक्तिसे जाना जाता है ।

शंका – वह युक्ति कौनसी है ?

समाधान – उस युक्तिको आगे कहेंगे ।

इसके आगे जीव विशेष हीन हैं । २८० ।

उससे अर्थात् यवमध्यसे आगे जीव विशेष हीन होकर जाते हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है अथवा तीव्र संक्लेशसे युक्त जीवोंकी प्रायः सम्भावना नहीं है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभागबंधाध्यवसानस्थान तक जीव विशेषहीन विशेषहीन होकर जाते हैं । २८१ ।

इस प्रकार विशेषहीन विशेषहीन, यह वीप्सा निर्देश है । इसलिए यवमध्यसे आगे सब स्थान अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा जीवोंसे विशेष हीन, हैं, ऐसा समझना चाहिए । इसका भावार्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारको जघन्य परीतासंख्यातके अर्धभागसे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उसका विरलन करके यवमध्यके जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । इसलिये इसको इसी प्रकारसे स्थापित

☆ अ-आप्रत्योः 'मिछा' ताप्रतौ 'भि (इ) च्छा' इति पाठः ।

तदो एदमेवं चेव ट्ठविय परूवणा कीरदे । तं जहा- जवमज्झजीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागा । विदियट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं तत्तिया तत्तिया चेव होदूण ताव गच्छंति जाव पढमवुग्गणवड्ढिअद्धाणम्मि एगजीवपविट्ठट्ठाणं* जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स चदुब्भागेण खंडिदएगखंडमेत्तद्धाणं गदं ति । ताधे हेट्ठिमविरलणाए एगरूवधरिदं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु अवणिदे तदुवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि ।

पुणो विदियखंडमेत्ताणि ट्ठाणाणि जीवेहि सरिसाणि होदूण गच्छंति तदो हेट्ठिमविरलणाए विदियरूवधरिदएगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु अवणिदे तवणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि । पुणो तेण ट्ठाणेण जीवेहि सरिसाणि तदियखंडमेत्ताणि ट्ठाणाणि गंतूण तदियो जीवो परिहायदि । एवमेगेगखंडमेत्तद्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणिं करिय णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणाए अद्धमेत्तजीवा परिहीणा त्ति । तदित्थट्ठाण ✿ जीवा जवमज्झजीवेहिंतो दुगुणहीणा, हेट्ठिमविरलणमेत्तजीवेसु समुदिदेसु जवमज्झजीवुप्पत्तीदो । पुणो दुगुणहाणीए जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो । विदिय अणुभागट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । तदिए अणुभागट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं तत्तिया तत्तिया चेव जीवा होदूण ताव गच्छंति जाव जवमज्झगुणहाणिम्हि एगजीवपरिहीणट्ठाणादो दुगुण-

करके प्ररूपणा करते है । वह इस प्रकार है-- यवमध्यके जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । द्वितीयस्थानमें जीव उतने ही हैं । इस प्रकारसे उतने उतने ही होकर प्रथम दुगुणवृद्धिके अध्वानमेंसे एक जीव प्रविष्ट स्थान ' अध्वान ' को जघन्य परीतासंख्यातके चतुर्थ भागसे खण्डित करनेपर एक खण्ड प्रमाण अध्वानके बीतने तक जाते हैं । तब अधस्तन विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको ग्रहण करके उसे वहांके स्थानके जीवोंमेंसे कम करनेपर उससे आगेके स्थानक जीवोंका प्रमाण होता है ।

पश्चात् द्वितीय खंड प्रमाण स्थान जीवोंसे (जीवप्रमाण) सदृश होकर जाते हैं । फिर अधस्तन विरलनके द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको ग्रहण कर उसे वहांके स्थानसंबंधी जीवोंमेंसे कम करनेपर तदनंतर अग्रिम स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । पश्चात् जीवोंकी अपेक्षा उस स्थानके सदृश तृतीय खण्ड प्रमाण स्थानोंके बीतनेपर तृतीय जीवकी हानि होती है । इस प्रकारसे एक एक खण्ड प्रमाण अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानिको करके अधस्तन विरलनके आधे मात्र जीवोंकी हानि होने तक ले जाना चाहिये । वहांके स्थानोंसम्बन्धी जीव यवमध्यके जीवोंकी अपेक्षा दुगुणे हीन होते हैं, क्योंकि, अधस्तन विरलन प्रमाण जीवोंके समुदित होनेपर यवमध्य जीव उत्पन्न होते हैं । पुनः दुगुणहानिके जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं । द्वितीय अनुभागस्थानमें जीव उतने ही होते हैं । तृतीय अनुभागस्थानमें जीव उतने ही होते हैं । इस प्रकार उतने उतने ही जीव होकर यवमध्य गुणहानिमेंसे एक जीवकी हानि युक्त स्थानसे दूना मात्र अध्वान बीतने तक जाते हैं । तब अधस्तन विरलन राशिके अर्ध भाग

✿ अप्रतौ 'पविट्ठाणं' इति पाठः । ✿ अ-आप्रतिषु 'तदित्थट्ठाणाणि' इति पाठः । मुद्रितप्रतौ ट्ठाणाणं इति पाठः ।

गदं ति। ताधे हेट्ठिमविरलणाए अट्ठमेत्तरूवाणमेगरूवधरिदेगजीवं घेत्तूण तदित्थ-ट्ठाणजीवेसु अवणिदे तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि।

किमट्ठं जवमज्झादो उवरिमगुणहाणीसु गुणहाणिं पडि दुगुण-दुगुणमद्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणी कीरदे? जवमज्झहेट्ठिमगुणहाणीणं च उवरिमगुणहाणीणं पि सरिसत्तपदुप्पायणट्ठं। पुणो एत्तियं चेव अद्धाणं गंतूण विदियजीवो परिहायदि। एवमेदमद्धाणं धुवं कादूण एगजीवपरिहाणिं करिय ताव णेदव्वं जाव हेट्ठिमविरलणाए चदुब्भागमेत्तजीवा परिहीणा त्ति। ताधे तदित्थट्ठाणजीवा जवमज्झजीवाणं चदुब्भाग-मेत्ता। ते च आवलियाए असंखेज्जदिभागो। तदुवरिमट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। तदि-यट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। एवं सरिसा होदूण ताव गच्छंति जाव विदियगु-णहाणीए एगरूवपरिहाणिट्ठाणादो दुगुणमद्धाणं गदं ति। ताधे हेट्ठिमविरलणाए चदु-ब्भागमेत्तरूवाणमेगरूवधरिदेगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु अवणिदे♣ उवरिमट्ठाण-जीवपमाणं होदि। तत्थ वि जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो।

तदो अवट्ठिदसरूवेण पुध्विल्लमद्धाणं गंतूण विदियजीवो परिहायदि। एवमवट्ठिदम-द्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणिं करिय ताव णेदव्वं जाव हेट्ठिमविरलणाए अट्ठमभा-

---

प्रमाण अंकोंमेंसे एक अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको ग्रहण करके उसे वहांके स्थानसम्बन्धी जीवोंमेंसे कम कर देनेपर तदनन्तर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है।

शंका-- यवमध्यसे ऊपरकी गुणहानियोंमेंसे प्रत्येक गुणहानिमें दूना दूना अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि किसलिये की जाती है?

समाधान-- यवमध्यसे नीचेकी गुणहानियों और ऊपरकी गुणहानियोंकी भी सदृशता बतलानेके लिये एक एक जीवकी हानि की जाती है।

फिर इतना ही अध्वान जाकर द्वितीय जीवकी हानि होती है। इस प्रकारसे इस अध्वानको ध्रुव करके एक जीवकी हानि कर अधस्तन विरलन राशिके चतुर्थ भाग प्रमाण जीवोंकी हानि होने तक ले जाना चाहिये। उस समय वहांके स्थान सम्बन्धी जीव यवमध्य जीवोंके चतुर्थ भाग प्रमाण होते हैं और वे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं। उससे ऊपरके स्थानमें जीव उतने ही होते हैं। तृतीय स्थानमें जीव उतने ही होते हैं। इस प्रकार सदृश होकर वे तब तक जाते है जब तक कि द्वितीय गुणहानिके एक अंककी हानि युक्त स्थानसे दूना अध्वान नहीं बीत जाता। तब अधस्तन विरलनके चतुर्थ भाग प्रमाण अंकोंमेंसे एक अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको ग्रहण कर उसे वहांके स्थान संबंधी जीवोंमेंसे कम करनेपर अग्रिम स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है। वहां भी जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं।

पश्चात् अवस्थित स्वरूपसे पूर्वोक्त अध्वान जाकर दूसरे जीवकी हानि होती है। इस प्रकारसे अवस्थित अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि करके अधस्तन विरलनके आठवें भाग

♣ प्रतौ 'अवणिदेसु' इति पाठः।

गमेत्तजीवा परिहीणा त्ति। ताधे तद्विदियट्ठाणजीवाणं पमाणं जवमज्झस्स अट्ठमभागो। ते च आवलियाए असंखेज्जविभागो। एवं णेयव्वं जाव जहण्णाणुभागबंधट्ठाणजीवेहिंतो दुगुणमेत्ता जीवा जावा त्ति। णवरि जवमज्झगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणादो* विदियगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणं दुगुणं*, होदि। तदियगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणं चदुगुणं होदि। चउत्थगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणं* अट्ठगुणं होदि। पंचमगुणहाणीए एगजीवपरिहीणद्धाणं सोलसगुणं होदि। एवं दुगुण-दुगुणकमेण सव्वत्थ णेयव्वं।

पुणो अविवक्खगुणहाणीए विवक्खगुणहाणीए जहण्णजवमज्झपरिहाणीए कदाए जहण्णट्ठाणजीवेहि सरिसा होंति। पुणो पढमदुगुणवड्ढीए एगरूवपरिहीणद्धाणादो दुगुणमद्धाणं गंतूण एगजीवपरिहीणद्धाणं दुगुणं होदि। पुणो एत्तियमेत्तमद्धिदिं गंतूण एगजीवपरिहाणिं कादूण ताव णेयव्वं जाव जहण्णट्ठाणजीवेहिंतो अद्धमेत्ता जादा त्ति। पुणो पढमदुगुणवड्ढीए एगजीवपरिहीणद्धाणादो* चदुग्गुणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणिं कादूण ताव णेयव्वं जाव जहण्णट्ठाणजीवाणं चदुब्भागो ट्ठिदो त्ति। एवं जाणिदूण णेयव्वं जाव उक्कस्सट्ठाणजीवा त्ति। णवरि हेट्ठिम-हेट्ठिमगुणहाणीसु एगेगरूवपरिहीणद्धाणादो* अणंतर-

---

प्रमाण जीवोंकी हानि होने तक ले जाना चाहिये। तब वहांके स्थान सम्बन्धी जीवोंका प्रमाण यवमध्यके आठवें भाग होता है। वे भी आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं। इस प्रकार जघन्य अनुभागबन्धस्थान सम्बन्धी जीवोंकी अपेक्षा दूनेमात्र जीवोंके होने तक ले जाना चाहिये। विशेष इतना है कि यवमध्यगुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वानकी अपेक्षा द्वितीय गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान दुगुना है। तृतीय गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान चौगुना है। चतुर्थ गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान अठगुना है। पंचम गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान सोलहगुना है। इस प्रकार सर्वत्र दूने दूने क्रमसे ले जाना चाहिये।

पश्चात् विवक्षित गुणहानिमें भी समयानुसार अंकोंकी हानिके करनेपर जघन्य स्थानके जीवोंके सदृश होते हैं। फिर प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक अंककी हानियुक्त अध्वानसे दूना अध्वान जाकर एक जीवकी हानि युक्त अध्वान दूना होता है। फिर इतना मात्र अध्वान अवस्थित जाकर एक जीवकी हानि करके उनके जघन्य स्थान संबंधी जीवोंकी अपेक्षा अर्ध भाग प्रमाण होने तक ले जाना चाहिये। तत्पश्चात् प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक जीवकी हानियुक्त अध्वानसे चौगुणा अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि करके तब तक ले जाना चाहिये जब तक कि जघन्य स्थान सम्बन्धी जीवोंका चतुर्थ भाग रहता है। इस प्रकार जानकर उत्कृष्ट स्थानके जीवोंके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। विशेष इतना है कि अधस्तन अधस्तन गुणहानियोंमें एक एक अंककी हानि युक्त अध्वानसे अनंतर

---

* अ-आप्रत्योः 'पडिहीणद्धाणादो' इति पाठः।
* अ-आप्रत्योः 'हीणद्धाणं–' इति पाठः।
* मप्रतौ 'चदुगुणं' इति पाठः।
* प्रतिषु 'हीणट्ठाणादो' इति पाठः।

उवरिमगुणहाणीसु एगेगजीवपरिहाणीणद्धाणं* दुगुणं दुगुणं होदि। एवमद्धच्छेण जीवेसु गच्छमाणेसु उक्कस्सए ट्ठाणे जीवा संखेज्जा किण्ण होंति त्ति भणिदे--ण, जहण्णट्ठाणप्पहुडि जावुक्कस्सट्ठाणे त्ति जीवा सव्वट्ठाणेसु उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव होंति त्ति सुत्तसिद्धत्तादो। जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणीओ संखेज्जाओ, उवरिमाओ हेट्ठिमगुणहाणिसलागाहिंतो असंखेज्जगुणाओ होदूण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताओ होंति त्ति। एदस्स जुत्ती वुच्चदे। तं जहा- जाव जहण्णट्ठाणजीवपमाणं चेट्ठदि♣ ताव जवमज्झजीवाणमद्धछेदणए कदे तत्थुप्पण्णसलागाओ जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणिसलागपमाणं होदि। पुणो जाव उक्कस्सट्ठाणजीवपमाणं पावदि ताव जवमज्झजीवाणमद्धछेदणए कदे तत्थुप्पण्णछेदणयमेत्तं जवमज्झादो♣ उवरिमगुणहाणिसलागपमाणं जेण होदि तेण ताव जवमज्झजीवपमाणाणुगमं कस्सामो-- जहण्णपरित्तासंखेज्जयं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स ※जहण्णपरित्तासंखेज्जयं दादूण अण्णोण्णब्भासे कदे आवलिया उप्पज्जदि। ण च आवलियमेत्ता जवमज्झजीवा होंति, सव्वट्ठाणेसु आवलियाए असंखेज्जविभागमेत्ता चेव जीवा होंति त्ति सुत्तवयणेण सह विरोहादो। तेण जहण्णपरित्तासंखेज्जेण

ऊपरकी गुणहानियोंमें एक एक जीवकी हानि [illegible] होती है।

शंका-- इस प्रकार अर्ध अर्ध भाग स्वरूपसे जीवोंके जाने पर उत्कृष्ट स्थानमें जीव संख्यात क्यों नहीं होते हैं ?

समाधान-- ऐसी आशंका करने पर उत्तरमें कहते हैं कि वे वहाँ संख्यात नहीं होते हैं, क्योंकि, जघन्य स्थानसे लेकर उत्कृष्ट स्थान तक सब स्थानोंमें जीव उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा सूत्रसे सिद्ध है।

यवमध्यसे नीचेकी गुणहानियाँ संख्यात हैं। ऊपरकी गुणहानियाँ अधस्तन गुणहानिशलाकाओंसे असंख्यातगुणी होकर आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र होती हैं। इसकी युक्ति कहते हैं। वह इस प्रकार है- जब तक जघन्य स्थानके जीवोंका प्रमाण रहता है तब तक यवमध्य जीवोंके अर्धच्छेद करनेपर वहाँ उत्पन्न हुई शलाकायें यवमध्यसे नीचेकी गुणहानिशलाकाओंके बराबर होती हैं। पश्चात् जब तक उत्कृष्ट स्थानके जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है तब तक यवमध्य-जीवोंके अर्धच्छेद करनेपर उनमें उत्पन्न अर्धच्छेदोंके बराबर चूंकि यवमध्यसे ऊपरकी गुणहानिशलाकाओंका प्रमाण होता है, अतएव पहिले यवमध्य जीवोंका प्रमाणानुगम करते हैं- जघन्य परीतासंख्यातका विरलन करके एक एक अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातको देकर परस्पर गुणित करनेपर आवली उत्पन्न होती है। परन्तु आवली प्रमाण यवमध्य जीव हैं नहीं, क्योंकि, ऐसा मानने पर 'सब स्थानोंमें आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही जीव होते हैं' इस सूत्रवचनके साथ विरोध होता है। इसलिये जघन्य परीतासंख्यातका आवलीमें भाग देनेपर जो भाग लब्ध हो

---

* अप्रतौ 'हीणट्ठाणं' इति पाठः। ♣ अप्रतौ 'चिट्ठदि' इति पाठः। ♣ आप्रतौ -'छेदणयजवमज्झादो' इति पाठः। ※ ताप्रतौ 'विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स (जहण्णपरित्तासंखेज्जयं विरलेदूण) जहण्ण इति पाठः।

आवलियाए भागे हिदाए जं भागलद्धं तमुक्कस्सजवमज्झजीवपमाणं होदि, एत्तो अहियस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागस्स अणुवलंभादो। उक्कस्ससंखेज्जं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स जहण्णपरित्तासंखेज्जयं कदूण अण्णोण्णब्भासे कदे जवमज्झजीवा होंति त्ति वुत्तं होदि। पुणो एदस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागस्स जत्तिया अद्धछेदणयसलागा तत्तियमेत्ता जवमज्झस्स अद्धछेदणया त्ति घेत्तव्वं। होंता वि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणएहि गुणिदुक्कस्ससंखेज्जमेत्ता। एवमुक्कस्सेण जवमज्झपरूवणं कदं।

संपहि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्ताओ जवमज्झादो हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाओ होंति त्ति ण वोत्तु सक्किज्जदे, जवमज्झादो हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमणाणागुणहाणिसलागाणमसंखेज्जगुणत्तं फिट्टिदूण संखेज्जगुणत्तप्पसंगादो। तं जहा- उक्कस्सट्ठाणजीवा जदि सुट्ठु थोवा होंति तो जहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्ता चेव होंति, एदम्हादो ऊणआवलियाए[1] असंखेज्जदिभागे घेप्पमाणे उक्कस्सट्ठाणजीवाणं संखेज्जत्तप्पसंगादो। ण च एवं, सव्वेसु ट्ठाणेसु असंखेज्जजीवब्भुवगमादो। तेण उवरिमणाणागुणहाणिसलागाओ रूवूणुक्कस्ससंखेज्जेण गुणिदजहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्ताओ होंति। एवं संते हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाहि उवरिमणाणागुणहाणिसलागासु ओवट्टिदासु संखेज्जाणि रूवाणि आगच्छंति त्ति हेट्ठिमणाणागुणहाणिसला-

वह उत्कृष्ट यवमध्य जीवोंका प्रमाण होता है, क्योंकि, इससे अधिक आवलीका असंख्यातवाँ भाग पाया नहीं जाता। उत्कृष्ट संख्यातका विरलन करके एक एक अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातको देकर परस्पर गुणित करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उतने यवमध्य जीव होते हैं, यह उसका अभिप्राय है। पुनः इस आवलीके असंख्यातवें भागकी जितनी अर्धच्छेदशलाकायें हों उतने मात्र यवमध्यके अर्धच्छेद होते हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। उतने होकर भी वे जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंसे गुणित उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण होते हैं। इस प्रकार उत्कृष्टसे यवमध्यकी प्ररूपणा की गई है।

अब जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर यवमध्यसे नीचेकी नानागुणहानिशलाकायें होती हैं, ऐसा कहना शक्य नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर यवमध्यसे नीचेकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा जो ऊपरकी नानागुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी हैं, उनका वह असंख्यातगुणत्व नष्ट होकर संख्यातगुणत्वका प्रसंग आता है। यथा-- उत्कृष्ट स्थानके जीव यदि बहुत ही स्तोक हों तो वे जघन्य परीतासंख्यातके बराबर ही होते हैं, क्योंकि, इससे कम आवलीके असंख्यातवें भागको ग्रहण करनेपर उत्कृष्ट स्थान संबंधी जीवोंके संख्यात होनेका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, सब स्थानोंमें असंख्यात जीव स्वीकार किये गये हैं। इस कारण ऊपरकी नानागुणहानिशलाकायें एक कम उत्कृष्ट संख्यातसे गुणित जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर होती हैं। ऐसा कहनेपर चूंकि अधस्तन नानागुणहानिशलाकाओंसे उपरिम नानागुणहानिशलाकाओंको अपवर्तित करनेपर असंख्यात अंक आते हैं, अतएव

[1] अ-आप्रत्योः 'एदम्हादो ओ आवलियाए' इति पाठः।

गाहिंतो उवरिमणाणागुणहाणिसलागाओ संखेज्जगुणाओ होंति । ण च एवं, जवमज्झहेट्ठिमगुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमसव्वगुणहाणिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ त्ति उवरि जवमज्झपरूवणाए भण्णमाणत्तादो । तदो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्ताओ जवमज्झहेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाओ ण होंति त्तिपरिच्छिज्जदे। तम्हा रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्ताओ हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाओ त्ति घेत्तव्वं, एवं गहिदे ✡हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमगुणहाणिसलागाणमसंखेज्जगुणत्तुववत्तीदो ।

संपहि रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तासु हेट्ठिमगुणहाणिसलागासु संतासु जहा उवरिमगुणहाणिसलागाणमसंखेज्जगुणत्तं होदि तहा परूवणं कस्सामो । तं जहा – उक्कस्ससंखेज्जं विरलिय रूवं पडि जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणएसु दिण्णेसु जो एदेसिं सव्वेसिं समासो सो जवमज्झजीवद्धछेदणयपमाणं । पुणो एत्थ एगरूवधरिदम्हि एगेगरूवे गहिदे उक्कस्ससंखेज्जमेत्तरूवाणि होंति । पुणो ताणि पडिरासिय एगरूवधरिदेण रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जद्धच्छेदणयमेत्तेण पडिरासिदउक्कस्ससंखेज्जमोवट्टिय लद्धं✡ पुव्विल्लभागहारादो संखेज्जगुणहीणं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपुव्विल्लविरलणाए पासे विरलिय पडिरासिदउक्कस्ससंखेज्जं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयपमाण

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अधस्तन नानागुणहानिशलाकाओंसे उपरिम नानागुणहानिशलाकायें संख्यातगुणी होनी चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, यवमध्यकी अधस्तन गुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा उपरिम सब गुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी है, ऐसा आगे यवमध्यप्ररूपणामें कहा जानेवाला है। इसलिये यवमध्यकी अधस्तन गुणहानिशलाकायें जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर नहीं होती हैं, यह जाना जाता है। इस कारण एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर अधस्तन गुणहानिशलाकायें होती हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, ऐसा ग्रहण करनेपर अधस्तन नानागुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा उपरिम गुणहानिशलाकाओंका असंख्यातगुणत्व बन जाता है।

अब एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर अधस्तन गुणहानिशलाकाओंके होनेपर जिस प्रकारसे उपरिम गुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी होती हैं वैसी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- उत्कृष्ट संख्यातका विरलन करके प्रत्येक अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंको देनेपर जो इन सबका जोड हो वह यवमध्य जीवोंके अर्धच्छेदोंका प्रमाण होता है। फिर यहां एक एक अंकके प्रति प्राप्त राशिमेंसे एक एक अंकको ग्रहण करनेपर उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण अंक होते हैं। फिर उनकी प्रतिराशि करके एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर एक अंकके प्रति प्राप्त राशिमें प्रतिराशि रूप उत्कृष्ट संख्यातको अपवर्तित करनेपर जो लब्ध हो वह पूर्व भागहारकी अपेक्षा संख्यातगुणा हीन होता है। इसको उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण पूर्व विरलन राशिके पासमें विरलित करके प्रतिराशिभूत उत्कृष्ट संख्यातको समखण्ड करके प्रत्येक

✡ ताप्रतौ ' गहिदेहि हेट्ठिम ' इति पाठः । ✡ प्रतिषु ' अद्धं ' इति पाठः ।

पावदि, गहिदगहणादो । तत्थ एगरूवधरिदमेत्ताओ जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणिसलागाओ त्ति घेत्तव्वं । एदासिं सलागाणं विरलिय दुगुणिदाणं अण्णोण्णब्भत्थरासिपमाणं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धमेत्तं होदि । एदेण जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धेण गुणगारगुणिज्जमाणसरूवेण अवट्ठिदेसु उवरिमविरलणमेत्तेसु जवमज्झजीवेसु ओवट्टिदेसु गुणगार-भागहारे सरिसे अवणिय रूवूणुवरिमविरलणमेत्तेसु रूवूण जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धेसु अण्णोण्णब्भत्थेसु संतेसु जहण्णट्ठाणजीवपमाणं होदि । जहण्णपरित्तासंखेज्जवग्गचदुब्भागमेत्ता उक्कस्सट्ठाणजीवा जदि होंति तो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयसलागाओ रूवूणाओ दुरूवूणुवरिमविरलणाए गुणिदाओ जवमज्झादो उवरिमगुणहाणिसलागपमाणं होदि । उवरिमविरलणा च असंखेज्जा, जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणअद्धछेदणएहि उक्कस्ससंखेज्जे भागे हिदे तत्थ एगभागेण अब्भहियउक्कस्ससंखेज्जपमाणत्तादो । तेण हेट्ठिमगुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमगुणहाणिसलागाओ असंखेज्जगुणा त्ति सिद्धं । ण च जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्ताओ चेव जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणिसलागाओ होंति त्ति णियमो अत्थि । किं तु एत्तियमेत्तासु हेट्ठिमगुणहाणिसलागासु गहिदासु सुत्तविरोहो* णत्थि त्ति

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंका प्रमाण प्राप्त होता है, यहाँ गृहीतका ग्रहण है। उनमें एक एक अंकके प्रति प्राप्त राशिप्रमाण यवमध्यसे नीचेकी गुणहानि शलाकायें होती हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। इन शलाकाओंका विरलन करके दुना कर परस्पर गुणित करनेपर जो प्रमाण प्राप्त होता है वह जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भाग मात्र होता है। इस जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भागके द्वारा गुणकार गुण्य स्वरूपसे अवस्थित उपरिम विरलन प्रमाण यवमध्य जीवोंको अपवर्तित करनेपर समान गुणकारों और भागहारोंका अपनयन कर एक कम उपरिम विरलन प्रमाण एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंको परस्पर गुणित करनेपर जघन्य स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है। जघन्य परीतासंख्यातके वर्गके चतुर्थ भाग प्रमाण यदि उत्कृष्ट स्थानके जीव होते हैं तो जघन्य परीतासंख्यातकी एक कम अर्धच्छेदशलाकायें दो अंकोंसे हीन ऊपरकी विरलन राशिसे गुणित होकर यवमध्यसे ऊपरकी गुणहानिशलाकाओंका प्रमाण होता है। उपरिम विरलन राशि भी असंख्यात है, क्योंकि, वे जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंका उत्कृष्ट संख्यातमें भाग देनेपर उसमें एक भागसे अधिक उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण होती हैं। इसीलिये अधस्तन गुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा उपरिम गुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी हैं, यह सिद्ध होता है।

यवमध्यसे नीचेकी गुणहानिशलाकायें जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंके बराबर ही होती हैं, ऐसा नियम भी नहीं है। किंतु अधस्तन गुणहानिशलाकाओंका इतनी मात्र ग्रहण करनेपर सूत्रविरोध नहीं है, ऐसी प्ररूपणा की गई है। जघन्य परीतासंख्यातके एक कम

---

*अ-आप्रत्योः 'सुत्तविरोहा' इति पाठः।

परूविदं । जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयप्पहुडि दुरूवूण-तिरूवूणादिकमेण ओवट्टिदावसेस जवमज्झहेट्ठिमगुणहाणिसलागाणं पमाणे परूविदे वि ण सुत्तविरोहो होदि त्ति वुत्तं होदि । हेट्ठिमगुणहाणिसलागाओ एत्तियाओ चेव होंति त्ति किण्ण वुच्चदे ? ण, तहाविहसुत्तुवएसाभावादो*। ण च उक्कस्सट्ठाणजीवा जहण्णपरित्तासंखेज्जवरिमवग्गस्स चदुब्भागमेत्ता चेव होंति त्ति णियमो अत्थि; ति-चत्तारिपंचादि-जहण्णपरित्तासंखेज्जद्धाणमण्णोण्णब्भत्थरासिमेत्तेसु उक्कस्सट्ठाणजीवेसु गहिदेसु वि सुत्तविरोहाभावादो । एवमणंतरोवणिधा समत्ता ।

परंपरोवणिधाए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणजीवेहिंतो तत्तो असंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणवड्ढिदा ॥ २८२ ॥

कुदो ? असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु जीवा जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणजीवेहि सरिसा होदूण पुणो तेसिमेगजीवेण अहियत्तुवलंभादो । चदुसमइयट्ठाणप्पहुडि जाव बिसमइयाणमसंखेज्जदिभागो त्ति ताव सव्वट्ठाणाणि जीवेहि सरिसाणि त्ति भणिदं होदि । अवट्ठिदमेत्तियमद्धाणं गंतूण एगेगजीववड्ढीए जहण्णट्ठाणजीवमेत्तेसु जीवेसु जहण्णट्ठाणजीवाणमुवरि वड्ढिदेसु दुगुणवड्ढिसमुप्पत्तीदो गुणहाणिअद्धाणमसंखेज्जलोगमेत्तं होदि त्ति घेत्तव्वं ।

अर्धच्छेदोंसे लेकर दो अंक कम, तीन अंक कम इत्यादि क्रमसे अपवर्तित कराकर यवमध्यकी अधस्तन गुणहानिशलाकाओंके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेपर भी सूत्र विरोध नहीं होता है, यह उसका अभिप्राय है ।

शंका – अधस्तन गुणहानिशलाकायें इतनी ही होती है, ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, वैसा सूत्रोपदेश नहीं है ।

उत्कृष्ट स्थानके जीव जघन्य परीतासंख्यातके उपरिम वर्गके चतुर्थ भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा नियम भी नहीं है, क्योंकि, तीन, चार, पाँच आदि जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भागोंको परस्पर गुणित करनेपर जो लब्ध हो उतने मात्र उत्कृष्ट स्थानके जीवोंको ग्रहण करनेपर भी सूत्र विरोध नहीं होता है । इस प्रकार अनन्तरोपनिधा समाप्त हुई ।

परम्परोपनिधामें जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानके जो जीव हैं उनसे असंख्यात लोकमात्र जाकर वे दुगुणी वृद्धिको प्राप्त होते हैं । २८२ ।

कारण यह है कि असंख्यात लोकमात्र अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान जीव जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानके जीवोंसे समान होकर फिर वे एक जीवसे अधिक पाये जाते हैं । चार समय योग्य स्थानोंसे लेकर दो समय योग्य स्थानोंके असंख्यातवें भाग तक सब स्थान जीवोंकी अपेक्षा समान है, यह अभिप्राय है । इतना मात्र अवस्थित अध्वान जाकर एक एक जीवकी वृद्धि द्वारा जघन्य स्थानसम्बन्धी जीवोंके ऊपर जघन्य स्थान सम्बन्धी जीवोंके बराबर जीवोंके बढ जानेपर दूनी वृद्धिके उत्पन्न होनेके कारण गुणहानिअध्वान असंख्यात लोकमात्र होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

---

* प्रतिषु 'सुदुवएसाभावादो' इति पाठः ।

एवं दुगुणवड्ढिदा जाव जवमज्झं ॥ २८३ ॥

सुगममेवं, अणंतरोवणिधाए परूविदविसेसत्तादो। जवमज्झादो हेट्ठिमदुगुण वड्ढिअद्धाणाणि सरिसाणि, पढमदुगुणवड्ढिप्पहुडि उवरिमदुगुणवड्ढीसु दुगुणवड्ढि पडि हेट्ठिमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिदअद्धाणस्स अद्धद्धं गंतूण एगेगजीववड्ढीए उवलंभादो। जवमज्झादो उवरिमदुगुणहाणीयो वि हेट्ठिमदुगुणहाणीहि अद्धाणेण समाणाओ, दुगुणदुगुणमद्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणीदो।

तेण परमसंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणहीणा ॥ २८४ ॥

सुगमं।

एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा जाव उक्कास्सियअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति ॥ २८५ ॥

एदं पि सुगमं मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एगजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि - हाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जा लोगा ॥ २८६ ॥

गुणहाणिअद्धाणं पुव्वं परूविदं, पुणरिह किमट्ठं परूविज्जदे ? गुणहाणिअद्धाणादो णागागुणहाणिसलागासु आणिज्जमाणासु मंदमेहाविसिस्सजणसंभालणट्ठं परूविज्जदे।

इस प्रकार यवमध्य तक वे दूनी दूनी वृद्धिसे युक्त हैं। २८३।

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, इसकी विशेषता की प्ररूपणा अनन्तरोपनिधामें की जा चुकी है। यवमध्यसे नीचेके दुगुणवृद्धिअध्वान सदृश है, क्योंकि, प्रथम दुगुणवृद्धिसे लेकर आगेकी दुगुण वृद्धियोंमेंसे प्रत्येक दुगुणवृद्धिमें अधस्तन दुगुणवृद्धिके एक जीव वृद्धि युक्त अध्वानका आधा आधा भाग जाकर एक एक जीवकी वृद्धि पायी जाती है। यवमध्यके ऊपरकी दुगुणहानियां भी अधस्तन दुगुणहानिसे अध्वानकी अपेक्षा समान है, क्योंकि, दूना दूना अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि होती है।

उससे आगे असंख्यात लोक जाकर वे दूने हीन होते हैं। २८४।

यह सूत्र सुगम है।

इस प्रकारसे वे उत्कृष्ट अनुभागबंधाध्यवसानस्थानके प्राप्त होने तक दूने दूने हीन हैं। २८५।

यह सूत्र भी सुगम है।

एक जीवके अनुभागबंधाध्यवसानस्थानोंसम्बन्धी दुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर असंख्यात लोकप्रमाण हैं। २८६।

शंका – गुणहानिअध्वानकी प्ररूपणा पहिले की जा चुकी है, उसकी प्ररूपणा यहां फिरसे किसलिए की जा रही है ?

समाधान – गुणहानिअध्वानसे नानागुणहानिशलाकाओंको लाते समय मन्दबुद्धि शिष्योंको

णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-हाणि-ट्ठाणंतराणि आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥ २८७ ॥

एवस्स साहणं वुच्चदे । तं जहा- एगगुणहाणिअद्धाणमेत्तअसंखेज्जलोगअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं जदि एगा दुगुणवड्ढिसलागा लब्भदि तो सव्वाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तणाणादुगुणवड्ढि-हाणिसलागाओ लब्भंति ।

णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-हाणिट्ठाणंतराणि थोवाणि ॥ २८८ ॥

कुदो ? आवलियाए असंखेज्जभागपमाणत्तादो ।

एयजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-हाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं ॥ २८९ ॥

कुदो ? असंखेज्जलोगपमाणत्तादो । एदमप्पाबहुगं पमाणपरूवणादो चेव अवगदमिदि णेदं परूवेदव्वं ? ण, मंदमेहाविसिस्साणुग्गहट्ठं परूवणाए कीरमाणाए दोसाभा-

---

स्मरण करानेके लिये उसकी फिरसे प्ररूपणा की जा रही है ।

नाना जीवों सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानों सम्बन्धी दुगुणवृद्धि-हानि-स्थानान्तर आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ २८७ ॥

इसका साधन कहते हैं । वह इस प्रकार है— एक गुणहानिअध्वानके बराबर असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी यदि एक दुगुणवृद्धिशलाका पायी जाती है तो समस्त अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी कितनी दुगुणवृद्धिशलाकायें पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण नानादुगुणवृद्धि-हानि शलाकायें पायी जाती हैं ।

नाना जीवों सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानदुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर स्तोक हैं ॥ २८८ ॥

कारण कि वे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ।

उनसे एक जीव सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानदुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर असंख्यातगुणे हैं ॥ २८९ ॥

कारण कि असंख्यात लोक प्रमाण हैं ।

शंका— यह अल्पबहुत्व चूंकि प्रमाणप्ररूपणासे ही जाना जा चुका है, अतएव उसकी यहां प्ररूपणा नहीं करनी चाहिये ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, मन्दबुद्धि शिष्योंके अनुग्रहार्थ उसकी यहां प्ररूपणा करनेमें कोई दोष नहीं है ।

ताप्रतौ ' णाणागुणवड्ढिहाणि ' इति पाठः ।

चादो । संपहि जवमज्झुप्पण्णपदेसपरूवणट्ठं जवमज्झपरूवणा कीरदे--

जवमज्झपरूवणाए ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं ॥ २९० ॥

सव्वट्ठाणाणि असंखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ एगखंडे जवमज्झं होदि । एदं जवमज्झं हेट्ठिमचदुसमइयट्ठाणप्पहुडि उवरि विसमयपाओग्गट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागं गंतूण होदि। ♣तिसमयपाओग्गट्ठाणाणं चरिमसमयम्मि जवमज्झं किण्ण जायदे ? ण, असंखेज्जलोगमेत्तगुणहाणिप्पसंगादो । एवं कुदो णव्वदे ? हेट्ठिमट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणतिसमयपाओग्गट्ठाणेसु असंखेज्जलोगेहि गुणिदेसु विसमयपाओग्गट्ठाणाणं पमाणुप्पत्तीदो । तं पि कुदो णव्वदे ? पुव्वं परूविदअप्पाबहुगसुत्तादो । तं जहा– सव्वत्थोवा अट्ठसमयपाओग्गअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि । दोसु वि पासेसु सत्तसमयपाओग्गअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। दोसु वि पासेसु छसमयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। दोसु वि पासेसु पंचसमइयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु ©चदुसमइयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । ©तिसमइयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । ♣विसमइयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । गुणगारो सव्वत्थ असंखेज्ज-

---

अब यवमध्यमें उत्पन्न प्रदेशकी प्ररूपणा करनेके लिये यवमध्यकी प्ररूपणा करते हैं--

यवमध्यकी प्ररूपणा करनेपर स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है ।२९०।

सब स्थानोंके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डमें यवमध्य होता है । यह यवमध्य के अधस्तन चार समय योग्य स्थानोंसे लेकर ऊपर दो समय योग्य स्थानोंके असंख्यातवें भाग जाकर होता है ।

शंका-- तीन समय योग्य स्थानोंके अन्तिम समयमें यवमध्य क्यों नहीं होता है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि वैसा होनेपर असंख्यात लोक प्रमाण गुणहानियोंका प्रसंग आता है ।

शंका-- वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- अधस्तन स्थानोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणे तीन समय योग्य स्थानोंको असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर चूंकि दो समय योग्य स्थानोंका प्रमाण उत्पन्न होता है, अतः इसीसे उक्त प्रसंग सुविदित है ।

शंका-- वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- वह पूर्वमें प्ररूपित अल्पबहुत्व सम्बन्धी सूत्रसे जाना जाता है । यथा– आठ समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें सात समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें छह समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें पाँच समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें चार समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे तीन समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दो समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं ।

♣ ताप्रतौ ' ति (वि) समय– ' इति पाठः । © अ-काप्रत्योः ' समइय ' इति पाठः ।
♣ प्रतिषु ' समइय ' इति पाठः ।

लोगमेत्तो होदि त्ति सुत्तम्मि ण परूविदो । एवं सुत्तं वक्खाणेंता के वि आइरिया गुणगारो कायट्ठिदि त्ति भणंति, के वि सामण्णेण असंखेज्जा लोगा त्ति । तं जाणिय वत्तव्वं । जवमज्झस्स हेट्ठिमट्ठाणाणि किं बहुगाणि आहो उवरिमाणि, उभयथा वि ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झमिदि सिद्धीदो त्ति भणिदे तण्णिण्णयट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

जवमज्झस्स हेट्ठदो ट्ठाणाणि थोवाणि ॥ २९१ ॥

मानदेशक- श्रीमान् पं. सुमेरुचंदजी दिवाकर जैन सिवनी

सुगमं ।

उवरिमसंखेज्जगुणाणि ॥ २९२ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । कारणं पुव्वं ✡परूविदमिदि णेह परूविज्जदे ।

फोसणपरूवणदाए तीदे काले एयजीवस्स उक्कस्सए अणुभाग-बंधज्झवसाणट्ठाणे फोसणकालो थोवो ॥ २९३ ॥

एत्थ संत-पमाणपरूवणाहि विणा अप्पाबहुगपरूवणा चेव किमट्ठं वुच्चदे? ण ताव संतपरूवणा एत्थ कायव्वा, अप्पाबहुगेण चेवावगमादो । कुदो ? अविज्जमाणसंतस्स

गुणकार सब स्थानोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है, यह सूत्रमें नहीं कहा गया है । इस सूत्रका व्याख्यान करनेवाले कितने ही आचार्य गुणकार कार्यस्थिति प्रमाण बतलाते हैं और कितने ही सामान्य रूपसे उसका प्रमाण असंख्यात लोक बतलाते हैं। उसका जान करके कथन करना चाहिये । ध. पु. ११ पृ. २

यवमध्यसे नीचेके स्थान क्या बहुत हैं अथवा ऊपरके, क्योंकि, दोनों प्रकारके ही स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य है, ऐसा सिद्ध है, इस प्रकार पूछे जानेपर उसका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

यवमध्यके नीचेके स्थान स्तोक हैं ॥ २९१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे ऊपरके स्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २९२ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है । कारण की प्ररूपणा पहिले की जा चुकी है, अतएव उसकी यहाँ प्ररूपणा नहीं की जाती है ।

स्पर्शनप्ररूपणाकी अपेक्षा अतीत कालमें एक जीवके उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें स्पर्शनका काल स्तोक है ॥ २९३ ॥

शंका-- यहाँ सत्प्ररूपणा व प्रमाणप्ररूपणाके बिना अल्पबहुत्वप्ररूपणा ही किसलिये की जा रही है ?

समाधान-- यहाँ सत्प्ररूपणा करना योग्य नहीं है, क्योंकि, उसका ज्ञान अल्पबहुत्वसे ही

✡ अ-आप्रत्योः ' पुव्वं व परूविद-', काप्रतौ ' पुव्वं (वि) ' परूविद-' इति पाठः ।

थोवबहुत्तपरूवणाणुववत्तीदो। ण पमाणपरूवणा वि वत्तव्वा, एगेगजीवेण अदीदे काले एगेगट्ठाणफोसिदकालस्स उवदेसेण विणा वि अणंतपमाणत्तसिद्धीदो। उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणफोसणकालो त्ति तीदे काले एगजीवेण विसमयपाओग्गसव्वाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु अच्छिदकालो घेत्तव्वो। कधं विसमयपाओग्गसव्वट्ठाणाणं उक्कस्सट्ठाणववएसो ? उच्चदे- उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेण सह एगसमयं उक्कस्सत्तमुवगयाणं उक्कस्सत्तं पडि सहचरियत्तादो असिववएसो व्व। उक्कस्सस्स अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणमुक्कस्साणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणं। तत्थ फोसणकालो थोवो कुदो ? एगजीवस्स अइसंकिलेसे पाएण पदणाभावादो (२)। ण च एसो तत्थ णिरंतरमच्छिदकालो, किंतु अंतरिय अंतरिय तत्थ अच्छिदकाले संकलिदे थोवो त्ति भणिदं।

जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे फोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥ २९४ ॥ (४)

जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति भणिदे हेट्ठिमचदुसमयपाओग्गसव्वट्ठाणाणं गहणं। कधं तेसिं सव्वेसिं जहण्णववएसो ? उच्चदे- चदुण्णं समयाणं जहण्णट्ठाणसह-

हो जाता है। कारण कि जिसका अस्तित्व न हो उसके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा नहीं बनती है। प्रमाणप्ररूपणा भी कहनेके अयोग्य है, क्योंकि, एक एक जीवके द्वारा अतीत कालमें एक एक स्थानके स्पर्शन किये जानेका काल अनन्त है, इस प्रकार उपदेशके बिना भी उसका अनंत प्रमाण सिद्ध है। उत्कृष्ट अनुभागबंधाध्यवसानस्थानस्पर्शन कालसे अतीत कालमें एक जीवके द्वारा दो समय योग्य सब अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें रहनेका काल ग्रहण करना चाहिये।

शंका- दो समय योग्य सब स्थानोंकी उत्कृष्ट स्थान संज्ञा कैसे घटित होती है ?

समाधान- इस शंकाका उत्तर कहते हैं। उत्कृष्ट स्थानके साथ रहनेके कारण दो समयोंकी उत्कृष्ट संज्ञा है, जैसे असि युक्त पुरुषकी असि यह संज्ञा होती है।

उत्कृष्टका अनुभागबंधाध्यवसानस्थान उत्कृष्ट अनुभागबंधाध्यवसानस्थान, इस प्रकार यहाँ षष्ठी तत्पुरुषसमास है। उसमें स्पर्शनका काल स्तोक है। इसका कारण यह है कि एक जीवका प्रायः अतिशय संक्लेशमें पतन नहीं होता है (२)। और यह वहाँ निरन्तर रहनेका काल नहीं है, किन्तु बीच बीचमें अन्तर करके वहाँ रहनेके कालका संकलन करनेपर उसे स्तोक ऐसा कहा गया है।

उससे जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें स्पर्शन काल असंख्यातगुणा है ॥ २९४ ॥ (४)

जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान ऐसा कहनेपर नीचेके चार समय योग्य सब स्थानोंका ग्रहण किया गया है।

शंका- उन सबकी जघन्य संज्ञा कैसी है ?

समाधान- जघन्य स्थानके साथ रहनेके कारण चार समयोंकी जघन्य संज्ञा कही जाती

अप्रतौ ' समइय ' इति पाठः। अ-आप्रत्योः ' कदं ' ताप्रतौ ' कदं (धं) ' इति पाठः।

चारेण जहण्णसण्णा । तस्स ट्ठाणाणि जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि । तत्थ फोसणकालो असंखेज्जगुणो । कुदो? असंखेज्जवारं चदुसमयपाओग्गट्ठाणेसु परिभमिय सइं विसमयपाओग्गट्ठाणाणं गमणादो ।

कंडयस्स फोसणकालो तत्तियो चेव ॥ २९५ ॥ (४)

पुव्वं परूविदस्सेव किमट्ठं परूवणा कीरदे, परूविदपरूवणाए फलाभावादो? ण एस दोसो, जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति वयणादो उप्पण्णसंसयस्स सीसस्स संदेहणिवारणट्ठं तदुपपत्तीदो ।

जवमज्झफोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥ २९६ ॥ (८)

जवमज्झे त्ति भणिदे अट्ठसमयपाओग्गसव्वट्ठाणाणं गहणं । तेसिमदीदकाले एगजीवेण फोसिदकालो असंखेज्जगुणो । कुदो ? मज्झिमपरिणामेहि जवमज्झट्ठाणेसु असंखेज्जवारं परिभमिय सइं चदुसमयपाओग्गट्ठाणाणं गमणसंभवादो ।

कंडयस्स उवरि फोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥ २९७ ॥ (३।२)

कुदो ? अट्ठसमयपाओग्गट्ठाणेहिंतो तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणमसंखेज्ज-गुणत्तादो ।

है । उसके स्थान जघन्य अनुभागस्थान कहे जाते हैं । उनमें रहनेका काल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, असंख्यातबार चार समय योग्य स्थानोंमें परिभ्रमण करके एक बार दो समय योग्य स्थानोंको प्राप्त होता है ।

काण्डकका स्पर्शनकाल उतना ही है २९५ ॥

शंका– पहिले जिसकी प्ररूपणा की जा चुकी है उसीकी फिरसे प्ररूपणा किसलिये की जा रही है, क्योंकि, प्ररूपितकी प्ररूपणा करनेमें कोई लाभ नहीं है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान इस कथन से उत्पन्न हुए संदेहसे युक्त शिष्यके उस संदेहको दूर करनेके लिये प्ररूपितकी भी प्ररूपणा बन जाती है ।

उससे यवमध्यका स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है ॥ २९६ ॥ (८)

यवमध्य ऐसा कहनेपर आठ समय योग्य सब स्थानोंको ग्रहण करना चाहिये । अतीत कालमें एक जीवके द्वारा उनका स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है । कारण यह है कि मध्यम परिणामोंके द्वारा यवमध्यस्थानोंमें असंख्यात बार परिभ्रमण करके एक बार चार समय योग्य स्थानोंमें जाना सम्भव है ।

उससे काण्डकके ऊपर स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है ॥ २९७ ॥ (३।२)

इसका कारण यह है कि आठ समय योग्य स्थानोंकी अपेक्षा तीन समय व दो समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे पाये जाते हैं ।

जवमज्झस्स उवरिं कंडयस्स हेट्ठवो फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।२९८। (७।६।५)

किं कारणं ? जदि वि सत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणाणि तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणं असंखेज्जविभागो तो वि एदेसिं फोसणकालो असंखेज्जगुणो, मज्झिमपरिणामेहि असंखेज्जवारं परिणमिय सइं तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणगमणुवलंभादो[1]।

कंडयस्स उवरि जवमज्झस्स हेट्ठदो फोसणकालो तत्तिया चेव ॥ २९९ ॥ (मुद्रित प्रति में अपूर्ण) आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो ? समाणसंखत्तादो* मज्झिमपरिणामेहि बज्झमाणसणेण भेदाभावादो च।

जवमज्झस्स उवरि फोसणकालो विसेसाहिओ ॥ ३०० ॥

(७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २)

सत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणफोसणकालस्सुवरि चदु-त्ति-दोण्णि-समयपाओग्गट्ठाणाणं फोसणकालप्पवेसादो। केत्तियमेत्तो विसेसो ? सत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणाणं फोसणकालस्स असंखेज्जदिभागो।

उससे यवमध्यके ऊपर और काण्डकके नीचे स्पर्शनका काल असंख्यातगुणा है ।२९८। (७ । ६ । ५)

शंका – इसका कारण क्या है ?

समाधान – यद्यपि सात, छह और पांच समय योग्य स्थान तीन समय व दो समय योग्य स्थानोंके असंख्यातवें भाग हैं तो भी इनका स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, मध्यम परिणामोंके द्वारा असंख्यात बार सात, छह और पाँच समय योग्य स्थानोंमें परिभ्रमण करके एक बार तीन समय व दो समय योग्य स्थानोंमें गमन पाया जाता है।

काण्डकके ऊपर और यवमध्यके नीचे स्पर्शनकाल उतना ही है ॥ २९९ ॥ (७ । ६ । ५)

इसका कारण यह है कि एक तो उनकी संख्या समान है, दूसरे मध्यम परिणामोंके द्वारा बध्यमान स्वरूपसे उनमें कोई भेद भी नहीं है।

उनसे यवमध्यके ऊपर स्पर्शनकाल विशेष अधिक है। ३००।

(७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २)

कारण कि सात, छह व पाँच समय योग्य स्थानोंके स्पर्शनकालके ऊपर चार, तीन व दो समय योग्य स्थानोंके स्पर्शनकालका यहां प्रवेश है। विशेषका प्रमाण कितना है ? वह सात, छह व पांच समय योग्य स्थानों सम्बन्धी स्पर्शनकालके असंख्यातवें भाग मात्र है।

---

[1] ताप्रती– ' ट्ठाणागमणुवलंभादो इति पाठः। * मप्रतौ समयाणसंखत्तादो ' इति पाठः।

कंडयस्स हेट्ठदो फोसणकालो विसेसाहिओ ॥ ३०१ ॥

(४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५)

केत्तियमेत्तो विसेसो ? सगकालस्स असंखेज्जा भागा* विसेसो । तं जहा- जवमज्झकालब्भंतरे चदुसमयपाओग्गट्ठाणकालमेत्तं घेत्तूण उवरिमसत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणकालाणं उवरि ठ्ठविदे एत्तियं होदि (४ । ५ । ६ । ७ । ७ । ६ । ५ ।४)। एसो कालो तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणं कालं मोत्तूण सेसकाले पेक्खिय दुगुणहाणी । पुणो जवमज्झकालस्स अवणिदसेसा असंखेज्जा भागा अत्थि । पुणो ते घेत्तूण हेट्ठिमतिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणकालम्मि सोहिदे सुद्धसेसं विसमय-तिसमयपाओग्गट्ठाणकालस्स असंखेज्जा भागा होदि । पुणो एदम्मि पुव्वुत्तदुगुणकालम्मि सोहिदे किंचूणदुगुणकालो चिट्ठदि । तेण विसेसाहियो त्ति कालो परूविदो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कंडयस्स उवरिं फोसणकालो विसेसाहिओ ॥ ३०२ ॥

(५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २)

केत्तियमेत्तो विसेसो? उवरिमतिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणकालमेत्तो ।

सव्वेसु ट्ठाणेसु फोसणकालो विसेसाहिओ ॥ ३०३ ॥

(४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २)

इससे काण्डकके नीचे स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ ३०१ ॥

४, ५, ६, ७, ८, ७, ६, ५,

विशेष कितना है ? वह विशेष अपने कालके असंख्यात बहुभाग प्रमाण है, यथा - यवमध्यकालके भीतर चार समय योग्य स्थानोंके काल मात्रको ग्रहण कर उपरिम सात छ व पांच समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालोंके ऊपर स्थापित करनेपर इतना होता है- ४, ५, ६, ७, ७, ६, ५, ४, । यह काल तीन समय व दो समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालोंको छोडकर शेष कालोंकी अपेक्षा करके दुगुणा हीन है । पुनः यवमध्यकालका कम करनेसे शेष रहा असंख्यात बहुभाग है । उसको ग्रहण कर अधस्तन तीन समय और दो समय योग्य स्थानोंके कालमेंसे कम कर देनेपर शेष दो समय व तीन समय योग्य स्थानोंके कालका असंख्यात बहुभाग रहता है । इसको पूर्वोक्त दुगुने कालमेंसे कम कर देनेपर कुछ कम दुगुणा काल रहता है । इसीलिये विशेष अधिक कालकी प्ररूपणा की गई है ।

इससे काण्डकके ऊपर स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ ३०२ ॥

५, ६, ७, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २,

विशेष कितना है ? वह ऊपरके तीन समय और दो समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालके बराबर है ।

इससे सब स्थानोंमें स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ ३०३ ॥

४, ५, ६, ७, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २,

---

* आप्रतौ ' असंखेज्जभाग ', ताप्रतौ ' असंखेज्जभागो ' इति पाठः ।

केत्तियमेत्तो विसेसो ? हेट्ठिमचदुसमयपाओग्गट्ठाणकालमेत्तो । एवं अभवसिद्धियपाओग्गे । एवं फोसणपरूवणा समत्ता ।

अधवा, उक्कस्सज्झवसाणट्ठाणे त्ति भणिदे विसमयपाओग्गट्ठाणाणं चरिमं घेप्पदि । जहण्णज्झवसाणट्ठाणे त्ति भणिदे चदुसमयपाओग्गाणं जहण्णं घेप्पदि त्ति के वि आइरिया भणंति । तण्ण घडदे, उक्कस्ससंकिलेसम्मि णिवदणवारेहिंतो उक्कस्सविसोहीए पदणवाराणमसंखेज्जगुणत्तविरोहादो । कंडयस्स फोसणकालो तत्तियो चेव त्ति वुत्ते उवरि चदुसमयपाओग्गट्ठाणाणं चरिमट्ठाणकालो गहिदो त्ति भणंति । एदं पि ण घडदे, एक्कस्स ट्ठाणस्स कंडयत्तविरोहादो उक्कस्सविसोहीए परिणमणवारेहिंतो मज्झिमसंकिलेसपरिणमणवाराणं समाणत्तविरोहादो । तम्हा बिदियअप्पाबहुगपरूवणा एत्थ ण परूविदा ।

अप्पाबहुए त्ति उक्कस्सए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा थोवा ॥ ३०४ ॥

कुदो ? विसमयपाओग्गजहण्णकालादो एदस्स कालो असंखेज्जगुणो त्ति सुत्तवयणादो

जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा असंखेज्जगुणा ॥ ३०५ ॥

कुदो णव्वदे ? पुव्विल्लकालादो एदस्स कालो असंखेज्जगुणो त्ति सुत्तवयणादो

विशेष कितना है ? वह अधस्तन चार समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालके बराबर है । इस प्रकार अभवसिद्धिक योग्य स्थानमें प्ररूपणा करना चाहिये । इस प्रकार स्पर्शनप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अथवा, उत्कृष्ट अध्यवसानस्थान ऐसा कहनेपर दो समय योग्य स्थानोंका अन्तिम स्थान ग्रहण किया जाता है । जघन्य अनुभागस्थान ऐसा कहनेपर चार समय योग्य स्थानोंका जघन्य स्थान ग्रहण किया जाता है; ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं । परन्तु वह घटित नहीं होता क्योंकि, ऐसा होनेपर उत्कृष्ट संक्लेशमें पडनेके वारोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट विशुद्धिमें पडनेके वारोंके असंख्यात गुणे होनेका विरोध होता है ।

काण्डकका स्पर्शनकाल उतना ही है, ऐसा कहनेपर ऊपर चार समय योग्य स्थानोंमें अन्तिम स्थानके कालको ग्रहण किया गया है; ऐसा वे कहते हैं । परन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, एक स्थानके काण्डक होनेका विरोध है, तथा उत्कृष्ट विशुद्धिमें परिणत होनेके वारोंकी अपेक्षा मध्यम संक्लेशमें परिणत होनेके वारोंकी समानताका विरोध है । इस कारण द्वितीय अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा यहाँ नहीं की गई है ।

अल्पबहुत्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानमें जीव स्तोक हैं ।३०४।

कारण यह कि दो समय योग्य स्थानोंका काल स्तोक पाया जाता है ।

उनसे जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ ३०५ ॥

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– पूर्वके कालकी अपेक्षा इसका काल असंख्यातगुणा है, इस सूत्रवचनसे जाना

णव्वदे जहा चदुसमयपाओग्गट्ठाणेसु परिभमंति जीवा बहुगा त्ति ।

कंडयस्स जीवा तत्तिया चेव । ३०६ ।

कुदो ? दोण्णं कालादो भेदाभावादो ।

जवमज्झस्स जीवा असंखेज्जगुणा । ३०७ ।

कुदो ? कंडयस्स जवमज्झकालस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

कंडयस्स उवरिं जीवा असंखेज्जगुणा । ३०८ ।

कुदो ? जवमज्झट्ठाणेहिंतो तिसमइयविसमइयपाओग्गट्ठाणाणमसंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

जवमज्झस्स उवरि कंडयस्स हेट्ठादो जीवा असंखेज्जगुणा । ३०९ ।

कुदो ? असंखेज्जगुणफोसणकालत्तादो ।

कंडयस्सुवरिं जवमज्झस्स हेट्ठिमदो जीवा तत्तिया चेव । ३१० ।

कुदो ? फोसणकालट्ठाणसंखाहि समाणत्तादो* ।

जवमज्झस्स उवरिं जीवा विसेसाहिया । ३११ ।

सुगमं ।

जाता है कि चार समय योग्य स्थानोंमें जीव बहुत भ्रमण करनेवाले हैं ।

काण्डकके जीव उतने ही हैं । ३०६ ।

कारण कि दोनोंमें कालकी अपेक्षा कोई भेद नहीं है ।

उनसे यवमध्यके जीव असंख्यातगुणे हैं । ३०७ ।

कारण कि काण्डककालकी अपेक्षा यवमध्यकाल असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उनसे काण्डकके ऊपर जीव असंख्यातगुणे हैं । ३०८ ।

कारण कि यवमध्यके स्थानोंकी अपेक्षा तीन समय व दो समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे पाये जाते हैं ।

उनसे यवमध्यके ऊपर और काण्डकके नीचे जीव असंख्यातगुणे हैं । ३०९ ।

कारण कि यहां असंख्यातगुणा स्पर्शनकाल पाया जाता है ।

काण्डकके ऊपर और यवमध्यके नीचे जीव उतने ही हैं । ३१० ।

कारण कि यहां स्पर्शनकाल और स्थानसंख्याकी अपेक्षा समानता है ।

उनसे यवमध्यके ऊपर जीव विशेष अधिक हैं । ३११ ।

यह सूत्र सुगम है ।

---

* मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु 'पमाणत्तादो' इति पाठः ।

कंडयस्स हेट्ठदो जीवा विसेसाहिया ॥ ३१२ ॥

एदं पि सुगमं ।

कंडयस्स उवरिं *जीवा विसेसाहिया ॥ ३१३ ॥

सुगमं ।

सव्वेसु ट्ठाणेसु जीवा विसेसाहिया ॥ ३१४ ॥

सुगमं ।

एवमप्पाबहुगे समत्ते जीवसमुदाहारे त्ति तदिया चूलिया समत्ता ।

एवं वेयणाभावविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

उनसे काण्डकके नीचे जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३१२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उनसे काण्डकके ऊपर जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे सब स्थानोंमें जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३१४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त हो जानेपर जीवसमुदाहार नामकी तृतीय चूलिका समाप्त होती है ।

इस प्रकार वेदनाभावविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।



* आप्रतौ ' उवरिम ' इति पाठः ।

वेयणापच्चयविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं, अणवगयाहियारस्स अंतेवासिस्स परूवणाए फलाभावादो। सव्वं कम्मं कज्जं चेव, अकज्जस्स कम्मस्स ससविसाणस्सेव अभावावत्तीदो। ण च एवं, कोहादिकज्जाणमत्थित्तण्णहाणुववत्तीदो कम्माणमत्थित्तसिद्धीए। कज्जं पि सव्वं सहेउअं चेव, णिक्कारणस्स कज्जस्स अणुवलंभादो। तम्हा सुत्तेण विणा वि कम्माणं सहेउअत्तसिद्धीदो पच्चयविहाणं णाढवेदव्वमिदि? एत्थ परिहारो वुच्चदे- कम्माणं कज्जत्तं सकारणत्तं च जुत्तीए सिद्धं चेव। किंतु पच्चयस्स विहाणं पवंचो भेदो अणेण परूविज्जदे कारणविसयविप्पडिवत्तिणिराकरणट्ठं।

णेगम-ववहार-संगहाणं- णाणावरणीयवेयणा पाणादिवादपच्चए ।२।

पाणादिवादो णाम पाणेहिंतो पाणीणं विजोगो। सो जत्तो मण-वयण-कायवावा-

---

वेदनाप्रत्ययविधान अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है, क्योंकि, अधिकारसे अनभिज्ञ शिष्यके प्रति की जानेवाली प्ररूपणाका कोई फल नहीं है।

शंका– सब कर्म कार्यस्वरूप ही है, क्योंकि, जो कर्म अकार्यस्वरूप होते हैं उनका खरगोशके सींगके समान अभावका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, क्रोधादिरूप कार्योंका अस्तित्व बिना कर्मके बन नहीं सकता, अतएव कर्मका अस्तित्व सिद्ध ही है। कार्य भी जितना है वह सब सकारण ही होता है, क्योंकि कारण रहित कार्य पाया नहीं जाता। इस कारण चूंकि सूत्रके विना भी कर्मोंकी सकारणता सिद्ध है, अतः प्रत्ययविधानका प्रारम्भ करना उचित नहीं है?

समाधान– यहां उपर्युक्त शंकाका उत्तर कहा जाता है– कर्मोंकी कार्यरूपता और सकारणता तो युक्तिसे ही सिद्ध है। किन्तु उनके कारण विषयक विरोधका निराकरण करनेके लिये इस अधिकारके द्वारा प्रत्यय अर्थात् कारणके विधान अर्थात् प्रपंच या भेदकी प्ररूपणा की जा रही है।

नैगम, व्यवहार और संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदना प्राणातिपात प्रत्ययसे होती है ॥ २ ॥

प्राणातिपातका अर्थ प्राणोंसे प्राणियोंका वियोग करना है। वह जिन मन, वचन या कायके

अ-आप्रत्योः 'अणुववत्तीए' इति पाठः। अ-आप्रत्योः 'णादवेदव्वमिदि' इति पाठः।
ताप्रतौ 'पाणादिवादो णाम' इत्येतावानयं पाठः सूत्रान्तर्गतोऽस्ति।

रादीहिंतो ते वि पाणादिवादो । के पाणा? चक्खु-सोद-घाण-जिब्भा-पासिंदिय-मण-वयण-कायबलुस्सासणिस्सासाउआणि त्ति दस पाणा । पच्चओ कारणं णिमित्तमिच्चणत्थंतरं । पाणादिवादो च सो पच्चओ च पाणादिवादपच्चओ । पाणादिवादो णाम हिंसाविसयजीववावारो । सो च पज्जाओ । तदो ण सो कारणं, पज्जायस्स♣ एयंतस्स कारणत्तविरोहादो त्ति? ण, पज्जायस्स पहाणीभूदस्स आयड्ढियपरवक्खस्स कारणत्तुवलंभादो । तम्हि णाणादिवादपच्चए ण णाणावरणीयवेयणा होदि। कधं पच्चयस्स सत्तमीए उप्पत्ती? ण, णाणादिवादपच्चयविसए णाणावरणीयवेयणा वट्टदि त्ति संबंधिज्जमाणे सत्तमीविहत्तीए वट्ठसइयाए उप्पत्ति पडि विरोहाभावादो । अधवा तइयत्थे सत्तमी वट्टव्वा । तधा च पाणादिवादपच्चएण णाणावरणीयवेयणा होदि त्ति सिद्धो सुत्तट्ठो । पाणादिवादो जदि णाणावरणीयबंधस्स पच्चओ होज्ज तो तिहुवणे ट्ठिदकम्मइयखंधा णाणावरणीयपच्चएण अक्कमेण किण्ण परिणमंते, कम्मजोगत्तं पडि विसेसाभावादो ? ण, तिहुवणब्भंतरकम्मइय-

---

व्यापारादिकोंसे होता है वे भी प्राणातिपात ही कहे जाते हैं ।

शंका– प्राण कौनसे हैं ?

समाधान - चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिव्हा व स्पर्शन, ये पाँच इन्द्रियां; मन, वचन और काय, ये तीन बल; तथा उच्छ्वास-निःश्वास एवं आयु ये दस प्राण हैं ।

प्रत्यय, कारण और निमित्त, ये समानार्थक शब्द हैं । प्राणातिपात रूप जो प्रत्यय वह प्राणातिपातप्रत्यय, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है ।

शंका– प्राणातिपातका अर्थ हिंसा विषयक जीवका व्यापार है । वह चूंकि पर्याय स्वरूप है अतः वह कारण नहीं हो सकता, क्योंकि, एकान्त पर्यायके कारणताका विरोध है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, यहां पर्याय प्रधान है और परपक्ष आकर्षित होकर उसमें गृहीत है इसलिए उसे कारण माननेमें कोई विरोध नहीं है ।

उक्त प्राणातिपात प्रत्ययके होनेपर ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।

शंका– प्रत्यय शब्दकी सप्तमी विभक्ति कैसे संगत है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि प्राणातिपात प्रत्ययके विषयमें ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदना होती है, ऐसा सम्बन्ध करनेपर विषयार्थक सप्तमी विभक्तिकी उपपत्तिमें विरोध नहीं आता। अथवा, तृतीय विभक्तिके अर्थमें सप्तमी विभक्ति समझना चाहिये । इस प्रकार प्राणातिपात प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है, यह सूत्रका अर्थ सिद्ध होता है ।

शंका– यदि प्राणातिपात ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण है तो तीनों लोकोंमें स्थित कार्मण स्कन्ध ज्ञानावरणीय पर्याय स्वरूपसे एक साथ क्यों नहीं परिणत होते हैं, क्योंकि, उनमें कर्मयोग्यताकी अपेक्षा समानता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, तीनों लोकोंके भीतर स्थित कार्मण स्कन्धोंमें देश विषयक

♣ प्रतिषु ' पज्जत्तवस्स– ' इति पाठः । ✠ आप्रतौ ' आयदिय ' शेषप्रत्योः ' आयट्ठिय ' इति पाठः
✠ अ-आप्रत्योः ' पच्चएहि ' इति पाठः ।

खंधेहि देसविसयपच्चासत्तीए अभावादो । वुत्तं च--

एयक्खेत्तोगाढं सव्वपदेसेहि कम्मणो जोग्गं♠ ।
बंधइ जहुत्तहेदू सादियमहणादियं वा वि♣ ॥ १ ॥

जदि एयक्खेत्तोगाढा कम्मइयखंधा पाणादिवादादो♋ कम्मपज्जाएण परिणमंति तो सव्वलोगगयजीवाणं पाणादिवादपच्चएण सव्वे कम्मइयखंधा अक्कमेण♣ णाणावरणीयपज्जाएण परिणदा होंति । ण च एवं, विदियादिसमएसु कम्मइयखंधाभावेण सव्वजीवाणं णाणावरणीयबंधस्स अभावप्पसंगादो। ण च एवं, सव्वजीवाणं णिव्वाणगमणप्पसंगादो? एत्थ परिहारो वुच्चदे-पच्चासत्तीए एगोगाहणविसयाए संतीए वि ण सव्वे कम्मइयक्खंधा णाणावरणीयसरूवेण एगसमएण परिणमंति, पत्तं दज्झं दहमाणदहणम्मि व जीवम्मि तहाविहसत्तीए अभावादो । किं कारणं जीवम्मि तारिसी सत्ती णत्थि ? सहावियादो । कम्मइयक्खंधा किं जीवेण समवेदा संता णाणावरणीयपज्जाएण परिणमंति आहो असमवेदा♌ ? णादिपक्खो, ओरालिय-वेउव्विय-आहार-तेजइयसरीरसण्णिदणोकम्मवदिरि-

---

प्रत्यासत्तिका अभाव है । कहा भी है--

सूक्ष्म निगोद जीवका शरीर घनांगुलके असंख्यातवें भागमात्र जघन्य अवगाहनाका क्षेत्र एक क्षेत्र कहा जाता है । उस एक क्षेत्रमें अवगाहको प्राप्त व कर्मस्वरूप परिणमनके योग्य सादि अथवा अनादि पुद्गल द्रव्यको जीव यथोक्त मिथ्यादर्शनादिक हेतुओंसे संयुक्त होकर समस्त आत्मप्रदेशोंके द्वारा बाँधता है ॥ १ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शंका-- यदि एक क्षेत्रावगाहरूप हुए कार्मण स्कन्ध प्राणातिपातके निमित्तसे कर्म पर्यायरूप परिणमते हैं तो समस्त लोकमें स्थित जीवोंके प्राणातिपात प्रत्ययके द्वारा सभी कार्मण स्कन्ध एक साथ ज्ञानावरणीय रूप पर्यायसे परिणत हो जाने चाहिये । परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर द्वितीयादिक समयोंमें कार्मण स्कन्धोंका अभाव हो जानेसे सब जीवोंके ज्ञानावरणीयका बन्ध न हो सकनेका प्रसंग आता है । किन्तु ऐसा सम्भव नहीं है क्योंकि, इस प्रकारसे समस्त जीवोंके मुक्ति प्राप्तिका अनिवार्य है ?

समाधान- उपर्युक्त शंकाका परिहार कहा जाता है- एक अवगाहनाविषयक प्रत्यासत्तिके होनेपर भी सब कार्मण स्कन्ध एक समयमें ज्ञानावरणीय स्वरूपसे नहीं परिणमते हैं, क्योंकि, प्राप्त इन्धन आदि दाह्य वस्तुको जलानेवाली अग्निके समान जीवमें उस प्रकारकी शक्ति नहीं है ।

शंका-- जीवमें वैसी शक्तिके न होनेका क्या कारण है ?

समाधान-- उसमें वैसी शक्ति न होनेका कारण स्वभाव ही है ।

शंका-- कार्मण स्कन्ध क्या जीवमें समवेत होकर ज्ञानावरणीय पर्यायरूपसे परिणमते हैं अथवा असमवेत होकर ? प्रथम पक्ष तो संभव नहीं है, क्योंकि, औदारिक, वैक्रियिक, आहारक

♠ अ-आप्रत्योः 'जोग' इति पाठः । ♣ गो०, क०, १८५ । ♋ अ-ताप्रत्योः 'पादोदो' इति पाठः ।
♣ आप्रतौ 'अक्कमेण' इति पाठः । ♌ आप्रतौ 'असमदणादि-' इति पाठः ।

त्तस्स कम्मइयक्खंधस्स कम्मसरूवेण अपरिणदस्स जीवे समवेदस्स अणुवलंभादो । उवलंभे वा पत्तेयसरीरवग्गणाए ट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए ओरालिय-वेउव्विय-तेजा-कम्मइयसरीराणि अस्सिदूण जहा परूवणा कदा एवं जीवसमवेदकम्मइयखंधे वि अस्सिदूण ट्ठाणपरूवणा करेज्ज । ण च एवं, तहाणुवलंभादो । ण विदिओ◆ वि पक्खो जुज्जदे, जीवे असमवेदाणं कम्मइयक्खंधाणं㊀ णाणावरणीयपसरूवेण परिणमणविरोहादो । अविरोहे वा जीवो संसारावत्थाए अमुत्तो होज्ज, मुत्तदव्वेहि संबंधाभावादो । ण च एवं, जीवगमणे सरीरस्स संबंधाभावेण ✤अगमणप्पसंगादो, जीवादो पुधभूदं सरीरमिदि अणुहवाभावादो च । ण पच्छा दोण्णं पि संबंधो, कारणे अक्कमे संते कज्जस्स कमुप्पत्तिविरोहादो त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे- जीवसमवेदकाले चेव कम्मइयक्खंधा ण✲ णाणावरणीयसरूवेण परिणमंति (त्ति) ण पुव्वुत्तदोसा डुक्कंति । कधमेगो णाणाविवादो अक्कमेण दोण्णं कज्जाणं संपादओ ? ण, एयादो मोग्गरादो घादावयवविभागट्ठाणसंचालणक्खेत्तंतरवत्ति✡खप्परकज्जाणमक्कमेणुप्पत्तिदंसणादो । कधमेगो णाणाविवादो अणंते कम्मइय--

---

और तैजस शरीर संज्ञावाले नोकर्मसे भिन्न और कर्मस्वरूपसे अपरिणत हुआ कार्मण स्कन्ध जीव में समवेत नहीं पाया जाता । अथवा यदि पाया जाता है तो प्रत्येक शरीरकी वर्गणाके स्थानोंकी प्ररूपणा करते समय औदारिक, वैक्रियिक तैजस और कार्मणशरीरका आश्रय करके जैसे प्ररूपणा की गई है, इस प्रकार जीव समवेत कार्मण स्कन्धोंका भी आश्रय करके स्थानप्ररूपणा करनी चाहिये थी । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वह पायी नहीं जाती । दूसरा पक्ष भी युक्तिसंगत नहीं है, क्योंकि, जीवमें असमवेत कार्मण स्कन्धोंके ज्ञानावरणीय स्वरूपसे परिणत होनेका विरोध है । यदि विरोध न माना जाय तो संसार अवस्थामें जीवको अमूर्त होना चाहिये, क्योंकि, मूर्त द्रव्योंसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है । परन्तु ऐसा है नहीं क्योंकि, जीवके गमन करनेपर शरीरका सम्बन्ध न रहनेसे उसके गमन न करनेका प्रसंग आता है । दूसरे, जीवसे शरीर पृथक् है, ऐसा अनुभव भी नहीं होता । पीछे दोनोंका सम्बन्ध होता है, ऐसा भी सम्भव नहीं है; क्योंकि, कारणके क्रम रहित होनेपर कार्यकी क्रमिक उत्पत्तिका विरोध है ?

समाधान– यहां उक्त शंकाका परिहार करते हैं । यथा– जीवसे समवेत होनेके समयमें ही कार्मण स्कन्ध ज्ञानावरणीय स्वरूपसे नहीं परिणमते हैं । अतएव पूर्वोक्त दोष यहां नहीं ढूंढते ।

शंका– प्राणातिपात रूप एक ही कारण युगपत् दो कार्योंका उत्पादक कैसे हो सकता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि एक मुद्गरसे घात, अवयवविभाग, स्थानसंचालन और क्षेत्रान्तरकी प्राप्तिरूप खप्पर कार्योंकी युगपत् उत्पत्ति देखी जाती है ।

शंका– प्राणातिपात रूप एक ही कारण अनन्त कार्मण स्कन्धोंको एक साथ ज्ञानावरणीय

◆ अ-आप्रत्योः ' वीइंदिओ ' ताप्रतौ ' वीइज्जओ ' इति पाठः । ㊀ ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम् ।
✤ अप्रतौ ' आगमण ' इति पाठः । ✲ अ-आप्रत्योः ' कम्मइयक्खंधाण ', ताप्रतौ ' कम्मइयक्खंधा (णं)' इति पाठः । ✡ अ-आप्रत्योः ' कखेत्तंतरावेति ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

क्खंधे णाणावरणीयसरूवेण अक्कमेण परिणमावेदि, बहुसु एक्कस्स अक्कमेण वुत्ति-विरोहादो ? ण, एयस्स णाणादिआवस्स अणंतसत्तिजुत्तस्स तदविरोहादो ।

मुसावादपच्चए ॥ ३ ॥

असंतवयणं मुसावादो । किमसंतवयणं ? मिच्छत्तासंजम-कसाय-पमादुट्ठाविओ वयणकलावो । एदम्हि मुसावादपच्चए मुसावादपच्चएण वा णाणावरणीयवेयणा जायदे । कम्मबंधो हि णाम सुहासुहपरिणामेहिंतो जायदे, सुद्धपरिणामेहिंतो तेसिं दोण्णं पि णिम्मूलक्खओ ।

ओदइया बंधयरा उवसम-खय-मिस्सया य मोक्खयरा ।
परिणामिओ दु भावो करणोहयवज्जियो होदि♠ ॥ २ ॥

इदि वयणादो । असंतवयणं पुण ण सुहपरिणामो, णो असुहपरिणामो, पोग्गलस्स तप्परिणामस्स वा जीवपरिणामत्तविरोहादो । णासंतवयणं णाणावरणीयबंधस्स कारणं णासंतवयणकारणकसाय-पमादाणमसंतवयणववएसो, तेसिं कोह-माण-माया-लोहपच्चएसु अंतब्भावेण पउणरुत्तियप्पसंगादो। ण पाणादिवादपच्चओ वि, भिण्णजोव-

---

स्वरूपसे कैसे परिणमता है, क्योंकि, बहुतोंमें एककी युगपत् वृत्तिका विरोध है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, प्राणातिपात रूप एक ही कारणके अनन्त शक्तियुक्त होनेसे वैसा होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

मृषावाद प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ३ ॥

असत् वचनका नाम मृषवाद है ।

शंका-- असत् वचन किसे कहते हैं ?

समाधान-- मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और प्रमादसे उत्पन्न वचन समूहको असत् वचन कहते हैं ।

इस मृषावाद प्रत्ययमें अथवा मृषावाद प्रत्ययके द्वारा ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।

शंका-- कर्मका बन्ध शुभ व अशुभ परिणामोंसे होता है और शुद्ध परिणामोंसे उन (शुभ व अशुभ) दोनोंका ही निर्मूल क्षय होता है; क्योंकि--

' औदायिक भाव बन्धके कारण और औपशमिक, क्षायिक व मिश्र भाव मोक्षके कारण हैं । पारिणामिक भाव बन्ध व मोक्ष दोनोंके ही कारण नहीं हैं ॥ २ ॥

ऐसा आगमवचन है । परन्तु असत्य वचन न तो शुभ परिणाम है और न अशुभ परिणाम है; क्योंकि, पुद्गलके अथवा उसके परिणामके जीवपरिणाम होनेका विरोध है । इस कारण असत्य वचन ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण नहीं हो सकता । यदि कहा जाय कि असत्य वचनके कारणभूत कषाय और प्रमादकी असत्य वचन संज्ञा है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि उनका क्रोध, मान, माया व लोभ प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव होनेसे पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है । इसी

♠पु. ७ पृ. ९, क. पा. १. पृ. ६. इति पाठः ।

विसयस्स पाण-पाणिविओगस्स* कम्मबंधहेउत्तविरोहादो। ण च पाण-पाणिविओ-गकारणजीवपरिणामो पाणादिवादो, तस्स राग-दोस-मोहपच्चएसु अंतब्भावेण पउणरुत्तियप्पसंगादो त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे– सव्वस्स कज्जकलावस्स कारणादो अभेदो सत्तादीहिंतो त्ति णए अवलंबिज्जमाणे कारणादो कज्जमभिण्णं, कज्जादो कारणं पि, असदकरणादू उपादानग्रहणात् सर्वसंभावात् शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च①। कारणे कार्यमस्तीति विवक्षातो वा कारणात्कार्यमभिन्नं, णाणावरणीयबंधणिबंधणपरि-

---

प्रकार प्राणातिपात भी ज्ञानावरणीयका प्रत्यय नहीं हो सकता, क्योंकि, अन्य जीवविषयक प्राण-प्राणिवियोगके कर्मबंधमें कारण होनेका विरोध है। यदि कहा जाय कि प्राण व प्राणीके वियोगका कारणभूत जीवका परिणाम प्राणातिपात कहा जाता है, सो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, उसका राग, द्वेष एवं मोह प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव होनेसे पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है।

समाधान– उपर्युक्त शंकाका परिहार कहा जाता है। यथा– सत्ता आदिकी अपेक्षा सभी कार्यकलापका कारणसे अभेद है, इस नयका अवलंबन करनेपर कारणसे कार्य अभिन्न है तथा कार्यसे कारण भी अभिन्न है; क्योंकि, असत् कार्य कभी किया नहीं जा सकता है, नियत उपादानकी अपेक्षा की जाती है, किसी एक कारणसे सभी कार्य उत्पन्न नहीं हो सकते, समर्थ कारणके द्वारा शक्य कार्य ही किया जाता है, तथा असत् कार्यके साथ कारणका संबंध भी नहीं बन सकता।

विशेषार्थ– यहाँ कार्यका कारणके साथ अभेद बतलानेके लिये निम्न पाँच हेतु दिये गये हैं–(१) यदि कारणके साथ सत्ताकी अपेक्षा भी कार्यका अभेद न स्वीकार किया जाय तो कारणके द्वारा असत् कार्य कभी किया नहीं जा सकेगा, जैसे– खरविषाणादि। अतएव कारण-व्यापारके पूर्व भी कारणके समान कार्यको भी सत् ही स्वीकार करना चाहिये। इस प्रकार सत्ताकी अपेक्षा दोनोंमें कोई भेद नहीं रहता। २) दूसरा हेतु 'उपादान ग्रहण' दिया गया है। उपादान-ग्रहणका अर्थ उपादान कारणोंके साथ कार्यका संबंध है। अर्थात् कार्यसे संबद्ध होकर ही कारण उसका जनक हो सकता है, न कि उससे असम्बद्ध रहकर भी। और चूंकि कारणका सम्बन्ध असत् कार्यके साथ सम्भव नहीं है, अतएव कारणव्यापारसे पहिले भी कार्यको सत् स्वीकार करना ही चाहिये ३) अब यहाँ शंका उपस्थित होती है कि कारण अपनेसे असंबद्ध कार्यको उत्पन्न क्यों नहीं करते हैं ? इसके समाधानमें 'सर्वसम्भावाभाव' रूप यह तीसरा हेतु दिया गया है। अभिप्राय यह है कि यदि कारण अपनेसे असम्बद्ध कार्यके उत्पादक हो सकते हैं तो जिस प्रकार मिट्टीसे घट उत्पन्न होता है उसी प्रकार उससे पट आदि अन्य कार्य भी उत्पन्न हो जाने चाहिये, क्योंकि, मिट्टीका जैसे पट आदिसे कोई सम्बन्ध नहीं है वैसे ही घटसे भी उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इस प्रकार सब कारणोंसे सभी कार्योंके उत्पन्न होने रूप जिस अव्यवस्थाका प्रसंग आता है उस अव्यवस्थाको टालनेके लिए मानना पड़ेगा कि घट मिट्टीमें कारणव्यापारके पूर्व भी सत् ही था। वह केवल कारणव्यापारसे अभिव्यक्त किया जाता है। ४) पुनः शंका उपस्थित होती है कि असम्बद्ध रहकर भी कारण जिस

---

* अ-आप्रत्योः 'विसयोगस्स' ताप्रतौ 'त्रियोगस्स' इति पाठः। * प्रतिषु 'वियोग' इति पाठः।

① असदकरणादुपादानग्रहणात् सर्वसम्भवाभावात्। शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्॥ सांख्यकारिका ९।

णिदो वट्टदे पाण-पाणिवियोगो वयणकलावो च । तम्हा तदो तेसिमभेदो । तेणेव कारणेण णाणावरणीयबंधस्स तेसिं पच्चयत्तं पि सिद्धं । एवंविहववहारो किमट्ठं कीरदे? सुहेण णाणावरणीयपच्चयपडिबोहणट्ठं कज्जपडिसेहदुवारेण कारणपडिसेहट्ठं च ।

अदत्तादाणपच्चए ॥ ४ ॥

[अदत्तस्स अदिण्णस्स आदाणं गहणं अदत्तादाणं[1]]सो चेव पच्चओ अदत्तादाणपच्चओ, तम्हि अदत्तादाणपच्चयविसए णाणावरणीयवेयणा होदि । एत्थ वि जेण 'आदीयदे अणेण आदीयद इदि आदाणं' तेण अदिण्णत्थो तग्गहणपरिणामो च अदत्तादाणं । ण च पाणाविवाद-मुसावाद-अदत्तादाणाणमंतरंगाणं कोधादिपच्चएसु

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कार्यके उत्पादनमें समर्थ है उसे ही उत्पन्न करेगा, न कि अन्य अशक्य कार्योंको । अतएव उपर्युक्त अवस्थाकी सम्भावना नहीं है? इसके उत्तरमें 'समर्थ कारणके द्वारा शक्य ही कार्य किया जाता है' यह चतुर्थ हेतु दिया गया है । अर्थात् कारणमें विद्यमान कार्यजनन रूप शक्ति यदि सर्व कार्यविषयक है तब तो उपर्युक्त अव्यवस्था ज्योंकी त्यों बनी रहती है । परन्तु यदि वह शक्ति शक्य विवक्षित घटादि कार्यविषयक ही है तो भला अविद्यमान घटादि कार्योंमें उक्त शक्तिकी सम्भावना ही कैसे की जा सकती है ? अतएव उक्त अव्यवस्थाके निवारणार्थ कार्यको 'सत्' ही स्वीकार करना चाहिये । (५) पाचवाँ हेतु 'कारणभाव' है । इसका अभिप्राय यह है कि कार्य चूंकि कारणात्मक ही है, उससे भिन्न नहीं हैं; अतएव सत् कारणसे अभिन्न कार्य कभी असत् नहीं हो सकता । इस प्रकार इन पांच हेतुओंके द्वारा कार्यके 'सत्' सिद्ध हो जाने-पर सत्तादिक धर्मोंकी अपेक्षा कार्य अपने कारणसे स्वयमेव अभिन्न सिद्ध हो जाता है ।

अथवा, 'कारणमें कार्य है' इस विवक्षासे भी कारणसे कार्य अभिन्न है । प्रकृतमें प्राण-प्राणिवियोग और वचनकलाप चूंकि ज्ञानावरणीयबन्धके कारणभूत परिणामसे उत्पन्न होते हैं अतएव वे उससे अभिन्न हैं । इसी कारण वे ज्ञानावरणीयबन्धके प्रत्यय भी सिद्ध होते हैं ।

शंका- इस प्रकारका व्यवहार किसलिये किया जाता है ?

समाधान- सुखपूर्वक ज्ञानावरणीयके प्रत्ययोंका प्रतिबोध करानेके लिये तथा कार्यके प्रतिषेध द्वारा कारणका प्रतिषेध करनेके लिये भी उपर्युक्त व्यवहार किया जाता है ।

अदत्तादान प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ४ ॥

[अदत्त अर्थात् नहीं दिये गये पदार्थका आदान अर्थात् ग्रहण करना 'अदत्तादान' है । अदत्तादान ऐसा जो वह प्रत्यय अदत्तादानप्रत्यय, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है ।]उस अदत्तादान प्रत्ययके विषयमें ज्ञानावरणीय वेदना होती है । यहां भी चूंकि 'जिसके द्वारा ग्रहण किया जाय या जो ग्रहण किया जाय' इस प्रकार आदान शब्दकी निरुक्ति की गई है अतएव उससे अदत्त पदार्थ और उसके ग्रहण करनेका परिणाम दोनोंही अदत्तादान ठहरते हैं । प्राणातिपात, मृषावाद और अदत्तादान इन अन्तरंग प्रत्ययोंका क्रोधादिक प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव नहीं हो सकता,

[1] अ-आप्रत्योः ' अदत्तादाणगहणं ' ताप्रतौ ' अदत्तादाणं (गहणं) , इति पाठः ।

अंतब्भावो, कधंचि तत्तो* तेसिं भेदुवलंभादो । एत्थ ☆बज्झगत्थाणं पुव्वं पच्चयत्तं परूवेदव्वं । ण च पमादेण विणा तियरणसाहणट्ठं गहिदबज्झट्ठो णाणावरणीय-पच्चओ, पच्चयादो अपुप्पण्णस्स पच्चयत्तविरोहादो ।

मेहुणपच्चए ॥ ५ ॥

[स्त्री-पुरिसविसयवावारो मण-वयण-कायसरूवो मेहुणं] तेण मेहुणपच्चएण णाणावरणीयवेयणा जायदे । एत्थ वि अंतरंगमेहुणस्सेव बहिरंगमेहुणस्स आसवभावो वत्तव्वो । ण च मेहुणं अंतरंगरागे णिपददि, तत्तो कधंचि एदस्स भेदुवलंभादो ।

परिग्गहपच्चए ॥ ६ ॥

[परिगृह्यत इति परिग्रहः बाह्यार्थः क्षेत्रादिः, परिगृह्यते अनेनेति वा परिग्रहः बाह्यार्थ-ग्रहणहेतुरात्म परिणामः] एदेहि परिग्गहेदि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । एत्थ बहिरंगस्स परिग्गहस्स पुव्वं व पच्चयभावो वत्तव्वो ।

मार्गदर्शक - आचार्य श्री सुविधिसागर महाराज

रात्रिभोयणपच्चए ॥ ७ ॥

भुज्यत इति भोजनमोदनः भुक्तिकारणपरिणामो वा भोजनं । रत्तीए भोयणं

क्योंकि, उनसे इनका कथंचित् भेद पाया जाता है । यहाँ बाह्य पदार्थोंको पूर्वमें प्रत्यय बतलाना चाहिये । इसका कारण यह है कि प्रमादके विना रत्नत्रयको सिद्ध करनेके लिये ग्रहण किया गया बाह्य पदार्थ ज्ञानावरणीयके बन्धका प्रत्यय नहीं हो सकता, क्योंकि, जो प्रत्ययसे उत्पन्न नहीं हुआ है उसे प्रत्यय स्वीकार करना विरुद्ध है ।

मैथुन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ५ ॥

[स्त्री और पुरुषके मन, वचन काय स्वरूप विषयव्यापारको मैथुन कहा जाता है] उस मैथुनप्रत्ययके द्वारा ज्ञानावरणीयकी वेदना होती है। यहांपर भी अन्तरंग मैथुनके ही समान बहिरंग मैथुनको भी कारण बतलाना चाहिये। मैथुन अन्तरंग रागमें गर्भित नहीं होता, क्योंकि, उससे इसमें कथंचित् भेद पाया जाता है ।

परिग्रह प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ६ ॥

[परिगृह्यते इति परिग्रहः' अर्थात् जो ग्रहण किया जाता है । इस निरुक्तिके अनुसार क्षेत्रादि रूप बाह्य पदार्थ परिग्रह कहा जाता है, तथा ' परिगृह्यते अनेनेति परिग्रहः ' जिसके द्वारा ग्रहण किया जाता है वह परिग्रह है, इस निरुक्तिके अनुसार यहां बाह्य पदार्थके ग्रहणमें कारणभूत परिणाम परिग्रह कहा जाता है] इन दोनों प्रकारके परिग्रहोंसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । यहाँ बहिरंग परिग्रहको पहिलेके समान कारण बतलाना चाहिये ।

रात्रिभोजन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ७ ॥

(भुज्यते इति भोजनम्' अर्थात् जो खाया जाता है वह भोजन है) इस निरुक्तिके अनुसार

---

* अ-ताप्रतीः ' कथंचिदत्तो ', आप्रतौ ' कथंचिददत्तो ' इति पाठः । ☆ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः बज्झगंथाणं ', ताप्रतौ ' बज्झगंधा (था) णं ' इति पाठः ।

रादिभोयणं । तेण रादिभोयणपच्चएण णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । जेणेवं सुत्तं देसामासियं तेणेत्थ महु-मांस-पंचुंबर-णिंदसण-हल्ल* भक्खण-सुरापाण-अवेलासणादीणं पि णाणावरणपच्चयत्तं परूवेदव्वं । एवमसंजमपच्चओ परूविदो । संपहि कसायपच्चयपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं कोह-माण-माया-लोह-राग-दोस-मोह-पेम्मपच्चए ॥ ८ ॥

[हृदयदाहांगकंपाक्षिरागेन्द्रियापाटवादि☆ निमित्तजीवपरिणामः क्रोधः विज्ञानैश्वर्य-जाति-कुल-तपो-विद्याजनितो जीवपरिणामः औद्धत्यात्मको मानः । स्वहृदय-प्रच्छादनार्थमनुष्ठानं माया । बाह्यार्थेषु ममेदं बुद्धिर्लोभः । माया-लोभ-वेदत्रय-हास्य-रतयो रागः । क्रोध मानारति-शोक-जुगुप्सा-भयानि द्वेषः । क्रोध-मान-माया-लोभ-हास्य रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री–पुं-नपुंसकवेद-मिथ्यात्वानां समूहो मोहः ।] मोहपच्चयो कोहादिसु पविसदि त्ति किण्णावणिज्जदे ? ण, अवयवावयवीण

ओदनको भोजन कहा गया है । अथवा (भुज्यते अनेनेति भोजनम्) इस निरुक्तिके अनुसार आहारग्रहणके कारणभूत परिणामको भी भोजन कहा जाता है । रात्रिमें भोजन रात्रि भोजन, इस प्रकार यहां तत्पुरुष समास है । उक्त रात्रिभोजन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । चूंकि यह सूत्र देशामर्शक है अतः उससे यहां मधु, मांस, पाँच उदुम्बर फल, निन्द्य भोजन और फूलोंके भक्षण, मद्यपान तथा असामयिक भोजन आदिको भी ज्ञानावरणीयका प्रत्यय बतलाना चाहिये । इस प्रकार असंयम प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई । अब कषाय प्रत्ययकी प्ररूपणाके लिये आगेका सूत्र कहा जाता है––

इसी प्रकार क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष मोह और प्रेम प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ८ ॥

[हृदयदाह, अंगकम्प, नेत्ररक्तता और इंद्रियोंकी अपटुता आदिके निमित्तभूत जीवके परिणामको क्रोध कहा जाता है । विज्ञान, ऐश्वर्य, जाति, कुल, तप और विद्या इनके निमित्तसे उत्पन्न उद्धतता रूप जीवका परिणाम मान कहलाता है । अपने हृदयके विचारको छुपानेकी जो चेष्टा की जाती है उसे माया कहते हैं । बाह्य पदार्थोंमें जो 'यह मेरा है' इस प्रकार अनुराग रूप बुद्धि होती है उसे लोभ कहा जाता है । माया, लोभ, तीन वेद, हास्य और रति इनका नाम राग है । क्रोध, मान, अरति शोक, जुगुप्सा और भय, इनको द्वेष कहा जाता है । क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति शोक, भय जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेद और मिथ्यात्व इनके समूहका नाम मोह है ।]

शंका – मोहप्रत्यय चूंकि क्रोधादिकमें प्रविष्ट है अतएव उसे कम क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि क्रमशः व्यतिरेक व अन्वय स्वरूप, अनेक व एक संख्यावाले,

---

* आप्रतौ 'कुल्ल' इति पाठः। ☆ ताप्रतौ 'रागेंद्रियपाट्वादि इति पाठः।

वदिरेगण्णयसरूवाणमणेगेगसंखाणं कारण-कज्जाणं एगाणेगसहावाणमेगत्तविरोहादो । प्रियत्वं प्रेम । एदेसु पादेक्कं पच्चयसद्दो जोजणीयो कोहपच्चए माणपच्चए मायपच्चए लोहपच्चए रागपच्चए दोसपच्चए मोहपच्चए पेम्मपच्चए त्ति । एदेहि पच्चएहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । पेम्मपच्चयो लोभ-राग पच्चएसु पविसदि त्ति पुणरुत्तो किण्ण जायदे ? ण, तेहिंतो एदस्स कथंचि भेदुवलंभादो । तं जहा-बज्झत्थेसु ममेदं भावो लोभो । ण सो पेम्मं, ममेदं बुद्धीए अपडिग्गहिदे वि दक्खाहले परदारे वा पेम्मुवलंभादो । ण रागो पेम्मं, माया-लोह-हस्स-रदि-पेम्मसमूहस्स रागस्स अवयविणो अवयवसरूवपेम्मत्तविरोहादो ।

णिदाणपच्चए ॥ ९ ॥

चक्कवट्टि-बल णारायण-सेट्ठि-सेणावइ-पहुदिपत्थणा णिदाणं सुत्तो [पमादमूलो] मिच्छत्ताविणाभावादो वा । तेण णाणावरणीयवेयणा संपज्जदे । ण च एसो पच्चओ मिच्छत्तपच्चए पविसदि, मिच्छत्तसहचारिस्स मिच्छत्तेण एयत्तविरोहादो । ण पेम्मपच्चए पविसदि, संपयासंपयविसयम्मि पेम्मम्मि संपयविसयम्मि णिदाणस्स पवेसविरोहादो । किमट्ठं पुधसुत्तारंभो ? मिच्छत्त-कोह-माण-माया-लोभ-राग-दोस-मोह-

---

कारण व कार्य रूप तथा एक व अनेक स्वभावसे संयुक्त अवयव अवयवीके एक होनेका विरोध है ।

[प्रियताका नाम प्रेम है ।] इनमेंसे प्रत्येकमें प्रत्यय शब्दको जोडना चाहिये–क्रोधप्रत्यय, मानप्रत्यय, मायाप्रत्यय, लोभप्रत्यय, रागप्रत्यय, द्वेषप्रत्यय, मोहप्रत्यय और प्रेमप्रत्यय इनके द्वारा ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है ।

शंका – चूंकि प्रेमप्रत्यय लोभ व रागप्रत्ययोंमें प्रविष्ट है अतः वह पुनरुक्त क्यों न होगा ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, उनसे इसका कथंचित् भेद पाया जाता है । वह इस प्रकारसे– बाह्य पदार्थोंमें 'यह मेरा है' इस प्रकारके भावको लोभ कहा जाता है । वह प्रेम नहीं हो सकता, क्योंकि, 'यह मेरा है' ऐसी बुद्धिके अविषयभूत भी द्राक्षाफल अथवा परस्त्रीके विषयमें प्रेम पाया जाता है राग भी प्रेम नहीं हो सकता, क्योंकि, माया, लोभ, हास्य, रति और प्रेमके समूह रूप अवयवी कहलानेवाले रागके अवयव स्वरूप प्रेम रूप होनेका विरोध है ।

निदान प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है । ९ ।

[चक्रवर्ती, बलदेव, नारायण, श्रेष्ठी और सेनापति आदि पदोंकी प्रार्थना अर्थात् अभिलाषा करना निदान है] वह प्रमादमूलक अथवा मिथ्यात्वका अविनाभावी होनेसे प्रत्यय है । उससे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । यह प्रत्यय मिथ्यात्व प्रत्ययमें प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि, वह मिथ्यात्वका सहचारी (अविनाभावी) है, अतः मिथ्यात्वके साथ उसकी एकताका विरोध है । वह प्रेमप्रत्ययमें भी प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि, प्रेम सम्पत्ति एवं असंपत्ति दोनोंका विषय करनेवाला है, परन्तु निदान केवल संपत्तिको ही विषय करता है; अत एव उसका प्रेममें प्रविष्ट होना विरुद्ध है ।

शंका – निदान प्रत्ययकी प्ररूपणाके लिये पृथक् सूत्र किसलिये रचा गया है ?

पेम्मादिमूलो अणंतसंसारकारणो णिदाणपच्चओ त्ति जाणावणट्ठं पुध सुत्तारंभो कदो ।

अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रइ-अरइ-उवहि-णियदि[1]-माण-माय[2]-मोस-मिच्छणाण-मिच्छदंसण-पओअपच्चए ॥ १० ॥

क्रोध-मान--माया--लोभादिभिः परेष्वविद्यमानदोषोद्भावनमभ्याख्यानम् क्रोधादिवशादसि-दंडासभ्यवचनादिभिः परसन्तापजननं कलहः। परेषां क्रोधादिना दोषोद्भावनं पैशुन्यम्। नप्तृ-पुत्र-कलत्रादिषु रमणं रतिः। तत्प्रतिपक्षा अरतिः। उपेत्य क्रोधादयो धीयंते अस्मिन्निति उपधिः, क्रोधाद्युत्पत्तिनिबन्धनो बाह्यार्थ उपधिः। सोऽपि ज्ञानावरणीयबन्धनिबन्धनः, तेन विना कषायाभावतो बन्धाभावात्। निकृतिर्वञ्चना, मणि-सुवर्ण-रूप्याभासदानतो द्रव्यान्तरापनं निकृतिरित्यर्थः। मानं प्रस्थादिः हीनाधिकभावमापन्नः। सोऽपि कूटव्यवहारहेतुत्वाद् ज्ञानावरणीयस्य प्रत्ययः। मेयो यव-गोधूमादिः। सोऽपि ज्ञानावरणीयस्य प्रत्ययः, मातुरसद्व्यवहारस्य निबन्धनत्वात्। कथं मेयस्स मायत्वम् ? नैष दोषः।

समाधान – मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह और प्रेम आदिके निमित्तसे होनेवाला निदान प्रत्यय अनन्त संसारका कारण है; यह बतलानेके लिए पृथक् सूत्रकी रचना की गई है।

अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, माया, मोष, मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और प्रयोग इन प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है।१०।

क्रोध, मान, माया और लोभ आदिके कारण दूसरोंमें अविद्यमान दोषोंको प्रगट करना अभ्याख्यान कहा जाता है। क्रोधादिके वश होकर तलवार, लाठी और असभ्य वचनादिके द्वारा दूसरोंको सन्ताप उत्पन्न करना कलह कहलाता है। क्रोधादिके कारण दूसरोंके दोषोंको प्रगट करना पैशून्य है। नाती, पुत्र एवं स्त्री आदिकोंमें रमण करनेका नाम रति है। इसकी प्रतिपक्षभूत अरति कही जाती है। 'उपेत्य क्रोधादयो धीयन्ते अस्मिन् इति उपधिः' अर्थात् आकरके क्रोधादिक जहां पर पुष्ट होते हैं उसका नाम उपधि है. इस निरुक्तिके अनुसार क्रोधादि परिणामोंकी उत्पत्तिमें निमित्तभूत बाह्य पदार्थको उपधि कहा गया है। वह भी ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण है, क्योंकि, उसके बिना कषायरूप परिणामका अभाव होनेसे बन्ध नहीं हो सकता। निकृतिका अर्थ धोखा देना है, अभिप्राय यह है कि नकली मणि, सुवर्ण, चाँदी देकर द्रव्यान्तरको प्राप्त करना निकृति कही जाती है। हीनता व अधिकताको प्राप्त प्रस्थ (एक प्रकारका माप) आदि मान कहलाते हैं। वे भी कूट अर्थात् असत्य व्यवहारके कारण होनेसे ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हैं। मापनेके योग्य जौ और गेहूं आदि मेय कहे जाते हैं। वे भी ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हैं, क्योंकि, वे मापनेवालेके असत्य व्यवहारके कारण हैं।

शंका– मेयके स्थानमें माय शब्दका प्रयोग कैसे दिया गया है ?

---

[1] अ-आप्रत्योः 'णयरदि' इति पाठः। [2] आ-ताप्रत्योः 'माया' इति पाठः।

' एए छच्च समाणा दोण्णि य संधक्खरा सरा अट्ठ ।
अण्णोण्णस्स परोप्परमुवेंति सव्वे समावेसं ✽ ॥ ३ ॥

इत्यनेन सूत्रेण प्राकृते एकारस्य आकारविधानात् । मोषस्तेयः । ण मोसो अदत्तादाणे पविस्सदि, हृतपतितप्रमुक्त◆निहितवाणविसयम्मि अदत्तावाणम्मि एदस्स पवेस✿विरोहादो । बौद्ध-नैयायिक सांख्य-मीमांसक-चार्वाक-वैशेषिकादिदर्शनरुच्यनुविद्धं ज्ञानं मिथ्याज्ञानम् । मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणि ✿ मिच्छदंसणं । मण-वचि-कायजोगा ⊛ पओओ । एदेहि सव्वेहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । कोध-माण-माया-लोभ-राग-दोस-मोह-पेम्म-णिदाण-अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रदि-अरदि-उवहि णियदि-माण-माया-मोसेहि-कसायपच्चओ परूविदो । मिच्छणाण-मिच्छदंसणेहि मिच्छत्तपच्चओ णिद्दिट्ठो । पओएण जोगपच्चओ परूविदो । पमादपच्चओ एत्थ किण्ण वुत्तो ? ण, एदेहिंतो बज्झपमादाणुवलंभादो । कधमेयं कज्जमणेगेहिंतो उप्पज्जदे ? ण, एगादो कुंभारादो उप्पण्णघडस्स अण्णादो वि उप्पत्तिदंसणादो । पुरिसं पडि पुध पुध उप्पज्जमाणा कुंभोदंचण--

समाधान-- ' यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अ, आ, इ, ई, उ और ऊ, ये छह समान स्वर और ए व ओ, ये दो सन्ध्यक्षर, इस प्रकार ये सब आठ स्वर परस्पर आदेशको प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥

इस सूत्रसे प्राकृतमें एकारके स्थानमें आकार किया गया है ।

मोषका अर्थ चोरी है । यह मोष अदत्तादानमें प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि हृत, पतित प्रमुक्त और निहित पदार्थके ग्रहणविषयक अदत्तादानमें इसके प्रवेशका विरोध है । बौद्ध, नैयायिक, सांख्य, मीमांसक, चार्वाक और वैशेषिक आदि दर्शनोंकी रुचिसे सम्बद्ध ज्ञान मिथ्याज्ञान कहलाता है । मिथ्यात्वके समान जो सम्यग्मिथ्यात्व है वे दोनों भी मिथ्यात्व है, उन्हींको मिथ्यादर्शन कहा जाता है । मन, वचन एवं कायरूप योगोंको प्रयोग शब्दसे ग्रहण किया गया है । इन सबोंसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष मोह, प्रेम, निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, मेय, और मोष, इनसे कषाय प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है । मिथ्याज्ञान और मिथ्यादर्शनसे मिथ्यात्व प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है । प्रयोगसे योग प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका-- यहां प्रमाद प्रत्यय क्यों नहीं बतलाया गया है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, इन प्रत्ययोंसे बाह्य प्रमाद प्रत्यय पाया नहीं जाता ।

शंका-- एक कार्य अनेक कारणोंसे कैसे उत्पन्न होता है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, एक कुम्भकारसे उत्पन्न किये जानेवाले घटकी उत्पत्ति अन्यसे भी देखी जाती है । यदि कहा जाय कि पुरुषभेदसे पृथक् पृथक् उत्पन्न होनेवाले कुंभ, उदञ्चन

✽ क० पा० १, पृ० ३२६, तत्र ' अण्णोण्णस्स परोप्परं ' इत्येतस्य स्थाने ' अण्णोण्णस्सविरोहा ' इति पाठः । ◆ अ-आप्रत्योः ' पम्मुट्ठ ', ताप्रतौ ' पणट्ठ ' इति पाठः । ✿ अ-आप्रत्योः ' पदेस ' इति पाठः । ✿ अ-आप्रत्योः ' मिच्छत्ता मिच्छ– ', ताप्रतौ ' मिच्छत्ताणि मिच्छा– ' इति पाठः । ⊛ ताप्रतौ ' कापजोगा (गा) ' इति पाठः ।

सरावादओ वीसंति त्ति चे ? ण, एत्थ वि कम्मभाविकोधादिहेतो उप्पज्जमाणणाणावरणीयस्स दव्वादिभेदेण भेदुवलंभादो । णाणावरणीयसमाणत्तणेण तवेक्कं चे ? ण, बहुहिंतो समुप्पज्जमाणघडाणं पि घडभावेण एयत्तुवलंभादो । होदु णाम णाणावरणीयस्स एदे पच्चया णइगम-ववहारणएसु, ण संगहणए; तत्थ उवहारिदासेसकज्जकारणकलावे कारणभेदाणुववत्तीदो ? ण, संगहम्मि पहाणीकयम्मि संगहिदासेसविसेसम्हि कज्ज-कारणभेदुववत्तीदो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ११ ॥

जहा णाणावरणीयस्स पच्चयपरूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं पि कम्माणं पच्चयपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो । मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगपच्चएहि परिणय-जीवेण सह एगोगाहणाए ट्ठिदकम्मइयवग्गणाए पोग्गलक्खंधा एयसरूवा कधं जीवसंबंधेण अट्ठभेदमाढउक्कंते ? ण, मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगपच्चयाहि वट्ठंभबलेण समुप्पण्णट्ठसत्तिसंजुत्तजीवसंबंधेण कम्मइयपोग्गलक्खंधाणं अट्ठकम्मायारेण परिणमणं पडि विरोहाभावादो ।

व शराव आदि भिन्न कार्य देखे जाते हैं तो इसके उत्तरमें कहा जा सकता है कि यहाँ भी कर्मभावी क्रोधादिकोंसे उत्पन्न होनेवाले ज्ञानावरणीय कर्मका द्रव्यादिकके भेदसे भेद पाया जाता है ।

शंका – ज्ञानावरणीयत्वकी समानता होनेसे क्या वह (अनेक भेद रूप होकर भी) एक ही है ?

समाधान – इसके उत्तरमें कहते हैं कि इस प्रकार यहां भी बहुतोंके द्वारा उत्पन्न किये जानेवाले घटोंको भी घटत्व रूपसे अभेद पाया जाता है ।

शंका – नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ये भले ही ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हों, परन्तु संग्रह नयकी अपेक्षा वे उसके प्रत्यय नहीं हो सकते; क्योंकि उसमें समस्त कार्य-करण समूहका उपसंहार होनेसे कारणभेद बन नहीं सकता ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, संग्रह नयको प्रधान करनेपर समस्त विशेषोंका संग्रह होते हुए भी कार्य कारणभेद बन जाता है ।

इसी प्रकार शेष सात भी कर्मोंके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये । ११ ।

जैसे ज्ञानावरणीय कर्मके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा की गई है वैसे ही शेष सात कर्मोंके भी प्रत्ययोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

मिथ्यात्व, असंयम कषाय और योग प्रत्ययोंसे परिणत जीवके साथ एक अवगाहनामें स्थित कार्मण वर्गणाके पौद्गलिक स्कन्ध एक स्वरूप होते हुए जीवके सम्बन्धसे कैसे आठ भेदकों प्राप्त होते हैं ?

समाधान नहीं, क्योंकि, मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगरूप प्रत्ययोंके आश्रयसे उत्पन्न हुई आठ शक्तियोंसे संयुक्त जीवके सम्बंधसे कार्मण पुद्गल-स्कन्धोंका आठ कर्मोंके आकारसे परिणमन होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

ॐ अप्रतौ चेव उप्पज्जंति त्ति चे ? ण, इति पाठः । ✻ प्रतिषु ' पज्जाया- ' इति पाठः ।

उज्जुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए पयडिपदेसग्गं ।। १२ ।।

पयडिपदेसग्ग–जाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए जोगपच्चएण होदि, पयडिपदेसग्गमिदि किरियाविसेसणत्तेण अब्भुवगदत्तादो । ण च जोगवड्डि-हाणीयो मोत्तूण अण्णेहिंतो णाणावरणीयपदेसग्गस्स वड्डि हाणि♣ वा पेच्छामो । तम्हा णाणावरणीयपदेसग्गवेयणा जोगपच्चएण होदु णाम, ण पयडिवेयणाजोगपच्चएण होदि; तत्तो तिस्से वड्डिहाणीणमणुवलंभादो त्ति भणिदे-- ण, जोगेण♋ विणा णाणावरणीयपयडीए पादुब्भावाबंसणादो♣ । जेण विणा जं णियमेण णोवलब्भदे तं तस्स कज्जमियरं च कारणमिदि समाणजोगजणिदत्तादो सुत्तासंगदो त्ति ण्हो राज
वेयणा वि जोगपच्चएणे त्ति सिद्धं ।

कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा ।। १३ ।।

णाणावरणीयट्ठिदिवेयणा अणुभागवेयणा च कसायपच्चएण होदि, कसायवड्डिहाणीहिंतो ट्ठिदि-अणुभागाणं वड्डि-हाणिबंसणादो । ण पाणादिवाद-मुसावावादत्तादाणमेहुण-परिग्गह-रादिभोयणपच्चए णाणावरणीयं बज्झदि, तेण विणा वि अप्पमत्तसंजदादिसु

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना योगप्रत्ययसे प्रकृति व प्रदेशाग्र रूप होती है ।। १२ ।।

प्रकृति व प्रदेशाग्र स्वरूपसे उत्पन्न ज्ञानावरणीयकी वेदना योगप्रत्ययके विषयमें अर्थात् योग प्रत्ययसे होती है, क्योंकि, ' पयडि-पदेसग्गं ' इस पदको सूत्रमें क्रियाविशेषण रूप स्वीकार किया गया है ।

शंका-- चूंकि योगोंकी वृद्धि अथवा हानिको छोडकर अन्य कारणोंसे ज्ञानावरणीयके प्रदेशाग्रकी हानि अथवा वृद्धि नहीं देखी जाती है, अतएव ज्ञानावरणीयकी प्रदेशाग्रवेदना भले ही योग प्रत्ययसे हो; परन्तु उसकी प्रकृतिवेदना योग प्रत्ययसे नहीं हो सकती, क्योंकि, उससे इसकी प्रकृति वेदनाकी वृद्धि व हानि नहीं पायी जाती है ।

समाधान-- इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि ऐसा नहीं है, क्योंकि, विना ज्ञानावरणीयकी प्रकृतिवेदनाका प्रादुर्भाव नहीं देखा जाता । जिसके बिना जो नियमसे नहीं पाया जाता है वह उसका कार्य व दूसरा कारण होता है, ऐसा समस्त नैयायिक जनोंमें प्रसिद्ध है । इस कारण प्रदेशाग्रवेदनाके समान प्रकृतिवेदना भी योग प्रत्ययसे होती है यह सिद्ध है ।

ज्ञानावरणीयकी स्थितिवेदना और अनुभागवेदना कषायसे होती है, क्योंकि, कषायकी वृद्धि और हानिसे स्थिति व अनुभागकी वृद्धि व हानि देखी जाती है । प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह और रात्रिभोजन प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीयका बन्ध नहीं होता है,

कषाय प्रत्ययसे स्थिति व अनुभाग वेदना होती है ।। १३ ।।

♣ प्रतिपू ' वड्डिहाणि ' इति पाठः । ♋ प्रतिपू ' जोगेण वि णाणा– ' इति पाठः ।
♣ ताप्रतौ ' पादुब्भावा (व), दंसणादो ' इति पाठः । ✡ आप्रतौ ' पदेसग्गवेयणो व, ' ताप्रतौ ' पदेसग्गो (ग्ग) वेयणा (णे) व ' इति पाठः ।

बंधुवलंभादो । ण कोह-माण-माया-लोभेहि बज्झइ, कम्मोदइल्लाणं तेसिमुदयवविरहिदद्धाए तब्बंधुवलंभादो ण णिदाणब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-अरइ-उवहि-णियदि-माण-माया-मोस मिच्छाणाण 'मिच्छादंसणेहि, बज्झइ' तेहि विणा वि सुहुमसांपराइयसंजदेसु तब्बंधुवलंभादो ।[यद्यस्मिन् सत्येव भवति नासति तत्तस्य कारणमिति]न्यायात्। तम्हा णाणावरणीयवेयणा जोग-कसाएहि चेव होदि त्ति सिद्धं वुत्तं च–

जोगा पयडि-पदेसे ट्ठिदि-अणुभागे कसायदो कुणदि✡ ॥ ४ ॥

जदि एवं तो दव्वट्ठियणएसु पुव्विल्लेसु तीसु वि पाणादिवादादीणं पच्चयत्तं कत्तो जुज्जदे ? ण, तेसु संतेसु णाणावरणीयबंधुवलंभादो । नावश्यं कारणानि कार्यवन्ति भवन्ति, कुम्भमकुर्वत्यपि✡ कुम्भकारे कुम्भकारव्यवहारोपलम्भात् । ण च पर्यायभेदे वस्तुनो भेद; तद्व्यतिरिक्तपर्यायाभावात् सकललोकव्यवहारोच्छेदप्रसंगाच्च । न्यायश्चर्च्यते लोकव्यवहारप्रसिद्धयर्थम्, न तद्बहिर्भूतो न्याय; तस्य न्यायाभासत्वात् । ततस्तत्र तेषां कारणत्वं युज्यत इति ।

क्योंकि, उनके बिना भी अप्रमत्तसंयतादिकोंमें उसका बन्ध पाया जाता है। क्रोध, मान, माया व लोभसे भी उसका बन्ध नहीं होता, क्योंकि कर्मके उदयसे होनेवाले उक्त क्रोधादिकोंके उदयसे रहित कालमें भी उसका बन्ध पाया जाता है। निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, माया, मोष, मिथ्याज्ञान और मिथ्यादर्शन इनसे भी उसका बन्ध नहीं होता, क्योंकि उनके बिना भी सूक्ष्मसांपरायिक संयतोंमें उसका बन्ध पाया जाता है।[जो जिसके होनेपर ही होता है और जिसके न होनेपर नहीं होता है वह उसका कारण होता है,] ऐसा न्याय है। इसी कारण ज्ञानावरणीय वेदना योग और कषायसे ही होती है, यह सिद्ध होता है। कहा भी है–

'योग प्रकृति व प्रदेशको तथा कषाय स्थिति व अनुभागको करती है। ४।

शंका – यदि ऐसा है तो पूर्वोक्त तीनों ही द्रव्यार्थिक नयोंकी अपेक्षा प्राणातिपातादिकोंको प्रत्यय बतलाना कैसे उचित है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, उनके होनेपर ज्ञानावरणीयका बन्ध पाया जाता है। कारण कार्यवाले अवश्य हों, ऐसा सम्भव नहीं है क्योंकि, घटको न करनेवाले भी कुम्भकार के कुम्भकार' शब्दका व्यवहार पाया जाता है। दूसरे पर्यायके भेदसे वस्तुका भेद नहीं होता है, क्योंकि, वस्तुसे भिन्न पर्यायका अभाव है तथा इस प्रकारसे समस्त लोक व्यवहारके नष्ट होनेका भी प्रसंग आता है। न्यायकी चर्चा लोकव्यवहारकी प्रसिद्धिके लिये ही की जाती है। लोकव्यवहारके बहिर्गत न्याय नहीं होता है किन्तु वह केवल न्यायाभास ही है। इसीलिये उक्त प्राणातिपातादिकोंको प्रत्यय बतलाना योग्य ही है।

✡ जोगा पयडि-पदेसा ट्ठिदि-अणुभागा कसायदो होंति। गो० क० २५७। ✡ प्रतिषु कुम्भमकुम्भवत्यपि इति पाठः।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १४ ॥

सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदि-अणुभाग-पयडि-पदेसभेदेण बंधो चउव्विहो चेव । तत्थ पयडि-पदेसा जोगादो ठिदि-अणुभागा कसायदो त्ति सत्तण्णं पि दोचेव पच्चया होंति। कधं दो चेव पच्चया अट्ठण्णं कम्माणं बत्तीसाणं पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसबंधाणं कारणत्तं पडिवज्जंते ? ण, असुद्धपज्जवट्ठिए उज्जुसुदे अणंतसत्तिसंजुत्तेगदव्वत्थित्तं पडि विरोहाभावादो । वट्टमाणकालविसयउज्जुसुदवत्थुस्स दवणाभावादो* ण तत्थ दव्वमिदि णाणावरणीयवेयणा णत्थि त्ति वुत्ते ण, वट्टमाणकालस्स वंजणपज्जाए पडुच्च अवट्ठियस्स सगासेसावयवाणं गदस्स दव्वत्तं पडि विरोहाभावादो । अप्पिदपज्जाएण वट्टमाणसमावण्णस्स* वत्थुस्स अणप्पिदपज्जाएसु दवणविरोहाभावादो वा अत्थि उज्जुसुदणयविसए दव्वमिदि ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ १५ ॥

कुदो ? तत्थ समासाभावादो । तं जहा–पदाणं समासो णाम किमत्थगओ पदगओ तदुभयगदो वा ? ण ताव अत्थगओ, दोण्णं पदाणमत्थेणेयत्ताभावादो । ण

जिस प्रकार ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये । १४ ।

स्थित, अनुभाग, प्रकृति और प्रदेशके भेदसे सर्व कर्मोंका बन्ध चार प्रकार ही है । उनमें प्रकृति और प्रदेशबन्ध योगसे तथा स्थिति और अनुभागबन्ध कषायसे होते है, इस प्रकार सातों ही कर्मोंके दो ही प्रत्यय होते है ।

शंका – उक्त दो ही प्रत्यय आठ कर्मोंके प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश रूप बत्तीस बन्धोंकी कारणताको कैसे प्राप्त हो सकते है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, अशुद्धपर्यायार्थिक रूप ऋजुसूत्र नयमें अनन्त शक्ति युक्त एक द्रव्यके अस्तित्वमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका – वर्तमान कालविषयक ऋजुसूत्र नयकी विषयभूत वस्तुका द्रवण नहीं होनेसे चूंकि उसका विषय द्रव्य हो नहीं सकता, अतः ज्ञानावरणीय वेदना उसका विषय नहीं है ?

समाधान – ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि ऐसा नहीं है, क्योंकि, वर्तमानकाल व्यंजन-पर्यायोंका आलम्बन करके अवस्थित है एवं अपने समस्त अवयवोंको प्राप्त है अतः उसके द्रव्य होनेमें कोई विरोध नहीं है । अथवा, विवक्षित पर्यायसे वर्तमानताको प्राप्त वस्तुकी अविवक्षित पर्यायोंमें द्रवणका विरोध न होनेसे ऋजुसूत्र नयके विषयमें द्रव्य सम्भव ही है ।

शब्द नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है । १५ ।

कारण यह है कि उस नयमें समासका अभाव है । वह इस प्रकारसे-पदोंका जो समास होता है वह क्या अर्थगत है, पदगत है, अथवा तदुभयगत है ? अर्थगत तो हो नहीं सकता

---

* अ-आप्रत्योः 'दमणाभावादो ' इति पाठः । * अ-आप्रत्योः– 'मावसण्णस्स इति पाठः ।

प्रथमार्थक :– आगमर्द्धी श्री सुविधिसागर जी महाराज

ताव दोण्णं पदाणमत्थाणमेयत्तं, तस्स आधाराभावादो। ण ताव पुव्वपदमाधारो, उत्तरपदुच्चारणस्स विहलत्तप्पसंगादो। ण उत्तरपदं पि, पुव्वपदुच्चारणस्स णिप्फलत्तप्पसंगादो। ण दो वि पदाणि आहारो, एयस्स णिरवयवस्स दोसु अवट्ठाणविरोहादो। ण च दोसु वि अत्थेसु एयत्तमावण्णेसु समासो वि अत्थि, दुब्भावेण विणा समासविरोहादो। ण पदगओ वि, दोसु वि पदेसु एयत्तमावण्णेसु दोण्णं पदाणमसवण्णप्पसंगादो। ण च एवं, दोहिंतो वदिरित्ततदिएगपदाणुवलंभादो। उवलंभे वा ण सो समासो, दुब्भावेण विणा समासविरोहादो। णोभयगदो वि, उभयदोसाणुसंगादो। तम्हा समासो णत्थि त्ति सिद्धं। तेण जोगसद्दो जोगत्थं भणदि, पच्चयसद्दो वि पच्चयट्ठं भणदि त्ति दोहि वि पदेहि एगो अत्थो ण परूविज्जदे। तेण जोगपच्चए पयडि-पदेसग्गं, कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा इदि अवत्तव्वं।

अधवा, ण संतं कज्जमुप्पज्जदि, संतस्स उप्पत्तिविरोहादो। ण चासंतं, खरसिंगस्स वि उप्पत्तिप्पसंगादो। ण च संतमसंतं उप्पज्जदि, उभयदोसाणुसंगादो। तदो कज्ज–

आगमोद्धारक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कारण कि दो पदोंके अर्थोंमें एकता सम्भव नहीं है। दो पदोंके अर्थोंमें एकता इसलिये सम्भव नहीं है कि उसके आधारका अभाव है। यदि आधार है तो क्या उसका पूर्व पद आधार है अथवा उत्तर पद? पूर्व पद तो आधार हो नहीं सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर उत्तर पदका उच्चारण निष्फल ठहरता है। उत्तर पद भी आधार नहीं हो सकता, क्योंकि, इस प्रकारसे पूर्व पदका उच्चारण व्यर्थ ठहरता है। दोनों पद भी आधार नहीं हो सकते, क्योंकि, निरवयव एक अर्थका दोमें अवस्थान विरुद्ध है। यदि कहा जाय कि एकताको प्राप्त हुए दो अर्थोंमें समास हो सकता है, सो यह भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, द्वित्वके विना समासका विरोध है। पदगत (द्वितीय पक्ष) समास भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, दोनों पदोंके एकताको प्राप्त होनेपर दोनों पदोंके असवर्णताका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, दो पदोंको छोडकर कोई तृतीय एक पद पाया नहीं जाता। अथवा यदि पाया जाता है तो वह समास नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, द्वित्वके विना समासका विरोध है। उभय (अर्थ व पद) गत भी समास नहीं हो सकता, क्योंकि, दोनों पक्षोंमें दिये गये दोषोंका प्रसंग आता है। इस कारण समास सम्भव नहीं है, यह सिद्ध है। अब समासका अभाव होनेसे चूंकि योग शब्द योगार्थको कहता है और प्रत्यय शब्द प्रत्ययार्थको कहता है, अतः दोनों ही पदोंके द्वारा एक अर्थकी प्ररूपणा नहीं की जा सकती है। इसी कारण शब्द नयकी अपेक्षा 'योगप्रत्ययसे प्रकृति व प्रदेशाग्ररूप तथा कषाय प्रत्ययसे स्थिति व अनुभाव रूप वेदना होती है' यह कहा नहीं जा सकता।

अथवा, सत् कार्य तो उत्पन्न होता नहीं है, क्योंकि सत्की उत्पत्तिका विरोध है। असत् कार्य भी उत्पन्न नहीं हो सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर गधेके सींगकी भी उत्पत्तिका प्रसंग आता है। सदसत् कार्य भी उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि, इसमें दोनों पक्षोंमें दिये गये दोषका प्रसंग

अ-आप्रत्योः 'पदाणमद्धाण', ताप्रतौ 'पदाणमद्धा (त्था) ण–' इति पाठः। अ-आप्रत्योः '–मस्सवण्ण–', ताप्रतौ '–मस्सवण–' इति पाठः। अप्रतौ तदिएण' इति पाठः। अ-आप्रत्योः 'संगदो' इति पाठः। आप्रतौ 'संतमसंतं च उप्पज्जदि' इति पाठः।

कारणभावो णत्थि त्ति णाणावरणीयपयडि-पदेसग्गवेयणा जोगपच्चए, ट्ठिदि-अणुभागवेयणा कसायपच्चए त्ति अवत्तव्वं । अधवा, ण समाणकाले वट्टमाणाणं कज्ज-कारणभावो जुज्जदे, दोण्णं संताणमसंताणं संतासंताणं च कज्ज-कारणभावविरोहादो। अविरोहे वा एगसमए चेव सव्वं उप्पज्जिदूण विदियसमए कज्ज-कारणकलावस्स णिम्मूलप्पलओ होज्ज । ण च एवं, तहाणुवलंभादो । ण च भिण्णकालेसु वट्टमाणाणं कज्ज-कारणभावो, दोण्णं संताणमसंताणं च कज्जकारणभावविरोहादो । ण च संतादो असंतस्स उप्पत्ती, विज्झादो[ङ] गयणकुसुमाणं पि उप्पत्तिप्पसंगादो । ण च असंतादो असंतस्स उप्पत्ती, गद्दहसिंगादो वद्दलुप्पत्तिप्पसंगादो। ण च असंतादो असंतस्स उप्पत्ती, गद्दहसिंगादो गयणकुसुमाणमुप्पत्तिप्पसंगा । तदो कज्ज-कारणभावो णत्थि त्ति अवत्तव्वं। अधवा, तिण्णं सद्दणयाणं णाणावरणीयपोग्गलक्खंधोवयजणिदअण्णाणं[*] वेयणा। ण सा जोग-कसाएहिंतो उप्पज्जदे, णिस्सत्तीदो सत्तिविसेसस्स उप्पत्तिविरोहादो। णोवयगदकम्मदव्वक्खंधादो उप्पज्जदि, पज्जयवदिरित्तउव्वाभावादो। तेण तिण्णं सद्दणयाणं णाणावरणीयवेयणापच्चओ अवत्तव्वो ।

आता है। इस कारण कार्यकारणभाव न बन सकनेसे 'ज्ञानावरणीयकी प्रकृति व प्रदेशाग्र रूप वेदना योगप्रत्ययसे तथा स्थिति व अनुभागरूप वेदना कषायप्रत्ययसे होती है' यह उक्त नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है ।

अथवा, समानकालमें वर्तमान वस्तुओंमें कार्यकारणभाव युक्त नहीं है, क्योंकि, उन दोनोंके सत्, असत् व उभय, इन तीनों पक्षोंमें कार्य-कारणका विरोध है । और यदि विरोध न माना जाय तो एक समयमें ही समस्त कार्यके उत्पन्न हो जानेपर द्वितीय समयमें कार्य-कारण कलापका निर्मूल नाश हो जावेगा । परन्तु ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता । समानकालसे भिन्न कालोंमें भी वर्तमान उनके कार्य-कारणभाव नहीं बनता, क्योंकि, उन दोनोंके सत्, असत् व उभय, इन तीनों पक्षोंमें कार्यकारणभावका विरोध है । यदि सत्से असत्की उत्पत्ति स्वीकार की जाय तो वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर विन्ध्याचलसे आकाश कुसुमोंके भी उत्पन्न होनेका प्रसंग आता है । असत्से सत्की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर असत् गर्दभसींगसे मेढककी उत्पत्तिका प्रसंग आता है । इसी प्रकार असत्से असत्की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर गर्दभसींगसे आकाशकुसुमोंके उत्पन्न होनेका प्रसंग आता है । इस कारण चूंकि कार्य-कारणभाव बनता नहीं है, अतएव ज्ञानावरणकी वेदना अवक्तव्य है ।

अथवा तीनों शब्द नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय संबंधी पौद्गलिक स्कंधोंके उदयसे उत्पन्न अज्ञानको ज्ञानावरणीय वेदना कहा जाता है । परंतु वह योग व कषायसे उत्पन्न नहीं हो सकती; क्योंकि जिसमें जो शक्ति नहीं है उससे शक्ति विशेषकी उत्पत्ति माननेमें विरोध है । तथा उदयगत कर्म द्रव्यस्कंध से भी उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि, (इन नयोंमें) पर्यायोंसे भिन्न द्रव्यका अभाव है । इस कारण तीनों शब्दनयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदनाका प्रत्यय अवक्तव्य है ।

[ङ] अ-ताप्रत्योः 'विज्झादो' इति पाठः । [*] ताप्रतौ 'अण्णोपवेयणा' इति पाठः

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १६ ॥

सुगमं ।

एवं वेयणापच्चयविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें भी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

विशेषार्थ– यहां सात नयोंकी अपेक्षा कौन वेदना किस प्रत्ययसे होती है यह बतलाया गया है । नैगम, संग्रह और व्यवहार ये तीन द्रव्यार्थिक नय हैं इसलिए इनकी अपेक्षा ज्ञानावरण आदिके बन्ध प्राणातिपात आदि जितने भी कारण होते हैं अर्थात् जिनके सद्भावमें ज्ञानावरणादि कर्मोंका बन्ध होता है वे सब प्रत्यय कहे जाते हैं । ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा प्रकृति और प्रदेशबन्ध योगप्रत्यय और स्थिति व अनुभागबन्ध कषाय प्रत्यय होता है । कारण कि बन्धके ये दो ही साक्षात् प्रत्यय हैं । यद्यपि ऋजुसूत्रनय कार्य–कारणभावको ग्रहण नहीं करता परन्तु अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयमें यह तब बन जाता है इसलिए उक्त प्रकारसे कथन किया है ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इस प्रकार वेदनाप्रत्ययविधान अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

वेयणासामित्तविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणासामित्तविहाणे त्ति ॥ १ ॥

मंदमेहावीणमंतेवासीणमहियारसंभालणट्ठमिदं सुत्तं परूविदं । जं जेण कम्मं बद्धं तस्स वेयणाए सो चेव सामी होदि त्ति विणोवदेसेण णज्जदे । तम्हा वेयण-सामित्तविहाणं त्ति अणुओगद्दारं णाढवेदव्वमिदि? ☆ जदि जदो उप्पण्णो तत्थेव चिट्ठेज्ज कम्मक्खंधो तो ☆ सो चेव सामी होज्ज । ण च एवं, कम्माणमेगादो उप्पत्तीए अभावादो । तं जहा–ण ताव जीवादो चेव कम्माणमुप्पत्ती, कम्मविरहिद-सिद्धेहिंतो वि कम्मुप्पत्तिप्पसंगा । णाजीवादो◆ चेव, जीववदिरित्तकालपोग्गलाका-सेहिंतो वि तदुप्पत्तिप्पसंगादो । ✱ णासमवेदजीवाजीवेहिंतो चेव समुप्पज्जदि, सिद्ध-जीवपोग्गलेहिंतो वि कम्मुप्पत्तिप्पसंगादो । ण च संजुत्तेहिंतो♠ चेव तदुप्पत्ती, संजुत्तजीव-पोग्गलेहिंतो वि कम्मुप्पत्तिप्पसंगादो ।

अब वेदनास्वामित्वविधान प्रकृत है ॥ १ ॥

मन्दबुद्धि शिष्योंको अधिकारका स्मरण करानेके लिये यह सूत्र कहा गया है ।

शंका– जिस जीवके द्वारा जो कर्म बांधा गया है वह उक्त कर्मकी वेदनाका स्वामी है, यह बिना उपदेशके ही जाना जाता है । अत एव वेदनस्वामित्वविधान अनुयोगद्वारको प्रारंभ नहीं करना चाहिये ?

समाधान– कर्मस्कन्ध जिससे उत्पन्न हुआ है वहीं ही यदि वह स्थित रहे तो वही स्वामी हो सकता है । परन्तु ऐसा है नहीं; क्योंकि, कर्मोंकी उत्पत्ति किसी एकसे नहीं है । इसीको स्पष्ट करते हैं – यदि केवल जीवसे ही कर्मोंकी उत्पत्ति स्वीकार की जाय तो वह सम्भव नहीं है, क्योंकि इस प्रकारसे कर्मरहित सिद्धोंसे भी कर्मोंकी उत्पत्तिका प्रसंग आ सकता है । एकमात्र अजीवसे भी कर्मोंकी उत्पत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि, ऐसा होनेपर जीवसे भिन्न काल पुद्गल एवं आकाशसे भी कर्मोंकी उत्पत्तिका प्रसंग अनिवार्य होगा । असमवेत (समवाय रहित, जीव व अजीव दोनोंसे भी कर्मोंकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर (समवाय रहित) सिद्ध जीव और पुद्गलसे भी कर्मोंकी उत्पत्तिका प्रसंग आता है । इस प्रसंगके निवारणार्थ यदि संयुक्त जीव व अजीवसे ही कर्मोंकी उत्पत्ति स्वीकार की जाती है तो वह भी नहीं बन सकती, क्योंकि, ऐसा स्वीकार करनेपर संयुक्त जीव और पुद्गलसे भी उनकी उत्पत्तिका प्रसंग आता है ।

☆ आ-ताप्रत्योः निम्से इति पाठः । ☆ अ-आप्रत्योः ' णादवेदव्वमिदि ' इति पाठः । ☆ प्रतिषु ' तदो ' इति पाठः । ◆ ताप्रतौ ' णो (अ) जीवादो ' इति पाठः । ✱ मप्रतिपाठोयम् । अ-आ-ताप्रतिषु ' ण समवेद ' इति पाठः । ♠ ताप्रतौ ' संजुत्तेहिंतो , इति पाठः ।

ण समवेदजीवाजीवेहिंतो वि तदुप्पत्ती, अजोगिस्स वि कम्मबंधप्पसंगादो। तम्हा मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगजणणक्खमपोग्गलदव्वाणि जीवो च कम्मबंधस्स कारणमिदि ट्ठिदं। सो च जीव पोग्गलाणं बंधो पवाहसरूवेण आदिविरहियो, अण्णहा अमुत्त-मुत्ताणं जीवपोग्गलाणं बंधाणुववत्तीदो। बंधविसेसं पडुच्च सादि-संतो, अण्णहा एगम्हि जीवे उप्पण्णदेवादिपज्जायाणमविणासप्पसंगादो। तम्हा दोहिंतो* तीहि चदुहि वा उप्पज्जिय जीवम्मि एगीभावेण ट्ठिदवेयणा तत्थ एगस्स चेव होदि, अण्णस्स ण होदि त्ति ण वोत्तुं सक्किज्जदे। एवं जादसंदेहस्स अंतेवसिस्स मदिॐ वाउलविणासणट्ठं वेयणसामित्तविहाणमाढवेदव्व♣ मिदि।

णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा सिया जीवस्स वा ।२।

आर्यदर्शिका :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एत्थ वा सद्दा सव्वे समुच्चयट्ठे वट्टव्वा। सिया सद्दा दोण्ण-एक्को किरियाए वाययो, अवरो णइवादियो, तत्थ कस्सेवं गहणं? णइवादियो घेत्तव्वो, तस्स अणेयंते वुत्तिदंसणादो। सव्ववहाणियमपरिहारेण सो सव्वत्थपरूवओ, पमाणाणुसारित्तादो। उत्तं च-

---

इस आपत्तिको टालनेके लिये यदि समवेत (समवाय प्राप्त) जीव व अजीवसे उनकी उत्पत्ति स्वीकार करते हैं तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि, वैसा माननेपर (कर्मसमवेत) अयोगकेवलीके भी कर्मबन्धका प्रसंग अवश्यम्भावी है। इस कारण मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगको उत्पन्न करनेमें समर्थ पुद्गल द्रव्य और जीव कर्मबन्धके कारण है, यह सिद्ध होता है। वह जीव और पुद्गलका बन्ध भी प्रवाह स्वरूपसे आदि विरहित अर्थात् अनादि है, क्योंकि, इसके बिना क्रमशः अमूर्त और मूर्त जीव व पुद्गलका बन्ध बन नहीं सकता। बन्धविशेषकी अपेक्षा वह बन्ध सादि व सान्त है, क्योंकि इसके विना एक जीवमें उत्पन्न देवादिक पर्यायोंके अविनश्वर होनेका प्रसंग आता है। इस कारण दो, तीन अथवा चारसे उत्पन्न होकर जीवमें एक स्वरूपसे स्थित वेदना उनमेंसे एकके ही होती है, अन्यके नहीं होती, ऐसा नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार सन्देहको प्राप्त शिष्यकी बुद्धिव्याकुलताको नष्ट करनेके लिये वेदनस्वामित्व विधानको प्रारम्भ करना योग्य है।

नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् जीवके होती है ॥ २ ॥

यहाँ सूत्रोंमें प्रयुक्त सब वा शब्दोंको समुच्चय अर्थमें समझना चाहिये। स्यात् शब्द दो है – एक क्रियावाचक और दूसरा अनेकान्त वाचक। उनमें यहां किसका ग्रहण है? यहां अनेकान्त वाचक स्यात् शब्दको ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, उसके अनेकान्तमें वृत्ति देखी जाती है। उक्त स्यात् शब्द 'सर्वथा' नियमको छोडकर सर्वत्र प्ररूपणा करनेवाला है, क्योंकि, वह प्रमाणका अनुसरण करता है। कहा भी है –

---

* ताप्रतौ 'दोहि (ति)' इति पाठः। ॐ अप्रतौ 'वाउरा', आप्रतौ 'वाओअ' इति पाठः।
♣ अ-आप्रत्योः 'मदवेदव्व' इति पाठः।

सर्वथा नियमत्यागी यथादृष्टमपेक्षकः✱ ।
स्याच्छब्दस्तावके न्याये नान्येषामात्मविद्विषाम्✲ ॥ १ ॥

ततः स्याज्जीवस्य वेदना । तं जहा-- अणंताणंतविस्सासुवचयसहिदकम्मपोग्गलक्खंधो हि सिया जीवो, जीवादो पुधभावेण तस्सणुवलंभादो । ण च अभेदे संते एगजोगक्खेमदा णत्थि त्ति वोत्तुं जुत्तं, अण्णत्थ तहाणुवलंभादो । एवंविहविवक्खाए सिया जीवस्स वेयणा त्ति सिद्धं ।

सिया णोजीवस्स वा ॥ ३ ॥

णोजीवो णाम अणंताणंतविस्सासुवचएहि उवचिदकम्मपोग्गलक्खंधो पाणधारणा-
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
भावादो णाण-दंसणभावादो वा तत्थेसणजीवो वि सिया✲ णोजीवो; तत्तो पुधभूदस्स तस्स अणुवलंभादो । तदो✇ सिया णोजीवस्स वेयणा । कधमभिण्णे छट्ठीणिद्देसो ? ण, खइरस्स खंभो त्ति अभेदे वि छट्ठीणिद्देसुवलंभादो । एदाणि दो वि सुत्ताणि संगहियणेगमस्स वि जोजेदव्वाणि, बहूणं पि जीव-णोजीवाणं जादिदुवारेण एयत्तुवलंभादो ।

सिया जीवाणं वा ॥ ४ ॥

हे अरजिन ? आपके न्यायमें ' सर्वथा ' नियमको छोडकर यथादृष्ट वस्तुकी अपेक्षा रखनेवाला ' स्यात् ' शब्द पाया जाता है । वह आत्मविद्वेषी अर्थात् अपने आपका अहित करनेवाले अन्यके यहाँ नहीं पाया जाता ॥ १ ॥

इस कारण कथंचित् जीवके वेदना होती है । वह इस प्रकार-- अनन्तानन्त विस्रसोपचय सहित कर्मपुद्गलस्कन्ध कथंचित् जीव है, क्योंकि, वह जीवसे पृथक् नहीं पाया जाता । अभेद होनेपर एक योग-क्षमता (अभीष्ट वस्तुका लाभ व संरक्षण) नहीं रहेगी, ऐसा कहना भी उचित नहीं है; क्योंकि, अन्यत्र वैसा पाया नहीं जाता । इस प्रकारकी विवक्षासे कथंचित् जीवके वेदना होती है, यह सिद्ध है ।

कथंचित् वह नोजीवके होती है ॥ ३ ॥

अनन्तानन्त विस्रसोपचयोंसे उपचयको प्राप्त कर्म-पुद्गलस्कन्ध प्राणधारण अथवा ज्ञानदर्शनसे रहित होनेके कारण नोजीव कहलाता है । उससे सम्बन्ध रखनेवाला जीव भी कथंचित् नोजीव है, क्योंकि, वह उसके पृथग्भूत नहीं पाया जाता है । इस कारण कथंचित् नोजीवके वेदना होती है ।

शंका-- अभेदमें षष्ठी विभक्तिका निर्देश कैसे किया ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, 'खैरका खंभा' यहाँ अभेदमें षष्ठीका निर्देश पाया जाता है ।

इन दोनों सूत्रोंको, संगृहीत नैगम नयके भी जोडना चाहिये, क्योंकि, बहुत भी जीव और नोजीवोंमें जातिकी अपेक्षा एकता पायी जाती है ।

उक्त वेदना कथंचित् बहुत जीवोंके होती है ॥ ४ ॥

✱ प्रतिषु ' मवेक्षकः ' इति पाठः । ✲ बृहत्स्व १०२ । ✲ अ-आप्रत्योः ' मया ' इति पाठः ।
✇ अ-ताप्रत्योः ' तदा ' आप्रतौ ' तद ' इति पाठः ।

जीवा एग-दु-ति-चदु-पंचिंदियभेदेण वा छक्कायभेदेण वा देसादिभेदेण वा अणेयविहा। णिच्चेयण-मुत्तपोग्गलखंधसमवाएण भट्ठसगसरूवस्स कधं जीवत्तं जुज्जदे? ण, अविणट्ठणाण दंसणाणमुवलंभेण जीवत्थित्तसिद्धिदो। ण तत्थ पोग्गलक्खंधो वि अत्थि, पहाणीकयजीवभावादो। ण च जीवे पोग्गलक्खंधो बुद्धिपुव्वओ चेव, परमत्थेण वि तत्तो तेसिमभेदुवलंभादो। एवंविहअप्पणाए णाणावरणीयवेयणा सिया जीवाणं होदि। कधमेक्किस्से वेयणाए भूओ सामिणो? ण, अरहंताणं पूजा इच्चत्थ बहूणं पि एक्किस्से पूजाए सामित्तुवलंभादो।

सिया णोजीवाणं वा ॥ ५ ॥

सरीरागारेण ट्ठिदकम्म-णोकम्मक्खंधाणि णोजीवा, णिच्चेयणत्तादो। तत्थ ट्ठिदजीवा वि णोजीवा, तेसिं ततो भेदाभावादो। ते च णोजीवा अणेगा-अणेग-संठाण-देस-काल वण्ण-गंधादिभेदप्पणाए। तेसिं णोजीवाणं च णाणावरणीयवेया होदि।

सिया जीवस्स च णोजीवस्स च ॥ ६ ॥

एक, दो, तीन, चार और पांच इन्द्रियोंके भेदसे, अथवा छह कायोंके भेदसे, अथवा देशादिक भेदसे जीव अनेक प्रकारके हैं।

शंका– चेतना रहित मूर्त पुद्गलस्कन्धोंके साथ समवाय होनेके कारण अपने स्वरूप, (चैतन्य व अमूर्तत्व, से रहित हुए जीवके जीवत्व स्वीकार करना कैसे युक्तियुक्त है?

समाधान– नहीं, क्योंकि, विनाशको नहीं प्राप्त हुए ज्ञान दर्शनके पाये जानेसे उसमें जीवत्वका अस्तित्व सिद्ध है। वस्तुतः उसमें पुद्गलस्कन्ध भी नहीं है, क्योंकि, यहां जीवभावकी प्रधानता की गई है। दूसरे, जीवमें पुद्गलस्कन्धोंका प्रवेश बुद्धिपूर्वक नहीं किया गया है, क्योंकि, यथार्थतः भी उससे उनका अभेद पाया जाता है।

इस प्रकारकी विवक्षासे ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् बहुत जीवोंके होती है।

शंका– एक वेदनाके बहुतसे स्वामी कैसे हो सकते हैं?

समाधान– नहीं, क्योंकि, 'अरहन्तोंकी पूजा' यहां बहुतोंके भी एक पूजाका स्वामित्व पाया जाता है।

कथंचित् वह बहुत नोजीवोंके होती है ॥ ५ ॥

शरीराकारसे स्थित कर्म व नोकर्म स्वरूप स्कंधोंको नोजीव कहा जाता है, क्योंकि, वे चैतन्य भावसे रहित हैं। उनमें स्थित जीव भी नोजीव हैं, क्योंकि, उनका उनसे भेद नहीं है। उक्त नोजीव अनेक संस्थान, देश, काल, वर्ण व गन्ध आदिके भेदकी विवक्षासे अनेक हैं। उन नोजीवोंके ज्ञानावरणीय वेदना होती है।

कथंचित् जीव और नोजीव दोनोंके होती है ॥ ६ ॥

✽ अप्रतौ 'बहु' इति पाठः।

जीवस्स वि वेयणा भवदि, तेण विणा पोग्गलादो चेव तदणुवलंभादो । णोजीवस्स वि भवदि, णोकम्मपोग्गलक्खंधेहि विणा जीवादो चेव तदणुवलंभादो । एवंविहणाए जीवस्स च णोजीवस्स च णाणावरणीयवेयणा होदि ।

सिया जीवस्स च णोजीवाणं च ॥ ७ ॥

मार्गदर्शक जीवस्सावयवस्स [illegible] तदा णोजीवबहुत्तं देस-संठाण-सरीरारंभयपोग्गलभेदेण घेत्तव्वं । जदा जादीए विणा ✡जीवव्वत्तिगयमेगत्तमप्पियं होदि तदा कम्मइयक्खंधाणमणंताणमणेगसंठाणाण♣ मणेगवेसट्ठियाणमेगजीवविसयाणं भेदेण णोजीवबहुत्तं वत्तव्वं । एवंविहाए अप्पणाए जीवस्स च णोजीवाणं च वेयणा होदि ।

सिया जीवाणं च णोजीवस्स च ॥ ८ ॥

जदा♠ जादिदुवारेण णोजीवस्स एयत्तं विवक्खियं तदा♣ काइंदिय-संठाण-देसादिभेदेण जीवाणं बहुत्तं घेत्तव्वं । जदा✡ णोजीवस्स वत्तिदुवारेण एयत्तमप्पियं तदा पदेसादिभेदेण जीवबहुत्तं घेत्तव्वं । एवंविहविवक्खाए सिया जीवाणं च णोजीवस्स च वेयणा होदि ।

✡ ताप्रतौ ' जीवव्वत्ति (त्ति) गय ' इति पाठः । ♣ अ-आप्रत्योः ' संठाण ', ताप्रतौ ' संठा(गा) ण ' इति पाठः । ♠ अ-आप्रत्योः ' जधा ' इति पाठः । ♣ अ-आप्रत्योः ' तधा ' इति पाठः । ✡ अ-आप्रत्योः ' जधा ' इति पाठः ।

जीवके भी वेदना होती है, क्योंकि, जीवके विना एकमात्र पुद्गलसे ही वह नहीं पायी जाती । उक्त वेदना नोजीवके भी होती है, क्योंकि, नोकर्मरूप पुद्गलस्कन्धोंके विना एक मात्र जीवसे ही वह नहीं पायी जाती है । इस प्रकारके नयमें ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके भी होती है और नोजीवके भी होती है ।

कथंचित् जीवके और नोजीवोंके होती है ॥ ७ ॥

जब जातिकी अपेक्षासे जीवकी एकता ग्रहण की गई हो तब देश, संस्थान और शरीरके आरम्भक पुद्गलस्कन्धोंके भेदसे नोजीवोंके बहुत्वको ग्रहण करना चाहिये । जब जातिके विना जीवव्यक्तिगत एकताकी प्रधानता होती है तब अनेक संस्थानसे युक्त व अनेक देशोंमें स्थित एक जीव विषयक अनंतानंत कार्मणस्कन्धोंके भेदसे नोजीवोंके बहुत्वको कहना चाहिये । इस प्रकारकी विवक्षासे जीवके और नोजीवोंके भी उक्त वेदना होती है ।

वह कथंचित् जीवोंके और नोजीवके होती है ॥ ८ ॥

जब जाति द्वारा नोजीवकी एकता विवक्षित हो तब काय, इन्द्रिय, संस्थान और देश आदिके भेदसे जीवोंके बहुत्वको ग्रहण करना चाहिये । जब व्यक्ति द्वारा नोजीवकी एकता विवक्षित हो तब प्रदेशादिके भेदसे जीवोंके बहुत्वको ग्रहण करना चाहिये । इस प्रकारकी विवक्षासे कथंचित् जीवोंके और नोजीवके भी वेदना होती है ।

सिया जीवाणं च णोजीवाणं च ॥ ९ ॥

जदा जीव-णोजीवाणं च अवयवविसयमणवयवविसयं च बहुत्तं विवक्खियं तदा जीवाणं च णोजीवाणं च वेयणा ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १० ॥ आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जहा णाणावरणीयवेयणा परूविदा तहा सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वा, विसेसाभावादो ।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा जीवस्स वा ॥ ११ ॥

जो जस्स फलमणुभवदि तं तस्स होदि त्ति सयललोअप्पसिद्धो ववहारो । ण च कम्मफलं कम्माणि चेव भुंजंति, अप्पाणम्मि किरियाविरोहादो । णिच्चेयणत्तणेण णाणदंसणविरहिदेसु पोग्गलक्खंधेसु णाणावरणीयवावारस्स वइफल्लप्पसंगादो च ण णोजीवस्स, किंतु जीवस्सेव । ण च जीवदव्वदिरित्तो णोजीवो होदि, जीवेण सह एयत्तमावण्णस्स णोजीवत्तविरोहादो । एदं सुद्धसंगहणयवयणं, जीवाणं तेहि* सह णोजीवाणं च एयत्तब्भुवगमादो । एत्थ सिया सद्दो किण्ण पउत्तो ? ण एस दोसो, पयारंतराभावादो । जदि सुद्धसंगहणए वेयणाए सामिस्स अण्णो वि पयारो अत्थि तो सिया सद्दो वुच्चदे ।

कथंचित् वह जीवोंके और नोजीवोंके होती है ॥ ९ ॥

जब जीवों और नोजीवोंके अवयवविषयक और अनवयवविषयक बहुत्वकी विवक्षा हो तब जीवोंके और नोजीवोंके वेदना होती है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ १० ॥

जैसे ज्ञानावरणीय कर्म सम्बन्धी वेदनाकी प्ररूपणा की गई है, उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कुछ विशेषता नहीं है ।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके होती है ॥ ११ ॥

जो जिसके फलका अनुभव करता है वह उसका स्वामी होता है, यह व्यवहार सकल जनोंमें प्रसिद्ध है । परन्तु कर्मके फलको कर्म ही तो भोगते नहीं हैं, क्योंकि, अपने आपमें क्रियाका विरोध है, तथा अचेतन होनेसे ज्ञान-दर्शनसे रहित पुद्गलस्कन्धोंमें ज्ञानावरणीयके व्यापारकी विफलताका प्रसंग होनेसे भी उसकी वेदना नोजीवके नहीं होती, किन्तु जीवके ही होती है । दूसरी बात यह है कि जीव द्रव्यसे भिन्न नोजीव है ही नहीं, क्योंकि, जीवके साथ एकताको प्राप्त पुद्गलस्कन्धके नोजीव होनेका विरोध है । यह कथन शुद्ध संग्रह नयकी अपेक्षा है, क्योंकि, जीवोंकी और उनके साथ नोजीवोंकी एकता स्वीकार की गई है ।

शंका-- यहां सूत्रमें ' स्यात् ' शब्द प्रयोग क्यों नहीं किया गया है ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यहां दूसरा कोई प्रकार नहीं है । यदि शुद्ध संग्रह नयकी अपेक्षा वेदनाके स्वामीका कोई दूसरा भी प्रकार होता तो 'स्यात्' शब्दका प्रयोग

---

* अ-आप्रत्योः ' णाणावरणवेयणा ' इति पाठः । * ताप्रतौ ' जीवाणं ताहि ' इति पाठः ।

ण च अत्थि तम्हा✽ सो ण पउत्तो त्ति । संपहि असुद्धसंगहणयविसए सामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

जीवाणं वा ॥ १२ ॥

✡संगहियणोजीव-जीवबहुत्तब्भुवगमादो । ✡एदमसुद्धसंगहणयवयणं । सेसं जहा सुद्धसंगहस्स वुत्तं तहा वत्तव्वं, ⊛विसेसाभावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १३ ॥

जहा सुद्धासुद्धसंगहणए अस्सिदूण णाणावरणीयवेयणाए सामित्तपरूवणा कदा तहा सत्तण्णं कम्माणं वेयणाए पुध पुध सामित्तपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो ।

सद्दजुसुदाणं णाणावरणीयवेयणा जीवस्स ॥ १४ ॥

किमट्ठं सद्दणयेण वेयणाए बहुवयणं ण परूविदं ? ण एस दोसो, बहुत्ताभावादो । तं जहा- सव्वं पि वत्थु एगसंखाविसिट्ठं अण्णहा तस्साभावप्पसंगादो । ण च एगत्तपडिग्गहिए वत्थुम्हि दुब्भावादीणं संभवो अत्थि, सीदुण्हाणं व तेसु सहाणवट्ठा-

करना योग्य था । परन्तु वह है नहीं, अतएव उसका प्रयोग नहीं किया गया है ।

अब अशुद्ध संग्रह नयके विषयमें स्वामित्वकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं-

अथवा जीवोंके होती है ॥ १२ ॥

कारण कि संग्रहकी अपेक्षा नोजीव और जीव बहुत स्वीकार किये गये हैं । यह अशुद्धसंग्रह नयकी अपेक्षा कथन है । शेष प्ररूपणा जैसे शुद्ध संग्रह नयका आश्रय करके की गई है वैसे ही करना चाहिये, क्योंकि, इसमें उससे कोई विशेषता नहीं है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें कथन करना चाहिये ॥ १३ ॥

जिस प्रकार शुद्ध और अशुद्ध संग्रह नयोंका आश्रय करके ज्ञानावरणीयकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा पृथक्-पृथक् करनी चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

शब्द और ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके होती है ॥१४॥

शंका-- शब्द और ऋजुसूत्र ये दोनों नय व जीव वेदनाके बहुवचनको क्यों नहीं स्वीकार करते हैं ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यहां बहुत्वकी संभावना नहीं है । वह इस प्रकारसे- सभी वस्तु एक संख्यासे सहित है, क्योंकि, इसके विना उसके अभावका प्रसंग आता है । एकत्वको स्वीकार करनेवाली वस्तुमें द्वित्वादिककी संभावना भी नहीं है, क्योंकि, उनमें शीत

✽ ताप्रतौ ' तहा ' इति पाठः । ✡ मप्रतौ ' संगहिय- ' इति पाठः । ⊛ अ-आप्रत्योः ' एदमसुद्धं ' इति पाठः । ⊛ अप्रतौ ' अविसेसादो ', आप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः ।

णलक्खणविरोहदंसणादो। ण च एगत्तविसिट्ठं वत्थु अत्थि जेण अणेगत्तस्स* तदाहारो होज्ज। एक्कम्हि खंभम्मि मूलग्ग-मज्झभेएण अणेयत्तं दिस्सदि त्ति भणिदे ण, तत्थ एयत्तं मोत्तूण अणेयत्तस्स अणुवलंभादो। ण ताव थंभगयमणेयत्तं, तत्थ एयत्तुवलंभादो। ण मूलगयमग्गगयं मज्झगयं वा, तत्थ वि एयत्तं मोत्तूण अणेयत्ताणुवलंभादो। ण तिण्णमेगेगवत्थूणं समूहो अणेयत्तस्स आहारो, तव्वदिरेगेण तस्समूहाणुवलंभादो। तम्हा णत्थि बहुत्तं। तेणेव कारणेण ण चेत्थ* बहुवयणं पि। तम्हा सुद्दुजुसुदाणं णाणावरणीयवेयणा जीवस्से त्ति भणिदं।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूविदं तहा सत्तण्णं कम्माणं वेयणासामित्तं परूवेदव्वं विसेसाभावादो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं वेयणासामित्तविहाणं समत्तमणुयोगद्दारं।

व उष्णके समान सहानवस्थान रूप विरोध देखा जाता है। इसके अतिरिक्त एकत्वसे रहित वस्तु है भी नहीं। जिससे कि वह अनेकत्वका आधार हो सके।

शंका – एक खम्भेमें मूल, अग्र एवं मध्यके भेदसे अनेकता देखी जाती है ?

समाधान – ऐसी आशंका होनेपर उत्तर देते हैं कि 'नहीं', क्योंकि, उसमें एकत्वको छोडकर अनेकत्व पाया नहीं जाता। कारण कि स्तम्भमें तो अनेकत्वकी सम्भावना है नहीं क्योंकि, उसमें एकता पायी जाती है। मूलगत, अग्रगत अथवा मध्यगत अनेकता भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, उनमें भी एकत्वको छोडकर अनेकता नहीं पायी जाती। यदि कहा जाय कि तीन एक एक वस्तुओंका समूह अनेकताका आधार है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है; क्योंकि, उससे भिन्न उनका समूह पाया नहीं जाता। इस कारण इन नयोंकी अपेक्षा बहुत्व सम्भव नहीं है। इसीलिये यहाँ बहुवचन भी नहीं है। अतएव शब्द और ऋजुसूत्र नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके होती है, ऐसा कहा गया है।

इसी प्रकार इन दोनों नयोंकी अपेक्षा शेष सात कर्मोंकी वेदनाके स्वामित्वका कथन करना चाहिये ॥ १५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है।

इस प्रकार वेदनास्वामित्वविधान अनुयोग द्वार समाप्त हुआ।

---

* 'अणगंतस्स' इति पाठः। * अ-काप्रतौ 'ण चअत्थि' इति पाठः।

वेयणावेयणविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणावेयणविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं । किमट्ठमहियारो संभालिज्जदे ? ण, अण्णहा परूवणाए फलाभावप्पसंगादो । का वेयणा? वेद्यते वेदिष्यत इति वेदनाशब्दसिद्धेः । अट्ठविहकम्मपोग्गलक्खंधो वेयणा । णोकम्मपोग्गला वि वेदिज्जंति त्ति तेसिं वेयणासण्णा किण्ण इच्छिज्जदे ? ण, अट्ठविहकम्मपरूवणाए परूविज्जमाणाए णोकम्मपरूवणाए संभवाभावादो । अनुभवनं वेदना, वेदनायाः वेदना वेदनावेदना, अष्टकर्मपुद्गल-स्कन्धानुभव इत्यर्थः । विधीयते क्रियते प्ररूप्यत इति विधानम् वेदनावेदनायाः विधानं वेदनावेदनाविधानम् । तत्र प्ररूपणा क्रियत इति यदुक्तं भवति ।

सव्वं पि कम्मं पयडि त्ति कट्टु णेगमणयस्स ॥ २ ॥

वेदनावेदनाविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है ।

शंका- अधिकारका स्मरण किसलिये कराया जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, उसके विना प्ररूपणाके निष्फल होनेका प्रसंग आता है ।

शंका- वेदना किसे कहते हैं ?

समाधान- ' वेद्यते वेदिष्यत इति वेदना ' अर्थात् जिसका वर्तमानमें अनुभव किया जाता है, या भविष्यमें किया जावेगा वह वेदना है, इस निरुक्तिके अनुसार आठ प्रकारके कर्म-पुद्गलस्कन्धको वेदना कहा गया है ।

शंका- नोकर्म भी तो अनुभवके विषय होते हैं, फिर उनकी वेदना संज्ञा क्यों अभीष्ट नहीं है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि; आठ प्रकारके कर्मकी प्ररूपणाका निरूपण करते समय नोकर्मप्ररूपणाकी सम्भावना ही नहीं है ।

अनुभवन करनेका नाम वेदना है । वेदनाकी वेदना वेदनावेदना है, अर्थात् आठ प्रकारके कर्मपुद्गलस्कन्धोंके अनुभव करनेका नाम वेदनावेदना है । ' विधीयते क्रियते प्ररूप्यते इति विधानम् ' अर्थात् जो किया जाय या जिसकी प्ररूपणा की जाय वह विधान है । वेदना-वेदनाका विधान वेदनावेदनाविधान, इस प्रकार यहां तत्पुरुष समास है । उसके विषयमें प्ररूपणा की जाती है, यह उसका अभिप्राय है ।

नैगम नयकी अपेक्षा सभी कर्मको प्रकृति मानकर यह प्ररूपणा की जा रही है ॥ २ ॥

यदस्ति न तदुभयमतिलंघ्य वर्त्तत इति नैकगमो नैगमः* । तस्स णइगमणयस्स अहिप्पाएण बद्ध ☼-उदिण्णुवसंतभेदेण ट्ठिदसव्वं पि कम्मं पयडी होदि, प्रक्रियते अज्ञानादिकं फलमनया आत्मनः इति प्रकृतिशब्दव्युत्पत्तेः ।] फलदातृत्वेन परिणतः कर्मपुद्गलस्कंधः उदीर्णः । मिथ्यात्वाविरति-प्रमाद-कषाय-योगैः कर्मरूपतामापाद्यमानः कार्म्मणपुद्गलस्कंधो बध्यमानः । द्वाभ्यामाभ्यां व्यतिरिक्तः कर्मपुद्गलस्कंधः उपशान्तः । तत्र उदीर्णस्य भवतु नाम प्रकृतिव्यपदेशः फलदातृत्वेन परिणतत्वात् । न बध्यमानोपशान्तयोः, तत्र तदभावादिति? न, त्रिष्वपि कालेषु प्रकृतिशब्दसिद्धेः । तेण जो कम्मक्खंधो जीवस्स वट्टमाणकाले फलं देइ जो च देइस्सदि, एदेसिं दोण्णं पि कम्मक्खंधाणं पयडित्तं सिद्धं । अधवा, जहा उदिण्णं वट्टमाणकाले फलं देदि, एवं बज्झमाणुवसंताणि वि वट्टमाणकाले वि देंति फलं, तेहि विणा कम्मोदयस्स अभावादो । उक्कस्सट्ठिदिसंते उक्कस्साणुभागे च संते बज्झमाणे च सम्मत्त-संजम-संजमासंजमाणं गहणाभावादो । भूद-भविस्सपज्जयाणं वट्टमाणत्तब्भुवगमादो वा णेगमणयम्मि एसा वुप्पत्ती घडदे । तेण णेगमणयस्स तिण्हं पि कम्मं पयडि त्ति कट्टु इमा परूवणा कीरदे ।

जो सत् है वह भेद व अभेद दोनोंका उल्लंघन करके नहीं रहता, इस प्रकार जो एकको विषय नहीं करता है, अर्थात् गौण व मुख्यताकी अपेक्षा दोनोंको ही विषय करता है इसे नैगमनय कहते हैं। उस नैगम नयके अभिप्रायसे बद्ध उदीर्ण और उपशांतके भेदसे स्थित सभी कर्म प्रकृतिरूप हैं, क्योंकि, 'प्रक्रियते अज्ञानादिकं फलमनया आत्मनः इति प्रकृतिः' अर्थात् जिसके द्वारा आत्माको अज्ञानादिरूप फल किया जाता है वह प्रकृति है, यह प्रकृति शब्दकी व्युत्पत्ति है।]

शंका— फलदान स्वरूपसे परिणत हुआ कर्म-पुद्गल स्कंध उदीर्ण कहा जाता है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगके द्वारा कर्म स्वरूपको प्राप्त होनेवाला कार्मण पुद्गलस्कन्ध बध्यमान कहा जाता है। इन दोनोंसे भिन्न कर्म-पुद्गलस्कन्धको उपशान्त कहते हैं। उनमें उदीर्ण कर्म-पुद्गलस्कन्धकी प्रकृति संज्ञा भले ही हो, क्योंकि, वह फलदान स्वरूपसे परिणत है। बध्यमान और उपशान्त कर्म-पुद्गलस्कन्धोंकी यह संज्ञा नहीं बन सकती, क्योंकि, उनमें फलदान स्वरूपका अभाव है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, तीनों ही कालोंमें प्रकृति शब्दकी सिद्धि की गई है। इस कारण जो कर्म-स्कन्ध वर्तमान कालमें फल देता है और जो भविष्यमें फल देगा, इन दोनों कर्म-स्कंधोंकी प्रकृति संज्ञा सिद्ध है। अथवा, जिस प्रकार उदयप्राप्त कर्म वर्तमान कालमें फल देता है उसी प्रकार बध्यमान और उपशम भावको प्राप्त कर्म भी वर्तमान कालमें भी फल देते हैं, क्योंकि, उनके बिना कर्मोदय का अभाव है। क्योंकि, उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व और उत्कृष्ट अनुभाग सत्त्वके होनेपर तथा उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागके बँधनेपर सम्यक्त्व, संयम एवं संयमासंयमका ग्रहण सम्भव नहीं है। अथवा, भूत व भविष्य पर्यायोंको वर्तमान रूप स्वीकार कर लेनेसे नैगमनयमें यह व्युत्पत्ति बैठ जाती है। इसलिए नैगमनयकी अपेक्षा उक्त तीन प्रकारके कर्मको प्रकृति मानकर

---

* क० पा० १, पृ० २२१। ☼ प्रतिषु 'बंध-' इति पाठः।

णेगमणओ बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं तिण्णं पि कम्माणं वेयणवएसमिच्छदि त्ति भणिदं होदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ॥ ३ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा– एत्थ सियासद्दो अणेगेसु अत्थेसु जदि वि वट्टदे तो वि एत्थ अणेयंते घेत्तव्वो । प्रशंसास्तित्वानेकान्त-विधि-विचारणाद्यर्थेषु वर्तमानोऽपि स्याच्छब्दः अमुष्मिन्नेवार्थे गृह्यत इति कथमवगम्यते ? प्रकरणात् । जा णाणावरणीयस्स वेयणा सा परूविज्जदे । किमट्ठं णाणावरणीयवेयणा त्ति णिद्दिस्सदे । परूविज्जमाणपयडिसंभालणट्ठं । सिया बज्झमाणिया वेयणा ण होदि, तस्सो अण्णाणादिफलुप्पत्तिदंसणादो । बज्झमाणस्स कम्मस्स फलमकुणंतस्स कधं वेयणावएसो ? ण, उत्तरकाले फलदाइत्तण्णहाणुववत्तीदो बंधसमए वि वेदणभावसिद्धीए । एत्थ कुदो एगवयणणिद्देसो ? जीव-पयडि-समयाणं बहुत्तेण विणा एगत्तप्पणादो । एत्थ जीव-पयडीणमेगवयण-बहुवयणाणि ठविय कालस्स एगवयणं च [१२१ / २२२] एदस्स सुत्तस्स

यह प्ररूपणा की जा रही है । अभिप्राय यह है कि नैगम नय बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त इन तीनों ही कर्मोंकी वेदना संज्ञा स्वीकार करता है ।

ज्ञानावरणीय वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है ॥ ३ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है–यद्यपि 'स्यात्' शब्द अनेक अर्थोंमें वर्तमान है तो भी यहाँ उसे अनेकांत अर्थमें ही ग्रहण करना चाहिये ।

शंका – प्रशंसा, अस्तित्व, अनेकान्त, विधि और विचारणा आदि अर्थोंमें वर्तमान भी 'स्यात्' शब्द अमुक अर्थमें ही ग्रहण किया जाता है, यह कैसे ज्ञात होता है ?

समाधान – वह प्रकरणसे ज्ञात हो जाता है ।

जो ज्ञानावरणीयकी वेदना है उसकी प्ररूपणा की जाती है ।

शंका – सूत्रमें 'ज्ञानावरणीयवेदना' यह निर्देश किस लिये किया गया है ?

समाधान – उसका निर्देश प्ररूपित की जानेवाली प्रकृतिका स्मरण करानेके लिये किया गया है ।

कथञ्चित् बध्यमान वेदना होती है, क्योंकि उससे अज्ञानादि रूप फलकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

शंका – चूंकि बांधा जानेवाला कर्म उस समय फलको करता नहीं है, अतः उसकी वेदना संज्ञा कैसे हो सकती है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, इसके बिना वह उत्तरकालमें फलदाता नहीं बन सकता, अतएव बंध समयमें भी उसे वेदनात्व सिद्ध है ।

शंका – यहाँ एकवचनका निर्देश क्यों किया गया है ?

समाधान – जीव, प्रकृति, और समय, इनके बहुत्वकी अपेक्षा न कर एकत्वकी मुख्यतासे एकवचनका निर्देश किया गया है ।

यहां जीव व प्रकृतिके एकवचन व बहुवचनको तथा कालके एकवचनको स्थापितकर इस

तं जहा-एयजीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा। सुत्तेण अणुवइट्ठाणं जीव-पयडी-समयाणं कधमेत्थ णिद्देसो कीरदे? पयडी ताव सुत्तुद्दिट्ठा चेव णाणावरणीयवेयणा इदि सुत्ते भणिदत्तादो। सुत्तेणाणुद्दिट्ठो चेव बज्झमाणिया इदि वट्टमाणणिद्देसादो। तहा जीवो वि सुत्तुद्दिट्ठो, मिच्छत्तासंजम-कसाय जोगपच्चयपरिणदजीवेण विणा बंधो णत्थि त्ति पच्चयविहाणे परूविदत्तादो। तदो जीवपयडि-समया सुत्तणिबद्धा चेवे त्ति वदुव्वा। कालस्स बहुवयणमेत्थ किण्ण इच्छिज्जदे? ण, बंधस्स बिदियसमए उवसंतभावमावज्जमाणस्स एगसमयं मोत्तूण बहूणं समयाणमणुवलंभादो। एत्थ जीव-पयडि-समय-एगवयण-बहुवयणाणमेसो पत्थारो $\begin{vmatrix} 1 & 1 & 2 & 2 \\ 1 & 2 & 1 & 2 \\ 1 & 1 & 1 & 1 \end{vmatrix}$। एत्थ एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया त्ति एदं पढमपत्थारालावमस्सिदूण सुत्तमिदमवट्ठिदं।

सिया उदिण्णा वेयणा ॥ ४ ॥

सूत्रका आलाप कहते हैं। वह इस प्रकार है– एक समयमें बाँधी गई एक जीवकी एक प्रकृति कथंचित् बध्यमान वेदना है।

शंका – सूत्रमें अनिर्दिष्ट जीव, प्रकृति और समय, इनका निर्देश यहाँ कैसे किया जा रहा है?

समाधान – प्रकृतिका निर्देश सूत्रमें किया ही गया है, क्योंकि, 'ज्ञानावरणीय वेदना' ऐसा सूत्रमें कहा गया है। समय भी सूत्रनिर्दिष्ट ही है, क्योंकि, 'बध्यमान' इस प्रकारसे वर्तमान कालका निर्देश किया गया है। जीव भी सूत्रोद्दिष्ट ही है, क्योंकि, मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग प्रत्ययसे परिणत जीवके बिना बन्ध नहीं हो सकता, ऐसी प्रत्ययविधानमें प्ररूपणा की जा चुकी है। इसलिये जीव, प्रकृति और समय, ये सूत्रनिबद्ध ही हैं ऐसा समझना चाहिये।

शंका – यहाँ कालको बहुवचन क्यों नहीं स्वीकार करते?

समाधान – नहीं, क्योंकि, बन्धके द्वितीय समयमें उपशमभावको प्राप्त होनेवाले कर्मबंधके एक समयको छोड़कर बहुत समय पाये नहीं जाते।

यहाँ जीव, प्रकृति और समयके एकवचन व बहुवचनका यह प्रस्तार है–

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	अनेक	एक	अनेक
समय	एक	एक	एक	एक

यहाँ एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान है, इस प्रकार इस प्रथम प्रस्तारके आलापका आश्रय करके यह सूत्र अवस्थित है।

ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् उदीर्ण वेदना है ॥ ४ ॥

' णाणावरणीयवेयणा ' इदि सव्वत्थ अणुवट्टदे । बंधसुत्ताणंतरं उदिण्णसुत्तं किमट्ठं वुच्चदे? ण, बज्झमाणुदिण्णवदिरित्तो सव्वो कम्मपोग्गलक्खंधो उवसंतसण्णिदो त्ति जाणावणट्ठं तदुत्तीदो । एत्थ जीव-पयडि-समयाणं एग-बहुवयणाणि [illegible] पुणो एत्थ अक्खपरावत्तं करिय उप्पाइदउदिण्णपत्थार संदिट्ठी एसा जीव-पयडि समयपडिबद्धा [illegible]। एत्थ उवरिमपंती जीवाणं, मज्झिमपंती पयडीणं, हेट्ठिमपंती समयाणं। एत्थ एयस्स जीवस्स एयापयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा। एदेण पढमालावेण एदं सुत्तं परूविदं होदि । एत्थ उदिण्णे परूविज्जमाणे कधं कालस्स बहुत्तं लब्भदे ? ण, अणेगेसु समएसु बद्धाणमेगसमए उदओवलंभादो।

सिया उवसंता वेयणा ॥ ५ ॥

पुणो एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेग-बहुवयणाणि

' ज्ञानावरणीयवेदना ' इसकी सब सूत्रोंमें अनुवृत्ति ली जाती है।

शंका— बन्धसूत्रके पश्चात् उदीर्णसूत्र किसलिये कहा जा रहा है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, बध्यमान और उदीर्णसे भिन्न सब कर्म-पुद्गलस्कन्धको उपशान्त संज्ञा है, यह बतलानेके लिये बन्धसूत्रके पश्चात् उदीर्णसूत्र कहा गया है ।

यहाँ जीव, प्रकृति और समयके एकवचन व बहुवचनको स्थापित कर [illegible] पश्चात् अक्षपरावर्तन करके उत्पन्न की गई उदीर्ण कर्मपुद्गलस्कन्धकी जीव, प्रकृति एवं समयसे संबद्ध प्रस्तारित यह संदृष्टि है—

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	एक	अनेक

यहाँ ऊपरकी पंक्ति जीवोंकी है, मध्यकी पंक्ति प्रकृतियोंकी है, और अधस्तन पंक्ति समयोंकी है । यहाँ एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रथम आलापसे इस सूत्रकी प्ररूपणा हो जाती है ।

शंका— यहाँ उदीर्णकी प्ररूपणा करते समय कालका बहुत्व कैसे पाया जाता है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, अनेक समयोंमें बांधी गई प्रकृतियोंका एक समयमें उदय पाया जाता है ।

ज्ञानावरणीयवेदना कथंचित् उपशान्त वेदना है ॥ ५ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन व बहु-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ठविय $\left|\begin{smallmatrix}१&१\\२&२\end{smallmatrix}\right|$ अक्खपरावत्तिं कादूण पत्थारो उप्पादेदव्वो । एवस्स संदिट्ठी जीव-पयडी-समयपबद्धा एसा $\left|\begin{smallmatrix}१&१&१&१&२&२&२&२\\१&१&२&२&१&१&२&२\\१&२&१&२&१&२&१&२\end{smallmatrix}\right|$ । एत्थ उवरिमपंती जीवाणं, मज्झिमपंती पयडीणं, हेट्ठिमपंती समयाणं । एत्थ एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा त्ति एवेण पढमालावेण एदं सुत्तं परूविदं होदि । अणेगसमय-पबद्धाणं संतसरूवेण उवलंभादो एत्थ कालबहुत्तमुवलब्भदे । सेसं सुगमं । एवं बज्झ-माण-उदिण्ण-उवसंताणमेगसंजोगस्स एगवयणसुत्तालावो समत्तो ।

सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ ॥ ६ ॥

एदस्स एगसंजोग-बहुवयणपढमसुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाणियाए जीव-पयडीणमेय-बहुवयणाणि समयस्स एगवयणं च ठविय तेसिं तिसंजोगेण जादपत्थारं च ठवेदूण एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा कीरदे । तं जहा—समयगयं ताव बहुत्तं णत्थि, बज्झमाणस्स कम्मस्स तदसंभवादो । जीवेसु पयडीसु च* तत्थ बहुत्तं लब्भइ । तत्थ बज्झमाणियाए वेयणाए बहुत्तमिच्छिज्जदि णेगमणओ । तेणेदस्स पढमुच्चारणं

वचनको स्थापित कर $\left|\begin{smallmatrix}१&१\\२&२\end{smallmatrix}\right|$ अक्षपरावर्तन करके प्रस्तारको उत्पन्न कराना चाहिये । इसकी जीव, प्रकृति और समयसे सम्बन्धित संदृष्टि यह है—

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

इसमें ऊपरकी पंक्ति जीवोंकी, मध्य पंक्ति प्रकृतियोंकी, और अधस्तन पंक्ति समयोंकी है । यहाँ एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथञ्चित् उपशांत वेदना है, इस प्रकार इस प्रथम आलापसे इस सूत्रकी प्ररूपणा हो जाती है । चूंकि अनेक समयोंमें बांधी गई प्रकृतियाँ सत् स्वरूपसे पायी जाती हैं, अतः यहाँ कालबहुत्व उपलब्ध है । शेष कथन सुगम है । इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत, इनके एक संयोगजनित एकवचन सूत्रका आलाप समाप्त हुआ ।

कथंचित् बध्यमान वेदनायें हैं ॥ ६ ॥

बध्यमान वेदनाके बहुवचनसे सम्बन्धित इस प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव और प्रकृतिके एक व बहुवचनोंको तथा समयके एकवचनको स्थापित कर उनके त्रिसंयोगसे उत्पन्न प्रस्तारको भी स्थापित करके इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है—यहां समयगत बहुत्व नहीं है, क्योंकि, बध्यमान कर्मके उसकी सम्भावना नहीं है । जीवों और

* अप्रतौ ' जीवेसु पयडीसु जीवपयडीसु च ' इति पाठः ।

मोत्तूण सेसाओ तिण्णि उच्चारणाओ होंति । ताओ भणिस्सामो- एगस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ । एत्थ एगा* उच्चारणसलागा लब्भदि (१) । अणेगेहि जीवेहि एया पयडी एगसमयपबद्धा सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ । एवं बेउच्चारणसलागा (२) । कधं जीवबहुत्तेण वेयणाबहुत्तं? ण, एक्किस्से वेयणाए जीवभेदेण भेदमुवगयाए बहुत्तविरोहाभावादो । अधवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ एवं तिण्णि उच्चारणसलागाओ (३) । एवं बज्झमाणियाए बहुवयणसुत्तालावो समत्तो ।

सिया उदिण्णाओ वेयणाओ ॥ ७ ॥

एवस्स उदिण्णबहुवयणसुत्तस्स आलावे✡ भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणं एग-बहुवयणाणि ठविय तेसिमक्खसंचारजणिदपत्थारं च ठविय तत्थ एगवयणालावं पुव्वपरूविदं मोत्तूण सेससत्तालावे भणिस्सामो । तं जहा- एगस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एत्थ जदि वि एगेण जीवेण एया चेव पयडी उदए छुद्धा तो वि तिस्से बहुत्तं होदि, अणेगेसु समएसु पबद्धत्तादो । एत्थ

प्रकृतियोंमें वहां बहुत्व पाया जाता है । नैगम नय बध्यमान वेदनाके बहुत्वको स्वीकार करता है । इसलिये इसके प्रथम उच्चारणको छोडकर शेष तीन उच्चारणायें होती हैं । उनको कहते हैं- एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं कथंचित् बध्यमान वेदनायें हैं । यहां एक उच्चारण शलाका पायी जाती है (१) । अनेक जीवोंके द्वारा एक समयमें बांधी गई एक प्रकृति कथंचित् बध्यमान वेदनायें हैं । इस प्रकार दो उच्चारणशलाकायें हुई (२) ।

शंका- जीवोंके बहुत्वसे वेदनाका बहुत्व कैसे सम्भव है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, जीवोंके भेदसे भेदको प्राप्त हुई एक वेदनाके बहुत होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गई कथंचित् बध्यमान वेदनायें हैं । इस प्रकार तीन उच्चारण शलाकायें हुई (३) । इस प्रकार बध्यमानके बहुवचन सम्बन्धी सूत्रका आलाप समाप्त हुआ ।

कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं ॥ ७ ॥

इस उदीर्ण वेदनाओं सम्बन्धी बहुवचन सूत्रके आलापोंकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति एवं समयके एक व बहुवचनोंको स्थापित कर तथा उनके अक्षसञ्चारसे उत्पन्न प्रस्तारको भी स्थापित करके उनमेंसे पूर्वमें कहे गये एकवचन आलापको छोडकर शेष सात आलापको कहते हैं । यथा- एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं । यद्यपि यहाँ एक जीवके द्वारा एक ही प्रकृति उदयमें निक्षिप्त की गई है तो भी वह बहुत होती है, क्योंकि,

---

* ताप्रतौ ' एगा ' इत्येतत्पदं नास्ति । ✡ अप्रतौ ' अभावे ' इति पाठः ।

एगा उच्चारणसलागा (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमय-पबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एवं बेउच्चारणाओ (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एवं तिण्णि उच्चारणाओ (३)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एत्थ जीवबहुत्तं पेक्खिय उदिण्णबहुत्तं गहियं। एवं चत्तारि उच्चारणाओ (४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एवं पंच उच्चारणाओ (५)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एवं छ उच्चारणाओ (६)। अधवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एवं सत्त उच्चारणाओ (७)। एवं उदिण्णस्स बहुवयणसुत्तपरूवणा गदा।

सिया उवसंताओ वेयणाओ ॥ ८ ॥

एदस्स उवसंतबहुवयणसुत्तस्स आलावे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेय-बहुवयणाणि ठविय तेसिमक्खसंचारजणिदपत्थारं च ठवेदूण तत्थ एगवयणपढमालावं मोत्तूण सेसस-त्तहि वियप्पेहि एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा कायव्वा। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवमेगुच्चारणा (१)। एसा

वह अनेक समयोंमें बांधी गई है। यहाँ एक उच्चारणशलाका हुई (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार दो उच्चारण-शलाकायें हुईं (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन उच्चारणायें हुईं (३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गईं कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं। यहाँ जीवोंके बहुत्वकी अपेक्षा उदीर्ण वेद-नाका बहुत्व ग्रहण किया गया है। इस प्रकार चार उच्चारणायें हुईं (४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गईं कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच उच्चारणायें हुईं (५)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं कथं-चित् उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार छह उच्चारणायें हुईं (६)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार सात उच्चारणायें हुईं (७)। इस प्रकार उदीर्ण वेदनाके बहुवचन सम्बन्धी सूत्रकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

कथंचित् उपशान्त वेदनायें हैं ॥ ८ ॥

इस उपशांत वेदनाके बहुवचन सम्बन्धी सूत्रके आलापोंका कथन करते समय जीव, प्रकृति और समय इनके एक व बहुवचनोंको तथा उनके अक्षसंचारसे उत्पन्न प्रस्तारको भी स्थापित करके उनमें एकवचन रूप प्रथम आलापको छोड़कर शेष सात विकल्पों द्वारा इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये। वह इस प्रकारसे– एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई कथंचित् उपशांत वेदनाओं स्वरूप है। इस प्रकार एक उच्चारणा हुई (१)। यद्यपि यह एक

जदि वि एक्कस्स जीवस्स एगा चेव पयडी होदि, तो वि अणेगेसु समएसु बद्धत्तादो उवसंतवेयणाए बहुत्तं जुज्जदे । अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवं बेउच्चारणाओ (२) । अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवं तिण्णि उच्चारणाओ (३) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवं चत्तारि उच्चारणाओ (४) । एत्थ जीवबहुत्तं पेक्खिदूण उवसंतवेयणाए एगसमयपबद्धएयपयडीए बहुत्तं गहिदं । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवं पंच उच्चारणाओ (५) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ । एव छ उच्चारणाओ (६) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवं सत्त उच्चारणा (७) । एवं उवसंतवेयणाए सत्तबहुवयणभंगा परूविदा । एवं बज्झमाण-उदिण्ण उवसंताणमेग-बहुवयणपडिबद्धसुत्तछक्कं परूविय दुसंजोगभंगपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च ॥ ९ ॥

वेयणा इदि अणुवट्टदे । तेण वेयणासद्दो एदस्स सुत्तस्स अवयवभावेण वट्टव्वो । एवस्स

जीवकी एक ही प्रकृति है, तो भी अनेक समयोंमें बांधे जानेके कारण यहां उपशांत वेदनाका बहुत्व युक्तियुक्त है । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं कथंचित् उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार दो उच्चारणायें हुईं (२) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं कथंचित् उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार तीन उच्चारणायें हुईं (३) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदनाओं स्वरूप है । इस प्रकार चार उच्चारणायें हुईं (४) । यहां जीव बहुत्वकी अपेक्षा करके उपशांत वेदनारूप एक समयमें बाँधी गई एक प्रकृतिके बहुत्वको ग्रहण किया गया है । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गईं कथंचित् उपशांत वेदनाओं रूप है । इस प्रकार पांच उच्चारणायें हुईं (५) । अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं कथंचित् उपशांत वेदनायें है । इस प्रकार छह उच्चारणायें हुईं (६) । अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं कथंचित् उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार सात उच्चारणायें हुईं (७) । इस प्रकार उपशांत वेदना संबंधी सात बहुवचन भंगोंकी प्ररूपणा की गई है । इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनाके एक व बहुवचनोंसे सम्बद्ध छह सूत्रोंकी प्ररूपणा करके द्विसंयोगजनित भंगोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं-

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है ॥ ९ ॥

यहां वेदना शब्दकी अनुवृत्ति ली गई है । इसलिये वेदना शब्दको इस सूत्रके अवयवरूप

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोगसुत्तपत्थारं ठविय $\left|\begin{matrix}१&१&२&२\\१&२&१&२\end{matrix}\right|$ पुणो बज्झमाणवेयणाए जीव-पयडि-समयपत्थारं $\left|\begin{matrix}१&१&२&२\\१&२&१&२\\१&१&१&१\end{matrix}\right|$ पुणो उदिण्णाए जीव-पयडि-समयाणं एग-बहुवयणपत्थारं च ठविय $\left|\begin{matrix}१&१&१&१&२&२&२&२\\१&१&२&२&१&१&२&२\\१&२&१&२&१&२&१&२\end{matrix}\right|$ पुणो पच्छा वुच्चदे। तं जहा-- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया तस्सेव जीवस्स एयपयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवं दुसंजोगपढमसुत्तस्स एगा चेव उच्चारणा।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च ॥ १० ॥

समझना चाहिये। इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान और उदीर्ण वेदनाके द्विसंयोग-

सूत्रप्रस्तारको

बध्यमान / उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
	एक	अनेक	एक	अनेक

स्थापित करके पश्चात् बध्यमान वेदना

संबंधी जीव, प्रकृति व समय इनके प्रस्तारको,

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	अनेक	एक	अनेक
समय	एक	एक	एक	एक

तथा उदीर्ण

वेदना संबंधी जीव, प्रकृति और समय इनके एक व बहुवचनोंके प्रस्तारको भी स्थापित

करके पुनः

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

पश्चात्

प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है-- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान और उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, यह कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार द्विसंयोगरूप प्रथम सूत्रकी एक ही उच्चारणा है।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उदीर्ण (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १० ॥

एत्थ वेयणा त्ति अणुवट्टदे। तेण वेयणासद्दो असंतो वि अज्झाहारेयव्वो सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा त्ति। संपहि एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा कीरदे। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा। एवं दुसंजोगविदियसुत्तस्स पढमुच्चारणा (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा। दो भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा। एवं तिण्णि भंगा (३)। पुणो उदिण्णाए विदियसुत्तस्स सेसबहुवयणभंगा ण लब्भंति। कुदो ? बज्झमाण-उदिण्णाणमाधारभूदएगजीवभावादो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च ॥ ११ ॥

वेयणा त्ति अणुवट्टदे। एदस्स सुत्तस्स भंगा वुच्चंति। तं जहा– एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धाउदिण्णा; सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ च उदिण्णा च वेयणाओ। एवं तदियसुत्तस्स एगो चेव भंगो (१)। पुणो बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोगतदियसुत्तस्स सेसभंगा

यहाँ 'वेदना' की अनुवृत्ति ली जाती है। इसलिये वेदना शब्दके न होते हुए भी उसका अध्याहार करना चाहिये– कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। अब इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण; इस प्रकार कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार द्विसंयोगरूप द्वितीय सूत्रकी प्रथम उच्चारणा हुई (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। ये दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भंग हुए (३)। पुनः उदीर्ण वेदना संबंधी द्वितीय सूत्रके शेष बहुवचन भंग नहीं पाये जाते, क्योंकि, बध्यमान और उदीर्ण वेदनाके आधारभूत एक जीवका अभाव है। सूत्र

कथंचित् बध्यमान वेदनायें और उदीर्ण वेदना है ॥ ११ ॥

'वेदना' इसकी अनुवृत्ति है। इस सूत्रके भंग कहते हैं। यथा– एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान वेदनायें और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार तृतीय सूत्रका एक ही भंग होता है (१)। पुनः बध्यमान और उदीर्ण संबंधी द्विसंयोगवाले तृतीय सूत्रके शेष भंग नहीं पाये जाते, क्योंकि

ण लब्भंति, जीवेहि वियहिअरणत्तप्पसंगादो ।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च ॥ १२ ॥

वेयणा त्ति अणुवट्टदे । एदस्स बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा- एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ । एवं चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो (१) । अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ । एसो विदियभंगो (२) । अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ एवं चउत्थसुत्तस्स तिण्णि भंगा (३) । संपहि बज्झमाण-उदिण्णाणं एयजीवमस्सिदूण तिण्णि चेव भंगो होंति: अहिया ण उप्पज्जंति, बज्झमाण-उदिण्णाणं वियहिअरणावत्तीदो । संपहि एदस्सेव दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स बज्झमाण-उदिण्णाणं णाणाजीवे अस्सिदूण [illegible] एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमय-

जीवोंके साथ व्यधिकरणताका प्रसंग आता है ।

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं ॥ १२ ॥

'वेदना' इसकी अनुवृत्ति है । अब बध्यमान और उदीर्ण सम्बन्धी द्विसंयोगवाले इस चतुर्थ सूत्रका अर्थ कहते हैं वह इस प्रकार है- एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार चतुर्थ सूत्रका प्रथम भंग हुआ (१) । अथवा एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान वेदनायें उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उदीर्ण वेदनायें कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । यह द्वितीय भंग हुआ (२) । अथवा एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई बध्यमान वेदनायें उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण वेदनायें कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके तीन भंग होते हैं (३) । अब बध्यमान और उदीर्ण वेदनाओंके एक जीवका आश्रय करके तीन ही भंग होते हैं, अधिक नहीं उत्पन्न होते हैं; क्योंकि, बध्यमान और उदीर्णके व्यधिकरणताकी आपत्ति आती है ।

अब इसी द्विसंयोगवाले चतुर्थ सूत्रकी बध्यमान और उदीर्ण वेदनाओंके नाना जीवोंका आश्रय करके शेष भंगोंको कहते हैं । यथा- अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण

(१) अ-ताप्रत्योः ' सुत्तबज्झमाण ' इति पाठः ।

पबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ, च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं चउत्थ-सुत्तस्स चत्तारि भंगा (४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स पंच भंगा (५)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा च बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा (६)। अधवा, अणेयाणं जीवाणं एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेय-समयपबद्धाओ उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा (७)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं एवमट्ठ भंगा (८)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं णव भंगा (९)। अधवा, अणेयाणं जीवाण-मणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं दस भंगा (१०)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पय-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके चार भंग हुए (४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके पाँच भङ्ग हुए (५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भंग हुए (६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भंग हुए (७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भंग हुए (८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार नौ भंग हुए (९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भंग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक

ताप्रतौ ' च ' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते। अ-आप्रत्योः ' जीवाणमेयाओ ' इति पाठः।
अ-आप्रत्योः ' पबद्धाओ ', ताप्रतौ ' पबद्धा (ओ) ' इति पाठः।

डीओ एगसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स एक्कारस भंगा (११)। एवं बज्झमाणउदिण्णाणं दुसंजोगसुत्ताणमत्थपरूवणा कदा। संपहि बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगजणिदवेयणाभंगपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ॥ १३ ॥

वेयणा त्ति अणुवट्टदे। एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाणाणुदिण्णाणं वि तिण्णि पत्थारे ठविय वत्तव्वं। तं जहा एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवं पढमसुत्तस्स एगो चेव भंगो (१)।

सिया बज्झमाणिया* च उवसंताओ च ॥ १४ ॥

एदस्स विदियसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंता* सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवं विदियसुत्तस्स पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ

प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान, और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके ग्यारह भंग हुए (११)। इस प्रकार बध्यमान और उदीर्ण वेदनाओंके द्विसंयोग सम्बन्धी सूत्रोंके अर्थकी प्ररूपणा की गई है। अब बध्यमान और उपशांत वेदनाओंके द्विसंयोगसे उत्पन्न वेदनाभंगोंके प्ररूपणार्थ आगेका सूत्र कहते हैं–

कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है ॥ १३ ॥

'वेदना' इसकी अनुवृत्ति है। इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान और उदीर्ण वेदनाके समान तीन प्रस्तारोंको स्थापित करके कथन करना चाहिये। वह इस प्रकारसे– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदना है। इस प्रकार प्रथम सूत्रका एक ही भंग होता है। (१)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १४ ॥

इस द्वितीय सूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार द्वितीय सूत्रका प्रथम भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक

---

* अ-ताप्रत्योः 'बज्झमाणियाओ', ताप्रतौ 'बज्झमाणिया (ओ)' इति पाठः। * प्रतिषु 'उवसंता' इति पाठः।

पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया, बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ एवं बो भंगा (२)। अधवा एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा (३)। एवं विदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा लब्भंति, ण सेसा; णिरुद्धेगजीवत्तादो।

सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च ॥ १५ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा- एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एयपयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवं तदियसुत्तस्स एगो चेव भंगो (१)। सेसभंगा ण लब्भंति। कुदो ? णिरुद्धेगजीवत्तादो।

सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च ॥ १६ ॥

एदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा- एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एसो चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स

समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भङ्ग हुए (३)। इस प्रकार द्वितीय सूत्रके तीन ही भङ्ग पाये जाते हैं, शेष नहीं पाये जाते; क्योंकि, यहाँ एक जीवकी विवक्षा है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ १५ ॥

इस तृतीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है- एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार तृतीय सूत्रका एक ही भङ्ग है (१), शेष भङ्ग नहीं पाये जाते हैं, क्योंकि, एक जीवकी विवक्षा है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १६ ॥

इस चतुर्थ सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है- एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। यह चतुर्थ सूत्रका प्रथम भङ्ग है (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ

बेभंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ ✡बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स तिण्ण चेव भंगा होंति (३), बड्ढिमा ण होंति; बज्झमाण-उवसंतेसु णिरुद्धेगजीवादो।

संपहि बज्झमाण-उवसंतेसु णाणाजीवे अस्सिदूण चउत्थसुत्तस्स सेसभंगे वत्तइस्सामो। तं जहा– अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स चत्तारि भंगा (४)। अधवा, अणेयाणं जीवाण–

मेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेगा पयडी अणेयस–

मयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंच भंगा (५)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ च✡ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा (६)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा (७)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमय–

सूत्रके दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके तीन ही भङ्ग होते हैं (३), अधिक नहीं होते; क्योंकि बध्यमान और उपशान्त वेदनाओंमें एक जीवकी विवक्षा है।

अब बध्यमान और उपशान्त वेदनाओंमें नाना जीवोंका आश्रय लेकर चतुर्थ सूत्रके शेष भङ्गोंको कहते हैं। यथा अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके चार भङ्ग हुए (४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भङ्ग हुए (५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भङ्ग हुए (६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भङ्ग हुए (७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक

ताप्रतौ ✡ '–पबद्धाओ च बज्झ–' इति पाठः। ✡ ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम्।

पबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा (८)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं णव भंगा (९)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं दस भंगा (१०)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च♣ उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स एक्कारस भंगा (११)। एवं बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगसुत्तपरूवणा समत्ता। अविण्ण-उवसंताणं दुसंजोगजणिदवेयणाविय[कप्प]परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

सिया उदिण्णा च उवसंता च ॥ १७ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणाए☼ कीरमाणाए पुव्वं ताव उदिण्ण-उवसंताणं दुसंजोग-सुत्तपत्थारं ठविय $\left|\frac{११२२}{१२१२}\right|$ पुणो उदिण्णस्स जीव-पयडि-समयाणमेग बहुवयणाणं♠पत्थारं

प्रकृति एक समयमे बांधी गई उपशांत कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भंग हुए (८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार नौ भंग हुए (९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भंग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके ग्यारह भंग हुए (११)। इस प्रकार बध्यमान और उपशांत वेदनासम्बन्धी द्विसंयोग-वाले सूत्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई। अब उदीर्ण और उपशांत प्रकृतियोंके द्विसंयोगसे उत्पन्न वेदनाविकल्पोंकी प्ररूपणा करनेके लिये अगला सूत्र कहते हैं--

कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ १७ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय पहिले उदीर्ण उपशांत वेदनाके द्विसंयोग सूत्रके प्रस्तारको स्थापित

उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
उपशांत	एक	अनेक	एक	अनेक

करके फिर उदीर्ण वेदनासम्बन्धी जीव,

♣ अ-आप्रत्योः 'चेव' इति पाठः। ☼ अ-आप्रत्योः 'परूवणा' इति पाठः।
♠ अ-आप्रत्योः '-मेगबवयणाणं' इति पाठः।

$\left|\begin{matrix}1&1&1&2&2&2&2&2\\1&1&2&2&1&1&2&2\\1&2&1&2&1&2&1&2\end{matrix}\right|$ उदिण्णा-उवसंत जीव-पयडि-समयपत्थारं च परिवाडीए–

भंगायामपमाणं लहुओ गरुओ त्ति अक्खणिक्खेवो ।
तत्तो च दुगुण-दुगुणो पत्थारो विण्णसेयव्वो♠ ॥ १ ॥'

एदीए गाहाए ठविय $\left|\begin{matrix}1&1&1&2&2&2&2&2\\1&1&2&2&1&1&2&2\\1&2&1&2&1&2&1&2\end{matrix}\right|$ अत्थपरूवणा कायव्वा । अथवा, $\begin{matrix}111\\222\end{matrix}$ ।

$\begin{matrix}111\\222\end{matrix}$ । $\begin{matrix}111\\222\end{matrix}$ 'बज्झमाण-उदिण्ण☼-उवसंतेसु जीव-पयडि-समयाणमेग-बहुवयणाणिठविय

' पढमक्खो अंतगओ आदिगए संकमेदि विदियक्खो ।
दोण्णि वि गंतूणंतं आदिगदे संकमेदि तदियक्खो♣ ॥ २ ॥'

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

प्रकृति और समय, इनके एक व बहुवचनोंके प्रस्तारको तथा (उदीर्ण) एवं उपशांत वेदनाके विषयमें जीव, प्रकृति और समयके प्रस्तारको भी परिपाटीसे

भंगोंके आयाम प्रमाण अर्थात् प्रथम पंक्तिगत भंगोंका जितना प्रमाण हो उतने वार लघु और गुरु इस प्रकारसे अक्षनिक्षेप किया जाता है । तथा आगे द्वितीयादि पंक्तियोंमें दुगुणे दुगुणे प्रस्तारका विन्यास करना चाहिये ॥ १ ॥'

इस गाथाके अनुसार स्थापित करके (संदृष्टि पहिलेके ही समान) अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये। अथवा, बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनाके सम्बन्धमें जीव, प्रकृति और समय, इनके

बध्यमान			उदीर्ण			उपशान्त		
जीव	प्रकृति	समय	जीव	प्रकृति	समय	जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक
अनेक	अनेक	०	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक

एक बहुवचनोंको स्थापित करके

' प्रथम अक्ष अन्तको प्राप्त होकर जब पुनः आदिको प्राप्त होता है तब द्वितीय अक्ष बदलता है । जब प्रथम और द्वितीय दोनों ही अक्ष अन्तको प्राप्त होकर पुनः आदिको प्राप्त होते हैं तब तृतीय अक्ष बदलता है ॥ २ ॥'

♠ क० पा० २, पृ. ३०८। ☼ प्रतिषु ' उदिण्णा ' इति पाठः। ♣ गो० जी० ४० मूला० ११-१३.

एदीए गाहाए✤ पत्थारो आणिय ठवेयव्वो । पुणो पच्छा सुत्तपरूवणा कायव्वा। तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी ✡एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं पढमसुत्तस्स एक्को चेव भंगो ॥ १ ॥

सिया उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ १८ ॥

एदस्स✡ विदियसुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो। तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णा च उवसंताओ वेयणाओ। एवं बिदियसुत्तस्स एसो पढमभंगो (१) अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बेभंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णा✡ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं विदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा, णिरुद्धेगजीवत्तादो।

सिया उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ १९ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो। तं जहा-- एयस्स जीवस्स एया

इस गाथाके अनुसार प्रस्तारको लाकर स्थापित करना चाहिये। पुनः पश्चात् सूत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये। यथा- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार प्रथम सूत्रका एक ही भङ्ग है (१)।

कथंचित् उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १८ ॥

इस द्वितीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें है। इस प्रकार सूत्रका यह प्रथम भङ्ग है (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार द्वितीय सूत्रके तीन ही भङ्ग है; क्योंकि, एक जीवकी विवक्षा है।

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदनायें हैं ॥ १९ ॥

इस तृतीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति

✤ अ-आप्रत्योः 'गाह' इति पाठः। ✡ अ-आप्रत्योः 'एगा' इति पाठः। ✡ प्रतिषु 'एयस्स' पाठः। ✡ ता० प्रतौ 'उदिण्णाओ', आप्रतौ 'ओदिण्णा' ताप्रतौ 'उदिण्णा (ओ)' इति पाठः।

पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एसो तदियसुत्तस्स पढमभंगो (१) अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२) अधवा एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा (३)। सेसा जीवबहुवयणभंगा उदिण्णगया अत्थ ण उच्चारिज्जंति, कुदो? उवसंतवेयणाए एयजीवम्मि अवट्ठाणादो उदिण्ण-उवसंताणं जीवं पडि वइयहियरणत्तप्पसंगादो। तेण तदियसुत्तस्स तिण्णि✤ चेव भंगा (३)

सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ २० ॥

एदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा- एयजीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ✤ च उवसंताओ च वेयणाओ। एसो चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२) अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी

अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। यह तृतीय सूत्रका प्रथम भंग है (१)। अथवा एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें है। इस प्रकार दो भंङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भंङ्ग हैं (३)। उदीर्णगत शेष जीव बहुवचन भंगोंका यहां उच्चारण नहीं किया जाता है, क्योंकि, उपशांत वेदनाका अवस्थान एक जीवमें होनेसे जीवकी प्रति उदीर्ण और उपशांत वेदनाओंकी व्याधिकरणताका प्रसंग आता है। इस कारण तृतीय सूत्रके तीन ही भङ्ग हैं (३)।

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २० ॥

इस चतुर्थ सूत्रके भङ्ग प्रमाणकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत, कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। यह चतुर्थ सूत्रका प्रथम भङ्ग हैं (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार

✤ अ-ताप्रत्योः ' तिण्णेव इति पाठः। ✤ ताप्रतौ-पबद्धा (उवसंताओ) उदिण्णाओ इति पाठः।

अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा (३)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ एवं चत्तारि भंगा (४)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव* जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ*। एवं पंच भंगा (५)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा (६)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ*। एवं सत्त भंगा (७)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा (८)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेय-

दो भङ्ग हुए (२)। अथवा एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भङ्ग हुए (३)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चार भंग हुए (४)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भङ्ग हुए (५)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भङ्ग हुए (६)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भङ्ग हुए (७)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भङ्ग हुए (८)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और

* आ-ताप्रत्योः 'तस्स चेव' इति पाठः। (*) मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'उदिण्णाओ च वेयणाओ' ताप्रतौ 'उदिण्णाओ च (उवसंताओ च) वेयणाओ' इति पाठः। (*) अ-आप्रत्योः 'सिया उदिण्णाओ च वेयणाओ' इति पाठः।

समयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं णव भंगा (९)। एवमेयजीवमस्सिदूण चउत्थसुत्तस्स णव चेव भंगा होंति।

संपहि णाणाजीवे अस्सिदूण तस्सेव चउत्थसुत्तस्स सेसभंगे वत्तइस्सामो। तं जहा– अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ* च वेयणाओ। एवं दस भंगा (१०)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कारस भंगा (११)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बारह भंगा (१२)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेरस भंगा (१३)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चोद्दस भंगा (१४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी

उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार नौ भंग हुए (९)। इस प्रकार एक जीवका आश्रय करके चतुर्थ सूत्रके नौ ही भंग होते हैं।

अब नाना जीवोंका आश्रय करके उसी चतुर्थ सूत्रके शेष भंगोंको कहते हैं। यथा– अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भंग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार ग्यारह भंग (११)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार बारह भंग हुए (१२)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तेरह भंग हुए (१३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चौदह भंग हुए (१४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति

---

* ताप्रतौ 'उदिण्णा (ओ च) उवसंताओ' इति पाठः। ◆ अ-आप्रत्योः 'पबद्धाओ' इति पाठः।

अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एव पण्णारस भंगा (१५) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं सोलह भंगा (१६) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं सत्तरस भंगा (१७) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ, च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं अट्ठारह भंगा (१८) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमेक्कोणवीस भंगा (१९) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं वीस भंगा (२०) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार पंद्रह भंग हुए (१५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार सोलह भंग हुए (१६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनाये हैं । इस प्रकार सत्तरह भग हुए (१७)। अथवा अनेक जीवोंको अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार अठारह भंग हुए (१८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्ही जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें है । इस प्रकार उन्नीस भंग (१९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्ही जीवोंकी अनेक प्रकृतिया एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार बीस भंग हुए (२०) । अथवा अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जोवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें है । इस प्रकार इक्कीस भंग हुए (२१) । अथवा, अनेक

एवमेक्कवीस भंगा (२१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बावीस भंगा (२२)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेवीस भंगा (२३)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउवीस भंगा (२४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पणुवीस भंगा (२५)।

अधवा, एदे पणुवीस भंगा एवं वा उप्पादेदव्वा। तं जहा- एक्किस्से एगजीवउदिण्णुच्चारणाए जदि तिण्णिएगजीव उवसंतुच्चारणाओ लब्भंति तो तिण्णमेगजीवउदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ उवसंतुच्चारणाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए लब्भंति णव भंगा (९)। पुणो एक्किस्से णाणाजीवउदिण्णुच्चारणाए जदि चत्तारि णाणाजीवउवसंतुच्चारणाओ लब्भंति तो चदुण्णं णाणाजीवउदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ उवसंतुच्चारणाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए

जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त; वेदनायें हैं। इस प्रकार बाईस भंग हुए (२२)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तेईस भंग हुए (२३)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें है। इस प्रकार चौबीस भंग हुए (२४)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पच्चीस भंग हुए (२५)।

अथवा, इन पच्चीस भंगोंको इस प्रकारसे उत्पन्न कराना चाहिये। यथा- एक जीवसंबंधी उदीर्ण वेदनाकी एक उच्चारणमें यदि तीन एक जीव संबंधी उपशांत उच्चारणायें पायी जाती हैं तो एक जीव संबंधी तीन उदीर्ण-उच्चारणाओंमें कितनी उपशान्त-उच्चारणायें प्राप्त होंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर नौ भंग प्राप्त होते हैं (९)। पुनः नाना जीवों संबंधी एक उदीर्ण-उच्चारणामें यदि चार नाना जीवों संबंधी उपशांत-उच्चारणायें पायी जाती हैं तो नाना जीवों सम्बन्धी चार उदीर्ण-उच्चारणाओंमें कितनी उपशांत-उच्चारणायें प्राप्त होंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर सोलह उच्चारणायें पायी जाती

सोलसुच्चारणाओ लब्भंति (१६)। पुणो एदाओ सोलस पुव्विल्लियाओ णव एग-दुकदासु उविण्णउवसंताणं दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स पणुवीस भंगा हवंति। एवं बज्झ-माण-उविण्ण-उवसंताणमेगदुसंजोगम्मि णिबद्धसुत्तपरूवणा समत्ता।

संपहि बज्झमाण-उविण्ण-उवसंताणं तिसंजोगमस्सिदूण वेयणावियप्पपरूवण-ट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

सिया बज्झमाणिया च उविण्णा च उवसंता च ॥ २१ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उविण्ण-उवसंताणमेग-बहुवयणसंबिट्ठं ठविय | १ १ १ / २ २ २ | पुणो एत्थ अक्खसंचारेण उप्पाइदतिसंजोगसुत्तपत्थारं ठविय

१ १ १ १	२ २ २ २
१ १ २ २	१ १ २ २
१ २ १ २	१ २ १ २

पुणो बज्झमाण-उविण्ण-उवसंतजीव-पयडि-समयाणमेग-बहुवयणसंबिट्ठिओ

हैं (१६)। अब सोलह ये और पूर्वकी नौ, इनको इकट्ठा करनेपर उदीर्ण व उपशांत सम्बन्धी द्विसंयोग रूप चतुर्थ सूत्रके पच्चीस भंग होते हैं। इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत सम्बन्धी एक व दोके संयोगसे निबद्ध सूत्रकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

अब बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत, इन तीनके संयोगका आश्रय करके वेदनाविकल्पोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं-

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदना है ॥ २१ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान उदीर्ण और उपशांत, इनके एक व बहुवचनोंकी संदृष्टिको स्थापित

बध्य	उदीर्ण	उपशांत
एक	एक	एक
अनेक	अनेक	अनेक

करके पश्चात् यहां अक्षसंचारसे उत्पन्न कराये गये त्रिसंयोग रूप सूत्रके प्रस्तारको स्थापित कर

बध्यमान	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
उपशांत	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

पुनः बध्यमान, उदीर्ण, उपशांत, जीव, प्रकृति व समय, इनके एक व बहुवचनकी संदृष्टियोंको

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१११	१११	१११
२२०	२२२	२२२

परिवाडीए ठविय एदेहिंतो अक्खसंचारेणुप्पाइदतिण्णि वि पत्थारे च

११२२	१११२२२२	१११२२२२
१२१२	११२११२२	११२११२२
११११	१२१२१२१२	१२१२१२१२

ठविय एत्थ उवरिमपंती बज्झमाणिया मज्झिमपंती उदिण्णा हेट्ठिमपंती उवसंता परूवणा कीरदे। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, (तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा) तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं पढमसुत्तस्स एक्को चेव भंगो (१)।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ २२ ॥

एदस्स तिसंजोगविदियसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया

बध्यमान			उदीर्ण			उपशान्त		
एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक
अनेक	अनेक	०	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक

परिपाटीसे स्थापित करके इनसे अक्षसंचारके द्वारा उत्पन्न कराये गये तीनों ही प्रस्तारोंको स्थापित

जीव	प्रकृति	समय																
बध्य	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
उदीर्ण	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
उपशा	एक	एक	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

करके यहाँ ऊपरकी पंक्तिमें बध्यमान, मध्यम पंक्तिमें उदीर्ण व अधस्तन पंक्तिमें उपशान्तकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है–एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, (उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण), उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार प्रथम सूत्रका एक ही भंग है (१)।

कथंचित् बध्यमान, (एक), उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २२ ॥

तीनोंके संयोगरूप इस द्वितीय सूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है–एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथञ्चित्

(१) कोष्ठकस्थोऽयं पाठः प्रतिषु नोपलभ्यते।

च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं विदियसुत्तस्स पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एकसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं बे भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं विदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा (३) । कुदो ? बज्झमाण-उदिण्णेसु एयवयणणिद्देसादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ २३ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवं तिसंजोगतदियसुत्तस्स पढमो भंगो (१) । अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च

बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार द्वितीय सूत्रका प्रथम भंग है । अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण, और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार दो भंग हुए (२) । अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार द्वितीय सूत्रके तीन ही भंग होते हैं (३), क्योंकि, बध्यमान और उदीर्णमें एक वचनकी विवक्षा है ।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ २३ ॥

इस तृतीय सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशांत, कथंचित् बध्यमान उदीर्ण । और उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार तीनोंके संयोग रूप तृतीय सूत्रका यह प्रथम भंग है (१) अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त;

अ-आप्रत्योः 'एया' इति पाठः ।

वेयणाओ। एवं बे भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया* च उदिण्णाओ च उवसंताओ* च वेयणाओ। एवं तदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा (३) कारणं जाणिदूण वत्तव्वं।

सिया बज्झमाणियाच उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ २४ ॥

एवस्स तिसंजोगचउत्थसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा-एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तृतीय सूत्रके तीन ही भंग हैं (३)। इसके कारणका जानकर कथन करना चाहिये।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २४ ॥

त्रिसंयोग रूप इस चतुर्थ सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रका यह प्रथम भंग है (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा

---

* ताप्रतौ 'बज्झमाणिया (ओ)' इति पाठः। * अप्रतौ 'उवसंताओ', ताप्रतौ 'उवसंता (ओ)' इति पाठः।

समयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबध्दा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा (३)। अधवा एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धाउदसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चत्तारि भंगा (४)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबध्दा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबध्दाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंच भंगा (५)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ (एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ) अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा (६)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा (७)। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया,

---

एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भंग हुए (३)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चार भंग हुए (४)। अथवा एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार पांच भंग हुए (५)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण और उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भंग हुए (६)। अथवा एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण और उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भंग हुए (७)। अथवा, एक जीवकी एक

तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा (८)। अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स णव भंगा (९)।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंता च ॥ २५ ॥

एदस्स पंचमसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा-एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंता च वेयणाओ। एवं पंचमसुत्तस्स एक्को चेव भंगो।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ २६ ॥

एदस्स तिसंजोगछट्ठसुत्तस्स भंगपमाणं वुच्चदे। तं जहा-एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ;

प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भंग हुए (८)। अथवा एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके नौ भंग हैं (९)।

कथंचित् बध्यमान (अनेक), उदीर्ण (एक) और उपशांत (एक) वेदना है ॥ २५ ॥

इस पांचवें सूत्रकी भंगप्ररूपणा कहते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदना है। इस प्रकार पांचवें सूत्रका एक ही भंग है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक), उदीर्ण (एक) और उपशांत (अनेक) वेदनायें हैं। २६।

इस त्रिसंयोगी छठें सूत्रके भंगोंका प्रमाण कहते हैं। यथा-एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमेसो पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं बे भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं छट्ठसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा (३) । कारणं सुगमं ।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ २७ ॥

एदस्स सत्तमसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा- एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ[✡] च वेयणाओ । एवं पढमभंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया

उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें है। इस प्रकार यह प्रथम भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयम बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचिद् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार छठे सूत्रके तीन ही भंग हैं (३)। इसका कारण सुगम है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक), उदीर्ण (अनेक) और उपशांत (एक) वेदना है ॥ २७ ॥

इस सातवें सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार प्रथम भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं

✡ अ-आप्रत्योः 'उवसंताओ', ताप्रतौ 'उवसंता (ओ)' इति पाठः ।

पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवं सत्तमसुत्तस्स वि तिण्णेव भंगा (३)। कारणं सुगमं।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ♣ ।२८।

एदस्स अट्ठमसुत्तस्स भंगपमाणं वत्तइस्सामो। तं जहा– एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ (एयसमयपबद्धाओ) बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; ✿ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेगाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ ✿ तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी

मार्गदर्शक :- पं. रतनलाल बाँठिया

उदीर्ण उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सातवें सूत्रके तीन ही भंग हैं (३)। इसका कारण सुगम है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक) उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २८ ॥

इस आठवें सूत्रके भंगप्रमाणको कहते हैं। यथा– एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ (एक समयमें बांधी गई) बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान; उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी

♣ अ-आप्रत्योः 'वा' इति पाठः। ✿ अ-आप्रत्योः 'उवसंता', ताप्रतौ 'उवसंता (ओ)' इति पाठः। ✿ ताप्रतौ 'बज्झमाणियाओ (उदिण्णा)' इति पाठः।

अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा (३)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धाओ उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चत्तारि भंगा (४)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ (*उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ) उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंच भंगा (५)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ, च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा (६)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा (७)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भंग हुए (३)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चार भंग हुए (४)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं (उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं) उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भंग हुए (५)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान; उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भंग हुए (६)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भंग हुए (७)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उसी

* कोष्ठकस्थोऽयं पाठः प्रतिषु नोपलभ्यते।

पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा (८)। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेयजीवमस्सिदूण अट्ठमसुत्तस्स णव चेव भंगा होंति (९)।

संपहि तस्सेव अट्ठमसुत्तस्स णाणाजीवे अस्सिदूण बहुवयणभंगे वत्तइस्सामो। तं जहा– अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ; तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ एवं दस भंगा (१०)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कारस भंगा (११)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बारह भंगा (१२)।

जीवकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बाँधी गईं उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भंग हुए (८)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार एक जीवका आश्रय करके आठवें सूत्रके नौ ही भंग होते हैं (९)।

अब नाना जीवोंका आश्रय करके उसी आठवें सूत्रके बहुवचन भंगोंको कहते हैं। यथा– अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण, और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भंग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार ग्यारह भंग हुए (११)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उप–

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेरह भंगा (१३)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चोद्दस भंगा (१४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पण्णारह भंगा (१५)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सोलह भंगा (१६)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्तरस भंगा (१७)। अधवा'

शांत वेदनायें हैं। इस प्रकार बारह भंग हुए (१२)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तेरह भंग हुए (१३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चौदह भंग हुए (१४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पन्द्रह भंग हुए (१५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सोलह भंग हुए (१६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांक; कथंचित् बध्यमान उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सत्तरह भंग हुए (१७)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति

अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा[✡] उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं अट्ठारह भंगा (१८)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कोणवीस भंगा (१९)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धो बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं वीस भंगा (२०)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कवीस भंगा (२१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च

एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार अठारह भंग हुए (१८)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ समयमें बांधी गईं उदीर्ण उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार उन्नीस भंग हुए (१९)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशांत कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार बीस भंग हुए (२०)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्ही जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार इक्कीस भंग हुए (२१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें

✡ अ-ताप्रयोः ' -पबद्धाओ ' इति पाठः।

वेयणाओ। एवं बावीस भंगा (२२)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेवीस भंगा (२३)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ (उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ) उवसंताओ ✿, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउवीस भंगा (२४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पणुवीस भंगा (२५)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छव्वीस भंगा (२६)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमय-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

हैं। इस प्रकार बाईस भंग हुए (२२)। अथवा. अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तेईस भंग हुए (२३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चौबीस भंग हुए (२४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार पच्चीस भंग हुए (२५)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार छब्बीस भंग हुए (२६)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक

✿ ताप्रतौ ' बज्झमाणिया (ओ तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ) तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ ' इति पाठः।

पबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्तावीस भंगा (२७)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठवीस भंगा (२८)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कोणतीस भंगा (२९)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तीस भंगा (३०)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा* उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कतीस भंगा (३१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झ-

---

समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सत्ताईस भंग हुए (२७) अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार अट्ठाईस भंग हुए (२८)। अथवा, अनेक जीवोंकी प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार उनतीस भंग हुए (२९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तीस भंग हुए (३०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार इकतीस भंग हुए (३१)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियां एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं

---

* अ-ताप्रत्योः ' समयपबद्धाओ ', आप्रतौ ' समयप० ' इति पाठः।

माणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बत्तीस भंगा (३२)। अधवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेत्तीस भंगा (३३)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ*, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चोत्तीस भंगा (३४)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंचतीस भंगा (३५)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ।

जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार बत्तीस भंग हुए (३२)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार तेतीस भंग हुए (३३)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चौंतीस भंग हुए (३४)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पैंतीस भंग हुए (३५)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार

---

* अ-आप्रत्योः '-मेया प० ओ च स० उवसं०', ताप्रतौ 'तेसिं० मेया उवसं' इति पाठः।

एवं छत्तीस भंगा (३६) अधवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एयसमयसबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणं अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ सिया, बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्ततीस भंगा (३७) अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ✪, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठतीस भंगा (३८)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कोणचालीस (३९)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चालीस भंगा (४०)। अधवा अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेपसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ,

---

छत्तीस भंग हुए (३६)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं उदीर्ण उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार सैंतीस भंग हुए (३७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार अडतीस भंग हुए (३८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधीं गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार उनतालीस भंग हुए (३९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बांधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उपशांत, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार चालीस भंग हुए (४०)। अथवा अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बांधी गईं बध्यमान उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण

✪ प्रतिषु 'मेया० समय० उव०' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमिगिदालीस भंगा (४१)।

अधवा, चउक्कतालीस भंगा एवं वा उप्पादेदव्वा। तं जहा-एगजीवमस्सिदूण एक्किस्से उदिण्णुच्चारणाए जदि तिण्णि उवसंतउच्चारणाओ लब्भंति तो तिण्णमुदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए[1] णव भंग लब्भंति (९)। पुणो णाणाजीवे अस्सिदूण जदि एक्किस्से उदिण्णुच्चारणाए चत्तारि उवसंतुच्चारणाओ लब्भंति तो चदुण्णमुदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सोलस भंगा लब्भंति (१६)। पुणो एक्कस्स णाणाजीवबज्झमाणभंगस्स जदि सोलस भंगा लब्भंति तो दोण्णं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए बत्तीस भंगा उप्पज्जंति (३२)। एत्थ पुव्विल्लणवभंगेसु पक्खित्तेसु बज्झमाणउदिण्ण-उवसंताण तिसंजोगम्मि अट्ठमसुत्तस्स इगिदालीसभंगा होंति (४१)। एवं णेगमणयम्मि बज्झमाण-उदिण्ण उवसंताणमेगसंजोग-दुसंजोग-तिसंजोगेहि णाणावरणीयपरूवणा कदा।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ २९ ॥

जहा णाणावरणीयस्स वेयणावेयणविहाणं णेगमणयस्स अहिप्पाएण परूविदं तहा

उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियां अनेक समयोंमें बांधी गईं उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार इकतालीस भंग हुए (४१)।

अथवा, इकतालीस भंगोंको इस प्रकारसे उत्पन्न कराना चाहिये। यथा- एक जीवका आश्रय करके यदि एक उदीर्ण-उच्चारणामें तीन उपशांत-उच्चारणायें पायी जाती हैं तो तीन उदीर्ण-उच्चारणाओंमें वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर नौ उपशांत उच्चारणायें पायी जाती हैं (९)। पुनः नाना जीवोंका आश्रय करके यदि एक उदीर्ण उच्चारणामें चार उपशांत-उच्चारणायें पायी जाती हैं तो चार उदीर्ण-उच्चारणाओंमें वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करने पर सोलह भंग पाये जाते हैं (१६)। पुनः नाना सम्बन्धी एक बध्यमान भंगमें यदि सोलह भंग पाये हैं तो दो बध्यमान भंगोंमें कितने भंग पाये जावेंगे, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर बत्तीस भंग उत्पन्न होते हैं (३२)। इनमें पूर्वोक्त नौ भंगोंको मिलाने पर बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत, इन तीनोंके संयोगसे आठवें सूत्रके इकतालीस भंग होते हैं (४१)। इस प्रकार नैगम नयकी अपेक्षा बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत; इनके एक, दो व तीनोंके संयोगसे ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।२९।

नैगम नयकी अभिप्रायसे जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा की गई है,

---

[1] अ-आप्रत्योः 'ओवट्टिदाए ण लब्भंति' इति पाठः।

सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो । संपहि ववहारणयमस्सिदूण वेयणा-वेयणाविहाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

आशीर्वाद :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ववहारणयस्स णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ॥ ३० ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे ताव जीव-पयडि-समयाणमेगवयणाणि जीवाणं बहुवयणं च दुवेदव्वं |१|१|१|२|०|३|। किमट्ठं समयबहुवयणमवणिदं ? णाणावरणीयस्स बज्झमाणस्समेगम्हि चेव समए होदि त्ति जाणावणट्ठं । अदीदाणागदसमया एत्थ किण्ण गहिदा? ण, अदीदे काले बद्धकम्मक्खंधाणमुवसंतभावेण बज्झमाणत्तभावादो। णागदाणं पि कम्मक्खंधाणं बज्झमाणत्तं, तेसिं संपहिजीवे अभावादो तम्हा कालस्स एयत्तं चेव, ण बहुत्तमिदि सिद्धं । पयडीए बहुत्तं किमट्ठमोसारिदं ? णाणावरणभावं मोत्तूण तत्थ अण्णभावाणुवलंभादो । आवरणिज्जस्स भेदे आवरणपयडिभेदो होदि ।

उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है । अब व्यवहार नयका आश्रय करके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं–

व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है ॥ ३० ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन तथा जीवोंके बहुवचन स्थापित करने चाहिये ।

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	०

शंका– समयके बहुवचनको क्यों कम कर दिया गया है?

समाधान– ज्ञानावरणीयका 'बध्यमान' स्वरूप एक समयमें ही होता है, यह प्रकट करनेके लिये समयके बहुवचनको कम किया गया है ।

शंका– अतीत और अनागत समयोंको यहां क्यों नहीं ग्रहण किया गया है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, अतीत कालमें बांधे गये कर्मस्कन्धोंके उपशमभावसे परिणत होनेके कारण उनके उस समय बध्यमान स्वरूपका अभाव है । अनागत भी कर्मस्कन्ध बध्यमान नहीं हो सकते, क्योंकि, इस समय जीवमें उनका अभाव है । इस कारण कालका एकवचन ही है, बहुवचन सम्भव नहीं है; यह सिद्ध है ।

शंका– प्रकृतिके बहुवचनको क्यों अलग किया गया है ?

समाधान– चूंकि उसमें ज्ञानावरण स्वरूपको छोडकर और कोई दूसरा स्वरूप नहीं पाया जाता है, अतः उसके बहुवचनको अलग किया गया है । आवरणीय (आवरणके योग्य) का भेद

ण चावरणिज्जस्स केवलणाणस्स भेदो अत्थि जेण पयडिभेदो होज्ज । तम्हा सिद्धमेयत्तं पयडीए । जीवस्स बहुत्तमत्थि । ण च जीवबहुत्तेण पयडिभेदो होज्ज, पयडीए एगसरूवसदंसणादो । तम्हा* जीव-पयडि-समयाणमेयत्तं जीवबहुत्तं च बज्झमाणकम्मक्खंधस्स संभवदि त्ति सिद्धं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागरजी महाराज

एत्थ अक्खपरावत्ते कदे बज्झमाणियाए वेयणाए जीव-पयडि-समयपत्थारो उप्पज्जदि । तस्स संदिट्ठी एसा $\left|\begin{smallmatrix}१ & २\\ १ & १\\ १ & १\end{smallmatrix}\right|$ । एवं ठविय पुणो एदस्स पढमसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा* । एवं बे भंगा (२) । जीवबहुत्तेण पयडिबहुत्तं णत्थि, किंतु कालबहुत्तेण चेव पयडिबहुत्तं होदि । तत्थ वि उवसंताए उदय-ओकड्डुण उक्कड्डुण-परपयडिसंकमणादीहि पयडिभेदो णत्थि, किंतु बज्झमाणसमयबहुत्तेण चेव पयडिभेदो, तहाऊ लोए संववहारदंसणादो । एवं बज्झमाणियाए वेयणाए बे चेव भंगा पढमसुत्तम्मि ।

होनेपर ही आवरण प्रकृतिका भेद होता है । परन्तु आवरण करनेके योग्य केवलज्ञानका कोई भेद है ही नहीं, जिससे कि प्रकृतिका भेद हो सके। इस कारण प्रकृतिका अभेद (एकता) सिद्ध ही है।

जीवोंका बहुत्व सम्भव है । यदि कहा जाय कि जीवोंके बहुत्वसे प्रकृतिका बहुत्व भी सम्भव है, तो यह भी ठीक नहीं है; क्योंकि, प्रकृतिमें एक स्वरूपता देखी जाती है । इस कारण बध्यमान कर्मस्कन्धके सम्बन्धमें जीव, प्रकृति और समय; इनके एकवचन और जीवोंके बहुवचनकी सम्भावना है, यह सिद्ध है ।

यहां अक्षपरावर्तन करनेपर बध्यमान वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति व समयका प्रस्तार उत्पन्न होता है । उसकी संदृष्टि यह

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

है । इस प्रकार स्थापित करके इस प्रथम सूत्रका अर्थ कहते हैं– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है । इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है । इस प्रकार दो भंग हुए (२) । जीवोंके बहुत्वसे प्रकृतिका बहुत्व नहीं होता है, किन्तु कालके बहुत्वसे ही प्रकृतिका बहुत्व होता है । कालबहुत्वमें भी उपशांतमें उदय, अपकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृति संक्रमण आदिके द्वारा प्रकृतिभेद नहीं होता; किन्तु बध्यमान समयोंके बहुत्वसे ही प्रकृतिभेद होता है, क्योंकि, लोकमें वैसा संव्यवहार देखा जाता है । इस प्रकार प्रथम सूत्रमें बध्यमान वेदनाके दो ही भंग हैं।

ऊ प्रतिषु 'तं जहा' इति पाठः । * ताप्रतौ 'वेयणा (ए)' इति पाठः ।
* मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आकाप्रतिषु 'तदा', ताप्रतौ 'तदा (था)' इति पाठः ।

सिया उदिण्णा वेयणा ॥ ३१ ॥

संपहि एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणं जीव-समयाणं बहुवयणं च ठविय $\left|\begin{smallmatrix}1&1&1\\2&0&2\end{smallmatrix}\right|$ **एत्थ अक्खसंचारे कदे उदिण्णसंजोगजीव-पयडि-समयाणं पत्थारो उप्पज्जदि** $\left|\begin{smallmatrix}1&1&2&2\\1&2&1&2\\1&2&1&2\end{smallmatrix}\right|$ **। एत्थ उदिण्णाए णत्थि पयडिबहुवयणं, एक्किस्से णाणावरणीयपयडीए बहुत्ताभावादो । जीवबहुवयणमत्थि । ण तत्तो उदिण्णबहुत्तं, समयबहुत्तादो चेव उदिण्णाए बहुत्तववहारुवलंभादो । ण च लोगववहारबाहिरं किं पि अत्थि, अण्णवहारणिज्जस्स अत्थित्तविरोहादो । संपहि एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एवमुदिण्णएगवयणसुत्तस्स बे भंगा (२) ।**

सिया उवसंता वेयणा ॥ ३२ ॥

कथंचित् उदीर्ण वेदना है ॥ ३१ ॥

अब इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन तथा जीव व समयके बहुवचनको

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	अनेक

भी स्थापित करके यहां अक्षपरावर्तन करनेपर उदीर्ण वेदना सम्बन्धी जीव प्रकृति व समयका

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक

प्रस्तार उत्पन्न होता है- यहां उदीर्ण वेदनामें प्रकृतिका बहुवचन सम्भव नहीं है, क्योंकि, एक ज्ञानावरणीय प्रकृतिका बहुत होना असम्भव है । जीवबहुवचन सम्भव है । परन्तु उससे उदीर्ण प्रकृतिका बहुत्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, समयबहुत्वसे ही उदीर्ण प्रकृतिके बहुत्वका व्यवहार पाया जाता है । और लोकव्यवहारके बाहिर कुछ भी नहीं है, क्योंकि, अव्यवहरणीय पदार्थके अस्तित्वका विरोध है । अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार उदीर्ण वेदना सम्बन्धी एकवचन सूत्रके दो भंग होते हैं (२) ।

कथंचित् उपशांत वेदना है ॥ ३२ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणाए कीरमाणाए जीव-पयडि-समयाणमेगवयणं जीवसमयाणं बहुवयणं च ठविय $\left|\frac{१ १ १}{१ ० १}\right|$ अक्खपरावत्ते कदे उवसंतवेयणाए जीव-पयडि-समयपत्थारो होदि $\left|\frac{१ १ २ २}{१ १ १ १}\right|$ । संपहि एवस्स सुत्तस्स भंगुच्चारणं करस्सामो । तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा । एवमेवस्स सुत्तस्स वि बे चेव भंगा (२) । एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेयवयणपरूवणा कदा ।

मणिदसिरि :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सिया उदिण्णाओ वेयणाओ ॥ ३३ ॥

बज्झमाणियाए वेयणाए किण्ण बहुत्तं परूविदं? ण, ववहारणयम्मि तिस्से बहुत्ताभावादो । ण ताव जीवबहुत्तेण बज्झमाणियाए बहुत्तं, जीवभेदेण तिस्से भेदवयहाराणु-

---

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति व समय; इनके एकवचन तथा जीव व समयके बहुवचनको

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	अनेक

स्थापित कर अक्षपरावर्तन करनेपर उपशांत वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति व समयका प्रस्तार

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक

होता है । अब इस सूत्रके भंगोंका उच्चारण करते हैं । यथा- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् उपशांत वेदना है । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् उपशांत वेदना है । इस प्रकार इस सूत्रके भी दो ही भंग है (२)। इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदनाके एकवचनकी प्ररूपणा की गई है ।

कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं ॥ ३३ ॥

शंका- बध्यमान वेदनाके बहुत्वकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, व्यवहारनयकी अपेक्षा उसके बहुत्वकी सम्भावना नहीं है। कारण कि जीवोंके बहुत्वसे तो बध्यमान वेदनाके बहुत्वकी सम्भावना है नहीं, क्योंकि, जीवोंके भेदसे उसके भेदका व्यवहार नहीं पाया जाता । प्रकृतिभेदसे भी उसका भेद सम्भव नहीं है, क्योंकि एक ज्ञाना-

वलंभादो । ण पयडिभेदेण भेदो, एक्किस्से णाणावरणीयपयडीए भेदववहारदंसणादो । ण समयभेदेण भेदो, बज्झमाणियाए वट्टमाणविसयाए कालबहुत्ताभावादो । तम्हा बज्झमाणियाए वेयणाए णत्थि बहुवयणमिदि घेत्तव्वं ।

मागकर्क :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संपहि उदिण्णाए वि ण जीवबहुत्तेण बहुत्तं, तहाविहववहाराभावादो । ण पयडिबहुत्तेण उदिण्णवेयणाए बहुत्तं, णिरुद्धेयपयडित्तादो । कालबहुत्तं चेव अस्सिदूण बहुवयणसुत्तभंगपरूवणा कीरदे । तं जहा– एयस्स जीवस्स एयापयडीअणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा (२) ।

सिया उवसंताओ वेयणाओ ॥ ३४ ॥

एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ । एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा (२) । संपहि दुसंजोगपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च ॥ ३५ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे ताव बज्झमाण-उदिण्णाणं $\left|\frac{1}{0}\ \frac{1}{2}\right|$ दुसंजोगसुत्तप

वरणीय प्रकृतिके भेदका व्यवहार देखा नहीं जाता । समयभेदसे भी उसका भेद नहीं हो सकता, क्योंकि, वर्तमान कालको विषय करनेवाली बध्यमान वेदनामें कालके बहुत्वकी सम्भावना ही नहीं है । इस कारण बध्यमान वेदनाके बहुवचन नहीं है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

जीवबहुत्वसे उदीर्ण वेदनाका भी बहुत्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा व्यवहार नहीं पाया जाता । प्रकृतिबहुत्वसे भी उदीर्ण वेदनाका बहुत्व असम्भव है, क्योंकि, एक ही प्रकृतिकी विवक्षा है । अतएव एक मात्र कालबहुत्वका आश्रय करके बहुवचनसूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हुए (२) ।

कथंचित् उपशान्त वेदनायें हैं ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई कथंचित् उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथंचित् उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२) । अब दोके संयोगकी प्ररूपणाके लिये आगेका सूत्र कहते हैं-

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले बध्यमान और उदीर्ण दोनोंके संयोगरूप सूत्रके

तथा भंग | १ | तेसिं जीवपयडिसमयसंबंधी | १ १ २ २ / १ १ १ १ / १ २ १ २ | पच्छा एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा✽। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवमेदस्स दुसंजोगपढमसुत्तस्स बे चेव भंगा (२)।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च ॥ ३६ ॥

एदस्स दुसंजोगविदियसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एव

प्रस्तारको

ब०	उ०
एक	एक
एक	अनेक

तथा उनके जीव, प्रकृति व समय संबंधी प्रस्तारको भी स्थापित करके

	बध्यमान		उदीर्ण			
जीव	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक

पश्चात् इस सूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार दोके संयोग रूप इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उदीर्ण (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ३६ ॥

दोके संयोग रूप इस द्वितीय सूत्रके भंग प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा,

---

✽ ताप्रतौ ' च वेयणा (ए)' इति पाठः।

मेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणाओ (२)। एवं दुसंजोगबिदियसुत्तस्स दो चेव भंगा ।

सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ॥ ३७ ॥

एदस्स बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगपढमसुत्तस्सत्थे भण्णमाणे ताव बज्झमाणाणं उवसंताणं दुसंजोगसुत्तपत्थारं | ११ / १२ | पुणो बज्झमाण-उवसंतजीव-पयडि-समयपत्थारं च ठविय | १२ | ११२२ | / | ११ | १११२ | / | ११ | १२१२ | पच्छा एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार दोके संयोग रूप द्वितीय सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ ३७ ॥

बध्यमान और उपशांत इन दोके संयोग रूप प्रथम सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले बध्यमान और उपशांत इन दोके संयोग रूप सूत्रके प्रस्तार

ब०	उप०
एक	एक
एक	अनेक

को तथा बध्यमान, उपशांत, जीव, प्रकृति और समय, इनके प्रस्तारको

	बध्यमान		उपशान्त			
जीव	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	अनेक

भी स्थापित करके पश्चात् इस सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा,

अ-आ-काप्रतिषु 'बज्झमाणियाओ', ताप्रतौ 'बज्झमाणिया (ओ)' इति पाठः ।

चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवमेत्थ दो चेव भंगा* (२)।

सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ॥ ३८ ॥

संपहि एदस्स विदियसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२)। एवं बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगपरूवणा कदा। संपहि उदिण्ण-उवसंताणं दुसंजोगजणिदवेयणापरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

सिया उदिण्णा च उवसंता च ॥ ३९ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे ताव उदिण्ण-उवसंतएग-बहुवयण |१ १| जणिद-सुत्तपत्थारं |१ १ २ २| ठविय पुणो उदिण्णO-उवसंताणं जीव-पयडि-समयएगबयणेहि

अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदना है। इस प्रकार यहाँ दो ही भंग हैं(२)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ३९ ॥

अब इस द्वितीय सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। इस प्रकार बध्यमान और उपशांत इन दोके संयोगकी प्ररूपणा की गई है। अब उदीर्ण और उपशांत इन दोके संयोगसे उत्पन्न वेदनाकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले उदीर्ण और उपशांतके एक व बहुवचनसे

उदीर्ण	उपशान्त
एक	एक
अनेक	अनेक

उत्पन्न सूत्रके प्रस्तारको स्थापित

उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
उप०	एक	अनेक	एक	अनेक

करके फिर

---

* अ-आ-काप्रतिषु 'भंगो' इति पाठः। O अ-आ-ताप्रतिषु 'उदिण्णा' इति पाठः।

जीवसमयाणं बहुवयणेहि य उप्पण्णपत्थारं च ठवेदूण $\begin{vmatrix} ११२२ & ११२२ \\ ११११ & ११११ \\ १२१२ & १२१२ \end{vmatrix}$ पच्छा भंगुप्पत्ति वत्तइस्सामो। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणं एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं बे भंगा (२) उदिण्णुवसंताणं दुसंजोगपढमसुत्तस्स।

सिया उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ ४० ॥

एदस्स विदियसुत्तस्स भंगे वत्तइस्सामो। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया उदिण्णाओ[अ] च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा (२) एदस्स सुत्तस्स।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधासागरजी महाराज

उदीर्ण व उपशांत संबंधी जीव, प्रकृति और समयके एकवचन तथा जीव व समयके बहुवचनसे उत्पन्न प्रस्तार को भी

	उदीर्ण				उपशान्त			
जीव	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अने
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

स्थापित करके पश्चात् भंगोंकी उत्पत्तिको कहते हैं। यथा– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण उपशांत वेदना है। इस प्रकार उदीर्ण और उपशांत इन दोके संयोग रूप प्रथम सूत्रके दो भंग हैं (२)।

कथंचित् उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४० ॥

इस द्वितीय सूत्रके भंगोंको कहते हैं। यथा– एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें है। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो भङ्ग हैं (२)।

अ-आ-काप्रतिषु 'उदिण्णाओ', ताप्रतौ 'उदिण्णा (ओ)' इति पाठः।

सिया उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ ४१ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स◆ भंगे वत्तइस्सामो । तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णाओ च उवसंता✿ च वेयणाओ । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवं बे भंगा (२) । एदस्स सुत्तस्स ।

सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ ४२ ॥

एदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगे वत्तइस्सामो । तं जहा एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा✱ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं बे चेव भंगा (२) । उदिण्ण✿ उवसंताणं दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स । संपहि तिसंजोगजणिदवेयणावेयणाविहाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

---

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदनायें हैं ॥ ४१ ॥

इस तृतीय सूत्रके भङ्गोंको कहते हैं । यथा- एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार इस सूत्रके दो भङ्ग हैं (२) ।

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥४२॥

इस चतुर्थ सूत्रके भङ्गोंको कहते हैं । यथा- एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें है । इस प्रकार उदीर्ण और उपशांत इन दोके संयोग रूप चतुर्थ सूत्रके दो ही भंग हैं (२) । अब तीनोंके संयोगसे उत्पन्न वेदनावेदनाके विधानकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

---

◆ क्षाप्रतौ ' एदस्स सुत्तस्स ' इति पाठः ।
✱ प्रतिषु ' समय पबद्धाओ ' इति पाठः ।
✿ ताप्रतौ ' उवसंता (ओ) ' इति पाठः ।
✿ प्रतिषु ' उदिण्णा ' इति पाठः ।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ॥ ४३ ॥

मार्गदर्शक:एदस्स तिसंजोगपहुवाणसुत्तस्स अत्थपरूवणाए **बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेगवयणेहि उदिण्ण-उवसंताणं बहुवयणेहि** $\begin{vmatrix}१११\\०२२\end{vmatrix}$ **जणिदतिसंजोगसुत्तस्स पत्थारो** $\begin{vmatrix}११११\\११२२\\१२१२\end{vmatrix}$ **बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं जीव-पयडि-समयपत्थारे च ठविय** $\begin{vmatrix}१२&११२२&११२२\\११&११११&११११\\११&१२१२&१२१२\end{vmatrix}$ **पच्छा भंगुप्पत्ति भणिस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा**

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ४३ ॥

तीनोंके संयोग रूप इस प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इनके एकवचन तथा उदीर्ण और उपशान्त, इनके बहुवचन

बध्य०	उदीर्ण	उप०
एक	एक	एक
०	अनेक	अनेक

से उत्पन्न तीनोंके संयोग रूप सूत्रके प्रस्तार

बध्य०	एक	एक	एक	एक
उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
उपशा	एक	अनेक	एक	अनेक

तथा बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त सम्बन्धी जीव प्रकृति व समयके प्रस्तारों

जीव	बध्यमान		उदीर्ण				उपशान्त		
	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक			
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक			
समय	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक			

उपशान्त

एक	एक	अनेक	अनेक
एक	एक	एक	एक
एक	अनेक	एक	अनेक

को भी स्थापित करके पश्चात् भंगोंकी उत्पत्तिको कहते हैं। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है।

णाओ। एयमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा (२)।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ॥ ४४ ॥

एदस्स तिसंजोगविदियसुत्तस्स अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा* उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेदस्स बे चेव भंगा (२)।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ ४५ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स आलावे भणिस्सामो। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया

इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा अनेक जीवोंकी एक एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें है। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४४ ॥

तीनोंके संयोग रूप इस द्वितीय सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते है। वह इस प्रकार है–एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान, (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥४५॥

इस तृतीय सूत्रके आलापोंको कहते हैं। वे इस प्रकार हैं–एक जीवकी एक प्रकृति एक

ताप्रतौ 'अणेयाणं (पयडीणं) जीवाणमेय' इति पाठः। * प्रतिषु '-पयद्धाओ' इति पाठः।

पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी* अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयापबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा (२) ।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ ४६ ॥

एवमेदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा† उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो (१) । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं

समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समय में बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४६ ॥

इस प्रकार इस चतुर्थ सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है–एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें है। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं।

---

* ताप्रतावतोऽग्रे 'एयसमयपबद्धा उदिण्णा तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ, एवमेदस्स बे चेव भंगा २ (१) इति पाठः।

† प्रतिषु '-पबद्धाओ' इति पाठः।

तिसंजोगचउत्थसुत्तस्स वे चेव भंगा (२) । एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं एग-दु-(-ति) संजोगेहि ववहारणयमस्सिदूण णाणावरणीयवेयणावेयणविहाणं परूविदं।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ४७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स ववहारणयमस्सिदूण वेयणावेयणविहाणं परूविदं तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं; विसेसाभावादो ।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ॥४८॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेयवयण-बहुवयणाणि अवट्ठाविय दुविय $\left|\begin{matrix}१\\१\\२\end{matrix}\right|\left|\begin{matrix}१\\१\\०\end{matrix}\right|$ पुणो एत्थ अक्खपरावत्तं[1] करिय जणिद पत्थारं च ठवेदूण $\left|\begin{matrix}१\\१\\१\end{matrix}\right|\left|\begin{matrix}२\\१\\१\end{matrix}\right|$ अत्थ परूवणं कस्सामो। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झ-

इस प्रकार तीनोंके संयोग रूप चतुर्थ सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२) । इस प्रकार व्यवहार नयका आश्रय करके बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इनके एक, दो (और तीनोंके) संयोगसे ज्ञानावरणीयकी वेदनाके विधानकी प्ररूपणा की गई है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनाविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ४७ ॥

जिस प्रकार व्यवहारनयका आश्रय करके ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदनाके विधानकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाके विधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है ॥४८॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय इनके एक वचन तथा

	जीव	प्रकृति	समय
जीवके बहुवचन	एक	एक	एक
	अनेक	०	०

को स्थापित करके फिर यहाँ अक्षपरावर्तन करके उत्पन्न हुए प्रस्तार

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

को स्थापित करके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है–

एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है। इस प्रकार एक भङ्ग

(१) ताप्रतौ 'परावत्ति' इति पाठः ।

माणिया वेयणा। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमय-पबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा (२)।

सिया उदिण्णा वेयणा ॥ ४९ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणेहि जीवबहुवयणेण च

$\left|\begin{matrix}१\\१\\२\end{matrix}\right|\left|\begin{matrix}१\\१\\०\end{matrix}\right|$ उप्पाइदपत्थारो ठवेदव्वो $\left|\begin{matrix}१२\\११\\११\end{matrix}\right|$ [ए]। एसो संगहणओ तिण्णि वि काले काल-सामण्णेण संगहिदूण गेण्हदि त्ति कालस्स बहुवयणं णेच्छदि। जीवेसु वि जीवसामण्णेण संगहिदेसु [ए] बहुत्तं णत्थि त्ति जीवबहुवयणं किण्णावणिज्जदे? ण [*], संगहणयस्स सुद्धस्स विसए अप्पिदे जीवबहुत्ताभावो होदि चेव, किंतु असुद्धसंगहणओ अप्पिदो त्ति कट्टु ण जीवबहुत्तं विरुज्झदे। संपहि एवं ठविय एदस्स अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा-

हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२)।

कथंचित् उदीर्ण वेदना है ॥ ४९ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन और जीवके बहुवचन

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	०

से उत्पन्न कराये गये प्रस्तारको स्थापित करना चाहिये-

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

चूंकि यह संग्रह नय तीनों ही कालोंको काल सामान्यसे संगृहीत करके ग्रहण करता है, अतएव वह कालके बहुवचनको स्वीकार नहीं करता।

शंका- जीव सामान्यसे जीवोंके भी संगृहीत होनेपर चूंकि उनका भी बहुवचन सम्भव नहीं है, अतएव जीवोंके बहुवचनको कम क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि, यद्यपि शुद्ध संग्रहनयके विषयकी प्रधानता होनेपर जीवबहुत्वका अभाव होता ही है; किन्तु यहाँ चूंकि अशुद्ध संग्रहनय प्रधान है, अतः जीवबहुत्व विरुद्ध नहीं है

[ए] प्रतिषु $\left|\begin{matrix}१२\\१२\\१२\end{matrix}\right|$ एवंविधोऽत्र प्रस्तारो लभ्यते। [ए] अ-आ-काप्रतिषु 'संगहिदेसु' इति पाठः। [*] ताप्रतौ 'ण' इत्येतस्य स्थाने 'एवं' इत्येतत्पदमुपलभ्यते।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा। एवं बे भंगा (२) उदिण्णेगवयणसुत्तस्स।

सिया उवसंता वेयणा ॥ ५० ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणेहि जीवबहुवयणेण च $\left|\begin{matrix}१\\१\\२\end{matrix}\right|\left|\begin{matrix}१\\१\\०\end{matrix}\right|$ जणिदपत्थारं $\left|\begin{matrix}१२\\११\\११\end{matrix}\right|$ ठविय एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा-एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा। एवमेगो भंगो (१)। अधवा अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा (२)।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च ॥ ५१ ॥

एदस्स दुसंजोगपढमसुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोग-

---

अब इस प्रकारसे (प्रस्तारको) स्थापित करके इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है-एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार उदीर्ण वेदना सम्बन्धी एकवचन सूत्रके दो भङ्ग हैं (२)।

कथंचित् उपशान्त वेदना है ॥ ५० ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति व समय, इनके एकवचन तथा जीवके बहुवचन से उत्पन्न हुए प्रस्तार

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	०

को स्थापित करके

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

इस सूत्रके भङ्गोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है-एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है ॥ ५१ ॥

दोके संयोग रूप इस प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान व उदीर्ण इन दोके

पत्थारं | १ / १ | ◎ तेसिं चेव जीव-पयडि-समयपत्थारं च ठविय | १२ / ११ / ११ | १२ / ११ / ११ | पच्छा परूवणा कीरदे। तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवमेगो भंगो (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स दो चेव भंगा होंति (२)।

सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ॥ ५२ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगपत्थारं | १ / १ | तेसिं

संयोगसे उत्पन्न प्रस्तार | बध्य० | एक / उदीर्ण | एक | को तथा उनसे ही सम्बन्ध रखनेवाले जीव, प्रकृति और

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

समय, इनके प्रस्तार–

	बध्यमान		उदीर्ण	
जीव	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक

को भी स्थापित करके पश्चात् यह प्ररूपणा की जाती है। यथा–एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग होते हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है ॥ ५२ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान और उपशान्त इन दोके संयोग रूप प्रस्तार | ब० / उप० | १ / १ | को तथा उन्हींसे सम्बन्ध रखनेवाले जीव, प्रकृति व समय इनके प्रस्तारको भी स्थापित

◎ आ-काप्रत्योः | १ / २ |, ताप्रतौ | २ / १ | एवंविधोऽत्र प्रस्तारः।

चेव (जीव-) पयडि-समयपत्थारं च ठविय | १२ | १२ | पच्छा सुत्तालावो वुच्चदे ।
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
| ११ | ११ |
| ११ | ११ |

तं जहा– एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा । एवमेगा उच्चारणा (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स दो चेव उच्चारणाओ (२)।

सिया उदिण्णा च उवसंता च ॥ ५३ ॥

एत्थ वि पुव्वं व उदिण्णुवसंतदुसंजोगपत्थारं | १ | १ | तेसिं चेव जीव-पयडि-समय-
पत्थारं च ठविय | १२ | १२ | ११ | ११ | ११ | ११ | अत्थो वुच्चदे। तं जहा–एयस्स जीवस्स एया पयडी

	बध्यमान		उपशान्त	
जीव	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक

करके पश्चात् सूत्रके आलापको कहते हैं। वह इस प्रकार है–एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक उच्चारणा हुई (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रकी दो ही उच्चारणायें हैं (२)।

कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ५३ ॥

यहाँ भी पहिलेके समान उदीर्ण और उपशान्त, इन दोके संयोग रूप प्रस्तार | उ० | १ | उप० | १ | होता तथा उन्हींसे
सम्बन्ध रखनेवाले जीव, प्रकृति और समय, इनके प्रस्तार को

	उदीर्ण		उपशान्त	
जीव	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेया उच्चारणा (१)। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेत्थ बे चेव उच्चारणाओ (२)। संपहि तिसंजोगजणिदवेयणवेयणविहाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ॥ ५४ ॥

एवस्स अत्थे भण्णमाणे तिसंजोगसुत्तपत्थारं $\left|\begin{matrix}१\\१\\१\end{matrix}\right|$ तेसिं चेव (जीव-)पयडी समयपत्थारे च ठविय $\left|\begin{matrix}१२&१२&१२\\११&११&११\\११&११&११\end{matrix}\right|$ अत्थो वुच्चदे। तं जहा- एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झ-

---

भी स्थापित करके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदना है। इस प्रकार एक उच्चारणा हुई (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदना है। इस प्रकार यहाँ दो ही उच्चारणायें हैं (२)। अब तीनोंके संयोगसे उत्पन्न वेदनाके विधानकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ५४ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय तीनोंके संयोग रूप सूत्रके प्रस्तार $\left|\begin{matrix}\text{ब० }१\\\text{उ० }१\\\text{उप. }१\end{matrix}\right|$ को तथा

उन्हींसे संबद्ध (जीव,) प्रकृति और समयके प्रस्तार

जीव	बध्यमान		उदीर्ण		उपशांत	
	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक	एक	एक

को भी स्थापित करके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदना है।

माणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा । एवमेगो भंगो (१) । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा । एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं तिसंजोगम्मि दो चेव भंगा (२) ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५५ ॥

जहा संगहणयमस्सिदूण णाणावरणीयवेयणावेयणाविहाणं परूविदं तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महाराज

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा उदिण्णफलपत्तविवागा वेयणा ॥५६॥

उदीर्णस्य फलं उदीर्णफलम्, तत्प्राप्तो विपाको यस्यां सा उदीर्णफलप्राप्तविपाका वेदना भवति; नापरा* । जो कम्मक्खंधो जम्हि समए अण्णाणमुप्पाएदि सो तम्हि चेव समए णाणावरणीयवेयणा होदि, ण उत्तरखणे; विणट्ठकम्मपज्जायत्तादो । ण पुव्वक्खणे वि, तस्स अण्णाणजणणसत्तीए अभावादो । ण च वेयणाए अकारणं वेयणा होदि, अव्ववत्थापसंगादो । तम्हा बज्झमाण-उवसंतकम्माणि वेयणा ण होंति, उदिण्णं चेव वेयणा होदि त्ति भणिदं होदि ।

इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशांत; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत वेदना है । इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशांत इन तीनोंके संयोगमें दो ही भंग होते हैं (२) ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें कथन करना चाहिये ॥ ५५ ॥

जिस प्रकार संग्रह नयका आश्रय करके ज्ञानावरणीय कर्मके वेदनावेदनाविधानकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनावेदनाविधानकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदना उदीर्ण फलको प्राप्त-विपाकवाली वेदना है ॥ ५६ ॥

उदीर्णका फल उदीर्णफल, उसको प्राप्त है विपाक जिसमें वह उदीर्णफलविपाक वेदना है; इतर नहीं है । अर्थात् जो कर्मस्कन्ध जिस समयमें अज्ञानको उत्पन्न कराता है उसी समयमें ही वह ज्ञानावरणीयकी वेदना रूप होता है, न कि उत्तर क्षणमें; क्योंकि, उत्तर क्षणमें उसकी कर्म रूप पर्याय नष्ट हो जाती है । पूर्व क्षणमें भी उक्त कर्मस्कंध ज्ञानावरणीयकी वेदना रूप नहीं होता, क्योंकि, उस समय उसमें अज्ञानको उत्पन्न करनेकी शक्तिका अभाव है । और जो वेदनाका कारण ही नहीं है वह वेदना नहीं होता है, क्योंकि वैसा होनेपर अव्यवस्थाका प्रसंग आता है । इस कारण बध्यमान व उपशांत कर्म वेदना नहीं होते हैं, किंतु उदीर्ण कर्म ही वेदना होता है; यह सूत्रका अभिप्राय है ।

* प्रतिषु ' उदिण्णा- ' इति पाठः । * ताप्रतौ '-प्राप्तविपाकवेदना परा ' इति पाठः ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूविदं तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ ५८ ॥

कुदो ? तस्स विसए दव्वाभावादो । णाणावरणीय-वेयणासद्दाणं भिण्णत्थाणं भिण्णसरूवाणं समासाभावादो वा पुधभूदेसु अपुधभूदेसु च तस्सेदमिदि संबंधाभावादो वा तिण्णं सद्दणयाणमवत्तव्वं ।

एवं वेयणावेयणाविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ ५७ ॥

जिस प्रकार ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षासे ज्ञानावरणीयके सम्बन्धमें प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें भी प्ररूपणा करना चाहिये ।

शब्द नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अवक्तव्य है ॥ ५८ ॥

इसका कारण यह है कि शब्द नयके विषयमें द्रव्यका अभाव है । अथवा, ज्ञानावरणीय और वेदना इन भिन्न अर्थ व स्वरूपवाले दोनों शब्दोंका समास न हो सकनेसे, अथवा पृथग्भूत और अपृथग्भूत उनमें ' यह उसका है ' इस प्रकारका सम्बन्ध न बन सकनेसे भी तीनों शब्द नयोंकी अपेक्षासे वह अवक्तव्य है ।

इस प्रकार वेदनावेदनाविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

वेयणागदिविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणागदिविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं । वेदनायाः गतिर्गमनं विधीयते प्ररूप्यते अनेनेति वेदनागतिविधानम् । कधं कम्माणं जीवपदेसेसु समवेदाणं गमणं जुज्जदे ? ण एस दोसो, जीवपदेसेसु जोगवसेण संचारमाणेसु तदपुधभूदाणं कम्मक्खंधाणं पि संचरणं पडि विरोहाभावादो । किमट्ठं वेदणागइविहाणं वुच्चदे ? जदि कम्मपदेसा ट्ठिदा चेव होंति तो जीवेण वेसंतरगदेण सिद्धसमाणेण होदव्वं । कुदो? सयलकम्माभावादो। ण ताव पुव्वसंचिदकम्माणि अत्थि, तेसिं पुव्वपदेसे थिरसरूवेण अवट्ठिदाणमेत्थ आगमणाभावादो । ण वट्टमाणकाले वि कम्मसंचओ अत्थि, मिच्छत्ताविपच्चयाणं कम्मेहि सह ट्ठिदाणमेत्थ संभवाभावादो त्ति । ण कम्मक्खंधाणमणवट्ठाणं पि जुज्जदे, सव्वजीवाणं मुत्तिप्पसंगादो । तं जहा ण ताव अप्पिदबिदियसमए कम्माणि अत्थि, अवट्ठाणाभावेण णिम्मूलदो विणट्ठत्तादो । ण उप्पण्णपढमसमए वि फलं देंति, बज्झमाणसमए कम्माणं विवागाभावादो । भावे वा कम्म कम्मफलाणमेगसमए चेव संभवो

वेदनागतिविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है । वेदनाकी गति अर्थात् गमनकी इसके द्वारा प्ररूपणा की जाती है अतएव वह वेदनागतिविधान कहलाता है ।

शंका- जीवप्रदेशोंमें समवायको प्राप्त हुए कर्मोंका गमन कैसे सम्भव है ।

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, योगके कारण जीवप्रदेशोंका संचरण होनेपर उनसे अपृथग्भूत कर्मस्कन्धोंके भी संचारमें कोई विरोध नहीं आता ।

शंका- वेदनागतिविधान अनुयोगद्वार किसलिये कहा जा रहा है ?

समाधान- यदि कर्मप्रदेश स्थित ही हों तो देशान्तरको प्राप्त हुए जीवको सिद्ध जीवके समान हो जाना चाहिए, क्योंकि, उस समय उसके समस्त कर्मोंका अभाव है । यह कहना कि उसके पूर्वसंचित कर्म विद्यमान हैं, ठीक नहीं है; क्योंकि, वे पूर्व स्थानमें ही स्थिर रूपसे अवस्थित हैं, उनका यहां देशान्तरमें आना असम्भव है । वर्तमान कालमें भी उसके कर्मोंका संचय नहीं है, क्योंकि, कर्मोंके साथ स्थित मिथ्यात्वादिक प्रत्ययोंकी यहां सम्भावना नहीं है । कर्मस्कन्धोंका अनवस्थान स्वीकार करना भी योग्य नहीं है, क्योंकि, वैसा माननेपर सब जीवोंकी मुक्तिका प्रसंग आता है । यथा विवक्षित द्वितीय समयमें कर्मोंका अस्तित्व नहीं है, क्योंकि, अवस्थानके न होनेसे उनका निर्मूल नाश हो गया है । उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें वे फल नहीं देते हैं, क्योंकि, बन्ध होनेके समयमें कर्मोंका फल देना असम्भव है । अथवा, यदि बन्ध समयमें फलका देना स्वीकार किया जाय तो फिर कर्म और कर्मफल इन दोनोंकी एक समयमें ही

होदूण विदियसमए बंधसंताभावो होज्ज, तत्थ बंधकारणमिच्छत्तादि कम्मफलाणमभावादो। एवं च संते तत्थ णिव्वुइए सव्वजीवविसयाए होदव्वं। ण च एवं, तहाणुवलंभादो। ण चोहयपक्खो वि जुज्जदे उभयदोसाणुसंगादो त्ति पज्जवट्ठियस्स सिस्सस्स[ ] जीव-कम्माणं पारतंतियलक्खणसंबंधजाणावणट्ठं जीवपदेसपरिफंदहेदू चेव जोगो त्ति जाणावणट्ठं च वेयणागइविहाणं परूविज्जदे।

णेगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीयवेयणा सिया अवट्ठिदा। २।

राग-दोस-कसाएहि वेयणाहि वा भएण अद्धाणजणिदपरिस्समेण वा जीवपदेसेसु अद्दट्ठिदजलं[ ] व संचरंतेसु तत्थ समवेदकम्मपदेसाणं पि संचरणुवलंभादो। जीवपदेसेसु पुण कम्मपदेसा ट्ठिदा चेव, पुव्विल्लवेसं मोत्तूण देसंतरे ट्ठिदजीवपदेसेसु समवेदकम्मक्खंधुवलंभादो। कुदो एदमुवलब्भदे? सियासद्दुच्चारणण्णहाणुववत्तीदो, देसे इव जीवपदेसेसु वि अट्ठिदत्ते अब्भुवगम्ममाणे पुव्वुत्तदोसप्पसंगादो च। अट्ठण्णं मज्झिमजीवपदेसाणं संकोचो विकोचो वा णत्थि त्ति तत्थ ट्ठिदकम्मपदेसाणं पि अट्ठिदत्तं णत्थि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सम्भावना होकर द्वितीय समयमें बन्ध और सत्त्वका अभाव हो जाना चाहिये, क्योंकि, दूसरे समयमें बंधके कारण मिथ्यात्वादिका तथा कर्मफलका अभाव है। और ऐसा होनेपर उस समय सब जीवोंकी मुक्ति हो जानी चाहिये। परंतु ऐसा है नहीं, क्योंकि वैसा पाया नहीं जाता। यदि उभय पक्षको स्वीकार किया जाय तो वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर उभय पक्षोंमें दिये गये दोषोंका प्रसंग आता है। इस प्रकारसे पर्यायदृष्टिवाले शिष्यके लिये जीव व कर्मके पारतन्त्र्य स्वरूप सम्बन्धको बतलानेके लिये तथा जीवप्रदेशोंके परिस्पन्दका हेतु योग ही है इस बातको भी बतलानेके लिये 'वेदनागतिविधान' की प्ररूपणा की जा रही है।

नैगम, व्यवहार और संग्रह नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् अवस्थित है ॥ २ ॥

राग, द्वेष और कषायसे; अथवा, वेदनाओंसे, भयसे अथवा अध्वानसे उत्पन्न परिश्रमसे मेघोंमें स्थित जलके समान जीवप्रदेशोंका संचार होनेपर उनमें समवायको प्राप्त कर्मप्रदेशोंका भी संचार पाया जाता है। परन्तु जीवप्रदेशोंमें कर्मप्रदेश स्थित ही रहते हैं, क्योंकि, जीवप्रदेशोंके पूर्वके देशको छोड़कर देशान्तरमें जाकर स्थित होनेपर उनमें समवायको प्राप्त कर्मस्कन्ध पाये जाते हैं।

शंका— यह अर्थ किस प्रमाणसे उपलब्ध होता है ?

समाधान— एक तो ऐसा अर्थ ग्रहण किये बिना 'स्यात्' शब्दका उच्चारण घटित नहीं होता। दूसरे देशके समान जीवप्रदेशोंमें भी कर्मप्रदेशोंको अस्थित स्वीकार करनेपर पूर्वोक्त दोषका प्रसंग आता है। इससे जाना जाता है कि जीव प्रदेशोंके देशान्तरको प्राप्त होनेपर उनमें कर्म प्रदेश स्थित ही रहते है।

शंका— यतः जीवके आठ मध्य प्रदेशोंका संकोच अथवा विस्तार नहीं होता अतः उनमें

[ ] अ-आ-काप्रतिषु 'सिस्सस्स' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते। [ ] प्रतिषु 'जीवपदेसेसुअद्दट्ठिद जलं' इति पाठः।

त्ति । तदो सव्वे जीवपदेसा कम्हि वि काले अट्ठिदा होंति त्ति सुत्तवयणं ण घडदे ? ण एस दोसो, ते अट्ठमज्झिमजीवपदेसे मोत्तूण सेसजीवपदेसे अस्सिदूण एदस्स सुत्तस्स पवुत्तीदो । कधं पुण एसो अत्थविसेसो उवलब्भदे ? सियासद्दप्पओआवो ।

सिया ट्ठिदाट्ठिदा ॥ ३ ॥

वाहि-वेयणा सज्झसादिकिलेसविरहियस्स छदुमत्थस्स जीवपदेसाणं केसिं पि चलणाभावादो तत्थ ट्ठिदकम्मक्खंधा वि ट्ठिदा चेव होंति, तत्थेव केसिं जीवपदेसाणं संचालुवलंभादो तत्थ ट्ठिदकम्मक्खंधा वि संचलंति, तेण ते अट्ठिदा त्ति भण्णंति । तेसिं दोण्णं समुदायो वेयणा त्ति एया होदि । तेण ठिदाट्ठिदा त्ति दुस्सहावा भण्णदे । एत्थ जे अट्ठिदा* तेसिं कम्मबंधो होदु णाम, सजोगत्तादो । जे पुण ट्ठिदा तेसिं जीवपदेसाणं णत्थि कम्मबंधो, जोगाभावादो । सो वि कुदो णव्वदे ? जीवपदेसाणं परिप्फंदाभावादो । ण च परिप्फंदविरहियजीवपदेसेसु जोगो अत्थि, सिद्धाणं पि सजोगत्तावत्तीदो☼ त्ति ?

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्थित कर्मप्रदेशोंका भी अस्थितपना नहीं बनता और इसलिए सब जीवप्रदेश किसी भी समय अस्थित होते हैं, यह सूत्रवचन घटित नहीं होता ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जीवके उन आठ मध्य प्रदेशोंको छोड़कर शेष जीवप्रदेशोंका आश्रय करके इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है ।

शंका-- इस अर्थविशेषकी उपलब्धि किस प्रकारसे होती है ?

समाधान-- उसकी उपलब्धि 'स्यात्' शब्दके प्रयोगसे होती है ।

उक्त वेदना कथंचित् स्थित-अस्थित है ॥ ३ ॥

व्याधि, वेदना एवं भय आदिक क्लेशोंसे रहित छद्मस्थके किन्हीं जीवप्रदेशोंका चूंकि संचार नहीं होता अतएव उनमें स्थित कर्मप्रदेश भी स्थित ही होते हैं । तथा उसी छद्मस्थके किन्हीं जीवप्रदेशोंका चूंकि संचार पाया जाता है, अतएव उनमें स्थित कर्मप्रदेश भी संचारको प्राप्त होते हैं, इसलिये वे अस्थित कहे जाते हैं । यतः उन दोनोंके समुदाय स्वरूप वेदना एक है अतः वह स्थितअस्थित इन दो स्वभाववाली कही जाती है ।

शंका-- इनमें जो जीवप्रदेश अस्थित है उनके कर्मबन्ध भले ही हो, क्योंकि, वे योग सहित हैं । किन्तु जो जीवप्रदेश स्थित हैं उनके कर्मबन्धका होना सम्भव नहीं है, क्योंकि, वे योगसे रहित हैं ।

प्रतिशंका-- वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

प्रतिशंकाका समाधान-- जीवप्रदेशोंका परिस्पन्द न होनेसे ही जाना जाता है कि वे योगसे रहित है । और परिस्पन्दसे रहित जीवप्रदेशोंमें योगकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेपर सिद्ध जीवोंके भी सयोग होनेकी आपत्ति आती है ।

---

* अ-आ-काप्रतिषु 'अट्ठिदा', ताप्रतौ 'अहि (ट्ठि) दा', मप्रतौ 'लद्धिदा' इति पाठः ।

☼ ताप्रतौ 'सजोगत्ता (दो) वत्तीदो' इति पाठः ।

एत्थ परिहारो वुच्चदे - मण-वयण-कायकिरियासमुप्पत्तीए जीवस्स उवजोगो जोगो णाम[ओ]। सो च कम्मबंधस्स कारणं। ण च सो थोवेसु जीवपदेसेसु होदि, एगजीवपयत्तस्स थोवावयवेसु चेव वुत्तिविरोहादो एक्कम्हि जीवे खंडखंडेण पयत्तविरोहादो वा। तम्हा ट्ठिदेसु जीवपदेसेसु कम्मबंधो अत्थि त्ति णव्वदे। ण च जोगादो णियमेण जीवपदेसपरिप्फंदो होदि, तस्स तत्तो अणियमेण समुप्पत्तीदो। ण च एकांतेण णियमो णत्थि चेव, जदि उप्पज्जदि तो तत्तो चेव उप्पज्जदि त्ति णियमुवलंभादो। तदो ट्ठिदाणं पि जोगो अत्थि त्ति कम्मबंधभूयमिच्छियव्वं।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ४ ॥

जहा णाणावरणीयस्स दुविहा गदिविहाणपरूवणा कदा तहा एदेसिं तिण्णं पि कम्माणं कायव्वं, छदुमत्थेसु चेव वट्टमाणत्तणेण भेदाभावादो।

वेयणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ॥ ५ ॥

कुदो ? अजोगिकेवलिम्मि णट्ठासेसजोगम्मि जीवपदेसाणं संकोचविकोचाभावेण अवट्ठाणुवलंभादो। आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सिया अट्ठिदा ॥ ६ ॥

शंकाका समाधान- यहां उपर्युक्त शंकाका परिहार कहते हैं। मन, वचन एवं काय संबंधी क्रियाकी उत्पत्तिमें जो जीवका उपयोग होता है वह योग है और वह कर्मबन्धका कारण है। परन्तु वह थोड़ेसे जीवप्रदेशोंमें नहीं हो सकता, क्योंकि, एक जीवमें प्रवृत्त हुए उक्त योगकी थोड़ेसे ही अवयवोंमें प्रवृत्ति माननेमें विरोध आता है, अथवा एक जीवमें उसके खण्ड-खण्ड रूपसे प्रवृत्त होनेमें विरोध आता है। इसलिये स्थित जीवप्रदेशोंमें कर्मबन्ध होता है, यह जाना जाता है। दूसरे योगसे जीवप्रदेशोंमें नियमसे परिस्पन्द होता है, ऐसा भी नहीं है; क्योंकि योगसे अनियमसे उसकी उत्पत्ति होती है। तथा एकान्ततः नियम नहीं है, ऐसी भी बात नहीं है, क्योंकि, यदि जीवप्रदेशोंमें परिस्पन्द उत्पन्न होता है तो वह योगसे ही उत्पन्न होता है, ऐसा नियम पाया जाता है। इस कारण स्थित जीवप्रदेशोंमें भी योगके होनेसे कर्मबन्धको स्वीकार करना चाहिये।

See पु ४ पृ ४३०

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ॥ ४ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके गतिविधानकी दो प्रकारकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इन तीन कर्मोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, ये कर्म छद्मस्थोंके ही विद्यमान रहते हैं इसलिए इनकी प्ररूपणामें ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणासे कोई भेद नहीं है।

वेदनीय कर्मकी वेदना कथंचित् स्थित है ॥ ५ ॥

इसका कारण यह है कि अयोगकेवली जिनमें समस्त योगोंके नष्ट हो जानेसे जीवप्रदेशोंका संकोच व विस्तार नहीं होता है, अतएव वे वहां अवस्थित पाये जाते हैं।

कथंचित् वह अस्थित है ॥ ६ ॥

[ओ] ताप्रतौ 'उवजोगो णाम' इति पाठः।

सुगममेवं; णाणावरणीयपरूवणाए चेव अवगयसरूवत्तादो ।

सिया ट्ठिदाट्ठिदा ॥ ७ ॥

एदस्स वि णाणावरणीयभंगो ।

एवमाउव-णामा-गोदाणं ॥ ८ ॥

जहा वेयणीयस्स परूविदं तहा एदेसिं तिण्णं कम्माणं वत्तव्वं; भेदाभावादो ।

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ॥ ९ ॥

छदुमत्थेसु सजोगेसु कधं सव्वेसिं जीवपदेसाणं ट्ठिदत्तं होदि उजुसुदणए ? को एवं भणदि* उजुसुदणओ सव्वेसिं जीवपदेसाणं कम्हि वि काले ट्ठिदत्तं चेव इच्छदि त्ति । किंतु जे ट्ठिदा ते ट्ठिदा चेव, ण अट्ठिदा; ठिदेसु अट्ठिदत्तविरोहादो त्ति । एस उजुसुदणयाहिप्पाओ ।

सिया अट्ठिदा ॥ १० ॥

जे अट्ठिदजीवपदेसा ते अट्ठिदा चेव ण तत्थ ट्ठिदभआ* ट्ठिदाट्ठिदाणमेगत्थ एग-समए अवट्ठाणाभावादो । तेण कारणेण उजुसुदणए दुसंजोगभंगो णत्थि त्ति अवणिदो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, ज्ञानावरणीय कर्मकी प्ररूपणासे ही उसके स्वरूपका ज्ञान हो जाता है ।

कथंचित् वह स्थित-अस्थित है ॥ ७ ॥

इसकी भी प्ररूपणा ज्ञानावरणीयके ही समान है ।

इसी प्रकार आयु; नाम और गोत्र कर्मके सम्बन्धमें जानना चाहिये ॥ ८ ॥

जिस प्रकार वेदनीय कर्मके गतिविधानकी प्ररूपणा की गई उसी प्रकार इन तीन कर्मोंके गतिविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है ।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् स्थित है ॥ ९ ॥

शंका- योगसहित छद्मस्थ जीवोंमें ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा सभी जीवप्रदेश स्थित कैसे हो सकते हैं ?

समाधान– ऐसा कौन कहता है कि ऋजुसूत्र नय सब जीवप्रदेशोंको किसी भी कालमें स्थित ही स्वीकार करता है ? किन्तु जो जीवप्रदेश स्थित हैं वे स्थित ही रहते हैं, उस कालमें वे अस्थित नहीं हो सकते । क्योंकि, स्थित जीवप्रदेशोंके अस्थित होनेका विरोध है । यह ऋजुसूत्र नयका अभिप्राय है ।

कथंचित् वह अस्थित है ॥ १० ॥

जो जीवप्रदेश अस्थित हैं वे अस्थित ही रहते हैं; न कि स्थित; क्योंकि, इस नयकी अपेक्षा स्थित-अस्थित जीवप्रदेशोंका एक जगह एक समयमें अवस्थान नहीं हो सकता । इस कारण ऋजु-सूत्र नयकी अपेक्षा द्विसंयोग भंग नहीं है, अतः वह परिगणित नहीं किया गया है । पर इससे

---

* अ-आ-काप्रतिषु ' भणादि ' इति पाठः । * अ-आ-काप्रतिषु ' ट्ठिदभआ ', ताप्रतौ ' ट्ठिदभआ (अ)' इति पाठः ।

ण पुव्विल्लणए अस्सिदूण जा परूवणा कदा तिस्से असच्चत्तं, सियासद्देण तिस्से वि सच्चत्तपरूवणादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ११ ॥

उजुसुदणयमस्सिदूण जहा णाणावरणीयस्स परूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा, ठिदभावेण♣ अट्ठिदभावेण च विसेसाभावादो ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ १२ ॥

कुदो ? तस्स विसए वव्वाभावादो तस्स विसये ✲ट्ठिदाट्ठिदाणमभावादो वा । तं जहा– ण ताव ट्ठिदमत्थि, सव्वपयत्थाणमणिच्चत्तब्भुवगमादो । ण अट्ठिदभूयं पि, असंते✲ पडिसेहाणवपत्तीदो त्ति ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं वेयणागदिविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

पूर्वोक्त नयोंका आश्रय करके जो प्ररूपणा की गई है वह असत्य नहीं ठहरती, क्योंकि, 'स्यात्' शब्दके द्वारा उसकी भी सत्यता प्ररूपित की गई है ।

इसी प्रकार सात कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ॥ ११ ॥

ऋजुसूत्र नयका आश्रय करके जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, स्थित रूप व अस्थितरूपसे इसमें उससे कोई विशेषता नहीं है ।

शब्द नयकी अपेक्षा वह अवक्तव्य है ॥ १२ ॥

क्योंकि द्रव्य शब्द नयका विषय नहीं है, अथवा स्थित व अस्थित शब्दनयके विषय नहीं हैं । स्पष्टीकरण इस प्रकार है– उक्त नयका विषय स्थित तो बनता नहीं है, क्योंकि, इस नयमें समस्त पदों व उनके अर्थोंको अनित्य स्वीकार किया गया है । अस्थित स्वरूप भी नहीं बनता क्योंकि, असत्का प्रतिषेध बन नहीं सकता ।

इस प्रकार वेदनागतिविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

♣ अ-आकाप्रतिषु ' ठिदाभावेण ' इति पाठः । ✲ अ-आ-का-ताप्रतिषु ' तस्स वि ट्ठिदाट्ठिदाण ' इति पाठः । ✲ अ-आ-काप्रतिषु ' असंखे ' इति पाठः ।

वेयणाअणंतरविहाणाणुओगद्दारं

मुनिविधिसागर जी महाराज

वेयणाअणंतरविहाणे त्ति ॥ १ ॥

अहियारसंभालणसुत्तमेदं । किमट्ठमेसो अहियारो वुच्चदे ? पुव्वं वेयणावेयणाविहाणे बज्झमाणं पि कम्मं वेयणा, उदिण्णं पि उवसंतं पि वेयणा त्ति परूविदं तत्थ जं तं बज्झमाणकम्मं तं किं बज्झमाणस्स चेव वपच्चिदूण फलं देदि आहो विदियादिसमएसु फलं देदि त्ति पुच्छिदे एवं फलं देदि त्ति जाणावणट्ठं वेयणाअणंतरविहाणमागदं । तत्थ बंधो दुविहो-अणंतरबंधो परंपरबंधो चेदि । को अणंतरबंधो णाम ? कम्मइयवग्गणाए ट्ठिदपोग्गलक्खंधा✿ मिच्छत्तादिपच्चएहि कम्मभावेण परिणदपढमसमए अणंतरबंधो✿ । कधमेदेसिमणंतरबंधत्तं ? कम्मइयवग्गणपज्जयपरिच्चाणंतरसमए चेव कम्मपज्जएण परिणयत्तादो । को परंपरबंधो णाम ? बंधविदियसमयप्पहुडि कम्मपोग्गलक्खंधाणं जीवपदेसाणं च जो बंधो सो परंपरबंधो णाम । कधं बंधस्स परंपरा ? पढमसमए

वेदना अनन्तरविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है ।

शंका – इस अधिकारकी प्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान – पहिले वेदनावेदनाविधान अनुयोगद्वारमें बध्यमान कर्म भी वेदना है, उदीर्ण और उपशांत कर्म भी वेदना है, यह प्ररूपणा की जा चुकी है । उनमें जो बध्यमान कर्म है वह क्या बँधनेके समयमें ही परिपाकको प्राप्त होकर फल देता है, अथवा द्वितीयादिक समयोंमें फल देता है; ऐसा पूछे जानेपर 'वह इस प्रकारसे फल देता है' यह ज्ञात करानेके लिये वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वारका अवतार हुआ है ।

बन्ध दो प्रकारका है– अनन्तरबन्ध और परम्परबन्ध ।

[शंका – अनन्तरबन्ध किसे कहते हैं ?

समाधान – कार्मण वर्गणा स्वरूपसे स्थित पुद्गलस्कन्धोंका मिथ्यात्वादिकप्रत्ययोंके द्वारा कर्म स्वरूपसे परिणत होनेके प्रथम समयमें जो बन्ध होता है उसे अनन्तरबन्ध कहते हैं ।

शंका – इन पुद्गलस्कधोंकी अनन्तरबन्ध सज्ञा कैसे है ?

समाधान – चूंकि वे कार्मण वर्गणा रूप पर्यायको छोडनेके अनन्तर समयमें ही कर्म रूप पर्यायसे परिणत हुए है, अतः उनकी अनन्तरबन्ध संज्ञा है ।

[शंका – परम्परबन्ध किसे कहते हैं ?

समाधान – बन्ध होनेके द्वितीय समयसे लेकर कर्मरूप पुद्गलस्कन्धों और जीवप्रदेशोंका जो बन्ध होता है उसे परम्परबन्ध कहते हैं ।]

✿ ताप्रतौ 'पोग्गलखंधा (ण)' इति पाठः । ✿ अ-आ-काप्रतिषु 'समए अणंतरबंधो, ताप्रतौ समए (बंधो) अणंतरबंधो इति पाठः ।

बंधो जादो, विदियसमए वि तेसिं पोग्गलाणं बंधो चेव, तदियसमये वि बंधो चेव, एवं बंधस्स णिरंतरभावो बंधपरंपरा णाम । ताए बंधा परम्परबंधा त्ति वत्तव्वा ।

णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा* ॥ २ ॥

कुदो ? बंधपढमसमए चेव जीवस्स परतंतभावुप्पायणेण वेयणाभावुवलंभादो उदिण्णदव्वादो बज्झमाणदव्वस्स भेदाभावादो बज्झमाणदव्वस्स णाणावरणीयवेयणाभावो जुज्जदे । ण च अवत्थाभेदेण दव्वभेदो अत्थि, दव्वादो पुधभदअवत्थाणुवलंभादो ।

परंपरबंधा ॥ ३ ॥

परंपरबंधा वि णाणावरणीयवेयणा होदि । कुदो ? *बंधविदियादिसमएसु ट्ठिदकम्मक्खंधाणं उदिण्णकम्मक्खंधेहिंतो दव्वदुवारेण एयत्तुवलंभादो ।

तदुभयबंधा ॥ ४ ॥

णाणावरणीयवेयणा तदुभयबंधा वि होदि, जीवदुवारेण दोण्णं पि◆ णाणावरणीयबंधाणमेगत्तुवलंभादो । बंधोदय-संताणं वेयणाविहाणं वेयणावेयणविहाणे चेव परूविदं

शंका-- बन्धकी परम्परा कैसे सम्भव है ?

समाधान-- प्रथम समयमें बन्ध हुआ जो कर्मस्कन्ध-समूह द्वितीयादि समयोंमें भी उसी स्वरूपसे जो स्थित है, तृतीय समयमें भी बन्ध ही है, इस प्रकारसे बन्धकी निरन्तरताका नाम बन्धपरम्परा है । उस परम्परासे होनेवाले बन्धोंको परम्पराबन्ध समझना चाहिये ।

नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध है ।२।

कारण कि बन्धके प्रथम समयमें ही जीवकी परतन्त्रता उत्पन्न करानेके कारण उसमें वेदनात्व पाया जाता है । अथवा, उदीर्ण द्रव्यकी अपेक्षा बध्यमान द्रव्यमें चूंकि कोई भेद नहीं है, इसलिये इन दोनों नयोंकी अपेक्षा बध्यमान द्रव्यको ज्ञानावरणीयके वेदनास्वरूप मानना समुचित है । यदि कहा जाय कि अवस्थाभेदसे द्रव्यका भी भेद सम्भव है, तो यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, (इन नयोंकी दृष्टिमें) द्रव्यसे पृथग्भूत अवस्था नहीं पायी जाती है ।

वह परम्पराबन्ध भी है ॥ ३ ॥

ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध भी है, क्योंकि, बन्धके द्वितीयादिक समयोंमें स्थित कर्मस्कन्धोंकी उदीर्ण कर्मस्कन्धोंके प्राय द्रव्यके द्वारा एकता पायी जाती है ।

वह तदुभयबन्ध भी है ॥ ४ ॥

ज्ञानावरणीयवेदना तदुभयबंध भी है, क्योंकि, जीवके द्वारा दोनों ही ज्ञानावरणीय बंधो के एकता पायी जाती है । बन्ध, उदय और सत्त्वके वेदनाविधानकी प्ररूपणा चूंकि वेदनावेदनविधानमें ही की जा चुकी है, अतएव इन सूत्रोंका यह अर्थ नहीं है; इसलिये इनके अर्थकी

---

* ताप्रतौ ' बद्धा ' इति पाठः । ◆ अ-आ-काप्रतिषु ' वि ' इति पाठः ।
* ताप्रतौ ' बद्ध ' इति पाठः । * मुद्रित प्रतौ ' वा ' इति पाठः ।

त्ति एदेसिं♣ सुत्ताणं ण एसो अत्थो✿ त्ति एवमेदेसिमत्थपरूवणा कायव्वा। तं जहा– णाणावरणीयकम्मक्खंधा अणंताणंता णिरंतरमण्णोण्णेहि संबद्धा✤ होदूण जे ट्ठिदा ते अणंतरबंधा णाम। एदेण एगादिपरमाणूणं संबंधविरहियाणं णाणावरणभावो पडिसिद्धो दट्ठव्वो। अणंतरबंधाणं चेव णाणावरणीयभावे संपत्ते परंपरबंधा वि णाणावरणीयवेयणा होदि त्ति जाणावणट्ठं विदियसुत्तं परूविदं। अणंताणंता कम्मपोग्गलक्खंधा अण्णोण्णसंबद्धा होदूण सेसकम्मक्खंधेहि असंबद्धा जीवदुवारेण इदरेहि संबंधमुवगया परंपरबंधा णाम। एदे वि णाणावरणीयवेयणा होंति त्ति भणिदं होदि। एदे। सव्वे णाणावरणीय-कम्मपोग्गलखंधा एगजीवाहारा अण्णोण्णं समवेदा चेव होदूण णाणावरणीयवेयणा होंति त्ति एसो एयंतो णिरागरियो त्ति दट्ठव्वो। सेसं सुगमं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स दोहि पयारेहि परंपराणंतर-तदुभयबंधाणं परूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ॥ ६ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थ भण्णमाणे पुव्वं व दोहि पयारेहि अत्थो वत्तव्वो।

प्ररूपणा इस प्रकारसे करनी चाहिये। यथा– जो अनन्तानन्त ज्ञानावरणीय कर्म रूप स्कन्ध निरन्तर परस्परमें संबद्ध होकर स्थित हैं वे अनन्तरबन्ध हैं। इससे सम्बन्ध रहित एक आदि परमाणुओंको ज्ञानावरणीयत्वका प्रतिषेध किया गया समझना चाहिये। अनन्तरबन्ध स्कन्धोंको ही ज्ञानावरणीयत्व प्राप्त होनेपर परम्पराबन्ध भी ज्ञानावरणीयवेदना होती है, यह जतलानेके लिये द्वितीय सूत्र की प्ररूपणा की गई है। जो अनन्तानन्त कर्म-पुद्गलस्कन्ध परस्परमें सम्बद्ध होकर शेष कर्मस्कन्धोंसे असम्बद्ध होते हुए जीवके द्वारा इतर स्कन्धोंसे सम्बद्धको प्राप्त होते हैं वे परम्पराबन्ध कहे जाते हैं। ये भी ज्ञानावरणीयवेदना स्वरूप होते हैं, यह उसका अभिप्राय है। इससे एक जीवके आश्रित सब ज्ञानावरणीय कर्म रूप पुद्गलस्कन्ध परस्पर समवेत होकर ज्ञानावरणीयवेदना स्वरूप होते हैं, इस एकान्तका निराकरण किया गया समझना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ॥ ५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके परम्पराबन्ध, अनन्तरबन्ध और तदुभयबन्धकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके उन बन्धोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध है ॥ ६ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय पहिलेके समान दो प्रकारसे अर्थका कथन करना चाहिये।

♣ ताप्रतौ 'ति। एदेसि' इति पाठः। ✿ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-ताप्रतिषु 'अत्थि' इति पाठः। ✤ अ-आ-ताप्रतिषु 'संबंधं', काप्रतौ 'संबंधा' इति पाठः।

परंपरबंधा ॥ ७ ॥

एत्थ वि पुव्वं व दोहि पयारेहि अत्थपरूवणा कायव्वा । तदुभयबंधा णत्थि । कुदो ? एदासु चेव तिस्से अंतब्भावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ८ ॥

जहा णाणावरणीयस्स संगहणयमस्सिदूण दोहि पयारेहि अत्थपरूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा परंपरबंधा ॥ ९ ॥

अणंतरबंधा णत्थि णाणावरणीयवेयणा, परंपरबंधा चेव । कुदो? उदयमागदकम्मक्खंधादो चेव अण्णाणभावुवलंभादो । विदियत्थे अवलंबिज्जमाणे कधमेत्थ परूवणा कीरदे? वुच्चदे- एत्थ वि णाणावरणीयवेयणा* परंपरबंधा चेव जीवदुवारेणेव सव्वेसिं कम्मक्खंधाणं बंधुवलंभादो । जीवदुवारेण विणा कम्मक्खंधाणमण्णोण्णेहि बंधो उवलब्भदि त्ति चे? ण, तस्स वि अण्णोण्णबंधस्स जीवादो चेव समुप्पत्तिदंसणादो । कम्मइयवग्गणावत्थाए वि एसो अण्णोण्णबंधो उवलब्भदि त्ति चे? ण, एदस्स विसिट्ठस्स बंधस्स अणंताणंतेहि कम्मइयवग्गणक्खंधेहि णिप्फण्णस्स जीवादो चेव समुप्पत्तिदंसणादो। ण च

वह परम्पराबन्ध भी है ॥ ७ ॥

यहां भी पहिलेके ही समान दो प्रकारसे अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये । वह तदुभय बन्ध नहीं है, क्योंकि, इन दोनोंमें ही उसका अन्तर्भाव हो जाता है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ८ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरण कर्मकी संग्रहनयकी अपेक्षा दो प्रकारसे प्ररूपणा की है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध है ॥ ९ ॥

(इस नयकी अपेक्षा) ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध नहीं है, परम्पराबन्ध ही है; क्योंकि, उदयमें आये हुए कर्मस्कन्धों से ही अज्ञानभाव पाया जाता है ।

शंका - द्वितीय अर्थका अवलम्बन करनेपर यहाँ कैसे प्ररूपणा की जाती है ?

समाधान- इस शंकाका उत्तर कहते हैं, द्वितीय अर्थका अवलम्बन करने पर भी ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध ही है, क्योंकि, जीवके द्वारा ही सब कर्मस्कन्धोंका बन्ध पाया जाता है ।

शंका- जीवका आलम्बन लिये विना भी कर्मस्कन्धोंका परस्पर बन्ध पाया जाता है?

समाधान- नहीं, क्योंकि, उस परस्परबन्धकी भी उत्पत्ति जीवसे ही देखी जाती है ।

शंका- यह परस्परबन्ध कार्मण वर्गणाकी अवस्थामें भी पाया जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, अनन्तानन्त कार्मण वर्गणा रूप स्कन्धोंसे उत्पन्न इस विशिष्ट बन्धकी उत्पत्ति जीवसे ही देखी जाती है । अनन्तरबन्ध वेदना उदीर्ण होकर फलको प्राप्त हुए

---

* अ-आ-काप्रतिषु 'वेयणादो,' ताप्रतौ 'वेयणा (दो)' इति पाठः ।

अणंतरबंधा उदिण्णफलपत्तविवागा, परंपरबद्धाए उदिण्णफलपत्तविवागत्तुवलंभादो। ण च समुदयकज्जमेक्कस्स होदि, विरोहादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १० ॥

सुगममेदं ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ ११ ॥

तिण्णं सद्दणयाणं विसए दव्वाभावादो, अणंतरबंधा-परंपरबंधा-तदुभयबंधा सद्दाणं पुधभूदअत्थपरूवयाणं सद्दो * अत्थदो य समासाभावादो वा ।

॥ एवं वेयणाअणंतरविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विपाकवाली नहीं है, क्योंकि, परम्पराबद्ध वेदनामें ही उदीर्णफलप्राप्तविपाक पाया जाता है। और समुदायके द्वारा किया गया कार्य एकका नहीं हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १० ॥

यह सूत्र सुगम है।

शब्द नयकी अपेक्षा वह अवक्तव्य है ॥ ११ ॥

कारण कि एक तो तीनों शब्द नयोंका विषय द्रव्य नहीं है। दूसरे अनन्तरबन्ध, परम्परबन्ध और तदुभयबन्ध ये शब्द पृथक् पृथक् अर्थके वाचक होनेसे इनका शब्द और अर्थकी अपेक्षा समास नहीं हो सकता इसलिए वह इस नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है ।

इस प्रकार वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

* अ-आ-काप्रतिषु 'अत्थपरूवाणं', ता सद्दा ताप्रतौ 'परूवगं ण (याणं) सद्दो इति पाठः।

वेयणासण्णियासविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणासण्णियासविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं, अण्णहा अणुत्ततुल्लत्तपसंगादो ।

जो सो वेयणासण्णियासो सो दुविहो– सत्थाणवेयणासण्णियासो चेव परत्थाणवेयणासण्णियासो चेव ॥ २ ॥

एदस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा– अप्पिदेगकम्मस्स दव्व-खेत्त-काल-भावविसओ सत्थाणसण्णियासो णाम । अट्ठकम्मविसओ परत्थाणसण्णियासो णाम । सण्णियासो णाम किं ? ♣दव्व खेत्त-काल-भावेसु जहण्णुक्कस्सभेदभिण्णेसु एकम्हि णिरुद्धे☒ सेसाणि किमुक्कस्साणि किमणुक्कस्साणि किं जहण्णाणि किमजहण्णाणि वा पदाणि होंति त्ति जा परिक्खा सो सण्णियासो णाम । एवं सण्णियासो दुविहो चेव । सत्थाण-परत्थाणसंजोगेण

वेदनासंनिकर्षविधान अनुयोगद्वार अधिकारप्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है, क्योंकि, इसके बिना अनुक्तके समान होनेका प्रसंग आता है ।

जो वह वेदनासंनिकर्ष है वह दो प्रकारका है-- स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष और परस्थानवेदनासंनिकर्ष ॥ २ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं, वह इस प्रकार है-- किसी विवक्षित एक कर्मका जो द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव विषयक संनिकर्ष होता है वह स्वस्थानसंनिकर्ष कहा जाता है और आठों कर्मों विषयक संनिकर्ष परस्थानसंनिकर्ष कहलाता है ।

[शंका-- संनिकर्ष किसे कहते हैं ?

समाधान-- जघन्य व उत्कृष्ट भेदरूप द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भावोंमेंसे किसी एकको विवक्षित करके उसमें शेष पद क्या उत्कृष्ट हैं, क्या अनुत्कृष्ट हैं, क्या जघन्य हैं और क्या अजघन्य हैं, इस प्रकारकी जो परीक्षा की जाती है उसे संनिकर्ष कहते हैं ।] इस प्रकारसे संनिकर्ष दो प्रकारका ही है ।

शंका-- स्वस्थान और परस्थानके संयोग रूप भेद के साथ तीन प्रकारका संनिकर्ष क्यों नहीं होता ?

♣ अप्रतौ ' परत्थाण णाम सण्णियासो णाम किं दव्व-', आप्रतौ ' परत्थाण णाम सण्णियासो णाम किं अत्थो वुच्चदे दव्व-', काप्रतौ परत्थाणसण्णियासो णाम किं दव्व- ताप्रतौ ' परत्थाणसण्णियासो णाम । किं दव्वं-' इति पाठः । ☒ अ-आ-काप्रतिषु ' विरुद्धे ', ताप्रतौ ' वि (णि) रुद्धे ' इति पाठः ।

सह तिविहो सण्णियासो किण्ण जायदे ? ण एस दोसो, दुसंजोगस्स पादेक्कंतब्भावेण* तस्स पुधअणुवलंभादो ।

जो सो सत्थाणवेयणासण्णियासो सो दुविहो- जहण्णओ सत्थाणवेयणासण्णियासो चेव उक्कस्सओ सत्थाणवेयणासण्णियासो चेव ।३।

एवं सत्थाणवेयणसण्णियासो दुविहो चेव, जहण्णुक्कस्सेहि विणा तदियवियप्पाभावादो ।

जो सो जहण्णओ सत्थाणवेयणासण्णियासो थप्पो सो ॥ ४ ॥

किमट्ठं थप्पो कीरदे ? दोण्णमक्कमेण परूवणोवायाभावादो । उक्कस्सो किण्ण थप्पो कीरदे ? ण एस दोसो, उक्कस्ससण्णियासे अवगदे* तत्तो तदुप्पत्तीए जहण्णसण्णियासो सुहेणावगम्मदि त्ति मणेणावहारिय तस्स थप्पभावाकरणादो । पच्छाणुपुव्वी णिरुद्धा त्ति वा सो थप्पो ण कीरदे ।

जो सो उक्कस्सओ सत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो-- दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ ५ ॥

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, दोनोंके संयोगका प्रत्येकमें अन्तर्भाव होनेसे वह पृथक् नहीं पाया जाता है ।

जो वह स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष है वह दो प्रकारका है-- जघन्य स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष और उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष ॥ ३ ॥

इस प्रकारसे स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष दो प्रकारका ही है, क्योंकि, जघन्य और उत्कृष्टके सिवा तीसरा कोई भेद नहीं है ।

जो वह जघन्य स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष है उसे स्थगित किया जाता है ॥ ४ ॥

शंका-- उसे स्थगित क्यों किया जा रहा है ?

समाधान-- चूंकि दोनोंकी प्ररूपणा एक साथ नहीं की जा सकती है, अतः उसे स्थगित किया जा रहा है ।

शंका-- उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्षको स्थगित क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान-- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट संनिकर्षके परिज्ञात हो जानेपर उससे उत्पन्न होनेके कारण जघन्य संनिकर्षका ज्ञान सुखपूर्वक हो सकता है, ऐसा मनमें निश्चित करके उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्षको स्थगित नहीं किया गया है । अथवा, पश्चादानुपूर्वीकी विवक्षा होनेसे उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्षको स्थगित नहीं किया जाता है ।

जो वह उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष है वह चार प्रकारका है-- द्रव्यसे, क्षेत्रसे, कालसे और भावसे ॥ ५ ॥

---

* ताप्रतौ ' पादेक्कं तब्भावेण ' इति पाठः । * अ-ताप्रत्योः ' सण्णियासो अवगदे ', काप्रतौ ' सण्णियासो अवगम्मदे ' इति पाठः ।

एवं चउव्विहो चेव उक्कस्ससण्णियासो, दव्व खेत्त-काल-भावेहिंतो पुधभूद-उक्कस्सस्स एत्थ वेयणाए अणुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स✲ खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६ ॥

जस्स णाणावरणीयदव्ववेयणा उक्कस्सा होदि तस्स जीवस्स णाणावरणीय-खेत्तवेयणा किमुक्कस्सा चेव होदि आहो किमणुक्कस्सा चेव होदि त्ति एदं✤ पुच्छा-सुत्तं । एवं पुच्छिदे तस्स पुच्छंतस्स संदेहविणासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ७ ॥

कुदो? सत्तमाए पुढवीए चरिमसमयणेरइयम्मि पंचधणुस्सयउस्सेहम्मि उक्कस्सदव्वु-वलंभादो । उक्कस्सदव्वसामियस्स खेत्तं संखेज्जाणि पमाणघणंगुलाणि । कुदो? पंचध-णुस्सदुस्सेहट्ठमभागविक्खंभखेत्ते समीकरणे कदे संखेज्जपमाणघणंगुलुवलंभादो । समु-ग्घादगदमहामच्छउक्कस्सखेत्तं पुण असंखेज्जाओ सेडीओ । कुदो? अद्धट्ठमरज्जुआयामेण संखेज्जपदरंगुलेसु गुणिदेसु असंखेज्जसेडिमेत्तखेत्तुवलंभादो । एवं महामच्छउक्कस्सखेत्तं पेक्खिदूण णेरइयस्स उक्कस्सदव्वसामियस्स✲ उक्कस्सखेत्तमूणमिदि कट्टु णियमा खेत्तवेयणा अणुक्कस्सा त्ति भणिदं । होंता वि तत्तो असंखेज्जगुणहीणा, उक्कस्सदव्व-

---

इस प्रकार उत्कृष्ट सन्निकर्ष चार प्रकारका ही है, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे पृथग्भूत उत्कृष्ट सन्निकर्ष यहाँ वेदनामें नहीं पाया जाता ।

जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है, उसके वह क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६ ॥

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी द्रव्यवेदना उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरणीयकी क्षेत्र-वेदना क्या उत्कृष्ट ही होती है अथवा अनुत्कृष्ट ही, इस प्रकार यह पृच्छासूत्र है । इस प्रकार पूछनेपर उस पूछनेवाले शिष्यका सन्देह नष्ट करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७ ॥

क्योंकि, सातवीं पृथिवीमें पांचसौ धनुष ऊँचे अन्तिम समयवर्ती नारकीके उत्कृष्ट द्रव्य पाया जाता है । उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामीका क्षेत्र संख्यात प्रमाणघनांगुल मात्र होता है, क्योंकि, पांच सौ धनुष ऊंचे और उसके आठवें भागमात्र विष्कंभवाले क्षेत्रका समीकरण करनेपर संख्यात प्रमाण घनांगुल उत्पन्न होते हैं । परंतु समुद्घातको प्राप्त हुए महामत्स्यका उत्कृष्ट क्षेत्र असंख्यात जगश्रेणि प्रमाण है, क्योंकि, साढे सात राजु आयामसे संख्यात प्रतरांगुलोंको गुणित करनेपर असंख्यात जगश्रेणि प्रमाण क्षेत्र उपलब्ध होता है । इस प्रकार महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी नारकीका उत्कृष्ट क्षेत्र चूंकि हीन है, अतएव 'क्षेत्र वेदना नियमसे अनुत्कृष्ट होती है' ऐसा कहा है । ऐसी होती हुई भी वह उससे असंख्यातगुणी हीन है, क्योंकि, उत्कृष्ट

✲ प्रतिषु ' तत्थ ' इति पाठः । ✤ प्रतिषु ' एवं ' इति पाठः ।
✲ अ-आ-काप्रतिषु ' सामित्तस्स ', ताप्रतौ ' सामिस्स ' इति पाठः ।

यस्स* उक्कस्सखेत्तेण महामच्छुक्कस्सखेत्ते भागे हिदे सेडीए असंखेज्जदिभागुवलंभादो। सत्तमपुढविचरिमसमयणेरइयस्स उक्कस्सदव्वसामियस्स* मुक्कमारणंतियस्स उक्कस्सखेत्ते गहिदे संखेज्जगुणहीणा किण्ण लब्भदे ? ण, मुक्कमारणंतियस्स उक्कस्ससंकिलेसभावेण उक्कस्सजोगाभावेण य उक्कस्सदव्वसामित्तविरोहादो। मुक्कमारणंतियस्स उक्कस्ससंकिलेसो ण होदि त्ति कुदो णव्वदे? एदम्हादो 'असंखेज्जगुणहीणा' त्ति सुत्तादो।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८ ॥

सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा ॥ ९ ॥

जदि णेरइयचरिमसमए उक्कस्सट्ठिदिसंकिलेसो होज्ज तो कालदो वि णाणावरणीयवेयणा उक्कस्सा होज्ज, उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीणं बंधाभावादो। जदि चरिमसमए उक्कस्सट्ठिदिसंकिलेसो ण होदि तो णाणावरणीयवेयणा कालदो णियमा अणुक्कस्सत्तं पडिवज्जदे, चरिमसमए उक्कस्सट्ठिदिबंधाभावादो। उक्कस्सादो अणुक्कस्सं किं विसेसहीणं संखेज्जगुणहीणं ति पुच्छिदे तण्णिण्णयट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

द्रव्य सम्बन्धी स्वामीके उत्कृष्टक्षेत्रका महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रमें भाग देनेपर जगश्रेणिका असंख्यातवां भाग उपलब्ध होता है।

शंका-- जो सप्तम पृथिवीस्थ अन्तिम समयवर्ती नारकी उत्कृष्ट द्रव्यका स्वामी है और जो मारणान्तिक समुद्घातको कर चुका है उसके उत्कृष्ट क्षेत्रको ग्रहण करनेपर वह (क्षेत्रवेदना) संख्यातगुणी हीन क्यों नहीं पायी जाती है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, मुक्त मारणान्तिक जीवके न तो उत्कृष्ट संक्लेश होता है और न उत्कृष्ट योग ही होता है; अतएव वह उत्कृष्ट द्रव्यका स्वामी नहीं हो सकता।

शंका-- मुक्त मारणान्तिक जीवके उत्कृष्ट संक्लेश नहीं होता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- वह 'असंख्यातगुणी हीन है' इसी सूत्रसे जाना जाता है।

कालकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट? ॥ ८ ॥

यह पृच्छासूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ९ ॥

यदि उक्त नारक जीवके अंतिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्लेश होता है तो कालकी अपेक्षा भी ज्ञानावरणीयवेदना उत्कृष्ट होती है, क्योंकि, उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट स्थितिको छोड़कर अन्य स्थितियोंका बंध नहीं होता है, और यदि अंतिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्लेश नहीं होता है तो ज्ञानावरणीयवेदना कालकी अपेक्षा नियमतः अनुत्कृष्टताको प्राप्त होती है, क्योंकि, अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिबंधका अभाव है। उत्कृष्टकी अपेक्षा वह अनुत्कृष्ट क्या विशेष हीन होती है या संख्यातगुणी हीन होती है, ऐसा पूछनेपर उसके निर्णयके लिये आगेका सूत्र कहते हैं--

* काप्रतौ 'सामित्तयस्स' इति पाठः। ✿ अ-काप्रत्योः 'सामिस्स', आप्रतौ 'सामित्तस्स' इति पाठः। ✿ अ-का-ताप्रतिषु 'पढमसमए' इति पाठः।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ॥ १० ॥

दुसमऊणादिवियप्पा किण्ण लब्भंते? ण, णेरइयदुचरिमसमयम्मि उक्कस्सदव्वमिच्छिय उक्कस्ससंकिलेसे णियमिदम्मि उक्कस्सट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीणं बंधाभावादो। ण च दुचरिमसमए उक्कस्सट्ठिदीए बंधीए♣ संतीए चरिमसमए समऊणत्तं मोत्तूण दुसमऊणत्तादिवियप्पो संभवदि, अधट्ठिदीए♣ दुवादिट्ठिदीणमक्कमेण गलणाभावादो।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ११ ॥

सुगममेदं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ १२ ॥

जदि दुचरिमसमयणेरइयो उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सविसेसपच्चएण उक्कस्साणुभागं बंधदि तो भावदेयणा उक्कस्सा होदि। अध णत्थि उक्कस्सविसेसपच्चओ तो णियमा अणुक्कस्सा त्ति भणिदं होदि। उक्कस्सं पेक्खिदूण अणुक्कस्सभावो छव्विहासु हाणीसु कत्थ होदि त्ति पुच्छिदे तण्णिण्णयत्थमुत्तरसुत्तं भणदि--

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ॥ १३ ॥

उक्कस्सं पेक्खिदूण अणुक्कस्सभावो अणंतभागहीण-असंखेज्जभागहीण-संखेज्जभाग-

सार्वधर्मिक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय हीन होती है ॥ १० ॥

शंका- यहां दो समय हीन आदि विकल्प क्यों नहीं पाये जाते ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, नारक भवके द्विचरम समयमें उत्कृष्ट द्रव्यका बन्ध हुआ ऐसा मान लेनेपर उत्कृष्ट संक्लेशके नियमित होनेपर वहां उत्कृष्ट स्थितिको छोडकर अन्य स्थितियोंका बन्ध नहीं होता। और जब द्विचरम समयमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध हुआ तो चरम समयमें एक समय हीन विकल्पको छोडकर दो समय हीन आदि विकल्पोंकी सम्भावना ही नहीं है, क्योंकि, अधःस्थिति गलनाके द्वारा एक साथ दो आदिक स्थितियोंका गलन नहीं हो सकता।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट ॥ ११ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट भी होती है अनुत्कृष्ट भी ॥ १२ ॥

यदि द्विचरम समयवर्ती नारकी जीव उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा और उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययके द्वारा उत्कृष्ट अनुभागको बांधता है तो उसके भाव वेदना उत्कृष्ट होती है। यदि उसके उत्कृष्ट विशेष प्रत्यय नहीं है तो नियमसे अनुत्कृष्ट वेदना होती है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है। उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट भाव छह प्रकारकी हानियोंमेंसे किस हानिमें होता है, ऐसा पूछनेपर उसका निर्णय करने के लिये आगेका सूत्र कहते हैं-

S ११ पृ. ३८८,३९ ४५२

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना षट्स्थानपतित होती है ॥ १३ ॥

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट भाव अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभाग-

♣ काप्रतौ ' बंधीए ' इति पाठः। ♣ अ-आ-काप्रतिषु ' अवट्ठिदीए ' इति पाठः।

हीण--संखेज्जगुणहीण--असंखेज्जगुणहीण--अणंतगुणहीणसरूवेण अवट्ठिदछट्ठाणेसु पदिदो होदि । कधमेक्कसंकिलेसादो असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागछट्ठाणाणं बंधो जुज्जदे? ण एस दोसो, एक्कसंकिलेसादो असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणसहिदअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणसहकारिकारणाणं भेदेण सहकारिकारणमेत्तअणुभागट्ठाणाणं बंधाविरोहादो । तेसिं छट्ठाणाणं णामणिद्देसट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

अणंतभागहीणा वा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा अणंतगुणहीणा वा ।१४।

णेरइयदुचरिमसमए उक्कस्ससंकिलेसेण अणंतभागहीणउक्कस्सविसेसपच्चएण अणंतभागहीणउक्कस्साणुभागं बंधिय णेरइयचरिमसमए वट्टमाणस्स अणुभागो उक्कस्साणुभागादो अणंतभागहीणो । दुचरिमसमए उक्कस्ससंकिलेसेण चरिम–दुचरिमपक्खेवेहि ऊणमणुभागं बंधिय चरिमसमए वट्टमाणस्स सगुक्कस्साणुभागादो अणंतभागहाणी चेव । एवमंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवे जाव परिवाडीए हाइदूण बंधदि ताव अणंतभागहाणी चेव । पुणो पुव्विल्लअणंतभागवड्ढिपक्खेवेहि सह असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवे

हीन; संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन और अनन्तगुणहीन स्वरूपसे अवस्थित छह स्थान-पतित होता है ।

शंका– एक सक्लेशसे असंख्यात लोक प्रमाण अनुभाग सम्बन्धी छह स्थानोंका बन्ध कैसे बन सकता है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, एक संक्लेशसे, असंख्यात लोक प्रमाण छह स्थानोंसे सहित अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके सहकारी कारणोंके भेदसे सहकारी कारणोंके बराबर अनुभागस्थानोंके बन्धमें कोई विरोध नहीं आता ।

उन छह स्थानोंके नामोंका निर्देश करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं ।

वह अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन या अनन्तगुणहीन होती है ।। १४ ।।

नारक भवके द्विचरम समयमें अनन्तभागहीन उत्कृष्ट विशेष प्रत्यय संयुक्त उत्कृष्ट संक्लेशसे अनन्तभागहीन उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर नारक भवके चरम समयमें वर्तमान उक्त नारकीका अनुभाग उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तभाग हीन होता है । द्विचरम समयमें उत्कृष्ट संक्लेशसे चरम और द्विचरम प्रक्षेपोंसे हीन अनुभागको बांधकर चरम समयमें वर्तमान नारकी जीवके अपने उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तभागहानि ही होती है । इस प्रकार जब तक वह अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपोंको परिपाटीक्रमसे हीन करके अनुभागको बांधता है तब तक अनन्तभागहानि ही चालू रहती है । तत्पश्चात् पूर्वोक्त अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपोंके साथ असंख्यातभागवृद्धि प्रक्षेपोंको हीन करके अनुभागके

☼ अप्रतौ ' हीणकमेण सरूवेण ' इति पाठः ।

हाइदूण बंधे उक्कस्साणुभागादो एसो अणुभागो असंखेज्जभागहीणो। पुणो तत्तो हेट्ठिमपक्खेवे परिहाइदूण बद्धे वि असंखेज्जभागहाणी चेव। एवमसंखेज्जभागहाणीए✱ कंडयाहियकंडयमेत्तट्ठाणाणि ओसरिदूण जाव बंधदि ताव णिरंतरमसंखेज्जभागहाणी चेव होदि। तत्तो हेट्ठा संखेज्जभागहाणी चेव जाव पढमदुगुणहाणिं ण पावेदि। तम्हि पत्ते✡ संखेज्जगुणहाणी होदि। एवमेदेण विहाणेण ओदारेदव्वं जाव उक्कस्ससंखेज्जगुणहीणट्ठाणं पत्तं त्ति। तदो समयाविरोहेण हेट्ठा ओदरिदूण◆ पढममसंखेज्जगुणहीणट्ठाणं होदि। एवमसंखेज्जगुणहीणकमेण ताव ओदारेदव्वं जाव चरिमअसंखेज्जगुणहीणट्ठाणं पत्तं त्ति। पुणो हेट्ठिमउव्वंकेलक्के अणंतगुणहीणट्ठाणं होदि। एवमेदेण कमेण हेट्ठिमअणंतगुणहीणं होदूण ताव गच्छदि जाव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि ओसरिदूण बद्धाणि त्ति।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ १५ ॥

सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

णियमा अणुक्कस्सा ॥ १६ ॥

उक्कस्सा ण होदि, महामच्छम्मि उक्कस्सओगाहणम्मि अद्धट्ठमरज्जुआयामेण सत्तमपुढविं पडि मुक्कमारणंतियम्मि गुणिदुक्कस्ससंकिलेसाभावेण दव्वस्स उक्कस्सत्तविरोहादो

बांधनेपर उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा यह अनुभाग असंख्यातभागहीन होता है। पश्चात् उससे नीचेके प्रक्षेपोंको हीन करके बांधनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकार जब तक वह असंख्यातभागहानिसे एक काण्डकसे अधिक काण्डक प्रमाण स्थान नीचे उतरकर अनुभाग बांधता है तब तक निरन्तर असंख्यातभागहानि ही होती है। किन्तु उसके नीचे प्रथम दुगुणहानिके प्राप्त होने तक संख्यातभागहानि ही होती है और दुगुणहानिके प्राप्त होनेपर संख्यातगुणहानि होती है। इस प्रकार इस विधिसे उत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थानके प्राप्त होने तक उतारना चाहिये। तत्पश्चात् समयाविरोधसे नीचे उतरकर प्रथम असंख्यातगुणहीन स्थान होता है। इस प्रकार असंख्यातगुणहीन क्रमसे तब तक उतारना चाहिये जब तक कि अन्तिम असंख्यातगुणहीन स्थान प्राप्त नहीं होता है। पश्चात् अधस्तन ऊर्वकका बन्ध होनेपर अनन्तगुणहीन स्थान होता है। इस प्रकार यहां से लेकर अनन्तगुण हीन होकर तब तक जाता है जब तक कि असंख्यात लोक प्रमाण छह स्थान नीचे उतरकर स्थान बंधते है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट? ॥ १५ ॥

यह पृच्छासूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट होती है ॥ १६ ॥

वह उत्कृष्ट नहीं होती है, क्योंकि, उत्कृष्ट अवगाहनावाले महामत्स्यके साढ़ेसात राजु प्रमाण आयामसे सातवीं पृथिवीके प्रति मारणान्तिक समुद्घातके करनेपर वहां गुणित उत्कृष्ट

✱ ताप्रतौ ' बद्धे वि असंखेज्जभागहाणीए ' इति पाठः। ✡ ताप्रतौ ' पत्तेयसंखेज्ज ' इति पाठः। ◆ अप्रतौ ' ओदारिय ', काप्रतौ त्रुटितोऽत्र जावः पाठः।

ण च सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमयम्मि उक्कस्सजोगसंकिलेसेण गुणिदभावणिबंधणेण जावउक्कस्सदव्वं महामच्छम्मि होदि, विरोहादो। ण च कारणेण विणा कज्जमुप्पज्जदि, अइप्पसंगादो। तम्हा दव्ववेयणा अणुक्कस्से त्ति भणिदं।

चउट्ठाणपदिदा- असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ १७ ॥

उक्कस्सखेत्तसामिदव्ववेयणा णियमेण अणुक्कस्सभावमुवगया सगओघुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण कधं होदि त्ति पुच्छिदे चउट्ठाणपदिदा त्ति णिद्दिट्ठं। काणि तााणि चउट्ठाणाणि त्ति भणिदे तेसिं णामणिद्देसो कदो अणंतभागहीण-अणंतगुणहीणपडिसेहट्ठं। एत्थ ताव चदुण्णं हाणीणं परूवणा कीरदे। तं जहा- एगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढविणेरइयओघुक्कस्सदव्वसामित्तविदियसमयप्पहुडीए[1] जाव चरिमसमए दव्वमुक्कस्सं करिय कालं कादूण तसकाइयेसु एइंदिएसु च अंतोमुहुत्तमच्छिय महामच्छो जादो, पज्जत्तयदो होदूण अंतोमुहुत्तेण अद्धट्ठमरज्जुआयामपमाणं मारणंतियं कादूण उक्कस्सखेत्तसामी जादो। तक्काले तस्स दव्वमोघुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण असंखेज्जभागहीणं होदि। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं विरलेदूण ओघुक्कस्सदव्वं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स णट्ठदव-

---

संक्लेशका अभाव होनेसे उत्कृष्ट द्रव्यका सद्भाव माननेमें विरोध है। और सातवीं पृथिवीमें स्थित नारकीके चरम समयमें गुणित भावके कारणभूत उत्कृष्ट योग व संक्लेशसे जो उत्कृष्ट द्रव्य होता है वह महामत्स्यके सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेमें विरोध आता है। कारणके बिना कहीं भी कार्यकी उत्पत्ति नहीं होती है, क्योंकि, वैसा होनेपर अतिप्रसंग दोष आता है। इसी कारण द्रव्यवेदना अनुत्कृष्ट होती है ऐसा कहा गया है।

वह अनुत्कृष्ट द्रव्यवेदना असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन अथवा असंख्यातगुणहीन इन चार स्थानोंमें पतित है ॥ १७ ॥

उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामीकी द्रव्यवेदना नियमसे अनुत्कृष्ट भावको प्राप्त होकर अपने सामान्य उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है, ऐसा पूछनेपर ' वह चतुःस्थानपतित होती है ' ऐसा सूत्रमें निर्देश किया गया है। वे चतुःस्थान कौनसे हैं, ऐसा पूछनेपर अनंतभागहीन और अनंतगुणहीन इन दो स्थानोंका प्रतिषेध करनेके लिये उन चार स्थानोंके नामोंका निर्देश किया गया है। यहाँ पहिले चार हानियोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- एक गुणितकर्मांशिक तेतीस सागरोपम प्रमाण आयुःस्थितिवाला सातवीं पृथिवीका नारकी अपनी भवस्थितिके अन्तिम समयमें द्रव्यको उत्कृष्ट करके मरणको प्राप्त हो त्रसकायिक और एकेन्द्रियोंमें अन्तर्मुहूर्त तक रहकर महामत्स्य हुआ। वह अन्तर्मुहूर्तमें पर्याप्त होकर साढेसात राजु आयाम प्रमाण मारणांतिक समुद्घातको करके उत्कृष्ट क्षेत्रका स्वामी हुआ। उस समय उसका द्रव्य सामान्य उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवेंभागहीन होता है, क्योंकि पल्योपमके असंख्यातवें भागको विरलितकर ओघ उत्कृष्ट द्रव्यको

---

[1] प्रतिषु ' णेरइयचरिमसमयविदियसमयप्पहुडीओ ' इति पाठः।

पमाणं पावदि । तत्थ एगखंडं णट्ठं । सेसबहुखंडाणि उक्कस्सखेत्तं कादूणच्छिदम्हामच्छस्स उक्कस्सदव्वं होदि । पुणो एदम्हादो दव्वादो एग-दोपरमाणुआदिं कादूण ऊणियअसंखेज्जभागहाणिपरूवणा ताव परूवेयव्वा जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण उक्कस्सदव्वे खंडिदे तत्थ एगखंडं परिहीणे त्ति । पुणो वि एगादिपरमाणुहाणिं कादूण ताव णेयव्वं जाव ओघुक्कस्सदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंड णट्ठं ति । ताधे असंखेज्जभागहाणीए अंतं* होदूण संखेज्जभागहाणीए च आदी जादा । एत्तो प्पहुडि संखेज्जभागहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव रूवाहियमुक्कस्स-दव्वस्स अद्धं चेट्ठिदं ति । पुणो तत्तो एगपरमाणुहाणीए जादाए दुगुणहाणी होदि । संपहि संखेज्जगुणहाणीए आदी जादा । पुणो उक्कस्सदव्वं तिण्णि खंडाणि कादूण तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्ते कदे दव्वं संखेज्जगुणहीणं होदि । पुणो उक्कस्स-दव्वं चत्तारि खंडाणि कादूण तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्ते कदे दव्वं संखेज्ज-गुणहीणमेव होदि । एवं णेयव्वं जाव उक्कस्सदव्वं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तखंडाणि कादूण तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्तं कादूण ट्ठिदो त्ति । पुणो वि उवरि एवं जाणिदूण णेयव्वं जाव उक्कस्सदव्वं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंड रूवाहियं चेट्ठिदं त्ति । पुणो तमेगपरमाणुणा ऊणं करिय उक्कस्सखेत्ते कदे

समखण्ड करनेपर एक खण्ड प्राप्त होता है । उसमेंसे वहां एक खण्ड नष्ट हुआ है, शेष बहुखण्ड प्रमाण द्रव्य उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित महामत्स्यका उत्कृष्ट द्रव्य होता है । पुनः इस द्रव्यमेंसे एक दो परमाणुओंको लेकर हीन करते हुए असंख्यात-भागहानिकी प्ररूपणा तब तक करनी चाहिये जब तक कि उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्या-तसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड हीन नहीं हो जाता है । फिर भी एक आदिक पर-माणुओंकी हानिको करके तब तक ले जाना चाहिये जब तक कि ओघ उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड प्रमाण नष्ट नहीं हो जाता है । उस समय असं-ख्यातभागहानिका अन्त होकर संख्यातभागहानिका प्रारम्भ होता है ।

यहांसे लेकर संख्यातभागहानि ही होकर जाती है जब तक कि उत्कृष्ट द्रव्यका एक अधिक आधा भाग स्थित रहता है फिर उसमेंसे एक परमाणुकी हानि होनेपर दुगुणहानि होती है । अब संख्या-तगुणहानिका प्रारम्भ हो जाता है । पुनः उत्कृष्ट द्रव्यके तीन खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रके करनेपर द्रव्य संख्यातगुणा हीन होता है । पुनः उत्कृष्ट द्रव्यके चार खण्ड करके उसमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रके करनेपर द्रव्य संख्यातगुणा हीन ही होता है । इस प्रकारसे उत्कृष्ट द्रव्यके उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित होने तक ले जाना चाहिये । फिर भी आगे इसी प्रकारसे जानकर उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक अधिक एक खण्डके स्थित होने तक ले जाना चाहिये । तत्पश्चात् उसे एक परमाणुसे हीन करके उत्कृष्ट क्षेत्रके करनेपर असंख्यातगुणहानि होती है ।

♣ अ-आ-काप्रतिषु ' अच्छिद ' इति पाठः । * अ-आ-का-प्रतिषु ' अणंतं ' इति पाठः ।

असंखेज्जगुणहाणी होदि । एत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहीणं होदूण दव्वं गच्छदि जाव तप्पाओग्गपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण ओघुक्कस्सदव्वं खंडिय तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्तं कादूण ट्ठिदो त्ति । एवं जहण्णदव्वं केण लक्खणेण आगदस्स होदि त्ति भणिदे एसो जीवो खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विवरीयगमणपाओग्गणि-

योगद्वारके जीवोंमें आगत सूक्ष्मनिगोदोंमें जघन्य द्रव्य

विवयप्पकालावसेसे विवरीदं गंतूण महामच्छेसु उप्पज्जिय उक्कस्सखेत्तं कादूण अच्छिदो तस्स होदि । एत्तो हेट्ठा एदं दव्वं ण हायदि, उक्कस्सदव्वादो णिव्वयप्प-मसंखेज्जगुणहीणत्तमुवणमिय ट्ठिदत्तादो । जम्हि जम्हि सुत्ते दव्वं चउट्ठाणपदिदमिदि भणिदं तम्हि तम्हि एसो एत्थ उत्तकमो अवहारिय परूवेदव्वो ।

तस्स कालदो किं उक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ १८ ॥

एदं पुच्छासुत्तं सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ १९ ॥

जदि उक्कस्सखेत्तं कादूण ट्ठिदमहामच्छो उक्कस्ससंकिलेसं गच्छदि तो णाणावरणीय-वेयणा कालदो उक्कस्सिया चेव होदि, चरिमट्ठिदिपाओग्गपरिणामेसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदेसु तत्थ चरिमखंडपरिणामेहि उक्कस्सट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठि-दीणं बंधाभावादो । अह चरिमखंडपरिणामे मोत्तूण जदि अण्णेहि परिणामेहि ट्ठिदिं

यहांसे लेकर तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे ओघ उत्कृष्ट द्रव्यको खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित होने तक द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होकर जाता है ।

शंका- यह जघन्य द्रव्य किस स्वरूपसे आगत जीवके होता है ?

समाधान- ऐसा पूछे जानेपर उत्तरमें कहते हैं कि जो एक जीव क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकारके विपरीत गमनके योग्य निर्विकल्प कालके शेष रहनेपर विपरीत गमन करके महामत्स्योंमें उत्पन्न होकर उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित है उसके उक्त जघन्य द्रव्य होता है ।

इसके नीचे यह द्रव्य हीन नहीं होता है, क्योंकि, वह उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा निर्विकल्प असंख्यातगुणी हीनताको प्राप्त होकर स्थित है । जिस जिस सूत्रमें 'द्रव्य चतुस्थानपतित है' ऐसा कहा गया है उस उस सूत्रमें यहां कहे गये इस क्रमका निश्चय करके प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके उक्त वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।१८।

यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ १९ ॥

यदि उत्कृष्ट क्षेत्रको स्थित करके महामत्स्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होता है तो ज्ञानावरणीय-की वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट ही होती है, क्योंकि, अन्तिम स्थितिके योग्य परिणामोंको पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर उनमें अन्तिम खण्ड सम्बन्धी परिणामोंके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिको छोडकर अन्य स्थितियोंका बन्ध नहीं होता और यदि वह अन्तिम खण्ड संबंधी परिणामोंको छोडकर अन्य परिणामोंके द्वारा स्थितिको बांधता है तो उक्त वेदना कालकी

बंधवि तो अणुक्कस्सा होदि, तेहि उक्कस्सट्ठिदी चेव बज्झदि त्ति णियमाभावादो ।

• उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा- असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ॥ २० ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

किमट्ठं तिण्णं हाणीणं णामणिद्देसो कीरदे ? अणंतभागहाणि-असंखेज्जगुणहाणि-अणंतगुणहाणीयो कालम्मि णत्थि त्ति जाणावणट्ठं । तत्थ ताव तासिं हाणीणं सरूवपरूवणं कस्सामो । तं जहा- उक्कस्सखेत्तं कादूण अच्छिदमहामच्छेण तीसं सागरोवमकोडाकोडीसु समऊणासु पबद्धासु णाणावरणीयकालवेयणा अणुक्कस्सा होदि, ओघुक्कस्सट्ठिदिं पेक्खिदूण समऊणत्तादो । एदिस्से हाणीए को भागहारो होदि ? उक्कस्सट्ठिदी चेव । कुदो ? उक्कस्सट्ठिदिं विरलेदूण तं चेव समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि एगेगरूवुवलंभादो । पुणो उक्कस्सखेत्तं कादूणच्छिदमहामच्छेण दुसमऊणुक्कस्साए ट्ठिदीए[✡] पबद्धाए असंखेज्जभागहाणी होदि । पुणो तेणेव तिसमऊणुक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए असंखेज्जभागहाणी चेव होदि । एवमसंखेज्जभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव उक्कस्सखेत्तं[✤] कादूणच्छिदमहामच्छेण तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ जहण्णपरित्तासंखेज्जेण

अपेक्षा अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि, उन परिणामोंके द्वारा उत्कृष्ट स्थिति ही बंधती है; ऐसा नियम नहीं है ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन या संख्यातगुणहीन, इन तीन स्थानोंमें पतित है ॥ २० ॥

शंका-- तीन हानियों के नामोंका निर्देश किसलिये किया जा रहा है ?

समाधान-- कालमें अनन्तभागहानि, असंख्यातगुणहानि और अनन्तगुणहानि ये तीन हानियां नहीं है, इसके ज्ञापनार्थ उन तीन हानियोंका नाम निर्देश किया गया है ।

अब सर्व प्रथम उन हानियोंके स्वरूपकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकारसे-- उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित महामत्स्यके द्वारा एक समय कम तीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण स्थितियोंके बांधे जानेपर ज्ञानावरणीयकी कालवेदना अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि, ओघ उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा वह एक समय कम है ।

शंका-- इस हानिका भागहार क्या है ?

समाधान-- उसका भागहार उत्कृष्ट स्थिति ही है, क्योंकि, उत्कृष्ट स्थितिका विरलन करके उसी को समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति एक एक अंक पाया जाता है ।

पुनः उत्कृष्ट क्षेत्रके स्थित हुए महामत्स्यके द्वारा दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर असंख्यातभागहानि होती है । फिर उसी महामत्स्यके द्वारा तीन समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर असंख्यातभागहानि ही होती है । इस प्रकार असंख्यातभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक कि उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित हुए महामत्स्यके द्वारा तीस कोडाकोडि

✡ अ-आ-काप्रतिषु ' -णुक्कस्साट्ठिदीए ', ताप्रतौ ' णुक्कस्सट्ठिदीए ' इति पाठः ।

✤ ताप्रतौ ' उक्कस्सेण खेत्तं ' इति पाठः ।

खंडेदूण तत्थ एगखंडेण ऊणउक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि। तत्तो प्पहुडि एगेगसमयपरिहाणीए बंधाविज्जमाणे✡ वि असंखेज्जभागहाणी♣ चेव होदि। पुणो एवं गंतूण उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्कस्सट्ठिदीए♠ पबद्धाए संखेज्जभागपरिहाणी होदि। एत्तो प्पहुडि संखेज्जभागपरिहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव एगसमयाहियमद्धं चेट्ठिदं त्ति। पुणो तत्तो एगसमयपरिहीणट्ठिदीए पबद्धाए दुगुणहाणी होदि। एत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव सत्तमपुढवि-पाओग्गअंतोकोडाकोडि त्ति। णवरि खेत्तं उक्कस्समेवे त्ति सव्वत्थ वत्तव्वं।

तस्स भावदो किमणुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २१ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ २२ ॥

तदुक्कस्सखेत्तमहामच्छेण उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सविसेसपच्चएण♣ जदि उक्कस्साणुभागो बद्धो तो खेत्तेण सह भावो वि उक्कस्सो होज्ज। एदम्हादो अण्णस्स उक्कस्सखेत्तसामिजीवस्स भावो अणुक्कस्सो चेव, उक्कस्सविसेसपच्चयाभावादो।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ॥ २३ ॥

सागरोपमोंको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करनेपर उनमें एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट स्थिति बांधी जाती है तब तक असंख्यातभागहानि ही होती है। वहां से लेकर एक एक समयकी हानि युक्त स्थितिके बांधनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। पश्चात् इसी प्रकारसे जाकर (उत्कृष्ट स्थितिको) उत्कृष्ट संख्यातसे खंडित करके उसमें एक खंडसे हीन उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेपर संख्यातभागहानि होती है। यहांसे लेकर संख्यातभागहानि ही होकर जाती है जब तक उसका एक समय अधिक अर्ध भाग स्थित रहता है। तत्पश्चात् उसमेंसे एक समय हीन स्थितिके बांधे जानेपर दुगुणी हानि होती है। यहांसे लेकर सातवीं पृथिवीके योग्य अंत:-कोडाकोडि सागरोपम प्रमाण स्थिति बन्धके प्राप्त होने तक संख्यातगुणहानि ही होकर जाती है। विशेष इतना है कि क्षेत्र उत्कृष्ट ही रहता है, ऐसा सर्वत्र कहना चाहिये।

उसके उक्त वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ।२१।

यह पृच्छासूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती और अनुत्कृष्ट भी ॥ २२ ॥

उक्त उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामी महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट विशेष प्रत्यय रूप उत्कृष्ट संक्लेशसे यदि उत्कृष्ट अनुभाग बांधा गया है तो क्षेत्रके साथ भाव भी उत्कृष्ट हो सकता है। इससे भिन्न उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामी जीवका भाव अनुत्कृष्ट ही होता है, क्योंकि, उसके उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययका अभाव है।

वह उत्कृष्ट की अपेक्षा अनुत्कृष्ट छह स्थानोंमें पतित है ॥ २३ ॥

✡ अ-आप्रत्योः 'बद्धाविज्जमाणे', का-ताप्रत्योः 'बद्धाविज्जमाणे' इति पाठः। ♠ अ-का-ताप्रतिषु 'असंखेज्जहाणी', आप्रतौ 'असंखे० हाणी' इति पाठः। ♣ अ-आ-काप्रतिषु 'विसेसणपच्चएण' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एत्थ उक्कस्सदव्वे णिरुद्धे जहा भावस्स छट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा एत्थ वि णिस्सेसं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २४ ॥

एत्थ उक्कस्सपदआदिट्ठिकिसद्दो अणुक्कस्सपदे वि जोजेयव्वो। सेसं सुगमं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ २५ ॥

गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदचरिमसमयणेरइएण कयउक्कस्सदव्वेण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए उक्कस्सकालवेयणाए सह दव्वं पि उक्कस्सं होदि। उक्कस्सकालेण सह एगादिपरमाणुपरिहीणउक्कस्सदव्वे कदे दव्ववेयणा अणुक्कस्सा होदि।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ॥ २६ ॥

तं जहा- उक्कस्सकालसामिणो[ओ] एगपदेसूणउक्कस्सदव्वे कदे दव्वमणंतभागहीणं होदि। तेणेव दुपदेसूणुक्कस्सदव्वसंचए कदे दव्वमणंतभागहीणं चेव होदि। तिपदेसूणुक्कस्सदव्वसंचए कदे वि अणंतभागहीणं चेव होदि। एवं ताव उक्कस्सकालसामिदव्वमणंतभागहाणीए गच्छदि जाव जहण्णपरित्ताणंतेण उक्कस्सदव्वं खंडेदूण तत्थ एगखंडेण

यहाँ उत्कृष्ट द्रव्यकी विवक्षा होनेपर जिस प्रकार भावके छह स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार यहाँपर भी उसकी पूर्ण रूपसे प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ॥ २४ ॥

यहाँ उत्कृष्ट पदके आदिमें स्थित 'किं' शब्दको अनुत्कृष्ट पदमें भी जोड़ना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ २५ ॥

जो गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आया है और जिसने द्रव्यको उत्कृष्ट किया है उस अन्तिम समयवर्ती नारक जीवके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर उत्कृष्ट काल वेदनाके साथ द्रव्य भी उत्कृष्ट होता है। तथा उत्कृष्ट कालके साथ एक आदिक परमाणुसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यके करनेपर द्रव्य वेदना अनुत्कृष्ट होती है।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना पांच स्थानोंमें पतित है ॥ २६ ॥

वह इस प्रकारसे- उत्कृष्ट कालवेदनाके स्वामी द्वारा एक प्रदेश कम उत्कृष्ट द्रव्यके करनेपर यह द्रव्य अनन्तवें भागसे हीन होता है। उक्त जीवके द्वारा ही दो प्रदेश कम उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेपर द्रव्य अनन्तभागहीन ही होता है। तीन प्रदेश कम उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेपर भी द्रव्य अनन्तभागहीन ही होता है। इस प्रकार उत्कृष्ट कालवेदनाके स्वामीका द्रव्य तब तक अनंतभागहानिरूप होकर जाता है जब तक कि वह उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खंडित

[ओ] अ-आका-ताप्रतिषु 'सामिओ' इति पाठः। ताप्रतौ 'सामिणा' इति पाठः।

परिहीणं ति। पुणो हेट्ठा वि अणंतभागहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सअसंखेज्जेण उक्कस्सदव्वं खंडेदूण एत्थ एगखंडेण परिहीण उक्कस्सदव्वं ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जभागहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वं उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थेगखंडेण परिहीणुक्कस्सदव्वे त्ति। तत्तो प्पहुडि संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वस्स♣ अद्धं चेट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणीए णेदव्वं जाव उक्कस्सदव्वं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण एगखंडं चेट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वस्स तप्पाओग्गो※ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो भागहारो जादो त्ति। एवं सव्वत्थ कालो उक्कस्सो चेवे त्ति वत्तव्वं।

संपहि※ सव्वजहण्णदव्वपरूवणं कस्सामो। तं जहा-- खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि सम्मत्तकंडयाणि संजमासंजमकंडयाणि, अट्ठसंजमकंडयाणि अणंताणुबंधिविसंजोयण◆कंडयाणि च कादूण पुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उववण्णो। गब्भादिअट्ठवस्सिओ संजमं पडिवण्णो। तदो देसूणपुव्वकोडिं※संजमगुणसेडिणिज्जरं करेमाणो अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे मिच्छत्तं गंतूण णाणावरणीयस्स उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो जादो। तस्स कालवेयणा

करके उसमेंसे एक खण्डसे हीन नहीं हो जाता है। फिर नीचे भी अनन्तभागहानि ही होकर उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यके होने तक जाती है। वहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यके होने तक असंख्यातभागहानि ही होकर जाती है। यहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यका अर्ध भाग स्थित होने तक संख्यातभागहानि होकर जाती है। पश्चात् वहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डके स्थित होने तक संख्यातगुणहानिसे ले जाना चाहिये। यहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यका तत्प्रायोग्य पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग भागहार होने तक असंख्यातगुणहानि ही होकर जाती है। विशेषता यह है कि सर्वत्र काल उत्कृष्ट ही रहता है, ऐसा कहना चाहिये।

अब सर्वजघन्य द्रव्यकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है- क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण सम्यक्त्वकांडकों व संयमासंयमकांडकोंको, आठ संयमकांडकों व अनंतानुबंधिविसंयोजन कांडकोंको करके पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ गर्भसे लेकर आठ वर्षका होकर संयमको प्राप्त हुआ। पश्चात् कुछ कम पूर्वकोटि काल तक संयमगुणश्रेणिनिर्जराको करते हुए उसके संसारके अंतर्मुहूर्त शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त होकर ज्ञानावरणीयका उत्कृष्ट स्थिति बंध हुआ। उसके कालवेदना उत्कृष्ट

♣ ताप्रतौ ' दव्व ' इति पाठः। ※ का-ताप्रत्योः ' पाओग्ग- ' इति पाठः। ◆ अ-आ-काप्रतिषु ' सव्वत्थो ' इति पाठः। ※ अ-आ-का-ताप्रतिषु ' संपहि ' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते, मप्रतौ तूपलभ्यते तत्। ◆ अ-आ-काप्रतिषु ' संजोयण ' इति पाठः। ※ अ-आ-ताप्रतिषु ' देसूणपुव्वकोडिसंजम- ', काप्रतौ ' देसूणपुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उववण्णो संजम- ' इति पाठः।

उक्कस्सा। दव्ववेयणा♠ पुण णिव्वियप्पअसंखेज्जगुणहीणा। णवरि सम्मत्त-संजमा संजमकंडयाणि केत्तिएण वि ऊणा त्ति वत्तव्वं, अण्णहा मिच्छत्तगमणाणुववत्तीदो। दव्ववेयणा अणंतगुणहीणा किण्ण जायदे? ण, अणंतगुणहीणजोगाभावादो।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २७ ॥

सुगमं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ २८ ॥

उक्कस्सखेत्तसामिणा☼ महामच्छेण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए कालेण सह खेत्तं पि उक्कस्सं होदि। उक्कस्सखेत्तमकादूण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए खेत्तवेयणा अणुक्कस्सा होदि।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ २९ ॥

तं जहा- महामच्छेण एगपदेसूणउक्कस्सोगाहणाए सत्तमपुढविं पडि मुक्कमारणंतिएण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए असंखेज्जभागहीणं खेत्तं✲। एवं मुहपदेसम्मि दो-तिण्णि-पदेसप्पहुडि जाव उक्कस्सेण संखेज्जपदरंगुलमेत्तपदेसा ऊणा त्ति। तदो एगागासपदेसूणअद्धट्ठमरज्जूणं मारणंतियं मेल्लाविय उक्कस्सट्ठिदिं बंधाविय णेयव्वं जाव

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

होती है। परन्तु द्रव्यवेदना विकल्परहित असंख्यातगुणी हीन होती है। विशेष इतना है कि सम्यक्त्वकाण्डक और संयमासंयमकाण्डक कुछ कम होते हैं, ऐसा कहना चाहिए क्योंकि, इसके विना मिथ्यात्वको प्राप्त होना सम्भव नहीं है।

शंका- द्रव्यवेदना अनन्तगुणी हीन क्यों नहीं होती है?

समाधान- नहीं, क्योंकि, अनन्तगुणे हीन योगका अभाव है।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ।२७।

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ २८ ॥

उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामी महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर कालके साथ क्षेत्र भी उत्कृष्ट है। उत्कृष्ट क्षेत्रको न करके उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर क्षेत्रवेदना अनुत्कृष्ट होती है।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना चार स्थानोंमें पतित है ॥ २९ ॥

वह इस प्रकारसे- एक प्रदेशसे हीन उत्कृष्ट अवगाहनाके साथ सातवीं पृथिवीके प्रति मारणान्तिक समुद्घातको करनेवाले महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर उसका क्षेत्र असंख्यातवें भागसे हीन होता है। इस प्रकार मुखस्थानमें दो तीन प्रदेशोंसे लेकर उत्कृष्टरूपसे संख्यात प्रतरांगुल प्रदेशोंके हीन होने तक (उसका क्षेत्र असंख्यातवें भागसे हीन रहता है), तत्पश्चात् एक आकाश प्रदेशसे हीन साढे सात राजु मात्र मारणान्तिक समुद्घातको कराकर व

♠ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-काप्रतिषु 'उक्कस्स' का खेयणा, दव्ववेयणा' ताप्रतौ 'उक्कस्स कालवेयणा उक्कस्स दव्ववेयणा' इति पाठः। ☼ अ-आ-का-ताप्रतिषु 'सामिणो' इति पाठः। ✲ अ-आप्रत्योः 'हीणक्खेत्तं', काप्रतौ हीणखेत्तं' इति पाठः।

उक्कस्सखेत्तमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्कस्सखेत्तं ट्ठिदं त्ति । तत्तो प्पहुडि हेट्ठा संखेज्जभागहाणीए गच्छदि जाव उक्कस्सखेत्तस्स दोरूव-भागहारो जादो त्ति । तदो प्पहुडि हेट्ठा संखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सखेत्तं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण एगखंडं ट्ठिदं त्ति । तदो प्पहुडि असंखेज्जगुणहीणं होदूण गच्छदि जाव सत्थाणमहामच्छउक्कस्सओगाहणा त्ति । पुणो वि महामच्छोगाहणमेगेगपदेसेहि ऊणं करिय असंखेज्जगुणहाणीए णेदव्वं जाव सित्थमच्छस्स सव्वजहण्णसत्थाणोगाहणो[ओ] त्ति । पुणो सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे । तं जहा- सित्थमच्छेण सव्वजहण्णोगाहणाए वट्टमाणेण णाणावरणुक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए कालवेयणा उक्कस्सा जादा । खेत्तवेयणा पुण णिव्वियप्पअसंखेज्जगुणहीणत्तमुवगया ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३० ॥

सुगमं ।

मार्गदर्शक उक्कस्सा चावि अणुक्कस्सा वा होदि ? ॥

जदि उक्कस्सट्ठिदीए सह उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सविसेसपच्चएण उक्कस्साणुभागो पबद्धो तो कालवेयणाए सह भावो वि उक्कस्सो होदि । उक्कस्सविसेसपच्चयाभावे अणुक्कस्सो चेव ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ॥ ३२ ॥

उत्कृष्ट स्थितिको बँधाकर उत्कृष्ट क्षेत्रको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमें एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट क्षेत्रके स्थित होने तक ले जाना चाहिये । वहांसे लेकर नीचे उत्कृष्ट क्षेत्रको दो अङ्क भागहार होने तक संख्यातभागहानिसे जाता है । फिर वहांसे लेकर नीचे उत्कृष्ट क्षेत्रको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्डके स्थित होने तक संख्यातगुणहानि होकर जाती है । फिर वहांसे लेकर महामत्स्यकी उत्कृष्ट स्वस्थान अवगाहना तक असंख्यातगुणा हीन होकर जाता है । फिर भी महामत्स्यकी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक एक प्रदेशोंसे हीन करके सिक्थ मत्स्यकी सर्वजघन्य स्वस्थान अवगाहना तक असंख्यात गुणहानिसे ले जाना चाहिये । अब सर्वपश्चिम विकल्पको कहते हैं । यथा-सर्वजघन्य अवगाहनामें विद्यमान सिक्थ मत्स्यके द्वारा ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर कालवेदना उत्कृष्ट हो जाती है । परंतु क्षेत्रवेदना विकल्प रहित असंख्यातगुणी हीनताको प्राप्त है ।

उसके उक्त वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? । ३० ।

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । ३१ ।

यदि उत्कृष्ट स्थितिके साथ उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययरूप उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा उत्कृष्ट अनुभाग बांधा गया है तो कालवेदनाके साथ भाव भी उत्कृष्ट होता है और उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययके अभावमें भाव अनुत्कृष्ट ही होता है ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट स्थानोंमें पतित है ॥ ३२ ॥

[ओ] अ-आ-काप्रतिषु ' सत्थाणोगाहणा ' इति पाठः ।

एत्थ जहा उक्कस्सदव्वे भावस्स छट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा एत्थ वि परूवेदव्वं, विसेसाभावादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३३ ॥

सुगममेदं । मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ३४ ॥

दुचरिम-तिचरिमसमयप्पहुडि हेट्ठा जाव अंतोमुहुत्तं ताव पुव्वमेव जदि उक्कस्साणुभागं बंधिदूण णेरइयचरिमसमए दव्वमुक्कस्सं कदं तो भावेण सह दव्वं पि उक्कस्सं होदि । अध भावे उक्कस्से जादे जदि दव्वमुक्कस्सभावं ण पणउदि* तो दव्ववेयणा अणुक्कस्सा होदि त्ति गेण्हिदव्वं ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ॥ ३५ ॥

काणि पंच ट्ठाणाणि? अणंतभागहीण-असंखेज्जभागहीण-संखेज्जभागहीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीणाणि त्ति पंचट्ठाणाणि । एदेसिं पंचट्ठाणाणं जहा उक्कस्सकाले णिरुद्धे दव्वस्स पंचविहा ट्ठाणपरूवणा कदा तहा एत्थवि कायव्वा, अविसेसादो।

यहां जिस प्रकारसे उत्कृष्ट द्रव्यकी विवक्षामें भावके छह स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है, उसी प्रकारसे यहां भी उसकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? । ३३ ।

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । ३४ ।

द्विचरम और त्रिचरम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक यदि पूर्वमें ही उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर नारक भवके अन्तिम समयमें द्रव्यको उत्कृष्ट कर चुका है तो भावके साथ द्रव्य भी उत्कृष्ट होता है। और यदि भावके उत्कृष्ट होनेपर भी द्रव्य उत्कृष्टताको प्राप्त नहीं होता है तो द्रव्यवेदना अनुत्कृष्ट ही होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ ३५ ॥

वे पाँच स्थान कौनसे हैं? अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन और असंख्यातगुणहीन ये वे पाँच स्थान हैं । उत्कृष्ट कालकी विवक्षामें जिस प्रकार इन पाँच स्थानोंसे सम्बन्धित द्रव्यकी पाँच प्रकार स्थानप्ररूपणा की गई है उसी प्रकार यहां भी करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

---

* अ-आ-काप्रतिषु ' अत्थ ', ताप्रतौ ' अन्त्थ (थ) ' इति पाठः । * मप्रतिपाठोऽयम् । अ-काप्रत्योः ' ण वणमदि ' आप्रतौ ' ण वणवदि ', ताप्रतौ ' णवणमदि ' इति पाठः ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३६ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ३७ ॥

जदि उक्कस्साणुभागं बंधिय महामच्छेणुक्कस्सखेत्तं कदं तो भावेण सह खेत्तं पि उक्कस्सं होदि । अधवा, उक्कस्समणुभागं बंधिय जदि खेत्तमुक्कस्सं ण करेदि तो उक्कस्सभावे णिरुद्धे खेत्तमणुक्कस्सं अ होदि त्ति घेत्तव्वं । आ प्रतौ '] ' नास्ति ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ ३८ ॥

कदि चत्तारि ट्ठाणाणि ? असंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि त्ति चत्तारि ट्ठाणाणि । एदेसिं चदुण्णं ट्ठाणाणं जधा उक्कस्सकाले णिरुद्धे परूवणा कदा तधा परूवणा कायव्वा । णवरि चरिमवियप्पे भण्णमाणे सव्वजहण्णोगाहणएइंदिएसु ✡ उक्कस्साणुभागसंतकम्मिएसु चरिमा असंखेज्जगुणहाणी घेत्तव्वा । एइंदिएसु कधमुक्कस्सभावोवलद्धी? ण एस दोसो, सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु उक्कस्साणुभागं बंधिय तग्घादेण विणा एइंदियभावमुवगएसु जहण्णखेत्तेण सह उक्कस्सभावोवलंभादो ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥३६॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ३७ ॥

यदि उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट क्षेत्र किया गया है तो भावके साथ क्षेत्र भी उत्कृष्ट होता है । अथवा, यदि उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर क्षेत्रको उत्कृष्ट नहीं करता है तो उत्कृष्ट भावके विवक्षित होनेपर क्षेत्र अनुत्कृष्ट होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित है ॥ ३८ ॥

वे चार स्थान ये हैं– असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि । उत्कृष्ट कालकी विवक्षामें जिस प्रकार इन चार स्थानोंकी प्ररूपणा की जा चुकी है, उसी प्रकार यहां भी प्ररूपणा करनी चाहिये । विशेष इतना है कि अन्तिम विकल्पका कथन करते समय उत्कृष्ट अनुभागके सत्त्वसे संयुक्त सर्वजघन्य अवगाहनाके धारक एकेन्द्रिय जीवोंमें अन्तिम असंख्यातगुणहानिको ग्रहण करना चाहिये ।

शंका– एकेन्द्रियोंमें उत्कृष्ट भावका पाया जाना कैसे सम्भव है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर उसके घातके बिना एकेन्द्रिय पर्यायको प्राप्त होते हैं उनके जघन्य क्षेत्रके साथ उत्कृष्ट भाव पाया जाता है ।

✡ ताप्रतौ ' जहण्णोगाहणा एइंदिएसु ' इति पाठः ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३९ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ४० ॥

जदि उक्कस्साणुभागसंतेण सह उक्कस्सा ट्ठिदी पबद्धा तो भावेण सह कालो वि उक्कस्सो होदि । अध उक्कस्साणुभागे संते वि उक्कस्सियं ट्ठिदिं ण बंधदि तो उक्कस्सभावे णिरुद्धे कालो अणुक्कस्सो होदि । उक्कस्साणुभागं बंधमाणो णिच्छएण उक्कस्सियं चेव ट्ठिदिं बंधदि, उक्कस्ससंकिलेसेण विणा उक्कस्साणुभागबंधाभावादो । एवं संते कधमुक्कस्साणुभागे णिरुद्धे अणुक्कस्सट्ठिदीए संभवो त्ति? ण एस दोसो, उक्कस्साणुभागेण सह उक्कस्सट्ठिदिं बंधिय पडिभग्गस्स अधट्ठिदिगलणाए उक्कस्स-ट्ठिदीदो समऊणादिवियप्पुवलंभादो । ण च अणुभागस्स अधट्ठिदिगलणाए घादो अत्थि, सरिसधणियपरमाणूणं तत्थुवलंभादो । ण च उक्कस्साणुभागबंधस्स बद्धविदियसमए चेव घादो अत्थि, पडिभग्गपढमसमयप्पहुडि जाव अंतोमुहुत्तकालो ण गदो ताव अणुभागखंडयघादाभावादो ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा-असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ॥ ४१ ॥

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ।३९।

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ४० ॥

यदि उत्कृष्ट अनुभागसत्त्व के साथ उत्कृष्ट स्थिति बांधी गई है तो भावके साथ काल भी उत्कृष्ट होता है । परन्तु यदि उत्कृष्ट अनुभागके होनेपर भी उत्कृष्ट स्थितिको ही बांधता है तो उत्कृष्ट भावके विवक्षित होनेपर काल अनुत्कृष्ट होता है ।

शंका - चूंकि उत्कृष्ट अनुभागको बांधनेवाला जीव निश्चयसे उत्कृष्ट स्थितिको ही बांधता है, क्योंकि, उत्कृष्ट संक्लेशके बिना उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता; अतएव ऐसी स्थितिमें उत्कृष्ट अनुभागकी विवक्षामें अनुत्कृष्ट स्थितिकी सम्भावना कैसे हो सकती है ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागके साथ उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर प्रतिभग्न हुए जीवके अधःस्थितिके गलनेसे उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा एक समय हीन आदि स्थिति विकल्प पाये जाते हैं । और अधःस्थितिके गलनेसे अनुभागका घात कुछ होता नहीं है; क्योंकि, समान घनवाले परमाणु वहां पाये जाते हैं । यदि कहा जाय कि उत्कृष्ट अनुभागबन्धका बन्ध होनेके द्वितीय समयमें ही घात हो जाता है, तो यह भी कहना ठीक नहीं है; क्योंकि, प्रतिभग्न होनेके प्रथम समयसे लेकर जब तक अन्तर्मुहूर्त काल नहीं बीत जाता है तब तक अनुभागकाण्डकघात सम्भव नहीं है ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन और संख्यातगुणहीन इन तीन स्थानोंमें पतित है ॥ ४१ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उक्कस्साणुभागेण सह उक्कस्सट्ठिदिं बंधिय पडिभग्गपढमसमए वट्टमाणस्स भावे उक्कस्से संते कालो असंखेज्जदिभागहीणो होदि, अधट्ठिदीए गलिदेगसमयत्तादो। पडिभग्गविदियसमए वि असंखेज्जभागहीणो चेव होदि, अधट्ठिदीए गलिददुसमयत्तादो। एवं ताव ट्ठिदीए असंखेज्जभागहाणी होदि जाव ट्ठिदिखंडयपढमसमओ त्ति। पुणो ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धाए पढमसमए गलिदे वि असंखेज्जभागहाणी चेव। उक्कीरणद्धाए विदियसमए गलिदे वि असंखेज्जभागहाणी चेव। एवं ताव असंखेज्जभागहाणी होदि जाव ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धाए दुचरिमसमओ गलिदो त्ति। अणुभागो पुण उक्कस्सो चेव, तस्स घादाभावादो। एत्थुवउज्जंतीओ गाहाओ--

ट्ठिदिघादे हंमंते अणुभागा आऊआण सव्वेसिं।
अणुभागेण विणा[✡] वि हु आउअवज्जाण ट्ठिदिघादो॥ १॥
अणुभागे हंमंते ट्ठिदिघादो आउआण सव्वेसिं।
ठिदिघादेण विणा[✡] वि हु आउअवज्जाणमणुभागो॥ २॥

एवं गंतूण पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए उक्कीरणद्धाए चरिमसमएण सह पदिदाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसव्व-जहण्णट्ठिदिखंडयपमाणेण घादिदत्तादो।

संपहि एदेणेव उक्कीरणकालेण पुव्विल्लट्ठिदिखंडयादो समउत्तरट्ठिदिखंडए घादिदे

उत्कृष्ट अनुभागके साथ उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर प्रतिभग्न होनेके प्रथम समयमें वर्तमान जीवके भावके उत्कृष्ट होनेपर काल असंख्यातवें भागसे हीन होता है, क्योंकि, अधः-स्थितिके द्वारा एक समय गल चुका है। प्रतिभग्न होनेके द्वितीय समयमें भी असंख्यातभागहानि ही होती है, क्योंकि, अधःस्थितिमें दो समय गल चुके हैं। इस प्रकारसे स्थितिकांडकके प्रथम समयके प्राप्त होने तक स्थितिमें असंख्यातभागहानि होती है। तत्पश्चात् स्थितिकांडक उत्कीरणकालके प्रथम समयके गलनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। उत्कीरणकालके द्वितीय समयके गलनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकारसे तब तक असंख्यातभागहानि होती है जब तक स्थितिकांडक-उत्कीरणकालका द्विचरम समय गलता है। परन्तु अनुभाग उत्कृष्ट ही रहता है, क्योंकि, उससे घातकी सम्भावना नहीं है। यहाँ उपयुक्त गाथायें--

स्थितिघातके होनेपर सब आयुओंके अनुभागोंका नाश होता है। आयुको छोडकर शेष कर्मोंका अनुभागके बिना भी स्थितिघात होता है॥ १॥

अनुभागका घात होनेपर सब आयुओंका स्थितिघात होता है। स्थितिघातके बिना भी आयुको छोडकर शेष कर्मोंके अनुभागका घात होता है॥ २॥

इस प्रकार जाकर प्रथम स्थितिकाण्डकसम्बन्धी अन्तिम फालीके उत्कीरणकाल सम्बन्धी अन्तिम समयके साथ पतित होनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है, क्योंकि, सबसे जघन्य पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिकांण्डक प्रमाण स्थितियोंका घात हुआ है।

अब इसी उत्कीरणकालसे पहिले स्थितिकांडककी अपेक्षा एक समय अधिक स्थितिकांडकका

✡ ताप्रतौ 'विण' इति पाठः।

अण्णो असंखेज्जभागहाणिवियप्पो होदि । दुसमउत्तरट्ठिदिखंडए घादिदे अण्णो असंखेज्जभागहाणिवियप्पो होदि । एवं णेयव्वं जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण उक्कस्सट्ठिदिं खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तो ट्ठिदिखंडओ पदिदो त्ति । तो वि असंखेज्जभागहाणी चेव । एवं गंतूण उक्कस्ससंखेज्जेण उक्कस्सट्ठिदिं खंडिय तत्थ एगखंडमेत्ते ट्ठिदिखंडए ताए चेव✽ उक्कीरणद्धाए घादिदे संखेज्जभागहाणी होदि । अणुभागो पुणो उक्कस्सो चेव, तस्स घादाभावादो । एत्तो प्पहुडि समउत्तरकमेण ट्ठिदिखंडओ वड्ढाविय घादेदव्वो जाव संखेज्जभागहाणीए चरिमवियप्पो त्ति । पुणो तेणेव उक्कीरणकालेण उक्कस्सट्ठिदीए अद्धे घादिदे संखेज्जगुणहाणीए आदी होदि, दुगुणहीणत्तादो । तत्तो प्पहुडि समउत्तरादिकमेण ट्ठिदिखंडे घादिज्जमाणे संखेज्जगुणहाणी चेव होदि । एवं णेयव्वं जाव उक्कस्साणुभागविरोहिअंतोकोडाकोडि त्ति ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ४२ ॥

जहा णाणावरणीयस्स दव्व-खेत्त-काल-भावेसु एगणिरुंभणं कादूण सेसपरूवणा॑ कदा तहा एदेसिं पि तिण्हं घादिकम्माणं परूवणा कायव्वा, दव्व-खेत्त-काल-भावसामित्तेण विसेसाभावादो

घात होनेपर असंख्यातभागहानिका अन्य विकल्प होता है । दो समय अधिक स्थितिकांडकका घात होनेपर असंख्यातभागहानिका अन्य विकल्प होता है । इस प्रकार जघन्य परीतासंख्यातसे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र स्थितिकांडकके पतित होने तक ले जाना चाहिये । तो भी असंख्यात भागहानि ही रहती है । इस प्रकार जाकर उत्कृष्ट संख्यातसे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डितकर उसमें एक खण्ड मात्र स्थितिकाण्डकका उसी उत्कीरण कालके द्वारा घात होनेपर संख्यातभागहानि होती है । परन्तु अनुभाग उत्कृष्ट ही रहता है, क्योंकि, उसका घात नहीं हुआ है । यहांसे लेकर एक समय अधिकके क्रमसे स्थितिकाण्डकको बढाकर संख्यातभागहानिके अन्तिम विकल्प के प्राप्त होने तक उसका घात करना चाहिये । फिर उसी उत्कीरणकालसे उत्कृष्ट स्थितिके अर्धभागका घात होनेपर संख्यातगुणहानि प्रारम्भ होती है, क्योंकि, उक्त स्थितिमें दुगुणी हानि हो चुकती है । उससे लेकर एक समय अधिक आदिके क्रमसे स्थितिकाण्डकका घात होनेपर संख्यात-गुणहानि ही होती है । इस प्रकारसे उत्कृष्ट अनुभागके अविरोधी अन्तःकोडाकोडि तक जाना चाहिये ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके विषयमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ४२ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावमेंसे किसी एकको विवक्षित करके शेषोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इन तीन घातिया कर्मोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, द्रव्य, क्षेत्र, काल व भावके स्वामित्वसे उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

✽ आप्रतौ '-मेत्ते ट्ठिदिखंडयाए चेव ' इति पाठः । ✡ अ-आ-काप्रतिषु ' परूवणं ' इति पाठः ।

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ४३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ४४ ॥

कुदो ? सत्तमपुढविणेरइयस्स पंचधणुसदुस्सेहस्स उक्कस्सदव्वस्स मा विणासो होहदि त्ति उक्कस्स जोगविरोहिमारणंतियमणुवगयस्स* उक्कस्सोगाहणाए संखेज्ज-घणंगुलपमाणाए लोगपूरणउक्कस्सखेत्तादो असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ४५ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगम ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ४६ ॥

णेरइयचरिमसमए वट्टमाणेण गुणिदकम्मंसिएण कयउक्कस्सदव्वसंचएण जदि उक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो दव्वेण सह कालो वि उक्कस्सो होदि । अध तत्थ जदि उक्कस्सट्ठिदिं ण बंधदि तो अणुक्कस्सा त्ति घेत्तव्वं ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ॥ ४७ ॥

जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ॥ ४३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ४४ ॥

कारण कि पांच सौ धनुष प्रमाण उत्सेधसे संयुक्त जो सातवीं पृथिवीका नारकी, उत्कृष्ट द्रव्यका विनाश न हो, इसलिये उत्कृष्ट योगके विरोधी मरणान्तिक समुद्घातको नहीं प्राप्त हुआ है; उसकी संख्यात घनांगुल प्रमाण उत्कृष्ट अवगाहना लोकपूरण उत्कृष्ट क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन पायी जाती है ।

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ।४५।

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ४६ ॥

जिसने उत्कृष्ट द्रव्यके संचयको किया है ऐसे नारक भवके अन्तिम समयमें वर्तमान गुणितकर्मांशिकके द्वारा यदि उत्कृष्ट स्थिति बांधी गई है तो द्रव्यके साथ काल भी उत्कृष्ट होता है । परन्तु यदि वह उक्त अवस्थामें उत्कृष्ट स्थितिको नहीं बांधता है तो उसके काल-वेदना अनुत्कृष्ट होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय कम है ॥ ४७ ॥

---

* मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु ' मणुसगयस्स ', ताप्रतौ ' अणु (स) गयस्स इति पाठः ।

कुदो? णेरइयदुचरिमसमयम्मि उक्कस्ससंकिलेसाविणाभाविम्हि बद्धउक्कस्सट्ठिदीए चरिमसमयम्मि अधट्ठिदिगलणेण एगसमयपरिहाणिदंसणादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ४८ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ४९ ॥

सुहुमसांपराइयखवगचरिमाणुभागबंधं पेक्खिदूण णेरइयचरिमसमयाणुभागस्स अणंतगुणहीणत्तुवलंभादो। कुदो? सादावेदणीयस्स सुहस्स संकिलेसेण अणुभागहाणिदंसणादो।

जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५० ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चदुट्ठाणपदिदा ॥ ५१ ॥

आगमोद्धारक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उक्कस्सा किण्ण जायदे? ण, णेरइयचरिमसमयगुणिदकम्मंसियम्मि उक्कस्सभावेण अवट्ठिदवेयणीयदव्ववेयणाए लोगपूरणाए वट्टमाणसजोगिकेवलिम्हि संभवविरोहादो। संपहि दव्वस्स चउट्ठाणपदिदत्तं कधं णव्वदे? सुत्ताणुसारिक्खाणादो। तं

कारण कि उत्कृष्ट संक्लेशके अविनाभावी नारक भवके द्विचरम समयमें बांधी गई उत्कृष्ट स्थितिमेंसे चरम समयमें अधःस्थितिके गलनेसे एक समयकी हानि देखी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ।४८।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमतः अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें अनन्तगुणहीन होती है ॥ ४९ ॥

कारण यह कि सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभागकी अपेक्षा नारक जीवका अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभाग अनन्तगुणा हीन पाया जाता है, क्योंकि, साता वेदनीयके शुभ प्रकृति होनेसे संक्लेशके द्वारा उसके अनुभागमें हानि देखी जाती है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ॥ ५० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ५१ ॥

शंका– वह उत्कृष्ट क्यों नहीं होती है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, नारक भवके अन्तिम समयमें वर्तमान गुणितकर्मांशिक जीवमें उत्कृष्ट स्वरूपसे अवस्थित वेदनीय कर्मकी द्रव्य वेदनाके लोकपूरण अवस्थामें रहनेवाले संयोगकेवलीमें होनेका विरोध है ।

शंका– यह अनुत्कृष्ट द्रव्य वेदना चार स्थानोंमें पतित है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान– वह सूत्रका अनुसरण करनेवाले व्याख्यानसे जाना जाता है । यथा– एक

जहा-गुणिदकम्मंसियो सत्तमपुढवीदो आगंतूण पंचिंदियतिरिक्खेसु अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो बादरपुढविकाइएसु अंतोमुहुत्ताउअं बंधिय तत्थ उप्पज्जिय पच्छा मणुसेसु वास-पुधत्ताउअं बंधिदूण कालं कादूणुप्पज्जिय संजमं घेत्तूण खवगसेडिमारुहिय केवलणाणं उप्पाइय लोगपूरणं गदस्स खेत्तमुक्कस्सं जादं । तस्समए दव्वमसंखेज्जभागहीणं, उक्कस्सदव्वं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्क-स्सदव्वधारणादो । एवं संखेज्जभागहीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीणदव्वाणं पि जाणिदूण परूवणा कायव्वा ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५२॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ५३ ॥

कुदो? लोगपूरणाए वट्टमाणअंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीए ✡तीसकोडाकोडिसागरोव-मेहिंतो असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५४ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा भाववेयणा ॥ ५५ ॥

गुणित कर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे आकरके पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें अन्तर्मुहूर्त रहकर फिर पृथिवीकायिक जीवोंमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आयुको बन्धकर उनमें उत्पन्न हुआ । पश्चात् जब वह मनुष्योंमें वर्ष पृथक्त्व आयुको बांधकर मरणको प्राप्त हो उनमें उत्पन्न होकर संयमको ग्रहण करके क्षपकश्रेणिपर चढकर केवलज्ञानको उत्पन्न करके लोकपूरण अवस्थाको प्राप्त होता है तब उसका क्षेत्र उत्कृष्ट होता है । उस समयमें द्रव्य असंख्यातवें भागसे हीन होता है, क्योंकि, उत्कृष्ट द्रव्यको पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डितकर उसमेंसे वह एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यको धारण करता है । इसी प्रकारसे संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन और असंख्यातगुण-हीन द्रव्योंकी भी प्ररूपणा जान करके करनी चाहिये ।

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ।५२।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ५३ ॥

कारण कि लोकपूरण अवस्थामें रहनेवाली अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति तीस कोडाकोडि सागरोपमोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन पायी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ॥ ५४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके भाव वेदना उत्कृष्ट होती है ॥ ५५ ॥

✡ अ-आ-काप्रतिषु 'तीसं' इति पाठः ।

लोगपूरणगदकेवलिम्हि अणुक्कस्सा किण्ण जायदे ? ण, चरिमसमयसुहुमसांपराइयाणं विसरिसपरिणामाभावादो। ण च विसेसपच्चयभेदो वि♠ अत्थि, सव्वेसु एगुक्कस्सपच्चयस्सेव संभवुवलंभादो। ण च जोगभेदेण अणुभागस्स णाणत्तं जुज्जदे, जोगवड्ढि-हाणीहिंतो अणुभागवड्ढि-हाणीणमभावादो। सुहुमसांपराइयचरिमसमए पबद्धउक्कस्साणुभागट्ठिदी जेण बारसमुहुत्तमेत्ता तेण बारसण्हं॰ मुहुत्ताणमब्भंतरे केवलणाणमुप्पाइय सव्वलोगमाऊरिय ट्ठिदाणं भावो उक्कस्सो होदि। बहुएण कालेण कयलोगपूरणाणमुक्कस्सो ण होदि, बारसेहि मुहुत्तेहि उक्कस्साणुभागपरमाणूणं णिस्सेसक्खयदंसणादो। तम्हा लोगपूरणे भाववेयणा उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा होदि त्ति वत्तव्वमिदि ? एत्थ परिहारो उच्चदे, श्री [illegible] लोगपूरणे भाववेयणा उक्कस्सा चेव, अण्णहा सुत्तस्स अप्पमाणत्तप्पसंगादो। ण च सुत्तमप्पमाणं होदि, तब्भावे तस्स सुत्तविरोहादो♣। उत्तं च---

अर्थस्य सूचनात्सम्यक्सूतेर्वार्थस्य॰ सूरिणा।
सूत्रमुक्तमनल्पार्थं सूत्रकारेण तत्त्वतः॰ ॥ ३ ॥

च जुत्तिविरुद्धत्तादो ण सुत्तमेदमिदि वोत्तुं सक्किज्जदे, सुत्तविरुद्धाए जुत्ति-

---

शंका--- लोकपूरण अवस्थाको प्राप्त हुए केवलीमें वह अनुत्कृष्ट क्यों नहीं होती है?

समाधान - नहीं, क्योंकि, अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसांपरायिक जीवोंके विसदृश परिणामोंका अभाव है। इसके अतिरिक्त विशेष प्रत्ययभेद भी यहाँ नहीं है; क्योंकि, उक्त सभी जीवोंमें एक उत्कृष्ट प्रत्ययकी ही सम्भावना पायी जाती है। यदि कहा जाय कि योगके भेदसे अनुभागका भी भेद होना चाहिये, तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि, योगकी वृद्धि व हानिसे अनुभागकी वृद्धि व हानि सम्भव नहीं है।

शंका--- चूंकि सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें बांधी गई उत्कृष्ट-अनुभागस्थिति बारह मुहूर्त प्रमाण होती है, अतएव बारह मुहूर्तोंके भीतर केवलज्ञानको उत्पन्नकर सब लोकको पूर्ण करके स्थित जीवोंका भाव उत्कृष्ट होता है। परन्तु बहुत कालमें लोकपूरण समुद्घातको करनेवाले जीवोंका भाव उत्कृष्ट नहीं होता है, क्योंकि, बारह मुहूर्तोंमें उत्कृष्ट अनुभागके परमाणुओंका निःशेष क्षय देखा जाता है। इसीलिये लोकपूरण अवस्थामें भाववेदना उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ऐसा कहना चाहिये ?

समाधान-- यहाँ उक्त शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है-- लोकपूरण अवस्थामें भाववेदना उत्कृष्ट ही होती है क्योंकि, ऐसा माननेके बिना सूत्रके अप्रमाण ठहरनेका प्रसंग आता है। परंतु सूत्र अप्रमाण होता नहीं है, क्योंकि, अप्रमाण होनेपर उसके सूत्र होनेका विरोध है। कहा भी है--

भली भाँति अर्थका सूचक होनेसे अथवा अर्थका जनक होनेसे बहुत अर्थका बोधक वाक्य सूत्रकार आचार्य के द्वारा यथार्थमें सूत्र कहा गया है ॥ ३ ॥

यदि कहा जाय कि युक्तिविरुद्ध होनेसे यह सूत्र ही नहीं है, तो ऐसा कहना शक्य नहीं है;

♠ अ-आ-काप्रतिषु 'वि' इत्येतत् पदं नोपलभ्यते। ॰ आप्रतौ 'बारसमुहुत्तेण मेत्तेण बारसण्हं', ताप्रतौ बारसमुहुत्तमेत्ता तेण बारसण्हं इति पाठः। ♣ प्रतिषु 'सुत्तस्सविरोहादो' इति पाठः।
॰ ताप्रतौ 'सूत्रेर्वार्थस्य इति पाठः। ॰ उद्धृतमेतज्जयधवलायाम् (१, पृ० १७१.)।

त्ताभावादो। ण च अप्पमाणेण पमाणं बाहिज्जदे, विरोहादो। का सा पुण एत्थ णिरवज्ज[✡]सुत्ताणुकूला तंतजुत्ती ? वुच्चदे– वेयणीयउक्कस्साणुभागबंधस्स ट्ठिदी बारसमुहुत्तमेत्ता। तत्थ सादावेदणीयचिराणट्ठिदीए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताए ट्ठिदकम्मपोग्गला उक्कड्ढिज्जंति अणुभागेण। कुदो ? ' बंधे उक्कड्ढुदि ' त्ति वयणादो। होदु णाम अणुभागस्सुक्कड्डणा, ण ट्ठिदीए[♣]। कुदो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिदीहत्तं णस्सिदूण बारसमुहुत्तट्ठिदिसरूवेण परिणवत्तादो त्ति।

होदु णाम केसिं पि परमाणूणं ट्ठिदीए ओकड्डणा[✲], अण्णहा तत्थ गुणसेडीए अणुववत्तीदो। किंतु ण सव्वेसिं कम्मपरमाणूणं ठिदीणं ओकड्डणा, केसिं पि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए अधट्ठिदिगलिदसेसियाए अवट्ठाणुवलंभादो। ण च अणुभागुक्कड्डणा वि सव्वेसिं कम्मपरमाणूणं होदि, थोवाणं चेव बज्झमाणाणुभागसरूवेण परिणामदंसणादो। तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए ट्ठिदकम्मक्खंधा उक्कस्साणुभागसरूवेण उक्कड्ढिदा बारसमुहुत्ते मोत्तूण पुव्वकोडिकालेण वि ण गलंति त्ति सिद्धं। तेण कारणेण लोगमावूरिदकेवलिम्हि वेयणीयभावो उक्कस्सो चेव, णाणुक्कस्सो।

क्योंकि, जो युक्ति सूत्रके विरुद्ध हो वह वास्तवमें युक्ति ही सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त अप्रमाणके द्वारा प्रमाणको बाधा भी नहीं पहुँचायी जा सकती है, क्योंकि, वैसा होनेमें विरोध है।

शंका–– तो फिर यहाँ सूत्रके अनुकूल वह निर्दोष तंत्रयुक्ति कौनसी है ?

समाधान–– इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी स्थिति बारह मुहूर्त मात्र है। उसमें पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण सातावेदनीयकी चिरकालीन स्थितिमें स्थित कर्मपुद्गल अनुभाग स्वरूपसे उत्कर्ष को प्राप्त होते हैं, क्योंकि, ' बन्धमें उत्कर्षण होता है ' ऐसा सूत्रवचन है।

शंका–– अनुभागका उत्कर्षण भले ही हो, किन्तु स्थितिका उत्कर्षण सम्भव नहीं है; क्योंकि, पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिकी दीर्घता नष्ट हो करके बारह मुहूर्त प्रमाण स्थितिके स्वरूपसे परिणत हो जाती है ?

समाधान–– किन्हीं परमाणुओंकी स्थितिका अपकर्षण भले ही हो, क्योंकि, इसके विना उसमें गुणश्रेणिनिर्जरा नहीं बन सकती। किन्तु सभी कर्मपरमाणुओंकी स्थितियोंका अपकर्षण सम्भव नहीं है, क्योंकि, किन्हीं कर्मपरमाणुओंकी अधःस्थितिके गलनेसे शेष रही पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिका अवस्थान पाया जाता है। इसके अतिरिक्त अनुभागका उत्कर्षण भी सभी परमाणुओंका नहीं होता, क्योंकि, थोडे ही कर्मपरमाणुओंका बांधे जानेवाले अनुभागके स्वरूपसे परिणमन देखा जाता है। इस कारण पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिमें स्थित कर्मस्कन्ध उत्कृष्ट अनुभाग स्वरूपसे उत्कर्षणको प्राप्त होकर बारह मुहूर्तोंको छोडकर पूर्वकोटि प्रमाण कालमें भी नहीं गलते हैं, यह सिद्ध है। इसीलिये लोकपूरण अवस्थाको प्राप्त केवलीमें वेदनीयका भाव उत्कृष्ट ही होता है, अनुत्कृष्ट नहीं होता।

✡ अ-आ-काप्रतिषु ' णिरवज्ज ' इति पाठः। ♣ ताप्रतौ ' उक्कड्डणा ए (ण) ट्ठिदीए ' इति पाठः। ✲ प्रतिषु ' ओकड्डणाए ' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५६ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ५७ ॥

जदि णेरइयचरिमसमए गुणिदकम्मंसिए कयउक्कस्सदव्वे वेयणीयस्स उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो दीसदि तो कालेण सह दव्वं पि उक्कस्सं होदि अध तत्तो हेट्ठा उवरिं वा जदि उक्कस्सट्ठिदी बज्झदि तो उक्कस्सियाए कालवेयणाए उक्कस्सिया दव्ववेयणा ण लब्भदि त्ति अणुक्कस्सा त्ति भणिदं ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ॥ ५८ ॥

काणि पंचट्ठाणाणि ? अणंतभागहाणि-असंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि त्ति पंचट्ठाणाणि । एदेसिं ठाणाणं परूवणा जहा णाणावरणीयस्स परूविदा तहा परूवेदव्वा ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५९ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ६० ॥

जिसके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ५७ ॥

यदि नारक भवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेवाले गुणितकर्मांशिकके वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध दिखता है तो कालके साथ द्रव्य भी उत्कृष्ट होता है । परन्तु यदि उत्कृष्ट स्थिति उससे नीचे या ऊपर बंधती है तो उत्कृष्ट कालवेदनाके साथ उत्कृष्ट द्रव्यवेदना नहीं पायी जाती है, अतएव सूत्रमें 'अनुत्कृष्ट' ऐसा कहा है ।

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट पांच स्थानोंमें पतित है ॥ ५८ ॥

वे पाँच स्थान कौनसे हैं ? अनन्तभागहानि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि ये वे पाँच स्थान हैं । इन स्थानोंकी प्ररूपणा जैसे ज्ञानावरणीयके विषयमें की गई है वैसे ही यहाँ भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ६० ॥

ताप्रतौ 'लब्भदि त्ति भणिदं' इति पाठः ।

कुदो ? अद्धट्ठमरज्जूणमुक्कमारणंतिएण महामच्छेण उक्कस्सट्ठिदीए㋐ पबद्धाए संतीए तक्खेत्तस्स वि लोगपूरणगदकेवलिखेत्तादो असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६१ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ६२ ॥

कुदो ? उक्कस्सट्ठिदीए सह असादावेदणीयउक्कस्साणुभागे बद्धे वि तस्स अणुभागस्स सुहुमसांपराइयस्स चरिमसमए पबद्धाणुभागादो अणंतगुणहीणत्तुवलंभादो। एदं कुदो उवलब्भदे ? चउसट्ठिवदियअप्पाबहुगादो।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६३ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ ६४ ॥

कुदो ? णेरइयचरिमसमए जादवेयणीयउक्कस्सदव्वस्स सुहुमसांपराइयचरिमसमए उक्कस्सभावेण सह वुत्तिविरोहादो। तम्हा णियमा अणुक्कस्सत्तं सिद्धं। णियमा

कारण कि साढेसात राजु प्रमाण मारणान्तिक समुद्घातको करनेवाले महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बाँधनेपर उसका क्षेत्र भी लोकपूरण समुद्घातको प्राप्त केवलीके क्षेत्रसे असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उसके भावकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ ६२ ॥

कारण यह कि उत्कृष्ट स्थितिके साथ असाता वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधनेपर भी उसका अनुभाग सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें बाँधे गये अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन पाया जाता है।

शंका- यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान- वह चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

जिसके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ६४ ॥

कारण कि नारक भवके अन्तिम समयमें उत्पन्न वेदनीयके उत्कृष्ट द्रव्यका सूक्ष्मसाम्परायिकके अंतिम समयमें उत्कृष्ट भावके साथ रहना विरुद्ध है। इस कारण वह नियमसे अनुत्कृष्ट होती है, यह सिद्ध है। नियमसे अनुत्कृष्ट भी होकर वह चार स्थानोंमें पतित है। यथा-एक

㋐ अ-आ-काप्रतिषु 'ट्ठिदीए' इति पाठः।

अणुक्कस्सा वि होदूणच उट्ठाणपदिदा। तं जहा—एगो गुणिदकम्मंसियो णेरइयचरिमसमए उक्कस्सं दव्वं काऊण णिग्गंतूण पंचिंदियतिरिक्खेसु उप्पज्जिय दो-तिण्णिभवग्गहणाणि एइंदिएसु गहिय पुणो पच्छा मणुस्सेसुप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्सियो संजमं पडिवण्णो। पुणो सव्वलहुएण कालेण खवगसेडिमारुहिय चरिमसमयसुहुमसांपराइयो होदूण उक्कस्साणुभागो पबद्धो, तस्स दव्ववेयणा असंखेज्जभागहीणा, गुणसेडिणिज्जराए गलिदासंखेज्जसमयपबद्धत्तादो। एत्तो प्पहुडि एगेगपरमाणुहाणिकमेण असंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीयो जाणिदूण दव्वस्स परूवेदव्वाओ जाव खविदकम्मंसियसव्वजहण्णदव्वं[1] ट्ठिदं ति।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६५ ॥

सुगमं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ६६ ॥

जदि लोगपूरणे सजोगिकेवली वट्टदि तो भावेण सह खेत्तं पि उक्कस्सं होदि। अध ण वट्टदि भावो चेव उक्कस्सो, ण खेत्तं; लोगपूरणं मोत्तूण तस्स अण्णत्थ उक्कस्सत्ताभावादो।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ६७ ॥

गुणितकर्मांशिक जीव नारक भवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट द्रव्यको करके वहाँ से निकलकर पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें उत्पन्न हो एकेन्द्रिय जीवोंमें दो तीन भवग्रहणोंको बिताकर फिर पीछे मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे लेकर आठ वर्षका हो संयमको प्राप्त हुआ। पश्चात् सर्वलघु कालमें क्षपक श्रेणिपर चढ़कर अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धको प्राप्त हुआ। उसके द्रव्यवेदना असंख्यातभागहीन होती है, क्योंकि, उसके गुणश्रेणिनिर्जरा द्वारा असंख्यात समयप्रबद्ध गल चुके है। यहाँ से लेकर एक एक परमाणुकी हानिके क्रमसे क्षपितकर्मांशिकके सर्वजघन्य द्रव्यके स्थित होने तक द्रव्यके विषयमें असंख्यातभागहानि, संख्यात भागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिको जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ६६ ॥

यदि सयोगकेवली लोकपूरण समुद्घातमें प्रवर्तमान है तो भावके साथ क्षेत्र भी उत्कृष्ट होता है। और यदि उसमें प्रवर्तमान नहीं है तो भाव ही उत्कृष्ट होता है, क्षेत्र उत्कृष्ट नहीं होता, क्योंकि, लोकपूरण समुद्घातको छोड़कर अन्यत्र उसकी उत्कृष्टताका अभाव है।

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन और असंख्यातगुणहीन इन दो स्थानोंमें पतित है ॥ ६७ ॥

---

[1] अ आ-काप्रतिषु 'भव्वलहुएण दव्वं' इति पाठः।

उक्कस्सभावेण सह मंथे वट्टमाणस्स खेत्तं लोगपूरणखेत्तादो असंखेज्ज-भागहीणं, वादवलयावरुद्धखेत्तमेत्तेण परिहीणत्तादो। सत्थाण-दंड-कवाडगदकेवलि-खेत्ताणि उक्कस्साणुभागसहचरिदाणि पुण असंखेज्जगुणहीणाणि, एदेहि तीहि वि खेत्तेहि पुध पुध घणलोगे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो। तेण वुट्ठाणपदिदा चेव अणुक्कस्सखेत्तवेयणा त्ति सिद्धं।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा ॥ ६८ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ६९ ॥

जत्थ वेयणीयभाववेयणा उक्कस्सा तत्थ तस्स कालवेयणा अणुक्कस्सा चेव सुहुमसांपराइयप्पहुडि उवरि सव्वत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए अंतो-मुहुत्तमेत्ताए वा उवलंभादो। होंता वि असंखेज्जगुणहीणा चेव, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण तीसंकोडाकोडिसागरोवमेसु ओवट्टिदेसु असंखेज्जरूवोवलंभादो।

एवं णामा-गोदाणं ॥ ७० ॥

जहा वेयणीयस्स उक्कस्ससण्णियासो कदो तहा णामा-गोदाणं पि कायव्वो,

---

उत्कृष्ट भावके साथ मंथ समुद्घातमें वर्तमान केवलीका क्षेत्र लोकपूरण समुद्घातमें वर्तमान केवलीके क्षेत्रसे असंख्यातभागहीन होता है, क्योंकि, वह वातवलयसे रोके गये क्षेत्रके प्रमाणसे हीन है। उत्कृष्ट अनुभागके साथ आये हुए स्वस्थान, दण्डसमुद्घात और कपाटसमुद्-घातको प्राप्त केवलीके क्षेत्र उससे असंख्यातगुणे हीन होते हैं, क्योंकि, इन तीनों ही क्षेत्रोंका पृथक् पृथक् घनलोकमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं। इस कारण अनुत्कृष्ट क्षेत्र वेदना दो स्थानोंमें पतित है, यह सिद्ध है।

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥६८॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ६९ ॥

जहाँ वेदनीयकी भाववेदना उत्कृष्ट होती है, वहां उसकी कालवेदना अनुत्कृष्ट ही होती है, क्योंकि, सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानसे लेकर आगे सब जगह पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थिति अथवा अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति पायी जाती है। उतनी मात्र होकर भी वह असंख्यातगुणी हीन ही होती है, क्योंकि, पल्योपमके असंख्यातवें भागका तीस कोडाकोडि सागरोपमोंमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं।

इसी प्रकार नाम और गोत्र कर्मोंके विषयमें भी उक्त प्ररूपणा करनी चाहिये ॥७०॥

जिस प्रकार वेदनीय कर्मके विषयमें उत्कृष्ट संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार नाम और

ता-प्रतौ 'उक्कस्सभावेण' इति पाठः। * आ-काप्रत्योः 'मंथेववट्टमाणस्स', ताप्रतौ 'मंथे (मच्छे) वट्टमाणस्स' इति पाठः। ◎ अप्रतौ 'संखेज्जगुणा' इति पाठः। ❖ अ-आप्रत्योः 'अंतोमुहुत्तमेत्ताणं उवलंभादो' काप्रतौ 'अंतोमुहुत्तमेत्ताणि उवलंभादो' इति पाठः।

दव्व-खेत्त-काल-भावुक्कस्ससामित्तएहि विसेसाभावादो ।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७१ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ७२ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो णियमेण खेत्तस्स अणुक्कस्सत्तं? लोगपूरणगदसजोगिकेवलिम्हि जादुक्कस्सखेत्तस्स उक्कस्सदव्वसामिजलचरम्मि अणुवलंभादो । असंखेज्जगुणहीणत्तं कुतो णव्वदे ? उक्कस्सदव्वसामिजलचरखेत्तेण संखेज्जघणंगुलमेत्तेण घणंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्तेण वा घणलोगे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जभागहीणा ॥ ७४ ॥

जलचरेसु उक्कस्सदव्वसामिएसु उक्कस्सट्ठिदिबंधो किण्ण जायदे ? ण, आउअस्स पुव्वकोडितिभागमाबाहं काऊण तेत्तीससागरोवमेसु बज्झमाणेसु चेव

गोत्र कर्मोंके विषयमें भी करना चाहिये, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव सम्बन्धी उत्कृष्ट स्वामित्वसे उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यसे उत्कृष्ट होती है उसके वह क्या क्षेत्रसे उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७२ ॥

शंका- क्षेत्रकी नियमित अनुत्कृष्टता कैसे सम्भव है ?

समाधान- इसका कारण यह है कि लोकपूरण समुद्घातको प्राप्त सयोगकेवलीके जो उत्कृष्ट क्षेत्र होता है वह उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी जलचर जीवमें नहीं पाया जाता ।

शंका- उसकी असंख्यातगुणहीनता किस प्रमाण से जानी जाती है ?

समाधान- उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी जलचर जीवका जो संख्यात घनांगुल प्रमाण अथवा घनांगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र होता है उसका घनलोकमें भाग देनेपर चूंकि असंख्यात रूप पाये जाते हैं, अतः इससे उसकी असंख्यातगुणी हीनता सिद्ध है ।

उसके उक्त वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥७३॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७४ ॥

शंका-जो जलचर जीव उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी हैं उनमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध क्यों नहीं होता?

समाधान- नहीं, क्योंकि, पूर्वकोटिके त्रिभाग प्रमाण आयुकी आबाधाको करके तेतीस

उक्कस्स ट्ठिदित्तुवलंभादो। ण च तेत्तीससागरोवमाणमेत्थ बंधो संभवदि, अइसंकिलेसेण भुंजमाणाउअकम्मक्खंधाणं बहूणं गलणप्पसंगादो। तम्हा जलचरेसु उक्कस्सदव्वसामिएसु आउअबंधो अणुक्कस्सो चेव। होंतो वि पुव्वकोडिमेत्तो चेव, हेट्ठिमआउअवियप्पेसु बज्झमाणेसु आउअबंधगद्धाए थोवत्तप्पसंगादो। असंखेज्जगुणहीणत्तं कत्तो णव्वदे? सादिरेयपुव्वकोडीए तेत्तीससागरोवमेसु पुव्वकोडितिभागाहिएसु ओवट्टिदेसु असंखेज्जरूवोवलंभादो।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७५ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ७६ ॥

किमट्ठमुक्कस्सा भाववेयणा एत्थ ण होदि? ण, अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअम्मि जादुक्कस्साणुभागस्स तिरिक्खाउअम्मि वुत्तिविरोहादो। जलचराउअभावस्स उक्कस्सभावादो(1) अणंतगुणहीणत्तं कत्तो णव्वदे? तिरिक्खाउअअणुभागादो देवाउअअणुभागो अणंतगुणो त्ति भणिदचउसट्ठिवदियअप्पाबहुगादो णव्वदे।

सागरोपम प्रमाण आयुको बाँधनेवाले जीवोंमें ही उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पाया जाता है। परन्तु यहाँ तेतीस सागरोपमोंका बन्ध सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर अत्यंत संक्लेशसे भुज्यमान आयु कर्मके बहुतसे स्कन्धोंके गलनेका प्रसंग आता है। इस कारण उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी जलचर जीवोंमें आयुका बन्ध अनुत्कृष्ट ही होता है। अनुत्कृष्ट होकर भी वह पूर्वकोटि मात्र ही होता है, क्योंकि, नीचेके आयुविकल्पोंके बाँधनेपर आयुबन्धक कालके स्तोक होनेका प्रसंग आता है।

शंका– उसकी असंख्यातगुणी हीनता किस प्रमाणसे जानी जाती है?

समाधान– साधिक पूर्वकोटिका पूर्वकोटित्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपमोंमें भाग देनेपर चूंकि असंख्यात रूप पाये जाते हैं, अतः इसीसे उसकी असंख्यातगुणहीनता सिद्ध है।

उसके उक्त वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥७५॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७६ ॥

शंका– यहाँ उत्कृष्ट भाववेदना क्यों नहीं होती है?

समाधान– नहीं, क्योंकि, अप्रमत्तसंयतके द्वारा बाँधी गई देवायुमें उत्पन्न उत्कृष्ट अनुभागके तिर्यंच आयुमें रहनेका विरोध है।

शंका– उत्कृष्ट भावकी अपेक्षा जलचर सम्बन्धी आयुका भाव अनन्तगुण हीन है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान– यह "तिर्यंच आयुके अनुभागसे देवायुका अनुभाग अनन्तगुणा है" इस चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

---

(1) ताप्रतौ, 'उक्कस्सदव्वाभो' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

जस्स आउअवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७७ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ७८ ॥

दव्ववेयणा उक्कस्सा किण्ण जायदे ? ण, दोहि आउअबंधगद्धाहि उक्कस्सजोगविसिट्ठाहि जलचरेसु संचिदुक्कस्सदव्वस्स केवलिम्हि तिहुवणं पसरिय ट्ठिदम्मि संभवविरोहादो । कधं संखेज्जगुणहीणत्तं ? ण, उक्कस्सजोगेण उक्कस्सबंधगद्धाए मणुसाउअं बंधिय मणुसेसु उप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्सेहि संजमं घेत्तूण सव्वलहुमंतोमुहुत्तेण कालेण केवलणाणमुप्पाइय लोगमावूरिय ट्ठिदम्मि जं दव्वं तस्स संखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो । दोहि बंधगद्धाहि संचिदुक्कस्सदव्वादो एदमेगबंधगद्धासंचिददव्वं किंचूणद्धमेत्तं होदूण मणुस्सेसु गलिदबहुसंखेज्जदिभागत्तादो संखेज्जगुणहीणं होदि त्ति भणिदं होदि । जहण्णबंधगद्धाए बद्धे वि उक्कस्सदव्वादो

जिस जीवके आयुकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन व असंख्यातगुणहीन इन दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ ७८ ॥

शंका– द्रव्यवेदना उत्कृष्ट क्यों नहीं होती है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट योगसे विशेषताको प्राप्त हुए दो आयुबंधक कालोंके द्वारा जो उत्कृष्ट द्रव्य जलचर जीवोंमें संचयको प्राप्त है उसकी तीन लोकोंमें फैलकर स्थित हुए केवलीमें सम्भावना नहीं है ।

शंका– वह संख्यातगुणा हीन कैसे है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट योगके द्वारा उत्कृष्ट बन्धककालमें मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो गर्भसे लेकर आठ वर्षों में संयमको ग्रहणकर सर्वलघु अन्तर्मुहूर्त कालमें केवलज्ञानको उत्पन्नकर लोकको पूर्ण करके स्थित हुए केवलीमें जो द्रव्य होता है वह संख्यातगुणा हीन पाया जाता है । दो बन्धककालों द्वारा संचयको प्राप्त हुए उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा यह एक बन्धककाल द्वारा संचित द्रव्य कुछ कम अर्ध भाग प्रमाण होकर मनुष्योंमें संख्यात बहुभागके गल जानेसे संख्यातगुणा हीन होता है, यह उसका अभिप्राय है ।

शंका– जघन्य बन्धक कालके द्वारा बाँधनेपर भी उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा लोक पूरणसमुद्घातमें वर्तमान केवलीका आयु द्रव्य चूंकि संख्यातगुणा हीन ही होता है, अतः उसकी असंख्यातगुणहीनता कैसे सम्भव है ?

तिहुवणगयजिणाउयदव्वं (अ)संखेज्जगुणहीणं चेव होदि त्ति कधमसंखेज्जगुणहीणत्तं? ण, असंखेज्जगुणहीणजोगेण मणुस्साउअं बंधिय मणुस्सेसु उप्पज्जिय केवलणाणमुप्पाइय सव्वलोगं गयकेवलिस्स असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७९ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ८० ॥

लोगे आवुण्णे (ब) जेण आउअट्ठिदी अंतोमुहुत्तमेत्ता चेव तेण कालवेयणा उक्कस्सट्ठिदीदो असंखेज्जगुणहीणा त्ति सिद्धं ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८१ ॥

सुगमं

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ८२ ॥

कुदो? मणुस्साउअउक्कस्साणुभागादो अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअउक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८३ ॥

समाधान—नहीं, क्योंकि असंख्यातगुणहीन योगके द्वारा मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो केवलज्ञानको उत्पन्न करके सर्वलोकको प्राप्त केवलीका द्रव्य असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ८० ॥

चूंकि लोकपूरण समुद्घातमें आयुकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त मात्र होती है, अतएव काल-वेदना उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन है, यह सिद्ध है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ ८२ ॥

कारण यह कि मनुष्यायुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अप्रमत्तसंयतके द्वारा बाँधी गई देवायुका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिसके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८३ ॥

(अ) अ-आ-ताप्रतिषु 'जिणाउवदव्वं' इति पाठः । (ब) अ-आ-काप्रतिषु 'आउण्णे' इति पाठः ।

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ८४ ॥

तं–जहा उक्कस्सजोगेण उक्कस्सियं बंधिय मणुस्सेसु उप्पज्जिय संजमं घेत्तूण पुव्वकोडितिभागपढमसमए देवाउए पबद्धे (1)आउअस्स उक्कस्सट्ठिदी होदि, पुव्वकोडितिभागाहियतेत्तीससागरोवमपमाणत्तादो। उवरि किण्ण उक्कस्सट्ठिदी जायदे? ण, अधट्ठिदिगलणाए समयं पडि गलमाणियाए उवरि उक्कस्सत्तविरोहादो। एत्थ जं दव्वं तमुक्कस्सदव्वस्स संखेज्जदिभागो। कुदो? सादिरेयछब्भागत्तादो। एवमुक्कस्सबंधगद्धाए दुभागेण आउवे बंधाविदे वि संखेज्जगुणहीणं (2)होदि, सादिरेयबारसभागत्तादो। एवं (*) बंधगद्धामस्सिदूण एदं दव्वमुक्कस्सदव्वस्स संखेज्जदिभागो (*) चेव होदि। जोगमस्सिदूण पुण संखेज्जगुणहीणमसंखेज्जगुणहीणं च संलब्भदि (3), संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीणजोगाणं संभवादो। तम्हा आउअदव्ववेयणा सगुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण उक्कस्सकालाविणाभाविणी विट्ठाणपदिदा चेव होदि त्ति सिद्धं।

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन व असंख्यातगुणहीन इन दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ ८४ ॥

वह इस प्रकारसे–उत्कृष्ट योगके द्वारा उत्कृष्ट बन्धककालमें मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो संयमको ग्रहणकर पूर्वकोटित्रिभागके प्रथम समयमें देवायुके बाँधनेपर आयुकी उत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि, वह पूर्वकोटित्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण होती है।

शंका– ऊपर उत्कृष्ट स्थिति क्यों नहीं होती?

समाधान– नहीं, क्योंकि ऊपर अधःस्थितिके गलनेसे प्रत्येक समयमें गलनेवाली उसके उत्कृष्ट होनेका विरोध है।

यहाँ जो द्रव्य है वह उत्कृष्ट द्रव्यके संख्यातवें भाग प्रमाण है, क्योंकि, वह साधिक छठे भाग प्रमाण है। इस प्रकार उत्कृष्ट बन्धक कालके द्वितीय भागसे आयुके बँधानेपर भी द्रव्य संख्यातगुणा हीन ही होता है, क्योंकि, वह साधिक बारहवें भाग प्रमाण होता है। इस प्रकार बन्धककालका आश्रय करके यह द्रव्य उत्कृष्ट द्रव्यके संख्यातवें भाग ही होता है। परन्तु योगका आश्रय करके वह संख्यातगुणा हीन और असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है, क्योंकि, संख्यातगुणा हीन और असंख्यातगुणा हीन योगों की सम्भावना है। इस कारण आयु कर्मकी द्रव्यवेदना अपने उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा करके उत्कृष्ट कालके साथ अविनाभाविनी होकर उक्त दो स्थानोंमें ही पतित होती है, यह सिद्ध है।

(1) अ-आ-काप्रतिषु 'पबद्धो' इति पाठः। (2) अ-आ-काप्रतिषु 'असंखेज्जगुणहीण' इति पाठः। (*) अ-आ-काप्रतिषु 'बंधगद्धा' इति पाठः। (*) अ-आप्रत्योः 'संखेज्जदिभागे' इतिपाठः। (3) ताप्रतौ 'लब्भदि' इति पाठः।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८५ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ८६ ॥

कुदो? अद्धट्ठरयणिमादिं कादूण जाव पंचधणुस्सद-पणवीसुत्तरदीहत्तुवलक्खियाणं उक्कस्सकालसामित्तम्हि संभवंतखेत्ताणं घणलोगस्स असंखेज्जदिभागत्तुवलंभादो। अद्धट्ठमरज्जूणं मुक्कमारणंतियमहामच्छखेत्तं कालसामिस्स उक्कस्समिदि किण्ण घेप्पदे? ण एस दोसो, अबद्धाउआण बज्झमाणाउआणं च जीवाणं मारणंतियाभावादो।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८७ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ८८ ॥

कुदो? आउअस्स उक्कस्सकालवेयणा आउअबंधपढमसमए वट्टमाणपमत्तसंजदम्मि होदि। उक्कस्सभाववेयणा पुण आउअबंधगद्धाए चरिमसमए वट्टमाणस्स अप्पमत्तसंजदम्मि पमत्तविसोहीदो अणंतगुणविसोहिपरिणामस्स ✪ होदि। तेण कारणेण

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥८५॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ८६ ॥

कारण कि साढे तीन रत्निसे लेकर पांच सौ पच्चीस धनुष प्रमाण दीर्घतासे उपलक्षित जिन क्षेत्रोंकी उत्कृष्ट काल स्वामित्वमें सम्भावना है वे घनलोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण पाये जाते हैं ।

शंका– साढे सात राजु मारणान्तिक समुद्घातको करनेवाले महामत्स्यका क्षेत्र काल स्वामीका उत्कृष्ट क्षेत्र है, ऐसा ग्रहण क्यों नहीं करते ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अबद्धायुष्क और वर्तमानमें आयुको बांधनेवाले जीवोंके मारणान्तिक समुद्घात नहीं होता ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥८७॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ ८८ ॥

कारण यह कि आयुकी उत्कृष्ट कालवेदना आयुबन्धके प्रथम समयमें वर्तमान प्रमत्तसंयत जीवके होती है।परंतु उसकी उत्कृष्ट भाववेदना आयुबंधक कालके अंतिम समयमें वर्तमान व प्रमत्त संयतकी विशुद्धिसे अनन्तगुणे विशुद्धिपरिणामवाले अप्रमत्तसंयत जीवके होती है । इसी कारणसे

✪ आप्रतौ 'विसोहीए परिणामस्स' इति पाठः ।

अणंतगुणविसोहिपरिणामेण बद्धाउअउक्कस्साणुभागादो अणंतगुणहीणविसोहिपरिणामेण बद्धअणुभागो ॐ उक्कस्सकालाविणाभावी अणंतगुणहीणो त्ति ॐ ।

जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८९ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ९० ॥

तं जहा– उक्कस्सबंधगद्धाए उक्कस्सजोगेण य जदि मणुस्साउअं बंधिऊण मणुस्सेसु उप्पज्जिय संजमं घेत्तूण उक्कस्साणुभागं बंधदि तो भावुक्कस्सम्मि दव्ववेयणा सगुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण संखेज्जभागहीणा होदि । कुदो? भुंजमाणाउअस्स सादिरेयबेतिभागमेत्तदव्वे गलिदे संते भावस्स उक्कस्सत्तुप्पत्तीदो। मणुस्साउए उक्कस्सबंधगद्धाए दुभागेण बंधाविदे छब्भागाहि चदुब्भागमेत्ता होदि । एवं गंतूण भावसामिस्स दो वि आउआणि उक्कस्सबंधगद्धाए दुभागेण बंधाविय भावे उक्कस्से कदे संखेज्जगुणहाणी होदि, ओघुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण भावसामिदव्वस्स तिभागत्तुवलंभादो । एवं

अनन्तगुणे विशुद्धि परिणामके द्वारा बाँधी गई आयुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन विशुद्धिपरिणामके द्वारा बांधा गया अनुभाग उत्कृष्ट कालका अविनाभावी व अनन्तगुणा हीन है।

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन व असंख्यातगुणहीन इन तीन स्थानोंमें पतित होती है ॥ ९० ॥

वह इस प्रकारसे–उत्कृष्ट बन्धककाल और उत्कृष्ट योगके द्वारा यदि मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो संयमको ग्रहण करके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधता है तो भावकी उत्कृष्टतामें द्रव्यवेदना अपने उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातभाग हीन होती है, क्योंकि, भुज्यमान आयु सम्बन्धी साधिक दो त्रिभाग प्रमाण द्रव्यके गल जानेपर भावकी उत्कृष्टता उत्पन्न होती है। उत्कृष्ट बंधककालके द्वितीय भागसे मनुष्यायुको बँधानेपर उक्त वेदना छह भागोंमें चार भाग प्रमाण होती है। इस प्रकार जाकर भावस्वामीके दोनों ही आयुओंको उत्कृष्ट बन्धक कालके द्वितीय भागसे बंधाकर भावके उत्कृष्ट करनेपर संख्यातगुणहानि होती है, क्योंकि, ओघ उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा भाव स्वामीका द्रव्य तृतीय भाग प्रमाण पाया जाता है । इस प्रकार बन्धक कालकी हानिसे

ॐ आप्रतौ 'त्तिसोहिपरिणामेणाणुभागो बद्धउक्कस्स' इति पाठः । ॐ अ-आ-काप्रतिषु 'हीणा त्ति' इति पाठः ।

बंधगद्धापरिहाणीदो संखेज्जगुणहाणी परूवेदव्वा । दो वि बंधगद्धाओ उक्कस्साओ(१) करिय असंखेज्जगुणहीणजोगेण बंधाविय भावे उक्कस्से कदे असंखेज्जगुणहाणी होदि । तम्हा उक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण भावसामिदव्वं तिट्ठाणपदिदं ति घेत्तव्वं ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ९१ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ९२ ॥

कुदो? भावसामिउक्कस्सखेत्तस्स वि घणलोगस्स असंखेज्जदिभागत्तुवलंभादो। ण च आउअस्स उक्कस्स भावो लोगपूरणे संभवदि, बद्धाउआणं खवगसेडिमारुहणाभावादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ९३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ९४ ॥

ठिदिबंधे उक्कस्से जादे पुणो पच्छा अंतोमुहुत्तट्ठिदीए गलिदाए चेव उक्कस्स-भावबंधो होदि त्ति भावसामिकालवेयणा असंखेज्जभागहीणा । एवमसंखेज्जभागहीणा

संख्यात गुणहानिकी प्ररूपणा करनी चाहिये । दोनों बन्धककालोंको उत्कृष्ट करके असंख्यातगुण-हीन योगसे बंधाकर भावके उत्कृष्ट करनेपर असंख्यातगुणहानि होती है । इस कारण उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा करके भावस्वामीका द्रव्य तीन स्थानोंमें पतित है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ९१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ९२ ॥

कारण कि भावस्वामीका उत्कृष्ट क्षेत्र भी घनलोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण पाया जाता है। यदि कहा जाय कि आयुका उत्कृष्ट भाव लोकपूरण समुद्घातमें सम्भव है, तो यह ठीक नहीं है, क्योंकि, बद्धायुष्क जीवोंके क्षपक श्रेणिपर आरोहण करना सम्भव नहीं है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ९३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन संख्यातगुणहीन व असंख्यातगुणहीन इन चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ९४ ॥

स्थितिबन्धके उत्कृष्ट होनेपर फिर पश्चात् अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थितिके गल जानेपर ही चूंकि उत्कृष्ट भावबन्ध होता है, अतएव भावस्वामीकी कालवेदना असंख्यात भागहीन होती है । इस

---

(१) ताप्रतौ 'उक्कस्साओ' इति पाठः ।

होदूण ताव गच्छदि जाव उक्कस्साउअमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडमेत्तं मणुस्सेसु देवेसु च ण गलिदं ति। तम्हि संपुण्णे गलिदे संखेज्जभागहाणी होदि। तत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जावुक्कस्सट्ठिदीए अद्धं गलिदं ति। तत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जावुक्कस्सट्ठिदिं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं ट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव बद्धाउअदेवचरिमसमओ त्ति। सव्वत्थ भावो उक्कस्सो चेव, सरिसधणियपरमाणुहाणीए भावहाणीए अभावादो। अंतोमुहुत्तचरिमसमयस्स कधमुक्कस्साणुभागसंभवो? ण, तस्स अणुभागखंडयघादाभावादो। तम्हा चउट्ठाणपदिदा कालवेयणा त्ति सद्दहेयव्वं। चउट्ठाणपदिदा त्ति ण वत्तव्वं, असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा इच्चेदेणेव सिद्धत्तादो? ण एस दोसो, दव्वट्ठियणयाणुग्गहट्ठं तदुत्तीदो। ण च एक्कस्सेव[1] वयणस्स जिणा अणुग्गहं कुणंति, समाणत्ताभावेण जिणत्तस्सेव* अभावप्पसंगादो। एवमुक्कस्सओ सत्थाणवेयणासण्णियासो समत्तो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जो सो थप्पो जहण्णओ सत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ ९५ ॥

प्रकार असंख्यातभागहीन होकर तब तक जाती है जब तक कि उत्कृष्ट आयुको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड प्रमाण मनुष्यों और देवोंमें नहीं गलित हो जाता है। उसके सम्पूर्ण गल जानेपर संख्यातभागहानि होती है। वहाँसे लेकर आगे उत्कृष्ट स्थितिका अर्ध भाग गलित होने तक संख्यातभागहानि होकर जाती है। उससे लेकर आगे उत्कृष्ट स्थितिको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित कर उनमें एक खण्डके स्थित होने तक संख्यातगुणहानि होकर जाती है। उससे आगे बद्धायुष्क देवके अन्तिम समय तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है। भाव सर्वत्र उत्कृष्ट ही रहता है, क्योंकि समान धनवाले परमाणुओंकी हानिसे भावहानिका अभाव है।

शंका– अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट अनुभागकी सम्भावना कैसे है?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उसके अनुभागकाण्डकघातका अभाव है। इसलिये कालवेदना उक्त चार स्थानोंमें पतित है, ऐसा श्रद्धान करना चाहिये।

शंका– वह 'चार स्थानोंमें पतित है' यह नहीं कहना चाहिये, क्योंकि 'असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन और असंख्यातगुणहीन' इस सूत्रांशसे ही वह सिद्ध है?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, द्रव्यार्थिक नयके अनुग्रहार्थ 'वह चार स्थानोंमें पतित है' यह कहा गया है। जिन भगवान् किसी एक ही वचनका अनुग्रह नहीं करते हैं, क्योंकि, ऐसा माननेपर (दोनों वचनोंमें) समानताका अभाव होनेसे जिनत्वके ही अभावका प्रसंग आता है।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वस्थान वेदना संनिकर्ष समाप्त हुआ।

जिस जघन्य स्वस्थान वेदनासंनिकर्षको स्थगित किया था वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके भेदसे चार प्रकारका है ॥ ९५ ॥

---

[1] आप्रतौ 'एक्कस्सेव' इति पाठः। * अप्रतौ 'समाणत्ताभावादो ण जिणत्तस्सेव', आपतौ 'समाणत्ताभावेण जिणा तस्सेव', काप्रतौ 'समाणत्ताभावा ण जिणा तस्सेव' इति पाठः।

सण्णियासो चउव्विहो चेव होदि, दव्व-खेत्त-काल-भावेहिंतो वदिरित्तस्स अण्णस्स पंचमस्स अभावादो।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ९६ ॥

किमट्ठं पण्हपुरस्सरा चेव अत्थपरूवणा कीरदे? सोदुमिच्छंताणं चेव अत्थपरूवणा कीरदे, ण अण्णेसिमिदि जाणावणट्ठं, अण्णहा परूवणाए विहलत्तप्पसंगादो। उक्तं च-

बुद्धिविहीने श्रोतरि वक्तृत्वमनर्थकं भवति पुंसाम्।
नेत्रविहीने भर्त्तरि विलास-लावण्यवत्स्त्रीणाम् ॥४॥

धारण-गहणसमत्थाणं चेय संजदाणं ✪ विणयालंकाराणं वक्खाणं कादव्वमिदि भणिदं होदि।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ ९७ ॥

कुदो? सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स तिसमयआहार-तिसमयतब्भवत्थस्स * जहण्ण-जोगिस्स जहण्णोगाहणादो घणंगुलस्स असंखेज्जदिभागपमाणादो ✪ णाणावरणजहण्ण-

---

संनिकर्ष चार प्रकारका ही है, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे भिन्न अन्य पाँचवें सनिकर्षका अभाव है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ९६ ॥

शंका- प्रश्नपूर्वक ही अर्थकी प्ररूपणा किसलिये की जाती है?

समाधान- सुननेकी इच्छा रखनेवाले जीवोंके लिये ही अर्थकी प्ररूपणा की जाती है, अन्यके लिये नहीं; यह जतलानेके लिये प्रश्नपूर्वक अर्थप्ररूपणा की जाती है, क्योंकि, इसके बिना प्ररूपणाके निष्फल होनेका प्रसंग आता है। कहा भी है-

जिस प्रकार पतिके अन्धे होनेपर स्त्रियोंका विलास व सुन्दरता व्यर्थ (निष्फल) है, इसी प्रकार श्रोताके मूर्ख होनेपर पुरुषोंका वक्तापन भी व्यर्थ है ॥४॥

धारण व अर्थग्रहणमें समर्थ तथा विनयसे अलंकृत ही संयमी जनोंके लिये व्याख्यान करना चाहिये, यह उसका अभिप्राय है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ ९७ ॥

कारण यह कि त्रिसमयवर्ती आहारक व तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान जघन्य योगवाले सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी घनांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहनाकी

✪ अ-आ-काप्रतिषु 'विणया-' इति पाठः। * अ-आ-काप्रतिषु 'तब्भवत्थजहण्ण-' इति पाठः। ✪ ताप्रतौ 'पमाणत्तादो। णाणावरण' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

दव्वसामिचरिमसमयखीणकसायस्स अद्धट्ठरयणिउस्सेहस्स जहण्णोगाहणाए वि घणंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्ताए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ९८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ ९९ ॥

कुदो? खीणकसायचरिमसमए वट्टमाणणाणावरणीयजहण्णदव्वस्स एगसमयट्ठिदिदंसणादो, अण्णहा दव्वस्स जहण्णत्ताणुववत्तीदो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०० ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ १०१ ॥

कुदो? अपुव्वकरण-अणियट्टिकरण सुहुमसांपराइय-खीणकसाएहि अणुभागखंडयघादेण अणुसमओवट्टणाए च छिज्जिदूण जहण्णदव्वम्मि ट्ठिदअणुभागस्स जहण्णभावुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०२ ॥

अपेक्षा ज्ञानावरणीय कर्मके जघन्य द्रव्यके स्वामी व साढे तीन रत्नि प्रमाण शरीरोत्सेधसंयुक्त अन्तिम समयवर्ती क्षीणकषाय जीवकी घनांगुलके संख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहना भी असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ९८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ ९९ ॥

कारण यह कि क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें वर्तमान जीवके ज्ञानावरणीय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यकी एक समय स्थिति देखी जाती है, क्योंकि, इसके बिना द्रव्यकी जघन्यता बन नहीं सकती ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ १०१ ॥

कारण कि अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय जीवोंके द्वारा किये गये अनुभागकाण्डक घात और अनुसमयापवर्तनासे छिदकर जघन्य द्रव्यमें स्थित अनुभागके जघन्यपना पाया जाता है ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०२ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागब्भहिया ⊗ वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा ॥ १०३ ॥

तं जहा– खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विपरीयं गंतूण सुहुमणिगोद-अपज्जत्तएसु जहण्णजोगेसु उप्पज्जिय तिसमयतब्भवत्थस्स जहण्णिया खेत्तवेयणा जादा। तत्थ जं दव्वं तं पुण खीणकसायचरिमसमयओघजहण्णदव्वं पेक्खिदूण असंखेज्जभाग-ब्भहियं होदि। को पडिभागो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। किमट्ठमसंखेज्जदि-भागब्भहियं? खविदकम्मंसियकालब्भंतरे खविज्जमाणदव्वस्स असंखेज्जेसु भागेसु णट्ठेसु असंखेज्जदिभागमेत्तदव्वस्स अविणासुवलंभादो। पुणो एदस्स दव्वस्सुवरि एगेगपरमाणू वड्ढिदे वि दव्वस्स असंखेज्जभागवड्ढी चेव। एवमसंखेज्जभागब्भहियसरूवेण णेयव्वं जाव जहण्णदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तं जहण्णदव्वस्सुवरि वड्ढिदं ति। तदो संखेज्जभागवड्ढीए आदी होदि। एत्तो प्पहुडि परमाणुत्तरकमेण संखेज्जभाग-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री. सुविधिसागर जी महाराज

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक और असंख्यातगुण अधिक इन चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १०३ ॥

वह इस प्रकारसे– क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके विपरीत स्वरूपको प्राप्त हो जघन्य योगवाले सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न होकर तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्त-मान जीवके क्षेत्रवेदना जघन्य होती है। परन्तु उसके जो द्रव्य होता है वह क्षीणकषायके अन्तिम समय सम्बंधी ओघ जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है। उसका प्रतिभाग पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है।

शंका– असंख्यातवें भागसे अधिक किसलिये है ?

समाधान– इसका कारण यह है कि क्षपितकर्मांशिककालके भीतर क्षयको प्राप्त कराये जानेवाले द्रव्यके असंख्यात बहुभागोंके नष्ट हो जानेपर असंख्यातवें भाग मात्र द्रव्यका अविनाश पाया जाता है।

फिर इस द्रव्यके ऊपर एक एक परमाणुकी वृद्धिके होनेपर भी द्रव्यके असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। इस प्रकार असंख्यातवें भाग अधिक स्वरूपसे जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड मात्रकी जघन्य द्रव्यके ऊपर वृद्धि हो जाने तक ले जाना चाहिये। पश्चात् संख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ होता है। यहाँ से लेकर परमाणु अधिक क्रमसे संख्यातभागवृद्धि तब

⊗ अ-आ-काप्रतिषु 'भागब्भहिया' इति पाठः, प्रतिष्विमास्वग्रे सर्वत्र 'अब्भहिय' इत्येतस्य स्थाने प्रायः 'अब्भहिय' एव पाठः उपलभ्यते ।

वड्ढी ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वस्सुवरि अण्णेगजहण्णदव्वमेत्तं वड्ढिदं ति। ताधे संखेज्जगुणवड्ढीए आदी होदि। एत्तो उवरि परमाणुत्तरकमेण वड्ढमाणे संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदि जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण गुणिदं ति। तत्तो पहुडि उवरिमसंखेज्जगुणवड्ढी चेव होदूण गच्छदि जाव जहण्णक्खेत्तसहचारिउक्कस्सदव्वं ति। केण लक्खणेणागदस्स उक्कस्सदव्वं जायदे? गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमए दव्वमुक्कस्सं करिय पंचिंदियतिरिक्खेसु उप्पज्जिय पुणो तिसमयआहार तिसमयतब्भवत्थ-जहण्णजोगसुहुमणिगोदअपज्जत्तएसु उप्पण्णस्स उक्कस्सं जायदे। एदेण कारणेण दव्वं चउट्ठाणपदिदं चेवे त्ति घेत्तव्वं।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा वा ॥ १०४ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १०५ ॥

कुदो? खीणकसायचरिमसमयजहण्णदव्वकालेण एगसमयपमाणेण जहण्णखेत्तसहचारिणाणावरणीयकाले सागरोवमस्स तिण्णिसत्तभागमेत्ते पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण परिहीणे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा वा ॥ १०६ ॥

तक जाती है जब तक जघन्य द्रव्यके ऊपर अन्य एक जघन्य द्रव्य प्रमाण वृद्धि होती है। तब संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। इससे आगे परमाणु अधिक क्रमसे वृद्धिके चालू रहनेपर जघन्य परीतासंख्यातसे गुणित मात्र होने तक असंख्यातगुणवृद्धि ही होकर जाती है।

शंका– किस स्वरूपसे आये हुए जीवके उत्कृष्ट द्रव्य होता है ?

समाधान– गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके सप्तम पृथिवीस्थ नारकीचे अन्तिम समयमें द्रव्यको उत्कृष्ट करके पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें उत्पन्न हो। पुनः त्रिसमयवर्ती आहारक और तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान जघन्य योगवाले सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न हुए जीवके उत्कृष्ट द्रव्य होता है। इसी कारणसे द्रव्य चार स्थानोंमें ही पतित है, ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १०५ ॥

कारण कि क्षीणकषायके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यके एक समय प्रमाण कालका जघन्य क्षेत्र के साथ रहनेवाले पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे तीन प्रमाण ज्ञानावरणीय कालमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते है।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०६ ॥

अ प्रतिषु 'अणेग' इति पाठः।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १०७ ॥

कुदो ? जहण्णक्खेत्तसहचारिणाणावरणीयअणुभागस्स अपुव्वकरण-अणियट्टिकरण-सुहुमसांपराइय-खीणकसायपरिणामेहि खंडयसरूवेण अणुसमओवट्टणाए च जहण्णाणुभागस्सेव घादाभावादो । सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स अणुभागो वि घादं पत्तो तो वि जहण्णाणुभागादो अणंतगुणत्तं मोत्तूण ण सेसपंचअवत्थाविसेसे पडिवज्जदे, अक्खवगविसोहीहि घादिज्जमाण अणुभागस्स खवगेहि घादिज्जमाण-अणुभागं[1] पेक्खिदूण अणंतगुणत्तुवलंभादो[2] । एत्थ उवउज्जंती गाहा–

सुहुमणुभागादुवरिं अंतरमकादु तिं[3] घादिकम्माणं ।
केवलिणो वि य उवरिं भवओग्गह[4]अप्पसत्थाणं ॥५॥

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो, अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा ॥ १०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १०७ ॥

कारण कि जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाले ज्ञानावरणीयके अनुभागका अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय परिणामों द्वारा काण्डक स्वरूपसे और अनुसमयापवर्तनासे जघन्य अनुभागके समान घात नहीं होता है । यद्यपि सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकका अनुभाग भी घातको प्राप्त हो चुका है तो भी वह जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणत्वको छोड़कर शेष पांच अवस्थाविशेषोंमें प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि, अक्षपकके विशुद्ध परिणामों द्वारा घाता जानेवाला अनुभाग क्षपकों द्वारा घाते जानेवाले अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है । यहां उपयोगी गाथा– ॥ ५ ॥

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य अनन्तभाग अधिक, असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक और असंख्यातगुण अधिक, इन पांच स्थानोंमें पतित है ॥ १०९ ॥

---

[1] अ-आ-काप्रतिषु विसोहीहि घादिज्जमाण अणुभागं इति पाठः । [2] अ-आ-काप्रतिषु 'अणंतगुण–हीणत्तुवलंभादो' इति पाठः । [3] तदनन्तरं 'मकदं तिघादि-' इति पाठः । [4] तदनन्तरं 'भवओग्गह' इति पाठः ।

खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदस्स कालेण सह दव्वं पि जहण्णं, खविज्जमाणकम्मपदेसाणं सव्वेसिं पि खविदत्तादो। एदस्स जहण्णदव्वस्सुवरि एग-दोआदिकम्मपोग्गलेसु वड्ढिदेसु दव्ववेयणा अजहण्णत्तं पडिवज्जदे। सा वि (१) पंचट्ठाणपदिदा होदि, ण छट्ठाणपदिदा होदि, एत्थ छट्ठाणस्स संभवाभावादो। काणि ताणि पंचट्ठाणाणि त्ति तण्णिण्णयत्थमुत्तरसुत्तावयवो भणिदो। एदेसिं पंचण्णं पि ट्ठाणाणं परूवणा कीरदे। तं जहा—जहण्णट्ठाणस्सुवरि एगपरमाणुम्हि वड्ढिदे अणंतभागब्भहियं ट्ठाणं होदि। एदमादिं कादूण जाव अणंताणि अवट्ठिदाणि वड्ढिदाणि त्ति ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वे उक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदे तत्थ एगखंडेण जहण्णदव्वं वड्ढिदं ति। तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी होदूण ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तं पविट्ठं ति। एत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जभागवड्ढी। एवं जाणिदूण णेयव्वं जाव असंखेज्जगुणवड्ढि त्ति। एत्थ चरिमवियप्पो गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण वत्तव्वो। सेसं सुगमं।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११० ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १११ ॥

क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें स्थित हुए जीवके कालके साथ द्रव्य भी जघन्य होता है, क्योंकि, यहाँ क्षयको प्राप्त कराये जानेवाले सभी कर्मप्रदेशोंका क्षय हो चुकता है। इस जघन्य द्रव्यके ऊपर एक दो आदि कर्मपुद्गलोंकी वृद्धिके होनेपर द्रव्यवेदना अजघन्य अवस्थाको प्राप्त होती है। वह भी पाँच स्थानोंमें पतित होती है, छह स्थानोंमें पतित नहीं होती; क्योंकि, यहाँ छठे स्थानकी सम्भावना नहीं है। वे पाँच स्थान कौनसे हैं, इसका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्रांश कहा गया है। इन पाँचों स्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है— जघन्य स्थान के ऊपर एक परमाणुकी वृद्धि होनेपर अनन्तभाग अधिक स्थान होता है। इससे लेकर तब तक अनन्तभागवृद्धि होकर जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डसे जघन्य द्रव्य वृद्धिको प्राप्त होता है। उससे लेकर एक परमाणु अधिक इत्यादि क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि होकर तब तक जाती है जब तक कि जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्य प्रविष्ट होता है। यहाँसे लेकर आगे संख्यातभागवृद्धि होती है। इस प्रकार जान करके असंख्यातगुणवृद्धि तक ले जाना चाहिये। यहाँ अन्तिम विकल्पका गुणितकर्मांशिकको आश्रित कर कथन करना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ ११० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १११ ॥

(१) मप्रतौ 'ण वि' इति पाठः।

कुदो ? जहण्णकालसहचारिअद्धट्ठरयणिउव्वियद्धखीणकसायजहण्णक्खेत्तस्स वि अंगुलस्स संखेज्जदिभागस्स अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसुहुमणिगोदजहण्णक्खेत्तं पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११२ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ ११३ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमए जहण्णकालोवलक्खिदकम्मक्खंधस्स जहण्णाणुभागं मोत्तूण अण्णाणुभागवियप्पाभावादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११४ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो, अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ ११५ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जहा जहण्णकाले णिरुद्धे दव्वस्स पंचट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा एत्थ वि परूवेदव्वं, विसेसाभावादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कारण कि जघन्य कालके साथ रहनेवाला अंगुलके संख्यातवें भाग मात्र क्षीणकषायका साढे तीनरत्नि प्रमाण ऊंचा जघन्य क्षेत्र भी अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र सूक्ष्म निगोद जीवके जघन्य क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके उक्त वेदना जघन्य होती है ॥ ११३ ॥

कारण कि क्षीणकषायके अन्तिम समयमें जघन्य कालसे उपलक्षित कर्मस्कन्धके जघन्य अनुभागको छोडकर अन्य अनुभागविकल्पोंका अभाव है ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उसके जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ ११५ ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय जिस प्रकारसे जघन्य कालको विवक्षित करके द्रव्यके पाँच स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार यहाँ भी उसकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११६ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ ११७ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमयजहण्णाणुभागसहचारिजहण्णखेत्तस्स वि सुहुमणिगोदापज्जत्तजहण्णखेत्तमंगुलस्स असंखेज्जदिभागं पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ ११९ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमयम्मि जहण्णाभावेण विसिट्ठकम्मपरमाणूणं जहण्णकालं मोत्तूण कालंतराभावादो ।

एव दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ १२० ॥

जहा णाणावरणीयस्स दव्वादीणं सण्णियासो कदो तहा एदेसिं पि तिण्णं घादिकम्माणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२१ ॥

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ ११७ ॥

कारण यह कि क्षीणकषायके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य अनुभागके साथ रहनेवाला जघन्य क्षेत्र भी सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तकके अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उसके जघन्य होती है ॥ ११९ ॥

कारण कि क्षीणकषायके अन्तिम समयमें जघन्य भावके साथ विशिष्ट कर्मपरमाणुओंके जघन्य कालको छोड़कर अन्य कालका अभाव है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके जघन्य वेदना-संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १२० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके द्रव्यादिकोंका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार इन तीनों घातिया कर्मोंके संनिकर्षको भी करना चाहिये ।

जिसके वेदनीय कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह क्या क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२१ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १२२ ॥

कुदो? अद्धट्ठरयणिउस्सेहमणुस्सेहिंतो हेट्ठिमउस्सेहमणुस्सभंगं अजोगिचरिमसमए अवट्ठाणाभावादो । ण च आहुट्ठस्सेहओगाहणाए घणंगुलस्स संखेज्जदिभागं मोत्तूण तदसंखेज्जदिभागत्तं, अणुवलंभादो । ण च जहण्णखेत्तमंगुलस्स संखेज्जदिभागो, तदसंखेज्जदिभागत्तेण साहियत्तादो । तम्हा तत्तो एदस्स सिद्धमसंखेज्जगुणत्तं ।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२३ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ १२४ ॥

अजोगिचरिमसमयजहण्णदव्वम्हि जहण्णकालं[1] मोत्तूण कालंतराभावादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा वा ॥ १२५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १२६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १२२ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें साढे तीन रत्नि उत्सेधवाले मनुष्योंकी अपेक्षा नीचेके उत्सेध युक्त मनुष्योंका रहना सम्भव नहीं है। और साढे तीन अरत्नि उत्सेध रूप अवगाहना घनांगुलके संख्यातवें भागको छोडकर उसके असंख्यातवें भाग हो नहीं सकती, क्योंकि वह पायी नहीं जाती है। इसके अतिरिक्त जघन्य क्षेत्र घनांगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण हो, ऐसा भी नहीं है, क्योंकि, वह उसके असंख्यातवें भाग स्वरूपसे सिद्ध किया जा चुका है। इस कारण उसकी अपेक्षा इसका असंख्यातगुणत्व सिद्ध ही है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १२३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके वह जघन्य होती है ॥ १२४ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यमें जघन्य कालको छोडकर अन्य कालका अभाव है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १२५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १२६ ॥

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णकाल' इति पाठः ।

जदि असादोदयेण णिव्वुओ होदि तो दव्वेण सह भावो वि जहण्णओ होदि, अजोगिदुचरिमसमए गलिदसादावेयणीयत्तादो खवगपरिणामेहि घादिय अणंतिमभागे* ट्ठविदअसादाणुभागत्तादो च। अध सादोदएण जइ सिज्झइ तो अणंतगुणब्भहिया, अजोगिदुचरिमसमए उदयाभावेण विणट्ठअसादत्तादो सुहुमसांपराइयचरिमसमए बद्धसादुक्कस्साणुभागस्स घादाभावादो असादुक्कस्साणुभागादो वि सादुक्कस्साणुभागस्स* अणंतगुणत्तुवलंभादो।

जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२७ ॥

सुगमं

णियमा अजहण्णा (1) चउट्ठाणपदिदा ॥ १२८ ॥

चउट्ठाणपदिदा त्ति वुत्ते असंखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जगुणब्भहिय-असंखेज्जगुणब्भहिया त्ति घेत्तव्वं। एदेसिं चदुट्ठाणाणं परूवणा जहा णाणावरणीयजहण्णखेत्ते णिरुद्धे तद्दव्वस्स कदा तधा कायव्वा।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२९ ॥

यदि जीव असाता वेदनीयके उदयके साथ मुक्त होता है तो द्रव्यके साथ भाव भी जघन्य होता है, क्योंकि, अयोगकेवलीके द्विचरम समयमें साता वेदनीय गल चुका है तथा असाताके अनुभागको क्षपक परिणामोंसे घात करके अनन्तवें भागमें स्थापित किया जाचुका है, परन्तु यदि साता वेदनीयके उदयके साथ सिद्ध होता है तो वह अनन्तगुणी अधिक होती है, क्योंकि, अयोगकेवलीके द्विचरम समयमें उदय न रहनेके कारण असाता वेदनीयके नष्ट हो जानेसे तथा सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें बाँधे गये साता वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका घात न हो सकनेसे असाता वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागकी भी अपेक्षा सातका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है।

जिसके वेदनीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १२८ ॥

'चार स्थानोंमें पतित होती है' ऐसा कहनेपर असंख्यात भाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक और असंख्यातगुण अधिक, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। ज्ञानावरणीयके जघन्य क्षेत्रको विवक्षितकर जैसे उसके द्रव्य सम्बन्धी इन चार स्थानोंकी प्ररूपणा की गई है वैसे ही यहाँ उनकी प्ररूपणा करना चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२९ ॥

---

* का-ताप्रत्योः 'अणंतिमभागो' इति पाठः। * का-ताप्रत्योः 'भागादो वि सादुक्कस्साणु' इति पाठः। (1) ताप्रतौ 'जहण्णा' इति पाठः।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १३० ॥

कुदो? अजोगिचरिमसमयकम्माणं जहण्णकालमेगसमयं पेक्खिदूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागूणसागरोवमसत्तभागतियसुवलंभादो । जहण्णखेत्तसहचारिणीए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३१ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १३२ ॥

कुदो ? खवगपरिणामेहि पत्तघादअसादावेयणीयभावस्स अजोगिचरिमसमए जहण्णत्तब्भुवगमादो । जहण्णखेत्तवेयणीयभावस्स खवगपरिणामेहि घादाभावादो इमो भावो तत्तो अणंतगुणो त्ति दट्ठव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३३ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ १३४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १३० ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी कर्मोंके एक समय रूप जघन्य कालकी अपेक्षा पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे तीन भाग मात्र जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाली स्थिति असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १३२ ॥

कारण कि क्षपक परिणामोंके द्वारा घातको प्राप्त हुआ असातावेदनीयका भाव अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जघन्य स्वीकार किया गया है । अतएव जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाले वेदनीयके भावका क्षपक परिणामोंके द्वारा घात न होनेसे यह भाव उससे अनन्तगुणा है, ऐसा समझना चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह क्या द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ १३४ ॥

जदि खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण अजोगिचरिमसमए जहण्णकालेण परिणदो होज्ज तो कालेण सह दव्वं पि जहण्णत्तमल्लियइ । अध खविद-गुणिद-घोलमाणा वा गुणिदकम्मंसिया वा अजोगिचरिमसमए जहण्णकालेण जदि परिणमंति तो पंचट्ठाणपदिदा अजहण्णा दव्ववेयणा होज्ज । जहा णाणावरणीयजहण्णकाले णिरुद्धे तद्दव्वस्स पंचट्ठाणपरूवणा कदा तधा एत्थ वि कायव्वा, विसेसाभावादो ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १३६ ॥

कुदो? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागं सुहुमणिगोदजहण्णोगाहणं पेक्खिदूण अजोगिजहण्णोगाहणाए अंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्ताए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३७ ॥

सुगमं

जहण्णा वा अजहण्णा वा जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १३८ ॥

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

असादोदएण खवगसेढिं चढिय अजोगिचरिमसमए वट्टमाणस्स भाववेयणा

यदि क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके जीव अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जघन्य कालसे परिणत होता है तो कालके साथ द्रव्य भी जघन्यताको प्राप्त होता है । परन्तु यदि क्षपित घोलमान और गुणित-घोलमान अथवा गुणितकर्मांशिक जीव अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जघन्य कालसे परिणत होते हैं तो वह द्रव्यवेदना पाँच स्थानोंमें पतित होकर अजघन्य होती है। जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके जघन्य कालकी विवक्षामें उसके द्रव्यके सम्बन्धमें पाँच स्थानोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे यहाँ भी करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १३६ ॥

कारण यह कि सूक्ष्म निगोद जीवकी अंगुलके असंख्यातवें भागमात्र जघन्य अवगाहनाकी अपेक्षा अंगुलके संख्यातवें भाग मात्र अयोगकेवलीकी जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १३८ ॥

असातावेदनीयके उदयके साथ क्षपकश्रेणि पर चढकर अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें

जहण्णा, तस्स दुचरिमसमए विणट्ठसादावेदणीयत्तादो। अध सादोदएण जदि खवग-सेडिमारुहिय अजोगिचरिमसमए ट्ठिदो होदि तो भाववेयणा अजहण्णा। कुदो? असादावेदणीयभावस्सेव सादावेदणीयभावस्स सुहत्तणेण घादाभावादो। अजहण्णा होंता वि जहण्णादो अणंतगुणा, संसारावत्थाए सादाणुभागादो अणंतगुणहीणअसादाणुभागे बहुसु अणुभागकंडयघादेसु अणंतगुणहाणीए* घादिदे संते अजोगिचरिमसमए जो सेसो भावो सो जहण्णो जादो। तेण तत्तो एसो सादाणुभागो अणंतगुणो, घादाभावेण उक्कस्सत्तादो।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३९ ॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाण-पदिदा ॥ १४० ॥

जदि सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण चरिमसमयअजोगी जादो तो भावेण सह दव्वं पि जहण्णं चेय, विसरिसत्तस्स कारणाभावादो। अह ण सुद्धणय-विसयखविदकम्मंसियो खविदघोलमाणो गुणिदघोलमाणो गुणिदकम्मंसियो वा खवग-

वर्तमान जीवके भाववेदना जघन्य होती है, क्योंकि, उसके द्विचरम समयमें साता वेदनीयका उदय नष्ट हो चुका है। परंतु यदि साता वेदनीयके उदयके साथ क्षपकश्रेणिपर चढ़कर अयोग-केवलीके अन्तिम समयमें स्थित होता है तो भाववेदना अजघन्य होती है, क्योंकि, असाता वेदनीयके भावके समान शुभ होनेसे साता वेदनीयके भावका घात सम्भव नहीं है। अजघन्य होकर भी वह जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणी होती है, क्योंकि, संसारावस्थामें साता वेदनीयके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन असातावेदनीयके अनुभागका क्षपकश्रेणिमें बहुतसे अनुभाग काण्डकघातोंसे अनन्तगुणहानि द्वारा घात किये जानेपर अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जो भाव शेष रहा है वह जघन्य हो चुका है। इसलिये उससे यह सातका अनुभाग अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह घात रहित होनेसे उत्कृष्ट है।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ १३९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ १४० ॥

यदि शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके अन्तिम समयवर्ती अयोगी हुआ है तो भावके साथ द्रव्य भी जघन्य ही होता है, क्योंकि, उसके विसदृश होनेका कोई कारण नहीं है। परन्तु अशुद्ध नयका विषयभूत क्षपितकर्मांशिक, क्षपितघोलमान, गुणित-

* ताप्रतौ 'अणंतगुणहाणीहि' इति पाठः।

सेडिमारुहिय जदि चरिमसमयअजोगी जादो तो भावो जहण्णो चेव, दव्वं होदि पुण अजहण्णं, जहण्णकारणाभावादो। होंतं पि जहण्णदव्वं पेक्खिदूण अणंतभागब्भहियं असंखेज्जभागब्भहियं संखेज्जभागब्भहियं संखेज्जगुणब्भहियं असंखेज्जगुणब्भहियं च होदि। कुदो? जहण्णदव्वस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण दव्वविहाणे परूविदपंचवुड्ढित्तादो।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४१ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १४२ ॥

कुदो? सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णोगाहणाए अजोगिजहण्णोगाहणाए ओवट्टिदाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४३ ॥

सुगमं।

जहण्णा ॥ १४४ ॥

कुदो? जहण्णभावम्मि ट्ठिदव्वस्स एगसमयट्ठिदिदंसणादो।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४५ ॥

घोलमान अथवा गुणितकर्मांशिक जीव क्षपक श्रेणिपर चढ़कर यदि अन्तिम समयवर्ती अयोगी हुआ है तो भाव जघन्य ही होता है, परन्तु द्रव्य अजघन्य होता है, क्योंकि, उसके जघन्य होनेका कोई कारण नहीं है। अजघन्य हो करके भी वह जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक, असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है, क्योंकि, जघन्य द्रव्यके ऊपर परमाणु अधिक क्रमसे द्रव्य-विधानमें कही गई पाँच वृद्धियाँ होती हैं।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १४१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १४२ ॥

कारण कि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तककी जघन्य अवगाहनासे अयोगकेवलीकी जघन्य अवगाहनाको अपवर्तित करनेपर पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १४३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य होती है ॥ १४४ ॥

कारण कि जघन्य भावमें स्थित द्रव्यकी एक समय स्थिति देखी जाती है।

जिस जीवके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १४५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १४६ ॥

कुदो ? आउअजहण्णखेत्तेण सुहुमणिगोदअपज्जत्तएसु लद्धेण(१) अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण जहण्णदव्वसामिओगाहणाए पंचधणुस्सदउस्सेहादो णिप्पण्णाए ओवट्टिदाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तरूवोवलंभादो ।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ १४७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १४८ ॥

कुदो ? एगसमयपमाणेण जहण्णकालेण अंतोमुहुत्तमेत्तदीवसिहाए ओवट्टिदाए अंतोमुहुत्तमेत्तगुणगारुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ १४९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १५० ॥

कुदो? आउअस्स जहण्णभावो अपज्जत्तसंजुत्ततिरिक्खाउअजहण्णबंधम्मि जादो, जहण्णदव्वसामिभावो पुण सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसंजुत्तबद्धआउअजहण्णदव्वसंबंधी ।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १४६ ॥

कारण कि सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकोंमें प्राप्त अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण आयु-कर्मके जघन्य क्षेत्रसे पाँच सौ धनुष उत्सेधसे उत्पन्न जघन्य द्रव्यके स्वामीकी अवगाहनाको अपवर्तित करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र रूप पाये जाते हैं ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १४७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १४८ ॥

कारण कि एक समय प्रमाण जघन्य कालसे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण दीपशिखाको अपवर्तित करनेपर अन्तर्मुहूर्त मात्र गुणकार पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १५० ॥

कारण यह कि आयु कर्मका जघन्य भाव अपर्याप्तके साथ तिर्यंच आयुके जघन्य बन्धमें होता है । परन्तु जघन्य द्रव्यके स्वामीका भाव संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके साथ बांधी गई आयुके

---

(१) प्रतिषु 'अद्धेण' इति पाठः ।

तेण आउअजहण्णभावादो दीवसिहाजहण्णदव्वभावो अणंतगुणो त्ति सिद्धं ।

जस्स आउअवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५१ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १५२ ॥

तं जहा- जहण्णखेत्तट्ठियआउअदव्वं जदि वि जहण्णजोगेण जहण्णबंधगद्धाए च बद्धं होदि तो वि दीवसिहादव्वादो पंचिंदियजहण्णजोगेण एइंदियउक्कस्सजोगादो असंखेज्जगुणेण बद्धादो* असंखेज्जगुणं । कुदो ? दीवसिहादव्वम्मि व भवस्स & तदिय-समयट्ठिदसुहुमेइंदियअपज्जत्तयम्मि असंखेज्जगुणहाणिमेत्तणिसेगाणं गलणाभावादो दीवसिहादव्वेण जहण्णखेत्तट्ठियदव्वे भागे हिदे अंगुलस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो वा ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १५४ ॥

जघन्य द्रव्यसे सम्बन्ध रखनेवाला है । इस कारण आयुके जघन्य भावकी अपेक्षा दीपशिखा रूप जघन्य द्रव्यका भाव अनन्तगुणा है, यह सिद्ध है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १५१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १५२ ॥

वह इस प्रकारसे- यद्यपि जघन्य क्षेत्रमें स्थित आयु कर्मका द्रव्य जघन्य योग और जघन्य बन्धक कालके द्वारा बांधा गया है तो भी वह एकेन्द्रिय जीवके उत्कृष्ट योगसे असंख्यातगुणे ऐसे पंचेन्द्रिय जीवके जघन्य योगके द्वारा बांधे गये दीपशिखाद्रव्यसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि, दीपशिखाद्रव्यके समान भवके तृतीय समयमें स्थित सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तके (द्रव्यमेंसे) असंख्यात गुणहानि प्रमाण निषेकोंके गलनेका अभाव है, अथवा दीपशिखा द्रव्यका जघन्य क्षेत्रस्थित द्रव्यमें भाग देनेपर अंगुलका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १५४ ॥

---

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'दव्व' इति पाठः । (२) अ-आ-काप्रतिषु 'बंध' इति पाठः । * प्रतिषु 'बंधादो' इति पाठः । & आप्रतौ 'दव्वम्मि व भवस्स', ताप्रतौ 'दव्वमिव भावस्स' इति पाठः ।

कुदो ? जहण्णकालमेगसमयमेत्तं पेक्खिदूण जहण्णखेत्ताउअट्ठिदीए अंतोमुहुत्तमेत्ताए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ १५५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो, अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ॥ १५६ ॥

विहासा–जदि आउअं मज्झिमपरिणामेण बंधिय जहण्णक्खेत्तं करेदि तो खेत्तेण सह भावो वि जहण्णो㋮ । अण्णहा पुण अजहण्णा, होंता वि छट्ठाणपदिदा; भावम्मि छहि पयारेहि वड्ढिदंसणादो ।

जस्स आउअवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५७ ॥

सुगमं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १५८ ॥

कुदो ? जहण्णदव्वेण एगसमयपबद्धं अंगुलस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदे तत्थ

कारण कि एक समय प्रमाण जघन्य कालकी अपेक्षा जघन्य क्षेत्रस्थित आयु कर्मकी अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १५५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित है ॥ १५६ ॥

उसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है– यदि आयुको मध्यम परिणामसे बाँधकर जघन्य क्षेत्र करता है तो क्षेत्रके साथ भाव भी जघन्य होता है। परन्तु इससे विपरीत अवस्थामें भाव वेदना अजघन्य होती है। अजघन्य होकर भी वह छह स्थानोंमें पतित होती है, क्योंकि, भावमें छह प्रकारोंसे वृद्धि देखी जाती है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १५७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उसके नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १५८ ॥

कारण कि एक समयप्रबद्धको अंगुलके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक

㋮ प्रतिषु 'जहण्णा' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एगखंडमेत्तेण जहण्णकालदव्वेण एगसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभागमेत्ते भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा◌ असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १६० ॥

कुदो? आउअजहण्णखेत्तेण अंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्तजहण्णकालजहण्णखेत्ते* भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६१ ॥

सुगमं

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १६२ ॥

कधमजोगिचरिमसमयजहण्णदव्वभावो जहण्णभावादो अणंतगुणो? ण एस दोसो, सहावदो चेव तिरिक्खाउअणुभागादो मणुसाउअभावस्स अणंतगुणत्ता। खवगसेडीए पत्तघादस्स भावस्स कधमणंतगुणत्तं? ण, आउअस्स खवगसेडीए पदेसस्स गुणसेडिणिज्जराभावो व ट्ठिदि-अणुभागाणं‡ घादाभावादो ।

खण्ड मात्र जघन्य द्रव्यका एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र जघन्य कालके साथ रहनेवाले द्रव्यमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥१५९॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १६० ॥

कारण कि आयुके जघन्य क्षेत्रका अंगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण जघन्यकाल सम्बन्धी जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥१६१॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १६२ ॥

शंका- अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यका भाव जघन्य भावकी अपेक्षा अनन्तगुणा कैसे है ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, स्वभावसे ही तिर्यंच आयुके अनुभागसे मनुष्यायुका भाव अनन्तगुणा है ।

शंका- क्षपकश्रेणिमें घातको प्राप्त हुआ अनुभाग अनन्तगुणा कैसे हो सकता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, क्षपकश्रेणिमें आयुकर्मके प्रदेशकी गुणश्रेणिनिर्जराके अभावके समान स्थिति और अनुभागके घातका अभाव है ।

◌ ताप्रतौ 'जहण्णा' इति पाठः । *अ-आप्रत्योः 'मेत्तजहण्णखेत्ते' इति पाठः । ‡अ-काप्रत्योः 'णिज्जराभावो-ट्ठिदिअणुभागाणं', आप्रतौ 'णिज्जराभावो व ट्ठिदअणुभागाणं', ताप्रतौ 'णिज्जराभावोवट्ठिदअणुभागाणं' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १६४ ॥

कुदो? जहण्णदव्वेण एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागेण जहण्णभावआउअदव्वे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो । कुदो असंखेज्जरूवोवलद्धी? जहण्णभावाउअदव्वम्मि बंधगद्धासंखेज्जदिभागमेत्तसमयपबद्धाणमुवलंभादो ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ १६६ ॥

जदि मज्झिमपरिणामेहि तिरिक्खाउअं बंधिय जहण्णक्खेत्तं करेदि तो भावेण सह खेत्तं पि जहण्णं चेव । अध[1] मज्झिमपरिणामेहि आउअं बंधिय जहण्णक्खेत्तं ण

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १६४ ॥

कारण कि एक समयबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य द्रव्यका जघन्य भाव युक्त आयुके द्रव्यमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं।

शंका- असंख्यात रूप कैसे प्राप्त होते हैं ?

समाधान- क्योंकि जघन्य भाव युक्त आयुके द्रव्यमें बन्धक कालके असंख्यातवें भाग मात्र समयप्रबद्ध पाये जाते हैं, अतएव असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य चार स्थानोंमें पतित है ॥ १६६ ॥

यदि मध्यम परिणामोंके द्वारा तिर्यंच आयुको बाँधकर जघन्य क्षेत्रको करता है तो भावके साथ क्षेत्र भी जघन्य ही होता है । परन्तु यदि मध्यम परिणामोंके द्वारा आयुको बाँधकर जघन्य

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'अयं' इति पाठः ।

करेदि तो भावो जहण्णो होदूण खेत्तवेयणा अजहण्णा होदि। होंता वि चउट्ठाणपदिदा, खेत्तम्हि असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढीओ मोत्तूण अण्णवड्ढीणमभावादो।

तस्स णामवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६७ ॥

सुगमं

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १६८ ॥

कुदो? जहण्णकालेण जहण्णभावकाले भागे हिदे अंतोमुहुत्तमेत्तगुणगारुवलंभादो।

जस्स णामवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६९ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १७० ॥

कुदो? णामजहण्णखेत्तेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण अजोगिचरिमसमय-जहण्णदव्वजहण्णखेत्ते संखेज्जंगुलमेत्ते भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७१ ॥

सुगमं।

क्षेत्रकी नहीं करता है तो उसके भावके जघन्य होते हुए भी क्षेत्र वेदना अजघन्य होती है। अजघन्य होकर भी वह चार स्थानोंमें पतित है, क्योंकि क्षेत्रमें असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात-भागवृद्धि, और असंख्यातगुणवृद्धिको छोड़कर अन्य वृद्धियोंका अभाव है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १६७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १६८ ॥

कारण कि जघन्य कालका जघन्य भाव सम्बन्धी कालमें भाग देनेपर अन्तर्मुहूर्त मात्र गुणकार पाया जाता है।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १६९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १७० ॥

कारण कि नामकर्म सम्बन्धी अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य क्षेत्रका अयोग केवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यके संख्यात अंगुल प्रमाण जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १७१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जहण्णा ॥ १७२ ॥

तत्थ जहण्णदव्वम्मि एगसमयट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीणमभावादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १७४ ॥

कुदो ? सव्वविसुद्धेण सुहुमणिगोदेण हदसमुप्पत्तियं कादूण उप्पाइदणामजहण्णाणुभागं पेक्खिय सुहुमसांपराइएण सव्वविसुद्धेण बद्धजसकित्तिउक्कस्साणुभागस्स सुहत्तादो घादवज्जियस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णामवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ १७६ ॥

तं जहा– खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण जदि तिचरिमभवे सुहुमेइंदिएसु उप्पज्जिय जहण्णखेत्तं कदं होदि तो दव्वमसंखेज्जभागब्भहियं, एक्कम्हि मणुस्सभवे संजम-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वह जघन्य होती है ॥ १७२ ॥

कारण कि वहाँ जघन्य द्रव्यमें एक समय मात्र स्थितिको छोडकर अन्य स्थितियोंका अभाव है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १७३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १७४ ॥

कारण यह कि सर्वविशुद्ध सूक्ष्म निगोद जीवके द्वारा हतसमुत्पत्ति करके उत्पन्न कराये गये नाम कर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके द्वारा बांधे गये यशःकीर्तिके उत्कृष्ट अनुभागके शुभ होनेसे चूंकि उसका घात होता नहीं है, अत एव वह उससे अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिसके नाम कर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १७५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १७६ ॥

वह इस प्रकारसे– क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके यदि त्रिचरम भवमें सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर जघन्य क्षेत्र किया गया है तो द्रव्य असंख्यातवें भागसे अधिक होता है,

ⓒ अ-काप्रत्योः 'अण्णे' इति पाठः । ⓐ अ-आ-काप्रतिषु 'बहुतीयस्स', ताप्रतौ 'बहियम्ग' इति पाठः ।

गुणसेडीए विणासिज्जमाणअसंखेज्जसमयपबद्धाणमेत्थुवलंभादो । पुणो एदस्स दव्वस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव जहण्णदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदे त्ति । ताधे दव्वं संखेज्जभागब्भहियं होदि । एवं संखेज्जगुणब्भहिय असंखेज्जगुणब्भहियत्तं जाणिदूण परूवेदव्वं ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १७८ ॥

कुदो? ओघजहण्णकालमेगसमयं पेक्खिदूण खेत्त-दव्व-कालस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमबेसत्तभागस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७९ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो, अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ॥ १८० ॥

जदि जहण्णोगाहणाए ट्ठिदजीवेण मज्झिमपरिणामेहि णामभावो बद्धो[1] तो खेत्तेण

क्योंकि, यहाँ एक मनुष्य भवमें संयम गुणश्रेणि द्वारा नष्ट किये जानेवाले असंख्यात समयप्रबद्ध पाये जाते हैं । फिर इस द्रव्यके ऊपर परमाणु अधिकके क्रमसे जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमें एक खण्ड मात्रकी वृद्धि हो जाने तक बढाना चाहिये । उस समय द्रव्य संख्यातवें भागसे अधिक होता है । इसी प्रकारसे संख्यातगुणी अधिकता और असंख्यातगुणी अधिकताकी भी जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १७७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १७८ ॥

कारण कि एक समय प्रमाण ओघ जघन्य कालकी अपेक्षा क्षेत्र व द्रव्य सम्बन्धी जो काल पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे दो भाग प्रमाण है वह असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ १७९॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित है ॥ १८० ॥

यदि जघन्य अवगाहनामें स्थित जीवके द्वारा मध्यम परिणामोंसे नामकर्मका अनुभाग

---

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'बंधो' इति पाठः ।

सह भावो वि जहण्णो होदि । अह अजहण्णो बद्धो तो तस्स भाववेयणा अजहण्णा* सा च अणंतभागब्भहिय-असंखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जगुणब्भहिय-असंखेज्जगुणब्भहिय-अणंतगुणब्भहियत्तेण छट्ठाणपदिदा ।

जस्स णामवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८१ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ १८२ ॥

खविदकम्मंसियलक्खणेण सुद्धणयविसएण परिणदेण जीवेण अजोगिचरिमसमए जदि पदेसो जहण्णो कदो तो कालेण सह दव्वं पि जहण्णं होदि । अह अण्णहा तो दव्वमजहण्णं; जहण्णकारणाभावादो* । होंतं पि पंचट्ठाणपदिदं, परमाणुत्तराविकमेण णिरंतरं गंतूण असंखेज्जगुणवड्ढीए दव्वस्स पज्जवसाणुवलंभादो ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८३ ॥

सुगम ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

बाँधा गया है तो क्षेत्रके साथ भाव भी जघन्य होता है । (परन्तु यदि उक्त जीवके द्वारा नाम कर्मका अनुभाग) अजघन्य बाँधा गया है तो भाववेदना अजघन्य होती है । उक्त अजघन्य भाव वेदना अनन्तभाग अधिक, असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक, असंख्यातगुण अधिक और अनन्तगुण अधिक स्वरूपसे छह स्थानोंमें पतित है ।

जिस जीवके नाम कर्मकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १८१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ १८२ ॥

शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे परिणत जीवके द्वारा यदि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें प्रदेश जघन्य कर दिया गया है तो कालके साथ द्रव्य भी जघन्य होता है । परन्तु यदि ऐसा नहीं किया गया है तो द्रव्य अजघन्य होता है, क्योंकि, उक्त अवस्थामें उसके जघन्य होनेका कोई कारण नहीं है । अजघन्य होकर भी वह पाँच स्थानोंमें पतित होता है, क्योंकि, उत्तरोत्तर परमाणु अधिक आदिके क्रमसे निरन्तर जाकर असंख्यातगुणवृद्धिमें द्रव्यका अन्त पाया जाता है ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १८३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

* ताप्रतौ 'भाववेयणाजहण्णा' इति पाठः । * अ-आ-काप्रतिषु 'कारणभावादो' इति पाठः ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १८४ ॥

कुदो ? जहण्णखेत्तेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागपमाणेण अजोगिजहण्णखेत्ते संखेज्जघणंगुलमेत्ते भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १८६ ॥

कुदो ? मज्झिमपरिणामेहि कदणामजहण्णभावं पेक्खिदूण सुहुमसांपराइएण सव्वविसुद्धेण बद्धजसगित्तिउक्कस्साणुभागस्स सुहभावेण घादवज्जियस्स अजोगिचरिमसमए अवट्ठिदस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८७ ॥

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ १८८ ॥

खविदकम्मंसियलक्खणेणागदेण तिचरिमभवे जदि भावो मज्झिमपरिणामेण बंधिय हदसमुप्पत्तियं कादूण जहण्णो कदो तो तत्थ दव्वमसंखेज्जभागब्भहियं होदि,

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १८४ ॥ ≤११ पृ. ४३

कारण कि अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य क्षेत्रका संख्यात घनांगुल प्रमाण ४४२, अयोगकेवलीके जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं । ७५६ ≤११ ४२०, ४२

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥१८५॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १८६ ॥

कारण कि मध्यम परिणामोंके द्वारा किये गये नामकर्मके जघन्य भावकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक संयतके द्वारा बाँधा गया यशःकीर्तिका उत्कृष्ट अनुभाग शुभ होनेके कारण घातसे रहित होकर अयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें स्थित अनन्तगुणा पाया जाता है।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १८७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १८८ ॥

कारण यह कि क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आये हुए जीवके द्वारा त्रिचरम भवमें मध्यम परिणामसे बांध कर हतसमुत्पत्ति करके यदि भाव जघन्य किया गया है तो वहाँपर द्रव्य असंख्यातवें

अगलिदासंखेज्जसमयपबद्धत्तादो। उवरि परमाणुत्तरादिकमेण चत्तारि वि वड्ढीओ परूवेदव्वाओ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८९ ॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ १९० ॥

जदि जहण्णभावसहिदजीवेण जहण्णभावबद्धाए चेव अच्छिदूण खेत्तं पि जहण्णं कदं होदि तो भावेण सह खेत्तवेयणा वि जहण्णा। अह ण जहण्णं कदं तो* अजहण्णा च चदुट्ठाणपदिदा, तत्थ पदेसुत्तरादिकमेण खेत्तस्स चत्तारिवड्ढिसंभवादो। उप्पण्णतदियसमयखेत्तं पदेसुत्तरादिकमेण तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणवड्ढिमुवगयचउत्थसमयजहण्णखेत्तेण सरिसं होदि। कुदो? चउत्थादिसु समएसु ओगाहणाए एयंताणुवड्ढिजोगवसेण असंखेज्जगुणवड्ढिदंसणादो। एदं खेत्तवड्ढी कायव्वा जाव जहण्णभावेण अविरुद्धउक्कस्सखेत्तं जादं ति।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९१ ॥

सुगमं।

भागसे अधिक होता है, क्योंकि वहाँ असंख्यात समयप्रबद्ध अगलित हैं। आगे परमाणु अधिक आदिके क्रमसे चारों ही वृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १८९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य चार स्थानोंमें पतित है ॥ १९० ॥

यदि जघन्य भाव सहित जीवके द्वारा जघन्य भावके कालमें ही रह करके क्षेत्रको भी जघन्य कर लिया गया है तो भावके साथ क्षेत्रवेदना भी जघन्य होती है। परन्तु यदि क्षेत्रको जघन्य नहीं किया गया है तो वह अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है, क्योंकि, वहाँ उत्तरोत्तर प्रदेश अधिक आदिके क्रमसे क्षेत्रके चार वृद्धियाँ सम्भव हैं। उत्पन्न होनेके तृतीय समयका क्षेत्र प्रदेश अधिक आदिके क्रमसे उसके योग्य असंख्यातगुणवृद्धिको प्राप्त हुए चतुर्थ समय सम्बन्धी जघन्य क्षेत्रके सदृश होता है, क्योंकि, चतुर्थादिक समयोंमें एकान्तानुवृद्धियोगके वशसे अवगाहनामें असंख्यातगुणवृद्धि देखी जाती है। इस प्रकार जघन्य भावसे अविरुद्ध उत्कृष्ट क्षेत्रके होने तक क्षेत्रकी वृद्धि करनी चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १९१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

* अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णा जहण्णकदं णो', ताप्रतौ 'जहण्णा अजहण्णकदो' इति पाठः।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १९२ ॥

कुदो? ओघजहण्णकालेण एगसमएण जहण्णभावकाले भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमबेसत्तभागुवलंभादो ।

जस्स गोदवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९३ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १९४ ॥

कुदो? ओघजहण्णखेत्तेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण संखेज्जंगुलमेत्त-अजोगिकेवलिजहण्णोगाहणाए ओवट्टिदाए असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ १९६ ॥

कुदो ? जहण्णदव्वस्स एगसमयावट्ठाणदंसणादो ।

तस्स भावदो किं अजहण्णा ॥ १९७ ॥

सुगमं ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १९२ ॥

कारण कि एक समय रूप ओघ जघन्य कालका जघन्य भावकालमें भाग देनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे दो भाग पाये जाते हैं ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १९३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

नियमसे वह अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १९४ ॥

कारण कि अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण ओघ जघन्य क्षेत्रका संख्यात घनांगुल प्रमाण अयोगकेवलीकी जघन्य अवगाहनामें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १९५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ १९६ ॥

क्योंकि, जघन्य द्रव्यका एक समय अवस्थान देखा जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ १९७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'कुदो अजहण्णासंखेण', ताप्रतौ अजहण्णा? खेत्तेण' इति पाठः ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १९८ ॥

कुदो? सव्वुक्कस्सविसोहीए हदसमुप्पत्तियं कादूण उप्पाइदजहण्णाणुभागं पेक्खिय सुहुमसांपराइएण सव्वविसुद्धेण बद्धुच्चागोदुक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो। गोदजहण्णाणुभागे वि उच्चागोदजहण्णाणुभागो अत्थि* त्ति णासंकणिज्जं, बादरतेउक्काइएसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालेण उव्वेल्लिदउच्चागोदेसु अइविसोहीए घादिदणीचागोदेसु गोदस्स जहण्णाणुभागब्भुवगमादो।

प्रायोगिक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जस्स गोदवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९९ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ २०० ॥

एत्थ जहा णामदव्वस्स चउट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा परूवेदव्वं, विसेसाभावादो।

तस्स कालादो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०१ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २०२ ॥

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १९८ ॥

कारण कि सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा हतसमुत्पत्तिको करके उत्पन्न कराये गये जघन्य अनुभागकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक संयतके द्वारा बाँधा गया उच्च गोत्रका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है।

शंका– गोत्रके जघन्य अनुभागमें भी उच्चगोत्रका जघन्य अनुभाग होता है?

समाधान– ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, जिन्होंने पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र कालके द्वारा उच्चगोत्रका उद्वेलन किया है व जिन्होंने अतिशय विशुद्धिके द्वारा नीचगोत्रका घात कर लिया है उन बादर तेजस्कायिक जीवोंमें गोत्रका जघन्य अनुभाग स्वीकार किया गया है। अतएव गोत्रके जघन्य अनुभागमें उच्चगोत्रका अनुभाग सम्भव नहीं है।

जिस जीवके क्षेत्रकी अपेक्षा गोत्रकी वेदना जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ १९९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य चार स्तानोंमें पतित होती है ॥ २०० ॥

यहाँ जिस प्रकारसे नामकर्मसम्बन्धी द्रव्यके चार स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे गोत्रके विषयमें भी उक्त प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ २०१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २०२ ॥

* मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-का-ताप्रतिषु 'गोदजहण्णाणुभागो अत्थि' इति पाठः।

कुदो ? ओघजहण्णकालेण एगसमएण जहण्णखेत्तकाले भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमबेसत्तभागुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ २०४ ॥

बादरतेउ-वाउक्काइएसु उक्कस्सविसोहीए घादिदणीचागोदाणुभागेसु गोदाणुभागं जहण्णं करिय तेण जहण्णाणुभागेण सह उजुगदीए सुहुमणिगोदेसु उप्पज्जिय तिसमयाहार-तिसमयतब्भवत्थस्स खेत्तेण सह भावो जहण्णओ किण्ण जायदे? ण, बादरतेउ-वाउक्काइयपज्जत्तएसु जादजहण्णाणुभागेण सह अण्णत्थ उप्पत्तीए अभावादो । जदि अण्णत्थ उप्पज्जदि तो णियमा अणंतगुणवड्ढीए वड्ढिदूण चेव* उप्पज्जदि ण अण्णहा । कधमेदं णव्वदे? जहण्णखेत्तवेयणाए भाववेयणा णियमा अणंतगुणा त्ति सुत्तवयणादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जस्स गोदवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०५ ॥

क्योंकि, एक समय रूप ओघ जघन्य कालका जघन्य क्षेत्रके कालमें भाग देनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे दो भाग पाये जाते हैं ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥२०३॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २०४ ॥

शंका– जिन्होंने उत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा नीचगोत्रके अनुभागका घात कर लिया है उन बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवोंमें गोत्रके अनुभागको जघन्य करके उस जघन्य अनुभागके साथ ऋजुगतिके द्वारा सूक्ष्म निगोद जीवोंमें उत्पन्न होकर त्रिसमयवर्ती आहारक और तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान उसके क्षेत्रके साथ भाव जघन्य क्यों नहीं होता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, बादर तेजकायिक व वायुकायिक पर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न जघन्य अनुभागके साथ अन्य जीवोंमें उत्पन्न होना सम्भव नहीं है । यदि वह अन्य जीवोंमें उत्पन्न होता है तो नियमसे वह अनन्तगुणवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होकर ही उत्पन्न होता है, अन्य प्रकारसे नहीं ।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– वह 'जघन्य क्षेत्रवेदनाके साथ भाववेदना नियमसे अनन्तगुणी होती है' इस सूत्रवचनसे जाना जाता है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह क्या द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ २०५ ॥

* अ-आ-काप्रतिषु 'वड्ढिदो ण चेव', ताप्रतौ 'वड्ढिदो (अ) चेव' इति पाठः । (१) अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णागेण' इति पाठः ।

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ २०६ ॥

जदि खविदकम्मंसियलक्खणेणागदेण* अजोगिचरिमसमए कालो[1] जहण्णो कदो तो कालेण सह दव्वं पि जहण्णं होदि । अह जइ अण्णहा आगदो तो पंचट्ठाणपदिदा, परमाणुत्तरकमेण चत्तारिपुरिसे अस्सिदूण तत्थ पंचवड्ढिदंसणादो । तासिं परूवणा जाणिय कायव्वा ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २०८ ॥

कुदो? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तजहण्णोगाहणाए संखेज्जंगुलमेत्तअजोगिजहण्णखेत्ते भागे हिदे वि असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ २१० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ २०६ ॥

यदि क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आये हुए जीवके द्वारा अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें काल जघन्य किया गया है तो कालके साथ द्रव्य भी जघन्य होता है परन्तु यदि वह अन्य स्वरूपसे आया है तो उक्त वेदना पाँच स्थानोंमें पतित होती है, क्योंकि, चार पुरुषोंका आश्रय करके वहाँ परमाणु अधिकताके क्रमसे पाँच वृद्धियाँ देखी जाती हैं । उन वृद्धियों की प्ररूपणा जानकर करनी चाहिये।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ २०७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २०८ ॥

कारण कि अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहनाका संख्यात घनांगुला प्रमाण अयोगकेवलीके जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर भी असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ २०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २१० ॥

---

* अ-आ-काप्रतिषु 'लक्खणेणगदेण' इति पाठः । [1] अ-आ-काप्रतिषु 'कालदो' इति पाठः ।

कुदो ? बादरतेउ-वाउक्काइयपज्जत्तजहण्णाणुभागं पेक्खिदूण सव्वविसुद्धेण सुहुमसांपराइएण बद्धुच्चागोदुक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।। २११ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ।। २१२ ।।

तप्पाओग्ग[1] खविदकम्मंसियजहण्णदव्वमादिं कादूण चत्तारिपुरिसे अस्सिदूण दव्वस्स चउट्ठाणपदिदत्तं परूवेदव्वं ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ।। २१३ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ।। २१४ ।।

कुदो ? तिसमयआहार-तिसमयतब्भत्थसुहुमणिगोदजहण्णोगाहणं पेक्खिदूण जहण्णभावसामिबादरतेउ-वाउपज्जत्तओगाहणाए असंखेज्जगुणसदंसणादो । ण च सुहुमोगाहणाए बादरोगाहणा सरिसा ऊणा वा होदि किंतु असंखेज्जगुणा चेव होदि। कुदो एदं णव्वदे ? ओगाहणादंडयसुत्तादो ।

कारण यह कि बादर तेजकायिक व बादर वायुकायिक पर्याप्तकोंमें हुए जघन्य अनुभागकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक संयत के द्वारा बाँधा गया उच्च गोत्रका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २११ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ।। २१२ ।।

तत्प्रायोग्य क्षपितकर्मांशिक जीवके जघन्य द्रव्यसे लेकर चार पुरुषोंका आश्रय करके द्रव्यके चारस्थानों में पतित होनेकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ।। २१३ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ।। २१४ ।।

कारण कि त्रिसमयवर्ती आहारक और तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान सूक्ष्म निगोद जीवकी जघन्य अवगाहनाकी अपेक्षा जघन्य भावके स्वामिभूत बादर तेजकायिक व बादर वायुकायिक पर्याप्तकी अवगाहना असंख्यातगुणी देखी जाती है। बादर जीवकी अवगाहना सूक्ष्म जीवकी अवगाहनाके बराबर या उससे हीन नहीं होती है, किन्तु वह उससे असंख्यातगुणी ही होती है ।

---

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'तप्पाओग्गा' इति पाठः ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २१५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २१६ ॥

एदं पि सुगमं। एवं जहण्णए सत्थाणवेयणासण्णियासे समत्ते सत्थाणवेयणासण्णियासो परिसमत्तो ।

जो सो परत्थाणवेयणासण्णियासो सो दुविहो–जहण्णओ परत्थाणवेयणासण्णियासो चेव उक्कस्सओ परत्थाणवेयणासण्णियासो चेव।२१७।

एवं परत्थाणवेयणासण्णियासो दुविहो चेव होदि, अण्णस्स असंभवादो। जहण्णुक्कस्ससंजोगेण तिविहो किण्ण जायदे? ण, दोहिंतो वदिरित्तसंजोगाभावादो । ण अणुभयपक्खो वि, तस्स ससिंगसमाणत्तादो ।

जो सो जहण्णओ ⊙ परत्थाणवेयणासण्णियासो सो थप्पो ॥२१८॥

अहिययअणाणुपुव्वित्तादो । ⊙सा किमट्ठमेत्थ विवक्खिज्जदे ? तम्हि अवगदे जहण्णओ परत्थाणवेयणासण्णियासो अवगम्मदि त्ति ।

शंका- यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान- वह अल्पबहुत्वदण्डक सूत्र से जाना जाता है ?

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥२१५॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २१६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है । इस प्रकार जघन्य स्वस्थान वेदना संनिकर्ष समाप्त होनेपर स्वस्थान वेदना संनिकर्ष समाप्त हुआ ।

जो यह परस्थान वेदनासंनिकर्ष है वह दो प्रकारका है– जघन्य परस्थान वेदना संनिकर्ष और उत्कृष्ट परस्थान वेदना संनिकर्ष ॥ २१७ ॥

इस प्रकारसे परस्थान वेदना संनिकर्ष दो प्रकारका ही है, क्योंकि,और अन्यकी सम्भावना नहीं है।

शंका– जघन्य और उत्कृष्टके संयोगसे वह तीन प्रकारका क्यों नहीं होता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, दोनोंसे भिन्न संयोगका अभाव है । अनुभय पक्ष भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह खरगोशके सींगोंके समान असम्भव है ।

जो वह जघन्य परस्थान वेदनासंनिकर्ष है वह अभी स्थगित रखा जाता है ॥२१८॥

कारण कि यहाँ आनुपूर्वीका अधिकार नहीं है ।

शंका– उसकी वहाँ विवक्षा किसलिये की जा रही है ?

समाधान– उत्कृष्ट परस्थानवेदना संनिकर्षका ज्ञान हो जानेपर चूंकि जघन्य परस्थान वेदना संनिकर्ष सुखपूर्वक जाना जा सकता है, अतएव यहाँ उसकी विवक्षा की गई है ।

⊙ अ-काप्रत्योः 'जहण्णाओ' इति पाठः (ता)प्रतौ 'णो' इति पाठः ।

जो सो उक्कस्सओ परत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ।। २१९ ।।

एवं चउव्विहो चेव, अण्णस्स अणुवलंभादो । एगसंजोग-दुसंजोग-तिसंजोग-चदु-संजोगेहि पण्णारसविहो किण्ण जायदे? ण, संजोगस्स जच्चंतरीभूदस्स अणुवलंभादो। ण सव्वप्पणा[1] संजोगो, दोण्णमेगदरस्स अभावेण संजोगाभावप्पसंगादो। ण एगदेसेण संजोगो, संजुत्तभावस्स अभावप्पसंगादो इयरत्थ वि संजोगाभावप्पसंगादो । तदो एदेण अहिप्पाएण चउव्विहो चेव उक्कस्सवेयणासण्णियासो त्ति सिद्धं ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माणं-माउववज्जाणं दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।। २२० ।।

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाण-पदिदा ।। २२१ ।।

जो वह उत्कृष्ट परस्थानवेदनासंनिकर्ष है वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा चार प्रकारका है ।। २१९ ।।

इस प्रकारसे वह चार प्रकारका ही है, क्योंकि, उनके भिन्न और कोई भेद नहीं पाया जाता है ।

शंका– एकसंयोग, द्विसंयोग त्रिसंयोग और चतुःसंयोगसे वह पन्द्रह प्रकारका क्यों नहीं होता ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उससे भिन्न जात्यन्तरीभूत संयोग पाया नहीं जाता । यदि वह पाया जाता है तो क्या सर्वात्मक स्वरूपसे अथवा एकदेश स्वरूपसे ?) वह संयोग सर्वात्मक स्वरूपसे तो सम्भव है नहीं, क्योंकि, इस प्रकारसे दोनोंमेंसे एकका अभाव हो जानेके कारण संयोगसे ही अभावका प्रसंग आता है । एकदेश रूपसे भी वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर संयुक्तताके अभावका प्रसंग आता है, अथवा अन्यत्र भी संयोगके अभावका प्रसंग होना चाहिये । अतएव इस अभिप्रायसे चार प्रकारका ही उत्कृष्ट वेदनासंनिकर्ष है यह सिद्ध होता है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुको छोडकर शेष छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?।। २२० ।।

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी, उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट दो स्थानोंमें पतित है ।। २२१ ।।

[1] अ-काप्रत्योः 'सव्वप्पणा', आप्रतौ 'सव्वप्पणा' इति पाठः ।

सुद्धणयविसयगुणिदकम्मंसियलक्खणेण[1] आगंतूण णेरइयचरिमसमए ट्ठिदस्स दव्वं णाणावरणीयदव्वेण सह छण्णं कम्माणं दव्वं उक्कस्सयं होदि। अह णाणावरणीयदव्वस्स सुद्धणयविसयगुणिदकम्मंसियो होदूण जदि सेसकम्माणमसुद्धणयविसयगुणिदकम्मंसियो होदि तो तेसिं दव्ववेयणा अणुक्कस्सा। सा वि विट्ठाणपदिदा, अण्णस्सासंभवादो। एदं दव्वट्ठियणयसुत्तं। संपहि पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

अणंतभागहीणा वा असंखेज्जभागहीणा ॥ २२२ ॥

णाणावरणीयदव्वस्स उक्कस्ससंचयं कादूण जदि विसेसछकम्मागमेगपदेसूणुक्कस्ससंचयं करेदि तो तेसिं दव्ववेयणा अणुक्कस्सा होदूण अणंतभागहीणा। को पडिभागो? उक्कस्सदव्वं। दुपदेसूणस्स उक्कस्सदव्वस्स संचए कदे वि अणंतभागहीणा। को पडिभागो? उक्कस्सदव्वदुभागो। एवमेदेण कमेण अणंतभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमुक्कस्सदव्वादो परिहीणं ति। तत्तो पहुडि असंखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदे तत्थ एगखंडेण परिहीणं ति। अहियं किण्ण जिज्जदे? ण, गुणिदकम्मंसियम्मि उक्कस्सेण जदि खओ होदि तो एगसमयपबद्धो चेव जिज्जदि त्ति

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'लक्खणे' तापतौ 'लक्खणे(ण)' इति पाठः। [2] तापतौ (दव्वं) इत्येतदधिकोऽत्र पाठः।

जागरणके ... आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शुद्धनयके विषयभूत गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर नारक भवके अन्तिम समयमें स्थित जीवके ज्ञानावरणीयके द्रव्यके साथ छह कर्मोंका द्रव्य उत्कृष्ट होता है। परन्तु ज्ञानावरणीय द्रव्यका शुद्धनयका विषयभूत गुणितकर्मांशिक होकर यदि शेष कर्मोंका अशुद्धनयका विषयभूत गुणितकर्मांशिक होता है तो उनकी द्रव्यवेदना अनुत्कृष्ट होती है। वह भी द्विस्थानपतित है, क्योंकि, यहाँ अन्य स्थानकी सम्भावना नहीं है। यह द्रव्यार्थिकनयका आश्रय करनेवाला सूत्र है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं-

अनन्तभागहीन अथवा असंख्यातभागहीन होती है ॥ २२२ ॥

ज्ञानावरणीय द्रव्यका उत्कृष्ट संचय करके यदि शेष छह कर्मोंका एक प्रदेशहीन उत्कृष्ट सञ्चय करता है तो उनकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट होकर अनन्तभागहीन होती है। प्रतिभाग क्या है? उत्कृष्ट द्रव्य प्रतिभाग है। दो प्रदेशोंसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेपर भी अनन्तभाग हीन होती है। प्रतिभाग गया है? उत्कृष्ट द्रव्यका द्वितीय भाग प्रतिभाग है। इस प्रकार इस क्रमसे अनन्तभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक कि उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे हीन होता है। वहाँसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डसे हीन होने तक असंख्यातभागहानि होकर जाती है।

शंका— अधिक हीन क्यों नहीं होता?

समाधान— नहीं, क्योंकि, गुणितकर्मांशिक जीवमें उत्कृष्टरूपसे यदि क्षय होता है तो एक

गुरूवदेसादो। तम्हा दो चेव हाणीयो गुणिदकम्मंसिए होंति त्ति सिद्धं।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २२३ ॥

सुगमं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ २२४ ॥

कुदो? गुणिदकम्मंसियचरिमसमयणेरइयआउअदव्वं एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागो, दिवड्ढगुणहाणिगुणिदअण्णोण्णब्भत्थरासिणा बंधगद्धामेत्तसमयपबद्धेसु ओवट्टिदेसु एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जभागुवलंभादो*। आउअस्स उक्कस्सदव्वं पुण✲ बेउक्कस्सबंधगद्धामेत्तसमयपबद्धा। तेण सगउक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण गुणिदकम्मंसिय आउअदव्ववेयणा असंखेज्जगुणहीणा। जदि वि आउअदव्वम्मि परभवियम्मि असंखेज्जाओ गुणहाणीयो ण गलंति तो वि णाणावरणीयादिसत्तकम्मं गुणिदकम्मंसिए आउअदव्वस्स असंखेज्जगुणहीणमेव, जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गेण जहण्णएण जोगेण बंधदि त्ति सुत्तवयणादो।

एवं छण्णं कम्माणमाउववज्जाणं ॥ २२५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूवणा कदा तहा छण्णं कम्माणं कायव्वा, विसेसाभावादो।

समयप्रबद्धका ही क्षय होता है; ऐसा गुरुका उपदेश है। इस कारण गुणितकर्मांशिक जीवमें दो ही हानियाँ होती हैं, यह सिद्ध होता है।

उसके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ॥ २२४ ॥

कारण यह कि गुणितकर्मांशिक चरम समयवर्ती नारकीका आयुद्रव्य एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग प्रमाण होता है, क्योंकि, डेढ़ गुणहानियोंसे गुणित अन्योन्याभ्यस्त राशिद्वारा, बन्धककाल प्रमाण समयप्रबद्धोंके अपवर्तित करनेपर एक समयप्रबद्धका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है। परन्तु आयु कर्मका उत्कृष्ट द्रव्य दो उत्कृष्ट बन्धककाल प्रमाण समयप्रबद्धोंके बराबर है। इसलिये अपने उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा गुणितकर्मांशिक जीवके आयु द्रव्यकी वेदना असंख्यातगुणी हीन होती है। यद्यपि परभव सम्बन्धी आयु कर्म के द्रव्यमें से असंख्यात गुणहानियाँ नहीं गलती हैं तो भी ज्ञानावरणादिक सात कर्म युक्त गुणितकर्मांशिक जीवमें आयुका द्रव्य असंख्यातगुणा हीन ही होता है, क्योंकि, जब जब आयु कर्मको बांधता है तब तब तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे बांधता है, ऐसा सूत्र वचन है।

इसी प्रकारसे आयुको छोड़ कर शेष छह कर्मोंकी प्ररूपणा है ॥२२५॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार छह कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

* अ-आ-काप्रतिषु 'असंखेज्जआउवलंभादो', ताप्रतौ 'असंखेज्जआ (भाग) उवलंभादो' इति पाठः।
✲ अ-आ-काप्रतिषु 'पुण णेय उक्कस्सं' इति पाठः।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २२६ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ २२७ ॥

तं जहा– गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीदो आगंतूण एग-दो-तिण्णिभवग्गहणाणि पंचिंदियतिरिक्खेसु भमिय पच्छा एइंदिएसुप्पज्जिय [illegible] किमट्ठं तिण्णं पि णिद्देसो कीरदे? आइरियोवदेसबहुत्तजाणावणट्ठं। पुणो पुव्वकोडाउअतिरिक्खेसु मणुस्सेसु वा आउअं बंधिय पुव्वकोडितिभागम्मि ठाइदूण पुणरवि जलचरेसु पुव्वकोडाउअं बंधिय तत्थुप्पज्जिय कदलीघादेण भुंजमाणाउअं घादिय उक्कस्सबंधगद्धाए उक्कस्सजोगेण च पुव्वकोडाउए पबद्धे आउअदव्वमुक्कस्सं होदि। सेससत्तकम्मदव्वं पुण उक्कस्सदव्वं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण हीणं होदि। तदो प्पहुडि असंखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्ससंखेज्जमुक्कस्सदव्वस्स हाणिआगमणट्ठं भागहारो जादो त्ति। तत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जभागहाणी होदि जाव उक्कस्सदव्वस्स हाणिआगमणट्ठं दोरूवाणि भागहारो जादाणि त्ति। तदो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणी होदि जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण उक्कस्सदव्वे खंडिदे तत्थ एगखंडमवसेसं ति।

जिस जीवके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?॥ २२६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित होती है॥ २२७ ॥

यथा– गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे आकर एक दो तीन भवग्रहण प्रमाण पंचेंद्रिय जीवोंमें परिभ्रमण करके पीछे एकेन्द्रिय जीवोंमें उत्पन्न हुआ ।

शंका– 'एक दो तीन भवग्रहण प्रमाण' इस प्रकार तीनका भी निर्देश किसलिये किया जा रहा है ?

समाधान– उक्त निर्देश आचार्योपदेशके बहुत्वका ज्ञापन करानेके लिये किया गया है।

पश्चात् पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले तिर्यंचों या मनुष्योंमें आयुको बाँधकर पूर्वकोटिके त्रिभागमें स्थित होकर फिरसे भी जलचर जीवोंमें पूर्वकोटि प्रमाण आयुको बाँधकर उनमें उत्पन्न हो कदलीघातसे भुज्यमान आयुको घातकर उत्कृष्ट बन्धककालमें उत्कृष्ट योगके द्वारा पूर्वकोटि मात्र आयुके बाँधनेपर आयुका द्रव्य उत्कृष्ट होता है। परन्तु शेष सात कर्मोंका द्रव्य उत्कृष्ट द्रव्यको पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खण्डसे हीन होता है। उससे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यकी हानिको लानेके लिए उत्कृष्ट संख्यातके भागहार होने तक असंख्यातभागहानि होकर जाती है। वहाँ से लेकर आगे उत्कृष्ट द्रव्यकी हानिको लानेके लिये दो अंक भागहार होनेतक संख्यातभागहानि होती है। यहाँ से लेकर जघन्य परीतासंख्यातसे उत्कृष्ट द्रव्यको खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डके शेष रहने तक संख्यातगुणहानि होती है। यहाँसे लेकर

एत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव आउअउक्कस्सदव्वाविरोहिखविदकम्मंसियजहण्णदव्वं ति । एवमाउए उक्कस्से जादे सेसकम्माणं चउट्ठाणपदिदत्तं सिद्धं । संपहि पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठं उत्तरसुत्तं भणदि–

असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ २२८ ॥

सुगमं ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहनीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२२९॥

सुगमं ।

उक्कस्सा ॥ २३० ॥

णाणावरणेणेव सेसघादिकम्मेहि वि अद्धट्ठमरज्जुआयदं संखेज्जसूचीअंगुलवित्थारबाहल्लं सव्वं पि खेत्तं फोसिदं, सव्वकम्माणं वि जीवदुवारेण भेदाभावादो । तेण एक्केक्कस्स घादिकम्मस्स उक्कस्सखेत्ते जादे सेसघादिकम्माणं पि खेत्तमुक्कस्समेवे त्ति सिद्धं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तस्स वेयणीय–आउअ–णामा–गोदवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २३१ ॥

आयुकर्मके उत्कृष्ट द्रव्यके अविरोधी क्षपितकर्मांशिकके जघन्य द्रव्य तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है । इस प्रकार आयुके उत्कृष्ट होनेपर शेष कर्म द्रव्य चार स्थानोंमें पतित है, यह सिद्ध होता है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं ।

वह असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन अथवा असंख्यातगुणहीन होती है ॥ २२८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट? ॥ २२९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उत्कृष्ट होती है ॥ २३० ॥

ज्ञानावरणके समान ही शेष घाति कर्मोंके द्वारा भी साढे सात राजु आयात व संख्यात सूच्यंगुल विस्तार एवं बाहल्यवाला सभी क्षेत्र स्पर्श किया गया है, क्योंकि, सभी कर्मोंके जीव द्वारा कोई भेद नहीं है । इसीलिये एक एक घाति कर्मका उत्कृष्ट क्षेत्र होनेपर शेष घाति कर्मोंका भी क्षेत्र उत्कृष्ट ही होता है, यह सिद्ध है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?॥ २३१ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ।। २३२ ।।

कुदो ? महामच्छुक्कस्सखेत्तेण घणलोगे भागे हिदे पदरस्स असंखेज्जदिभाग-मेत्तगुणगारुवलंभादो ।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।। २३३ ।।

जहा णाणावरणीयस्स परूवणा कदा तहा सेसतिण्णं घादिकम्माणं परूवणा कायव्वा, अविसेसादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणा-वरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सिया णत्थि ।। २३४ ।।

कुदो? घादिचउक्कस्स लोगपूरणकाले अभावादो । किमट्ठं पुव्वमेव तदभावो ? ण, साभावियादो । ण च सहावो परपज्जणियोगारिहो, विरोहादो ।

तस्स आउव-णामा-गोदवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।।२३५।।

सुगमं ।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणहीन होती है ।। २३२ ।।

कारण यह कि महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रका घनलोकमें भाग देनेपर प्रतरका असंख्यातवाँ भाग मात्र गुणकार पाया जाता है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २३३ ।।

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे शेष तीन घाति कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उनमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञाना-वरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट नहीं होती है ।। २३४ ।।

कारण कि लोकपूरणकालमें चारों घातिकर्मोंका अभाव है ।

शंका- उनका अभाव पहिले ही किसलिये हो जाता है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, ऐसा स्वभावसे होता है, और स्वभाव दूसरोंके प्रश्नके योग्य नहीं है; क्योंकि, उसमें विरोध है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?।। २३५ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

Ⓞ अ-आ-काप्रतिषु 'तदाभावो' इति पाठः

उक्कस्सा ॥ २३६ ॥

कुदो ? लोगे आवूरिदे जीवादो अभिण्णाणमेदेसिं कम्माणं वेयणीयस्सेव ◎ सव्वलोगावट्ठाणुवलंभादो ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ २३७ ॥

जहा वेयणीए णिरुद्धे सेसकम्माणं परूवणा कदा तहा एदेसु वि तिसु कम्मेसु णिरुद्धेसु परूवणा कायव्वा ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माण-माउअवज्जाणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२३८ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा असं-खेज्जभागहीणा ॥ २३९ ॥

सूत्रार्थ :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णाणावरणीएण सह जदि सेसछकम्मेहि उक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो णाणावरणीएण सह सेसछकम्माणि वि ट्ठिदिं पडुच्च उक्कस्साणि चेव होंति। जदि पुण विसेसपच्चएहि सेसकम्माणि विगलाणि होंति तो णाणावरणट्ठिदीए उक्कस्सीए संतीए सेसकम्मट्ठिदी

उत्कृष्ट होती है ॥ २३६ ॥

कारण कि लोकके पूर्ण होनेपर अर्थात् लोकपूरणसमुद्घातमें जीवसे अभिन्न इन कर्मोंका वेदनीयके ही समान सब लोकमें अवस्थान पाया जाता है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकी विवक्षामें भी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २३७ ॥

जिस प्रकारसे वेदनीय कर्मकी विवक्षामें शेष कर्मोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन तीन कर्मोंकी विवक्षामें प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुको छोड शेष छह कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?॥ २३८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभाग हीन होती है ॥ २३९ ॥

ज्ञानावरणीयके साथ यदि शेष छह कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई है तो ज्ञानावरणीयके साथ शेष छह कर्म भी स्थितिकी अपेक्षा उत्कृष्ट ही होते हैं। परन्तु यदि विशेष प्रत्ययोंसे शेष कर्म विकल होते हैं तो ज्ञानावरणीयकी स्थितिके उत्कृष्ट होनेपर शेष कर्मोंकी स्थिति अनुत्कृष्ट होती है,

◎ अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वा-' इति पाठः ।

अणुक्कस्सा होदि, विसेसपच्चयविगलत्तणेण एगसमयमादिं कादूण जाव उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीणं परिहाणिदंसणादो। परिहीणट्ठिदीणं को पडिभागो ? सादिरेयउक्कस्साबाहा। कुदो? उक्कस्साबाहाए उक्कस्सट्ठिदीए खंडिदाए तत्थ एगखंडस्स रूवूणमेत्तस्स परिहाणिदंसणादो। उक्कस्सेण एत्तिया चेव हाणी होदि, अण्णहा आबाहाहाणीए णाणावरणीयस्स वि उक्कस्सट्ठिदीए अभावप्पसंगादो।

तस्स आउअवेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २४० ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ २४१ ॥

णाणावरणीयट्ठिदीए उक्कस्सियाए बज्झमाणियाए जदि आउअस्स वि पुव्वकोडितिभागपढमसमए उक्कस्सबंधो होदि तो णाणावरणीयट्ठिदीए सह आउट्ठिदी वि उक्कस्सा होदि। अण्णहा अणुक्कस्सा होदूण चउट्ठाणपदिदा होदि। तं जहा- णाणावरणीयस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेण समऊणदुसमऊणादिकमेण पुव्वकोडितिभागाहियतेत्तीससागरोवमाणि उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं जाव परिहाइदूण आउए पबद्धे असंखेज्जभागहाणी होदि। तत्तो

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

क्योंकि, विशेष प्रत्ययोंसे विकल होनेके कारण एक समयसे लेकर उत्कृष्ट रूपसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितियोंकी हानि देखी जाती है।

शंका- हीन स्थितियोंका प्रतिभाग क्या है ?

समाधान- उनका प्रतिभाग साधिक उत्कृष्ट आबाधा है, क्योंकि, उत्कृष्ट आबाधासे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डित करनेपर उसमें एक कम एक खण्ड मात्रकी हानि देखी जाती है।

उत्कृष्टसे इतनी मात्र ही हानि होती है, क्योंकि, अन्यथा आबाधाकी हानि होनेपर ज्ञानावरणीयकी भी उत्कृष्ट स्थितिके अभावका प्रसंग आता है।

उसके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ॥२४०॥

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी, उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित है ॥ २४१ ॥

ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बाँधते समय यदि आयुकर्मका भी पूर्वकोटिके त्रिभागके प्रथम समयमें उत्कृष्ट बन्ध होता है तो ज्ञानावरणीयकी स्थितिके साथ आयुकी स्थिति भी उत्कृष्ट होती है। इसके विपरीत वह अनुत्कृष्ट होकर चार स्थानोंमें पतित होती है। यथा-ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा एक समय कम दो समय कम इत्यादि क्रमसे पूर्वकोटिके त्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपमोंको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उनमें एक खण्ड मात्र तक हीन होकर आयुके बाँधनेपर असंख्यातभागहानि होती है। वहांसे लेकर आयुकी

प्पहुडि आउअस्स संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सट्ठिदीए दुभागबंधो त्ति।तत्तो प्पहुडि संसेज्जगुणहाणी होदि जाव णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदीए सह आउअस्स उक्कस्सट्ठिदि जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तआउट्ठिदी ऽपबद्धा त्ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव तप्पाओग्गअंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदि त्ति। कधं णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदिपाओग्गपरिणामेहि आउअस्स चउट्ठाणपदिदो बंधो जायदे ? ण एस दोसो, णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदिबंधपाओग्गपरिणामेसु वि अंतोमुहुत्तमेत्तआउट्ठिदिबंधपाओग्गपरिणामाणं संभवादो। कधमेगो परिणामो भिण्णकज्जकारओ ? ण, सहकारिकारणसंबंधभेएण तस्स तदविरोहादो।

एवं छण्णं कम्माणं आउववज्जाणं ॥ २४२ ॥

जहा णाणावरणीए परूविदो सण्णियासो कदो तहा सेसछकम्माणमाउअवज्जाणं कायव्वं, विसेसाभावादो।

जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२४३॥

सुगमं।

संख्यातभाग हानि होकर उत्कृष्ट स्थितिके द्वितीय भागका बन्ध होने तक जाती है। वहाँसे लेकर ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ आयुकी उत्कृष्ट स्थितिको जघन्य परीतासंख्यासे खण्डित कर उसमें एक खण्ड प्रमाण आयुकी स्थितिके बाँधने तक संख्यातगुणहानि होती है। वहाँ से लेकर तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है।

शंका– ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थिति योग्य परिणामोंके द्वारा आयु कर्मका चतुःस्थान पतित बन्ध कैसे होता है ?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध योग्य परिणामोंमें भी अन्तर्मुहूर्त मात्र आयुःस्थितिके बन्ध योग्य परिणाम सम्भव हैं।

शंका– एक परिणाम भिन्न कार्योंका करनेवाला कैसे होता है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, सहकारी कारणोंके सम्बन्धभेदसे उसके भिन्न कार्योंके करनेमें कोई विरोध नहीं है। (देखो पृ. ४५५)

इसी प्रकार शेष छह कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २४२ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी विवक्षामें शेष कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार आयुको छोड़कर शेष छह कर्मोंके सन्निकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ॥ २४३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

(पृ. अ-ताप्रयोः 'आउट्ठिदीए' इति पाठः)

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा ॥ २४४ ॥

पुव्वकोडितिभागे उक्कस्साउट्ठिदिं बंधमाणेण जदि णाणावरणीयादिसत्तण्णं कम्माणमुक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो आउएण सह सेससत्तण्णं कम्माणं पि उक्कस्सट्ठिदी होदि । अण्णहा अणुक्कस्सा होदूण तिट्ठाणपदिदा होदि । पज्जवणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ॥ २४५ ॥

तं जहा- पुव्वकोडितिभागम्मि उक्कस्साउअट्ठिदिं बंधमाणेण सत्तण्णं कम्माणं समऊणुक्कस्सट्ठिदीए बद्धाए असंखेज्जभागहाणी होदि । दुसमऊणाए पबद्धाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि । एवमसंखेज्जभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव सत्तण्णं कम्माणं सग-सगुक्कस्सट्ठिदीओ उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण ⊕ परिहाइदूण (बंधंति।) तदो प्पहुडि हेट्ठिमट्ठिदीसु आउअस्स उक्कस्सट्ठिदीए सह बंधमाणासु ※ संखेज्जभागहाणी होदि जाव उक्कस्सट्ठिदीए अद्धमेत्तं बद्धं ति । तदो प्पहुडि हेट्ठिमट्ठिदीओ आउअस्स उक्कस्सट्ठिदीए सह बंधमाणस्स ※ संखेज्जगुणहाणी होदि जाव तप्पाओग्गअंतोकोडाकोडिट्ठिदि त्ति ।

प्रेरक : प. पू. मुनिश्री सुविधिसागर जी महाराज

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट तीन स्थानोंमें पतित है ॥ २४४ ॥

पूर्वकोटिके त्रिभागमें आयुकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा यदि ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई तो आयुके साथ शेष सात कर्मोंकी भी उत्कृष्ट स्थिति होती है । इसके विपरीत वह अनुत्कृष्ट होकर तीन स्थानोंमें पतित होती है । अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं ।

उक्त वेदना असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, अथवा संख्यातगुणहीन होती है ॥ २४५ ॥

वह इस प्रकारसे- पूर्वकोटिके त्रिभागमें आयु की उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा सात कर्मोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिके जानेपर असंख्यातभागहानि होती है। दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बाँधे जानेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकार असंख्यातभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक सात कर्मोंकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियोंका उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उनमेंसे एक खण्डसे हीन होकर बाँधी जाती हैं। यहांसे लेकर आयुकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ अधस्तन स्थितियोंको बाँधनेपर उत्कृष्ट स्थितिके अर्ध भागको बांधने तक संख्यातभागहानि होती है। यहाँसे लेकर अधस्तन स्थितियोंको आयुकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ बाँधनेवाले जीवके तत्प्रायोग्य अन्तःकोडाकोडि प्रमाण स्थिति तक संख्यातगुणहानि होती है ।

⊕ प्रतिषु 'एगखंडे' परिहादूणं वज्झंती' इति पाठः । ※ प्रतिषु 'बद्धमाणासु' इति पाठः ।
※ प्रतिषु 'बद्धमाणस्स' इति पाठः ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहनीय-अंतराइयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२४६॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाण-पदिदा ॥ २४७ ॥

णाणावरणीयभावमुक्कस्सं बंधमाणेण जदि सेसघादिकम्माणुक्कस्सभावो पबद्धो तो उक्कस्सा भाववेयणा होदि । अह ण (१) बद्धो अणुक्कस्सा होदूण अणंतभागहीण असंखेज्जभागहीण-संखेज्जभागहीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीण- अणंतगुणहीण-सरूवेण छट्ठाणपदिदा होदि । कधमेक्केण परिणामेण बज्झमाणाणं भेयो ? ण, विसेसपच्चयभेएण तेसिं पि भेदुप्पत्तीदो ।

तस्स वेयणीय–आउअ–णामा–गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २४८ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २४९ ॥

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट? ॥ २४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी, उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट छह स्थानोंमें पतित है ॥ २४७ ॥

ज्ञानावरणीयके उत्कृष्ट भावको बाँधनेवाले जीवके द्वारा यदि शेष घातिकर्मोंका उत्कृष्ट भाव बाँधा गया है तो उनकी उत्कृष्ट भाववेदना होती है। परन्तु यदि उनका उत्कृष्टभाव नहीं बाँधा गया है तो वह अनुत्कृष्ट होकर अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन और अनन्तगुणहीन स्वरूपसे छह स्थानोंमें स्थानोंमें पतित होती है ।

शंका– एक परिणामसे बाँधे जानेवाले भावोंके भेदकी सम्भावना कैसे हो सकती है? See पृ-३७ ३८०,३८

समाधान– नहीं, क्योंकि, विशेष प्रत्ययोंके भेदसे उनके भी भेदकी उत्पत्ति सम्भव है । ४५२

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अनुत्कृष्ट ?॥ २४८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २४९ ॥

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्ण' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तं जहा-सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठीसु णाणावरणीयभावो उक्कस्सो होदि।आउअभावो पुण पमत्तापमत्तसंजदप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ त्ति ताव उक्कस्सो होदि वेमाणियदेवेसु च । सेस⊖अघादिकम्माणं सुहुमसांपराइयसुद्धि संजदप्पहुडि उवरि उक्कस्सभावो होदि । ण च मिच्छाइट्ठीसु अघादिकम्माणमुक्कस्सभावो अत्थि, सम्माइट्ठीसु णियमिदउक्कस्साणुभागस्स मिच्छाइट्ठीसु संभवविरोहादो । तेण अघादिकम्माणमणुभागो अणंतगुणहीणो ।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ २५० ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तहा सेसतिण्णं घादिकम्माणं कायव्वो, अविसेसादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो सिया अत्थि सिया णत्थि ॥२५१॥

सुहुमसांपराइय-खीणकसाएसु अत्थि, तत्थ तदाधारपोग्गलुवलंभादो । उवरि णत्थि तेसु संतेसु केवलित्तविरोहादो ।

जदि अत्थि भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २५२ ॥

वह इस प्रकारसे–संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ज्ञानावरणीयका भाव उत्कृष्ट होता है,परन्तु आयु कर्मका भाव प्रमत्त व अप्रमत्तसंयतसे लेकर उपशान्तकषाय तक उत्कृष्ट होता है,तथा वैमानिक देवोंमें भी वह उत्कृष्ट होता है। शेष तीन अघाति कर्मोंका उत्कृष्ट भाव सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयतसे लेकर आगे होता है । मिथ्यादृष्टि जीवोंमें अघाति कर्मोंका उत्कृष्ट भाव सम्भव नहीं है,क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवोंमें नियमसे पाये जानेवाले अघाति कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागके मिथ्यादृष्टि जीवोंमें होनेका विरोध है । इस कारण अघाति कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके संनिकर्षकी प्ररूपणा करना चाहिये ॥ २५० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार शेष तीन घाति कर्मोंका संनिकर्ष करना चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा कथंचित् होती है व कथंचित् नहीं होती है ॥ २५१ ॥

उक्त तीन घाति कर्मोंकी वेदना सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय गुणस्थानोंमें है, क्योंकि, वहाँ उनके आधारभूत पुद्गल पाये जाते हैं । आगे उनकी वेदना नहीं है, क्योंकि उक्त तीन कर्मोंके होनेपर केवली होनेका विरोध है ।

यदि है तो वह भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट है या अनुत्कृष्ट ॥ ? २५२ ॥

⊖ ताप्रतौ 'होदि । वेमाणियदेवेसु च सेस-' इति पाठः । ताप्रतौ 'सांपराइयसुद्धि-' इति पाठः ।

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २५३ ॥

अणुक्कस्सत्तमणेयविहमिदि ㊀ अणप्पिदाणुक्कस्सपडिसेहट्ठमणंतगुणहीणमिदि भणिदं । किमट्ठमणंतगुणहीणत्तं ? खवगपरिणामेहि पत्तघादत्तादो ।

तस्स मोहणीयवेयणा भावदो णत्थि ॥ २५४ ॥

सुहुमसांपराइयचरिमसमए वेयणीयस्स उक्कस्साणुभागबंधो जादो । ण च सुहुमसांपराइए मोहणीयभावो णत्थि, भावेण विणा दव्वकम्मस्स अत्थित्तविरोहादो सुहुमसांपराइयत्तण्णहाणुववत्तीदो वा तस्स मोहणीयभाववेयणा भावविसया णत्थि त्ति ण जुज्जदे? एत्थ परिहारो उच्चदे । तं जहा– विणासविसए दोण्णि णया होंति उप्पादाणुच्छेदो अणुप्पादाणुच्छेदो चेदि । तत्थ उप्पादाणुच्छेदो णाम दव्वट्ठियो । तेण संतावत्थाए चेव विणासमिच्छदि, असंते बुद्धिविसयं चाइक्कंतभावेण ✲ वयणगोयराइक्कंते अभाववबहाराणुववत्तीदो । ण च अभावो णाम अत्थि, तप्परिच्छिंदंतपमाणाभावादो ㊁ संतविसयाणं

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २५३ ॥

अनुत्कृष्टता चूंकि अनेक प्रकार की है, अतएव अविवक्षित अनुत्कृष्टताका प्रतिषेध करनेके लिये 'अनन्तगुणी हीन' ऐसा कहा है ।

शंका– अनन्तगुणहीनता किसलिये है ?

समाधान– क्षपक परिणामों द्वारा घातको प्राप्त होनेके कारण वह अनन्तगुणी हीन होती है ऐसा कहा है ।

उक्त जीवके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा नहीं होती है ॥ २५४ ॥

शंका– सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें वेदनीयका अनुभागबन्ध उत्कृष्ट हो जाता है । परन्तु उस सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें मोहनीयका भाव नहीं हो, ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, भावके बिना द्रव्य कर्मके रहनेका विरोध है, अथवा वहां भावके न माननेपर 'सूक्ष्मसाम्परायिक' यह संज्ञा ही नहीं बनती है । इस कारण मोहनीयकी भावविषयक वेदना नहीं है, यह कहना उचित नहीं है?

समाधान–यहां इस शंकाका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है–विनाशके विषयमें दो नय हैं उत्पादानुच्छेद और अनुत्पादानुच्छेद । उत्पादानुच्छेदका अर्थ द्रव्यार्थिक नय है। इसलिये वह सद्भावकी अवस्थामें ही विनाशको स्वीकार करता है, क्योंकि, असत् और बुद्धिविषयतासे अतिक्रान्त होनेके कारण वचनके अविषयभूत पदार्थमें अभावका व्यवहार नहीं बन सकता। दूसरी बात यह है कि अभाव नामका कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है, क्योंकि, उसके ग्राहक प्रमाणका अभाव है । कारण कि सत्को विषय करनेवाले प्रमाणोंके असत् में प्रवृत्त होनेका विरोध है ।

㊀ अ-आ-काप्रतिषु 'मणेणविह' इति पाठः । ㊁ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-का-ता प्रतिषु 'णयण' इति पाठः । ✲ अ-आ-काप्रतिषु 'सत्त' इति पाठः ।

पमाणाणमसंते वावारविरोहादो। अविरोहे वा गद्दहसिंगं पि पमाणविसयं होज्ज। ण च एवं, अणुवलंभादो। तम्हा भावो चेव अभावो त्ति सिद्धं।

अणुप्पादाणुच्छेदो णाम पज्जवट्ठिओ णयो। तेण असंतावत्थाए अभाववएसमिच्छदि, भावे उवलब्भमाणे अभावत्तविरोदादो। ण च पडिसेहविसओ भावो भावत्तमल्लियइ, पडिसेहस्स फलाभावप्पसंगादो। ण च विणासो णत्थि, * घडियादीणं [सव्वद्धमवट्ठाणाणुवलंभादो। ण च भावो अभावो होदि, भावाभावाणमण्णोण्णविरुद्धाणमेयत्तविरोहादो।] एत्थ जेण दव्वट्ठियणयो उप्पादाणुच्छेदो अवलंबिदो तेण मोहणीयभाववेयणा णत्थि त्ति भणिदं। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे मोहणीय भाववेयणा अणंतगुणहीणा होदूण अत्थि त्ति वत्तव्वं।

तस आउअवेयणा भाववो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २५५ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २५६ ॥

जेण आउअस्स उक्कस्सभाववेयणा अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअम्मि होदि। ण च

अथवा, असत्के विषयमें उनकी प्रवृत्तिका विरोध न माननेपर गधेका सींग भी प्रमाणका विषय होना चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वह पाया नहीं जाता। इस कारण भाव स्वरूप ही अभाव है, यह सिद्ध होता है।

अनुत्पादानुच्छेदका अर्थ पर्यायार्थिक नय है। इसी कारण वह असत् अवस्थामें अभाव संज्ञाको स्वीकार करता है, क्योंकि, इस नयकी दृष्टिमें भावकी उपलब्धि होनेपर अभावरूपताका विरोध है। और प्रतिषेधका विषयभूत भाव भावस्वरूपताको प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि, ऐसा होनेपर प्रतिषेधके निष्फल होनेका प्रसंग आता है। विनाश नहीं है, यह भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि, घटिका (छोटा घडा) आदिकोंका सर्वकाल अवस्थान नहीं पाया जाता। यदि कहा जाय कि भाव ही अभाव है (भावको छोडकर तुच्छ अभाव नहीं है) तो यह भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, भाव और अभाव ये दोनों परस्पर विरुद्ध हैं, अतएव उनके एक होनेका विरोध है। यहां चूंकि द्रव्यार्थिक नय स्वरूप उत्पादानुच्छेदका अवलम्बन किया गया है, अतएव 'मोहनीय कर्मकी भाववेदना यहां नहीं है' ऐसा कहा गया है। परन्तु यदि पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किया जाय तो मोहनीयकी भाववेदना अनन्तगुणी हीन होकर यहां विद्यमान है ऐसा कहना चाहिये।

उसके आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ॥ २५५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट होकर अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २५६ ॥

इसका कारण यह है कि आयुकी उत्कृष्ट भाववेदना अप्रमत्तसंयतके द्वारा बांधी गई देवायु में

---

* प्रतिषु 'घादियादीणं इति पाठः। [ ] अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वत्थावब-' ताप्रतौ 'सव्वत्थ अव' इति पाठः

खवगसेडिम्मि देवाउअमत्थि, बद्धाउआणं खवगसेडिसमारोहाभावादो। अत्थि च मणुस्साउअं, ण तस्साणुभागो उक्कस्सो होदि; असंजदसम्मादिट्ठिणा मिच्छादिट्ठिणा वा बद्धस्स देवाउअं पेक्खिदूण अप्पसत्थस्स उक्कस्सत्तविरोहादो। तेण अणंतगुणहीणा।

तस्स णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२५७॥

सुगमं।

उक्कस्सा ॥ २५८ ॥

सुहुमसांपराइयम्मि सव्वुक्कस्सविसोहीहि तिण्णं पि उक्कस्सबंधुवलंभादो।

एवं णामा गोदाणं ॥ २५९ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कदो तहा णामा-गोदाणं पि कायव्वो, विसेसाभावादो।

जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २६० ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २६१ ॥

होती। परन्तु क्षपकश्रेणिमें देवायु है नहीं, क्योंकि, बद्धायुष्क जीवोंका क्षपक श्रेणिपर चढना सम्भव नहीं है। क्षपकश्रेणिमें मनुष्यायु अवश्य है, परन्तु उसका अनुभाग उत्कृष्ट नहीं होता, क्योंकि, असंयत सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टिके द्वारा बांधी गई मनुष्यायु चूंकि देवायुकी अपेक्षा अप्रशस्त है, अतएव उसके उत्कृष्ट होनेका विरोध है। इसी कारण वह अनन्तगुणी हीन है।

उसके नाम व गोत्र कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?॥ २५७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट होती है ॥ २५८ ॥

कारण कि सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा तीनों ही कर्मोंका उत्कृष्ट बन्ध पाया जाता है।

इसी प्रकार नाम और गोत्र कर्मकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २५९ ॥

जिस प्रकारसे वेदनीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे नाम व गोत्र कर्मके भी संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट? ॥ २६० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनंतगुणहीन होती है ॥ २६१ ॥

कुदो? अप्पमत्तसंजदप्पहुडि उवरिमसंजदेसु पमत्तसंजदेसु वेमाणियदेवेसु च आउअस्स उक्कस्सभावुवलंभादो। ण च एदेसु घादिकम्माणमुक्कस्साणुभागो अत्थि, विसोहीए घादं पाविदूण अणंतगुणहीणत्तमुवगयाणमुक्कस्सत्तविरोहादो। ण च तिण्णमघादिकम्माणमुक्कस्सओ अणुभागो अत्थि,तस्स खीणकसायादिसु चेव संभवादो। ण च खीणकसायादिसु आउअस्स उक्कस्सभावो अत्थि, खवगसेडिम्मि देवाउअस्स संताभावादो*। तम्हा अणंतगुणहीणत्त सिद्धं। एवमुक्कस्सओ परत्थाणवेयणासण्णियासो समत्तो।

जो सो थप्पो जहण्णओ परत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ २६२ ॥

जहण्णवेयणसण्णियासो चउव्विहो चेव, दव्वट्ठियणयावलंबणादो। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे पण्णारसविहो होदि। सो जाणिय वत्तव्वो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २६३ ॥

सुगमं।

कारण यह कि अप्रमत्तसंयतसे लेकर आगेके संयत जीवोंमें, प्रमत्तसंयतोंमें और वैमानिक देवोंमें आयुका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है।परन्तु इन जीवोंमें घाति कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभाग नहीं है,क्योंकि,विशुद्धि द्वारा घातको प्राप्त होकर अनन्तगुणी हीनताको प्राप्त हुए उनके उत्कृष्ट होनेका विरोध है। तीन अघाति कर्मोंका भी उनमें उत्कृष्ट अनुभाग सम्भव नहीं है,क्योंकि,वह क्षीणकषाय आदि जीवोंमें ही सम्भव है। परन्तु क्षीणकषाय आदि जीवोंमें आयुका उत्कृष्ट भाव सम्भव नहीं है, क्योंकि, क्षपकश्रेणिमें देवायुके सत्त्वका अभाव है। इस कारण उक्त सात कर्मोंकी भाववेदनाकी अनन्तगुणहीनता सिद्ध है।इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान वेदनासंनिकर्ष समाप्त हुआ।

जो जघन्य परस्थान वेदनासंनिकर्ष स्थगित किया गया था वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षासे चार प्रकारका है ॥ २६२ ॥

जघन्य वेदनासन्निकर्ष चार प्रकारका ही है,क्योंकि द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है।परन्तु पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर वह पन्द्रह प्रकारका है (प्रत्येक भंग ४, द्वि०सं०६, त्रि०सं०४, च०सं० १; ४ + ६ + ४ + १ = १५)। उसको जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ २६३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

* अ-का-ताप्रतिषु 'संतगाहादो' आप्रतौ 'सं (ता) भावादो' इति पाठः।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णादो विट्ठाण-पदिदा ॥ २६४ ॥

सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदस्स णाणावरणीयदव्ववेयणाए सह दंसणावरणीय-अंतराइयाणं च दव्ववेयणा जहण्णा होदि। अध अण्णहा जइ आगदो होज्ज तो अजहण्णा होदूण दुट्ठाणपदिदा। संपहि पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा ॥ २६५ ॥

णाणावरणीयस्स जहण्णदव्वे संते जदि एगो परमाणू दंसणावरणीय-अंतराइयाणं दव्वेसु अहियो होज्ज तो अणंतभागब्भहियं दव्वं होदि। एदमादिं कादूण परमाणुत्तरादिकमेण ताव अणंतभागवड्ढी गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति। तदो पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी होदूण गच्छदि जाव जहण्णदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति। उवरिमवड्ढीओ एत्थ किण्ण भण्णंति[1]? ण, खविदकम्मंसिए जदि सुट्ठु बहुगी दव्ववड्ढी होदि तो एगसमयपबद्धमेत्ता चेव होदि त्ति गुरूवएसादो।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यसे अजघन्य दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ २६४ ॥

शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर क्षीणकषायके अन्तिम समयमें स्थित हुए जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदनाके साथ दर्शनावरणीय और अन्तरायकी द्रव्यवेदना जघन्य होती है। अथवा यदि अन्य स्वरूपसे आया है तो उक्त दोनों कर्मोंकी द्रव्यवेदना अजघन्य होकर दो स्थानोंमें पतित होती है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं–

वह अजघन्य वेदना अनन्तभाग अधिक और असंख्यातभाग अधिकहोती है ॥२६५॥

ज्ञानावरणीयके द्रव्यके जघन्य होनेपर यदि एक परमाणु दर्शनावरणीय और अन्तरायके द्रव्योंमें अधिक होता है तो अनन्तभाग अधिक द्रव्य होता है। इससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे तब तक अनन्तभागवृद्धि जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र वृद्धिको प्राप्त होता है। पश्चात् इससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे जघन्य द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र वृद्धिके होने तक असंख्यातभागवृद्धि होकर जाती है।

शंका– आगेकी वृद्धियां यहां क्यों नहीं कही गई हैं ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, क्षपितकर्मांशिकके यदि बहुत अधिक द्रव्यकी वृद्धि होती है तो वह एक समयप्रबद्ध प्रमाण ही होती है, ऐसा गुरुका उपदेश है।

[1] प्रतिषु 'भण्णंति' इति पाठः।

खविदघोलमाणमस्सिदूण किमिदि ण वड्ढाविज्जदे ? ण एस दोसो, णाणावरणीयस्स जहण्णदव्वाभावेण पयदपरूवणाए विरोहप्पसंगादो ।

तस्स वेयणीय-णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ २६६ ॥

सुगमं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया ॥ २६७ ॥

सजोगिकेवलिणा पुव्वकोडिकालेण असंखेज्जगुणाए सेडीए विणासिज्जमाण-दव्वस्स अविणासादो । तस्स अहियदव्वस्स खीणकसायचरिमसमए वट्टमाणस्स को भागहारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

तस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि ॥ २६८ ॥

कुदो ? सुहुमसांपराइयचरिमसमए पुव्वं चेव विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा?॥ २६९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २७० ॥

णेरइयम्मि तेतीसागरोवमब्भंतर-असंखेज्जगुणहाणीयो गालिय दीवसिहागारेण

शंका- क्षपितघोलमान जीवका आश्रय करके वृद्धि क्यों नहीं करायी जाती है ?

समाधान- यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उसके ज्ञानावरणीयके जघन्य द्रव्यका अभाव होनेसे प्रकृत प्ररूपणाके विरुद्ध होनेका प्रसंग आता है ।

उसके वेदनीय, नाम और गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ २६६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातवें भाग अधिक होती है ॥२६७॥

कारण कि सयोगिकेवलीके द्वारा (कुछ कम) पूर्वकोटि मात्र कालमें असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे निर्जीर्ण किये जानेवाले द्रव्यका पूर्णतया विनाश नहीं हुआ है ।

शंका- क्षीणकषायके अन्तिम समयमें वर्तमान उक्त अधिक द्रव्यका भागहार क्या है?

समाधान- उसका भागहार पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है ।

उसके मोहनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २६८ ॥

कारण कि वह पहिले ही सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें नष्ट हो चुका है।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥२६९॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २७० ॥

नारकी जीवके तेतीस सागरोपम कालके भीतर असंख्यातगुणहानियोंको गलाकर दीप-

दुिददव्वमेगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागो ☆ जहण्णदव्ववेयणा ☆ । एत्थ पुण पुव्वकोडिकालब्भंतरे एगा वि गुणहाणी णत्थि, गुणहाणीए ❖ असंखेज्जभागत्तादो । तेण आउअजहण्णदव्वादो खीणकसायचरिमसमयदव्वमसंखेज्जगुणं ति सिद्धं ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ २७१ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तधा एदेसिं पि दोण्णं पयडीणं कायव्वो, विसेसाभावादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहनीय-अंतराइयाणं वेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि ॥ २७२ ॥

कुदो ? छदुमत्थावत्थाए ⁂ चेव तिस्से विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा?॥ २७३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २७४ ॥

शिखाके आकारसे जो द्रव्य स्थित है वह एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य वेदना स्वरूप है । परन्तु यहाँ पूर्वकोटिकाल के भीतर एक भी गुणहानि नहीं है, क्योंकि, वहाँ गुणहानिका असंख्यातवाँ भाग ही है । इसलिये आयुके जघन्य द्रव्यसे क्षीणकषायका अन्तिम समयसम्बन्धी द्रव्य असंख्यात-गुणा है, यह सिद्ध है ।

इसी प्रकारसे दर्शनावरणीय और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २७१॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयका सन्निकर्ष किया गया है उसी प्रकार इन दोनों कर्मोंके सन्निकर्षका कथन करना चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती॥ २७२ ॥

कारण कि उक्त कर्मोंकी वह वेदना छद्मस्थ अवस्थामें ही नष्ट हो चुकी है ।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥२७३॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २७४ ॥

☆ ताप्रतौ 'असंखेज्जभागो' इति पाठः । ❖ आप्रतौ 'जहण्णदव्वहिया' इति पाठः । ❖ अप्रतौ 'गुणहाणी अत्थि ण गुणहाणीए' इति पाठः । ⁂ मूल-ताप्रतिषु 'छदुमत्थाए', आप्रतौ 'छदुमत्थत्थाए' इति पाठः ।

एदमजोगिचरिमसमयदव्वं उक्कस्सजोगेण बद्धएगसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभाग-मेत्तं ©। कुदो णव्वदे ? जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गेण उक्कस्सएण जोगेण बंधदि त्ति वयणादो णव्वदे। दीवसिहादव्वं पुण जहण्णजोगेण बद्धएगसमय-पबद्धस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं होदि। तेण जहण्णाउअवेयणादो इमा असंखेज्जगुणा।

सार्वार्थक । अथवार्थ श्री सर्वसिद्धिसार श्री फाटाज

तस्स णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥२७५॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णादो* बिट्ठाण-पदिदा ॥ २७६ ॥

जदि सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेणागदो तो वेयणीयदव्ववेयणाए सह णामा-गोदाणं दव्ववेयणा वि जहण्णा होदि। अह णागदो* तो अजहण्णा होदूण विट्ठाणपदिदा होदि। पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि–

अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा ॥ २७७ ॥

यह अयोगकेवलीका अन्तिम समय सम्बन्धी द्रव्य उत्कृष्ट योगसे बाँधे गये एक समय-प्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र है।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– वह 'जब जब आयुको बाँधता है तब तब तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगसे बाँधता है' इस वचनसे जाना जाता है।

? / परन्तु दीपशिखा द्रव्य जघन्य योगसे बाँधे गये एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र होता है : इस कारण आयुकी जघन्य वेदनासे यह वेदना असंख्यातगुणी है।

उसके नाम और गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ २७५॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यसे अजघन्य दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ २७६ ॥

यदि शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आया है तो वेदनीयकी वेदनाके साथ नाम व गोत्रकी द्रव्यवेदना भी जघन्य होती है। परन्तु यदि उक्त स्वरूपसे नहीं आया है तो वह अजघन्य होकर दो स्थानोंमें पतित है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं-

वह अनन्तभाग अधिक भी होती है और असंख्यात भाग अधिक भी होती है ॥२७७॥

© ताप्रतौ 'संखेज्जभागमेत्तं' इति पाठः। * अ-आ-काप्रतिषु 'अजहण्णादो' ताप्रतौ 'अजहण्णा (दो)' इति पाठः। ❖ अ-आप्रत्योः 'जहण्णागदो', काप्रतौ 'जहणागदो' ताप्रतौ 'अहण्णागदो' इति पाठः।

जहण्णदव्वस्सुवरि एगपरमाणुम्मि वड्ढिदे अणंतभागवड्ढी होदि। एवं परमाणुत्तरादिकमेण ताव अणंतभागवड्ढी गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदूण तत्थेगखंडमेत्तं वड्ढिदं त्ति। तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं जहण्णदव्वस्सुवरि वड्ढिदं ति।

एवं-णामा-गोदाणं ॥ २७८ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कओ तहा णामा-गोदाणं पि सण्णियासो कायव्वो, विसेसाभावादो।

जस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २७९ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया ॥ २८० ॥

कुदो? उवरि विणासिज्जमाणदव्वेण अहियत्तादो। तस्स अहियदव्वस्स को पडिभागो? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥२८१॥

जघन्य द्रव्यवेदनाके ऊपर एक परमाणुकी वृद्धि होनेपर अनन्तभागवृद्धि होती है। इस प्रकार एक एक परमाणु आदिके क्रमसे तब तक अनन्तभागवृद्धि जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र वृद्धि होती है। तत्पश्चात् उससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि तब तक जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र वृद्धि जघन्य द्रव्यके ऊपर होती है।

इसी प्रकार नाम और गोत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २७८ ॥

जिस प्रकार वेदनीयका सन्निकर्ष किया गया है उसी प्रकार नाम और गोत्रके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिसके मोहनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुको छोड छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २७९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातवें भाग अधिक होती है ॥२८०॥

कारण कि वह आगे नष्ट किये जानेवाले द्रव्यसे अधिक है। उस अधिक द्रव्यका प्रतिभाग क्या है? उसका प्रतिभाग पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥२८१॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २८२ ॥

एदं पि सुगमं, बहुसो अवगमिदत्थत्तादो ।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २८३ ॥

प्रकाशक : आचार्य श्री सूरिसागर जी महाराज

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ २८४ ॥

णेरइयो जेण पंचिंदियो सण्णिपज्जत्तो तेण एइंदियजोगादो एदस्स जोगो असंखेज्जगुणो । तेणेव कारणेण एइंदियएगसमयपबद्धदव्वादो एदस्स (1) एगसमयपबद्धदव्वमसंखेज्जगुणं।तेण दीवसिहापढमसमयदव्वेण सत्तण्णं पि कम्माणं दिवड्ढगुणहाणिपमाण(2)-पंचिंदियसमयपबद्धमेत्तेण होदव्वं । तदो सग-सगजहण्णदव्वं पेक्खिदूण एत्थतणदव्वेण असंखेज्जगुणेणेव होदव्वं । तेण चउट्ठाणपदिदा त्ति ण घडदे? एत्थ परिहारो वुच्चदे । तं जहा- खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विवरीदं गंतूण (3) जहण्णजोगेण जहण्णबंधगद्धाए च णिरयाउअं बंधिय सत्तमपुढविणेरइएसु उववज्जिय छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २८२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि, इसके अर्थका परिज्ञान बहुत बार कराया जा चुका है।

जिस जीवके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ २८३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ २८४ ॥

शंका– चूंकि नारकी जीव पंचेन्द्रिय, संज्ञी व पर्याप्त है, अतएव एकेन्द्रिय जीवके योगकी अपेक्षा इसका योग असंख्यातगुणा है । और इसी कारणसे एकेन्द्रिय जीवके एक समयप्रबद्धके द्रव्यकी अपेक्षा इसके एक समयप्रबद्धका द्रव्य असंख्यातगुणा है । इसलिये दीपशिखाका प्रथम समयका द्रव्य 'सातों ही कर्मोंका द्रव्य डेढ गुणहानिमात्र पंचेन्द्रियके समयप्रबद्ध' प्रमाण होना चाहिये । अतएव अपने अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा यहांका द्रव्य असंख्यातगुणा ही होगा । ऐसी अवस्थामें सूत्रमें 'चतुःस्थान पतित बतलाना घटित नहीं होता ?'

समाधान– यहां इस शंकाका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है- क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर विपरीत स्वरूपको प्राप्त हो जघन्य योगसे और जघन्य बन्धककालसे नारकायुको बांधकर सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हो छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको

(1) आप्रतौ 'एगसमयपबद्धत्तादो दव्वादो एगस्स' इति पाठः (2) ताप्रतौ 'पमाण' इति पाठः (3) ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमेतत् ।

त्तयदो होदूण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण दिवड्ढमेत्तएइंदियसमयपबद्धे ओकड्डुक्कड्डुणभागहारेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तदव्वमोकड्डदि। एवमोकड्डिदूण उदयावलियबाहिरट्ठिदीए वट्टमाणकाले बज्झमाणएगसमयपबद्धस्स पढमणिसेगादो असंखेज्जगुणं णिसिंचदि। तत्तो प्पहुडि उवरि विसेसहीणं णिसिंचदि जाव ओकड्डिदसमयपबद्धा णिट्ठिदा त्ति। एवं समयं पडि ओकड्डिदूण णिसेगरचणाए कीरमाणाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण कालेण उदयगदगोवुच्छा असंखेज्जदिभागहीणएगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ता होदि, सव्वत्थ भुजगारकालपमाणस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो। तेण समयं पडि वयादो आयो ॐ असंखेज्जभागब्भहियो। एदेण कमेण तेत्तीससागरोवमेसु संचयं करिय दीवसिहापढमसमए ट्ठिदस्स सत्तकम्मदव्वं सगजहण्णदव्वादो असंखेज्जदिभागब्भहियं होदि। ण च ओकड्डिददव्वस्स पढमणिसेयो बज्झमाणसमयपबद्धस्स पढमणिसेगेण सरिसो, तत्तो असंखेज्जगुणस्सेव संभवुवलंभादो। तं जहा—ओकड्डणाए णिसिंचमाणदव्वस्स पढमणिसेगो एगमेइंदियसमयपबद्धमोकड्डुक्कड्डुणभागहारेण खंडिदमेत्तो होदि। एसो वि [illegible]बद्धपढमणिसेगादो असंखेज्जगुणो त्ति। तेण एगगुणहाणीए असंखेज्जदिभागे चेव अदिक्कंते उदयगदगोपुच्छा एगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ता होदि। [illegible] मागदसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभागेण उदयगदगोवुच्छा

ग्रहण करके डेढ़ गुणहानि प्रमाण एकेन्द्रियके समयप्रबद्धोंको अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्यका अपकर्षण करता है। इस प्रकार अपकर्षित करके उदयावलिके बाहिर स्थितिमें वर्तमानकालमें बाँधे जानेवाले एक समयप्रबद्धके प्रथम निषेकसे असंख्यातगुणा देता है। उससे लेकर आगे अपकर्षित समयप्रबद्धोंके समाप्त होने तक विशेषहीन देता है। इस प्रकार प्रत्येक समयमें अपकर्षित कर निषेकरचना करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें कालमें उदयप्राप्त गोपुच्छ असंख्यातवें भागसे हीन एक पचेन्द्रियके समयप्रबद्धके बराबर होती है, क्योंकि, सर्वत्र भुजाकारबन्धके कालका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भाग पाया जाता है। इसलिये प्रत्येक समयमें व्ययकी अपेक्षा आय असंख्यातवें भागसे अधिक है। इस क्रमसे तेतीस सागरोपमोंमें संचय करके दीपशिखाके प्रथम समयमें स्थित जीवके सात कर्मोंका द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है। अपकर्षित द्रव्यका प्रथम निषेक बाँधे जानेवाले समयप्रबद्धके प्रथम निषेकके सदृश भी नहीं होता, क्योंकि, उसके उससे असंख्यातगुण होनेकी ही सम्भावना पायी जाती है। वह इस प्रकारसे— अपकर्षण द्वारा दिये जानेवाले द्रव्यका प्रथम निषेक एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उतना होता है। यह भी बाँधे गये प्रथम निषेकसे असंख्यातगुणा है। इस कारण एक गुणहानिके असंख्यातवें भागके ही बीतनेपर उदयगत गोपुच्छा पचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धके बराबर होती है। यदि उदयगत गोपुच्छा अपकर्षण-उत्कर्षण द्वारा पचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भागसे हीन होकर सर्वत्र नष्ट होती है तो दीपशिखा द्रव्य अपने

ॐ ताप्रतौ 'उक्कड्डुक्कड्डणा' इति पाठः। ॐ अ-आ-काप्रतिषु 'आदि', ताप्रतौ 'आदी' इति पाठः। 'त' प्रतिषु 'बंध' इति पाठः।

ओकड्डुक्कड्डणवसेण ऊणा होदूण सव्वत्थ गलदि तो दीवसिहादव्वं सगजहण्णदव्वादो संखेज्जभागब्भहियं होदि। अध एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभागमेत्तमुदयगदगोवुच्छपमाणं सव्वत्थ जदि होदि तो सगजहण्णदव्वादो दीवसिहादव्वं संखेज्जगुणं होदि। अध एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागमेत्तमोकड्डुक्कड्डणवसेण सव्वत्थ उदयगदगोवुच्छदव्वं होदि तो सगजहण्णदव्वादो असंखेज्जगुणं होदि। ण च सम्मादिट्ठिम्मि चेव एसो कमो, विसोहिबहुलेसु मिच्छाइट्ठीसु वि एवं चेव संजादे विरोहाभावादो। ओकड्डुणाए एवंविहा णिज्जरा होदि त्ति कधं णव्वदे? चउट्ठाणपदिदसुत्तणिद्देसस्स अण्णहा अणुववत्तीदो। भुजगारप्पदरद्धासु ॐ सुक्कंधारपक्खा इव सव्वजीवेसु वट्टमाणासु जेसिं जीवाणमप्पदरद्धादो भुजगारद्धा कमेण असंखेज्जभागब्भहिया संखेज्जभागब्भहिया संखेज्जगुणब्भहिया असंखेज्जगुणब्भहिया तेसिं दव्वं असंखेज्जभागब्भहियं संखेज्जभागब्भहियं संखेज्जगुणब्भहियं असंखेज्जगुणब्भहियं च कमेण होदि त्ति वुत्तं होदि।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २८५ ॥

सुगमं।

जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातवें भागसे अधिक होता है। यदि उदयगत गोपुच्छाका प्रमाण सर्वत्र पंचेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र होता है तो दीपशिखाका द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातगुणा होता है। यदि उदयगत गोपुच्छाका द्रव्य सर्वत्र अपकर्षण-उत्कर्षणके वश पंचेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र होता है तो वह अपने जघन्य द्रव्यसे असंख्यातगुणा होता है। यह क्रम केवल सम्यग्दृष्टि जीवके ही नहीं होता है, क्योंकि, अतिशय विशुद्धि युक्त मिथ्यादृष्टियोंमें भी ऐसा होनेमें कोई विरोध नहीं है।

शंका- अपकर्षणा द्वारा इस प्रकारकी निर्जरा होती है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान- चूंकि इसके बिना चतुःस्थान पतित सूत्रका निर्देश घटित नहीं होता, अतः इसीसे उक्त निर्जरा परिज्ञात होती है।

सब जीवोंमें शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्षके समान भुजाकारकाल और अल्पतरकालके रहनेपर जिन जीवोंके अल्पतरकालकी अपेक्षा भुजाकारकाल क्रमसे असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है उनका द्रव्य क्रमसे असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है, यह उसका अभिप्राय है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ २८५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

ॐ अ-आ-काप्रतिषु 'भुजगारप्पदरद्धासु', ताप्रतौ 'भुजगारप्पदरद्धा (सु)' इति पाठः।

जहण्णा ॥ २८६ ॥

जहण्णोगाहणाए ट्ठिदणाणावरणीयखंधेहिंतो जीवदुवारेण सत्तण्णं कम्मक्खंधाणं भेदाभावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ २८७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो परूविदो तहा सेससत्तण्हं कम्माणं परूवेदव्वो, अविसेसादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २८८ ॥

सुगमं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जहण्णा ॥ २८९ ॥

णाणावरणीयजहण्णदव्वक्खंधाणं च एदासिं जहण्णदव्वक्खंधाणं पि एगसमयट्ठिदिदंसणादो ।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २९० ॥

सुगमं ।

वह जघन्य होती है ॥ २८६ ॥

कारण यह कि जघन्य अवगाहना में स्थित ज्ञानावरणीयके स्कन्धोंसे जीव द्वारा सात कर्मोंके स्कन्धोंमें कोई भेद नहीं है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २८७ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके संनिकर्षकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ २८८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ २८९ ॥

कारण यह कि ज्ञानावरणीयके जघन्य द्रव्य के स्कन्धोंकी तथा इन दो कर्मोंके जघन्य द्रव्यके स्कन्धों की भी एक समय स्थिति देखी जाती है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ २९० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २९१ ॥

कुदो? तिण्णमघादिकम्माणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिसंतकम्मसेसत्तादो, आउअस्स अतोमुहुत्तप्पहुडिट्ठिदिसंतकम्मसेसत्तादो ।

तस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ॥ २९२ ॥

सुहुमसांपराइयचरिमसमये णट्ठाए खीणकसायचरिमसमए संताभावादो ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ २९३ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तहा एदेसिं दोण्णं कम्माणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाण वेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ॥ २९४ ॥

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो? छदुमत्थद्धाए विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २९५ ॥

सुगमं ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २९१ ॥

कारण कि उसके तीन अघाति कर्मोंका स्थितिसत्त्व पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र तथा आयुका स्थितिसत्त्व अन्तर्मुहूर्त आदि मात्र शेष रहता है ।

उसके मोहनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २९२ ॥

कारण कि वह सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें नष्ट हो चुकी है, अतः उसका क्षीणकषायके अन्तिम समयमें सत्त्व सम्भव नहीं है ।

इसी प्रकार दर्शनावरण और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २९३ ॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन दो कर्मोंका संनिकर्ष करना चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २९४ ॥

कारण कि उनकी वेदना छद्मस्थ कालमें नष्ट हो चुकी है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ २९५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जहण्णा ॥ २९६ ॥

अजोगिचरिमसमए तिण्णं वेयणाणमेगट्ठिदिदंसणादो ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ २९७ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कओ तहा एदेसिं पि तिण्णं कम्माणं कायव्वो ।

जस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २९८ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया॥ २९९ ॥

कुदो ? एगसमयं पेक्खिदूण घादिकम्माणं अंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीए अघादीणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए च अंतोमुहुत्तप्पहुडि ट्ठिदिसंतस्स च असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०० ॥

सुगमं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वह जघन्य होती है ॥ २९६ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें उक्त तीन वेदनाओंकी एक (समय) स्थिति देखी जाती है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २९७॥

जिस प्रकारसे वेदनीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन तीनों भी कर्मोंका करना चाहिये ।

जिस जीवके मोहनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ २९८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २९९ ॥

कारण कि एक समयकी अपेक्षा घाति कर्मोंकी अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति और अघाति कर्मोंकी पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थिति ये दोनों स्थितियाँ तथा अन्तर्मुहूर्त आदि रूप स्थितिसत्त्व भी असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीय की वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ ३०० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जहण्णा ॥ ३०१ ॥

कुदो ? खवगपरिणामेहि सव्वुक्कस्सं घादं पाविदूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदत्तादो ।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०२ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३०३ ॥

कुदो ? परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धअपज्जत्तसंजुत्ततिरिक्खाउआणुभागं, भवसिद्धियचरिमसमयअसादावेयणीयजहण्णाणुभागं, सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हदसमुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धणामजहण्णाणुभागं, उच्चागोदमुव्वेल्लिय बादरतेउ-वाउजीवेण सव्वाहि पज्जतीहि पज्जत्तयदेण सव्वविसुद्धेण बद्धणीचागोदजहण्णाणुभागं च पेक्खिदूण एदस्स खीणकसायस्स चरिमसमए वट्टमाणस्स एदेसिं कम्माणं अणुभागस्स अणंतगुणत्तं होदि, वेयणीय-णामा-गोदाणुभागाणं पसत्थभावेण उक्कस्सत्तुवलंभादो । मणुसाउअभावस्स घादवज्जियस्स तिरिक्खाउआदो पसत्थस्स जहण्णादो अणंतगुणत्तं होदि, । कुदो णव्वदे ? चउसट्ठिवदियअप्पाबहुगवयणादो ।

वह जघन्य होती है ॥ ३०१ ॥

कारण कि वह क्षपक परिणामोंके द्वारा सर्वोत्कृष्ट घातको प्राप्त होकर क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें स्थित है ।

उसके वेदनीय, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?॥ ३०२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

यह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३०३ ॥

इसका कारण यह है कि परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा बाँधे गये अपर्याप्त सहित तिर्यंच आयुके अनुभागकी अपेक्षा, भव्यसिद्धिक अवस्थाके अन्तिम समयमें असाता वेदनीयके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा, हतसमुत्पत्तिककर्मा सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके द्वारा परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा बाँधे गये नाम कर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा, तथा उच्च गोत्रकी उद्वेलना करके सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए सर्व विशुद्ध बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवके द्वारा बाँधे गये नीच गोत्रके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा क्षीणकषायके अन्तिम समयमें वर्तमान इस जीवके इन कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा होता है; क्योंकि प्रशस्त होनेके कारण वेदनीय, नाम और गोत्रके अनुभागमें उत्कृष्टता पायी जाती है । तिर्यंच आयुकी अपेक्षा प्रशस्त व घातसे रहित मनुष्यायुका अनुभाग जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होता है ।

शंका– यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– वह चौंसठ पद रूप अल्पबहुत्वके वचनसे जाना जाता है ।

तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ॥ ३०४ ॥

तिस्से तत्थ पदेससत्ताभावादो ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ ३०५ ॥

जहा णाणावरणीयसण्णियासो कदो तहा एदासिं पि पयडीणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ॥३०६॥

कुदो? अजोगिचरिमसमए एदेसिं पदेससत्ताभावादो ।

तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥३०७॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३०८ ॥

कुदो? जसकित्ति-उच्चागोदाणं चरिमसमयसुहुमसांपराइएण बद्धउक्कस्साणुभागस्स सग-सगजहण्णाणुभागादो अणंतगुणस्स अजोगिचरिमसमए उवलंभादो, तिरिक्खअपज्जत्तसंजुत्तआउअभावादो वि मणुसाउअभावस्स पसत्थत्तणेण घादाभावेण च अणंतगुणत्तुवलंभादो । मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उसके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ ३०४ ॥

कारण कि वहाँ उसके प्रदेशोंके सत्त्वका अभाव है ।

इसी प्रकारसे दर्शनावरणीय और अन्तरायकी अपेक्षा प्ररूपणा करनी चाहिये॥३०५॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीय कर्मका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन दो प्रकृतियोंके भी संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ ३०६ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें इन कर्मोंके प्रदेशोंके सत्त्वका अभाव है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ ३०७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३०८ ॥

कारण यह कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा बाँधा गया उत्कृष्ट अनुभाग अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें अपने अपने जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है, तथा अपर्याप्त सहित तिर्यञ्चायुके अनुभागकी अपेक्षा प्रशस्त व घातसे रहित होनेके कारण मनुष्यायुका भी अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

ह प्रतिषु 'पदेसत्ता भावादो' इति पाठः । द ब-भा-काप्रतिषु 'पदेसत्तामावादो' इति पाठः ।

जस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३१० ॥

कुदो? तिण्णं घादिकम्माणं खीणकसाएण घादिज्जमाणअणुभागस्स एत्थ संतसरूवेण उवलंभादो, वेयणीय-णामा-गोदाणं साद-जसगित्ति-उच्चागोदाणुभागस्स बंधेण उक्कस्सभावोवलंभादो, मणुसाउअभावस्स वि पसत्थत्तणेण अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणंणामवज्जाणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३११ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३१२ ॥

कुदो ? वेयणीय-घादिकम्माणं खवगपरिणामेहि एत्थ घादाभावादो मणुस्सेसु पंचिंदियतिरिक्खेसु च मज्झिमपरिणामेण बद्धतिरिक्खअपज्जत्त-(संजुत्त-) आउअजहण्णाणुभावेसु अणुव्वेल्लिदउच्चागोदेसु सव्वविसुद्धबादरतेउवाउपज्जत्तएसु च अघादिदणीचागोदाणुभागेसु सगजहण्णादो गोदाणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधासागर जी महाराज

जिस जीवके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ ३०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३१० ॥

कारण एक तो तीन घाति कर्मोंका क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीवके द्वारा घाता जानेवाला अनुभाग यहाँ सत्त्व रूपसे पाया जाता है; दूसरे वेदनीय कर्मकी साता वेदनीय प्रकृतिके, नामकी यशःकीर्ति प्रकृतिके और गोत्रकी उच्चगोत्र प्रकृतिके अनुभागमें यहाँ बन्धसे उत्कृष्टता पायी जाती है; तीसरे मनुष्यायुका अनुभाग भी प्रशस्त होनेके कारण यहाँ अनन्तगुणा पाया जाता है।

जिस जीवके आयुकर्म की वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके नामकर्मको छोडकर शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य॥३११॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३१२ ॥

कारण कि क्षपक परिणामों के द्वारा यहाँ घात सम्भव न होनेसे वेदनीय और घातिया कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है। तथा मध्यम परिणामके द्वारा जिन्होंने तिर्यंच अपर्याप्त सम्बन्धी आयुके जघन्य अनुभागको बाधा है ऐसे मनुष्यों एवं पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें और उच्च गोत्रकी उद्वेलना न करनेवाले तथा नीच गोत्रके अनुभागको न घातनेवाले सर्वविशुद्ध बादर तेजकायिक एवं वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें गोत्रका अनुभाग अपने जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है ।

४३ अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णा' इति पाठः ।

तस्स णामवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१३ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ॥ ३१४ ॥

जहण्णमाउअभावं बंधिय सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएसु उप्पज्जिय हदसमुप्पत्तियं काऊण जदि णामस्स जहण्णाणुभागो कदो तो आउअभावेण सह णामभावो जहण्णो होदि । अण्णहा अजहण्णो होदूण छट्ठाणपदिदो जायदे ।

जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३१६ ॥

सुगमं ।

तस्स आउअवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१७ ॥

सुगमं ।

उसके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ ३१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ॥ ३१४ ॥

आयुके जघन्य अनुभागको बाँधकर सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न होकर हतसमुत्पत्ति करके यदि नामकर्मका अनुभाग जघन्य कर लिया है तो आयुके अनुभागके साथ नामकर्मका अनुभाग जघन्य होता है। इससे विपरीत अवस्थामें वह अजघन्य होकर छह स्थान पतित होता है ।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुको छोडकर शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ ३१५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३१६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके आयुकी वेदना क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ ३१७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ॥ ३१८ ॥

सुगमं ।

जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३२० ॥

कुदो? सव्वविसुद्धबादरतेउ-वाउकाइयपज्जत्तएसु उव्वेल्लिदउच्चागोदेसु णीचागोदस्स कयजहण्णभावेसु सेससव्वकम्माणमणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

एवं जहण्णए परत्थाणवेयणासण्णियासे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

सण्णियासविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ॥ ३१८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य? ॥ ३१९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३२० ॥

इसका कारण यह है कि जिन्होंने उच्च गोत्रकी उद्वेलना की है तथा नीच गोत्रके अनुभागको जघन्य किया है ऐसे सर्वविशुद्ध बादर तेजकायिक एवं वायुकायिक जीवोंमें शेष सब कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

इस प्रकार जघन्य परस्थान वेदनाके संनिकर्षके समाप्त होनेपर

वेदनासंनिकर्षविधान नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

वेयणापरिमाणविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणापरिमाणविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं। किमट्ठमेदं वुच्चदे? ण, अण्णहा परूवणाए णिप्फलत्तप्पसंगादो। ण ताव एदेण पयडिवेयणापरिमाणं वुच्चदे, णाणावरणादी अट्ठ चेव पयडीयो होंति त्ति पुव्वं परूविदत्तादो। ण ट्ठिदिवेयणाए पमाणपरूवणा एदेण कीरदे, कालविहाणे सप्पबंधेण परूविदट्ठिदिपमाणत्तादो। ण भाववेयणाए पमाणपरूवणा एदेण कीरदे, भावविहाणे परूविदस्स परूवणाए फलाभावादो। ण पदेसपमाणपरूवणा एदेण कीरदे, अणुक्कस्सदव्वविहाणे परूविदस्स पुणो परूवणाए फलाभावादो। ण च खेत्तवेयणाए पमाणपरूवणा एदेण कीरदे, खेत्तविहाणे परूविदत्तादो। अणहिगयपमेयाहिगमो* एदम्हादो णत्थि त्ति णाढवेदव्वमेदमणुयोगद्दारं? एत्थ परिहारो वुच्चदे-पुव्वं दव्वट्ठियणयमस्सिदूण अट्ठ चेव पयडीयो होंति त्ति वुत्तं। तासिमट्ठण्णं चेव पयडीणं दव्व-खेत्तकाल-भावपमाणादिपरूवणा च कदा। संपहि पज्जवट्ठियणयमस्सिदूण पयडि-

---

अब वेदनापरिमाणविधान अनुयोगद्वारका अधिकार है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है।

शंका- इसे किसलिये कहा जा रहा है ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, इसके बिना प्ररूपणाके निष्फल होनेका प्रसंग आता है।

शंका- यह अधिकार प्रकृतिवेदनाके प्रमाण को तो बतलाता नहीं है, क्योंकि, ज्ञानावरण आदि आठ ही प्रकृतियाँ हैं, यह पहिले ही प्ररूपणा की जा चुकी है। स्थितिवेदनाके प्रमाणकी प्ररूपणा भी नहीं करता है, क्योंकि, कालविधानमें विस्तारपूर्वक स्थितिका प्रमाण बतलाया जा चुका है। यह भाववेदनाके प्रमाणकी भी प्ररूपणा नहीं करता, क्योंकि, भावविधानमें प्ररूपित उसकी फिरसे प्ररूपणा करना निष्फल होगा। प्रदेशप्रमाणकी प्ररूपणा भी इसके द्वारा नहीं की जाती है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट द्रव्य विधानमें उसकी प्ररूपणा की जा चुकी है; अतएव उसकी यहाँ फिरसे प्ररूपणा करनेका कोई प्रयोजन नहीं है। क्षेत्रवेदनाके प्रमाणकी प्ररूपणा भी इसके द्वारा नहीं की जाती है, क्योंकि, उसकी प्ररूपणा क्षेत्रविधानमें की जा चुकी है। इस प्रकार चूंकि प्रकृति अधिकारसे अनधिगत पदार्थका अधिगम होता नहीं है, अतएव इस अधिकारको प्रारम्भ नहीं करना चाहिये ?

समाधान- इस शंकाका परिहार कहते हैं-पहले द्रव्यार्थिक नयका आश्रय करके आठ ही प्रकृतियाँ होती हैं, ऐसा कहा गया है, तथा उन आठों प्रकृतियोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव आदिके प्रमाणकी भी प्ररूपणा की गई है। अब यहाँ पर्यायार्थिक नयका आश्रय करके प्रकृतियोंके

---

* मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ काप्रतिषु 'अणहिगमेयमेयाहिगमो', ताप्रतौ 'अणहिगमे पमेयाहिगमो' इति पाठः। ◎ अ-आ-काप्रतिषु 'णादवेदव्व-' इति पाठः।

पमाणपरूवणट्ठमेदमणुयोगद्दारमागदं। पज्जवट्ठियणयमवलंबिदूण परूविज्जमाणपयडीणं दव्व-खेत्तकाल-भावादिपरूवणा किण्ण कीरदे? ण, ताए परूविज्जमाणाए पुव्विल्लपरूवणादो भेदाभावेण तदणुत्तीदो।

तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि-पगदिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्ति ॥ २ ॥

[पयडी सीलं सहावो इच्चेयट्ठो।] अट्ठो पयोजणं तस्स भावो अट्ठदा। पयडीए अट्ठदा पयडिअट्ठदा[1]। सा एगो अहियारो। समये प्रबध्यत इति समयप्रबद्धः। अर्ध्यते परिच्छिद्यते इत्यर्थः। स चासावर्थश्च समयप्रबद्धार्थः। तस्य भावः समयप्रबद्धार्थता। एसो विदियो अहियारो। क्षेत्रं प्रत्याश्रयो यस्याः सा क्षेत्रप्रत्याश्रया अधिकृतिः। एवं तिविहा वेयणापरिमाणपरूवणा होदि। पयडिभएण कम्मभेदपरूवणा एगो अहियारो। समयपबद्धभेदेण पयडिभेदपरूवओ विदियो अहियारो। खेत्तभेएण पयडिभेदपरूवओ तदियो अहियारो त्ति वुत्तं होदि।

पगदिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ३ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये यह अनुयोगद्वार प्राप्त हुआ है।

शंका- पर्यायार्थिक नयका आश्रय करके कही जानेवाली प्रकृतियोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव आदिकी प्ररूपणा क्यों नहीं की जा रही है?

समाधान- नहीं, क्योंकि, उक्त प्ररूपणाके करनेमें पूर्वोक्त प्ररूपणासे कोई विशेषता नहीं रहती। अतएव वह यहाँ नहीं की गई है।

उसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं-प्रकृत्यर्थता समय प्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास ॥ २ ॥

[प्रकृति, शील और स्वभाव ये समानार्थक शब्द हैं।] अर्थ उसका वाच्यार्थ प्रयोजन है और उसका भाव अर्थता है। प्रकृतिकी अर्थता प्रकृत्यर्थता, यह षष्ठी तत्पुरुष समास है। वह प्रथम अधिकार है। एक समयमें जो बाँधा जाता है वह समयप्रबद्ध है। जो अर्यते अर्थात् निश्चय किया जाता है वह अर्थ है। समयप्रबद्ध रूप अर्थ समयप्रबद्धार्थ इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है; समयप्रबद्धार्थके भावको समयप्रबद्धार्थता कहा गया है। यह द्वितीय अधिकार है। क्षेत्र है प्रत्याश्रय जिसका वह क्षेत्रप्रत्याश्रय अधिकार है। इस प्रकार वेदना-परिमाणकी प्ररूपणा तीन प्रकार की है। प्रकृतिभेदसे कर्मभेदका प्ररूपक यह एक अधिकार, समयप्रबद्धोंके भेदसे प्रकृतिभेदका प्ररूपक दूसरा अधिकार और क्षेत्रके भेदसे प्रकृतिभेदका प्ररूपक तीसरा अधिकार है, यह उसका अभिप्राय है।

प्रकृति-अर्थता अधिकारकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ ३ ॥

[1] 'पयडीए अट्ठदा पयडिअट्ठदा' इत्येतावानयं पाठस्ताडपत्रेषु नोपलभ्यते।

एवं पुच्छासुत्तं तिविहं संखेज्जं णवविहमसंखेज्जं अणंतं च अस्सिदूण वक्खाणेयव्वं।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स असंखेज्जलोगपयडीओ ॥४॥

णाणावरणीयस्स दंसणावरणीयस्स च कम्मस्स पयडीयो सहावा सत्तीयो असंखेज्जलोगमेत्ता। कुदो एत्तियाओ होंति त्ति णव्वदे? आवरणिज्जणाण-दंसणाणमसंखेज्जलोगमेत्तभेदुवलंभादो। तं जहा—सुहुमणिगोदस्स जं जहण्णलद्धिअक्खरं तमेगं णाणं ❋। तण्णिरावरणं, अक्खरस्स अणंतभागो णिच्चुग्घाडियओ ❋ इदि वयणादो। जीवाभावप्पसंगादो वा। पुणो लद्धिअक्खरे सव्वजीवेहि खंडिदे लद्धे तत्थेव पक्खित्ते बिदियं णाणं होदि। पुणो बिदियणाणे सव्वजीवेहि खंडिदे लद्धे तत्थेव पक्खित्ते तदियं णाणं होदि। एवं छवड्ढिकमेण णेयव्वं जाव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि गंतूण अक्खरणाणं समुप्पण्णे त्ति। अक्खरणाणादो उवरि एगेगक्खरुत्तरवड्ढीए गच्छमाणणाणाणं अक्खरसमासो त्ति सण्णा। एत्थ अक्खरणाणादो उवरि छव्विहा वड्ढी णत्थि, दुगुण-

---

इस सूत्रका व्याख्यान तीन प्रकारके संख्यात और नौ प्रकारके असंख्यात तथा नौ प्रकारके अनन्तका आश्रय करके करना चाहिये।

ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी असंख्यात प्रकृतियाँ हैं ॥ ४ ॥

ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ अर्थात् स्वभाव या शक्तियाँ असंख्यात लोक प्रमाण हैं।

शंका— उनकी प्रकृतियाँ इतनी हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान— चूंकि आवरणके योग्य ज्ञान व दर्शनके असंख्यात लोक मात्र भेद पाये जाते हैं अतएव उनके आवारक उक्त कर्मोंकी प्रकृतियाँ भी उतनी ही होनी चाहिये। यथा—सूक्ष्म निगोद जीवका जो जघन्य लब्ध्यक्षर रूप एक ज्ञान है वह निरावरण है, क्योंकि, अक्षरके अनन्तवें भाग मात्र ज्ञान सदा प्रगट रहता है, ऐसा आगमवचन है। अथवा, [ज्ञानके अभावमें चूंकि जीवके अभावका भी प्रसंग आता है, अतएव अक्षरके अनन्तवें भाग मात्र ज्ञान सदा प्रगट रहता है, यह स्वीकार करना चाहिये।]

अब लब्ध्यक्षरको सब जीवोंसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उसे उसीमें मिलानेपर द्वितीय ज्ञान होता है। फिर द्वितीय ज्ञानको सब जीवोंसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उसको उसी में मिलानेपर तीसरा ज्ञान होता है। इस प्रकार छह वृद्धियोंके क्रमसे असंख्यात लोक मात्र छह स्थान जाकर अक्षरज्ञानके पूर्ण होने तक ले जाना चाहिये। अक्षरज्ञानके आगे उत्तरोत्तर एक एक अक्षरकी वृद्धिसे जानेवाले ज्ञानोंकी अक्षरसमास संज्ञा है। यहाँ अक्षरज्ञानसे आगे छह वृद्धियाँ नहीं हैं, किन्तु दुगुणे तिगुणे इत्यादि क्रमसे अक्षरवृद्धि ही होती है; ऐसा कितने ही

❋ अ-आ-काप्रतिषु 'णाणावरणीय' इति पाठः। ❋ सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि। फासिंदियमदिपुव्वं सुदणाणं लद्धिअक्खरयं॥ गो. जी. ३२१.। ❋ अ-आ-काप्रतिषु 'णिच्चुग्घाडियओ' इति पाठः। ❋ सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि। हवदि हु सव्वजहण्णं णिच्चुग्घाडं णिरावरणं॥ गो. जी. ३१९.।

तिगुणादिकमेण अक्खरवड्ढी चेव होदि त्ति के वि आइरिया भणंति। के वि पुण अक्खरणाणप्पहुडि उवरि सव्वत्थ खओवसमस्स छव्विहा वड्ढी होदि त्ति भणंति। एवं दोहि उवदेसेहि पद-पदसमास-संघाद-संघादसमास-पडिवत्ति-पडिवत्तिसमास-अणुयोग-अणुयोगसमास-पाहुडपाहुड-पाहुडपाहुडसमास-पाहुड-पाहुडसमास-वत्थु-वत्थुसमास-पुव्व-पुव्वसमासणाणाणं परूवणा कायव्वा। एवमसंखेज्जलोगमेत्ताणि सुदणाणाणि। मदिणाणाणि वि एत्तियाणि चेव, सुदणाणस्स मदिणाणपुरंगमत्तादो कज्जभेदेण कारणभेदुवलंभादो वा। ओहिमणपज्जवणाणाणं जहा मंगलदंडए भेदपरूवणा कदा तहा कायव्वा। केवलणाणमेयविधं, कम्मक्खएण उप्पज्जमाणत्तादो। जत्तिया णाणवियप्पा तत्तियाओ चेव कम्मस्स आवरणसत्तीयो। कत्तो एदं णव्वदे? अण्णहा असंखेज्जलोगमेत्तणाणुववत्तीदो। एवं दंसणस्स वि परूवणा कायव्वा, सव्वणाणाणं दंसणपुरंगमत्तादो। जत्तियाणि दंसणाणि तत्तियाओ चेव दंसणावरणीयस्स आवरणसत्तीओ। एवं णाणावरणीय-दंसणावरणीयाणमसंखेज्जलोगमेत्तपयडीयो त्ति सिद्धं

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवडियाओ पयडीओ ॥ ५ ॥

एत्थ पयडीयो त्ति वुत्ते कम्माणं गहणं, सहावभेदेण सहावीणं पि भेदुवलंभादो। जत्तिया कम्माणं सहावा तत्तियाणि चेव कम्माणि त्ति भणिदं होदि।

आचार्य कहते हैं। परन्तु कितने ही आचार्य अक्षरज्ञानसे लेकर आगे सब जगह क्षयोपशम ज्ञानके छह प्रकारकी वृद्धि होती है, ऐसा कहते हैं। इस प्रकार दो उपदेशोंसे पद, पदसमास, संघात, संघातसमास, प्रतिपत्ति, प्रतिपत्तिसमास, अनुयोग, अनुयोगसमास, प्राभृतप्राभृत, प्राभृतप्राभृतसमास, प्राभृत, प्राभृतसमास, वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व और पूर्वसमास ज्ञानोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। इस प्रकार श्रुतज्ञान असंख्यात लोक प्रमाण है। मतिज्ञान भी इतने ही हैं, क्योंकि, श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक ही होता है, अथवा कारणके भेदसे चूंकि कार्यका भेद पाया जाता है अतएव वे भी असंख्यात लोक प्रमाण ही हैं। अवधि और मनःपर्ययज्ञानोंके भेदोंकी प्ररूपणा जैसे मंगलदण्डकमें की गई है वैसे करनी चाहिये। केवलज्ञान एक प्रकारका है, क्योंकि, वह कर्मक्षयसे उत्पन्न होनेवाला है। जितने ज्ञानके भेद हैं उतनी ही कर्मकी आवरण शक्तियाँ हैं।

शंका– यह किस प्रमाण से जाना जाता है?

समाधान– कारण कि उसके बिना असंख्यात लोक प्रमाण ज्ञान बन नहीं सकते।

इसी प्रकार दर्शनकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, सब ज्ञान दर्शनपूर्वक ही होते हैं; जितने दर्शन हैं उतनी ही दर्शनावरणकी आवरण शक्तियाँ हैं। इस प्रकार ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ असंख्यात लोक प्रमाण हैं, यह सिद्ध है।

इतनी मात्र प्रकृतियाँ हैं ॥ ५ ॥

यहाँ सूत्रमें 'प्रकृतियाँ' ऐसा कहनेपर कर्मोंका ग्रहण होता है, क्योंकि, स्वभावके भेदसे स्वभाववालोंका भी भेद पाया जाता है। अभिप्राय यह है कि जितने कर्मोंके स्वभाव हैं उतने ही कर्म हैं।

ध्यान गा. जी. ३१६-३१७। ❖ अ-आ-काप्रतिषु 'जेत्तिया' इति पाठः।

वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ६ ॥

सुगमं ।

वेयणीयस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ॥ ७ ॥

सादावेयणीयमसादावेयणीयमिदि दो चेव सहावा, सुह-दुक्खवेयणाहिंतो पुधभूदाए अण्णिस्से वेयणाए अणुवलंभादो। सुहभेदेण दुहभेदेण च अणंतवियप्पेण वेयणीयकम्मस्स अणंताओ सत्तीओ किण्ण पढिदाओ◎? सच्चमेदं जदि पज्जवट्ठियणओ अवलंबिदो। किं तु एत्थ दव्वट्ठियणओ अवलंबिदो त्ति वेयणीयस्स ण तत्तियमेत्तसत्तीओ, दुवे चेव। पज्जवट्ठियणओ एत्थ किण्णावलंबिदो? ण, तदवलंबणे पओजणाभावादो। णाण-दंसणावरणेसु किमट्ठमवलंबिदो ? जीवसहावावगमणट्ठं ।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ८ ॥

जत्तिया सहावा तत्तियमेत्तियाओ चेव पयडीओ होंति ।

मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ९ ॥

वेदनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ ६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वेदनीय कर्मकी दो प्रकृतियाँ हैं ॥ ७ ॥

सातावेदनीय और असातावेदनीय इस प्रकार वेदनीयके दो ही स्वभाव हैं, क्योंकि, सुख व दुख रूप वेदनाओंसे भिन्न अन्य कोई वेदना पायी नहीं जाती ।

शंका– अनन्त विकल्प रूप सुखके भेदसे और दुखके भेदसे वेदनीय कर्मकी अनन्त शक्तियाँ क्यों नहीं कही गई हैं ?

समाधान– यदि पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किया गया होता तो यह कहना सत्य था, परन्तु चूंकि यहाँ द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन किया गया है अतएव वेदनीय की उतनी मात्र शक्तियाँ सम्भव नहीं हैं, किन्तु दो ही शक्तियाँ सम्भव हैं ।

शंका– यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन क्यों नहीं किया गया है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, उसके अवलम्बनका कोई प्रयोजन नहीं था ।

शंका– ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी प्ररूपणामें उसका अवलम्बन किसलिये किया गया है ?

समाधान– जीवस्वभावका ज्ञान करानेके लिये यहाँ उसका अवलम्बन किया गया है ।

उसकी इतनी ही प्रकृतियाँ हैं ॥ ८ ॥

कारण कि जितने स्वभाव होते हैं उतनी ही प्रकृतियाँ होती हैं ।

मोहनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ ९ ॥

◎ अ-आ-काप्रतिषु 'पदिदाओ', ताप्रतौ 'पदि (ठि) दाओ' इति पाठः ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सुगमं ।

मोहणीयस्स कम्मस्स अट्ठावीसं पयडीओ ॥ १० ॥

तं जहा–मिच्छत्त-[1]सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-अणंताणुबंधि-अपच्चक्खाणावरणीय-पच्चक्खाणावरणीय-संजुलण-कोह-माण-माया-लोह-हस्स-रइ-अरइ-सोग-भय दुगुंछित्थि-पुरिसणवुंसयभेएण मोहणीयस्स कम्मस्स अट्ठावीस सत्तीओ । एसा वि परूवणा असुद्धदव्वट्ठियणयमवलंबिऊण कदा । पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे मोहणीयस्स असंखेज्जलोगमेत्तीओ सत्तीओ होंति, असंखेज्जलोगमेत्तउदयट्ठाणण्णहाणुववत्तीदो । एत्थ पुण पज्जवट्ठियणओ किण्णावलंबिदो ? गंथबहुत्तभएण अत्थावत्तीए तदवगमादो वा णावलंबिदो ।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ११ ॥

जेण मोहणीयस्स अट्ठावीस सत्तीओ तेण पयडीओ वि अट्ठावीसं चेव होंति, एदाहिंतो पुधभूदभिण्णजादिसत्तीए अणुवलंभादो ।

आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ १२ ॥

सुगमं ।

यह सूत्र सुगम है ।

मोहनीय कर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियाँ हैं ॥ १० ॥

यथा–मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानावरणीय क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध, मान, माया, लोभ; संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके भेदसे मोहनीय कर्मकी अट्ठाईस शक्तियाँ हैं । यह भी प्ररूपणा अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करके की गई है । पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर तो मोहनीय कर्मकी असंख्यात लोक मात्र शक्तियाँ हैं, क्योंकि, अन्यथा उसके असंख्यात लोक मात्र उदयस्थान बन नहीं सकते ।

शंका– तो फिर यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन क्यों नहीं लिया गया है ?

समाधान– ग्रन्थबहुत्वके भयसे अथवा अर्थापत्तिसे उनका परिज्ञान हो जानेसे उसका अवलम्बन नहीं लिया गया है ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ है ॥ ११ ॥

चूंकि मोहनीयकी शक्तियाँ अट्ठाईस हैं अतः उसकी प्रकृतियाँ भी अट्ठाईस ही हैं, क्योंकि, इनसे पृथग्भूत भिन्नजातीय शक्ति नहीं पायी जाती ।

आयुकर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ १२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'मिच्छत्तसम्मामिच्छत्त', ताप्रतौ 'मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-(सम्मत्त)' इति पाठः ।

आउअस्स कम्मस्स चत्तारि पयडीओ ॥ १३ ॥

कुदो? देव-मणुस्स-तिरिक्ख-णेरइयभवधारणसरूवाणं सत्तीणं चदुण्णमुवलंभादो। एसा वि परूवणा असुद्धदव्वट्ठियणयविसया। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे आउअपयडी वि असंखेज्जलोगमेत्ता भवदि, कम्मोदयवियप्पाणमसंखेज्जलोगमेत्ताणमुवलंभादो। एत्थ विगंथबहुत्तभएण अत्थावत्तीए तदवगमादो वा पज्जवट्ठियणओ णावलंबिदो।

एवडियाओ पयडीओ होंति त्ति णिद्देसो कायव्वो। महाराज

जेण आउअस्स चत्तारि चेव सहावा तेण चत्तारि चेव पयडीओ होंति ।

णामस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ १५ ॥

सुगमं ।

णामस्स कम्मस्स असंखेज्जलोगमेत्तपयडीओ ॥ १६ ॥

एत्थ किमट्ठं पज्जवट्ठियणओ अवलंबिदो? आणुपुव्वीवियप्पपदुप्पायणट्ठं। तत्थ णिरयगइपाओग्गाणुपुव्विणामाए अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तबाहल्ले तिरियपदरे सेडीए असंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जो रासी उप्पज्जदि तेत्तियमेत्तीओ सत्तीओ होंति। तिरिक्खगदिपाओग्गाणुपुव्विणामाए लोगे सेडीए असंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जा संखा उप्पज्जदि तत्तियमेत्ताओ सत्तीओ। मणुसग-

---

आयुकर्मकी चार प्रकृतियाँ हैं ॥ १३ ॥

इसका कारण यह है कि देव, मनुष्य, तिर्यंच और नारक पर्यायको धारण कराने रूप शक्तियाँ चार पायी जाती हैं। यह प्ररूपणा भी अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयको विषय करनेवाली है। पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर तो आयुकी प्रकृतियाँ भी असंख्यात लोकमात्र हैं, क्योंकि, कर्मके उदय रूप विकल्प असंख्यात लोक मात्र पाये जाते हैं। यहाँ भी ग्रन्थ बहुत्वके भयसे अथवा अर्थापत्तिसे उनका परिज्ञान हो जानेके कारण पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन नहीं लिया गया है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १४ ॥

चूँकि आयुके चार ही स्वभाव हैं अतएव उसकी चार ही प्रकृतियाँ होती हैं।

नामकर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ १५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

नामकर्मकी असंख्यात लोकमात्र प्रकृतियाँ हैं ॥ १६ ॥

शंका— यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किसलिये लिया गया है ?

समाधान— आनुपूर्वीके भेदोंको बतलानेके लिये यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन लिया गया है। उनमेंसे अंगुलके असंख्यातवें भागमात्र बाहल्यरूप तिर्यक्प्रतरकी श्रेणिके असंख्यातवें भागमात्र अवगाहनाभेदोंसे गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न होती है उतनी मात्र नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी शक्तियाँ होती हैं। श्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र अवगाहनाभेदोंसे लोकको गुणित करनेपर जो संख्या उत्पन्न होती है उतनी मात्र तिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी

दिपाओग्गाणुपुव्विणामाए पणदालीसजोयणसदसहस्सबाहल्लाणि तिरियपदराणि उड्ढं कवाडछेदणणिप्फण्णाणि सेडियसंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जा संखा उप्पज्जदि तत्तियमेत्तीओ पयडीओ। देवगइपाओग्गाणुपुव्विणामाए णवजोयणसयबाहल्ले तिरियपदरे सेडीए असंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जा संखा उप्पज्जदि तत्तियमेत्तीओ पयडीओ। गदि-जादि-सरीरादीणं पयडीण पि जाणिय भेदपरूवणा कायव्वा।

एवडियाओ पयडीओ ॥ १७ ॥

जत्तियाओ णामकम्मस्स सत्तीओ पुव्वं परूविदाओ तत्तियमेत्ताओ चेव तस्स पयडीओ होंति त्ति घेत्तव्वं।

गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ १८ ॥

सुगमं।

गोदस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ॥ १९ ॥

उच्चागोदणिव्वत्तणप्पिया णीचागोदणिव्वत्तणप्पिया चेदि विसेसस्स दुवेपयडीओ[1]। अवांतरभेदेण जदि वि बहुआओ अत्थि तो वि ताओ ण उत्ताओ गंथबहुत्तभएण अत्थावत्तीए तदवगमादो वा।

शक्तियाँ होती हैं। ऊर्ध्वकपाटके अर्धच्छेदोंसे उत्पन्न पैंतालीस लाख योजनबाहल्य रूप तिर्यक्-प्रतरोंको श्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र अवगाहनाभेदोंसे गुणित करनेपर जो संख्या उत्पन्न होती है उतनी मात्र मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी प्रकृतियाँ होती हैं। नौ सौ योजन बाहल्य-रूप तिर्यक्प्रतरको श्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र अवगाहनाभेदोंसे गुणित करनेपर जो संख्या उत्पन्न होती है उतनी मात्र देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी प्रकृतियाँ होती हैं। गति, जाति व शरीर आदिक प्रकृतियोंके भी भेदोंकी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिये। ज्योतिषी देवों की अपेक्षा

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १७ ॥

नामकर्मकी जितनी शक्तियाँ पूर्वमें कही जा चुकी हैं उतनी ही उसकी प्रकृतियाँ हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

गोत्र कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ १८ ॥

यह सूत्र सुगम है।

गोत्रकर्मकी दो प्रकृतियाँ हैं ॥ १९ ॥

उच्चगोत्रको उत्पन्न करनेवाली और नीच-गोत्रको उत्पन्न करनेवाली, इस प्रकार गोत्रकी दो प्रकृतियाँ हैं। अवान्तर भेदसे यद्यपि वे बहुत हैं तो भी ग्रन्थके बढ़ जानेसे अथवा अर्थापत्तिसे उनका ज्ञान हो जानेके कारण यहाँ नहीं कहा है।

---

[1] ताप्रतावतः प्राक् 'सुगमं' इत्यधिकः पाठः। [2] अ-आ-काप्रतिषु 'दोण्णपयडीओ' इति पाठः।

एवडियाओ पयडीओ ॥ २० ॥

जेण दुवे चेव गोदकम्मस्स सत्तीयो तेण तस्स दो चेव पयडीओ ।

अंतराइयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ २१ ॥

सुगमं ।

अंतराइयस्स कम्मस्स पंच पयडीओ ॥ २२ ॥

सुगमं ।

एवडियाओ पयडीओ ॥ २३ ॥

कुदो? पंचण्णं विसेसणाणं भेदेण तव्विसेसिदकम्मक्खंधाणं पि भेदस्स णाओवगयस्स अणब्भुवगमे (*)पमाणाणणुसारित्तप्पसंगादो। एवं पयडिअट्ठदा समत्ता ।

समयपबद्धट्ठदाए ॥ २४ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयस्स केवडियाओ पयडीओ॥२५॥

एदं सुत्तं तिविहसंखेज्जे णवविहअसंखेज्जे णवविहअणंते च ठोइय एदस्स सुत्तस्स अत्थो वत्तव्वो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ २० ॥

चूंकि गोत्रकर्मकी दो ही शक्तियाँ हैं अतएव उसकी दो ही प्रकृतियाँ हैं ।

अन्तराय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्तराय कर्मकी पाँच प्रकृतियाँ हैं ॥ २२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ २३ ॥

कारण यह कि पाँच विशेषणोंके भेदसे विशेषताको प्राप्त हुए उस कर्मके स्कन्धोंका भी भेद न्याय प्राप्त है । उसके न माननेपर प्रमाणकी अननुसारिताका प्रसंग आता है । इस प्रकार प्रकृत्यर्थता समाप्त हुई ।

अब समयप्रबद्धार्थताका अधिकार है ॥ २४ ॥

यह अधिकारका स्मरण करानेवाला सूत्र सुगम है ।

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥२५॥

तीन प्रकारके संख्यात, नौ प्रकारके असंख्यात और नौ प्रकारके अनन्तको लेकर इस सूत्रका अर्थ कहना चाहिये ।

(*) अ-आ-काप्रतिषु 'पमाणाणुसारित्त', ताप्रतौ 'पमाणाणुसारित्त (त्ता)', मप्रतौ 'पमाणाणुसारित्त' इति पाठः ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥२६॥

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइएसु एक्केक्का जा पयडी तिस्से कम्मट्ठिदि-समयभेदेण भेदो वुच्चदे। तं जहा—तीससागरोवमकोडाकोडीओ एदेसिं कम्माणं कम्म-ट्ठिदी। तिस्से चरिमसमए कम्मट्ठिमेत्ता समयपबद्धा अत्थि। कुदो? कम्मट्ठिदिपढम-समयप्पहुडि जाव चरिमसमओ त्ति एत्थ बद्धसमयपबद्धाणं एगपरमाणुमादिं कादूण जाव अणंतपरमाणूणं कम्मट्ठिदिचरिमसमए पाहुडणिल्लेवणट्ठाणसुत्तबलेण ⊙ उवलंभादो। कम्मट्ठिदिआदिसमए पबद्धपरमाणूणं कम्मट्ठिदिचरिमसमए एगा चेव ट्ठिदी होदि। एसा एगा पयडी। विदियसमए पबद्धकम्मपरमाणू ❖ कम्मट्ठिदिचरिमसमए वट्टमाणा विदिया पयडी, एदेसिं दुसमयट्ठिदिदंसणादो। ण च एगसमयादो दोण्णं समयाणमेयत्तं, विरोहादो। तदो तब्भेदेण पयडिभेदेण वि होदव्वमण्णहा सव्वसंकरप्पसंगादो। एवं तदियसमयपबद्धाणमण्णा पयडी, चउत्थसमयपबद्धाणमण्णा पयडी त्ति णेदव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमयपबद्धो त्ति। पुणो एदे समयबद्धे कालभेदेण पयडिभेदमुवगए संक-लिज्जमाणे एगसमयपबद्धसलागाणं ठविय तीसकोडाकोडीहि गुणिदे एत्तियमेत्ताओ कालणिबंधणपयडीओ णाण-दंसणावरण-अंतराइयाणमेक्केक्कस्से पयडीए होंति।

— — —मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्मकी एक एक प्रकृति तीस कोडा-कोडी सागरोपमोंको समय प्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी है॥२६॥

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय इनमेंसे जो एक एक प्रकृति है उसका कर्म-स्थितिके समयोंके भेदसे भेद कहते हैं। यथा—इन कर्मोंकी कर्मस्थिति तीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण है। उसके अन्तिम समयमें कर्मस्थिति प्रमाण समयप्रबद्ध होते हैं, क्योंकि, कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर उसके अन्तिम समय तक यहाँ बांधे गये समयप्रबद्धोंके एक परमाणुसे लेकर अनन्त परमाणु तक कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें कसायपाहुडके निर्लेपनस्थान सूत्रके बलसे पाये जाते हैं। कर्मस्थितिके प्रथम समयमें तो बँधे हुए परमाणुओंकी कर्मस्थिति के अन्तिम समयमें एक ही स्थिति होती है। यह एक प्रकृति है। द्वितीय समयमें बांधे गये कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें वर्तमान द्वितीय प्रकृति है, क्योंकि, इनकी दो समय स्थिति देखी जाती है। एक समयका दो समयोंके साथ अभेद नहीं हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है। इस कारण समयभेदसे प्रकृतिभेद भी होना ही चाहिये, अन्यथा सर्वसंकर दोषका प्रसंग आता है। इसी प्रकार तृतीय समयमें बांधे गये परमाणुओंकी अन्य प्रकृति, चतुर्थ समयमें बांधे गये पर-माणुओंकी अन्य प्रकृति, इस प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। अब कालके भेदसे प्रकृतिभेदको प्राप्त हुए इन समयप्रबद्धोंका संकलन करनेपर एक समयप्रबद्धकी शलाकाओंको स्थापितकर तीस कोडाकोडी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर इतनी मात्र ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायमेंसे एक एक कर्मकी प्रकृतियाँ होती हैं।

⊙ अ-आप्रत्योः '-णिल्लेवण' इति पाठः। ❖ अ-काप्रत्योः 'परमाणू' इति पाठः।

एवडियाओ पयडीओ ॥ २७ ॥

जत्तियाओ कालणिबंधणपयडीओ णाणावरणादीणमेक्केक्का पयडी तत्तियमेत्ता होदि त्ति भणिदं होदि। णवरि मदिणाणावरणीय-सुदणाणावरणीय-ओहिणाणावरणीय चक्खु-अचक्खु-ओहिदंसणावरणीयाणं चतीसंसागरोवमकोडाकोडिगुणिदाए एगसमयपबद्धट्ठदाए असंखेज्जलोगेहि गुणिदाए एदासिं ⊗ सव्वपयडिपमाणं होदि। अधवा,कम्मट्ठिदिपढमसमए बद्धकम्मक्खंधो एगसमयपबद्धट्ठदा, विदियसमयपबद्धो विदियसमयपबद्धट्ठदा। एवं णेयव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति। पुणो एगसमयपबद्धट्ठदं ठविय तीसंसागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदे एक्केक्कस्स कम्मस्स एवडियाओ पयडीओ होंति। एसा परूवणा एत्थ पहाणा, ण पुव्विल्ला एग-दोआदिसमयट्ठिदिदव्वमस्सिदूण परूविदा।

वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ २८ ॥

सुगमं।

मूलग्रन्थकर्ता - आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वेदणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीस-पण्णारससागरोवमकोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ २९ ॥

असादावेदणीयस्स कम्मट्ठिदिपढमसमए जो बद्धो कम्मक्खंधो सा ⊗ एगा समय-

---

उनमेंसे प्रत्येककी इतनी प्रकृतियाँ होती हैं? ॥ २७ ॥

जितनी कालनिबन्धन प्रकृतियाँ हैं, ज्ञानावरणादिकोंमेंसे प्रत्येककी एक एक प्रकृति उतनी मात्र होती है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है। विशेष इतना है कि मतिज्ञानावरणीय, श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, चक्षुदर्शनावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और अवधिदर्शनावरणीयकी तीस कोडाकोडि सागरोपमोंसे गुणित एक समयप्रबद्धार्थताको असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर इनकी समस्त प्रकृतियोंका प्रमाण होता है।

अथवा, कर्मस्थितिके प्रथम समयमें बांधे गये कर्मस्कन्धका नाम एक समयप्रबद्धार्थता है; द्वितीय समयमें बांधे गये कर्मस्कन्धका नाम द्वितीय समयप्रबद्धार्थता है, इस प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। फिर एक समयप्रबद्धार्थताको स्थापितकर तीस कोडाकोडी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर एक एक कर्मकी इतनी प्रकृतियाँ होती हैं। यह प्ररूपणा यहाँ प्रधान है, न कि एक दो आदि समयमात्र स्थितिके द्रव्यका आश्रय करके की गई पूर्वोक्त प्ररूपणा।

वेदनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ २८ ॥

यह सूत्र सुगम है।

तीस और पन्द्रह कोडाकोडी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मात्र वेदनीयकर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ २९ ॥

असाता वेदनीयकी कर्मस्थितिके प्रथम समयमें जो कर्मस्कन्ध बाँधा गया है वह एक समय-

⊗ अ-काप्रत्योः 'एदेसिं' इति पाठः, आप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः। ⊗ ताप्रतौ 'सो' इति पाठः।

पबद्धट्ठदा, विदियसमए पबद्धो विदिया समयपबद्धट्ठदा, तदियसमए पबद्धो तदिया समयपबद्धट्ठदा; एवं णेयव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति। एत्थ एगसमयपबद्धट्ठदं ठविय तीसंसागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदे असादावेदणीयस्स एवडियाओ कालणिबंधणपयडीओ होंति। असादावेयणीयस्स सांतरबंधिस्स ◌ समयपबद्धट्ठदाए तीसंसागरोवमकोडाकोडीओ गुणगारो ण होंति, सादबंधणद्धाए असादस्स बंधाभावादो ? एत्थ परिहारो वुच्चदे। तं जहा--सगकम्मट्ठिदिअब्भंतरे एदम्हि उद्देसे असादस्स बंधो णत्थि चेवे त्ति ण णियमो अत्थि, णाणाजीवे अस्सिदूण कम्मट्ठिदीए सव्वसमएसु असादबंधुवलंभादो। एगजीवमस्सिदूण कम्मट्ठिदिअब्भंतरे असादस्स ण णिरंतरो बंधो लब्भदि त्ति भणिदे ण, तत्थ वि *णाणाकम्मट्ठिदीयो अस्सिदूण णिरंतरबंधुवलंभादो। ण च एगजीवेण एत्थ अहियारो, कम्मट्ठिदिमस्सिदूण समयपबद्धट्ठदाए परूविदुमाढत्तादो। तम्हा असादवेयणीयस्स अध्रुवबंधिस्स वि तीसंसागरोवमकोडाकोडीयो गुणगारो होंति त्ति सिद्धं।

असादबंधवोच्छिण्णकाले बद्धं सादमसादत्ताए संकंतं घेत्तूण तीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता समयपबद्धट्ठदा त्ति किण्ण भण्णदे? ण, सादसरूवेण बद्धाणं कम्मक्खंधाणं

प्रबद्धार्थता है, द्वितीय समयमें बाँधा गया कर्मस्कन्ध द्वितीय समयप्रबद्धार्थता है, तृतीय समयमें बाँधा गया कर्मस्कन्ध तृतीय समयप्रबद्धार्थता है; इस प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। यहाँ एक समयप्रबद्धार्थताको स्थापितकर तीस कोडाकोडी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर इतनी मात्र असाता वेदनीयकी कालनिबन्धन प्रकृतियाँ होती हैं।

शंका- असाता वेदनीय चूंकि सान्तरबन्धी प्रकृति है, अतएव उसकी समयप्रबद्धार्थताका गुणकार तीस कोडाकोडी सागरोपम नहीं हो सकता, क्योंकि, साता वेदनीयके बन्धकालमें असाता वेदनीयका बन्ध सम्भव नहीं है ?

समाधान- यहाँ इस शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है-अपनी कर्मस्थितिके भीतर इस उद्देश्यमें असाता वेदनीयका बन्ध है ही नहीं, ऐसा नियम नहीं है; क्योंकि, नाना जीवोंका आश्रय करके कर्मस्थितिके सब समयोंमें असाताका बन्ध पाया जाता है।

शंका- एक जीवका आश्रय करके तो कर्मस्थितिके भीतर असाता वेदनीयका निरन्तर बन्ध नहीं पाया जाता है ?

समाधान- ऐसा कहनेपर उत्तरमें कहते हैं कि 'नहीं'; क्योंकि, वहाँपर भी नाना कर्मस्थितियोंका आश्रय करके निरन्तर बन्ध पाया जाता है। और यहाँ एक जीवका अधिकार भी नहीं है, क्योंकि कर्मस्थितिका आश्रय करके समयप्रबद्धार्थताकी प्ररूपणा प्रारम्भ की गई है। इस कारण अध्रुवबन्धी असाता वेदनीयका गुणकार तीस कोडाकोडी सागरोपम है, यह सिद्ध है।

शंका- असाता वेदनीयके बन्धव्युच्छित्तिकालमें बांधे गये व असाता वेदनीय स्वरूपसे परिणत हुए साता वेदनीयको ग्रहणकर तीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थता क्यों नहीं कहते ?

◌ प्रतिषु 'सांतरबंधिसय' इति पाठः। * अ-आ-काप्रतिषु 'णाण' इति पाठः।

संकमेण असादत्ताए परिणदाणं असादसमयपबद्धत्तविरोहादो। अकम्मसरूवेण ट्ठिदा पोग्गला असादकम्मसरूवेण परिणदा जदि होंति ते असादसमयपबद्धा णाम। तम्हा संकमेणागदाणं ण समयपबद्धववएसो त्ति सिद्धं। एवं घेप्पमाणे सादवेदणीयस्स वि आवलिऊणतीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदापसंगादो। कुदो? बंधावलियादीदअसादट्ठिदीए सादसरूवेण संकंताए(1) सादसरूवेण चेव बंधावलिऊणकम्मट्ठिदिमेत्तकालमवट्ठाणदंसणादो। ण च सादस्स एत्तियमेत्ता समयपबद्धट्ठदा अत्थि, सुत्ते पण्णारससागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदुवदेसादो*। ण च असादस्स सादत्ताए संकंतस्स पण्णारससागरोवमकोडाकोडिमेत्ता चेव ट्ठिदी होदि, खंडयघादेण विणा कम्मट्ठिदीए घादाभावादो। एवं सादावेदणीयस्स वि वत्तव्वं, विसेसाभावादो।

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवडियाओ पयडीओ ॥ ३० ॥

जत्तियाओ सादासादवेयणीयाणं कालगदसत्तीयो तत्तियाओ चेव तासिं पयडीओ त्ति घेत्तव्वं।

समाधान– क्योंकि, साता वेदनीयके स्वरूपसे बांधे गये परन्तु संक्रमण वश असाता वेदनीयके स्वरूपसे परिणत हुए कर्मस्कन्धोंके असाता वेदनीय के समयप्रबद्ध होनेका विरोध है। कारण कि अकर्मस्वरूपसे स्थित पुद्गल यदि असाता वेदनीय कर्मके स्वरूपसे परिणत होते हैं तो वे असाता वेदनीयके समयप्रबद्ध कहे जाते हैं। इसलिये संक्रमण वश आये हुए कर्मपुद्गल स्कन्धोंकी समयप्रबद्ध संज्ञा नहीं हो सकती, यह सिद्ध है।

वैसा ग्रहण करनेपर साता वेदनीयके भी एक आवलीसे रहित तीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थताका प्रसंग आता है, क्योंकि, बंधावलीसे रहित असाता वेदनीयकी स्थितिका साता वेदनीयके स्वरूपसे परिणत होकर साता वेदनीयके स्वरूपसे ही बन्धावलीसे हीन कर्मस्थिति मात्र काल तक अवस्थान देखा जाता है। परन्तु साता वेदनीयके इतने समयप्रबद्ध नहीं हैं, क्योंकि सूत्रमें उसके पन्द्रह कोडाकोडी सागरोपम मात्र समयप्रबद्धोंका उपदेश है। यदि कहा जाय कि असाता वेदनीय साता वेदनीयके स्वरूपसे संक्रमणको प्राप्त होता है अतः उस कर्मकी पन्द्रह कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण ही स्थिति हो सकती है, तो यह कहना भी ठीक नहीं है; क्योंकि, काण्डकघातके बिना कर्मस्थितिका घात सम्भव नहीं है।

इसी प्रकार साता वेदनीयके सम्बन्धमें भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३० ॥

साता व असाता वेदनीयकी जितनी कालगत शक्तियाँ हैं उतनी ही उनकी प्रकृतियाँ हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

---

(1) अ-का-ताप्रतिषु 'सादसरूवेण संकंताए' इतीतावानयं पाठो नोपलभ्यते। * आप्रतौ 'त्रुटितोऽत्र पाठः, ताप्रतौ '-पबद्धट्ठदुवदेसादो' इति पाठः।

मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ३१ ॥

सुगमं ।

मोहणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सत्तरि-चत्तालीसं-वीसं-पण्णारस-दस-सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥३२॥

मिच्छत्तस्स सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीयो, सोलसण्णं कसायाणं चत्तालीसं सागरोवमकोडाकोडीओ, अरदि-सोग-भय-दुगुंछा-णवुंसयवेदाणं वीसं सागरोवमकोडाकोडीयो, इत्थिवेदस्स पण्णारस सागरोवमकोडाकोडीओ, हस्स-रदि-पुरिसवेदाणं दस सागरोवमकोडाकोडीयो ट्ठिदी होदि । एदाहि कम्मट्ठिदीहि समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए एक्केक्का पयडी एत्तियमेत्ता होदि, समयभेदेण बद्धक्खंधाणं पि भेदादो । एत्थ वि सांतरबंधीणं पयडीणमसादावेयणीयकमो वत्तव्वो । सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणं समयपबद्धट्ठदा कधं सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता ? ण, मिच्छत्तकम्मट्ठिदिमेत्तसमयपबद्धाणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकंताणं सेचीयाभावेण* सव्वेसिं सुवलंभादो । सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीयो चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तपयडीणं कधं समयपबद्धट्ठदा । ण मिच्छत्तसरूवेण बद्धाणं कम्मक्खंधाणं लद्धसमयपबद्ध-

---

मोहनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ ३१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सत्तर, चालीस, बीस, पन्द्रह और दस कोडाकोडी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मोहनीय कर्मकी एक एक प्रकृति है ॥३२॥

मिथ्यात्वकी स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागरोपम, सोलह कषायोंकी चालीस कोडाकोडी सागरोपम; अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और नपुंसकवेदकी बीस कोडाकोडी सागरोपम; स्त्रीवेदकी पन्द्रह कोडाकोडी सागरोपम तथा हास्य, रति और पुरुष वेदकी दस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण स्थिति है । इन कर्मस्थितियोंके द्वारा समयप्रबद्धार्थताको गुणित करनेपर जो प्राप्त हो इतनी मात्र एक एक प्रकृति है, क्योंकि, कालके भेदसे बांधे गये स्कंधोंका भी भेद होता है । यहाँपर भी सान्तरबन्धी प्रकृतियोंके क्रमको असाता वेदनीयके समान कहना चाहिये ।

शंका– सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वकी समयप्रबद्धार्थता सत्तर कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण कैसे सम्भव है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वके रूपमें संक्रमणको प्राप्त हुए मिथ्यात्व कर्मकी स्थितिप्रमाण समयप्रबद्ध निषेक स्वरूपसे वहाँ सभी पाये जाते हैं ।

शंका– उन अबन्ध प्रकृतियोंके समयप्रबद्धार्थता कैसे सम्भव है ?

समाधान– नहीं, क्योंकि मिथ्यात्व स्वरूपसे बांधे गये व समयप्रबद्ध संज्ञाको प्राप्त हुए

(ता) प्रतिषु 'गुणिदाओ' इति पाठः । (ता) ताप्रतौ 'वेदणीयस्स' इति पाठः । * अप्रतौ 'सेचीयाभावेण' इति पाठः ।

ववएसाणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकंताणं पि दव्वट्ठियणयेण तव्ववएसं पडि विरोहाभावादो। एस कमो अबंधपयडीणं चेव, ण बंधपयडीणं; पुरिसवेदस्स वि चालीस-सागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदापसंगादो। ण च एवं, तहाविहसुत्ताणुवलंभादो।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ३३ ॥

जत्तिया समयपबद्धा तत्तियमेत्ताओ पयडीओ एक्केक्का पयडी होदि, काल-भेदेण भेदुवलंभादो।

आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ३४ ॥

सुगमं।

आउअस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तं समय-पबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ ३५ ॥

अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तमिदि विच्छाणिद्देसो। तेण चदुण्णमाउआणं अंतोमुहुत्तमेत्ता चेव ट्ठिदिबंधगद्धा होदि त्ति सिद्धं। एदीए बंधगद्धाए एगसमयपबद्धे गुणिदे चदुण्ण-माउआणं पुध पुध समयपबद्धट्ठदापमाणं होदि। आउअस्स संखेवद्धाए ऊणपुव्वकोडि-तिभागमेत्ता समयपबद्धट्ठदा किण्ण परूविदा, कदलीघादमस्सिदूण अंतोमुहुत्तूणपुव्व ☆-

(अर्थात् अपवर्त्य और अनपवर्त्य आयु महाराज)

कर्मस्कन्धोंके सम्यक्त्व एवं सम्यङ्मिथ्यात्व स्वरूपसे संक्रान्त होनेपर भी उनको द्रव्यार्थिक नयसे समयप्रबद्ध कहनेमें कोई विरोध नहीं है। यह क्रम अबन्ध प्रकृतियोंके ही सम्भव है, बन्ध प्रकृति-योंके नहीं; क्योंकि, वैसा होनेपर पुरुषवेदके भी चालीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण समय-प्रबद्धार्थताका प्रसङ्ग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, उस प्रकारका कोई सूत्र नहीं है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३३ ॥

जितने समयप्रबद्ध हों उतनी मात्र प्रकृतियां स्वरूप एक एक प्रकृति होती है, क्योंकि, कालके भेदसे प्रकृतिभेद पाया जाता है।

आयु कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ ३४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्तको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी आयु कर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ ३५ ॥

'अन्तमुहूर्त अन्तर्मुहूर्त' यह वीप्सानिर्देश है। इसलिए चारों आयुओंका स्थितिबन्धक काल अन्तर्मुहूर्त मात्र ही है, यह सिद्ध है। इस बन्धककालसे एक समयप्रबद्धको गुणित करनेपर पृथक् पृथक् चारों आयुओंकी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है।

शंका– आयुके संक्षेपाद्धासे हीन पूर्वकोटिके त्रिभाग प्रमाण अथवा कदलीघातका आश्रय करके अन्तर्मुहूर्तसे हीन पूर्वकोटि प्रमाण समयप्रबद्धार्थता क्यों नहीं कही गई है ?

☆ प्रतिषु 'अंतोमुहूत्तेणपुव्व-' इति पाठः।

कोडिमेत्ता वा? ण एस दोसो, जहा सादादीणं एगसमयअबंधगो ⊖ होदूण विदियसमए चेव बंधगो होदि, एवं ण आउअस्स; किंतु सेसाउअस्स बेत्तिभागं गंतूण चेव बंधगो होदि त्ति जाणावणट्ठं अंतोमुहुत्तग्गहणं कदं।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ३६ ॥

सुगमं।

नामस्स कम्मस्स* केवडियाओ पयडीओ ॥ ३७ ॥

सुगमं।

णामस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी वीसं-अट्ठारस-सोलस-पण्णारस-चोद्दस्स-बारस-दससागरोवम⊖कोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ ३८ ॥

णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वि-तिरिक्खगइ-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वि-एइंदियपंचिंदियजादि-(ओरालिय-वेउव्विय-)तेजा-कम्मइयसरीर वण्ण-गंध-रस-फास-ओरालिय-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-हुंडसंठाण-असंपत्तसेवट्टसंघडण-अगुरुवलहुग-उवघाद-परघाद-उस्सास-आदावुज्जोव-अप्पसत्थविहायगदि-थावर-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेय-सरीर-अथिर-असुह-अणादेज्ज-दुभग-दुस्सर-अजसकित्ति-णिमिणणामाणं वीसं सागरो-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार साता वेदनीय आदि कर्मोंका एक समय अबन्धक होकर द्वितीय समयमें ही बन्धक हो जाता है, इस प्रकार आयुकर्मका बन्धक नहीं होता; किन्तु शेष आयुके दो त्रिभाग बिताकर ही बन्धक होता है, यह बतलानेके लिए अन्तर्मुहूर्तका ग्रहण किया है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

नाम कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ ३७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

बीस, अठारह, सोलह, पन्द्रह, चौदह, बारह और दस कोडाकोडी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी नामकर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ ३८ ॥

नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यग्गति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय जाति व पंचेन्द्रिय जाति, (औदारिक, वैक्रियिक,) तैजस व कार्मण शरीर, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, औदारिक व वैक्रियिक शरीरांगोपांग, हुण्डसंस्थान, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर, अशुभ, अनादेय, दुर्भग, दुस्वर, अयशःकीर्ति और निर्माण इन नामकर्मकी

३७

⊖ ताप्रतौ 'एगसमयऽबंधगो' इति पाठः। * आ-का-ताप्रतिषु 'णामकस्स' इति पाठः। ⊖ ताप्रतौ 'बारससागरोवम' इति पाठः।

बमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-सुहुम-साधारण-अपज्जत्त-पंचमसंठाण-पंचम[illegible]सामट्ठारसण्हं कोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। चउत्थसंठाण-चउत्थ-संघडणाणं सोलससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वीणं पण्णारससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। तदियसंठाण-तदियसंघडणाणं चोद्दससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। बिदियसंठाण-बिदियसंघडणाणं बारससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। देवगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वि-समचउरससंठाण-वज्जरिसहवइरणारायणसंघडण-पसत्थविहायगदि-थिर-सुभ-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-जसगित्तीणं दससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो ॐ। एदाहि ट्ठिदीहि पुध पुध समयपबद्धे गुणिदे सग-सगसमयपबद्धट्ठदा होदि।

संपहि आहारदुगस्स समयपबद्धट्ठदा संखेज्जंतोमुहुत्तमेत्ता। तं जहा—अट्ठवस्संतोमुहुत्तस्सुवरि संजदो अंतोमुहुत्तकालमाहारदुगं बंधिय णियमा थक्कदि, पमत्तद्धाए आहारदुगस्स बंधाभावादो। एवमंतोमुहुत्तमबंधगो होदूण * पुणो अंतोमुहुत्तं बंधगो होदि, पडिवण्णअप्पमत्तभावत्तादो। एवमप्पमत्त-पमत्तद्धासु ** बंधगो अबंधगो च होदूण ताव गच्छदि जाव ☐पुव्वकोडिचरिमसमओ त्ति। एदे अंतोमुहुत्ते उच्चिणिदूण गहिदे संखेज्जं-

---

प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध बीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त, पांचवा संस्थान और पांचवा संहनन इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध अठारह कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। चौथे संस्थान और चौथे संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सोलह कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगति-प्रायोग्यानुपूर्वीका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पन्द्रह कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। तृतीय संस्थान और तृतीय संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध चौदह कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। द्वितीय संस्थान और द्वितीय संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध बारह कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभवज्रनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय और यशःकीर्ति इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध दस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण होता है। इन स्थितियोंके द्वारा पृथक् पृथक् समयप्रबद्धको गुणित करनेपर अपनी अपनी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है।

2. अब आहारकद्विककी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण संख्यात अन्तर्मुहूर्त मात्र है। यथा—आठ वर्ष व अन्तर्मुहूर्तके ऊपर संयत होकर अन्तर्मुहूर्त काल तक आहारकद्विकको बाँधकर नियमसे थक जाता है, कारण कि प्रमत्तसंयतकालमें आहारकद्विकका बन्ध नहीं होता है। इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्त काल तक अबन्धक होकर फिरसे अन्तर्मुहूर्त काल तक बन्धक होता है, क्योंकि, तब उसने अप्रमत्तभावको प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार अप्रमत्त व प्रमत्त कालोंमें क्रमसे बन्धक व अबन्धक होकर तब तक जाता है जब तक पूर्वकोटिका अन्तिम समय प्राप्त होता है।

ॐ ष. खं. पु. ६, सू. ३, १६, १९, २०, २६, ३९, ४२, गो. क. १२८-१३२। * ताप्रतौ '-मबंधगो होदूण (पुणो अंतोमुहुत्तमबंधगो होदूण)' इति पाठः। ** मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-का-ताप्रतिषु 'एवमप्पमत्तद्धासु' इति पाठः। ☐ अ-आकाप्रतिषु 'पुव्वकोडि' इति पाठः।

तोमुहुत्तमेत्ता चेव समयपबद्धट्ठदा लब्भदि ।

तित्थयरस्स पुण सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्ता समयपबद्धट्ठदा लब्भदि । तं जहा-एगो देवो वा णेरइयो वा सम्मादिट्ठी पुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उववण्णो, गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि तित्थयरणामकम्मबंधमागंतूण तदो प्पहुडि उवरि णिरंतरं बज्झदि जाव अवसेसपुव्वकोडिसमहियतेत्तीससागरोवमाणि त्ति, तित्थयरं बंधमाणसंजदस्स बद्धतेत्तीससागरोवममेत्तदेवाउअस्स देवेसुप्पण्णस्स तेत्तीससागरोवममेत्तकालं णिरंतरं बंधुवलंभादो । पुणो तत्तो चुदो समाणो पुणो वि तित्थयरणामकम्मं बंधदि जाव पुव्वकोडाउअमणुस्सेस्सु उप्पज्जिय वासपुधत्तावसेसे अपुव्वकरणो होदूण चरिमसत्तमभागस्स पढमसमयअपुव्वकरणो त्ति । उवरि बंधो णत्थि, चरिमसत्तमभागस्स पढमसमए अणुप्पादाणुच्छेदेण बंधो वोच्छिज्जदि त्ति ससुत्ताइरियवयणुवलंभादो । वासपुधत्तं किमिदि उव्वरावियं? ण एस दोसो, तित्थविहारस्स जहण्णेण वासपुधत्तमेत्तकालुवलंभादो । एवमादिमंतिमदोहि ✪ वासपुधत्तेहि ऊणदोपुव्वकोडीहि सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्ता तित्थयरस्स समयपबद्धट्ठदा होदि त्ति के वि आइरिया भणंति । तण्ण घडदे। कुदो? आहारदुगस्स संखेज्जवासमेत्ता तित्थयरस्स सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्ता ✲ समयपबद्धट्ठदा होदि त्ति ससुत्ताइरियवयणेण सह सुत्तविरुद्धं वक्खाणं होदि, वक्खाणाभासत्तादो ।

इन अन्तर्मुहूर्तोंको समुच्चय रूपसे ग्रहण करनेपर संख्यात अन्तर्मुहूर्त प्रमाण हो समयप्रबद्धार्थता पायी जाती है ।

परन्तु तीर्थंकर प्रकृतिकी समयप्रबद्धार्थता साधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण पायी जाती है । यथा—एक देव अथवा नारकी सम्यग्दृष्टि पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । उसके गर्भसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षोंके पश्चात् तीर्थंकर नामकर्म बन्धको प्राप्त हुआ । उससे आगे वह शेष पूर्वकोटिसे अधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण काल तक निरन्तर बँधता है, क्योंकि, जो संयत तेतीस सागरोपम प्रमाण देवायुको बाँधकर देवोंमें उत्पन्न हो तीर्थंकर प्रकृतिको बाँधता है उसके तेतीस सागरोपम प्रमाण काल तक उसका निरन्तर बन्ध पाया जाता है । फिर वहाँ से च्युत होकर फिरसे भी वह पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर वर्ष पृथक्त्वके शेष रहनेपर अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती होकर अन्तिम सप्तम भागके प्रथम समयवर्ती अपूर्वकरण तक तीर्थंकर नामकर्मको बाँधता है । इसके आगे उसका बन्ध नहीं होता है, क्योंकि, "अन्तिम सप्तम भागके प्रथम समयमें अनुत्पादानुच्छेदसे उसका बन्ध व्युच्छिन्न हो जाता है", ऐसा ससूत्राचार्यका वचन पाया जाता है । द्रव्यार्थिक नय

शंका— वर्षपृथक्त्वका अवशेष क्यों रखाया गया है ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, तीर्थविहारका काल जघन्य स्वरूपसे वर्षपृथक्त्व मात्र पाया जाता है ।

इस प्रकार आदि और अन्तके दो वर्षपृथक्त्वोंसे रहित तथा दो पूर्वकोटि अधिक तीर्थंकर प्रकृतिकी तेतीस सागरोपम मात्र समयप्रबद्धार्थता होती है, ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं, परन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, आहारकद्विककी संख्यात वर्ष मात्र और तीर्थंकर प्रकृतिकी साधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थता है, ऐसा कोई सूत्र नहीं है । और सूत्रके

✪ ताप्रतौ 'एवमादिमंतरिमदोहि' इति पाठः । ✲ अ-आ-काप्रतिषु 'मेत्तो' इति पाठः ।

ण च जुत्तीए सुत्तस्स बाहा संभवदि, सयलबाहादीदस्स सुत्तत्तवएसादो। जदि एवं तो एदेसिं कम्माणं तिण्णं केवडिया समयपबद्धट्ठदा? वीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता। एदेसिं तिण्णं कम्माणमुक्कस्सट्ठिदिबंधो अंतोकोडाकोडिमेत्तो चेव? ण च तत्तिय कालमेदेसिं बंधो वि संभवदि, कमेण संखेज्जवस्ससादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्तकालबंधुवलंभादो। जेसिमंतोकोडाकोडिमेत्ता वि समयपबद्धट्ठदा ण संभवदि कधं तेसिं वीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धाणं संभवो त्ति? ण एस दोसो, एदेसु तिसु कम्मेसु बज्झमाणेसु वीसंसागरोवमकोडाकोडीसु संचिदणामकम्मसमयपबद्धेसु एदेसु संकममाणेसु वीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदाए उवलंभादो। एदाओ तिण्णि वि बंधपयडीओ। ण च बंधपयडीणं संकमेण समयपबद्धट्ठदा वोत्तुं सक्किज्जदे, सादस्स वि तीसं सागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदापसंगादो त्ति? एत्थ परिहारो उच्चदे। तं जहा– जासिं पयडीणं ट्ठिदिसंतादो उवरि कम्हि वि काले ट्ठिदिबंधो संभवदि ताओ बंधपयडीओ णाम। जासिं पुण पयडीणं बंधो चेव णत्थि, बंधे संते वि जासिं पयडीणं ट्ठिदिसंतादो उवरि सव्वकालं बंधो ण संभवदि; ताओ संतपयडीओ, संतपहाणत्तादो। ण च आहारदुग-तित्थयराणं ट्ठिदिसंतादो उवरि बंधो अत्थि, सम्माइट्ठीसु

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

प्रतिकूल व्याख्यान होता नहीं है क्योंकि, वह व्याख्यानाभास कहा जाता है। यदि कहा जाय कि युक्तिसे सूत्रको बाधा पहुँचाई जा सकती है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, जो समस्त बाधाओंसे रहित होता है उसकी सूत्र संज्ञा है।

शंका– यदि ऐसा है तो फिर इन तीन कर्मोंकी समयप्रबद्धार्थता कितनी है?

समाधान– उनकी समयप्रबद्धार्थता बीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण है।

शंका– इन तीन कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध अन्तः कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण ही होता है। परन्तु इतने काल तक उनका बन्ध भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह क्रमसे संख्यात वर्ष और साधिक तेतीस सागरोपम काल तक ही पाया जाता है। इसलिए जिनकी अन्तःकोडाकोडी मात्र भी समय प्रबद्धार्थता सम्भव नहीं है उनके बीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धोंकी सम्भावना कैसे की जा सकती है?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, बँधते समय इन तीनों कर्मोंमें बीस कोडाकोडी सागरोपमोंमें संचयको प्राप्त हुए नामकर्मके समयप्रबद्धोंका संक्रमण होनेपर इनकी बीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थता पायी जाती है।

शंका– ये तीनों ही बन्धप्रकृतियाँ है, और बन्धप्रकृतियोंकी संक्रमणसे समयप्रबद्धार्थता कहना शक्य नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर साता वेदनीयकी भी समयप्रबद्धार्थता तीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण प्राप्त होती है?

समाधान– यहाँ उक्त शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है– जिन प्रकृतियोंका स्थितिसत्त्वसे अधिक किसी भी कालमें बन्ध सम्भव है वे बन्धप्रकृतियाँ कही जाती हैं। परन्तु जिन प्रकृतियोंका बन्ध ही नहीं होता है और बन्धके होनेपर भी जिन प्रकृतियोंका स्थितिसत्त्वसे अधिक सदा काल बन्ध सम्भव नहीं है वे सत्त्वप्रकृतियाँ हैं, क्योंकि, सत्त्वकी प्रधानता है। आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका स्थिति सत्त्वसे अधिक बन्ध सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह सम्यग्दृष्टियोंमें

तदणुवलंभादो तम्मा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं व एदाणि तिण्णि वि संतकम्माणि। तदो जहा सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणं समयपबद्धट्ठदा संकमेण परूविदा तहा एदासिं पि संकमेणेव परूवेदव्वा, संतकम्मत्तं पडि भेदाभावादो। जदि वि संकमेण समयपबद्धट्ठदा वुच्चदे तो वि उक्कस्सट्ठिदिमेत्तसमयपबद्धपुव्वावरणेगेगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि अंतरमेत्तकालम्हि बद्धसमयपबद्धाणं संकमाभावादो आहार-तित्थयरेसु उदयावलियमेत्तसमयपबद्धाणं संकमाभावादो त्ति? ण एस दोसो, णाणाकालेसु णाणाजीवे अस्सिदूण परूविज्जमाणे सव्वेसिं समयपबद्धाणं संकमुवलंभादो। ण च कम्मट्ठिदीए आदीए चेव एत्थ होदि त्ति णियमो अत्थि, अणादिसंसारे बुद्धिबलसिद्धआदिदंसणादो। एत्थ जं गंथबहुत्तभएण ण वुत्तं[1] तं चिंतिय वत्तव्वं।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ३९ ॥

जत्तिया समयपबद्धा पुव्वं परूविदा एक्केक्किस्से पयडीए तत्तियमेत्ताओ पयडीओ होंति त्ति घेत्तव्वं।

गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ४० ॥

सुगमं।

पाया जाता है। इस कारण सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वके समान ये तीनों ही सत्त्वप्रकृतियाँ हैं। अतएव जिस प्रकार सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्व प्रकृतियोंकी समयप्रबद्धार्थताकी संक्रमण द्वारा प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इनकी भी समयप्रबद्धार्थताकी प्ररूपणा संक्रमण द्वारा करनी चाहिये, क्योंकि, सत्कर्मताके प्रति उनमें कोई विशेषता नहीं है।

शंका– यद्यपि संक्रमणसे इनकी समयप्रबद्धार्थता बतलाई जा रही है तो भी इनकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण समयप्रबद्धार्थता नहीं पायी जाती है, क्योंकि, सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्व प्रकृतियोंमें कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर अन्तर प्रमाण कालमें बाँधे गये समयप्रबद्धोंके संक्रमणका अभाव है, तथा आहारद्विक और तीर्थंकर प्रकृतियोंमें उदयावली प्रमाण समयप्रबद्धोंके संक्रमणका अभाव है?

समाधान– यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि नाना कालोंमें नाना जीवोंका आश्रय करके प्ररूपणा करनेपर सब समयप्रबद्धोंका संक्रमण पाया जाता है। दूसरे, यहाँ कर्मस्थितिके आदिमें ही होता है, ऐसा नियम भी नहीं है, क्योंकि, अनादि संसारमें बुद्धिबलसे सिद्ध आदि देखी जाती है।

यहाँ ग्रन्थकी अधिकताके भयसे जो नहीं कहा गया है उसको विचार कर कहना चाहिये।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३९ ॥

एक एक प्रकृतिके जितने समयप्रबद्ध पहिले कहे गये हैं उतनी मात्र प्रकृतियाँ होती हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

गोत्र कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं? ॥ ४० ॥

यह सूत्र सुगम है।

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'अण वुत्तं' इति पाठः।

मार्गदर्शक :- गोत्रस्स कम्मस्स एक्केक्का जा पयडी वीसं-दससागरोवमकोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ ४१ ॥

वीसंसागरोवमकोडाकोडीहि एगसमयपबद्धे गुणिदे णीचागोदस्स समयपबद्धट्ठदापमाणं होदि । दससागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदे उच्चागोदस्स समयपबद्धट्ठदापमाणं होदि । एत्थ सादासादाणं परूविदविहाणं संचिंतिय वत्तव्वं ।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ४२ ॥

सुगमं ।

एवं समययबद्धट्ठदा त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

खेत्तपच्चासे त्ति ॥ ४३ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं । प्रत्यास्यते अस्मिन्निति प्रत्यासः; क्षेत्रं तत्प्रत्यासश्च क्षेत्रप्रत्यासः । जीवेण ओट्ठद्धखेत्तस्स खेत्तपच्चासे त्ति सण्णा ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ४४ ॥

सुगमं ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स जो मच्छो जोयणसहस्सओ संयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरल्लए तडे अच्छिदो, वेयणसमुग्घादेण समुहवो,

---

बीस और दस कोडाकोडी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थता से गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी गोत्र कर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ ४१ ॥

एक समयप्रबद्धको बीस कोडाकोडी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर नीच गोत्रकी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है। तथा दस कोडाकोडी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर उच्चगोत्रकी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है। साता व असाता वेदनीयके सम्बन्धमें जो विधि प्ररूपित की गई है उसको भले प्रकार विचार कर यहाँ भी कहनी चाहिये ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ४२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार समयप्रबद्धार्थता यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

क्षेत्रप्रत्यास अनुयोगद्वारका अधिकार है ॥ ४३ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है ।

जहाँ समीपमें रहा जाता है वह प्रत्यास कहा जाता है, क्षेत्र रूप प्रत्यास क्षेत्रप्रत्यास, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है । जीवके द्वारा अवष्टब्ध (अवलम्बित) क्षेत्रकी क्षेत्रप्रत्यास संज्ञा है।

ज्ञानावरणीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ है ? ॥ ४४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जो मत्स्य एक हजार योजन प्रमाण है, स्वयम्भूरमण समुद्रके बाह्य

काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो, तिण्णि विग्गहगदिकंडयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति ॥ ४५ ॥

एदेण सव्वेण वि सुत्तेण णाणावरणीयस्स उक्कस्सखेत्तपच्चासो परूविदो। एदस्स सुत्तस्स अत्थो वि सुगमो, खेत्तविहाणे परूविदत्तादो।

खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ ॥ ४६ ॥

पुव्वत्तेण खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ समयपबद्धट्ठदापयडीओ एत्थतणपयडिपमाणं होंति।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवडियाओ पयडीओ ॥ ४७ ॥

पयडिअट्ठदाए जाओ पयडीओ णाणावरणीयस्स परूविदाओ ताओ अप्पप्पणो समयपबद्धट्ठदाए गुणेदव्वाओ। एवं गुणिदे समयपबद्धट्ठदापयडीओ होंति। पुणो तासु खेत्तपच्चासेण जगपदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण गुणिदासु एत्थतणपयडीओ होंति। एत्थ तेरासियकमेण पयडिपमाणमाणेदव्वं।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ४८ ॥

तटपर स्थित है, वेदनासमुद्घातको प्राप्त हुआ है, कापोतलेश्यासे संलग्न है, इसके बाद मारणांतिक समुद्घातको प्राप्त हुआ है, विग्रहगतिके तीन काण्डकोंको करके अनन्तर समयमें नीचे सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न होगा, उसके ज्ञानावरण कर्मकी जो एक एक प्रकृति होती है ॥ ४५ ॥

इस सब ही सूत्र के द्वारा ज्ञानावरणीय कर्मके उत्कृष्ट क्षेत्र प्रत्यासकी प्ररूपणा की गई है। इस सूत्रका अर्थ भी सुगम है, क्योंकि, क्षेत्रविधानमें उसकी प्ररूपणा की जा चुकी है।

उन्हें क्षेत्रप्रत्याससे गुणित करनेपर ज्ञानावरणकी क्षेत्रप्रत्यास प्रकृतियोंका प्रमाण होता है ॥ ४६ ॥

पूर्वोक्त क्षेत्र प्रत्याससे समय प्रबद्धार्थता प्रकृतियोंको गुणित करनेपर यहाँकी प्रकृतियोंका प्रमाण होता है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ४७ ॥

प्रकृत्यर्थतामें ज्ञानावरणकी जिन प्रकृतियोंकी प्ररूपणा की गई है उनको अपनी अपनी समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करना चाहिये। इस प्रकार गुणित करनेपर समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियाँ होती हैं। फिर उनको जगप्रतरके असंख्यातवें भाग मात्र क्षेत्रप्रत्यायसे गुणित करनेपर यहाँकी प्रकृतियाँ होती हैं। यहाँ त्रैराशिक क्रमसे प्रकृतियोंका प्रमाण लाना चाहिये।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके सम्बन्धमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ४८ ॥

जहा णाणावरणीयस्स समयपबद्धट्ठदापयडीओ खेत्तपच्चासेण गुणिय आणिदाओ तहा एदेसिं वि तिण्णं कम्माणं खेत्तपच्चासपयडिपमाणमाणेदव्वं ।

वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ४९ ॥

सुगमं ।

वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलिसमुग्घादेण समुग्घादस्स सव्वलोगं गदस्स ॥ ५० ॥

एदेण सुत्तेण खेत्तपच्चासपमाणं परूविदं संभालिदं वा, खेत्तविहाणे परूविदत्तादो।

खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ ॥ ५१ ॥

वेयणीयस्स एक्केक्का पयडी खेत्तपच्चासेण गुणिदा संती असंखेज्जाओ पयडीओ होंति । एक्का समयपबद्धट्ठदापयडी(१) जदि घणलोगमेत्ता होदि तो सव्वासिं किं लभामो त्ति खेत्तपच्चासगुणगारो साहेयव्वो । 'वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सव्वलोगं गदस्स केवलिस्स, खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ' त्ति कधमेत्थ भिण्णाहियरणाणं संबंधो ? ण,

-मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मकी समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियोंको क्षेत्रप्रत्याससे गुणित करके लाया गया है उसी प्रकार इन तीनों ही कर्मोंके क्षेत्रप्रत्यासरूप प्रकृतियोंके प्रमाणको लाना चाहिये ।

वेदनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ ४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

केवलिसमुद्घातसे समुद्घातको प्राप्त होकर सर्व लोकको प्राप्त हुए अन्यतर केवलीके जो वेदनीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है ॥ ५० ॥

इस सूत्रके द्वारा क्षेत्रप्रत्यासके प्रमाण की प्ररूपणा की गई है । अथवा, उनका स्मरण कराया गया है, क्योंकि उसकी प्ररूपणा क्षेत्रविधानमें की जा चुकी है ।

उन्हें क्षेत्र प्रत्याससे गुणित करनेपर वेदनीय कर्मकी क्षेत्रप्रत्यास प्रकृतियोंका प्रमाण होता है ॥ ५१ ॥

वेदनीय कर्मकी एक एक प्रकृति क्षेत्रप्रत्याससे गुणित होकर असंख्यात प्रकृतियाँ होती है । यदि एक समय प्रबद्धार्थता प्रकृति घनलोक प्रमाण है तो सब प्रकृतियाँ कितनी होंगी, इस प्रकार क्षेत्रप्रत्यासके गुणकारको सिद्ध करना चाहिये ।

शंका-'वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सव्वलोगं गदस्स केवलिस्स खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ' यहाँ चूंकि 'पयडी' पद एकवचन और 'गुणिदाओ' पद बहुवचन है, अतएव यहाँ इन भिन्न अधिकरणवालोंका संबंध किस प्रकार हो सकता है ?

---

(१) आप्रतौ '-पबद्धट्ठदा वयदा पयडी', काप्रतौ 'पबद्धट्ठदा पयदपयडी', ता तो 'पबद्धट्ठादा पयदा पयडी' इति पाठः ।

यावत् एकैकका इति विशेषणेन समासोपगतबहुत्वेन समानाधिकरणत्वं प्रति विरोधाभावादो ।

एवडियाओ पयडीओ ॥ ५२ ॥

सुगमं ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ ५३ ॥

सुगमं ।

एवं खेत्तपच्चासे त्ति अणुयोगद्दारे समत्ते वेयणापरिमाणविहाणे ❁ त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

समाधान– नहीं, क्योंकि, 'एक्केक्का' इस प्रकार अपने भीतर बहुत्वको रखनेवाले वीप्सानिर्देशसे उनका समानाधिकरण होनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार क्षेत्र प्रत्यास अनुयोगद्वारके समाप्त होनेपर वेदनापरिमाण विधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

❁ आप्रतौ 'मिच्छा', ताप्रतौ 'मि (इ) च्छा' इति पाठः । ❁ अ-आ-काप्रतिषु 'परिणामविहाणे' इति पाठः ।

वेयणाभागाभागविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणाभागाभागविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि—पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासे त्ति ॥ २ ॥

एवमेदाणि एत्थ तिण्ण चेव अणुयोगद्दाराणि होंति, अण्णेसिमसंभवादो ।

पयडिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो ॥ ३ ॥

किं संखेज्जदिभागो किमसंखेज्जदिभागो किमणंतिमभागो त्ति भणिदं होदि ।

दुभागो देसूणो ॥ ४ ॥

तं जहा—ओहिणाणावरणीयपयडीओ ओहिदंसणावरणीयपयडीओ च पुध पुध असंखेज्जलोगमेत्ता होदूण अण्णोण्णं पेक्खिदूण समाणाओ, सव्वोहिणाणवियप्पाणं ओहिदंसणपुरंगमत्तुवलंभादो। मदिणाणावरणीयपयडीओ चक्खु-अचक्खुदंसणावरणीयपय-

---

अब वेदनाभागाभागविधान अनुयोगद्वार का अधिकार है ॥ १ ॥

यह अधिकारका स्मरण करानेवाला सूत्र सुगम है।

उसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास ॥ २ ॥

इस प्रकार यहाँ ये तीन ही अनुयोग द्वार है, क्योंकि, इनसे अन्य अनुयोगद्वार यहाँ सम्भव नहीं है।

प्रकृत्यर्थतासे ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं? ॥ ३ ॥

वे क्या संख्यातवें भाग प्रमाण हैं, क्या असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं या क्या अनन्तवें भाग प्रमाण हैं, यह इस सूत्र का अभिप्राय है।

वे सब प्रकृतियोंके कुछ कम द्वितीय भाग प्रमाण हैं ॥ ४ ॥

यथा—अवधिज्ञानावरणकी प्रकृतियाँ और अवधिदर्शनावरणकी प्रकृतियाँ पृथक् पृथक् असंख्यात लोक प्रमाण होकर परस्परकी अपेक्षा समान हैं, क्योंकि अवधिज्ञानके सब भेद अवधिदर्शनपूर्वक पाये जाते है। मतिज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ और चक्षु व अचक्षु दर्शनावरणीयकी

डीओ च पुध पुध असंखेज्जलोगमेत्ताओ [1] होदूण अण्णोण्णं पेक्खिदूण समाणाओ, सव्वस्स मदिणाणस्स दंसणपुरंगमत्तब्भुवगमादो। सुदणाणावरणीयपयडीयो असंखेज्जलोगमेत्ताओ। मणपज्जयणाणावरणीयपयडीओ असंखेज्जकप्पमेत्ताओ [2]। एदासिं सुद-मणपज्जयणाणावरणीयपयडीणं ण दंसणमत्थि, मदिणाणपुरंगमत्तादो। तेण दंसणावर-णीयपयडीहिंतो णाणावरणीयपयडीओ विसेसाहियाओ। केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखे-ज्जदिभागमेत्तो। किंतु मदिणाणे सुदणाणं पविसदि त्ति एत्थ पुध ण घेत्तव्वं, अण्णहा देसूणदुभागत्ताणुववत्तीदो। अधवा, सुद-मणपज्जयणाणाणं [3] पि दंसणमत्थि, तदवग-यत्थसंवेयणाए तत्थ वि उवलंभादो। ण पुव्वब्भुवगमेण विरोहो [4], तक्कारणीभूददंस-णस्स तत्थ पडिसेहविहाणादो। केवलदंसणस्स एक्का पयडी अत्थि। केवलणाणावर-णीयस्स वि एक्का चेव। तेण ताओ सरिसाओ। णिद्दाणिद्दा पयलापयला थीणगिद्धी णिद्दा य पयला य एदाओ पंच पयडीओ दंसणावरणीए अत्थि। किंतु एदाओ अप्पहा-णाओ, मणपज्जयणाणावरणीयपयडीणमसंखेज्जदिभागत्तादो। तदो सिद्धं दंसणावरणी-यपयडीहिंतो णाणावरणीयपयडीओ बहुगाओ त्ति।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

असादावेयणीयादिसेसपयडीओ दंसणावरणीयपयडीणं असंखेज्जदिभागमेत्ताओ होदूण मणपज्जयणाणावरणीयपयडीहिंतो असंखेज्जगुणाओ। कधमसंखेज्जगुणत्तं

प्रकृतियाँ पृथक् पृथक् असंख्यात लोक मात्र होकर अन्योन्यकी अपेक्षा समान हैं, क्योंकि, समस्त मतिज्ञानको दर्शनपूर्वक स्वीकार किया गया है। श्रुतज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ असंख्यात लोक मात्र हैं। मनःपर्ययज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ असंख्यात कल्प मात्र हैं। इन श्रुतज्ञानावरणीय और मनःपर्ययज्ञानावरणीय प्रकृतियोंका दर्शन नहीं होता, क्योंकि, ये ज्ञान मतिज्ञानपूर्वक होते हैं। इसलिए दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ विशेष अधिक हैं। विशेषका प्रमाण कितना है? वह असंख्यातवें भाग मात्र है। किन्तु मतिज्ञानमें चूंकि श्रुतज्ञान प्रविष्ट है अतएव यहाँ पृथक् ग्रहण नहीं करना चाहिये, अन्यथा ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कुछ कम द्वितीय भाग प्रमाण नहीं बन सकतीं।

अथवा, श्रुतज्ञान और मनःपर्ययज्ञानोंके भी दर्शन हैं, क्योंकि, उसके द्वारा अवगत अर्थका संवेदन वहाँ भी पाया जाता है। ऐसा स्वीकार करनेपर पूर्व मान्यताके साथ विरोध होगा, सो भी नहीं है; क्योंकि उनके कारणभूत दर्शनके प्रतिषेधका वहाँ पर विधान किया गया है।

केवलदर्शनावरणीयकी एक प्रकृति है। केवलज्ञानावरणीयकी भी एक ही प्रकृति है। इस लिये वे दोनों समान हैं। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा और प्रचला, ये पाँच प्रकृतियाँ दर्शनावरणीयकी हैं। किन्तु ये अप्रधान हैं, क्योंकि, वे मनःपर्ययज्ञानावरणीय प्रकृति-योंके असंख्यातवें भाग मात्र हैं। इससे सिद्ध है कि दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा ज्ञाना-वरणीयकी प्रकृतियाँ बहुत हैं।

असातावेदनीय आदि शेष कर्मोंकी प्रकृतियाँ दर्शनावरणकी प्रकृतियों के असंख्यातवें भाग

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'लोगमेत्ता' इति पाठः [2] ताप्रतौ 'असंखेज्जकप्पमेत्ताओ' इति पाठः। [3] अ-आ-काप्रतिषु 'मणपज्जवाणं' इति पाठः। [4] अ-आ-काप्रतिषु 'विरोहा' इति पाठः।

णव्वदे? णाणावरणीय-दंसणावरणीयपयडीओ सव्वपयडीणं दुभागो देसूणो त्ति सुत्तण्णहाणुववत्तीदो।

संपहि णाणावरणीयसव्वपयडीहि अट्ठकम्मपयडिपुंजे भागे हिदे सादिरेयदोरूवाणि लब्भंति। सादिरेगपमाणमेगरूवस्स असंखेज्जदिभागो। तं जहा-णाणावरणीयपयडीसु अट्ठकम्माणं सव्वपयडिपुंजादो अवणिदासु एगा अवहारसलागा लब्भदि (१)। संपहि अवसेसाओ[1] दंसणावरण यादिसत्तकम्मपयडीओ अत्थि। पुणो तत्थ असादावेयणीयादिसेसपयडीसु पंचरूवूणमणपज्जयणाणावरणीयपयडीओ घेत्तूण दंसणावरणीयपयडीसु पक्खित्ते पक्खित्तपयडीहि सह दंसणावरणीयपयडीओ णाणावरणीयपयडीहि सरिसाओ होंति। अवणिदे विदिया अवहारकालसलागा लब्भदि (२)। पुणो गहिदावसेसासु[2] पयडीसु णाणावरणीयपयडिपमाणेण कीरमाणासु एगरूवस्स असंखेज्जदिभागो अवहारो उवलब्भदे, णाणावरणीयस्स पयडीसु जदि एगा अवहारकालसलागा लब्भदि तो गहिदसेसपयडीसु किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो। एदेहि सादिरेगदोरूवेहि सव्वपयडीसु ओवट्टिदासु

मात्र होकरके मनःपर्ययज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंसे असंख्यातगुणी हैं।

~~योगविभागसे उनका जघन्य ज्ञानसुखादिसे अभिप्रायसे~~ जाना जाता है?

समाधान– 'ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके द्वितीय भागसे कुछ कम हैं' इस सूत्रकी अन्यथानुपपत्तिसे वह जाना जाता है।

अब ज्ञानावरणीयकी सब प्रकृतियोंका आठ कर्मोंके प्रकृतिपुंजमें भाग देनेपर साधिक दो रूप पाये जाते हैं। साधिकताका प्रमाण एक अङ्क का असंख्यातवाँ भाग है। वह इस प्रकारसे– आठ कर्मोंकी सब प्रकृतियोंके समूहमेंसे ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंको कम कर देनेपर एक अवहारशलाका पायी जाती है (१)। अवशेष रूपसे दर्शनावरणीय आदि शेष कर्मोंकी प्रकृतियाँ रहती हैं। फिर उन आसातावेदनीय आदि शेष कर्मोंकी प्रकृतियोंमेंसे पाँच अङ्कोंसे कम मनःपर्ययज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंको ग्रहणकर दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंमें मिला देनेपर मिलायी हुई प्रकृतियोंके साथ दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंके सदृश होती हैं। (इन दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंके उक्त कर्म प्रकृतियोंमेंसे) कम कर देनेपर द्वितीय अवहारशलाका पायी जाती है (२)। फिर ग्रहण की गई प्रकृतियोंसे अवशिष्ट रहीं प्रकृतियोंको ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंके प्रमाणसे करने पर एक अंकका असंख्यातवाँ भाग मात्र अवहार पाया जाता है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंमें यदि एक अवहारशलाका पायी जाती है तो ग्रहण की गई प्रकृतियोंसे शेष रही प्रकृतियोंमें कितनी अवहारशलका पायी जायगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अङ्कका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है। इन साधिक दो अङ्कोंसे सब प्रकृतियोंको अपवर्तित

[1] ताप्रतौ 'अवसेसादो (ओ)' इति पाठः। [2] अ आ-काप्रतिषु 'गहिदावसेसाओ' ताप्रतौ 'गहिदावसेसाओ (सु)' इति पाठः।

णाणावरणीयपयडिपमाणं लब्भदि। एवं दंसणावरणीयस्स वि सादिरेगदोरूवमेत्तो भागहारो साहेयव्वो।

वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो ।। ५ ।।

सुगमं।

असंखेज्जदिभागो ।। ६ ।।

सग-सगपयडीहि सव्वपयडिसमूहे भागे हिदे असंखेज्जलोगमेत्तरूवोवलंभादो। एवं पयडिअट्ठदा समत्ता।

समयपबद्धट्ठदाए ७ ।। ।।

एवमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए सव्वपयडीणं केवडियाओ भागो ।। ८ ।।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एत्थ एवं सुत्तसंबंधो कायव्वो। तं जहा–तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी

करनेपर ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंका प्रमाण उपलब्ध होता है। इसी प्रकार दर्शनावरणीयके भी साधिक दो अङ्क मात्र भागहारको साध लेना चाहिये।

वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय कर्मकी प्रकृतियां सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? ।। ५ ।।

यह सूत्र सुगम है।

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ।। ६ ।।

अपनी अपनी प्रकृतियोंका सब प्रकृतियोंके समूहमें भाग देनेपर असंख्यात लोक मात्र अङ्क पाये जाते हैं। इस प्रकार प्रकृत्यर्थता समाप्त हुई।

समयप्रबद्धार्थताका अधिकार है ।। ७ ।।

यह अधिकारका स्मरण करानेवाला सूत्र सुगम है।

तीस तीस कोडाकोडी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थता से गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मात्र ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी एक एक प्रकृति सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? ।। ८ ।।

यहाँ इस प्रकारसे सूत्रका सम्बन्ध करना चाहिये। यथा–तीस तीस सागरोपम कोडाकोडियोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो इतनी मात्र ज्ञानावरणीय और दर्शना-

एवडिया होदि। एवंविहाओ णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मपयडीओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो त्ति संबंधो कायव्वो। सेसं सुगमं।

दुभागो देसूणो ॥ ९ ॥

एत्थ सादिरेयदोरूवमेत्तभागहारो पुव्वं व साहेयव्वो, गुणगारकयभेदेण सह सादिरेयदोरूवभागहारस्स विरोहाभावादो।

एवं वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयाणं च णेयव्वं ॥ १० ॥

जहा णाणावरणीय-दंसणावरणीयाणं समयपबद्धट्ठदाए सगसगुक्कस्सबंधट्ठिदीहि गुणेदूण पयडीणं पमाणपरूवणा कदा तहा एदेसिं कम्माणं सग-सगुक्कस्सबंधट्ठिदीहि बंधगद्धाहि य समयपबद्धट्ठदं गुणिय पयडिपमाणपरूवणा कायव्वा मंदमेहाविसिस्सबोहणट्ठं।

णवरि विसेसो सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥ ११ ॥

इदि पुच्छिदे।

असंखेज्जदिभागो ॥ १२ ॥

त्ति भाणिदव्वं*। एदाहि समयपबद्धट्ठदापयडीहि सव्वपयडिसमूहे भागे हिदे

वरणीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है। इस प्रकारकी ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं, ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

वे उनके कुछ कम द्वितीय भाग प्रमाण हैं ॥ ९ ॥

यहाँ साधिक दो अंक मात्र भागहारको पहिलेके समान सिद्ध करना चाहिये, क्योंकि, गुणकारकृत भेदके साथ साधिक दो अंक मात्र भागहारका कोई विरोध नहीं है।

इसी प्रकार वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तरायके सम्बन्धमें जानना चाहिये ॥ १० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी समयप्रबद्धार्थताको अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियोंसे गुणित कर प्रकृतियोंके प्रमाणकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन कर्मोंकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियों और बन्धककालोंसे समयप्रबद्धार्थताको गुणित करके प्रकृतियोंके प्रमाणकी प्ररूपणा मन्दबुद्धि शिष्योंके प्रबोधनार्थ करनी चाहिये।

विशेष इतना है कि वे सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं? ॥ ११ ॥

ऐसा पूछने पर।

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ १२ ॥

इस प्रकार कहलाना चाहिये, क्योंकि, इन समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियोंका सब समूहमें भाग

---

* प्रतिषु 'त्ति भाणिदव्वं' सूत्रे सम्मिलितम्।

असंखेज्जरूवोवलंभादो। एवं समयपबद्धट्ठदा समत्ता।

खेत्तपच्चासे त्ति ॥ १३ ॥

एदमहियारसंभालणवयणं।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी जो मच्छो जोयणसहस्सियो सयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरिल्लए तडे अच्छिदो, वेयणसमुग्घादेण समुहदो, काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो, तिण्णि विग्गहकंडयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति खेत्तपच्चासएण ✪ गुणिदाओ सव्व-पयडीणं केवडिओ भागो ॥ १४ ॥

जो मच्छो उववज्जिहदि त्ति एदेण खेत्तपच्चासो परूविदो। एदेण खेत्तपच्चासएण गुणिदाओ समयपबद्धट्ठदाओ पयडीओ णाणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी एवडिया होदि। पुणो एवंविहाओ णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो त्ति सुत्तसंबंधो कायव्वो। सेसं सुगमं।

दुभागो वेसूणो ॥१५॥

देनेपर असंख्यात अंक पाये जाते हैं। इस प्रकार समयप्रबद्धार्थता समाप्त हुई।

क्षेत्रप्रत्यासका अनुयोगद्वारका अधिकार है ॥ १३ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है।

ज्ञानावरण कर्मकी एक एक प्रकृति—जो मत्स्य एक हजार योजन प्रमाण अवगाहनासे युक्त होता हुआ स्वयम्भूरमण समुद्रके बाहिरी तटपर स्थित है, वेदनासमुद्घातको प्राप्त है, काकलेश्यासे संलग्न है, फिरसे मारणान्तिकसमुद्घातसे समुद्घातको प्राप्त है, तीन विग्रहकाण्डकोंको करके अनन्तर समयमें नारकियोंमें उत्पन्न होगा, इस क्षेत्रप्रत्याससे समयप्रबद्धार्थताप्रकृतियोंको गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी होती है। ये प्रकृतियां सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ १४ ॥

'जो मच्छो' यहांसे लेकर 'उववज्जिहदि' तक इस सूत्रद्वारा क्षेत्रप्रत्यासकी प्ररूपणा की गई है। इस क्षेत्रप्रत्याससे गुणित समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियां जितनी होती हैं इतनी मात्र ज्ञानावरणीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है। इस प्रकारकी ज्ञानावरणीय प्रकृतियां सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं, ऐसा सूत्रका सम्बन्ध करना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

वे कुछ कम उनके द्वितीय भाग प्रमाण हैं ॥ १५ ॥

✪ अप्रतौ 'पच्चासेएगुण', आ-का-मप्रतिषु 'पच्चासेण', ताप्रतौ 'पच्चासेण' इति पाठः। ✤ अ-आ काप्रतिषु 'देसूणा' इति पाठः।

कुदो? एत्थतणगुणगारे सव्वपयडीणं संते वि सव्वपयडीओ णाणावरणीयपयडिपमाणेण अवहिरिज्जमाणाओ सादिरेयदोरूवमेत्तओअवहारसलागुवलंभणिमित्ताओ होंति त्ति।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ १६ ॥

एदेसिं कम्माणं जहा णाणावरणीयस्स खेत्तपच्चासपयडिपरूवणा कदा तहा भागाभागो च कायव्वो।

णवरि मोहणीय-अंतराइयस्स सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥ १७ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इदि पुच्छिदे-

असंखेज्जदिभागो ॥ १८ ॥

कारणं सुगमं। वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ*-

वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अण्णवरस्स केवलिस्स केवलसमुग्घादेण समुहदस्स सव्वलोगं गयस्स खेत्तपच्चासएण गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥ १९ ॥

कारण कि सब प्रकृतियोंको ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंके प्रमाणसे अपहृत करनेपर वे साधिक दो अङ्क प्रमाण अवहारशलाकाओंकी उपलब्धिमें निमित्त होती हैं।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ १६ ॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीय कर्मकी क्षेत्रप्रत्यासप्रकृतियोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन तीन कर्मोंके भागाभागकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये।

विशेष इतना है-मोहनीय और अन्तरायकी प्रकृत प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ ? १७ ॥

ऐसा पूछनेपर-

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ १८ ॥

इसका कारण सुगम है। अब वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ बतलाते हैं-

केवलिसमुद्घातसे समुद्घातको प्राप्त होकर सर्व लोकको प्राप्त हुए अन्यतर केवलीके इस क्षेत्र प्रत्याससे समयप्रबद्धार्थकता प्रकृतियोंको गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मात्र वेदनीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है। ये प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? ॥ १९ ॥

ओ अप्रतौ-'भत्तगोत्तो' इति पाठः। * प्रतिषु 'वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ' इति पाठः अनन्तरसूत्रे गम्मिलितम्।

सुगमं ।

असंखेज्जदिभागो ॥ २० ॥

सुगमं ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ २१ ॥

जहा वेयणीयस्स भागाभागो परूविदो तहा एदेसिं तिण्णं कम्माणं परूवेदव्वो । एवं खेत्तपच्चासए त्ति अणुओगद्दारे समत्ते वेयणाभागाभागविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

यह सूत्र सुगम है ।

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ २० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ २१ ॥

जिस प्रकार वेदनीय कर्मके भागाभागकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इन तीन कर्मोंके भागाभागकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इस प्रकार क्षेत्र प्रत्यास अनुयोगद्वारके समाप्त होनेपर वेदनापरिमाण विधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वेयणाअप्पाबहुए त्ति ॥ १ ॥

सुगमं ।

तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति– पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्ति ॥ २ ॥

एवं तिण्णि चेव एत्थ अणुयोगद्दाराणि होंति, अण्णेसिमसंभवादो ।

पयडिअट्ठदाए सव्वत्थोवा गोदस्स कम्मस्स पयडीओ ॥ ३ ॥

कुदो ? दोपरिमाणत्तादो[1] ।

वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ तत्तियाओ[2] चेव ॥ ४ ॥

सादासादभेएण दुब्भावुवलंभादो ।

आउअस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ ५ ॥

को गुणगारो ? दो रूवाणि ।

अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ ६ ॥

केत्तियमेत्तेण ? सगचदुब्भागमेत्तेण ।

मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ ७ ॥

को गुणगारो ? बे-पंचभागूणछरूवाणि ।

वेदनाअल्पबहुत्वका अधिकार है ॥ १ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसमें ये तीन अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं–प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास ॥ २ ॥

इस प्रकार यहाँ तीन ही अनुयोगद्वार हैं, क्योंकि, इनसे अन्य अनुयोगद्वारोंकी यहाँ सम्भावना नहीं है ।

प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा गोत्र कर्मकी प्रकृतियाँ सबसे स्तोक हैं ॥ ३ ॥

क्योंकि, वे दो अङ्क प्रमाण हैं ।

वेदनीय कर्मकी भी उतनी ही प्रकृतियाँ हैं ॥ ४ ॥

क्योंकि, साता व असाताके भेदसे उनकी भी दो संख्या पायी जाती है ।

आयु कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ ५ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार दो का अङ्क है ।

अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ ६ ॥

कितने मात्रसे वे अधिक हैं ? वे अपने चतुर्थ भाग मात्रसे अधिक हैं ।

मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ ७ ॥

गुणकार क्या है? गुणकार दो बटे पाँच ($\frac{2}{5}$) भागसे कम छह अङ्क है ($५\times५\frac{2}{5}=२८$)

---

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'कुदो परिमाणत्तादो' इति पाठः । [2] अ-आ-काप्रतिषु 'तत्तियो' इति पाठः ।

णामस्स कम्मस्स पयडीयो असंखेज्जगुणाओ ॥ ८ ॥

एत्थ गुणगारो असंखेज्जा लोगा ।

दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ ९ ॥

एत्थ वि गुणगारो असंखेज्जा लोगा ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥१०॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखेज्जा कप्पा । एवं पगदिअट्ठदा समत्ता ।

समयपबद्धट्ठदाए सव्वत्थोवा आउअस्स कम्मस्स पयडीयो ॥११॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तपमाणत्तादो ।

गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ १२ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ १३ ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? पण्णारससागरोवमकोडाकोडिमेत्तो ।

अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ १४ ॥

को गुणगारो ? सादिरेयतिण्णिरूवाणि ।

मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ १५ ॥

एत्थ गुणगारो संखेज्जा समया ।

नामकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ ८ ॥

यहाँ गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है ।

दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ ९ ॥

यहाँ भी गुणकार असंख्यात लोक प्रमाण है ।

ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ १० ॥

विशेष कितना है? वह असंख्यात कल्प प्रमाण है। इस प्रकार प्रकृत्यर्थता समाप्त हुई।

समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा आयुकर्मकी प्रकृतियाँ सबसे स्तोक हैं ॥ ११ ॥

क्योंकि, वे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण हैं ।

गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ १२ ॥

गुणकार क्या है ? वह पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है ।

वेदनीयकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ १३ ॥

विशेषका प्रमाण कितना है ? उसका प्रमाण पन्द्रह कोडाकोडी सागरोपम है ।

अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ १४ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार साधिक तीन अङ्क है ।

मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ १५ ॥

यहाँ गुणकार संख्यात समय है ।

णामस्स कम्मस्स पयडीयो असंखेज्जगुणाओ ॥ १६ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा।

दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥१७॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥१८॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखेज्जा कप्पा। एवं समयबद्धट्ठदा त्ति समत्ता।

खेत्तपच्चासए त्ति सव्वत्थोवा अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीयो॥१९॥

कुदो? पंचगुणतीससागरोवमकोडाकोडिगुणिदमहामच्छुक्कस्सखेत्तपमाणत्तादो।

मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीयो संखेज्जगुणाओ ॥ २० ॥

कुदो ? णवसयपंचाणउदिसागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदमहामच्छुक्कस्सखेत्तमेत्तपयडित्तादो। को गुणगारो ? सादिरेयछरूवाणि।

आउअस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २१ ॥

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कुदो ? अंतोमुहुत्तगुणिदघणलोगपमाणत्तादो। को गुणगारो ? जगपदरस्स असंखेज्जदिभागो।

नामकर्मकी प्रकृतियां उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ १६ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है।

दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ १७ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है।

ज्ञानावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ १८ ॥

विशेष कितना है? वह असंख्यात कल्पों प्रमाण है। इस प्रकार समयप्रबद्धार्थता समाप्त हुई।

क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ सबसे स्तोक हैं ॥ १९ ॥

क्योंकि, वे पाँचगुणे तीस (३०×५) कोड़ाकोडी सागरोपमोंसे गुणित महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रके बराबर हैं।

मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ २० ॥

कारण कि वे प्रकृतियाँ नौ सौ पंचानवे कोडाकोडी सागरोपमोंसे गुणित महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रके बराबर हैं। गुणकार क्या है ? गुणकार साधिक (छह) अंक हैं।

आयुकर्मकी प्रकृतियां उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २१ ॥

क्योंकि, वे अन्तर्मुहूर्तसे गुणित घनलोक प्रमाण हैं। गुणकार क्या है ? वह जगप्रतरका असंख्यातवाँ भाग है।

ⓞ अ-आ-काप्रतिषु 'संखेज्ज', ताप्रतौ '(अ) संखेज्ज' इति पाठः।

गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २२ ॥

को गुणगारो ? अंतोमुहुत्तोवट्टिदतीससागरोवमकोडाकोडीओ ।

वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ २३ ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखेज्जलोगमेत्तो ।

णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २४ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २५ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥२६॥

केत्तियमेत्तो विसेसो? पदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो। एवं खेत्तपच्चासो समत्तो।

एवं वेयणाअप्पाबहुगाणुओगद्दारे समत्ते वेयणाखंडो समत्तो ☆ ।

मार्गदर्शक :- **गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २२ ॥**

गुणकार क्या है ? गुणकार अन्तर्मुहूर्तसे अपवर्तित तीस कोडाकोडी सागरोपम है ।

वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ २३ ॥

विशेष कितना है ? वह असंख्यात लोक प्रमाण है।

नामकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २४ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक हैं ।

दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २५ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

ज्ञानावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ २६ ॥

विशेष कितना है ? वह प्रतरके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । इस प्रकार क्षेत्रप्रत्यास समाप्त हुआ ।

इस प्रकार वेदनाअल्पबहुत्व अनुयोगद्वारके समाप्त होनेपर
वेदनाखण्ड समाप्त हुआ ।

☆ प्रतिषु 'वेयणाखंड समत्ता' इति पाठः । ततश्च निम्नपाठः उपलभ्यते- "णमो णाणाराहणाए, णमो दंसणाराहणाए, णमो चरित्ताराहणाए, णमो तवाराहणाए, णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं, णमो भयवदो महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धरिसिस्स, णमो भयवदो गोदमसामिस्स, नमः सकलविमलकेवलज्ञानावभासिने, नमो वीतरागाय महात्मने, नमो वर्द्धमानभट्टारकाय । वेदनाखण्डं समाप्तम् । अबोधे बोधं यो जनयति सदा शिष्यकुमुदे, प्रभूय प्रह्लादी दुरितपरितापोपशमनः । तपोवृत्तिर्यस्य स्फुरति जगदानन्दजननी, जिनध्यानागस्को जयति कुलचन्द्रो मुनिरयम् । नमः सिद्धेभ्यः ॥

- परिशिष्ट -

वेयणाभावविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणाभावविहाणे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति	१
२	पदमीमांसा सामित्तमप्पाबहुए त्ति	३
३	पदमीमांसाए णाणावरणीयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा किं जहण्णा किमजहण्णा ।	४
४	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा जहण्णा वा अजहण्णा वा ।	,,
५	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	१२
६	सामित्तं दुविहं जहण्णपदे उक्कस्सपदे ।	,,
७	सामित्तेण उक्कस्सपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ?	१३
८	अण्णदरेण पंचिंदिएण सण्णिमिच्छाइट्ठिणा सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तगदेण सागारुवजोगेण जागारेण णियमा उक्कस्ससंकिलिट्ठेण बंधल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ।	१३
९	तं एइंदियस्स वा बीइंदियस्स वा तीइंदियस्स वा चउरिंदियस्स वा पंचिंदियस्स वा सण्णिस्स वा असण्णिस्स वा बादरस्स वा सुहुमस्स वा पज्जत्तस्स वा अपज्जत्तस्य वा अण्णदरस्स जीवस्स अण्णदरियाए गदीए वट्टमाणयस्स तस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा ।	१४
१०	तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ।	१५
११	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।	१६
१२	सामित्तेण उक्कस्सपदे वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ।	,,
१३	अण्णदरेण खवगेण सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेण चरिमसमयबद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ।	,,
१४	तं खीणकसायवीदरागछदुमत्थस्स वा सजोगिकेवलिस्स वा तस्स वेयणा भावदो उक्कस्सा ।	१७
१५	तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ।	१८
१६	एवं णामा-गोदाणं ।	,,
१७	सामित्तेण उक्कस्सपदे आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ।	१९
१८	अण्णदरेण अप्पमत्तसंजदेण सागारजागारतप्पाओग्गविसुद्धेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ।	,,
१९	तं सजदस्स वा अणुत्तरविमाणवासिदेवस्स वा तस्स आउववेयणा भावदो उक्कस्सा ।	२०
२०	तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ।	२१
२१	सामित्तेण जहण्णपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	२२
२२	अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयछदुमत्थस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा ।	२२
२३	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२३
२४	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।	,,
२५	सामित्तेण जहण्णपदे वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	,,
२६	अण्णदरखवगस्स चरिमसमयभवसिद्धियस्स असादावेयणीयस्स वेदयमाणस्स तस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा ।	,,
२७	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	,,
२८	सामित्तेण जहण्णपदे मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	,,
२९	अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयसकसाइस्स तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा	,,

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३०	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२६
३१	सामित्तेण जहण्णपदे आउववेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	,,
३२	अण्णदरेण मणुस्सेण पंचिंदियतिरिक्ख-जोणिएण वा परियत्तमाणमज्झिमपरि-णामेण अपज्जत्ततिरिक्खाउअ बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्मं अत्थि तस्स आउअ-वेयणा भावदो जहण्णा ।	२७
३३	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२८
३४	सामित्तेण जहण्णपदे णामवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	२८
३५	अण्णदरेण सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हदसमुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झि-मपरिणामेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्म-मत्थि तस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा ।	,,
३६	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२९
३७	सामित्तेण जहण्णपदे गोदवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	,,
३८	अण्णदरेण बादरतेउ-वाउजीवेण सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण सागार-जागार-सव्वविसुद्धेण हदसमुप्पत्तियकम्मेण उच्चागोदमुव्वेल्लिदूण णीचागोदं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा ।	३०
३९	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	,,
४०	अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि- जहण्णपदे उक्कस्सपदे जहण्णुक्कस्सपदे ।	३१
४१	सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ।	,,
४२	अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३२
४३	णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ भावदो अणंतगुणाओ ।	३२
४४	आउववेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३४
४५	गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
४६	णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा	३५
४७	वेदणीयवेदणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
४८	उक्कस्सपदेण सव्वत्थोवाआउववेयणा भावदो उक्कस्सिया ।	३६
४९	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइय-वेयणा भावदो उक्कस्सियाओ तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	३७
५०	मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	,,
५१	णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सि-याओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ	,,
५२	वेदणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	३८
५३	जहण्णुक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा मोहणीय-वेयणा भावदो जहण्णिया ।	,,
५४	अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३८
५५	णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ	३८
५६	आउअवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा	३८
५७	णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३९
५८	गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३९
५९	वेदणीयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३९
६०	आउअवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	३९

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
६१	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइय-वेयणा भावदो उक्कस्सिया तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	३९
६२	मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	,,
६३	णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	,,
६४	वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	४०
६५	एत्तो उक्कस्सओ चउसट्ठिपदियो महा-	
	दंडओ कायव्वो सुविधिसागर जी महाराज	
६६	सव्वतिव्वाणुभागं सादावेदणीयं ।	४५
६७	जसगित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	,,
६८	देवगदी अणंतगुणहीणा ।	४६
६९	कम्मइयसरीरमणंतगुणहीणं ।	,,
७०	तेयासरीरमणंतगुणहीणं ।	४६
७१	आहारसरीरमणंतगुणहीणं	४७
७२	वेउव्वियसरीरमणंतगुणहीणं ।	४७
७३	मणुसगदी अणंतगुणहीणा ।	४८
७४	ओरालियसरीरमणंतगुणहीणं ।	४८
७५	मिच्छत्तमणंतगुणहीणं ।	४८
७६	केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं असादवेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	४९
७७	अणंताणुबंधिलोभो अणंतगुणहीणो ।	५०
७८	माया विसेसहीणा ।	५०
७९	कोधो विसेसहीणो ।	५०
८०	माणो विसेसहीणो ।	५०
८१	संजलणाए लोभो अणंतगुणहीणो ।	,,
८२	माया विसेसहीणा ।	५१
८३	कोधो विसेसहीणो ।	५१
८४	माणो विसेसहीणो ।	५१
८५	पच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो।	,,
८६	माया विसेसहीणा ।	५२
८७	कोधो विसेसहीणो ।	५२
८८	माणो विसेसहीणो ।	५२
८९	अपच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंत- गुणहीणो ।	५२
९०	माया विसेसहीणा ।	५३
९१	कोधो विसेसहीणो ।	५३
९२	माणो विसेसहीणो ।	५३
९३	आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंत- गुणहीणाणि ।	५३
९४	चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं ।	५४
९५	सुदणाणावरणीयमचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि (वि तुल्लाणि) अणंतगुणहीणाणि ।	५४
९६	ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाहंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	५६
९७	मणपज्जवणाणावरणीयं थीणगिद्धी दाणंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	५६
९८	णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो ।	५६
९९	अरदी अणंतगुणहीणा ।	५६
१००	सोगो अणंतगुणहीणो ।	५७
१०१	भयमणंतगुणहीणं ।	५७
१०२	दुगुंछा अणंतगुणहीणा ।	,,
१०३	णिद्दाणिद्दा अणंतगुणहीणा ।	,,
१०४	पयलापयला अणंतगुणहीणा ।	,,
१०५	णिद्दा अणंतगुणहीणा ।	५७
१०६	पयला अणंतगुणहीणा ।	५८
१०७	अजसकित्ती णीचागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	,,
१०८	णिरयगई अणंतगुणहीणा ।	,,
१०९	तिरिक्खगई अणंतगुणहीणा ।	५८
११०	इत्थिवेदो अणंतगुणहीणो ।	५८
१११	पुरिसवेदो अणंतगुणहीणो ।	५८
११२	रदी अणंतगुणहीणा ।	५९
११३	हस्समणंतगुणहीणं ।	५९
११४	देवाउअमणंतगुणहीणं ।	५९

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
११५	णिरयाउअमणंतगुणहीणं ।	५९
११६	मणुसाउअमणंतगुणहीणं ।	,,
११७	तिरिक्खाउअमणंतगुणहीणं ।	,,
११८	एत्तो जहण्णओ चउसट्ठिपदिओ महादंडओ कायव्वो भवदि ।	६५
११९	सव्वमंदाणुभाग लोभसंजलणं ।	६५
१२०	मायासंजलणमणंतगुणं ।	,,
१२१	माणसंजलणमणंतगुणं ।	६६
१२२	कोधसंजलणमणंतगुणं ।	,,
१२३	मणपज्जवणाणावरणीयं दाणंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ।	,,
१२४	ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ।	,,
१२५	सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ।	६७
१२६	चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं ।	,,
१२७	आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ।	,,
१२८	विरियंतराइयमणंतगुणं ।	,,
१२९	पुरिसवेदो अणंतगुणो ।	६७
१३०	हस्समणंतगुणं ।	६८
१३१	रदी अणंतगुणा ।	६८
१३२	दुगुंछा अणंतगुणा ।	,,
१३३	भयमणंतगुणं ।	६८
१३४	सोगो अणंतगुणो ।	,,
१३५	अरदी अणंतगुणा ।	,,
१३६	इत्थिवेदो अणंतगुणो ।	६९
१३७	णवुंसयवेदो अणंतगुणो ।	६९
१३८	केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ।	,,
१३९	पयला अणंतगुणा ।	६९
१४०	णिद्दा अणंतगुणा ।	७०
१४१	पच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो ।	,,
१४२	कोधो विसेसाहियो ।	,,
१४३	माया विसेसाहिया ।	७०
१४४	लोभो विसेसाहिओ ।	७०
१४५	अपच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो ।	
१४६	कोधो विसेसाहिओ ।	,,
१४७	माया विसेसाहिया ।	७१
१४८	लोभो विसेसाहिओ ।	७१
१४९	णिद्दाणिद्दा अणंतगुणा ।	७१
१५०	थीणगिद्धी अणंतगुणा ।	७१
१५१	पयलापयला अणंतगुणा ।	७१
१५२	अणंताणुबधिमाणो अणंतगुणो ।	७१
१५३	कोधो विसेसाहिओ ।	७२
१५४	माया विसेसाहिया ।	७२
१५५	लोभो विसेसाहिओ ।	७२
१५६	मिच्छत्तमणंतगुणं	,,
१५७	ओरालियसरीरमणंतगुणं ।	,,
१५८	वेउव्वियसरीरमणंतगुणं ।	७३
१५९	तिरिक्खाउअमणंतगुणं ।	,,
१६०	मणुसाउअमणंतगुणं ।	,,
१६१	तेजइयसरीरमणंतगुणं ।	,,
१६२	कम्मइयसरीरमणंतगुणं ।	,,
१६३	तिरिक्खगदी अणंतगुणा ।	,,
१६४	णिरयगदी अणंतगुणा ।	,,
१६५	मणुसगदी अणंतगुणा ।	७४
१६६	देवगदी अणंतगुणा	,,
१६७	णीचागोदमणंतगुणं ।	,,
१६८	अजसकित्ती अणंतगुणा ।	,,
१६९	अजसकित्ती अणंतगुणा ।	,,
१६९	असादावेदणीयमणंतगुणणं ।	,,
१७०	जसकित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ।	७५
१७१	सादावेदणीयमणंतगुणं ।	७५
१७२	णिरयाउअमणंतगुणं ।	७५
१७३	देवाउअमणंतगुणं ।	७५
१७४	आहारसरीरमणंतगुणं ।	७५

पढमा चूलिया

१७५	सव्वत्थोवो दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिगुणो ।	८०

सम्पादक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१७६	संजदासंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८०
१७७	अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८१
१७८	अणंताणुबंधी विसंजोएंतस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८२
१७९	दंसणमोहखवगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८३
१८०	कसायउवसामगस्स गुणसेडीगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८१	उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स-गुणसेडिगुणो असंज्जगुणो ।	८४
१८२	कसायखवगस्स गुणसेडगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८३	खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८४	अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८५	जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८५
१८६	सव्वत्थोवो जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो ।	,,
१८७	अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८८	खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१८९	कसायखवगस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	८६
१९०	उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९१	कसायउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९२	दसणमोहक्खवयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९३	अणंताणुबधिविसंजोएंतस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९४	अधापत्तसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	८६
१९५	संजदासंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९६	दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिकालो सखेज्जगुणो ।	,,

विदिया चूलिया

१९७	एत्तो अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणदाए तत्थ इमाणि बारस अणुयोगद्दाराणि ।	९७
१९८	अविभागपडिच्छेदपरूवणा ट्ठाणपरूवणा अंतरपरूवणा कंडयपरूवणा ओजजुम्मपरूवणा छट्ठाणपरूवणा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समयपरूवणा वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूवणा पज्जवसाणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ।	९८
१९९	अविभागपडिच्छेदपरूवणदाए एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि केवडिया अविभागपडिच्छेदा ? अणंता अविभागपडिच्छेदा सव्वजीवेहि अणंतगुणा । एवदिया अविभागपडिच्छेदा ।	९९
२००	ठाणपरूवणदाए केवडियाणि ट्ठाणाणि ? असंखेज्जलोगट्ठाणाणि । एवदियाणि ट्ठाणाणि ।	१११
२०१	अंतरपरूवणदाए एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स केवडियमंतरं ? सव्वजीवेहि अणंतगुणं । एवडियमंतरं ।	११४
२०२	कंडयपरूवणदाए अत्थि अणंतभागपरिवड्ढिकंडयं असंखेज्जपरिवड्ढिकंडयं संखेज्जभागपरिवड्ढिकंडयं संखेज्जगुणपरिवड्ढिकंडयं असंखेज्जगुणपरिवड्ढिकंडयं अणंतगुणपरिवड्ढिकंडयं ।	१२८
२०३	ओजजुम्मपरूवणदाए अविभागपडिच्छेदाणि कदजुम्माणि, ट्ठाणाणि कदजुम्माणि कदजुम्माणि, कंडयाणि ।	१२४

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२०४	छट्ठाणपरूवणदाए अणंतभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए (वड्ढिदा ?) सव्वजीवेहि अणंतभागपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	१२५
२०५	असंखेज्जभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ।	१५१
२०६	असंखेज्जलोगभागपरिवड्ढीए । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२०७	संखेज्जभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ।	१५४
२०८	जहण्णयस्य असंखेज्जयस्स रूवूण-यस्स संखेज्जभागवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२०९	सखेज्जगुणपरिवड्ढी काय परिवड्ढीए ।	१५५
२१०	जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूण-यस्स संखेज्जगुणपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२११	असंखेज्जगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ।	१५६
२१२	असखेज्जलोगगुणपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२१३	अणंतगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ।	१५७
२१४	सव्वजीवेहि अणंतगुणपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२१५	हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए अणंतभागब्भहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं ।	१९३
२१६	असंखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं ।	१९४
२१७	संखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	१९५
२१८	संखेज्जगुणब्भहियं कंडयं गंतूण असंखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	,,
२१९	असंखेज्जगुणब्भहियं कंडयं गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	,,
२२०	अणंतभागब्भहियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण संखेज्जभागब्भहियट्ठाणं ।	१९६
२२१	असंखेज्जभागब्भहियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण संखेज्जगुणब्भहियट्ठाणं ।	१९७
२२२	संखेज्जभागब्भहियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण असंखेज्जगुणब्भहियट्ठाणं ।	१९७
२२३	संखेज्जगुणब्भहियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	१९८
२२४	संखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंडयघणो वेकंडयवग्गा कंडयं च ।	,,
२२५	असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंडयघणो वेकंडयवग्गा कंडयं च ।	१९९
२२६	अणंतगुणस्स हेट्ठदो संखेज्जभागब्भहियाणं कंडयघणो वेकंडयवग्गा कंडयं च ।	,,
२२७	असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंडयवग्गावग्गो तिण्णिकंडयघणा । तिण्णिकंडयवग्गा कंडय च ।	२००
२२८	अणंतगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंडयवग्गावग्गो तिण्णि कंडयघणा तिण्णि कंडयवग्गा कंडयं च ।	२०१
२२९	अणंतगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाण कंडयो पंचहदो चत्तारि कंडयवग्गावग्गा छकंडयघणा चत्तारि कंडयवग्गा कंडयं च ।	,,
२३०	समयपरूवणदाए चदुसमयइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	२०२
२३१	पंचसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जालोगा ।	२०३
२३२	एवं छसमइयाणि सत्तसमइयाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	,,
२३३	पुणरवि सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	,,

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२३४	एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	२०४
२३५	उवरि तिसमइयाणि बिसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	२०५
२३६	एत्थ अप्पाबहुअं ।	,,
२३७	सव्वत्थोवाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि ।	,,
२३८	दोसु वि पासेसु सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि दो वि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२३९	एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि ।	२०६
२४०	उवरि तिसमइयाणि ।	,,
२४१	विसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	२०७
२४२	सुहुमतेउक्काइया पवेसणेण असंखेज्जा लोगा ।	२०८
२४३	अगणिकाइया असंखेज्जागुणा ।	,,
२४४	कायट्ठिदी असंखेज्जगुणा ।	,,
२४५	अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२४६	वड्ढिपरूवणदाए अत्थि अणंतभागवड्ढि-हाणी असंखेज्जभागवड्ढिहाणी संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी अणंतगुणवड्ढि-हाणी ।	२०९
२४७	पंचवड्ढि-पंचहाणीओ केवचिरं कालादो होंति ?	,,
२४८	जहण्णेण एगसमओ	२१०
२४९	उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो	,,
२५०	अणंतगुणवड्ढि-हाणीयो केवचिरं कालादो होंति ।	,,
२५१	जहण्णेण एगसमओ ।	,,
२५२	उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।	२११
२५३	जवमज्झपरूवणदाए अणंतगुणवड्ढी अणंतगुणहाणी च जवमज्झं ।	२१२
२५४	पज्जवसाणपरूवणदाए अणंतगुणस्स उवरि अणंतगुणं भविस्सदि त्ति पज्जवसाणं ।	२१३
२५५	अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि दुवे अणुयोगद्दाराणि अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ।	२१४
२५६	तत्थ अणंतरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि ।	,,
२५७	असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२५८	संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२५९	संखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	२१५
२६०	असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	२१६
२६१	अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२६२	परंपरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि ।	२१७
२६३	असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२६४	संखेज्जभागब्भहियाणि संखेज्जगुणाणि ।	,,
२६५	संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ।	२१८
२६६	असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,
२६७	अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।	,,

तदिया चूलिया

२६८	जीवसमुदाहारे त्ति तत्थ इमाणि अट्ठ अणुयोगद्दाराणि—एयट्ठाण-जीवपमाणाणुगमो णिरंतरट्ठाणजीव-	

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	पमाणाणुगमो सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णाणाजीवकालपमाणाणुगमो वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूवणा फोसणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ।	२४१
२६९	एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि जीवा जदि होंति एक्को वा दो वा तिण्णि वा जाव उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	२४२
२७०	णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि अविरहिदट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	२४४
२७१	सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि विरहिदाणि ट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।	२४५
२७२	णाणाजीवकालपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि णाणाजीवा केवचिरं कालादो होंति ।	,,
२७३	जहण्णेण एगसमओ ।	२४६
२७४	उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	,,
२७५	वड्ढिपरूवणदाए तत्थ इमाणि दुवे अणुयोगद्दाराणि अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ।	,,
२७६	अणंतरोवणिधाए जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे थोवा जीवा	२४७
२७७	विदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ।	२४८
२७८	तदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ।	२४९
२७९	एवं विसेसाहिया विसेसाहिया जाव जवमज्झं ।	२५०
२८०	तेण परं विसेसहीणा ।	२५१
२८१	एवं विसेसहीणा विसेसहीणा जाव उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति ।	,,
२८२	परंपरोवणिधाए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणजीवेहिंतो तत्तो असंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणवड्ढिदा ।	२६३
२८३	एवं दुगुणवड्ढिदा दुगुणवड्ढिदा जाव जवमज्झं त्ति ।	२६४
२८४	तेण परमसंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणहीणा ।	,,
२८५	एवं दुगुणहीणा जाव उक्कस्सिय-अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणं त्ति	,,
२८६	एगजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुण-वड्ढिहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जा लोगा ।	,,
२८७	णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुण-वड्ढि-(हाणि-) ट्ठाणंतराणि आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	२६५
२८८	णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाण-दुगुणवड्ढि-हाणिट्ठाणंतराणि थोवाणि ।	,,
२८९	एयजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुण-वड्ढि-हाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुण ।	,,
२९०	जवमज्झपरूवणाए ट्ठाणाणमसंखेज्ज-दिभागे जवमज्झं ।	२६६
२९१	जवमज्झस्स हेट्ठदो ट्ठाणाणि थोवाणि	२६७
२९२	उवरिमसंखेज्जगुणाणि ।	,,
२९३	फोसणपरूवणदाए तीदे काले एय-जीवस्स उक्कस्सए अणुभागबंधज्झ-साणट्ठाणे फोसणकालो थोवो ।	,,
२९४	जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाण-ट्ठाणे फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	२९८
२९५	कंडयस्स फोसणकालो तत्तियो चेव ।	२६९
२९६	जवमज्झफोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	,,
२९७	कंडयस्स उवरि फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	,,
२९८	जवमज्झस्स उवरि कंडयस्स हेट्ठदो फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	२७०
२९९	कंडयस्स उवरि कंडयस्स हेट्ठदो फोसणकालो तत्तियो चेव ।	,,
३००	जवमज्झस्स उवरि फोसणकालो विसेसाहिओ ।	२७०

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३०१	कंडयस्स हेट्ठदो फोसणकालो विसेसाहिओ ।	२७१
३०२	कंडयस्स उवरिं फोसणकालो विसेसाहिओ ।	,,
३०३	सव्वेसु ट्ठाणेसु फोसणकालो विसेसाहिओ ।	,,
३०४	अप्पाबहुए त्ति उक्कस्सए अणुभाग-बंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा थोवा ।	२७२
३०५	जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा असंखेज्जगुणा ।	,,
३०६	कंडयस्स जीवा तत्तिया चेव ।	२७३
३०७	जवमज्झस्स जीवा असंखेज्जगुणा ।	,,
३०८	कंडयस्स उवरिं जीवा असंखेज्जगुणा ।	,,
३०९	जवमज्झस्स उवरि कंडयस्स हेट्ठिमदो जीवा असंखेज्जगुणा ।	,,
३१०	कंडयस्स उवरि जवमज्झस्स हेट्ठिमदो जीवा तत्तिया चेव ।	,,
३११	जवमज्झस्स उवरिं जीवा विसेसाहिया ।	,,
३१२	कंडयस्स हेट्ठदो जीवा विसेसाहिया ।	२७४
३१३	कंडयस्स उवरिं जीवा विसेसाहिया ।	,,
३१४	सव्वेसु ट्ठाणेसु जीवा विसेसाहिया ।	,,

८ वेयणापच्चयविहाणसुत्ताणि

१	वेयणापच्चयविहाणे त्ति ।	२७५
२	णोगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीय-वेयणा पाणादिवादपच्चए ।	,,
३	मुसावादपच्चए ।	२७६
४	अदत्तादाणपच्चए ।	२८१
५	मेहुणपच्चए ।	२८२
६	परिग्गहपच्चए ।	,,
७	रादिभोयणपच्चए	,,
८	एवं कोह-माण-माया-लोह-राग-दोस-मोह-पेम्मपच्चए ।	२८३
९	णिदाणपच्चए ।	२८४
१०	अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण रइ-अरइ-उवहि-णियदि-माण-माय-मोस मिच्छणाण-मिच्छदंसण-पओअपच्चए ।	२८५
११	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	२८७
१२	उज्जुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए पयडिपदेसग्गं ।	२८८
१३	कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा	,,
१४	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	२९०
१५	सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।	,,
१६	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	२९३

९ वेयणासामित्तविहाणसुत्ताणि

१	वेयणासामित्तविहाणे त्ति ।	२९४
२	णोगम-ववहाराणं णाणावरणीय-वेयणा सिया जीवस्स वा ।	२९५
३	सिया णोजीवस्स वा ।	२९६
४	सिया जीवाण वा ।	,,
५	सिया णोजीवाणं वा ।	२९७
६	सिया जीवस्स च णोजीवस्स च ।	,,
७	सिया जीवस्स च णोजीवाणं च ।	२९८
८	सिया जीवाणं च णोजीवस्स च ।	२९८
९	सिया जीवाणं च णोजीवाणं च ।	२९९
१०	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	,,
११	संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा जीवस्स वा ।	,,
१२	जीवाणं वा ।	३००
१३	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	,,
१४	सद्दुजुसदाणं णाणावरणीयवेयणा जीवस्स ।	,,
१५	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३०१

१० वेयणावेयणविहाणसुत्ताणि

१	वेयणावेयणविहाणे त्ति ।	३०२
२	सव्वं पि कम्मं पयडि त्ति कट्टु णेगमणयस्स ।	,,
३	णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झ-माणिया वेयणा ।	३०४
४	सिया उदिण्णा वेयणा ।	३०५

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
५	सिया उवसंता वेयणा ।	३०६
६	सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ ।	३०७
७	सिया उदिण्णाओ वेयणाओ ।	३०८
८	सिया उवसंताओ वेयणाओ ।	३०९
९	सिया बज्झमणिया च उदिण्णा च ।	३१०
१०	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च।	३११
११	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च ।	३१२
१२	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च ।	३१३
१३	सिया बज्झमाणिया (च) उवसंता च।	३१५
१४	सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च ।	,,
१५	सिया बज्झमाणियाओ च उवसंता च।	३१६
१६	सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च ।	,,
१७	सिया उदिण्णा च उवसंता च ।	३१८
१८	सिया उदिण्णा च उवसंताओ च ।	३२०
१९	सिया उदिण्णाओ च उवसंता च ।	,,
२०	सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च ।	३२१
२१	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ।	३२६
२२	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च ।	३२७
२३	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च ।	३२८
२४	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ।	३२९
२५	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंता च ।	३३१
२६	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च ।	,,
२७	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च ।	३३२
२८	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ।	३३३
२९	एवं सत्तण्णं कम्माणं	३४२
३०	ववहारणयस्स णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ।	३४३
३१	सिया उदिण्णा वेयणा ।	३४५
३२	सिया उवसंता वेयणा ।	,,
३३	सिया उदिण्णाओ वेयणाओ ।	३४६
३४	सिया उवसंताओ वेयणाओ ।	३४७
३५	सिया बज्झमाणिया (च) उदिण्णा च ।	,,
३६	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च ।	३४८
३७	सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ।	३४९
३८	सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च ।	३५०
३९	सिया उदिण्णा च उवसंता च ।	,,
४०	सिया उदिण्णा च उवसंताओ च ।	३५१
४१	सिया उदिण्णाओ च उवसंता च ।	३५२
४२	सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च ।	,,
४३	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ।	३५३
४४	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च ।	३५४
४५	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च ।	,,
४६	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ।	३५५
४७	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३५६
४८	संगहणयस्स णाणावरणीयवेदणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ।	३५६
४९	सिया उदिण्णा वेयणा ।	३५७
५०	सिया उवसंता वेयणा ।	३५८
५१	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च ।	,,
५२	सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ।	३५९
५३	सिया उदिण्णा च उवसंता च ।	३६०
५४	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ।	३६१
५५	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३६२
५६	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा उदिण्णफलपत्तविवागा वेयणा ।	,,
५७	एव सत्तण्णं कम्माणं ।	३६३
५८	सद्दणयस्स अवत्तव्व ।	,,

मार्गदर्शिका : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	११ वेयणागदिविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणागदिविहाणे त्ति ।	३६४
२	णेगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीयवेयणा सिया अवट्ठिदा ।	३६५
३	सिया ट्ठिदाट्ठिदा ।	३६६
४	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।	३६७
५	वेयणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ।	,,
६	सिया अट्ठिदा ।	,,
७	सिया ट्ठिदाट्ठिदा ।	३६८
८	एवमाउव-णामा-गोदाणं ।	,,
९	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा सिया ट्ठिदा।	,,
१०	सिया अट्ठिदा ।	,,
११	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३६९
१२	सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।	,,
	१२ वेयणाअणंतरविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणाअणंतरविहाणे त्ति ।	३७०
२	णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ।	३७१
३	परंपरबंधा ।	,,
४	तदुभयबंधा ।	,,
५	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३७२
६	संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ।	,,
७	परंपरबंधा ।	३७३
८	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	,,
९	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा परंपरबंधा ।	,,
१०	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३७४
११	सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।	,,
	१३ वेयणासण्णियासविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणासण्णियासविहाणे त्ति ।	३७५
२	जो सो वेयणासण्णियासो सो दुविहो-सत्थाणवेयणासण्णियासो चेव परत्थाणवेयणासण्णियासो चेव ।	,,
३	जो सो सत्थाणवेयणासण्णियासो सो दुविहो-जहण्णओ सत्थाणवेयणासण्णियासो चेव उक्कस्सओ सत्थाणवेयणासण्णियासो चेव ।	३७६
४	जो सो जहण्णओ सत्थाणवेयणासण्णियासो सो थप्पो ।	,,
५	जो सो उक्कस्सओ सत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ।	३७६
६	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३७७
७	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ।	,,
८	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३७८
९	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
१०	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ।	३७९
११	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
१२	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	३७९
१३	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ।	,,
१४	अणंतभागहीणा वा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा अणंतगुणहीणा वा ।	३८०
१५	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३८१
१६	णियमा अणुक्कस्सा ।	३८१
१७	चउट्ठाणपदिदा, असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ।	३८२
१८	तस्स कालदो कि उक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३८४
१९	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
२०	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा, असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ।	३८५

आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज अभिनन्दन ग्रन्थ सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२१	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३८६
२२	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
२३	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ।	,,
२४	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३८७
२५	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
२६	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ।	,,
२७	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सादो	३८८
२८	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
२९	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
३०	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९०
३१	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
३२	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ।	,,
३३	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९१
३४	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
३५	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
३६	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९२
३७	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
३८	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
३९	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९३
४०	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
४१	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ।	,,
४२	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।	३९५
४३	जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९६
४४	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ।	,,
४५	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
४६	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
४७	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ।	,,
४८	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९७
४९	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ।	,,
५०	जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९७
५१	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
५२	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३९८
५३	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ।	,,
५४	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
५५	उक्कस्सा ।	,,
५६	जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०१
५७	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
५८	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ।	,,
५९	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
६०	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणाहीणा ।	,,
६१	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०२
६२	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ।	,,
६३	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
६४	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
६५	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०३
६६	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
६७	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा, असंखेज्जभागहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ।	,,
६८	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०४
६९	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणा ।	,,
७०	एवं णामा गोदाणं ।	,,
७१	जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०५
७२	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ।	,,
७३	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
७४	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ।	,,
७५	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०६
७६	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ।	,,
७७	जस्स आउअवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४०७
७८	णियमा अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ।	,,

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
७९	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०८
८०	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
८१	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
८२	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
८३	जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
८४	णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा।	४०९
८५	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४१०
८६	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
८७	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
८८	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
८९	जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४११
९०	णियमा अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	,,
९१	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४१२
९२	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
९३	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
९४	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	,,
९५	जो सो थप्पो जहण्णओ सत्थाणवेयणसण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि।	४१३
९६	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४१४
९७	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
९८	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४१५
९९	जहण्णा।	,,
१००	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०१	जहण्णा।	,,
१०२	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०३	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा।	४१६
१०४	तस्स कालदो किं जहण्णा (अजहण्णा)	४१६
१०५	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१०६	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०७	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	४१८
१०८	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०९	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा।	,,
११०	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४१९
१११	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
११२	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२०
११३	जहण्णा।	,,
११४	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
११५	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
११६	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२१
११७	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
११८	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
११९	जहण्णा।	,,
१२०	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	,,

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१२१	जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२१
१२२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४२२
१२३	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१२४	जहण्णा।	,,
१२५	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१२६	जहण्णा (वा) अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१२७	जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२३
१२८	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१२९	तस्स कालदो किं जहण्णा (अजहण्णा)।	,,
१३०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४२४
१३१	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१३२	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१३३	जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१३४	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
१३५	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२५
१३६	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१३७	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१३८	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१३९	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२६
१४०	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
१४१	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२७
१४२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४२७
१४३	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१४४	जहण्णा।	,,
१४५	जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१४६	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४२८
१४७	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१४८	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१४९	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२८
१५०	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१५१	जस्स आउअवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२९
१५२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१५३	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१५४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१५५	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३०
१५६	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा।	,,
१५७	जस्स आउअवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१५८	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१५९	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३१
१६०	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,

मुनि विद्यासागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१६१	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३१
१६२	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१६३	जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३२
१६४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१६५	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१६६	जहण्णा वा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१६७	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३३
१६८	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१६९	जस्स णामवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१७०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१७१	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१७२	जहण्णा।	४३४
१७३	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१७४	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१७५	जस्स णामवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३४
१७६	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१७७	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३५
१७८	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,
१७९	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८०	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा।	,,
१८१	जस्स णामवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३६
१८२	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	४३६
१८३	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३६
१८४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४३७
१८५	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८६	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१८७	जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८८	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	४३७
१८९	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३८
१९०	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१९१	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४३९
१९३	जस्स गोदवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
१९५	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९६	जहण्णा।	,,
१९७	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९८	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	४४०
१९९	जस्स गोदवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२००	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
२०१	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२०२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
२०३	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४४१
२०४	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
२०५	जस्स गोदवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२०६	जहण्णा वा अजहण्णा वा जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	४४२

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२०७	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा	४४२
२०८	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया ।	,,
२०९	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२१०	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।	,,
२११	जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा	४४३
२१२	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
२१३	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२१४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया ।	४४३
२१५	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा	४४४
२१६	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया	
२१७	जो सो परत्थाणवेयणसण्णियासो सो दुविहो- जहण्णओ परत्थाण-वेयणसण्णियासो चेव उक्कस्सओ परत्थाणवेयणसण्णियासो चेव ।	,,
२१८	जो सो जहण्णओ परत्थाणवेयण-सण्णियासो सो थप्पो ।	४४४
२१९	जो सो उक्कस्सओ परत्थाणवेयण-सण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ।	४४५
२२०	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माणमाउअ-वज्जाणं दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
२२१	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्क-स्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा ।	,,
२२२	अणंतभागहीणा वा असंखेज्ज-भागहीणा वा ।	४४६
२२३	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किमु-क्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४४७
२२४	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्ज-गुणहीणा ।	४४७
२२५	एवं छण्णं कम्माणमाउववज्जाणं ।	,,
२२६	जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४४८
२२७	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
२२८	असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्ज-भागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ।	४४९
२२९	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मो-हणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
२३०	उक्कस्सा ।	,,
२३१	तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोद वेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
२३२	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्ज-गुणहीणा ।	४५०
२३३	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।	४५०
२३४	जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सिया णत्थि ।	४५०
२३५	तस्स आउव-णामा-गोदवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
२३६	उक्कस्सा ।	४५१
२३७	एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।	,,
२३८	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माणमाउअ-वज्जाणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
२३९	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्क स्सादो अणुक्कस्सा असंखेज्ज-भागहीणा ।	,,
२४२	तस्स आउअवेयणा कालदो किमु-क्कस्सा अणुक्कस्सा ।	४५२

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२४१	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
२४३	जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२४४	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा।	४५४
२४५	असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा।	,,
२४६	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५५
२४७	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा।	,,
२४८	तस्स वेयणीय-आउव-णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२४९	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
२५०	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	४५६
२५१	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो सिया अत्थि सिया णत्थि।	,,
२५२	जदि अत्थि भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५६
२५३	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	४५७
२५४	जस्स मोहणीयवेयणा भावदो णत्थि।	,,
२५५	तस्स आउअवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५८
२५६	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
२५७	तस्स णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५९
२५८	उक्कस्सा।	,,
२५९	एवं णामा-गोदाणं।	,,
२६०	जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५९
२६१	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
२६२	जो सो थप्पो जहण्णओ परत्थाण-वेयणासण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि।	४६०
२६३	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४६०
२६४	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा बिट्ठाणपदिदा।	४६१
२६५	अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा।	,,
२६६	तस्स वेदणीय-णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा।	४६२
२६७	णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया।	,,
२६८	तस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि।	,,
२६९	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२७०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
२७१	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं।	४६३
२७२	जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं वेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि।	,,
२७३	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४६३
२७४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
२७५	तस्स णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४६४

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२७६	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा विट्ठाणपदिदा ।	४६४
२७७	अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्ज-भागब्भहिया ।	,,
२७८	एवं णामा-गोदाणं ।	४६५
२७९	जस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जभाग-ब्भहिया ।	,,
२८१	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया ।	४६६
२८३	जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८४	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
२८५	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४६८
२८६	जहण्णा ।	४६९
२८७	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	,,
२८८	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८९	जहण्णा ।	,,
२९०	तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२९१	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया ।	४७०
२९२	तस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ।	,,
२९३	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।	,,
२९४	जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय मोहणीय-अंतराइयाणं वेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ।	४७०
२९५	तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२९६	जहण्णा ।	४७१
२९७	एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।	,,
२९८	जस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२९९	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया ।	,,
३००	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३०१	जहण्णा ।	४७२
३०२	तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३०३	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।	,,
३०४	तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जह-ण्णिया णत्थि ।	४७३
३०५	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।	,,
३०६	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ।	४७३
३०७	तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३०८	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	,,
३०९	जस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४७४
३१०	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	,,

सम्पादक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३११	जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४६४
३१२	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
३१३	तस्स णामवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४७५
३१४	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ।	,,
३१५	जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३१६	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।	,,
३१७	तस्स आउअवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३१८	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ।	४७६
३१९	जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३२०	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।	,,

वेयणापरिमाणविहाणसुत्ताणि

१	वेयणापरिमाणविहाणे त्ति ।	४७७
२	तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि- पगदिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्त- पच्चासए त्ति।	४७८
३	पगदिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावर- णीयकम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
४	णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स असंखेज्जलोगपयडीओ ।	४७९
५	एवडियाओ पयडीओ ।	४८०
६	वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	४८१
७	वेयणीयस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ।	,,
८	एवडियाओ पयडीओ ।	४८१
९	मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
१०	मोहणीयस्स कम्मस्स अट्ठावीस पयडीओ ।	४८२
११	एवडियाओ पयडीओ ।	,,
१२	आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
१३	आउअस्स कम्मस्स चत्तारि पयडीओ ।	४८३
१४	एवडियाओ पयडीओ ।	४८३
१५	णामस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
१६	णामस्स कम्मस्स असंखेज्जलोगमेत्त- पयडीओ ।	,,
१७	एवडियाओ पयडीओ ।	४८४
१८	गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
१९	गोदस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ।	,,
२०	एवडियाओ पयडीओ ।	४८५
२१	अंतराइयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
२२	अंतराइयस्स कम्मस्स पंच पयडीओ ।	,,
२३	एवडियाओ पयडीओ ।	४८५
२४	समयपबद्धट्ठदाए ।	,,
२५	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइ- यस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
२६	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठ- दाए गुणिदाए ।	४८६
२७	एवडियाओ पयडीओ ।	४८७
२८	वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
२९	वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीसं-पण्णारससागरोवमकोडाको-	

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	डीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ।	४८७
३०	एवडियाओ पयडीओ ।	४८९
३१	मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	४९०
३२	मोहणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सत्तरि-चत्तालीस-वीस-पण्णारस-दस सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्ध-ट्ठदाए गुणिदाए ।	,,
३३	एवडियाओ पयडीओ ।	४९१
३४	आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
३५	आउअस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तं समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ।	,,
३६	एवडियाओ पयडीओ ।	४९२
३७	णामस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
३८	णामस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी वीसं-अट्ठारस-सोलस-पण्णारस-चोद्दस्स-बारस-दससागरोवमकोडाकोडीयो समय-पबद्धट्ठदाए गुणिदाए ।	,,
३९	एवडियाओ पयडीओ ।	४९६
४०	गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
४१	गोदस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी वीसं-दससागरोवमकोडाकोडीओ समय-पबद्धट्ठदाए गुणिदाए ।	४९७
४२	एवडियाओ पयडीओ ।	,,
४३	खेत्तपच्चासे त्ति ।	,,
४४	णाणावरणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	,,
४५	णाणावरणीयस्स कम्मस्स जो मच्छो जोयणसहस्सओ सयंभूरमणसमुद्दस्स बाहिरिल्लए तडे अच्छिदो, वेयणसमु-ग्घादेण समुहदो, वाउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणांतियसमुग्घादेण समु-हदो, तिण्णि विग्गहगदिकडयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति ।	४९८
४६	खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ ।	,,
४७	एवडियाओ पयडीओ ।	,,
४८	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंत-राइयाणं ।	,,
४९	वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ	
	पयडीओ । मार्गदर्शक :- आचार्यश्री श्री सुविधिसागर जी महाराज	४९९
५०	वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलिसमुग्घादेण समुग्घादस्स सव्वलोगं गदस्स ।	,,
५१	खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ ।	,,
५२	एवडियाओ पयडीओ ।	५००
५३	एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।	,,
	वेयणाभागाभागविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणाभागाभागविहाणे त्ति ।	५०१
२	तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि-पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्त-पच्चासे त्ति ।	,,
३	पयडिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावर-णीयस्सकम्मस्स कम्मस्स पयडीओ सव्व-पयडीणं केवडियो भागो ।	,,
४	दुभागो देसूणो ।	,,
५	वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो ।	५०४
६	असंखेज्जदिभागो ।	,,
७	समयपबद्धट्ठदाए ।	,,
८	णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स-कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीसं तीसं सागरोव-मकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ।	,,
९	दुभागो देसूणो ।	५०५
१०	एवं वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयाणं च णेयव्वं ।	,,

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
११	णवरि विसेसो गुणपयडीणं केवडिओ भागो ।	५०५
१२	असंखेज्जदि भागो ।	,,
१३	खेत्तपच्चासे त्ति ।	५०६
१४	णाणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी जो महामच्छो जोयणसहस्सियो सयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरिल्लए तडे अच्छिदो, वेयणासमुग्घादेण समुहदो काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो तिण्णि विग्गहकंडयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ।	,,
१५	दुभागो देसूणो ।	,,
१६	एव दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।	५०७
१७	णवरि मोहणीय-अंतराइयस्स सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ।	,,
१८	असंखेज्जदिभागो ।	,,
१९	वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलसमुग्घादेण समुहदस्स सव्वलोगं गदस्स खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो ।	,,
२०	असंखेज्जदिभागो ।	५०८
२१	एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।	,,
	वेयणाअप्पाबहुगसुत्ताणि	
१	वेयणाअप्पाबहुए त्ति ।	५०९
२	तत्थ इमाणि तिण्णि अणुयोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति-पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्ति ।	,,
३	पयडिअट्ठदाए सव्वत्थोवा गोदस्स कम्मस्स पयडीओ ।	,,
४	वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ तत्तियाओ चेव ।	,,
५	आउअस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्ज-	५०९
६	अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ।	,,
७	मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ।	५१०
८	णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	,,
९	दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	,,
१०	णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहिओ ।	,,
११	समयपबद्धट्ठदाए सव्वत्थोवा आउअस्स कम्मस्स पयडीओ ।	,,
१२	गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	,,
१३	वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहिओ ।	,,
१४	अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ।	,,
१५	मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ।	,,
१६	णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	५११
१७	दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	,,
१८	णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ।	,,
१९	खेत्तपच्चासए त्ति ।	,,
२०	सव्वत्थोव पयडीओ ।	,,
२१	मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ।	,,
२२	आउअस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	५१२
२३	गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	,,

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२४	वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ।	५१२
२५	णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्ज-गुणाओ ।	,,
२६	दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ।	५१२
२७	णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ।	,,

गाहा-सत्ताणि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

गाथा	पृष्ठ
सादं जसुच्च-दे-कं ते-आ-वे-मणु अणंतगुणहीणा ।	४०
ओ-मिच्छ-के-असादं वीरिय-अणंताणु-संजलणा ।। १ ।।	
अट्ठाभिणि-परिभोगे चक्खू तिण्णि तिय पंचणोकसाया ।	४२
णिद्दाणिद्दा पयलापयला णिद्दा य पयला य ।। २ ।।	
अजसो णीचागोदं णिरय-तिरिक्खगइ इत्थि पुरिसो य ।	४४
रदि-हस्सं देवाऊ णिरयाऊ मणुय-तिरिक्खाऊ ।। ३ ।।	
संज-मण-दाणमोही लाभं सुद-चक्खु-भोग चक्खुं च ।	६२
आभिणिबोहिय परिभोग विरिय णव णोकसायाइं ।। ४ ।।	
के-प-णि-अट्ठ-त्तिय-अण-मिच्छा-ओ-वे-तिरिक्ख-मणुसाऊ ।	६३
तेया-कम्मसरीरं तिरिक्ख-णिरय-देव-मणुवगई ।। ५ ।।	
णीचागोदं अजसो असादमुच्चं जसो तहा सादं ।	६४
णिरयाऊ देवाऊ आहारसरीरणामं च ।। ६ ।।	
सम्मत्तुप्पत्ती वि य सावय-विरदे अणंतकम्मंसे ।	७८
दंसणमोहक्खवए कसायउवसामए य उवसंते ।। ७ ।।	
खवए य खीणमोहे जिणे य णियमा भवे असंखेज्जा ।	,,
तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणा य सेढीए ।। ८ ।।	

२ अवतरण-गाथा-सूची

क्रम	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहाँ
१	अणुभागे हम्मंते	३९४	
२	अर्थस्य सूचनात् सम्यक्	३९९ क. पा. १, पृ. १७१	
३	आचार्यः पादमाचष्टे	१७१	
४	एए छच्च समाणा	२८६ क. प. १, पृ. ३२६	
५	एकोत्तरपदवड्ढी	१६२ ष. खं. पु. ५, पृ. १९३, क. पा. २, पृ. ३००	
६	एयक्खेत्तोगाढं	२७७ गो. क. १८५	
७	ओदइया बंधयरा	२७९ ष. खं. पु. ७, पृ. ९, क. पा. १, पृ. ६	
८	जोगा पयडि-पदेसं	११७, २८९	
९	ठिदिघादे हम्मंते	निर्देशक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज	
१०	पढमक्खो अंतगओ	३१९ मू. चा. ११, २३, गो. जी. ४०	
११	पण्णवणिज्जा भावा	१७१ गो. जी. ३३४, विशेषा. १४१.	
१२	बारस पण दस पण दस	११ ष. खं. पु. १०	
१३	बुद्धिविहीने श्रोतरि	४१४	
१४	भंगायामपमाणं	३१९ क. पा. २, पृ. ३०८.	
१५	सर्वथानियमत्यागी	२९६ बृहत्स्व. १०२.	
१६	सुहुमणुभागादुवरि	४१८	

३ न्यायोक्तियाँ

क्रम-संख्या	न्याय	पृष्ठ
१	एत्थतणउवरिसद्दो हेट्ठा सिघावलोअणक्कमेण उवरि णदीसोदक्कमेण अणुवट्टावेदव्वो ।	२०५
२	एसो अणंतगुणहीणणिद्देसो उवरि वि मंडूगुप्पदेण अणुवट्टदे ।	४१
३	यद्यस्मिन् सत्येव भवति नासति, तत्तस्य कारणमिति न्यायात् ।	२८९

४ ग्रन्थोल्लेख

१ कसायपाहुड

१	कसायपाहुडे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागे दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सव्वत्थ होदि त्ति परूविदत्तादो वा णव्वदे ।	११६
२	एदस्सुवरि एगपक्खेवुत्तरं कादूण बंधे अणुभागस्स जहण्णिया वड्ढी, तम्मि चेव अंतोमुहुत्तेण खंडयघादेण घादिदे जहण्णिया हाणी होदि त्ति कसायपाहुडे परूविदत्तादो ।	१२९

३ ण च अब्भुवगमो णिण्णिबंधणो, जहण्णुक्कस्सकालपरूवयकसायपाहुडगुत्तावट्टंभबलेण तदुप्पत्तीदो । १३८

४ संतट्ठाणाणि अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले चेव होंति, चत्तारि-पंच-छ-सत्तंकाण विच्चालेसु ण होंति त्ति कधं णव्वदे ? " उक्कस्सए .....संतकम्मट्ठाणाणि " एदम्हादो पाहुडसुत्तादो । २२१

५ संपहि कसायपाहुडे उवजोगो णाम अत्थाहियारो । तत्थ-कसायउदयट्ठाणाणि असंखेज्ज-लोगमेत्ताणि । तेसु वट्टमाणकाले जत्तिया तसा संति तत्तियमेत्ताणि आवुण्णाणि त्ति कसायपाहुडसुत्तेण भणिदं । .....कसायपाहुडे पुणो जीवसहिदणिरंतरट्ठाणपमाण-परूवणा ण कदा, किंतु ..... पमाणपरूवणा कदा । २४४

६ एत्थ अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु जीवसमुदाहारो परूविदो, तत्थ कसायपाहुडे कसाउदयट्ठा सु । २४५

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२ कालनिर्देशसूत्र

१ अणुभागट्ठाणीए जहण्णुक्कस्सेण एगो चेव समओ त्ति कालणिद्देसगुत्तादो णव्वदे । १३८

३ चूर्णिसूत्र

१ कधं सव्वमिदं णव्वदे ? उवरि भण्णमाणचुण्णिसुत्तादो । ४३

२ एयत्तं कत्थ पसिद्धं ? पाहुडचुण्णिसुत्ते सुपसिद्धं, लोगपूरणाए एया वग्गणा जोगस्से त्ति भणिदत्तादो । ९४

३ तदणुवुत्ती वि कुदो णव्वदे ? एदस्स गाहासुत्तस्स विवरणभावेण रूविदउव-रिमचुण्णिसुत्तादो । ४१

४ तेण वि अणुभागसंकमे सिस्साणुग्गहट्ठं चुण्णिसुत्तं लिहिदो । २३२

४ परिकर्म

१ परियम्मादो उक्कस्समंखेज्जयस्स पमाणमवगदमिदि ण पच्चवट्ठाणं कादुं जुत्तं, तस्स भुत्तत्ताभावादो । १५४

५ महाबंध

१ महाबंधे आउअउक्कस्साणुभागंतरस्स उवड्ढपोग्गलमेत्तकालपरूवणण्णहाणु-ववत्तीदो वा । २१

२ तं कधं णव्वदे ? महाबंधसुत्तुवइट्ठत्तादो । ६५

५ पारिभाषिक शब्द-सूची

शब्द	पृष्ठ
अ	
अक्षरसमास	४७९
अग्निकायिक	२०८
अग्निकायिककायस्थिति	,,
अचित्तद्रव्यभाव	२
अतिप्रसंग	१४२
अतिस्थापनावली	८५
अदत्तादान	२८१
अनन्तरबन्ध	२७०
अनवस्था	२५७
अनन्तरोपनिधा	२१४
अनुत्पादानुच्छेद	४५८,४९४
अनुभाग	९१
अनुभागकाण्डक	३२
अनुभागबन्धस्थान	२०४
अनुभागबन्धाध्यव-सानस्थान	,,
अनुभागसत्त्वस्थान	११२
अनुभागसंक्रम	२३२
अनुयोग	४८०
अनुयोगसमास	,,

शब्द	पृष्ठ
अनुसमयापवर्तना	३२
अनुसमयापवर्तनाघात	३१
अन्वय	९८
अपरिवर्तमान परिणाम	२७
अपवर्तनाघात	२१
अभ्याख्यान	२८५
अमूर्तद्रव्यभाव	२
अर्थपद	३
अर्थापत्ति	१७
अवस्थित भागहार	१०२
अविभागप्रतिच्छेद	९२
अष्टांक	१३१
असद्भूत	२७९
असातसमयप्रबद्ध	४८९

आ

आगमद्रव्यभाव	२
आगमभावभाव	,,
आर्यमंक्षु	२३२

उ

उत्पादानुच्छेद	४५७
उदीर्ण	३०३
उपधि	२८५
उपशान्त	३०३

औ

औदयिक	२७९
औपशमिक	,,

क

कर्मद्रव्यभाव	२
कलह	२८५
कल्प	२०९
कालयवमध्य	२१२
क्रोध	२८३
क्षपकश्रेणि	३४
क्षपितकर्मांशिक ११६, ३८४, ४२६	
क्षपितघोलमान	४२६
क्षायिक	२७९
क्षेत्रप्रत्याश्रय	४७८
क्षेत्रप्रत्यास	४९७

ग

गुणधरभट्टारक	२३२
गुणश्रेणि	८०
गुणितकर्मांशिक ११६, ३८२, ४२६	
गुणितघोलमान	४२६
गौतम स्थविर	२३१

घ

घातपरिणाम	२२०, २२५
घातस्थान	१३०, २२१, २३१

च

चतुःषष्टिपदिक दण्डक	४४
चतुःसामयिक अनुभागस्थान	२०२
चिरन्तनअनुभाग	३६
चूर्णचूर्णि	१६२
चूर्णि	१६१
चूर्णिसूत्र	२३२

छ

छिन्न	१६२
छिन्नाछिन्न	,,
छेदभागहार	१०२

ज

जघन्य द्रव्यवेदना	९८
जघन्य स्थान	,,
जीवयवमध्य	२१२
जीवविपाकी	४६

त

त्रुटित	१६२
त्रुटिताऽत्रुटित	,,

द

दलित	१६२
दलितदलित	,,
दर्शयमान अनुभाग	११७
दीपशिखा	४२८
देशघाती	५४
द्वीपायन	२१
द्वेष	२८२

न

नागहस्ती	२३२
नामभाव	१
निकाचित	३४
निकृति	२८५
निदान	२८४
नैगम	३०३
नोजीव	२९६, २९७

प

पद	३, ४८०
पदमीमांसा	३
पदसमास	४८०
परम्पराबन्ध	३७०, ३७२
परम्परोपनिधा	२१४
परिग्रह	२८२
परिवर्तन परिणाम	२७
परिवर्तमानमध्यमपरिणाम	,,
पारिणामिक	२७९
पिशुन	१५८
पिशुनापिशुन	१६०
पुद्गलविपाकी	४६
पुनरुक्तदोष	२०९
पूर्व	४८०
पूर्वसमास	,,
पूर्वानुपूर्वी	२२१
प्रकृति	३०३
प्रकृत्यर्थता	४७८

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शब्द	पृष्ठ
प्रतिपत्ति	४८०
प्रतिपत्तिसमास	,,
प्रयोग	२८६
प्रवेशन	२०८
प्राण	२७६
प्राणातिपात	२७५, २७६
प्राभृत	४८०
प्राभृतप्राभृत	,,
प्राभृतप्राभृतसमास	,,
प्राभृतसमास	,,
प्रेम	२८४

ब

बध्यमान	३०३
बन्धप्रकृति	४९५
बन्धसमुत्पत्तिक	२०
बन्धसमुत्पत्तिकस्थान	२२४
बन्धस्थान	१११, ११२
बादरकृष्टि	६९

भ

भव्यदीपक	१४
मान	२८३
माया	,,
मिथ्याज्ञान	२८६
मिथ्यादर्शन	,,
मूर्तद्रव्यभाव	२
मृषावाद	२७९
मैथुन	२८२
मोह	२८३

य

यतिवृषभ भट्टारक	२३२
यथाख्यातसंयम	५१
यवमध्य	२३१
योग	३६७

र

राग	२८३
रात्रिभोजन	,,
रूपोनभागहार	१०२

ल

लतासमान अनुभाग	११७
लोभ	२८३, २८४

व

वर्ग	९३
वर्गणा	,,
वर्धमानभट्टारक	२३१
वस्तु	४८०
वस्तुसमास	,,
विपुलगिरि	२३१
विसयोजना	५०
वेदना	३०२
वेदनावेदना	,,
व्यतिरेक	९८
व्यधिकरण	३१३
व्यभिचार	२१
व्यवस्थापद	३

ष

षट्स्थान	१२०, १२१

स

सचित्तद्रव्यभाव	२
सत्कर्मस्थान	२२०,२२५,२३१
सत्त्वप्रकृति	४९५
सत्त्वस्थान	२१९
समयप्रबद्धार्थता	४७८
सरागसंयम	५१
सर्वघाती	५३
सहानवस्थान	३००
संक्रमस्थान	२३१
संघात	४८०
संघातसमास	,,
संनिकर्ष	३७५
सिक्थमत्स्य	३९०
सूक्ष्मप्ररूपणा	१७४
स्थान	१११
स्थानान्तर	११४
स्थापनाभाव	१
स्थूलप्ररूपणा	१७४
स्पर्द्धक	९९
स्पर्द्धकान्तर	११८

ह

हतहतसमुत्पत्तिक	६०
हतसमुत्पत्तिकर्म	२८, २९
हतसमुत्पत्तिकस्थान	२१९, २२०
हतहतसमुत्पत्तिक	९१

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज